बौद्धभारतीग्रन्थमाला-१२
Bauddha Bharati Series-12

विसुद्धिमग्ग

सम्पादक
स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

Bauddha Bharati Series–12

VISUDDHIMAGGA

OF

SIRI BUDDHAGHOSĀCARIYA

Critically Edited By

SWĀMĪ DWĀRIKĀDĀS ŚĀSTRĪ

Acarya (Vyakarana, Pāli, & Bauddha Darśana)

BAUDDHA BHARATI

VARANASI

1977

बौद्धभारतीग्रन्थमाला–१२

आचार्यबुद्धघोषविरचित

विसुद्धिमग्ग

सम्पादक, संशोधक

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

व्याकरणपालि-साहित्यबौद्धदर्शनाचार्य



१९७७ ख्रिष्टाब्दः]　　वाराणसी　　[२५२० बुद्धाब्द

प्रकाशिका :

पो० बा० ४९,
वाराणसी–१ (उ० प्र०)

Published by
Bauddha Bharati
P Box–49,
Varanasi-1 *(U P.) India*

प्रथम संस्करण
मूल्य : ४० ००
(चालीस रुपया मात्र)

First Edition
Price 40 00
(Rupees Forty)

मुद्रक :
वर्द्धमान मुद्रणालय
जवाहरनगर कालोनी
वाराणसी–१

Printed by
Varddhaman Mudranalaya
Jawahar Nagar Colony
Varanasi-1

प्रकाशकीय वक्तव्य

यावत् स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले।
प्रचरिष्यति लोकेऽस्मिन् तावद् वै बौद्धभारती ॥

आदरणीय विद्वज्जन !

विगत वर्ष (सन् १९७५ मे) **बालावतार** (पालि-व्याकरण) के प्रकाशन के समय किये गये अपने सङ्कल्प के अनुसार आज हम पालिसाहित्य के एक विशिष्ट ग्रन्थ-रत्न **विसुद्धिमग्ग** का छात्रोपयोगी संस्करण आप लोगो के सम्मुख उपस्थित कर रहे है। इसमे, जैसा कि हम चाह रहे थे, हिन्दी अनुवाद तो नही दे सके, क्योकि उसके साथ ग्रन्थ का कलेवर इतना विशाल हो जाने की सम्भावना थी कि छात्रों के लिये इसे खरीद पाना असम्भव नही तो दुष्कर अवश्य हो जाता; फिर भी हमने प्रारम्भ मे छात्रहिताय आचार्य बुद्धघोष की जीवनी, त्रिपटिक का विकास तथा ग्रन्थ मे यत्र-तत्र समागत कठिन स्थलो पर आवश्यक टिप्पणियाँ सलग्न कर दी है, ताकि व्युत्पन्न छात्रो तथा अध्यापको को विषय के समझने मे सुविधा हो।

ग्रन्थ के इस सस्करण से ऐसे व्यक्ति भी बहुत कुछ लाभ उठा सकेंगे जो पालि नही जानते, परन्तु इस ग्रन्थ की विषय-वस्तु समझने मे उत्सुकता रखते है। इनके लिये हमने प्रारम्भ में ग्रन्थ का हिन्दी रूपान्तर सक्षेप मे दे दिया है।

वैसे हमारी इच्छा यह है कि यदि अवसर मिला तो हिन्दी भाषा मे **विसुद्धिमग्गसंक्षेप** नाम से एक स्वतन्त्र सस्करण निकाला जाय, जो साधारणत ग्रन्थ का अनुवाद भी हो और अपना मौलिक महत्त्व भी रखे। अस्तु।

हमे विश्वास है, विद्वज्जन तथा छात्रगण इस ग्रन्थ को अपना कर हमारी योजना को सफल बनाते हुए हमारा उत्साहवर्धन करेंगे।

—प्रकाशक

बहिरङ्गकथा

पालीतिवुत्तविञ्ञूनं देसनानयनिस्सिता ।
विसुद्धिमग्गगन्थस्स बहिरङ्गकथा अयं ॥

त्रिपिटक का विकास

भगवान् बुद्ध ने स्वय कोई ग्रन्थ नही लिखा, और न अपने शिष्यो को ही अपने उपदेश किसी विशिष्ट भाषा मे स्मरण रखने के लिए कहा। उन्होने प्रचलित्त मागधी भाषा मे उपदेश किया और भिक्षुओ को अनुमति दी कि वे अपनी-अपनी बोलियो मे उनके उपदेशों को स्मरण करे। उनके उपदेशो का पहला सग्रह उनके महापरिनिर्वाण के अनन्तर राजगृह की सङ्गीति मे हुआ। किन्तु उसके बाद भी कुछ सन्दर्भ बुद्धवचन मे जोड़े जाते रहे। अन्त मे पालित्रिपिटक सिहल (श्रीलङ्का) में राजा वट्टगामणि के शासनकाल में भगवान् के महापरिनिर्वाण से चार शताब्दी पीछे अपने वर्तमान रूप मे लिखा गया। इस प्रकार वर्तमान पालित्रिपिटक का रचनाकाल ईसापूर्व प्रथम शताब्दी सिद्ध होता है।

इस त्रिपिटक के विनय, सूत्र तथा अभिधर्म—ये तीन विभाग (पिटक) है।

(क) विनयपिटक—भिक्षुओ के आचरण का नियमन करने के लिए भगवान् बुद्ध ने जो नियम बनाये थे, वे 'प्रातिमोक्ष' (पातिमोक्ख) कहे जाते है। इन्ही नियमो की चर्चा विनयपिटक मे है। तीनो पिटको मे विनयपिटक का स्थान सर्वप्रथम है। प्रातिमोक्ष की महत्ता इसी से सिद्ध है कि भगवान् ने स्वय कहा था कि उनके न रहनेपर भी प्रातिमोक्ष और शिक्षापदो के कारण भिक्षुओं को अपने कर्तव्य का ज्ञान होता रहेगा और यो सङ्घ स्थायी रहेगा।

प्रारम्भ मे केवल १५२ नियम बने होगे किन्तु विनयपिटक की रचना के समय उनकी सख्या २२७ हो गयी थी। 'सुत्तभिक्खुविभङ्ग' जो विनयपिटक का प्रथम भाग है; वस्तुत इन २२७ नियमो का विधान करनेवाले सुत्तों की व्याख्या है। ये व्याख्यात्मक ग्रन्थ **पाराजिक, पाचित्तिय** नाम से प्रसिद्ध है। विनयपिटक के दूसरे भाग का नाम 'खन्धक' है। **महावग्ग** तथा **चुल्लवग्ग**—ये दोनों ग्रन्थ 'खन्धक' मे समाविष्ट है। विनयपिटक का अन्तिम अश **परिवार** है। इसमें वैदिक अनुक्रमणिकाओं की तरह कई सूचियों का समावेश है।

(ख) **सुत्तपिटक**—भगवान् के लोकोपकारी उपदेशो का सग्रह सुत्तपिटक में है। इस मे १ **दीघनिकाय**, २. **मज्झिमनिकाय**, ३ **संयुत्तनिकाय**, ४. **अंगुत्तरनिकाय और** ५. **खुद्दकनिकाय**—इन पॉच निकायो का समावेश है। दीघनिकाय आदि ग्रन्थो मे, भगवान् बुद्ध ने किस प्रसङ्ग मे कहाँ उपदेश किया—यह बताकर उपदेश या किसी के साथ होनेवाले वार्तालाप (सवाद) का रोचक ढंग से संग्रह किया गया है।

१ **दीघनिकाय** मे ३४ सुत्त (सूत्र) है। ये सुत्त लम्बे है, अत' दीघ (दीर्घ) कहे गये है। इनमे यथास्थान शील, समाधि, प्रज्ञा का रोचक वर्णन है।

२ **मज्झिमनिकाय** मे मध्यम आकार के (न ज्यादा लम्बे न ज्यादा छोटे) १५२ सुत्तो में भी बुद्ध के उपदेशो पर सवादात्मक सग्रह है। इसमे चार आर्यसत्य, निर्वाण, कर्म, सत्कायदृष्टि, आत्मवाद, ध्यान आदि अनेक महत्त्वपूर्ण विषयो की चर्चा है। यह ग्रन्थ भी **मूलपण्णासक**, **मज्झिमपण्णासक** तथा **उपरिपण्णासक** नाम से ५०–५०–५२ सुत्तो से तीन भागों में विरक्त है।

३· **संयुत्तनिकाय** मे ५६ सयुत्तो का सग्रह है। जैसे—प्रथम **देवतासयुत्त** मे देवताओ के वचनो का सग्रह किया गया है। **मारसंयुत्त** मे बुद्ध को विचलित करने के लिए मार द्वारा किये गये प्रयत्नो का सग्रह हैं।

इस ग्रन्थ मे काव्य की दृष्टि से भो पर्याप्त सामग्री है।

४ **अंगुत्तरनिकाय** मे २३०८ सुत्त है। उनमे एक वस्तु से लेकर ग्यारह वस्तुओ का समावेश क्रमश किया गया है। प्रथम निपात मे एक क्या-क्या है ? सब गिनाया गया है। और इसी प्रकार ग्यारहवे निपात मे ग्यारह-ग्यारह वस्तुओ का सग्रह किया गया है। इसमे विषय-वैविध्य होना स्वाभाविक है।

५ **खुद्दकनिकाय** मे खुद्द (क्षुद्र) अर्थात् छोटे-छोटे उपदेशो का सग्रह है। इस निकाय मे निम्नलिखित ग्रन्थों का समावेश है—

(१) **खुद्दकपाठ**—इसमें त्रिशरण, दस सिक्खापद आदि बौद्धधर्म मे प्रवेश चाहने वाले के लिए अवश्य ज्ञातव्य विषयो का समावेश है।

(२) **धम्मपद**—बौद्ध ग्रन्थो मे यह सर्वाधिक प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसमे बुद्ध के नैतिक उपदेशों का संग्रह है।

(३) **उदान**—इसमें एक ही विषय का निरूपण करनेवाली अल्पसंख्यक गाथाओं का संग्रह है। प्रासंगिक दो चार गाथाओ मे भगवान् ने अपना मन्तव्य यहाँ व्यक्त किया है।

(४) **इतिवुत्तक**—इस ग्रन्थ में 'भगवान् ने ऐसा कहा'—इस मन्तव्य से गाथाओं तथा गद्यांशों का संग्रह है।

(५) **सुत्तनिपात**—इसमे भगवान् के प्राचीनतम उपदेशो का संग्रह है।
(६) **विमानवत्थु**—इसमें देवयोनि का वर्णन है।
(७) **पेतवत्थु**—इस ग्रन्थ में प्रेतयोनि का वर्णन है।
(८) **थेरगाथा**—इस ग्रन्थ में बौद्ध भिक्षुओं ने अपना-अपना अनुभव काव्य मे व्यक्त किया है।
(९) **थेरीगाथा**—इसमे बौद्ध भिक्षुणियो ने अपना-अपना अनुभव कविता में व्यक्त किया है।
(१०) **जातक**—इस ग्रन्थ में भगवान् बुद्ध के पूर्वजन्मों के सदाचारों को व्यक्त करनेवाली ५४७ कथाओ का संग्रह है। नीतिशिक्षण की दृष्टि से इन कथाओं की बराबरी करनेवाला ग्रन्थ अन्यत्र सुदुर्लभ है।
(११) **निद्देस**—यह ग्रन्थ सुत्तनिपात के अट्ठकवग्ग तथा खग्गविसाणसुत्त की व्याख्या है। यह **चुल्लनिद्देस** तथा **महानिद्देस** नाम से दो भागो मे विभक्त है।
(१२) **पटिसम्भिदामग्ग**—इसमे प्राणायाम, ध्यान, कर्म, आर्यसत्य, मैत्री आदि का वर्णन है।
(१३) **अवदान**—इसमे अर्हतों (ज्ञानियो) के पूर्व जन्मो का वर्णन है।
(१४) **बुद्धवंस**—इसमे भगवान् बुद्ध से पूर्व हुए २४ बुद्धों का जीवन-चरित है।
(१५) **चरियापिटक**—यह खुद्दकनिकाय का अन्तिम ग्रन्थ है। इसमे बुद्ध ने अपने पूवभव मे कौन-सी पारमिता किस भव में किस प्रकार पूर्ण को—इसका वर्णन है।

(ग) **अभिधम्मपिटक**—इस पिटक मे भगवान् बुद्ध के उपदेशो के आधार पर बौद्धदार्शनिक विचारों की व्यवस्था की गयी है। इस पिटक मे इन सात ग्रन्थो का समावेश है—१. धम्मसगणि, २. विभङ्ग, ३ धातुकथा, ४ पुग्गल-पञ्ञत्ति, ५ कथावत्थु, ६ यमक, और ७. पट्ठान।

(१) **धम्मसंगणि**—इसमे धर्मो का वर्गीकरण और व्याख्या की गयी है।
(२) **विभङ्ग**—इसमे उन्ही धर्मो के वर्गीकरण का विस्तार किया गया है।
(३) **धातुकथा**—इसमे धातुओं का प्रश्नोत्तररूप में व्याख्यान है।
(४) **पुग्गलपञ्ञत्ति**—इस ग्रन्थ मे मनुष्यो का विविध अंगो मे वर्णन किया गया है। यह वर्गीकरण गुणो के आधार पर विविध रीति से किया गया है।
(५) **कथावत्थु**—इस ग्रन्थ की रचना प्रश्नोत्तररूप मे हुई है। इस ग्रन्थ का महत्त्व बौद्धधर्म के विकासात्मक इतिहास के लिए सर्वाधिक है। पिटकान्तर्गत होनेपर भी इसके रचयिता तिस्स मोग्गलिपुत्त है, जो तीसरी सङ्गीति के अध्यक्ष थे। यद्यपि यह ग्रन्थ ई० पू० तीसरी शताब्दी में उक्त आचार्य ने

बनाया था, फिर भी इसमें क्रमश बौद्धधर्म में जो मतभेद हुए, उनका भी संग्रह बाद मे होता रहा है। मतान्तरो का पूर्वपक्षरूप मे समर्थन करके फिर उनका खण्डन किया गया है। 'आत्मा है या नही ?'—ऐसे प्रश्न उठाकर बौद्ध मन्तव्य की स्थापना की गयी है।

(६) **यमक**—इसमें प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दो प्रकार से दिया गया है। और कथावत्थु तक के ग्रन्थो से जिन शङ्काओ का समाधान नही हुआ, उनका विवरण इसमे दिया गया है।

(७) **पट्ठान**—इसे 'महापकरण' भी कहते है। इसमें नाम और रूप के २४ प्रकार के कार्यकारणभाव-सम्बन्ध की चर्चा है। इसमें बताया गया है कि केवल निर्वाण ही असंस्कृत है, बाकी सब धर्म संस्कृत है।

इस तरह त्रिपिटक का सामान्य परिचय समाप्त हुआ।

पिटकेतर ग्रन्थ

(१) पिटकेतर पालिग्रन्थों मे **मिलिन्दपञ्हो** ग्रन्थ (मिलिन्दप्रश्न) सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। समस्त पालि वाङ्मय में शैली की दृष्टि से भी यह बेजोड़ है। आचार्य नागसेन के साथ ग्रीकसम्राट् मिनाण्डर (ई० पू० प्रथम शताब्दी) के संवाद की योजना होने से इस ग्रन्थ का नाम सार्थक है। इस ग्रन्थ की प्राचीनता और प्रामाणिकता इसी से सिद्ध होती है कि आचार्य बुद्धघोष ने पिटक से बाह्य होनेपर भी इस ग्रन्थ की समान प्रामाणिकता मानी है।

इस ग्रन्थ मे बौद्धदर्शन के जटिल प्रश्नो को, जैसे—अनात्मवाद, क्षणभंगवाद के साथ-साथ कर्म, पुनर्जन्म, और निर्वाण आदि को, सरल उपमाएँ देकर, तार्किक दृष्टि से सुलझाने का प्रयत्न किया गया है।

(२) मिलिन्दप्रश्न के समान ही **नेत्तिप्पकरण** भी प्राचीन ग्रन्थ है। जो कि महाकच्चान की कृति माना जाता है। इसमें बुद्ध के उपदेशो का व्यवस्थित सार दिया गया है।

(३) इसी कोटि का एक अन्य प्रकरण-ग्रन्थ **पेटकोपदेस** भी है। यह भी महाकच्चान की कृति है। पिटकों में प्रवेशक ग्रन्थ के रूप मे यह एक अच्छा प्रकरण-ग्रन्थ है।

अनुपिटक या अट्ठकथा साहित्य

त्रिपिटक तथा पिटकेतर साहित्य के बाद पालिसाहित्य मे अट्ठकथा, साहित्य का स्थान महत्त्वपूर्ण है। अट्ठकथा = अर्थकथा अर्थात् व्याख्या। पूर्व काल में जैसे ब्राह्मण-साहित्य मे सूत्र-ग्रन्थो पर भाष्य लिखने की परिपाटी थी

वैसे ही पालिसाहित्य में अट्ठकथा नाम से व्याख्याएँ लिखने की परिपाटी चली। ये अट्ठकथाएँ अर्थ की व्याख्या के साथ ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि को भी स्पष्टत· विवृत करती हुई भाष्य ग्रन्थोंकी अपेक्षा अपने आप मे अधिक महत्त्वपूर्ण हो गयी। संस्कृत भाष्यो मे अर्थ की व्याख्या पर ही बल दिया जाता है, अनेक सिद्धान्तो या विचारधाराओ के विवरण वहाँ आते है, किन्तु वे 'इत्येके' 'इत्यपरे' कह कर छोड देते है। वहाँ केवल सिद्धान्त का ही अर्थ-विवेचन अधिक होता है। कौन सा सिद्धान्त कब उत्पन्न हुआ, अथवा वह किसका था ? आदि की खोज नही की जाती। पालि-अट्ठकथाओ मे ऐसी बात नही है। जैसे 'कथावत्थु' की अट्ठकथा को ही लीजिये, वहाँ निराकृत २१६ सिद्धान्तो मे से कौन किस का, किस सम्प्रदाय का सिद्धान्त था, कब उत्पन्न हुआ ? आदि का पूर्ण विवरण मिलता है। अस्तु।

प्राचीन सिंहली अट्ठकथाएँ—बुद्धघोष की अट्ठकथाओ के साक्ष्य के आधार पर हम जानते है कि सिंहल मे सम्पूर्ण त्रिपिटक पर सिंहली भाषा मे लिखी हुई अट्ठकथाएँ उपलब्ध थी। जैसे—सुत्तपिटक पर **महाअट्ठकथा** थी, विनयपिटक पर **कुरुन्दी** थी और अभिधम्मपिटक की अट्ठकथा का नाम था **महापच्चरी**। ये प्राचीन सिहली अट्ठकथाएँ बारहवी शताब्दी तक उपलब्ध थी। आज इनका कोई अश सुरक्षित नही है।

पालि साहित्य के भारतीय अट्ठकथाकार—भारतीय अट्ठकथाकारो मे तीन नाम प्रसिद्ध है— **बुद्धदत्त**, **बुद्धघोष तथा धम्मपाल**। इनमे बुद्धदत्त तथा बुद्धघोष दोनो समकालिक थे—यह 'बुद्धघोसुप्पत्ति', 'सासनवस' आदि ग्रन्थों के प्रमाण से स्पष्ट सिद्ध है। इन दोनो का लक्ष्य भी समान ही था कि सिंहली अट्ठकथाओ के आधार पर त्रिपिटक की प्रामाणिक अट्ठकथाएँ लिखी जाँय। और ये दोनो इस एक ही उद्देश्य से श्रीलङ्का भी पहुँचे थे। यह बात 'बुद्धघोसुप्पत्ति' तथा 'विनयविनिच्छय' ग्रन्थो मे समुद्र मे नाव पर हुए बुद्धदत्त-बुद्धघोष सवाद से स्पष्ट है। यद्यपि बुद्धदत्त अवस्था मे वृद्ध थे तथापि अट्ठकथालेखन का कार्य उन्होने तब तक स्थगित रखा, जबतक आचार्य बुद्धघोष श्रीलङ्का से, अपने लक्ष्य मे सफल होकर, वापस नही आ गये।

आचार्य बुद्धदत्त ने **उत्तरविनिच्छय, विनयविनिच्छय** नाम से विनयपिटक की अट्ठकथा, **अभिधम्मावतार** नाम से अभिधम्मपिटक की अट्ठकथा तथा **रूपारूपविभाग** और **मधुरत्थविलासिनी** नाम से बुद्धवस की अट्ठकथा लिखी है। आचार्य बुद्धदत्त चोल राज्य मे उरगपुर के निवासी थे।

आचार्य धम्मपाल भी दाक्षिणात्य थे। इनका जन्म तामिळ प्रदेश मे काञ्चीपुर मे हुआ था। इनकी रचनाये ये हैं—

(१) **परमत्थदीपनी**—यह खुद्दकनिकाय के उदान, इतिवुत्तक, विमानवत्थु, पेतवत्थु, थेरगाथा, थेरीगाथा एव चरियापिटक ग्रन्थों की अट्ठकथा है। इन ग्रन्थो पर आचार्य बुद्धघोष ने अट्ठकथा नही लिखी।

(२) **नेत्तिप्पकरण-अट्ठकथा**—यह नेत्तिप्पकरण की अट्ठकथा है।

(३) **नेत्तित्थकथाय टीका**—उपर्युक्त नेत्तिप्पकरण की अट्ठकथा की टीका।

(४) **परमत्थमञ्जूसा**—विसुद्धिमग्ग की प्रसिद्ध अट्ठकथा।

(५) **लीनत्थप्पकासिनी**—दीघनिकायादि चार निकायो पर बुद्धघोष की अट्ठकथा पर टीका।

(६) **जातकट्ठकथा का** टीका—यह भी लीनत्थप्पकासिनी नाम से प्रसिद्ध है।

(७) बुद्धदत्त कृत **मधुरत्थविलासिनी** की टीका।

आचार्य धम्मपाल की इन सातो अट्ठकथाओ मे परमत्थमञ्जूसा सबसे अधिक प्रसिद्ध है।

इन्होने बुद्धदत्त तथा बुद्धघोषरचित ग्रन्थो पर टीकाएँ लिखी है, अत· यह स्पष्ट है कि ये उन दोनो से बाद के थे।

आचार्य बुद्धघोष

आचार्य बुद्धघोष की विश्व के प्रसिद्ध दार्शनिको विशेषतः बौद्ध दार्शनिको तथा ग्रन्थकारो की पंक्ति में प्रथम गणना की जाती है। उन्होने अपना समग्र जीवन पालिसाहित्य की श्रीवृद्धि में लगा दिया। उनकी लेखनी के सतत प्रयास से त्रिपिटक तथा पालिसाहित्य के सिद्धान्त लुप्त होने से बच गये। सभी इतिहासकार यह मानते है कि यदि बुद्धघोष ने सम्पूर्ण त्रिपिटक पर अपनी गवेषणापूर्ण अट्ठकथाएँ न लिखी होती तो त्रिपिटक वाङ्मय लुप्त होता या न होता पर उसका इतनी सरलता से समझना अत्यन्त दुरूह हो जाता। उन्होंने अपनी अट्ठकथाओ मे न केवल बुद्धवचनो का प्रामाणिक अर्थ ही प्रस्तुत किया है, अपि तु अपने से प्राचीन तथा सम काल के दर्शन, इतिहास, धर्म, राजनीति, अर्थनीति, समाजनीति आदि विषयों का भी यथास्थान समीक्षात्मक वर्णन विस्तार से किया है, जो उनकी यश पताका दिग्-दिगन्त तक फैला रहा है। इसीलिए इतिहासकार आचार्य बुद्धघोष को मुक्तकण्ठ से 'पालि-साहित्य का युगविधायक' मानते है। ऐसे महापुरुषो के व्यक्तिगत जीवन के विषय मे जानकारी रखना पुण्यप्रद तथा सामान्य जन के लिये उत्साहवर्धक होता है।

परन्तु आचार्य ने भी अन्य भारतीय मनीषियों की तरह अपने व्यक्तिगत जीवन के विषय मे अधिक कुछ नही लिखा। अपनी अट्ठकथाओं के प्रारम्भ

और अन्त में उन्होंने जो कुछ लिखा भी है उससे उनकी रचनाओं पर ही कुछ प्रकाश पड़ता है कि वे किस उद्देश्य से लिखी गयी, या किनकी प्रेरणा से लिखी गयीं; पर आचार्य के जीवन के बारे में उनसे कुछ विशेष पता नही लगता। सम्भवत: अन्य भारतीय ऋषि-मुनियों की तरह बुद्धघोष ने भी अपने महान् उद्देश्य के सामने व्यक्तिगत जीवन की महत्ता को पूर्णत· तिरोहित कर दिया। इसमें सन्देह नहीं कि उनकी अपने प्रति यह तटस्थता भी उनके पवित्र क्रिया-कलाप को और अधिक तेजस्वी और बलशाली बना देती है। परन्तु मानव होने के नाते हम उनके मानवरूप के विषय मे भी कुछ जानने को उत्सुक है, ताकि वह जानकारी हमारे जीवन मे भी सम्बल के रूप मे काम आ सके।

बुद्धघोष के जीवन के विषय मे जानने के लिये उनकी लिखी अट्ठकथाओ के अतिरिक्त अन्य प्रधान साधन है—१. **चूळवंस** के ३७ वें परिच्छेद की २१५–२४६ गाथाएँ, २ **बुद्धघोसुप्पति**, ३. **गन्धवंस**, ४ **सासनवंस** तथा **सद्धम्मसंगह**।

चूळवंस का उपर्युक्त अश, जिसमे बुद्धघोष की जीवनी है, धम्मकित्ति (धर्मकीर्ति) नामक भिक्षु की रचना है। जिनका काल तेरहवी शताब्दी का मध्य-भाग है। जब कि बुद्धघोष का जीवन-काल चौथी पाँचवी शताब्दी ईस्वी माना जाता है, अत· उनसे आठ-नौ सौ वर्षो बाद लिखी उनकी जीवनी पूर्णत: प्रामाणिक नही मानी जा सकती—यह तो निश्चित है, फिर भी बुद्धघोष की जीवनी का सबसे अधिक प्रामाणिक वर्णन जो हमे मिलता है, वह यही है। इसी प्रकार 'गन्धवस' और 'सासनवंस' तो ठीक उन्नीसवो सदी की रचनाएँ है, अतः हम इनके सहारे कितना काम चला सकते है! धम्मकित्ति महासामी की, 'बुद्धघोसुप्पत्ति' चौदहवी शताब्दी की रचना है जो चूळवंस के बाद और 'गन्धवस' और 'सासनवस' से पहले की रचना है। इस रचना मे इतनी अति-शयोक्तियाँ भरी पड़ी हैं कि इसके भी प्रामाण्य को सर्वाश मे नही माना जा सकता। यो, 'चूळवस' के उपर्युक्त अंश को ही इस सम्बन्ध मे सबसे अधिक प्रामाणिक माना जाता है। उसके अनुसार आचार्य बुद्धघोष की जीवनी कुछ इस प्रकार लिखी जा सकती है—

आचार्य बुद्धघोष का जन्म गया (बिहार) के समीप बोधिवृक्ष के निकट (किसी ग्राम में) ब्राह्मण परिवार में हुआ। बाल्यावस्था मे ही यह ब्राह्मण-विद्यार्थी शिल्प और तीनो वेदों मे पारङ्गत होकर शास्त्रार्थ करता हुआ भारतवर्ष मे जहाँ-तहाँ घूमने लगा। इसको ज्ञान की अत्युत्कट जिज्ञासा थी। योगाभ्यास में अत्यधिक रुचि थी। एक दिन यह रात मे किसी विहार मे पहुँच गया। वहाँ पातञ्जल योग पर बहुत अच्छा प्रवचन किया। किन्तु रेवत नामक

बौद्ध स्थविर ने इसको वाद में पराजित कर दिया। इन बौद्धभिक्षु के श्रीमुख से बुद्धशासन का अपूर्व वर्णन सुनकर बुद्धघोष को यह विश्वास हो गया कि निर्वाण-प्राप्ति का एकमात्र यही मार्ग है। और उन्होने उस मत मे महास्थविर रेवत से प्रव्रज्या ग्रहण कर ली। प्रव्रजित होकर उन्होने त्रिपिटक का गम्भीर अध्ययन किया। वस्तुत प्रव्रजित होनेसे पूर्व बुद्धघोष एक ब्राह्मण-विद्यार्थी (ब्राह्मणमाणव) मात्र थे। बाद में भिक्षुसङ्घ ने त्रिपिटक में उनके गम्भीर घोष को बुद्ध के समान जानकर 'बुद्धघोष' की पदवी दी। जिस विहार मे इनकी प्रव्रज्या हुई थी, उन्होने वही **ञाणोदय** (ज्ञानोदय) नामक ग्रन्थ की रचना की। इसके बाद यही इन्होने धम्मसंगणि (अभिधम्मपिटक का प्रथम ग्रन्थ) पर **'अट्ठसालिनी'** नामक अट्ठकथा भी लिखी। और अन्त मे त्रिपिटक पर एक सक्षिप्त अट्ठकथा लिखने का भी उपक्रम किया, जिसे देखकर उनके गुरु महास्थविर रेवत ने उन्हे परामर्श दिया कि "लंका से यहाँ भारत मे केवल मूल पालि-त्रिपटिक ही लाया गया है, अट्ठकथाएँ यहाँ उपलब्ध नही है। लङ्काद्वीप में महास्थविर महेन्द्र द्वारा संगृहीत प्रामाणिक अट्ठकथाएँ सिहली भाषा मे सुरक्षित है। तुम वहाँ जाकर उनका श्रवण करो, और बाद मे मागधी भाषा में उनका रूपान्तर करो, ताकि वे सर्वजनसाधारण के लिए सुलभ होकर हितावह हो सके[1]।" इस प्रकार गुरु से आज्ञा पाकर आचार्य बुद्धघोष लङ्काधिपति महानाम के शासनकाल मे लका गये।

वहाँ अनुराधपुर के महाविहार मे 'महापधान' नामक भवन मे रहकर उन्होने सङ्घपाल नामक स्थविर से सिहली अट्ठकथाओ और स्थविरवाद की परम्परा को सुना। जब बुद्धघोष को श्रवण, मनन, निदिध्यासन करते-करते यह निश्चय हो गया कि तथागत (बुद्ध) का यही ठीक अभिप्राय है, तब उन्होंने महाविहार के भिक्षुसङ्घ से प्रार्थना की—"मै अट्ठकथाओ का मागधी भाषा में रूपान्तर (अनुवाद) करना चाहता हूँ, मुझे अपनी पुस्तके देखने की अनुमति दें।" इसपर उन्होंने उनकी परीक्षा के लिये पहले उन्हे त्रिपिटक की दो गाथाएँ व्याख्या करने के लिये दीं। बुद्धघोष ने उन दो गाथाओं की व्याख्या

---

१ पालिमत्तमिधानीत, नत्थि अट्ठकथा इध।
तथाचरियवादा च भिन्नरूपा न विज्जरे॥
सीहलट्ठकथा सुद्धा महिन्देन सतीमता।
सङ्गीतित्तयमारूळ्ह सम्मासम्बुद्धदेसितं॥
कता सीहलभासाय सीहलेसु पवत्तति।
तं तत्थ गन्त्वा सुत्वा त्व मागधानं निरुत्तिया॥
परिवत्तेहि, सा होति सब्बलोकहितावहा॥"—चूळवंस।

के रूप मे 'विसुद्धिमग्ग' की रचना की। इस विद्वत्तापूर्ण रचना को देखकर भिक्षु इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने बुद्धघोष को साक्षात् भगवान् मैत्रेय बुद्ध (भावी बुद्ध) ही मान लिया और उन्हें अपनी सब पुस्तके देखने की आज्ञा दे दी। अनुराधपुर के उस ग्रन्थकार विहार मे बैठकर आचार्य बुद्धघोष ने सिंहली अट्ठकथाओ का मागधी-भाषान्तर पूर्ण किया। इसके बाद वे अपनी जन्मभूमि भारत लौट आये और यहाँ आकर बोधिवृक्ष की पूजा की।

काल—इस वर्णन से एक अत्यन्त महत्त्व की यह बात प्रमाणित हो जाती है कि बुद्धघोष लङ्काधिपति महानाम के समय मे लङ्का गये थे। इस राजा महानाम का शासनकाल चौथी शताब्दी के अन्तिम भाग में तथा पाँचवी शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में माना जाता है। अत निश्चित है कि बुद्धघोष ने अपने ग्रन्थो की रचना इसी काल मे की।

एक बात और, बुद्धघोष रचित ग्रन्थों में ऐसे किसी एक ग्रन्थ का भी उद्धरण नही मिलता जो इस काल के बाद रचित हो।

बर्मी भिक्षु परम्परा भी यह मानती है कि आचार्य बुद्धघोष पाँचवी शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में लङ्का गये थे।

क्योंकि उस समय उनकी अवस्था युवा तो रही ही होगी, अत· उनका जीवनकाल निश्चय ही चौथी-पाँचवी शताब्दी कहा जा सकता है।

जन्मस्थल—'चूळवंस' के उपर्युक्त अंश मे आचार्य बुद्धघोष का जन्मस्थल बौद्ध गया के समीप बताया गया है। परन्तु प्रसिद्ध विद्वान् श्री धर्मानन्द कोशाम्बी जी यहाँ यह वाद उपस्थित करते है—

बुद्धघोष सम्भवतः उत्तर भारत के नही है, क्योकि (क) उनकी किसी भी कथा की पृष्ठभूमि उत्तर भारत में नही रखी गयी है। (ख) विसुद्धिमग्ग मे वनदाह (पृ० २६) की उनके द्वारा की गयी व्याख्या तथा (ग) मज्झिमनिकाय के गोपालकसुत्त की व्याख्या मे उनके द्वारा किया हुआ गङ्गा का वर्णन सब यही दर्शाते है कि जिस वनदाह तथा गङ्गा का वर्णन उन्होने किया है वह सब उत्तर भारत का न होकर दक्षिण भारत के अनुरूप ही है। इस प्रकार बुद्धघोष की रचनाओ के आधार पर आचार्य कोशाम्बी जी ने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि आचार्य बुद्धघोष उत्तर भारत की भौगोलिक स्थिति से परिचित नही थे, अत: वे वहाँ के निवासी नही हो सकते। श्री कोशाम्बी जी बर्मी परम्परा के अनुसार बुद्धघोष को दक्षिण भारत का निवासी मानते है। और वे विसुद्धिमग्ग के उपसहार में लिखे इस वाक्य से "**बुद्धघोसो ति गरूहि गहितनामधेय्येन थेरेन मोरण्डखेटकवत्तब्बेन**" आचार्य बुद्धघोष की जन्मभूमि मोरण्ड नामक खेटक (=खेडा, छोटा ग्राम) को मानते है। वे कहते है कि यह मोरण्ड-

खेटक तथा मज्झिमनिकायट्ठकथा के उपसंहार मे वर्णित मयूरसुत्तपट्टन, जहाँ रहकर बुद्धघोष ने मज्झिमनिकायट्ठकथा लिखी, दोनों ही तेलगू प्रदेश में थे। कौशम्बी जी अंगुत्तरनिकायट्ठकथा[1] के आधार पर यह भी मानते है कि बुद्धघोष दक्षिण के काञ्चीपुर आदि नगरों में भी रहे थे। संक्षेप मे, "बुद्धघोष ने क्योकि अपने जीवन का सब से महत्त्वपूर्ण कार्य दक्षिण के नगरों मे ही किया अत· वे दक्षिण के ही निवासी थे"—ऐसा निष्कर्ष आचार्य कोशाम्बी जी ने उनकी लिखी अट्ठकथाओं के साक्ष्य पर निकाला है। जो कुछ सीमा तक ही ठीक कहा जा सकता है; क्योकि इन अन्त साक्ष्यों के आधार पर भी यह तो स्पष्ट प्रमाणित नही होता आचार्य बुद्धघोष का जन्मस्थान भी दक्षिण भारत मे ही था। उक्त अन्त·साक्ष्यो के आधार पर हम यही मान सकते है आचार्य बुद्धघोष का अधिकतर जीवनकार्य दक्षिण भारत मे ही हुआ होगा।

क्या बुद्धघोष ब्राह्मण नहीं थे ?—आचार्य धर्मानन्द कोशाम्बी ने बुद्धघोष की जाति पर भी वाद उठाया है। वे उनकी रचनाओ के आधार पर उनके ब्राह्मण होने मे भी सन्देह करते है। और इसी प्रकार उनके वेद तथा पातञ्जल योग आदि शास्त्रो मे पारङ्गत होने मे भी सन्देह प्रकट करते है।

बुद्धघोष के ब्राह्मण न होने के बारे मे आचार्य कोशाम्बी तर्क देते है कि बुद्धघोष को वेद के पुरुषसूक्त जैसे महत्त्वपूर्ण अश की भी जानकारी नही थी, क्योकि इस सूक्त मे क्षत्रिय को ब्रह्मा की बाहु से उत्पन्न बताया गया है ("**बाहू राजन्य कृतः**"), जब कि बुद्धघोष ने इसी सूक्त की ओर सङ्केत करते हुए उसे हृदय से उत्पन्न बता डाला है।

परन्तु इसके उत्तर मे श्री भरतसिह उपाध्याय बहुत ठीक कहते है—"चूकि बाहु और हृदय दोनो ही साहस के प्रतीक है, अत· सम्भव है, आचार्य बुद्धघोष से, जो स्मृति से लिख रहे होगे, दोनो के साधर्म्य के कारण यह गलती (भूल) हो गयी हो। यदि इस गलती को गलती मान ही लिया जाय तो भी यह उनके ब्राह्मण या अब्राह्मण होने से किस प्रकार हो सकती है। यह सूक्तविषयक अनभिज्ञता तो बुद्धघोष के ब्राह्मण या अब्राह्मण दोनो के ही होते हुए भी हो सकती थी। अतः इसके कारण आचार्य कोशाम्बी का बुद्धघोष का अब्राह्मण ठहराना उचित नही जान पड़ता। इसी प्रकार चूकि बुद्धघोष ने गृहपति या कृषकवर्ग की प्रशसा की है, उनको 'किसी किसान का बेटा' मानना भी ठीक नही होगा, जैसा मानने का प्रस्ताव आचार्य कोशाम्बी करते है।

"सस्कृत शास्त्रो का बुद्धघोष को ज्ञान अपूर्ण था—आचार्य धर्मानन्द

---

१. आयाचितो सुमतिना थेरेन भदन्तजोतिपालेन।
काञ्चीपुरादिसु मया पुब्बे सद्धिं वसन्तेन ॥—मनोरथपूरणी।

कोशाम्बी ने यह भी उद्धरण देकर दिखाने का प्रयत्न किया है। उधर डॉ० विमलचरण लाहा ने कोई ऐसा भारतीय ज्ञानशास्त्र नही छोड़ा है जिस पर बुद्धघोष को पूर्ण अधिकार न दिखा दिया हो।[1] हम समझते हैं कि सत्य इन दोनो कोटियों के बीच मे है। आचार्य बुद्धघोष को संस्कृत साहित्य का ज्ञान अवश्य था, हो सकता है, वह उस अगाध पाण्डित्य के रूप मे न रहा हो जिसे हम एक वेदज्ञ ब्राह्मण के साथ संयुक्त देखना चाहते है।"

परिनिर्वाण—आचार्य बुद्धघोष का देहावसान कहाँ हुआ? इस विषय मे सप्रमाण कुछ नही कहा जा सकता। कम्बोडिया के निवासी यह मानते है कि आचार्य बुद्धघोष महास्थविर का परिनिर्वाण उनके देश (कम्बोडिया) में ही हुआ था। वहाँ 'बुद्धघोषविहार' नामक एक अत्यन्त प्राचीन विहार आज भी, खण्डहर रूप में ही सही, यथाकथमपि सुरक्षित है। 'दि लाइफ एण्ड वर्क ऑव् बुद्धघोष' मे डा० विमलचरण लाहा ने यही सिद्ध करने का प्रयास किया है। परन्तु 'चूळवस' तथा 'बुद्धघोसुप्पत्ति', जो अपेक्षाकृत प्राचीन तथा परम्पराप्राप्त ग्रन्थ है, के आधार पर आचार्य का परिनिर्वाण बौद्धगया मे बौधिवृक्ष के समीप हुआ, और वहो श्रद्धालुजनों ने उनके अस्थ्यवशेष पर स्तूप का निर्माण कराया। यह मानने मे हमें भा हानि क्या है!

आचार्य बुद्धघोष की रचनायें

१ **विसुद्धिमग्ग**—संयुक्तनिकाय में आई दो गाथाओं की व्याख्या के रूप मे रचित एक मौलिक प्रकरण ग्रन्थ।

२ **समन्तपासादिका**—विनयपिटक की अट्ठकथा (व्याख्या)।

३. **कङ्खावितरणी**—पातिमोक्ख की अट्ठकथा।

४ **सुमङ्गलविलासिनी**—दीघनिकाय की अट्ठकथा।

५ **पपञ्चसूदनी**—मज्झिमनिकाय की अट्ठकथा।

६. **सारत्थपकासिनी**—सयुत्तनिकाय की अट्ठकथा।

७ **मनोरथपूरणी**—अङ्गुत्तरनिकाय की अट्ठकथा।

८ **परमत्थजोतिका**—खुद्दकनिकाय के खुद्दकपाठ तथा सुत्तनिपात की अट्ठकथा।

९ **अट्ठसालिनी**—धम्मसङ्गणि की अट्ठकथा।

१०. **सम्मोहविनोदिनी**—विभङ्ग की अट्ठकथा।

---

१. देखें—डॉ० विमलचरण लाहा कृत 'दि लाइफ एण्ड वर्क ऑव् बुद्धघोष' का छठा परिच्छेद।

११-१५ **पञ्चप्पकरणट्ठकथा**—अभिधम्मपिटक के अवशिष्ट पाँच ग्रन्थो की अट्ठकथा।

१६ **जातकट्ठवण्णना**—जातक की अट्ठकथा।

१७. **धम्मपदट्ठकथा**—धम्मपद की अट्ठकथा।

१८ **ञाणोदय**—ज्ञानोदय आदि। यह ग्रन्थ अब उपलब्ध नही है।

इनके अतिरिक्तश्री कुप्पूस्वामी शास्त्री ने **पद्मचूड़ामणि** नामक ग्रन्थ को भी आचार्य बुद्धघोष की रचना माना है। परन्तु डॉ० विमलचरण लाहा ने अकाट्य प्रमाणो के आधार पर उक्त ग्रन्थ को आचार्य की रचना के रूप मे अस्वीकृत कर दिया है।

विसुद्धिमग्ग

विसुद्धिमग्ग बौद्धसाहित्य का एक अनूठा ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ प्रधानत· योगशास्त्र का विशद व्याख्यान है, अत इसमे, योगाभ्यास मे प्रवृत्त होनेवाले जिज्ञासु के लिये, प्रारम्भ से लेकर सिद्धि तक की समग्र विधियाँ तो क्रमबद्ध ढंग से वर्णित की ही गयी है, साथ ही प्रसङ्ग-प्रसङ्ग पर बौद्धदर्शन की अन्य विवेचनात्मक गवेषणाएँ तथा ब्राह्मणदर्शनो की विशेषत· व्याकरण, न्याय, सांख्य, योग, आयुर्वेद तथा मीमांसा शास्त्रो की गुत्थियाँ भी अतीव सरल भाषा में समझा दी गयी है। अतः यदि विद्वान् लोग इस ग्रन्थ को 'बौद्धधर्म का विश्वकोष' कहते है तो इसमे कोई अतिशयोक्ति नही है। यह कहकर उन विद्वानो ने इस ग्रन्थ की तथा इसके रचयिता आचार्य बुद्धघोष की वास्तविक प्रशसा ही की है।

आचार्य बुद्धघोष अपने इस विसुद्धिमग्ग को अपनी सम्पूर्ण रचनाओ का मध्य बिन्दु मानते थे, अतः वे अपनी अट्ठकथाओ के मनन-चिन्तन करने वाले पाठक से यह अपेक्षा रखते थे कि वह सर्वप्रथम विसुद्धिमग्ग को पढे। इस लिये उन्होने अपनी आगे की अट्ठकथाओ के प्रारम्भ मे ही बार-बार कहा है—'चारों निकायों (दीघ, मज्झिम, सयुत्त तथा अगुत्तर) के मध्य स्थित यह विसुद्धिमग्ग उन निकायो के बुद्धसम्मत अर्थ को प्रकाशित करने में सहायक होगा[1]।'

इससे यह स्पष्ट ही सिद्ध है कि आचार्य ने पहले विसुद्धिमग्ग की रचना की, बाद में उक्त चारों निकायों की अट्ठकथाओं की। इसीलिये विसुद्धिमग्ग में जिस विषय का विस्तृत निरूपण कर दिया है उसे पुनः उन अट्ठकथाओं मे नही

---

१ "मज्झे विसुद्धिमग्गो एस चतुन्नं पि आगमान हि।
ठत्वा पकासयिस्सति तत्थ यथाभासित अत्थ" ति॥

दुहराया और वहाँ लिख दिया कि "इस सबका शुद्धतया निरूपण विसुद्धिमग्ग मे कर दिया है, अत उसे जिज्ञासु पाठको को वही देख लेना चाहिये। उसे मै यहाँ पुन· दुहराऊँगा"।[1]

जैसा कि सर्वविदित है, विसुद्धिमग्ग संयुत्तनिकाय में आयी दो गाथाओ के आधार पर रचित, बौद्ध योगशास्त्र का स्वतन्त्र मौलिक प्रकरण-ग्रन्थ है। इन दोनो में, पहली गाथा प्रश्न के रूप मे तथा दूसरी गाथा उत्तर के रूप मे है। इस दूसरी गाथा का ही आचार्य ने विसुद्धिमग्ग के रूप में विस्तृत व्याख्यान किया है।

पहली गाथा है—

अन्तो जटा बहि जटा जटाय जटिता पजा।
तं तं, गोतम पुच्छामि—को इमं विजटये जटं ? ति ॥

[एक बार भगवान् बुद्ध श्रावस्ती में विहार कर रहे थे, उस समय किसी देवता ने आकर भगवान् से पूछा—अन्दर भी जञ्जाल (उलझन) है, बाहर भी जञ्जाल है, यह सारा संसार जञ्जाल में उलझा पड़ा है। भगवन् ! मैं आपसे पूछता हूँ कि कौन इस जञ्जाल से छुटकारा पा सकता है ? अर्थात् यह समग्र संसार भवबन्धन में जकडा हुआ है, कौन किस उपाय से इससे मुक्त हो सकता है ?]

दूसरी गाथा है—

"सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो चित्तं पञ्ञं च भावयं।
आतापी निपको भिक्खु सो इमं विजटये जटं" ति ॥

[इसके उत्तर में भगवान् कहते है—शील (सदाचार) में प्रतिष्ठित हो कर जो प्रज्ञावान् पुरुष जब समाधि और प्रज्ञा की भावना करता है, तब वह उद्योगी तथा ज्ञानवान् पुरुष भिक्षु (त्यागी) हो कर इस जंजाल (भवबन्धन) को सुलझा लेता है।]

आचार्य ने भगवान् के इस उत्तर के सहारे समग्र बौद्ध सिद्धान्त और दर्शन को एक निश्चित उद्देश्य में ग्रथित कर विसुद्धिमग्ग की अवतारणा की है। वह निश्चित उद्देश्य है—साधना मार्ग के उत्तरोत्तर विकास का स्पष्टतम निर्देश। दूसरे शब्दो में हम यों भी कह सकते हैं कि विसुद्धिमग्ग बौद्धयोग को एक अत्यन्त क्रमबद्ध पद्धति से उपस्थित करने का बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयास है।

---

१ "इति पन सब्ब यस्मा विसुद्धिमग्गे मया सुपरिसुद्धं।
वुत्त, तस्मा भिय्यो न त इध विचारयिस्सामी" ति ॥

विसुद्धिमग्ग का **वर्ण्य विषय** संक्षेप में यह है—शील, समाधि और प्रज्ञा द्वारा चित्त के सर्वमल का निरसन तथा निर्वाण की प्राप्ति (का उपाय)। बुद्ध-शासन की यही तीन शिक्षा है। शील से शासन की आदिकल्याणता प्रकाशित होती है, समाधि से मध्येकल्याणता, तथा प्रज्ञा (पञ्ञा) से पर्यवसानकल्याणता। शील से अपाय (दुर्गतिविनिपात) का अतिक्रमण, समाधि से कामधातु का और प्रज्ञा से सर्वभव का अतिक्रमण होता है। जो व्यक्ति निर्वाण के लिए यत्नशील होता है उसे पहले शील मे प्रतिष्ठित होना चाहिये। जब शील अल्पेच्छता, सन्तुष्टि, प्रविवेक (एकान्तवास) आदि गुणों द्वारा सुविशुद्ध हो जाता है तब समाधि की भावना का आरम्भ होता है। समाधि उस धर्म को कहते है जिसके प्रभाव से चित्त तथा चैतसिक धर्मो की एक आलम्बन मे विना किसी विक्षेप के सम्यक् स्थिति हो। समाधि मे विक्षेप का विध्वस होता है, और चित्त, चैतसिक विप्रकीर्ण न हो कर एक आलम्बन मे पिण्डरूप से अवस्थित होते है। समाधि दो तरह की होती है—१. लौकिक समाधि, और २. लोकोत्तर समाधि। काम, रूप और अरूप भूमियो की कुशल चित्तैकाग्रता को लौकिक समाधि कहते है तथा जो चित्तैकाग्रता आर्यमार्ग से सम्प्रयुक्त होती है उसे लोकोत्तर समाधि कहते है। इस, लोक को उत्तीर्ण कर स्थित रहने वाली, लोकोत्तर समाधि का भावना-प्रकार प्रज्ञा के भावना-प्रकार मे संगृहीत है। प्रज्ञा के सुभावित होने से ही लोकोत्तर समाधि की भावना होती है। अत लोकोत्तर समाधि प्रज्ञास्कन्ध का विषय है।

प्रयोजन—हम पहले कह आये है कि आचार्य बुद्धघोष बुद्धमत में प्रव्रजित होने से पूर्व पातञ्जल योग मे निष्णात थे। निश्चय ही उन्होंने बौद्धों के इस योगदर्शन को साधको के कल्याण के लिये विसुद्धिमग्ग के रूप में प्रकाशित किया है। भिक्षु जगदीश काश्यप के मत में "पातञ्जल योगदर्शन की अपेक्षा विसुद्धिमग्ग अधिक सुव्यवस्थित और नियमबद्ध है—यह कहना अतिरञ्जना नही होगी"। आचार्य बुद्धघोष ने साधको के कल्याण के लिए ही इस ग्रन्थ की रचना की है—यह बात उन्होने छिपायी नही, अपि तु प्रत्येक परिच्छेद के अन्त में **'साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे'** कहकर अपने हृदय की बात बार-बार स्पष्ट कर दी है।

इसी प्रकार उन्होंने ग्रन्थ के प्रारम्भ में भी कह दिया कि मै अब विशुद्धि के मार्ग का प्रवचन करूँगा, सभी साधु पुरुष, जिन्हे अपनी चित्तविशुद्धि की कामना है, मेरे कहे हुए को आदरपूर्वक सुने।[1]

---

१. "विसुद्धिमग्गं भासिस्सं त मे सक्कच्च भासतो।
विसुद्धिकामा सब्बे पि निसामयथ साधवो" ति॥

इस तरह अन्त· साक्ष्य के स्पष्ट आधार से ही सिद्ध हो जाता है कि इस ग्रन्थ का निर्माण केवल साधु (साधक) जन के प्रामोद्य (कल्याण) के लिए ही हुआ है।

आधार—यह ग्रन्थ महाविहारवासी भिक्षुओ की उपदेश-विधि पर आधृत है, यह बात भी आचार्य ने प्रारम्भ मे ही यह कर स्पष्ट कर दी है कि "महा-विहारवासी भिक्षुओ की उपदेश-विधि पर आधृत विसुद्धिमग्ग ग्रन्थ का कथन करूँगा।[1]

यह बात पहले कही जा चुकी है कि बुद्धघोष के समय तक पालित्रिपिटक तथा पालिसाहित्य के विषय में सिंहलद्वीप की प्रामाणिकता सर्वोपरि थी। सिंहल द्वीप मे भी अनुराधपुरस्थित महाविहार पालि-साहित्य के बारे मे सर्वोपरि प्रामाणिक पीठ था। आचार्य का इसी महाविहार में रहनेवाले स्थविर भिक्षुओ की ओर सकेत है। इस तरह महाविहारवासी भिक्षुओं के नाम-ग्रहण से आचार्य यह कहना चाहते है कि विसुद्धिमग्ग मे जो कुछ भी लिखा या कहा गया है वह स्वकपोलकल्पना नही है, अपितु उस समय के प्रामाणिक भिक्षुओ की सरणि के अनुसार बौद्धयोग का यह एक प्रामाणिक विवेचन है।

अधिकारी—अत· चित्तविशुद्धि का मार्ग खोजने वाले सभी प्रज्ञावान् योगिजनो को इस विसुद्धिमग्ग ग्रन्थ का आदर करना चाहिए।[2] ये ही इस ग्रन्थ के अध्ययन के वास्तविक अधिकारी है।

विसुद्धिमग्ग की विषयवस्तु

विसुद्धिमग्ग तीन भाग और तेईस परिच्छेदो मे विभक्त है। पहला भाग **शीलस्कन्ध** कहलाता है। इसमें, प्रथम दो परिच्छेदों में, शील तथा उसकी प्राप्ति के उपायभूत तेरह धुताङ्गों का विशद वर्णन है। द्वितीय भाग **समाधिस्कन्ध** कहलाता है। इसमे परिच्छेदक्रम से ११ परिच्छेदो (३ से १३ तक) में कर्मस्थानों की ग्रहणविधि, पृथ्वीकसिण, शेषकसिण, अशुभ कर्मस्थान, छह अनुस्मृति, अनुस्मृति कर्मस्थान, ब्रह्मविहार, आरूप्य, समाधि, ऋद्धि-विध तथा अभिज्ञाओ का वर्णन है। तीसरा भाग **प्रज्ञास्कन्ध** है, इसमे (१४ से २३ परिच्छेद तक) क्रमशः स्कन्ध, आयतन-धातु, इन्द्रिय-सत्य, प्रतीत्य-समुत्पाद (प्रज्ञाभूमि), दृष्टिविशुद्धि, काक्षावितरणविशुद्धि, मार्गामार्गज्ञानदर्शन-

---

१ "महाविहारवासीन देसनानयनिस्सितं।
विसुद्धिमग्गं भासिस्स"

२ "तं मे सक्कच्च भासतो।
विसुद्धिकामा सब्बे पि निसामयथ साधवो" ति।

विसुद्धि, प्रतिपदाज्ञानदर्शनविशुद्धि, ज्ञानदर्शनविशुद्धि तथा अन्त में प्रज्ञाभावना का माहात्म्य वर्णित है।

आगे हम क्रमश इस ग्रन्थ के प्रत्येक परिच्छेद का वर्ण्य विषय विस्तरशः लिखेगे, ताकि पालि न जानने वाले जिज्ञासु जन भी इसका लाभ उठा सके, अतः यहाँ हम इतना ही कहकर अन्य प्रसङ्ग पर आते है।

विसुद्धिमग्ग का सम्पादन

इस ग्रन्थ के सम्पादन मे हमने अधोलिखित सस्करणो, ग्रन्थों तथा टीकाओं का आलम्बन किया है—

१. आचार्य धर्मानन्द कोशाम्बी द्वारा सम्पादित तथा भारतीय विद्याभवन, बम्बई से प्रकाशित (१९४० ई०) विसुद्धिमग्ग। मूल पालि-पाठ के लिए यह सर्वतोभद्र सस्करण है। हमने अपने इस सस्करण मे इसी के आधार पर ही प्राय· सर्वत्र पाठ रखा है।

२. आचार्य रेवतधम्म द्वारा सम्पादित, वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय से प्रकाशित (सन् १९७२ ई०) विसुद्धिमग्ग (तीन भागो मे)। यह संस्करण आचार्य धम्मपाल रचित **परमत्थमञ्जूसा** नामक विसुद्धिमग्गमहाटीका के साथ प्रकाशित हुआ है। इस के सम्पादक के बर्मा देश का निवासी होने के कारण और बर्मा देश के ग्रन्थो के आधार पर ही सम्पादन करने के कारण इस सस्करण पर बर्मी परम्परा की अधिक छाप है, जिससे विसुद्धिमग्ग मे आगत बहुत से शब्द भारतीय परम्परा, जो कि नालन्दा से प्रकाशित पालि त्रिपिटक तथा अट्ठकथा साहित्य में स्पष्ट परिलक्षित होती है, से दूर जा पड़े है, अत पढने-बोलने में कुछ अट-पटे लगते है। क्योंकि यह ग्रन्थ भारत में पहलो बार प्रकाशित हो रहा था, इस दृष्टि का भी सम्पादक को अवश्य ध्यान रखना चाहिये था। इस तरह, शब्द-वैमत्य के अतिरिक्त, यह संस्करण भी सुपरिशुद्ध है। अतः ग्रन्थ के सम्पादन में हमें इस संस्करण से भी अत्यधिक सहायता मिली है।

३ आचार्य धर्मानन्द कोशाम्बी कृत विसुद्धिमग्ग-टीका का भी हमने पाद-टिप्पणियो मे सहारा लिया है।

४. डॉ० भिक्षु धर्मरक्षित कृत तथा ज्ञानमण्डल लिमिटेड वाराणसी से प्रकाशित (सन् १९५६ ई०) विसुद्धिमग्ग का हिन्दी भाषान्तर। इस संस्करण ने भी हमको पाद-टिप्पणियों मे यत्र-तत्र सहारा दिया है।

५. पाद-टिप्पणियाँ प्रायः हमारी अपनी हैं। विद्याध्ययन-काल मे गुरु-मुख से इस ग्रन्थ का श्रवण करते समय जो-जो स्थल कठिन लगा, वहाँ-वहाँ अपने

समझने के लिए कुछ अर्थ-संकेत लिखे थे, वे अर्थ-सकेत आज भी (ग्रन्थ-सम्पादनके समय) पुनः देखे गये तो इतने अच्छे लगे कि उन्हे पाद-टिप्पणियो मे देने का मोह सवृत न हो सका । हमे विश्वास है, इन टिप्पणियो से वह-वह स्थल तो अन्य जिज्ञासुओ के लिए सुविशद हो ही जायेगा ।

६. ग्रन्थ का पैराग्राफिग तथा उसका क्रमाङ्क हमारा अपना है । कारण यह है कि श्री कोशाम्बीजी के सस्करण मे हमे लगा कि उन्होने क्रमाङ्क के सम्बन्ध मे रोमन संस्करण का अन्धानुकरण किया है । जिससे कही-कही उनके संस्करण मे विषय-वस्तु की हास्यास्पद स्थिति बन गयी है । डॉ० रेवतधम्म ने पैराग्राफिग तथा क्रमाङ्क के सम्बन्ध मे अधिक सावधानी रखी है, परन्तु वे भी बर्मी संस्करण का मोह-सवरण नही कर सके । अतः हमने दोनो के ही क्रमाङ्को को न लेकर विषयवस्तु के अनुसार प्रारम्भ मे स्वतन्त्र क्रमाङ्क दिये है । तथा अवान्तर विषयवस्तु को समझाने के लिए अन्त मे अवान्तर क्रमाङ्क भी दिये है । उस से भी काम न चला तो कही-कही (क), (ख) से भी विषय-वस्तु का विभाजन किया है ।

७ अनुसन्धाताओ की सुविधा के लिये, ग्रन्थ मे आये त्रिपिटक के ग्रन्थो के उद्धरणों के अन्त मे कोष्ठक मे पृष्ठाङ्कसहित सम्बद्ध ग्रन्थ का नाम दे दिया गया है ।

८. पालि के साधारण पाठको को भी ग्रन्थ सुखेन पठनीय हो सके, अत हमने अनावश्यक सन्धि वाले पद अलग-अलग लिखे है खास कर वग्गन्त (पर-सवर्ण) की सन्धि वाले पद । इस से ग्रन्थ की परम्परा भी सुरक्षित रहेगी, और साधारण पाठको के लिए यह ग्रन्थ सुग्राह्य होगा ।

९. विराम आदि चिह्नों के लिए हमने नालन्दा की परम्परा को आदर्श मानकर उसी के अनुसार समग्र चिह्नो का प्रयोग किया है ।

१०. इस तरह गुरु-कृपा से अत्यधिक परिश्रमपूर्वक इस ग्रन्थ का सम्पादन किया गया है । पूर्ण विश्वास है कि हमारा यह परिश्रम विद्वज्जन तथा छात्रजन— दोनों को ही समान रूप से हितावह तथा सुखावह होगा ।

११. इस ग्रन्थ के सम्पादन मे जिन-जिन महानुभावो की कृतियो का, रचनाओं का, ग्रन्थो का हमने सहारा लिया है, उसके लिए हम उन सज्जनो के हृदय से सर्वातिशयतया कृतज्ञ हैं । तथा इस के लिए उनका आभार मानना हमारा प्रथम कर्तव्य है ।

२५.३ ७७
वाराणसी

विद्वज्जनवशंवद
स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

अन्तरङ्गकथा

महाविहारवासीनं. देसनानयनिस्सिता ।
विसुद्धिमग्गगन्थस्स अब्भन्तरकथा अयं ।।

विसुद्धिमग्ग की विषय-भूमि से अवगत होने के लिए यह परम आवश्यक है कि हम पहले इस ग्रन्थ के प्रत्येक निर्देश मे प्रतिपादित विषय से परिचित हो जाँय। अत· अब हम क्रमश प्रत्येक निर्देश मे आग विषय-वस्तु का सक्षिप्त परिचय देना उचित समझते है।

१. शीलनिर्देश

एक समय भगवान् श्रावस्ती के जेतवन में विहार कर रहे थे। रात्रि का समय था। किसी देवपुत्र ने भगवान् से आकर पूछा—भगवन् ! यह मनुष्य (जैसे) अन्दर जजालों से घिरा हुआ है, (वैसे ही) बाहर भी जंजालो से घिरा हुआ है। अत. हे गौतम ! मेरा आप से यही पूछना है कि कौन इन जजालों को काट (कर मुक्ति पा) सकता है ?

भगवान् ने उत्तर दिया—देवपुत्र ! प्रज्ञावान्, वीर्यवान् तथा पण्डित साधक ही शील में प्रतिष्ठित हो कर इन उपर्युक्त जंजालो को काट सकता है।

इस तरह भगवान् ने अपने संक्षिप्त उत्तर मे ससार से मुक्ति पाने के लिए शील, समाधि, तथा प्रज्ञा की भावना उपदेश किया। जो पुरुष स्वचित्त को शील से सुपरिशुद्ध कर चुका होता है वही समाधि और प्रज्ञा की भावना का अधिकारी होता है, वही इन उपायो द्वारा निर्वाण को प्राप्त कर सकता है। अर्थात् उक्त तीन उपाय ही निर्वाण के मार्ग है। इन्हें 'विशुद्धि का मार्ग' कह सकते हैं।

उक्त (शील, समाधि और प्रज्ञा) तीन में से प्रथम शील के विषय मे ये सात प्रश्न होते हैं—

१ शील क्या है ? २. किस अर्थ में शील है ? ३. शील के लक्षण, कार्य, जानने के आकार तथा आसन्न कारण क्या है ? ४. शील का महत्त्व क्या है ? ५. शील कितने प्रकार का है ? ६ शील का मल क्या है ? ७. और शील की विशुद्धि क्या है ?

१. प्रथम प्रश्न का उत्तर है—प्राणि-हिंसा आदि से विरत रहने वाले तथा व्रतादि का आचरण करने वाले साधक के चेतनादि धर्म ही 'शील' कहलाते है।

शील के प्रसङ्ग मे **पटिसम्भिदामग्ग** मे कहा है—"शील किसे कहते है? चेतना को, चैतसिक को, सवर को तथा अव्यतिक्रम को 'शील' कहते है।" यहाँ चेतना से तात्पर्य है प्राणातिपातादि से विरत रहने वाले तथा व्रताचार-सम्पन्न की **चेतना**। **चैतसिक शील** कहते है प्राणातिपातादि से विरत रहनेवाले की विरति को। संवर का अर्थ है निवृत्ति। वह पाँच प्रकार का होता है—१. प्रातिमोक्ष संवर, २. स्मृतिसवर, ३ ज्ञानसंवर, ४ क्षान्तिसवर, तथा ५ वीर्य-संवर। इस प्रकार यह पाँच प्रकार का सवर तथा पाप से डरने वाले कुलपुत्रो की सम्प्राप्त पापवस्तु से निवृत्ति ही **संवरशील** है। **अव्यतिक्रम शील** से तात्पर्य है—ग्रहण किये हुए शील का व्यतिक्रम (उल्लङ्घन) न करना।

२. द्वितीय प्रश्न के उत्तर मे आचार्य कहते है—शीलन (आधार या सयम) के अर्थ मे शील होता है। अर्थात् काय-कर्म आदि का सयम और सुशीलता से एक जैसा बने रहना या ठहरने के लिए आधार की भाँति कुशल धर्मो को धारण करना—इन अर्थो मे यहाँ शील शब्द का प्रयोग है।

३ चेतन आदि भेदो से नानाविध उस शील का काय-कर्म आदि के सयम तथा कुशल धर्मो के आधार के कारण जो शीलन है, वही उसका **लक्षण** है। दौश्शील्यविध्वसन आदि उसके **कार्य** है। कायशुद्धि, वाक्शुद्धि तथा मन शुद्धि आदि उस शील के **जानने के आकार** है। अर्थात् जब ये शुद्धियाँ आने लगे तो समझ लेना चाहिए कि उसका शील सुविशुद्ध हो रहा है। इसी तरह जब उक्त योगाभिलाषी मे ह्री (लज्जाभाव) का सम्यक्तया उत्पाद होने लगे तो समझना चाहिए कि उसमे शील स्थिर हो गया है। क्योकि ह्री (लज्जा) शील **का आसन्न कारण** है।

४. हेय उपादेय वस्तुओं के लिए पश्चात्ताप न करना शील का माहात्म्य (गुण) है। अगुत्तरनिकाय में भगवान् ने कहा है—"आनन्द, कुशल शील पश्चात्ताप न करने के लिये है। पश्चात्ताप न करना इसका गुण है।" और इसी प्रसङ्ग मे दीघनिकाय मे उनका वचन है—"गृहपतियो! शीलवान् की शील सम्पत्ति के पाँच गुण है। कौन से पाँच? १. यहाँ शीलवान् व्यक्ति, प्रमाद मे न पड़ने के कारण, बहुत सा धन-वैभव प्राप्त करता है, २. ख्याति, सुयश प्राप्त करता है; ३. सभी मनुष्यसमूहो के बीच, भले ही वे ब्राह्मण हो, क्षत्रिय हो, वैश्य हो, शूद्र हो, या श्रमण हो, वह निर्भीक नि:सकोच जाने की हिम्मत रखता है; ४. शीलवान् व्यक्ति मृत्यु के सामने आने तक अपने होश-हवाश नही खोता, ५. और वह मरने के बाद सुगति-स्वर्गलोक को प्राप्त करता

है।" मज्झिमनिकाय मे भी भगवान् का वचन है—"यदि कोई भिक्षु चाहता है कि वह अपने साथियों में सम्मान की दृष्टि से देखा जाय, उनका वह प्रियपात्र हो तो उसे शील (सदाचार) का ही पालन करना चाहिए।"

५ "शील कितने प्रकार का होता है ?"—इस पाँचवे प्रश्न के उत्तर में आचार्य ने एकविध, द्विविध, त्रिविध, चतुर्विध तथा पञ्चविध भेद से नाना प्रकार से शील के भेद किये है। परन्तु वे सब चतुर्विध पारिशुद्धिशील मे ही उपसंहृत हो सकते है अत इनका ज्ञान अवश्य कर लेना चाहिएं। चार पारिशुद्धिशील ये है—(क) प्रातिमोक्षसवरशील, (ख) इन्द्रियसवरशील, (ग) आजीव पारिशुद्धिशील, और (घ) प्रत्ययसन्निश्रितशोल।

(क) संवर का अर्थ है ढकना। प्रातिमोक्ष कहते है भगवान् के शिक्षापदो को। उस प्रातिमोक्ष (शिक्षापद) से सवृत शील को **प्रातिमोक्षसंवरशील** कहते है। आचारगोचर से सम्पन्न रहना, अल्पमात्र दोष मे भी भय देखना—प्रातिमोक्षसवरशील कहलाता है।

(ख) शरीर या वाणी द्वारा शीलो का उल्लङ्घन न करना **इन्द्रियसंवरशील** कहलाता है। वह प्रातिमोक्षसवरशील सम्पन्न भिक्षु आँख से रूप को देखकर, कान से शब्द को सुनकर, नाक से गंध को सूँघ कर, जीभ से रस को चखकर, काय से स्पर्शकर, मन से धर्मो को जानकर निमित्त और अनुव्यञ्जनो को ग्रहण नही करता है, जिनसे कि उन-उन इन्द्रियो मे सवर रहित होने पर लोभ-दौर्मनस्यादि बुरे धर्म उत्पन्न होते है, उनके सवर के लिए उसका तत्पर होना, उसके द्वारा उनकी सुरक्षा करना ही इन्द्रियसवरशील है।

(ग) आजीविकाके प्रसङ्ग मे कहे गये छह शिक्षापदो अनुसार आचरण करना **आजीवपारिशुद्धिशील** कहलाता है। वे छह शिक्षापद पाराजिक मे यो कहे है—१. आजीविका के लिए जनता को इन्द्रजाल दिखाना, २. ठग-विद्या ३. अपने को बढ़ा-चढ़ा कर दिखाना कि जिससे कुछ मिले, ४. भिक्षु द्वारा अपने को बढा-चढ़ा हुआ दिखाकर अच्छा भोजन या वस्त्र या अन्य लाभ की वस्तु प्राप्त करना, ६ या अपनी प्रशंसा कर जनता से उपभोग वस्तुएँ प्राप्त करना। इन छह शिक्षापदों के अनुसार आजीविकाशील-रक्षा ही आजीवपारिशुद्धिशील कहलाता है।

(घ) चीवर, पिण्डपात, शयनासन तथा रोग के लिए उपयोगी औषधियाँ—इन चार प्रत्ययो का, प्रज्ञापूर्वक ठीक-ठीक जानकर सेवन करना ही **प्रत्ययसन्निश्रितशील** कहलाता है।

आचार्य कहते हैं—जैसे टिटिहरी पक्षी अपने अण्डे की, चमरी गाय अपनी पूँछ की, माता अपने पुत्र की, काणा व्यक्ति अपनी आँख की प्राणों की तरह

रक्षा करता है; उसी तरह योगाभ्यासी व्यक्ति को अपने उक्त चतुर्विध शील के प्रति प्रेम गौरव तथा एकनिष्ठा रखनी चाहिए।

प्रातिमोक्षसवरशील को श्रद्धा से पूर्ण करना चाहिए। इन्द्रियसंवरशील को स्मृति से पूर्ण करना चाहिए, क्योंकि स्मृति से सरक्षित इन्द्रियाँ लोभ आदि से आक्रान्त नही होती। इसी प्रकार आजीवपारिशुद्धिशील को वीर्य से तथा प्रत्यय-सन्निश्रित शील को प्रज्ञा से पूर्ण किया जाता है।

पञ्चक-गणना से शील पाँच प्रकार का होता है – १ पर्यन्तपारिशुद्धि शील, २ अपर्यन्तपारिशुद्धि शील, ३ परिपूर्णपारिशुद्धि शील, ४ अपरामृष्टपारिशुद्धि शील, तथा ५. प्रतिप्रश्रब्धिपारिशुद्धि शील। इन पाँचो का विस्तार आगे ग्रन्थ से समझ लेना चाहिए।

६ अब छठा प्रश्न रह जाता है— शील का मल क्या है ? शील का खण्डित होना ही उस का मल है। सात प्रकार के मैथुनधर्म के संयोग से शील खण्डित होता है। अत· शील-सरक्षण के लिए साधक को सात प्रकार के मैथुन धर्म से सतत बचते रहना चाहिए। दर्शन स्पर्शन, केलि आदि सात प्रकार के मैथुनधर्मो का विवरण प्रसङ्गवश अंगुत्तरनिकाय (तृतीय भाग १९४ पृ०) मे दिया गया है।

७ सातवे प्रश्न के उत्तर में सील का अखण्ड रहना ही उसकी विशुद्धि है। यह विशुद्धि शिक्षापदो के समादान से, प्रायश्चित से, सप्तविध मैथुनो से सर्वथा दूर रहने से, क्रोध, ईर्ष्या आदि दुर्गुणो के अनुत्पाद से तथा अल्पेच्छता सन्तोष आदि गुणो के उत्पाद से साधक को सग्रह करनी चाहिए।

२. धुताङ्गनिर्देश

भगवान् ने, जिन जिज्ञासुओं द्वारा लाभ-सत्कार आदि का परित्याग कर दिया गया है उन अनुलोम मार्ग को पूर्ण करना चाहने वालों के लिए, इन १३ धुताङ्गों का उपदेश किया है। ये सभी धुताङ्ग शील-समादान के लिए अत्यावश्यक हैं। क्रमश· वे १३ धुताङ्ग ये हैं—

१ पंसुकूलिकङ्ग (पांशुकूलिकाङ्ग), २. तेचीवरिकङ्ग (त्रैचीवरिकाङ्ग), ३. पिण्डपातिकङ्ग (पिण्डपातिकाङ्ग), ४. सपदानचारिकङ्ग (सापदानचारिकाङ्ग), ५. एकासनिकङ्ग (ऐकासनिकाङ्ग), ६ पत्तपिण्डिकङ्ग (पात्रपिण्डिकाङ्ग), ७ खलुपच्छाभत्तिकङ्ग (खलुपश्चाद्भक्तिकाङ्ग), ८ आरञ्ञिकाङ्ग (आरण्यकाङ्ग), ९. रुक्खमूलिकङ्ग (वृक्षमूलिकाङ्ग), १०. अब्भोकासिकङ्ग (अभ्यवकाशिकाङ्ग), ११. सोसनिकङ्ग (श्माशानिकाङ्ग), १२. यथासन्थतिकङ्ग (यथा-सस्तरिकाङ्ग), १३. नेसज्जिकङ्ग (नैषद्यकाङ्ग)।

ये सभी अङ्ग, ग्रहण करने से क्लेशनाशक होने के कारण, धुत (परिशुद्ध)

भिक्षु के अङ्ग कहलाते है। या क्लेशों को धुन डालने के कारण धुत नामक ज्ञानाङ्ग कहलाते है।

इन सभी को भगवान् से ग्रहण करना चाहिए। भगवान् की अनुपस्थिति मे महाश्रावक से, महाश्रावक के न होने पर, क्षीणास्रव, अनागामी, सकृदागामी, स्रोतआपन्न से, उनके भी न होने पर त्रिपिटकधर, द्विपिटकधर, एकनिकायधर या अट्ठकथाचार्य से ग्रहण करना चाहिए। ये भी न हो तो धुताङ्गधारी से इनको ग्रहण करना चाहिए। इस के भी न होने पर चैत्य को निर्मल कर उत्कुटिक (उकडू) बैठकर, भगवान् के पास बैठे हुए के समान स्वयं ग्रहण करना भी उचित है।

१. पाशु का अर्थ है धूल। सड़क श्मसान या कूडा-कर्कट के ढेर पर जहाँ कही धूल पर पडे वस्त्र 'पाशुकूल' कहलाते है, उन्हे धारण करने वाला 'पांशु-कूलिक' कहलाता है। इसका अग (नियम) 'पाशुकूलिकाङ्ग' कहलाता है।

जो भिक्षु पांशुकूलिकाङ्गव्रत धारण करता है, उसे १. "गृहस्थो द्वारा दिये गये चीवर को त्यागता हूँ", या २ 'पाशुकूलिकाङ्ग ग्रहण करता हूँ'—इन दोनो मे से एक का अधिष्ठान करना चाहिए।

२ भिक्षु के तीन वस्त्र (चीवर) होते है—(क) सङ्घाटि, (ख) उत्तरासङ्ग, (ग) अन्तरवासक। जो भिक्षु इन तीन वस्त्रो से अधिक ग्रहण नही करता उसे 'त्रैचीवरिक' कहते है। उसका यह धुताङ्ग 'त्रैचीवरिकाङ्ग' कहलाता है।

३ भिक्षा के रूप मे प्राप्त अन्न या दूसरों के द्वारा दिया हुआ अन्न 'पिण्ड-पात' कहलाता है। जो पिण्डपात के लिए घर-घर घूमता है उसे 'पिण्डपातिक' कहते है। उसका यह धुताङ्ग 'पिण्डपातिकाङ्ग' कहलाता है।

४ ग्राम मे विना अन्तर डाले प्रत्येक घर से भिक्षा ग्रहण करने वाला 'सापदानचारिक' कहलाता है। इसका यह अग 'सापदानचारिकाङ्ग' कहलाता है।

५ एक आसन पर बैठ कर भोजन करने वाला (अर्थात् रात दिन मे एक बार भोजन करने वाला) भिक्षु 'ऐकासनिक' कहलाता है। उसका यह व्रत 'ऐकासनिकङ्ग' कहलाता है।

६ भिक्षार्थ गृहीत पात्र मे पड़ा हुआ अन्न 'पात्रपिण्ड' कहलाता है। उस पात्रपिण्ड को ही ग्रहण करने वाले भिक्षु के इस व्रत को पात्रपिण्डिकाङ्ग' कहते हैं।

७. 'खलु' इस निपात का प्रयोग यहाँ निषेध अर्थ में है, एक बार भोजन करने के बाद मिले भोजन का निषेध करना 'खलुपञ्चाद्भक्त' कहलाता है। इस नियम का पालन 'खलुपश्चाद्भक्तिकाङ्ग' कहलाता है।

८. आरण्यकाङ्ग का अर्थ है—अरण्य (जगल) में रहने वाला। जो भिक्षु ग्राम, नगर के शयनासन को छोड़ जगल मे रहने का ही नियम धारण करता है, उसका यह नियम 'आरण्यकाङ्ग' कहलाता है।

९ ईंट, पत्थर, तृण आदि से बने गृह, कुटी आदि को छोडकर केवल वृक्ष के नीचे रहना 'वृक्षमूल' कहलाता है। इस नियम को धारण करने वाला भिक्षु 'वृक्षमूलिका' कहलाता है। इस के इस धुताङ्ग को 'वृक्षमूलिकाङ्ग' कहते है।

१० छाये हुए गृह, कुटी या वृक्षमूल को छोड़ खुले आकाश के नीचे रहने के व्रत को 'अभ्यवकाशिकाङ्ग' कहते है।

११. इसी तरह उपर्युक्त वासयोग्य स्थानो को छोड़कर एक श्मशान मे रहने के व्रत को 'श्माशानिकाङ्ग' कहते है।

१२ 'यह आसन आप के लिए है' यह कह कर पहले से बिछाये आसन को ही ग्रहण करने वाला भिक्षु 'यथासस्तरिक' कहलाता है। इस के इस नियम को 'यथासंस्तरिकाङ्ग' कहते है।

१३ सोना, टहलना, खडा होना और बैठना भिक्षु के ये चार ईर्यापथ कहे गये है। इन मे से सोना छोड़कर सर्वदा (दिन-रात) बैठा रहने वाला भिक्षु 'नैषद्यक' कहलाता है। इस व्रत का पालन करना 'नैषद्यकाङ्ग' कहलाता है।

ये तेरहो धुताङ्ग प्रत्येक साधक को पालन करना आवश्यक नही है, अपितु जिस साधक के राग, द्वेष या मोह अधिक सवृद्ध हो, उसी के लिए ये धुताङ्ग आवश्यक बताये गये है। क्योकि ये अत्यधिक कायक्लेशदायक है, अत· आचार्य ने इन धुताङ्गो को प्रत्येक साधक के लिये आवश्यक नही माना। मज्झिमा पटिपदा मानने वाली बौद्ध साधना मे यह आवश्यक हो भी कैसे सकता था !

३. कम्मट्ठानगहणनिद्देस

समाधि बहुविध है। यदि सब समाधियो का वर्णन किया जाय तो अभिप्रेत अर्थ की सिद्धि नही होगी और यह भी सम्भव है कि इस प्रकार विक्षेप उपस्थित हो। इसलिए यहाँ केवल अभिप्रेत अर्थ का ही उल्लेख किया जायगा। आचार्य को यहाँ लौकिक-समाधि ही अभिप्रेत है। काम, रूप और अरूप भूमियो की कुशल-चित्तैकाग्रता को लौकिक-समाधि कहते है। जो एकाग्रता आर्यमार्ग से सम्प्रयुक्त होती है, उसे लोकोत्तर-समाधि कहते है। लोकोत्तर-समाधि का भावना-प्रकार प्रज्ञा के भावना-प्रकार मे संगृहीत है। प्रज्ञा के सुभावित होने से लोकोत्तर समाधि की भावना होती है। इस लोकोत्तर समाधि की भावना के विषय मे आगे कहा जायगा। यहाँ हम केवल लौकिक समाधि का ही सविस्तर वर्णन करेंगे।

हमारे अभिप्रेत अर्थ में समाधि 'कुशलचित्त की एकाग्रता' को कहते हैं। अर्थात् चित्त की वह एकाग्रता जो दोष-रहित है और जिसका विपाक सुखमय है। इस लौकिक समाधि के मार्ग को शमथ-यान कहते है। लोकोत्तर समाधि (प्रज्ञा) का मार्ग विपश्यना-यान कहलाता है।

पूर्व इसके कि हम लौकिक समाधि के भावना-प्रकार का विस्तार से वर्णन करे, हम इस स्थान पर शमथ-मार्ग का संक्षेप मे निरूपण करना आवश्यक समझते है।

शमथ का अर्थ है—पाँच नीवरणो अर्थात् विघ्नों का उपशम। विघ्नो के शमन से चित्त की एकाग्रता होती है। इसलिए शमथ का अर्थ 'चित्त की एकाग्रता' भी है। शमथ का मार्ग लौकिक समाधि का मार्ग है। विघ्नों के अर्थात् अन्तरायो के नाश से ही लौकिक समाधि मे प्रथम ध्यान का लाभ होता है। प्रथम ध्यान मे पाँच अङ्गो का प्रादुर्भाव होता है। दूसरे तोपरे ध्यान मे पाँच अङ्गो का अतिक्रमण होता है।

नीवरण[1] इस प्रकार है—कामछन्द, व्यापाद, स्त्यान-मिद्ध, औद्धत्य-कौकृत्य, विचिकित्सा। 'कामछन्द' 'विषयो मे अनुराग' को कहते है, जब चित्त नाना विषयो से प्रलोभित होता है तो एक आलम्बन में समाहित नही होता। 'व्यापाद' हिंसा को कहते है। यह प्रीति का प्रतिपक्ष है। 'स्त्यान' चित्त की अकर्मण्यता और 'मिद्ध' आलस्य को कहते है। वितर्क स्त्यान-मिद्ध का प्रतिपक्ष है। औद्धत्य का अर्थ है अव्यवस्थित-चित्तता और कौकृत्य 'खेद', 'पश्चात्ताप' को कहते है। सुख औद्धत्य-कौकृत्य का प्रतिपक्ष है। विचिकित्सा सशय को कहते है। विचार विचिकित्सा का प्रतिपक्ष है। विषयो मे लीन होने के कारण समाधि में चित्त की प्रतिष्ठा नही होती। हिंसाभाव से अभिभूत चित्त को निरन्तर प्रवृत्ति नही होती। स्त्यान-मिद्ध से अभिभूत चित्त अकर्मण्य होता है। चित्त के अनवस्थित होने से और खेद से शान्ति नही मिलती और चित्त भ्रान्त रहता है। विचिकित्सा से उपहत चित्त ध्यान का लाभ करानेवाले मार्ग में आरोहण नही करता। इसलिए इन विघ्नो का नाश करना चाहिये।

---

१. पातञ्जल योगदर्शन में योग के अन्तरायों का वर्णन यो है—

''व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादालस्याविरतिभ्रान्तिदर्शनालब्धभूमिकत्वानवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः'' [समाधिपाद सू० ३०]

इनमें से अविरति (=कामछन्द), आलस्य (=मिद्ध), अनवस्थितत्व (औद्धत्य) सशय (=विचिकित्सा) और स्त्याम पाँच नीवरणो मे भी पाये जाते है।

नीवरणों के नाश से ध्यान का लाभ और ध्यान के पाँच अङ्ग[1] वितर्क, विचार, प्रीति, सुख और एकाग्रता का प्रादुर्भाव होता है।

वितर्क आलम्बन में चित्त का आरोप करता है। आलम्बन के पास चित्त का आनयन 'वितर्क' कहलाता है। आलम्बन का यह स्थूल आभोग है। वितर्क की प्रथमोत्पत्ति के समय चित्त का परिस्पन्दन होता है। वितर्क विचार का पूर्वगामी है। विचार सूक्ष्म है[2]। विचार की वृत्ति शान्त होती है और इसमे चित्त का अधिक परिस्पन्दन नही होता। जब प्रीति उत्पन्न होती है तब सबसे पहिले शरीर मे रोमाञ्च होता है। धीरे-धीरे यह प्रीनि बारबार शरीर को अवक्रान्त करती है। जब प्रीति का बलवान् उद्वेग होता है तो प्रीति शरीर को ऊर्ध्व उत्क्षिप्त कर आकाश-लङ्घन के लिए समर्थ करती है, धीरे-धीरे सकल शरीर प्रीति से सर्वरूपेण व्याप्त हो जाता है, मानों पर्वत-गुहा से एक महान् जलप्रपात परिस्फुट हो तीव्र वेग से प्रवाहित हो रहा है। प्रीति के परिपाक से काय-प्रश्रब्धि और चित्त-प्रश्रब्धि होती है। प्रश्रब्धि (शान्ति) के परिपाक से काय और चित्त-सुख होता है। सुख के परिपाक से क्षणिक, उपचार और अर्पणा इस त्रिविध समाधि का परिपूरण होता है। इष्ट आलम्बन के प्रति लाभ से जो तुष्टि होती है उसे प्रीति कहते है। प्रतिलब्ध रस के अनुभव को सुख कहते है। जहाँ प्रीति है वहाँ सुख है पर जहाँ सुख है वहाँ नियम से प्रीति नही है। प्रथम ध्यान में उक्त पाँच अङ्गो का प्रादुर्भाव होता है। धीरे-धीरे अङ्गो का अतिक्रमण होता है और अन्तिम ध्यान मे समाधि उपेक्षासहित होती है।

जिसको लौकिक समाधि अभीष्ट हो उसको सुपरिशुद्ध शील में प्रतिष्ठित हो सबसे पहिले विघ्नो का नाश (पलिबोध) करना चाहिये।

आवास, कुल, लाभ, गण, कर्म, मार्ग, ज्ञाति, आबाध, ग्रन्थ और ऋद्धि—यह दश 'पलिबोध' कहलाते है। जो भिक्षु अभी नया-नया किसी काम में उत्सुकता रखता है या बहुविध सामग्री का सग्रह करता है या जिसका चित्त किसी दूसरे कारणवश अपने **आवास** में प्रतिबद्ध है, आवास उसके लिए अन्तराय

---

१ पा० योगदर्शन के निम्नलिखित सूत्र से तुलना कीजिये—
"वितर्कविचारानन्दास्मितारूपानुगमात् संप्रज्ञात:"। [समाधिपाद। १७]
आनन्द ह्लाद है। यही प्रीति है। अस्मिता सुख के स्थान में है।

२. वितर्कश्चित्तस्यालम्बने स्थूल आभोग:। सूक्ष्मो विचार:। [योगदर्शन, समाधिपाद, १७ पर व्यासभाष्य]। वितर्कविचारावौदार्यसूक्ष्मते [अभिधर्मकोश, २।३३]
ओलारिकट्ठेन। सुखुमट्ठेन। [विसुद्धिमग्गो]

(विघ्न) है। कुल से तात्पर्य ज्ञाति-कुल या सेवक के कुल से है। साधारणतया दोनो विघ्नकारी है। कुछ ऐसे भिक्षु होते है जो कुल के मनुष्यों के बिना धर्म-श्रवण के लिए भी पास के विहार में नही जाते। वह उन श्रद्धालु उपासकों के सुख में सुखी और दुःख में दुःखी होते हैं जिनसे उनको लाभ-सत्कार मिलता है। ऐसे भिक्षुओं के लिए कुल अन्तराय है; दूसरों के लिए नही।

लाभ चार प्रत्ययों को कहते हैं। प्रत्यय (पच्चय) यह है—चीवर, पिण्डपात, शयनासन और ग्लानप्रत्ययभेषज। भिक्षु को इन चार वस्तुओ की आवश्यकता रहती है। कभी-कभी ये भी अन्तराय हो जाते हैं। पुण्यवान् भिक्षु का लाभ-सत्कार प्रचुर परिमाण में होता है। उसको सदा लोग घेरे रहते है। जगह-जगह से उसको निमन्त्रण आता है। उसको निरन्तर दान का अनुमोदन करना पडता है और दाताओ को धर्म का उपदेश देना पडता है। श्रमण-धर्म के लिए उसको अवकाश नही मिलता। ऐसे भिक्षु को उस स्थान मे जाकर रहना चाहिये जहाँ उसे कोई नही जानता हो और जहाँ वह एकान्तसेवी हो सके।

गण मे रहने से लोग उपसे अनेक प्रकार के प्रश्न पूछते है, या उसके पास पाठ के लिए आते है। इस प्रकार श्रमण-धर्म के लिए अवकाश नही मिलता। इस अन्तराय का उपच्छेद इस प्रकार होना चाहिये। यदि थोडा ही पाठ रह गया हो तो उसे समाप्त कर अरण्य में प्रवेश करना चाहिये यदि पाठ बहुत बाकी हो तो अपने शिष्यो को समीपवर्त्ती किसी दूसरे गणवाचक के सुपुर्द करना चाहिये। यदि दूसरा गणवाचक पास मे न मिले तो शिष्यो से छुट्टी ले श्रमण-धर्म मे प्रवृत्त हो जाना चाहिये।

कर्म का अर्थ है 'नवकर्म'। अर्थात् विहार का अभिसस्कार। जो नवकर्म कराता है उसे मजदूरो के कार्य का निरीक्षण करना पडता है। उसके लिए सर्वदा अन्तराय है। इस अन्तराय का नाश करना चाहिये। यदि थोड़ा ही काम अवशिष्ट रह गया हो तो काम को समाप्त कर श्रमण-धर्म मे प्रवृत्त हो जाना चाहिये। यदि अधिक काम बाकी हो तो सङ्घभारहारक भिक्षुओं के सुपुर्द करना चाहिये। यदि ऐसा कोई प्रबन्ध न हो सके तो सङ्घ का परित्याग कर अन्यत्र चला जाना चाहिये।

मार्ग-गमन भी कभी-कभी अन्तराय होता है। जिसे कही किसी की प्रव्रज्या के लिए जाना है या जिसे कही से लाभ-सत्कार मिलना है, यदि वह अपनी इच्छा को पूरा किये विना अपने चित्त को स्थिर नहीं रख सकता तो उससे श्रमण-धर्म सम्यक् रीति से सम्पादित नही हो सकता। इसलिए उसे

गन्तव्य स्थान पर जाकर अपना मनोरथ पूर्ण करने के अनन्तर श्रमण-धर्म में उत्साह के साथ प्रवृत्त होना चाहिये।

ज्ञाति भी कभी कभी अन्तराय हो जाते है। विहार में आचार्य, उपाध्याय, अन्तेवासिक, समानोपाध्यायक और समानाचार्यक तथा घर में माता, पिता, भ्राता आदि ज्ञाति होते हैं। जब ये बीमार पडते हैं तब ये अन्तराय होते है। क्योंकि भिक्षु को इनकी सेवा-शुश्रूषा करनी पडती है। उपाध्याय, प्रव्रज्याचार्य, उपसम्पदाचार्य, ऐसे अन्तेवासिक जिनकी उसने प्रव्रज्या या उपसम्पदा की है, तथा एक ही उपाध्याय के अन्तेवासी के बीमार पड़ने पर उनकी सेवा उस समय तक करना उसका कर्तव्य है जब तक वह नीरोग न हो। माता-पिता उपाध्याय के समान है। यदि उनके पास औषध न हो तो अपने पास से देना चाहिये, यदि अपने पास भी न हो तो भिक्षा माँगकर देना चाहिये।

आबाध भी अन्तराय है। यदि भिक्षु को कोई रोग हुआ तो श्रमणधर्म के पालन मे अन्तराय होता है। चिकित्सा द्वारा रोग का उपशम करने से या उसकी उपेक्षा करने से यह अन्तराय नष्ट होता है।

ग्रन्थ भी अन्तराय होता है। जो सदा स्वाध्याय में व्यापृत रहता है उसी के लिए ग्रन्थ अन्तराय है, दूसरो के लिए नही।

ऋद्धि से पृथग्जन की ऋद्धि अभिप्रेत है। यह ऋद्धि विपश्यना (प्रज्ञा) में अन्तराय है, समाधि में नही, क्योकि जब समाधि की प्राप्ति होती है तब ऋद्धि-बल की प्राप्ति होती है। इसलिए जो विपश्यना का अर्थी है उसे ऋद्धि अन्तराय का उपच्छेद करना चाहिये।

इन विघ्नो का उपच्छेद कर भिक्षु को 'कर्मस्थान' ग्रहण के लिए **कल्याण-मित्र** के पास जाना चाहिये। 'कर्मस्थान' योग के साधन को कहते है। योगानु-योग ही कर्म है। इसका स्थान अर्थात् 'निष्पत्ति हेतु' कर्मस्थान है। इसीलिए कर्मस्थान उसे कहते है जिसके द्वारा योग-भावना को निष्पत्ति होती है।

कर्मस्थान अर्थात् समाधि के साधन चालीस है। इन चालीस साधनो मे से किसी एक का, जो अपनी चर्या के अनुकूल हो, ग्रहण करना पडता है। कर्म-स्थान का दायक कल्याणमित्र कहलाता है। क्योकि वह उसका एकान्त हितैषी है। कल्याणमित्र गम्भीर कथा का कहने वाला होता है तथा अनेक गुणो से समन्वागत होता है। बुद्ध से बढ़कर कोई दूसरा कल्याण-मित्र नही है। सयुत्त-निकाय मे भगवान् ने स्वय कहा है कि जीव मुझे कल्याण-मित्र की शरण मे आकर जन्म के बन्धन से मुक्त होते है।

इसलिए भगवान् के रहते उनके समीप ग्रहण करने से कर्मस्थान सुगृहीत

होता है। सक्षेप मे कर्मस्थान ग्रहण करने की वही विधि है, जो हम पीछे 'धुतङ्गनिद्देस' मे बता चुके है।

इन चालीस कर्मस्थानो को पालि मे—पारिहारिय-कम्मट्ठान कहते है। क्योकि इनमे से जो चर्या के अनुकूल होता है उसका नित्य परिहरण अर्थात् अनुयोग करना पडता है।

पारिहारिक कर्मस्थान के अतिरिक्त 'सब्बत्थक-कम्मट्ठान' (अर्थात् सर्वार्थक कर्मस्थान) भी है। इसे सर्वार्थक इसलिए कहते है क्योंकि यह सबको लाभ पहुँचाता है। भिक्षुसङ्घ आदि के प्रति मैत्रीभावना, मरण-स्मृति और कुछ आचार्यों के मतानुसार अशुभ-सञ्ज्ञा भी सर्वार्थक कर्मस्थान कहलाते है। जो भिक्षु कर्मस्थान मे नियुक्त होते है उसे पहिले सीमा मे रहनेवाले भिक्षुसङ्घ के प्रति मैत्री प्रदर्शित करनी चाहिये। उसे मैत्री-भावना इस प्रकार करनी चाहिये—'सीमा मे रहनेवाले भिक्षु सुखी हो, उनका कोई व्यापाद न करे'। धीरे-धीरे उसे इस भावना का इस प्रकार विस्तार करना चाहिये। सीमा के भीतर वर्तमान देवताओ के प्रति, तदनन्तर उस ग्राम के निवासियो के प्रति जहॉ वह भिक्षाचर्या करता है, तदनन्तर राजा तथा अधिकारी वर्ग के प्रति, तदनन्तर सब सत्त्वो के प्रति मैत्री-भावना का अनुयोग करना चाहिये। ऐसा करने से उसके सहवासी उसके साथ सुखपूर्वक निवास करते है। देवता तथा अधिकारी उसकी रक्षा करते है तथा उसकी आवश्यकताओ को पूरा करते है, लोगो का वह प्रियपात्र होता है और सर्वत्र निर्भय होकर विचरता है। मरण-स्मृति द्वारा वह निरन्तर इस बात का चिन्तन करता रहता है कि मुझे मरना अवश्यमेव है। इसलिए वह कुपथ का गामी नही होता तथा वह संसार मे लीन और आसक्त नही होता। जब चित्त अशुभ-संज्ञा से परिचित होता है (अर्थात् जब चित्त यह देखता है कि चाहे मृत हो या जीवमान, शरीर शुभ भाव से वर्जित है और इसका स्वभाव अशुचि है) तब दिव्य आलम्बन का लोभ भी चित्त को ग्रस्त नही करता। बहु उपकार करने से सबको यह अभिप्रेत है। इसलिए इन्हे सर्वार्थक कर्मस्थान कहते है।

इन दो प्रकार के कर्मस्थानों के ग्रहण के लिए कल्याणमित्र के समीप जाना चाहिए। यदि एक ही विहार मे कल्याणमित्र का वास हो तो अत्युत्तम है। नही तो जहाँ कल्याणमित्र का आवास हो वहॉ जाना चाहिये। अपना पात्र और चीवर स्वय लेकर प्रस्थान करना चाहिये। मार्ग मे जो विहार पडे वहाँ वत्त-प्रतिवत्त (कर्तव्य-सेवा-आचार) सम्पादित करना चाहिये। आचार्य का वासस्थान पूछकर सीधे आचार्य के पास जाना चाहिये। यदि आचार्य अवस्था मे छोटा हो तो उसे अपना पात्र चीवर ग्रहण न करने देना चाहिये। यदि

अवस्था मे अधिक हो तो आचार्य को वन्दना कर खड़े रहना चाहिये। जब आचार्य कहे कि पात्र चीवर भूमि पर रख दो तब उन्हे भूमि पर रख देना चाहिये। और यदि वह पानी पीने के लिए पूछे तो इच्छा रहते जल पीना चाहिये। यदि पैर धोने को कहे तो पैर न धोना चाहिये। क्योकि यदि जल आचार्य द्वारा आहृत हो तो वह पादक्षालन के लिए अनुपयुक्त होगा। यदि आचार्य कहे कि जल दूसरे द्वारा लाया गया है तो उसको ऐसे स्थान मे बैठकर पैर धोना चाहिये जहाँ आचार्य उसे न देख सके। यदि आचार्य तेल दे तो उठकर दोनो हाथो से आदरपूर्वक उसे ग्रहण करना चाहिये। पर पहिले पैरो मे न मलना चाहिये, क्योकि यदि आचार्य के गात्राभ्यञ्जन के लिए वह तेल हो तो पैर मे मलने के लिए अनुपयुक्त होगा। इसलिए पहिले सिर और कन्धो मे तेल लगाना चाहिये। जब आचार्य कहे कि सब अङ्गो मे लगाने का यह तेल है तो थोडा सिर मे लगाकर पैर मे लगाना चाहिये। पहिले ही दिन कर्मस्थान की याचना न करनी चाहिये। दूसरे दिन से आचार्य की सेवा करनी चाहिये। जिस प्रकार अन्तेवासी आचार्य की सेवा करता है उसी प्रकार भिक्षु को कर्मस्थानदायक की सेवा करनी चाहिये। समय से उठकर आचार्य को दन्तकाष्ठ देना चाहिये, मुँह धोने के लिए तथा स्नान के लिए जल देना चाहिये। और बर्तन साफ करके प्रातराश के लिए यवागू देना चाहिये। इस प्रकार अपनी सेवा से आचार्य को प्रसन्न कर जब वह आने का कारण पूछे तब बताना चाहिये। यदि आचार्य आने का कारण पूछे और सेवा ले तो एक दिन अवसर पाकर आने का कारण स्वय बताना चाहिये। यदि वह प्रात.काल बुलावे तो प्रात काल जाना चाहिये। यदि उस समय किसी रोग की बाधा हो तो निवेदन कर दूसरा उपयुक्त समय नियत कराना चाहिये। याचना के पूर्व आचार्य के समीप आत्मभाव का विसर्जन करना चाहिये। सदा आचार्य की आज्ञा मे रहना चाहिये, स्वेच्छाचारी न होना चाहिये, यदि आचार्य बुरा-भला कहे तो क्रोध नही करना चाहिये। यदि भिक्षु आचार्य के समीप आत्मभाव का परित्याग नही करता और बिना पूछे जहाँ कही इच्छा होती है चला जाता है तो आचार्य रुष्ट होकर धर्म का उपदेश नही करते और गम्भीर कर्मस्थान उपाय को शिक्षा नही दते। इस प्रकार भिक्षु शासन मे प्रतिष्ठा नही पाता। इसके विपरीत यदि वह आचार्य के वशवर्त्ती और अधीन रहता है तो शासन मे उसकी वृद्धि होती है। भिक्षु को अलोभादि छह सम्पन्न अध्याशयो से भी सयुक्त होना चाहिये। सम्यक् सम्बुद्ध, प्रत्येक बुद्ध आदि जिस किसी ने विशेषता प्राप्त की है उसने इन्ही छह सम्पन्न अध्याशयो द्वारा प्राप्त की है। 'अध्याशय' अभिनिवश को कहते है। 'अध्याशय' दो प्रकार के है—विपन्न,

सम्पन्न। रुष्यता आदि जो मिथ्याभिनिवेश-निश्रित है विपन्न अध्याशय कहलाते हैं। सम्पन्न अध्याशय दो प्रकार के है—वर्त अर्थात् संसारनिश्रित और विवर्तनिश्रित। यहाँ विवर्तनिश्रित अध्याशय से अभिप्राय है।

सम्पन्न **अध्याशय** छह आकार के है—अलोभ, अद्वेष, अमोह, नैष्क्रम्य, प्रविवेक और निस्सरण। इन छह अध्याशयो से बोधि का परिपाक होता है। इसलिए इनका आसेवन आवश्यक है। इसके अतिरिक्त साधक का संकल्प समाधि तथा निर्वाण के लाभ के लिए दृढ़ होना चाहिये। जब विशेष गुणो से सम्पन्न साधक कर्मस्थान की याचना करता है तो आचार्य चर्या की परीक्षा करता है। जो आचार्य परिचित-ज्ञानलाभी है वह चित्ताचार का सूक्ष्म निरीक्षण कर आप ही आप साधक के चरित का परिचय प्राप्त कर लेता है पर जो इस ऋद्धि-बल से समन्वागत नही है वह विविध प्रश्नो द्वारा साधक की चर्या जानने की चेष्टा करता है। आचार्य साधक से पूछता है कि वह कौन से धर्म है जिनका तुम प्राय आचरण करते हो? क्या करने से तुम सुखी होते हो? किस कर्मस्थान मे तुम्हारा चित्त लगता है? इस प्रकार चर्या का विनिश्चय कर आचार्य चर्या के अनुकूल कर्मस्थान का वर्णन करता है। साधक कर्मस्थान का अर्थ और अभिप्राय भली प्रकार जानने की चेष्टा करता है। वह आचार्य के व्याख्यान को मनोयोगपूर्वक आदरसहित सुनता है। ऐसे ही साधक का कर्मस्थान सुगृहीत होता है।

चर्या के कितने प्रभेद है, किस चर्या का क्या निदान है, कैसे जाना जाय कि अमुक मनुष्य अमुक चरितवाला है और किस चरित के लिए कौन से शयनासन आदि उपयुक्त है, इन विषयो पर यहाँ विस्तार से विचार किया जायगा। चर्या का अर्थ है प्रकृति, अन्य धर्मो की अपेक्षा किसी विशेष धर्म की उत्सन्नता अर्थात् अधिकता। चर्या छह है – रागचर्या, द्वेषचर्या, मोहचर्या, श्रद्धाचर्या, बुद्धिचर्या और वितर्कचर्या। सन्तान में जब अधिक भाव से राग की प्रवृत्ति होती है तब रागचर्या कही जाती है। कुछ लोग सम्प्रयोग और सन्निपात वश रागादि की चार और चर्याएँ मानते है जैसे राग-मोहचर्या, राग-द्वेषचर्या, द्वेष-मोहचर्या और राग-द्वेष-मोहचर्या। इसी प्रकार श्रद्धादि चर्याओ के परस्पर सम्प्रयोग और सन्निपात श्रद्धा-बुद्धिचर्या, श्रद्धा-वितर्कचर्या, बुद्धि-वितर्कचर्या, श्रद्धा-बुद्धि-वितर्कचर्या—इन चार अपर चर्याओं को भी मानते है। इस प्रकार इनके मत मे कुल चौदह चर्याएँ है। यदि हम रागादि का श्रद्धादि चर्याओं से सम्प्रयोग करे तो अनेक चर्याएँ होती है। इस प्रकार चर्याओं की तिरसठ और इससे भी अधिक संख्या हो सकती है। इसलिए सक्षेप से छह ही मूलचर्या जानना चाहिये। मूल-चर्याओ के प्रभेद से छह प्रकार के पुद्गल होते है—रागचरित, द्वेषचरित,

मोहचरित, श्रद्धाचरित, बुद्धिचरित, वितर्कचरित । जिस समय रागचरित पुरुष की कुशल मे अर्थात् शुभकर्मो मे प्रवृत्ति होती है उस समय श्रद्धा बलवती होती है । क्योंकि श्रद्धा-गुण राग-गुण का समीपवर्त्ती है । जिस प्रकार अकुशल पक्ष मे राग की स्निग्धता और अरुक्षता पायी जायी है उसी प्रकार कुशलपक्षमें श्रद्धा की स्निग्धता और अरूक्षता पायी जाती है । श्रद्धा प्रसाद-गुणवश स्निग्ध है और राग रञ्जन-गुणवश स्निग्ध है । यथा राग काम्य वस्तुओ का पर्येषण करता है उसी प्रकार श्रद्धा शीलादि गुणो का पर्येषण करती है । यथा राग अहित का परित्याग नही करता उसी प्रकार श्रद्धा हित का परित्याग नही करती । इस प्रकार हम देखते है कि भिन्न-भिन्न स्वभाव के होते हुए भी रागचरित और श्रद्धाचरित की सभागता है ।

इसी तरह द्वेषचरित और बुद्धिचरित की तथा मोहचरित और वितर्क-चरित की सभागता है । जिस समय द्वेषचरित पुरुष की कुशल मे प्रवृत्ति होती उस समय प्रज्ञा बलवती होती है क्योकि प्रज्ञा-गुण द्वेष का समीपवर्त्ती है । जिस प्रकार अकुशल पक्ष मे द्वेष व्यापादवश स्नेहरहित होता है, आलम्बन मे उसकी आसक्ति नही होती, उसी प्रकार यथाभूत स्वभाव के अवबोध के कारण कुशलपक्ष मे प्रज्ञा की आसक्ति नही होती । यथा द्वेष अभूत दोष की भी पर्येषणा करता है उसी प्रकार प्रज्ञा यथाभूत दोष का प्रविचय करती है । यथा द्वेषचरित पुरुष सत्त्वो का परित्याग करता है उसी प्रकार बुद्धिचरित पुरुष सस्कारो का परित्याग करता है । इसलिए स्वभाव की विभिन्नता होते हुए भी द्वेषचरित और बुद्धिचरित की सभागता है । जब मोहचरित पुरुष कुशल कर्मो के उत्पाद के लिए यत्नवान् होता है तो नाना प्रकार के वितर्क और मिथ्या सकल्प उत्पन्न होते है, क्योकि वितर्क-गुण मोह-गुण का समीपवर्ती है । जिस प्रकार व्याकुलता के कारण मोह अनवस्थित है उसी प्रकार नाना प्रकार के विकल्प-परिकल्प के कारण वितर्क अनवस्थित है । जिस प्रकार मोह चचल है उसी प्रकार वितर्क मे चपलता है । इस प्रकार स्वभाव की विभिन्नता होते हुए भी मोहचरित और वितर्कचरित की सभागता है ।

कुछ लोग इन छह् चर्याओ के अतिरिक्त तृष्णा, मान और दृष्टि को भी चर्या में परिगणित करते है । पर तृष्णा और मान राग के अन्तर्गत है और दृष्टि मोह के अन्तर्गत है ।

इन छह् चर्याओ का क्या निदान है ? कुछ का कहना है कि पूर्व जन्मो का आचरण और धातु-दोष की उत्सन्नता पहली तीन चर्याओं का नियामक है । इनका कहना है कि जिसने पूर्व जन्मो मे अनेक शुभ कर्म किये हैं और जो इष्ट-

प्रयोग-बहुल रहा है या जो स्वर्ग से च्युत हो इस लोक मे जन्म लेता है वह रागचरित होता है। जिसने पूर्व जन्मो मे छेदन, वध, बन्धन आदि अनेक वैरकर्म किये है या जो निरय या नाग-योनि से च्युत हो इस लोक मे उत्पन्न होता है वह द्वेषचरित होता है और जिसने पूर्व जन्मो मे अधिक परिमाण मे निरन्तर मद्यपान किया है और जो श्रुतविहीन है या जो निकृष्ट पशुयोनि से च्युत हो इस लोक मे उत्पन्न होता है, वह मोहचरित होता है। पृथिवी तथा जलधातु की उत्सन्नता से पुद्गल मोहचरित होता है। तेज और वायुधातु की उत्सन्नता से पुद्गल द्वेषचरित होता है। चारो धातुओ के समान भाग में रहने से पुद्गल रागचरित होता है। दोषो मे श्लेष्मा की अधिकता से पुद्गल रागचरित या मोहचरित होता है; वात की अधिकता से मोहचरित या रागचरित होता है। इन वचनों मे श्रद्धाचर्या आदि में से एक का भी निदान नही कहा गया है। दोष-नियम मे केवल राग और मोह का ही निदर्शन किया गया है, इनमे भी पूर्वापरविरोध देखा जाता है। इसी प्रकार धातुओ मे उक्त पद्धति से उत्सन्नता का नियम नही पाया जाता। पूर्वाचरण के आधार पर जो चर्या का नियमन बताया गया है उसमे भी ऐसा नही है कि सब केवल रागचरित हो या द्वेष-मोह-चरित हो। इसलिए यह वचन अपरिच्छिन्न है। अर्थकथाचार्यो के मतानुसार चर्याविनिश्चय 'उस्सद कित्तन' मे इस प्रकार वर्णित है। पूर्व-जन्मो मे प्रवृत्त लोभ-अलोभ, द्वेष-अद्वेष, मोह-अमोह, हेतुवश प्रतिनियत रूप मे सत्त्वो मे लोभ आदि की अधिकता पायी जाती है। कर्म करने के समय जिस मनुष्य मे लोभ बलवान् होता है और अलोभ मन्द होता है, अद्वेष और अमोह बलवान् होते है और द्वेष-मोह मन्द होते है, उसका मन्द अलोभ लोभ को अभिभूत नही कर सकता पर अद्वेष-अमोह, बलवान् होने के कारण, द्वेष मोह को अभिभूत करते है। इसलिए जब वह मनुष्य इन कर्मो के वश प्रतिसन्धि का लाभ करता है तो वह लुब्ध, सुखशील, क्रोधरहित और प्रज्ञावान् होता है। कर्म करने के समय जिसके लोभ-द्वेष बलवान् होते है, अलोभ-अद्वेष मन्द होते है, अमोह बलवान् होता है और मोह मन्द होता है वह लुब्ध और दुष्ट परन्तु प्रज्ञावान् होता है। कर्म करने के समय जिसके लोभ-मोह-अद्वेष बलवान् होते है और इतर मन्द होते है वह लुब्ध, मन्द बुद्धिवाला, सुखशील और क्रोधरहित होता है। कर्म करने के समय जिसके लोभ द्वेष मोह बलवान् होते है अलोभादि मन्द होते है, वह लुब्ध, दुष्ट और मूढ होता है। कर्म करने के समय जिसके अलोभ द्वेष मोह बलवान् होते है इतर मन्द होते है, वह अलुब्ध, दुष्ट और मन्द बुद्धिवाला होता है। कर्म करने के समय जिस सत्त्व के अलोभ अद्वेष मोह बलवान् होते है इतर मन्द होते है, वह अलुब्ध, अदुष्ट और मन्द बुद्धिवाला होता है। कर्म

करते समय जिसके अलोभ, द्वेष और अमोह बलवान् होते है इतर मन्द होते है वह अलुब्ध, प्रज्ञावान् और दुष्ट होता है। कर्म करने के समय जिसके अलोभ, अद्वेष और अमोह तीनो बलवान् होते है और लोभ आदि मन्द होते है वह अलुब्ध, अदुष्ट और प्रज्ञावान् होता है।

यहाँ जिसे लुब्ध कहा है वह रागचरित है; जिसे दुष्ट या मन्द बुद्धिवाला कहा है वह यथाक्रम द्वेषचरित या मोहचरित है; प्रज्ञावान् बुद्धिचरित है, अलुब्ध, अदुष्ट, प्रसन्न प्रकृतिवाला होने के कारण श्रद्धाचरित है। इस प्रकार लोभादि मे से जिस किसी द्वारा अभिसस्कृत कर्मवश प्रतिसन्धि होती है उसे चर्या का निदान समझना चाहिये।

अब प्रश्न यह है कि किस प्रकार जाना जाय कि यह पुद्गल रागचरित है ? इत्यादि। इसका निश्चय ईर्यापथ (इरियापथ = वृत्ति), कृत्य, भोजन, दर्शन आदि तथा धर्म-प्रवृत्ति (चित्त की विविध अवस्थाओ की प्रवृत्ति) द्वारा होता है।

ईर्यापथ—जो रागचरित होता है उसकी गति अकृत्रिम, स्वाभाविक होती है, वह चतुरभाव से धीरे-धीरे पद-निक्षेप करता है। वह समभाव से पैर रखता और उठाता है; उसके पादतल का मध्यभाग भूमि का स्पर्श नही करता। जो द्वेषचरित है वह जब चलता है तब मालूम होता है मानो भूमि को खोद रहा वह सहसा पैर रखता है और उठाता है। पादनिक्षेप के समय ऐसा मालूम होता है मानो पैर पीछे की ओर खीचता है। मोहचरित की गति व्याकुल होती है। वह भीत पुरुष की तरह पैर रखता है और उठाता है। वह अग्रपाद तथा पार्ष्णि से गति को सहसा सन्निरुद्ध करता है। रागचरित पुरुष जब खड़ा होता है या बैठता है तो उसका आकार प्रसादावह और मधुर होता है। द्वेषचरित पुरुष का आकार स्तब्ध होता है और मोहचरित का आकुल होता है। रागचरित पुरुष विना त्वरा के अपना बिछौना ठीक तरह से बिछाता है और धीरे से शयन करता है, शयन करते समय वह अपने अग प्रत्यग का विक्षेप नहीं करता और उसका आकार प्रासादिक होता है, उठाये जाने पर वह चौक कर नही उठता किन्तु शङ्कित पुरुष की तरह मृदु उत्तर देता है। द्वेषचरित पुरुष जल्दी से किसी न किसी प्रकार अपने बिछौने को बिछाता है और अवश की तरह अग-प्रत्यग का सहसा निक्षेप कर भृकुटि चढाकर सोता है, उठाये जाने पर सहसा उठता है और क्रुद्ध होकर उत्तर देता है। मोहचरित पुरुष का बिछौना बेतरतीब होता है, वह हाथ-पैर फैलाकर प्राय मुँह नीचा कर सोता है, उठाये जाने पर हुङ्कार करते हुए मन्दभाव से उठता है। श्रद्धाचरितादि पुरुष की वृत्ति रागचरितादि पुरुष के समान होती है, क्योकि इनकी सभागता है।

कृत्य—कृत्य से भी चर्या का निश्चय होता है। जैसे झाड़ू देते समय राग-चरित पुरुष बिना जल्दबाजी के झाड़ू को अच्छी तरह पकड कर समान रूप से झाड़ू देता है और स्थान को अच्छी तरह साफ करता है। द्वेषचरित पुरुष झाड़ू को कसकर पकड़ता है और जल्दी-जल्दी दोनो ओर बालू उड़ाता हुआ साफ करता है और स्थान भी साफ नही होता। मोहचरित पुरुष झाड़ू को शिथिलता के साथ पकड कर इधर-उधर चलाता है, स्थान भी साफ नही होता। इसी प्रकार अन्य क्रियाओ के सबन्ध मे भी समझना चाहिये। रागचरित पुरुष कार्य में कुशल होता है, सुन्दर तथा समरूप से सावधानता के साथ कार्य करता है। द्वेषचरित पुरुष का कार्य स्थिर, स्तब्ध और विषम होता है और मोहचरित पुरुष कार्य मे अनिपुण, व्याकुल, विषम और अयथार्थ होता है। सभागता होने के कारण श्रद्धाचरितादि पुरुषो की वृत्ति भी इसी प्रकार की होती है।

भोजन—रागचरित पुरुष को स्निग्ध और मधुर भोजन प्रिय होता है, वह वह धीरे-धीरे विविध रसो का आस्वाद लेते हुए भोजन करता है, अच्छा भोजन करके उसको प्रसन्नता होती है। द्वेषचरित पुरुष को रूखा और अम्ल भोजन प्रिय होता है, वह विना रसो का स्वाद लिए जल्दी-जल्दी भोजन करता है; यदि वह कोई बुरे स्वाद का पदार्थ खाता है तो उसे अप्रसन्नता होती है। मोह-चरित पुरुष की रुचि अनियत होती है, वह विक्षिप्तचित्त पुरुष की तरह नाना प्रकार के वितर्क करते हुए भोजन करता है। इसी प्रकार श्रद्धाचरितादि पुरुष की वृत्ति होती है।

दर्शन—रागचरित पुरुष थोड़ा भी मनोरम रूप देखकर विस्मित भाव से चिरकाल तक उसका अवलोकन करता रहता है; थोड़ा भी गुण हो तो वह उसमे अनुरक्त हो जाता है, वह यथार्थ दोष का भी ग्रहण नही करता। उस मनोरम रूप के पास से हटने की उसकी इच्छा नही होती। द्वेषचरित पुरुष थोड़ा भी अमनोरम रूप देखकर खेद को प्राप्त होता है। वह उसकी ओर देर तक देख नही सकता। थोडा भी दोष उसकी निगाह से बचकर नही जा सकता। यथार्थ गुण का भी वह ग्रहण नही करता। मोहचरित पुरुष जब कोई रूप देखता है तो वह उसके विषय मे उपेक्षाभाव रखता है, दूसरो को निन्दा करते देखकर निन्दा और प्रशसा करते देखकर प्रशंसा करता है। श्रद्धाचरितादि पुरुषो की वृत्ति भी इसी प्रकार की होती है।

धर्म-प्रवृत्ति—रागचरित पुरुष मे माया, शाठ्य, मान, पापेच्छा, असन्तोष, चपलता, लोभ, शृङ्गारभाव आदि धर्मो की बहुलता होती है। द्वेषचरित पुरुष में क्रोध, द्वेष ईर्ष्या, मात्सर्य, दम्भ आदि धर्मो की बहुलता होती है। मोह-

चरित पुरुष मे विचिकित्सा, आलस्य, चित्तविक्षेप, चित्त की अकर्मण्यता, पश्चात्ताप, प्रतिनिविष्टता, दृढग्राह आदि धर्मो की बहुलता होती है। श्रद्धाचरित पुरुष का परित्याग निःसङ्ग होता है, वह आर्यो के दर्शन की तथा सद्धर्म-श्रवण की इच्छा रखता है; उसमे प्रीति की बहुलता है, वह शठता और माया से रहित है, उचित स्थान में वह श्रद्धाभाव रखता है। बुद्धिचरित पुरुष स्निग्धभाषी, मितभोजी और कल्याणमित्र होता है। वह स्मृति-सम्प्रजन्य की रक्षा करता है; सदा जाग्रत रहता है। ससार का दुःख देखकर उसमे संवेग उत्पन्न होता है और वह उद्योग करता है। वितर्कचरित पुरुष की कुशलधर्मो मे अरति होती है, उसका चित्त अनवस्थित होता है; वह बहुभाषी और समार्जाप्रिय होता हे। वह इधर से उधर आलंबनो के पीछे दौडता है।

चर्या की विभावना का उक्त प्रकार पालि और अट्ठकथाओ मे वर्णित नही है। यह केवल कुछ आचार्यो के मतानुसार कहा गया है। इसलिए इस पर पूर्णरूप से विश्वास नही करना चाहिये। द्वेषचरित पुरुष भी यदि प्रमाद से रहित हो उद्योग करे तो रागचरित पुरुष की गति आदि का अनुकरण कर सकता है। जो पुरुष ससृष्टचरित है उसमे भिन्न-भिन्न प्रकार की गति आदि नही घटती; किन्तु जो प्रकार अट्ठकथाओ मे वर्णित है उसका साररूप से ग्रहण करना चाहिये।

इस प्रकार आचार्य साधक की चर्या को जान कर निश्चय करता है कि यह पुरुष रागचरित है या द्वेष-मोह-चरित है। किस चरित के पुरुष के लिए क्या उपयुक्त है ? अब इस प्रश्न पर हम विचार करेंगे। रागचरित पुरुष को तृणकुटी मे, पर्णशाला मे, एक ओर अवनत पर्वतपाद के अधोभाग मे या वेदिका से घिरे हुए अपरिशुद्ध भूमितल पर निवास करना चाहिये। उसका आवास रज से आकीर्ण, छिन्न-भिन्न, अति उच्च या अति नीच, अपरिशुद्ध, चमगादड़ो से परिपूर्ण, छायोदकरहित, सिंह व्याघ्रादि के भय से युक्त, देखने मे विरूप और दुर्वर्ण होना चाहिए। ऐसा आवास रागचरित पुरुष के उपयुक्त है। रागचरित पुरुष के लिए ऐसा चीवर उपयुक्त होगा जो किनारो पर फटा हो, जिसके धागे चारो ओर से लटकते हो, जो देखने मे जालाकार पूए के समान हो, जो छूने मे खुरदरा और देखने मे भद्दा, मैला और भारी हो। उसका पात्र मृत्तिका का या लोहे का होना चाहिये। देखने में बदसूरत और भारी हो, कपाल की तरह, जिसको देखकर घृणा उत्पन्न हो। उसका भिक्षाचर्या का मार्ग विषम, अमनोरम, और ग्राम से दूर होना चाहिये। भिक्षाचार के लिए उसे ऐसे ग्राम मे जाना चाहिये जहाँ के लोग उसकी उपेक्षा करें, जहाँ एक कुल से भी जब उसे भिक्षा

न मिले तब लोग आसन-शाला में बुलाकर उसे यवागू भोजन के लिए दे और बिना पूछे चलते बने। परोसनेवाले भी दास या भृत्य हो, जिनके वस्त्र मैले और बदबूदार हो, जो देखने मे दुर्वर्ण हो और जो बेमन से परोसते हो। उसका भोजन रूक्ष, दुर्वर्ण और नीरस होना चाहिये। भोजन के लिए सावाँ, कोदो, चावल के कण, सडा हुआ तक्र और जीर्ण शाक का सूप होना चाहिये। उसका ईर्यापथ स्थान या चंक्रमण होना चाहिये अर्थात् उसे या तो खडे रहना चाहिये या टहलना चाहिये। नीलादि वर्ण-कसिणो (कसिण[1] = कृत्स्न = समस्त) में जिस आलम्बन का वर्ण अपरिशुद्ध हो वह उसके उपयुक्त है।

द्वेषचरित पुरुष के शयनासन को न बहुत ऊँचा और न बहुत नीचा होना चाहिये, उसे छाया और जल से सम्पन्न तथा सुवासित होना चाहिए। उसका भूमि-तल समुज्ज्वल, मृदु, सम और स्निग्ध हो, ब्रह्मविमान के तुल्य सुन्दर तथा कुसुममाला और नानावर्ण के वस्त्र-वितानो से समलकृत हो और जिसके दर्शनमात्र से चित्त को आह्लाद प्राप्त हो। उसको श्रमण के अनुरूप हलका सुरक्त और शुद्ध वर्ण का रेशमी या सूक्ष्म क्षौमवस्त्र धारण करना चाहिये। उसका पात्र मणि की तरह चमकता हुआ और लोहे का होना चाहिए। भिक्षाचार का मार्ग भयरहित, सम, सुन्दर तथा ग्राम से न बहुत दूर और न बहुत निकट होना चाहिये। जिस ग्राम मे वह भिक्षाचर्या के लिए जाय वहाँ के लोग आदरपूर्वक उसको भोजन के लिए अपने घर पर निमन्त्रित करे और आसन पर बैठाकर अपने हाथ से भोजन करायें। परोसने वाले पवित्र और मनोज्ञ वस्त्र धारण कर, आभरणो से प्रतिमण्डित हो आदर के साथ भोजन परोसे। भोजन वर्ण, रस और गन्ध से सम्पन्न हो और हर प्रकार से उत्कृष्ट हो। ईर्यापथ मे उसके लिए शय्या या निषद्या उपयुक्त है अर्थात् उसे लेटना या बैठना चाहिए। नीलादि वर्ण-कसिणो मे जो आलम्बन सुपरिशुद्ध वर्ण का हो वह उसके लिए उपयुक्त है।

मोहचरित पुरुष का आवास खुले हुए स्थान मे होना चाहिये, जहाँ बैठकर वह सब दिशाओ को विवृत रूप से देख सके। चार ईर्यापथो में से इसके लिए चंक्रमण (टहलना) उपयुक्त है, आलम्बनो मे शराबमात्र या शूर्पमात्र, क्षुद्र और आलम्बन इसके लिए उपयुक्त नही है, क्योकि घिरी जगह मे चित्त और भी मोह को प्राप्त होता है। इसलिये मोहचरित पुरुष का कसिण-मण्डल विपुल होना चाहिए। शेष बातो में मोहचरित द्वेषचरित पुरुष के समान है, जो कुछ द्वेषचरित पुरुष के उपयुक्त बताया गया है वह सब श्रद्धाचरित के लिए भी उपयुक्त

---

१. पृथ्वीकसिण आदि भेद से कसिण दस है। जिनका आगे वर्णन करेंगे।

है। आलम्बनो मे श्रद्धाचरित्त पुरुष के लिए भी अनुस्मृति-स्थान भी उपयुक्त है। बुद्धिचरित पुरुष के लिए आवासादि के विषय मे कुछ भी अनुपयुक्त नही है। वितर्कचरित पुरुष के लिए दिशाभिमुख, खुला हुआ आवास उपयुक्त नही है। क्योकि ऐसे स्थान से उसको आराम, वन, पुष्करिणी आदि दिखलायी देंगी, जिससे चित्त का विक्षेप होगा और वितर्क की वृद्धि होगी। इसलिए उसे गभीर पर्वत-विवर मे रहना चाहिये। इसके लिए विपुल आलम्बन भी उपयुक्त न होगा, क्योकि यह भी वितर्क की वृद्धि मे हेतु होगा। उसका आलम्बन क्षुद्र होना चाहिये। शेष बातो मे वितर्कचरित पुरुष रागचरित पुरुष के समान है।

आचार्य को चर्या के अनुकूल कर्मस्थान का ग्रहण कराना चाहिये। इस सम्बन्ध मे ऊपर सक्षेप मे ही कहा गया है। अब विस्तार से कहा जायगा।

कर्मस्थान चालीस है। वह इस प्रकार है—दस कसिण, दस अशुभ, दस अनुस्मृति, चार ब्रह्मविहार, चार आरूप्य, एक सज्ञा, एक व्यवस्थान।

कसिण योग-कर्म के सहायक आलम्बनों मे से है। श्रावक 'कसिण' आलम्बनों की भावना करते है। 'कसिणो' (=कृत्स्न) पर चित्त को एकाग्र करने से ध्यान की समाप्ति होती है। इस अभ्यास को 'कसिण कम्म' कहते है। 'कसिण' दस हैं। विसुद्धिमग्ग के अनुसार 'कसिण' इस प्रकार है—पृथ्वीकसिण, अप्०, तेज०, वायु०, नील०, पीत०, लोहित०, अवदात०, आलोक०, परिच्छिन्नाकाश-कसिण। मज्झिम तथा दीघनिकाय की सूची में आलोक और परिच्छिन्नाकाश के स्थान में आकाश और विज्ञान परिगणित है।

अशुभ दस है—उद्धुमातक (भाथी की तरह फूला हुआ मृत शरीर) विनीलक (मृत शरीर सामान्यत नीला हो जाता है), विपुब्बक (जिसके भिन्न स्थानों से पीव विस्यन्दमान होती है), विच्छिद्दक (द्विधा छिन्न शवशरीर), विक्खायितक (वह शरीर जिसे कुत्ते और शृगालो ने स्थान-स्थान पर विविध रूप से खाया हो), विक्खित्तक (वह शव जिसके अङ्ग इधर-उधर छितरे पडे हों) हतविक्खित्तक (वह शव जिसके अग प्रत्यग शस्त्र से काटकर इधर-उधर छितरा दिये गये हो), लोहितक (रक्त से सनी लाश), पुलुवक (क्रिमियो से परिपूर्णशव) अट्ठिक (अस्थि-पंजर मात्र)।

अनुस्मृति दस है—बुद्धानुस्मृति, धर्मानुस्मृति, सङ्घानुस्मृति, शीलानुस्मृति, त्यागानुस्मृति, देवतानुस्मृति, कायगतास्मृति, मरणानुस्मृति, आनापानस्मृति,[1]

---

१. तुलना कीजिये—"प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य" [योग दर्शन समाधिपाद, सू० ३४।

उपशमानुस्मृति। मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा यह चार **ब्रह्मविहार** है[1]। आकाशानन्त्यायतन, विज्ञानानन्त्यायतन, आकिञ्चन्यायतन नैवसञ्ज्ञानासंज्ञायतन यह चार **आरूप्य है**। आहार मे प्रतिकूल संज्ञा एक संज्ञा है। चार धातुओ का व्यवस्थान एक **व्यवस्थान** है।

समाधि के दो प्रकार है—उपचार और अर्पणा। जब तक ध्यान क्षीण रहता है और अर्पणा की उत्पत्ति नही होती, तब तक उपचार समाधि का व्यवहार होता है। उपचार-भूमि मे नीवरणो का प्रहाण होकर चित्त समाहित होता है। पर वितर्क, विचार आदि पाँच अङ्गो का प्रादुर्भाव नही होता। जिस प्रकार ग्राम का समीपवर्ती प्रदेश ग्रामोपचार कहलाता है उसीप्रकार अर्पणसमाधि के समीपवर्त्ती होने के कारण उपचार सज्ञा पडी। उपचार-भूमि मे अग मजबूत नही होते, पर अर्पणा मे अङ्गो का प्रादुर्भाव होता है और वे सुदृढ़ हो जाते है। इसलिये यह समाधि की प्रतिलाभ-भूमि है। जिस प्रकार बालक जब खडे होकर चलने की कोशिश करता है तो आरम्भ मे अभ्यास न होने के कारण खडा होता है और फिर बार-बार गिर पडता है; उसी प्रकार उपचार-समाधि के उत्पन्न होने पर चित्त कभी निमित्त को आलम्बन बनाता है तो कभी भवाङ्ग मे अवतीर्ण हो जाता है। पर अर्पणा मे अग सुदृढ हो जाते है; सारा दिन, सारी रात, चित्त स्थिर रहता है। चालीस कर्मस्थानो मे से दस कर्मस्थान—बुद्ध-धर्म-सङ्घ-शील-त्याग-देवता ये छह अनुस्मृतियाँ, मरणानुस्मृति, उपशमानुस्मृति, आहार के विषय मे प्रतिकूल सज्ञा और चतुर्धातु-व्यवस्थान—उपचार-समाधि का और बाकी तीस अर्पणा-समाधि का आनयन करते है। जो कर्मस्थान अर्पणा-समाधि का आनयन करते है; उनमें से दस कसिण और आनापानस्मृति चार ध्यानो के आलम्बन होते है, दस अशुभ और कायगतास्मृति प्रथम ध्यान के आलम्बन है, पहले तीन ब्रह्म-बिहार तीन ध्यानो के और चौथा ब्रह्म-बिहार और चार आरूप्य चार ध्यानो के आलम्बन है। पहले ध्यान के पाँच अग होते है—वितर्क, विचार, प्रीति, सुख, एकाग्रता (समाधि)। इसे सवितर्क-सविचार कहते है। ध्यानो की परिगणना दो प्रकार से है। चार ध्यान या पाँच ध्यान माने जाते है। पाँच की परिगणना के दूसरे ध्यान मे वितर्क का अतिक्रम होता है पर विचार रह जाता है। इसे अवितर्क-विचार मात्र कहते है। पर चार की परिगणना के द्वितीय ध्यान में और पाँच की परिगणना के तृतीय ध्यान में वितर्क और विचार दोनो का अतिक्रम होता है, केवल प्रीति, सुख और समाधि अवशिष्ट रह जाते है। पाँच की परिगणना के चतुर्थ ध्यान मे और चार की

---

१ तुलना कीजिए—"मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणा भावनातश्चित्तप्रसादनम्" (पा० योगदर्शन, समाधिपाद, सू० ३३)।

परिगणना के तृतीय ध्यान मे प्रीति का अतिक्रम होता है; केवल सुख और समाधि अवशिष्ट रह जाते है। दोनो प्रकार के अन्तिम ध्यान मे सुख का अतिक्रम होता है। अन्तिम ध्यान की समाधि उपेक्षा-सहगत होती है।

इस प्रकार तीन और चार ध्यानो के आलम्बन-स्वरूप कर्मस्थानो मे ही अग का समतिक्रम होता है क्योकि वितर्क-विचारादि ध्यान के अगो का अतिक्रम कर उन्ही आलम्बनो मे द्वितीयादि ध्यानो की प्राप्ति होती है। यही कथा चतुर्थ ब्रह्म-विहार की है। मैत्री आदि आलम्बनो मे सौमनस्य का अतिक्रमण कर चतुर्थ ब्रह्म-विहार मे उपेक्षा की प्राप्ति होती है। चार आरूप्यो मे आलम्बन का समतिक्रमण होता है। पहले नौ कसिणो मे से किसी-किसी का अतिक्रमण करने से ही आकाशानन्त्यायतन की प्राप्ति होती है। आकाश आदि का अतिक्रमण कर विज्ञानानन्त्यायतन आदि की प्राप्ति होती है। शेष अर्थात् इक्कीस कर्मस्थानो मे समतिक्रमण नही होता। इस प्रकार कुछ मे अग का अतिक्रमण और कुछ मे आलम्बन का अतिक्रमण होता है।

इन चालीस कर्मस्थानो मे से केवल दस कसिणो की वृद्धि करनी चाहिये। क्योकि जितना स्थान कसिण द्वारा व्याप्त होता है उतने ही अवकाश मे दिव्य श्रोत्र से शब्द सुना जाता है, दिव्य चक्षु से रूप देखे जा सकते है और परचित्त का ज्ञान हो सकता है। परकायगता स्मृति और दस अशुभो की वृद्धि नही करनी चाहिये; क्योकि इससे कोई लाभ नही है। यह परिच्छिन्नाकार मे ही उपस्थित होते है। इसलिए इनकी वृद्धि से कोई अर्थ नही निकलता। इनकी वृद्धि किये बिना भी काम-राग का ध्वस होता है। शेष कर्मस्थानो की भी वृद्धि नही करनी चाहिये। उदाहरण के लिए जो आनापान निमित्त की वृद्धि करता है, वह वातराशि की ही वृद्धि करता है और अवकाश भी परिच्छिन्न होता है। चार ब्रह्म-विहारो के आलम्बन सत्त्व है। इनमे निमित्त की वृद्धि करने से सत्त्व-राशि की ही वृद्धि होती है और उससे कोई उपकार नही होता। कोई प्रतिभाग-निमित्त नही है जिसकी वृद्धि की जाय। आरूप्य आलम्बनो मे भी आकाश की वृद्धि नही करनी चाहिये, क्योकि कसिण के अपगम से ही आरूप्य की प्राप्ति होती है। विज्ञान और नैवसज्ञानासज्ञायतन स्वभाव-धर्म है; इस लिए इनकी वृद्धि सम्भव नही है। शेष की वृद्धि इसलिए नही हो सकती; क्योकि ये अनिमित्त है। बुद्धानुस्मृति आदि का आलम्बन प्रतिभाग-निमित्त नही है। इस लिए इनकी वृद्धि नही करनी चाहिये।

दस कसिण, दस अशुभ, आनापान-स्मृति, कायगतास्मृति—केवल इन बाईस कर्मस्थानो के आलम्बन प्रतिभाग-निमित्त होते है। शेष आठ स्मृतियाँ, आहार के विषय मे प्रतिकूल-सज्ञा और चतुर्धातु-व्यवस्थान, विज्ञानानन्त्यायतन, नैवसज्ञानासज्ञायतन इन बारह कर्मस्थानो के आलम्बन स्वभाव-धर्म है। उक्त दस

कसिण आदि बाईस कर्मस्थानो के आलम्बन निमित्त है। शेष छह—चार ब्रह्म-विहार, आकाशानान्त्यायतन और आकिञ्चन्यायतन के आलम्बनों के सम्बन्ध में न तो यही कहा जा सकता है कि वह निमित्त है और न यही कहा जा सकता है कि वह स्वभाव-धर्म है।

विपुल्वक, लोहितक पुलुवक, आनापान-स्मृति, अप्कसिण, तेजकसिण, वायुकसिण और आलोककसिणों मे सूर्यादि से जो अवभास-मण्डल आता है—इन आठ कर्मस्थाओ के आलम्बन चलित है; पर प्रतिभाग-निमित्त स्थिर है। शेष कर्मस्थानो के आलम्बन स्थिर है।

मनुष्यों मे सब आलम्बनो की प्रवृत्ति होती है। देवताओ मे दस अशुभ, कायगतास्मृति और आहार के विषय मे प्रतिकूल-संज्ञा—इन बारह आलम्बनो की प्रवृत्ति नही होती। ब्रह्मलोक मे बारह उक्त आलम्बन तथा आनापान-स्मृति की प्रवृत्ति नही होती। अरूपभव मे चार आरूप्यो को छोडकर किसी अन्य आलम्बन की प्रवृत्ति नही होती।

वायु-कसिण को छोडकर बाकी नौ कसिण और दस अशुभ का ग्रहण दृष्टि द्वारा होता है। इस का अर्थ यह है कि पहले चक्षु से बार-बार देखने से निमित्त का ग्रहण होता है। कायगता-स्मृति के आलम्बन का ग्रहण दृष्टि-श्रवण से होता है; क्योंकि त्वक् पञ्च का ग्रहण दृष्टि से और शेष का श्रवण से होता है। आनापान-स्मृति स्पर्श से, वायु-कसिण दर्शन-स्पर्श से, शेप अठारह श्रवण से गृहीत होते है। भावना के आरम्भ मे योगी उपेक्षा, ब्रह्म-बिहार और चार आरूप्यो का ग्रहण नही कर सकता; पर शेष चौतीस आलम्बनो का ग्रहण कर सकता है।

आकाश-कसिण को छोड़कर शेष नौ कसिण आरूप्यो मे हेतु है, दस कसिण अभिज्ञा मे हेतु है, पहले तीन ब्रह्म-विहार चतुर्थ ब्रह्म-विहार मे हेतु हे; नीचे का आरूप्य ऊपर के आरूप्य में हेतु हैं, नैवसज्ञानासज्ञायतन निरोध-समापत्ति मे हेतु है, और सब कर्मस्थान सुख-विहार, विपश्यना आर भव-सम्पत्ति मे हेतु है।

रागचरित पुरुष के ग्यारह कर्मस्थान—दस अशुभ और कायगतास्मृति—अनुकूल है; द्वेषचरित पुरुष के आठ कर्मस्थान—चार ब्रह्म-विहार और चार वर्ण-कसिण—अनुकूल है, मोह और वितर्क-चरित पुरुष के लिए एक आनापान-स्मृति ही अनुकूल है; श्रद्धाचरित पुरुष के लिये पहली छह अनुस्मृतियाँ, बुद्धि-चरित पुरुष के लिए मरण-स्मृति, उपशमानुस्मृति, चतुर्धातु-व्यवस्थान और आहार के विषय मे प्रतिकूल-संज्ञा—ये कर्मस्थान अनुकूल है। शेष कसिण और चार आरूप्य सब चरित के पुरुषो के लिए अनुकूल है। कसिणो मे जो क्षुद्र है

वह वितर्कचरित पुरुष के लिए और जो अप्रमाण है वह मोहचरित पुरुष के अनुकूल है। जिसके लिए जो कर्मस्थान अत्यन्त उपयुक्त है उसका उल्लेख ऊपर किया गया है। ऐसी कोई कुशलभावना नही है जिसमें रागादि का परित्याग न हो और जो श्रद्धादि की उपकर्त्री न हो।

भगवान् मेघिय-सुत्त मे कहते है कि इन चार धर्मो की भावना करनी चाहिये—राग के नाश के लिए अशुभ-भावना, व्यापाद के नाश के लिए मैत्री-भावना, वितर्क के उपच्छेद के लिए आनापान-स्मृति की भावना और अहङ्कार-ममकार के समुद्घात के लिए अनित्य-सज्ञा की भावना। भगवान् ने राहुल-सुत्त मे एक के लिए सात कर्मस्थानो का उपदेश किया है। इसलिए वचनमात्र मे अभिनिवेश न रखकर सब जगह अभिप्राय की खोज होनी चाहिये।

४. पृथ्वी-कसिण-निर्देश

अब दस कसिणो का ग्रहण कर भावना किस प्रकार की जाती है? और ध्यानों का उत्पाद कैसे होता है?—इस पर विचार करेगे।

पृथ्वी-कसिण—साधक को कल्याण-मित्र के समीप अपनी चर्या के अनुकूल किसी कर्मस्थान का ग्रहण कर समाधि-भावना के अनुपयुक्त विहार का परित्याग कर अनुरूप विहार मे वास करना चाहिये और भावना-विधान का किसी अश मे भी परित्याग न कर कर्मस्थान का आसेवन करना चाहिये।

जिस विहार मे आचार्य निवास करते हो यदि वहाँ समाधि-भावना की सुविधा हो तो वही रहकर कर्मस्थान का सशोधन करना चाहिये। यदि असुविधा हो तो आचार्य के विहार से अधिक से अधिक एक योजन की दूरी पर निवास करना चाहिये। यदि किसी विषय में सन्देह उपस्थित हो या स्मृति-समोष हो तो विहार का दैनिक कृत्य सम्पादन कर आचार्य के समीप जाकर गृहीत कर्मस्थान का सशोधन करना चाहिये। यदि एक योजन के भीतर भी कोई उपयुक्त विहार न मिले तो सब प्रकार के सन्देहो का निराकरण कर कर्मस्थान के अर्थ और अभिप्राय को भली प्रकार चित्त मे प्रतिष्ठित कर कर्म-स्थान को सुविशुद्ध करना चाहिये। तदनन्तर दूर जाकर भी समाधि-भावना के अनुरूप स्थान मे निवास करना चाहिये। अठारह दोषो में से किसी एक से भी समन्वागत विहार समाधि-भावना के अनुरूप नही होता।

सामान्यत योगी को महाविहार, नवविहार, जीर्णविहार, राजपथ-समीपवर्त्ती विहार आदि मे निवास नही करना चाहिये!

महाविहार में नानाप्रकार के भिक्षु निवास करते है। आपस के विरोध के

कारण विहार का दैनिक कृत्य भलीभाँति सम्पादित नही होता। जब साधक भिक्षा के लिए बाहर जाता है और यदि वह देखता है कि कोई काम करने से रह गया है, तो उसे उस काम को स्वय करना पड़ता है। न करने से वह दोष का भागी होता है और यदि करे तो समय नष्ट होता है, और विलम्ब हो जाने से उसको भिक्षा नही मिलती। यदि वह किसी एकान्त स्थान मे बैठकर समाधि की भावना करना चाहता है तो श्रामणेर और तरुण भिक्षुओ के शोर के कारण विक्षेप उपस्थित होता है।

जीर्ण विहार मे अभिसस्कार का काम बराबर लगा रहता है। राजपथ के समीपवर्त्ती विहार मे दिनरात आगन्तुक आया करते है। यदि विकाल मे कोई आया तो अपना शयनासन भी देना पडता है। इसलिए वहाँ कर्मस्थान का अवकाश नही मिलता। यदि विहार के समीप पुष्करिणी हुई तो वहाॅ निरन्तर लोगो का जमघट रहा करता है। कोई पानी भरने आता है तो कोई चीवर धोने और रगने आता है। इस प्रकार निरन्तर विक्षेप हुआ करता है। ऐसा विहार भी अनुपयुक्त है, जहाॅ नाना प्रकार के शाक, पर्ण, फल या फूल के वृक्ष हो, वहाॅ भी निवास नही करना चाहिये, क्योकि ऐसे स्थानो पर फल-फूलो के अर्थी निरन्तर आया जाया करते है, न देने पर कुपित होते है, कभी कभी जबरदस्ती भी करते है, और समझाने बुझाने पर नाराज होते है और उस भिक्षु को विहार से निकालने की चेष्टा करते है।

किसी लोक-सम्मत स्थान मे भी निवास न करना चाहिये। क्योकि ऐसे प्रसिद्ध स्थान मे यह समझकर कि यहाँ अर्हत् निवास करते है, लोग दूर दूर से से दर्शनार्थ आया करते है। इससे विक्षेप होता है। जो विहार नगर के समीप हो वह भी अनुरूप नही है, क्योकि वहाँ निवास करने से कामगुणोपसहित हीन शब्द कर्णगोचर होते रहते है और असद् आलम्बन दृष्टिपथ मे आपतित होते है। जिस विहार मे वृक्ष होते है, वहाॅ काष्ठहारक लकडी काटने आते है, जिससे ध्यान मे विक्षेप होता है। जिस विहार के चारो ओर खेत हो वहाँ भी निवास न करना चाहिये। क्योकि विहार के मध्य मे किसान खलिखान बनाते है, धान पीटते है अन्य तरह के विघ्न उपस्थित करते है! जिस विहार मे बड़ी जायदाद लगी हो वहाॅ भी विक्षेप हुआ करता है। लोग तरह तरह की शिकायते लाते है और समय समय पर राजद्वार पर जाना पड़ता है। जिस विहार में ऐसे भिक्षु निवास करते हो जिनके विचार परस्पर न मिलते हो और जो एक दूसरे के प्रति वैरभाव रखते हो वहाँ सदा विघ्न उपस्थित रहता है, वहाँ भी नही रहना चाहिये।

साधक को दोषो से युक्त विहारो का परित्याग कर ऐसे विहार में निवास

करना चाहिये जो भिक्षाग्राम से न बहुत दूर हो, न बहुत समीप; जहाँ आने-जाने की सुविधा हो, जहाँ दिन मे लोगो का सघट्ट न हो, जहाँ रात्रि मे बहुत शब्द न हो और जहाँ हवा, धूप, मच्छड, खटमल, और साँप आदि रेगनेवाले जानवरो की बाधा न हो, ऐसे विहार मे सूत्र और विनय के जानने वाले भिक्षु निवास करते है। योगी उनसे प्रश्न करता है और वह उसके सन्देहो को दूर करते है।

अनुरूप विहार में निवास करते हुए योगी को पहले क्षुद्र अन्तरायो का उपच्छेद करना चाहिये। अर्थात् यदि चीवर मैला हो तो उसे फिर से रंगवाना चाहिये, यदि पात्र मैला हो तो उसे शुद्ध करना चाहिये, यदि केश और नख बढ गए हो तो उनको कटवाना चाहिये और यदि चीवर जीर्ण हो गया हो तो उसको सिलवाना चाहिये। इस प्रकार क्षुद्र अन्तरायो का उपच्छेद करना चाहिये।

भोजन के उपरान्त थोडा विश्राम कर एकान्त स्थान मे पर्यङ्कबद्ध हो सुखपूर्वक बैठकर प्राकृतिक अथवा कृत्रिम पृथ्वी-मण्डल मे भावना-ज्ञान द्वारा पृथ्वी-निमित्त का ग्रहण करना चाहिये, अर्थात् पृथ्वी मण्डल की ओर बार-बार देखकर चक्षुनिमीलन के द्वारा पृथ्वी-निमित्त को मन मे अच्छी तरह धारण करना चाहिये, जिसमे पुनरवलोकन के क्षण मे ही वह निमित्त उपस्थित हो जाय।

जो पुण्यवान् है और जिसने पूर्वजन्म मे श्रमण-धर्म का पालन करते हुए पृथ्वीकसिण नामक कर्मस्थान की भावना कर ध्यानो का उत्पाद किया है, उसके लिए कृत्रिम पृथ्वी-मण्डल के उत्पाद की आवश्यकता नही है। वह चलमण्डलादिक प्राकृतिक पृथ्वी-मण्डल मे ही निमित्त का ग्रहण कर लेता है। पर जिसको ऐसा अधिकार प्राप्त नही है, उसे चार कसिण दोषो का परिहार करते हुए कृत्रिम पृथ्वी-मण्डल बनाना चाहिये। नील, पीत, लोहित, और अवदात (श्वेत) के संसर्गवश पृथ्वी-कसिण मे दोष प्राप्त हो जाते है। नीलादि वर्ण दस कसिणो मे परिगणित है। इनके समर्ग मे शुद्ध पृथ्वी-कसिण का उत्पाद नही होता। इसीलिए इन वर्णो की मृत्तिका का परित्याग बताया गया है। अत पृथ्वी-मण्डल बनाते समय नीलादि वर्ण की मृत्तिका का ग्रहण न कर गङ्गा नदी की अरुण वर्ण की मृत्तिका काम मे लानी चाहिये।

विहार मे जहाँ श्रामणेर आदि आते-जाते हो वहाँ मण्डल न बनाना चाहिये। विहार के प्रत्यन्त मे, प्रच्छन्न स्थान मे, गुहा या पर्णशाला मे, पृथ्वी-मण्डल बनाना चाहिये। यह मण्डल दो प्रकार का होता है—१. चल (संहारिम = चलनयोग्य) और २ अचल (तत्रट्ठक)। चार दण्डों मे कपड़ा चमड़ा या चटाई बाँधकर उसमे साफ की हुई मिट्टी का नियत प्रमाण का वृत्त (वर्तुल) लीप देने से चल-मण्डल बनता है। भावना के समय यह भूमि

पर फैला दिया जाता है। पद्मकर्णिका के आकार में स्थाणु गाडकर लताओं से उसे वेष्टित कर देने से अचल-मण्डल बनता है। यदि अरुण वर्ण की मृत्तिका पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध न हो सके तो अधोभाग में दूसरी तरह की मिट्टी डालकर ऊपर के हिस्से में सुपरिशुद्ध अरुण वर्ण की मृत्तिका का एक बालिश्त चार अंगुल के विस्तार का वृत्त बनना चाहिये।

प्रमाण के सम्बन्ध मे कहा गया है कि वृत्त शूर्पमात्र हो अथवा शरावमात्र। कुछ लोगों के मत मे इन दोनो का सम-प्रमाण है, पर कुछ का कहना है कि शराव (=प्याला) एक बालिश्त चार अंगुल का होता है और शूर्प का प्रमाण इससे अधिक है। इनके मत मे वृत्त को शराव से कम और शूर्प से अधिक प्रमाण का न होना चाहिये। इस वृत्त को पत्थर से घिसकर भेरि-तल के सदृश सम करना चाहिये। स्थान साफ कर और स्नान कर मण्डल से ढाई हाथ के फासले पर एक बालिश्त चार अङ्गुल ऊँचे पैरोवाले पीढे पर बैठना चाहिये। इससे अधिक फासले पर बैठने से मण्डल नहीं दिखलायी देगा और यदि इससे नजदीक बैठा जाय तो मण्डल के दोष देखने मे आयेगे। यदि उक्त प्रमाण से अधिक ऊँचे आसन पर बैठा जाय तो गरदन झुकाकर देखना पड़ेगा और यदि इससे नीचे आसन पर बैठा जाय तो घुटने दर्द करने लगेंगे। इसलिये उक्त प्रकार के आसन पर ही बैठना चाहिये।

काम का दोष देखकर और ध्यान के लाभ को ही सब दुखों के अतिक्रमण का उपाय निश्चित्त कर नैष्क्रम्य के लिए प्रीति उत्पन्न करनी चाहिये। "बुद्ध, प्रत्येकबुद्ध और आर्यश्रावकों ने इसी मार्ग का अनुसरण किया है। मै भी इसी मार्ग का अनुगामी हो एकान्त-सेवन के सुख का आस्वाद करूँगा" ऐसा विचार विचार कर उसे योग-साधन के लिए उत्साह पैदा करना चाहिये। और सम आकार से चक्षु का उन्मीलन कर निमित्त-ग्रहण (=उग्गहनिमित्त) की भावना करनी चाहिये। जिस प्रकार अतिसूक्ष्म और अतिभास्वर रूप के ध्यान से आँखें थक जाती है उसी प्रकार अति उन्मीलन से भी आँखें थक जाती है और मण्डल का रूप भी अत्यन्त प्रकट हो जाता है अर्थात् उसके स्वभाव का अत्यन्त आविर्भाव होता है; तथा उसके वर्ण और लक्षण अधिक स्पष्ट हो जाते है और और इस प्रकार निमित्त का ग्रहण नही होता। मन्द उन्मीलन से मण्डल का रूप दिखायी नही देता और दर्शन के कार्य मे चित्त का व्यापार मन्द हो जाता है; इसलिए निमित्त का ग्रहण नही होता। अतः सम आकार से ही चक्षु का उन्मीलन करना चाहिये।

पृथ्वी-कसिण के अरुण वर्ण का चिन्तन और पृथ्वी-धातु के लक्षण का ग्रहण न करना चाहिये। यद्यपि वर्ण का चिन्तन निषिद्ध है तथापि पृथ्वी-धातु की

उत्सन्नतावश वर्णसहित पृथ्वी की भावना एक प्रज्ञप्ति के रूप मे करनी चाहिये। इस प्रकार प्रज्ञप्तिमात्र मे चित्त की प्रतिष्ठा करनी चाहिये। लोक मे सभारसहित पृथ्वी को 'पृथ्वी' कहते है। पृथ्वी, मही, मेदिनी, भूमि, वसुधा, वसुन्धरा आदि पृथ्वी के नामो मे से जो नाम साधक को पसन्द हो, उस नाम का उच्चारण करना चाहिये। पर पृथ्वी नाम ही प्रसिद्ध है, इसलिए पृथ्वी नाम का ही उच्चारण कर भावना करना अच्छा है। कभी आँख खोलकर, कभी आँख मूँदकर, निमित्त का ध्यान करना चाहिये। जब तक निमित्त का उत्पाद नही हो तब तक इसी प्रकार भावना करनी चाहिये। जब भावनावश आँखे मूँदने पर उसी तरह जैसा आँखे खोलने पर निमित्त का दर्शन हो, तब समझना चाहिये कि निमित्त का उत्पाद हुआ है। निमित्तोत्पाद के बाद उस स्थान पर न बैठना चाहिये। अपने निवास-स्थान में बैठकर भावना करनी चाहिये। यदि किसी अनुपयुक्त कारणवश इस तरुण समाधि का नाश हो जाय तो शीघ्र उस स्थान पर जाकर निमित्त का ग्रहण कर अपने वास-स्थान पर लौट आना चाहिये और बहुलता के साथ इस भावना का आसेवन और बार-बार चित्त मे निमित्त की प्रतिष्ठा करनी चाहिये। ऐसा करने से क्रमपूर्वक नीवरण अर्थात् अन्तरायो का नाश और क्लेशो का उपशम होता है।

भावना-क्रम से जब श्रद्धा आदि इन्द्रियाँ सुविशद और तीक्ष्ण हो जाती है तब कामादि दोष का लोप होता है और उपचार-समाधि मे चित्त समाहित हो प्रतिभाग-निमित्त का प्रादुर्भाव होता है। प्रतिभाग-निमित्त, उद्ग्रह-निमित्त (=उग्गहनिमित्त) में से कई गुना अधिक सुपरिशुद्ध होता है। उद्ग्रह-निमित्त में कसिण-दोष (जैसे अगुली की छाप) दिखलायी पडते है, पर प्रतिभाग-निमित्त भास्वर और स्वच्छ होकर निकलता है। प्रतिभाग-निमित्त वर्ण और आकार (संस्थान) से रहित होता है। यह चक्षु द्वारा ज्ञेय नही है, यह स्थूल पदार्थ नही है और अनित्यता आदि लक्षणो से अङ्कित नही है। केवल समाधि-लाभी को यह उपस्थित होता है और भावना-संज्ञा से इसका उत्पाद होता है। इसकी उत्पत्ति के समय से ही अन्तरायो का नाश और क्लेशो का उपशम होता है तथा चित्त उपचार-समाधि द्वारा समाहित होता है।

प्रतिभाग-निमित्त का उत्पाद अति दुष्कर है। इस निमित्तकी रक्षा बडे प्रयत्न के साथ करनी चाहिये। क्योकि ध्यान का यही आलम्बन है। निमित्त के विनष्ट होने से लब्ध ध्यान भी नष्ट हो जाता है। उपचार-समाधि के बलवान् होने से ध्यान के अधिगम की अवस्था अर्थात् अर्पणा-समाधि उत्पन्न होती है। उस अवस्था मे ध्यान के अगो का प्रादुर्भाव होता है। उपयुक्त के आसेवन और अनुपयुक्त के परित्याग से निमित्त की रक्षा और अर्पणा समाधि का लाभ

होता है। जिस आवास मे निमित्त उत्पन्न और स्थिर होता है, जहाँ स्मृति का सम्प्रमोष नही होता और चित्त एकाग्र होता है; उसी आवास मे साधक को निवास करना चाहिये। जो गोचर, ग्राम, आवास के समीप हो और जहाँ भिक्षा सुलभ हो वही उपयुक्त है। साधक के लिए लौकिक-कथा अनुपयुक्त है। इससे निमित्त का लोप होता है। साधक को ऐसे पुरुष का सग न करना चाहिये जो लौकिक कथा कहे, क्योकि इससे समाधि मे बाधा उपस्थित होती है और जो प्राप्त किया है वह भी नष्ट हो जाता है। उपयुक्त भोजन, ऋतु और ईर्यापथ (=वृत्ति) का आसेवन करना चाहिये, ऐसा करने से तथा बहुलता के साथ निमित्त का आसेवन करने से शीघ्र ही अर्पणा-समाधि का लाभ होता है। पर यदि इस विधि मे भी अर्पणा का उत्पाद न हो तो निम्नलिखित दश प्रकार से अर्पणा मे कुशलता प्राप्त होती है —

१ **शरीर तथा चीवर आदि की शुद्धता से।** यदि केश-नख बड़े हो, शरीर से दुर्गन्ध आती हो, चीवर जीर्ण तथा क्लिष्ट और आसन मैला हो तो चित्त तथा चैतसिक-धर्म भी अपरिशुद्ध होते है, ज्ञान भी अपरिशुद्ध होता है, समाधि-भावना दुर्बल और क्षीण हो जाती है, कर्मस्थान भी प्रगुण भाव को नही प्राप्त होता और इस प्रकार अङ्गो का प्रादुर्भाव नही होता। इसलिए शरीर तथा चीवर आदि को विशद तथा परिशुद्ध रखना चाहिये जिसमें चित्त सुखी हो और एकाग्र हो।

२ **श्रद्धादि इन्द्रियो के समभाव प्रतिपादन से।** श्रद्धादि (श्रद्धा, वीर्य, स्मृति, समाधि, प्रज्ञा) इन्द्रियो में से यदि कोई एक इन्द्रिय बलवान् हो तो इतर इन्द्रियाँ अपने कृत्य मे असमर्थ हो जाती है। जिसमे श्रद्धा का आधिक्य होता है और जिसकी प्रज्ञा मन्द होती है, वह अवस्तु में श्रद्धा करता है, जिसकी प्रज्ञा बलवती होती है और श्रद्धा मन्द होती है वह शठता का पक्ष ग्रहण करता है, और उसका चित्त शुष्क तर्क से विलुप्त होता है। श्रद्धा और प्रज्ञा का अन्योन्यविरह अनर्थावह है। इसलिये इन दोनों इन्द्रियो का समभाव इष्ट है। दोनों की समता से ही अर्पणा होती है। इसी प्रकार वीर्य और समाधि का भी समभाव इष्ट है। समाधि यदि प्रबल हो और वीर्य मन्द हो तो आलस्य अभिभूत करता है, क्योकि समाधि आलस्य-पाक्षिक है। यदि वीर्य प्रबल हो और समाधि मन्द हो तो चित्त की भ्रान्तता या विक्षेप अभिभूत करता है; क्योंकि वीर्य विक्षेप-पाक्षिक है। किसी एक इन्द्रिय की सातिशय प्रवृत्ति होने से अन्य इन्द्रियो का व्यापार मन्द हो जाता है। इसलिए अर्पणा की सिद्धि के लिए इन्द्रियो की एकरसता अभीष्ट है। किन्तु शमथ-यानिक को बलवती श्रद्धा भी चाहिये। बिना श्रद्धा के अर्पणा का लाभ नहीं हो सकता। यदि वह यह सोचे

कि केवल पृथ्वी-पृथ्वी इस प्रकार चिन्तन करने से कैसे ध्यान की उत्पत्ति होगी तो अर्पणा-समाधि का लाभ नही हो सकता। उसको भगवान् की बतायी हुई विधि की सफलता पर विश्वास होना चाहिये। बलवती स्मृति तो सर्वत्र अभीष्ट है; क्योकि चित्त स्मृति-परायण है और इसलिए विना स्मृति के चित्त का निग्रह नही होता।

३. **निमित्त कौशल से** अर्थात् लब्ध-निमित्त की रक्षा में कुशल और दक्ष होने से।

४. **जिस समय चित्त का प्रग्रह उत्थान करना हो उस समय चित्त का प्रग्रह करने से।**

जिस समय वीर्य, प्रामोद्य आदि की शिथिलता से भावना-चित्त सङ्कुचित होता है, उस समय प्रश्रब्धि (काय और चित्त की शान्ति), समाधि और उपेक्षा इन बोध्यङ्गों की भावना उपयुक्त नही है, क्योंकि इनसे संकुचित चित्त का उत्थान नहीं होता। जिस समय चित्त संकुचित हो उस समय धर्म-विचय, (प्रज्ञा), वीर्य (उत्साह) और प्रीति इन बोध्यंगों की भावना करनी चाहिये। इनसे मन्द-चित्त का उत्थान होता है। कुशल और अकुशल के स्वभाव तथा सामान्य लक्षणो के यथार्थ अवबोध से धर्मविचय की भावना होती है। आलस्य के परित्याग से अभ्यासवश कुशल-क्रिया का आरम्भ वीर्य-संचय और प्रतिपक्ष धर्मो के विध्वंसन की पटुता प्राप्त होती है। प्रीतिसम्ययुक्त धर्मो का निरन्तर चिन्तन करने की प्रीति का उत्पाद और वृद्धि होती है।

परिप्रश्न, शरीरादि की शुद्धता, इन्द्रिय-समभाव-करण, मन्दबुद्धिवालों के परिवर्जन, प्रज्ञावान् के आसेवन, स्कन्ध, आयतन, धातु ,चार आर्यसत्य, प्रतीत्य-समुत्पाद आदि गम्भीर ज्ञानकथा की प्रत्यवेक्षा तथा प्रज्ञापरायणता से धर्म-विचय का उत्पाद होता है।

दुर्गति आदि दु:खावस्था की भीषणता का विचार करने से, इस विचार से कि लौकिक अथवा लोकोत्तर मे जो कुछ विशेषता है उसकी प्रीति वीर्य के अधीन है, इस विचार से कि आलसी पुरुष बुद्ध, प्रत्येकबुद्ध, महाश्रावकों के मार्ग का अनुगामी नही हो सकता, शास्ता के महत्त्व का चिन्तन करने से (शास्ता ने हमारे साथ बहुत उपकार किया है, शास्ता के शासन का अति-क्रमण नही हो सकता, वीर्यारम्भ (=कुशलोत्साह) की शास्ता ने प्रशसा की है), धर्मदाय के महत्त्व का चिन्तन करने से (मुझे धर्म का दायाद होना चाहिये, आलसी पुरुष धर्म का दायाद नहीं हो सकता), आलोक-संज्ञा के चिन्तन से ईर्यापथ के परिवर्तन और खुली जगह रहने से, आलस्य और अकर्मण्यता का

परित्याग करने से, आलसियों के परिवर्जन और वीर्यवान् के आसेवन से, व्यायाम (=उद्योग) के चिन्तन से तथा वीर्यपरायण होने से वीर्य का उत्पाद होता है।

बुद्ध, धर्म, संघ शील, त्याग (=दान), देवता और उपशम के निरन्तर स्मरण से, बुद्धादि मे जो स्नेह और प्रासाद नही रखता उसके परिवर्जन तथा बुद्ध मे जो स्निग्ध है उसके आसेवन से, सम्पसादनीय-सुत्त के चिन्तन तथा प्रीति-परायण होने से प्रीति का उत्पाद होता है।

५. जिस समय चित्त का निग्रह करना हो उस समय चित्त का निग्रह करने से।

जिस समय वीर्य, सवेग (=वैराग्य), प्रामोद्य के अतिरेक से चित्त उद्धत और अनवस्थित होता है उस समय धर्मविचय, वीर्य और प्रीति की भावना अनुपयुक्त है, क्योकि इनसे उद्धत-चित्त का समाधान नही हो सकता। ऐसे समय प्रश्रब्धि, समाधि और उपेक्षा इन बोध्यङ्गो की भावना करनी चाहिए।

काय और चित्त की शान्ति का निरन्तर चिन्तन करने से प्रश्रब्धि को की भावना, शमथ और अव्यग्रता का निरन्तर चिन्तन करने से समाधि की भावना और उपेक्षा-सम्प्रयुक्त धर्मो का निरन्तर चिन्तन करने से उपेक्षा की भावना होती है।

प्रणीत भोजन, अच्छी ऋतु, उपयुक्त ईर्यापथ के आसेवन से, उदासीन वृत्ति से, क्रोधी पुरुष के परित्याग और शान्त-चित्त पुरुष के आसेवन से तथा प्रश्रब्धि-परायण होने से प्रश्रब्धि का उत्पाद होता है।

शरीरादि की शुद्धता से, निमित्त कुशलता से, इन्द्रिय-समभाव-कारण से समय-समय पर चित्त का प्रग्रह (=लीन चित्त का उत्थान) और निग्रह (=उद्धत चित्त का समाधान) करने से, श्रद्धा और सवेग (=वैराग्य) द्वारा उपशम-सुख-रहित चित्त का सतर्पण करने से प्रग्रह-निग्रह-सन्तर्पण के विषय मे सम्यक्-प्रवृत्त भावना-चित्त की विरक्तता से, असमाहित पुरुष के परित्याग और समाहित पुरुष के आसेवन से, ध्यानो की भावना, उत्पाद, अधिष्ठान (=अवस्थिति) व्युत्थान, सक्लेश और व्यवदान (=विशुद्धता) के चिन्तन से तथा समाधि-परायण होने से समाधि का उत्पाद होता है।

जीवों और संस्कारों के प्रति उपेक्षा-भाव,-ऐसे लोगों का परित्याग जिनको जीव और संस्कार प्रिय हैं, ऐसे लोगों का आसेवन जो जीव और संस्कारों के प्रति उपेक्षा-भाव रखते है, तथा उपेक्षा-परायणता से उपेक्षा का उत्पाद होता है।

६. जिस समय चित्त का सम्प्रहर्षण (= सन्तर्पण) करना चाहिये उस समय चित्तके सम्प्रहर्षण से।

जब प्रज्ञा-व्यापार के अल्पभाव के कारण या उपशम-सुख के अलाभ के कारण चित्त का तर्पण नही होता तब आठ संवेगों द्वारा सवेग उत्पन्न करना चाहिये। जन्म,जरा, व्याधि, मरण, अपाय दुःख, अतीत मे जिस दु:ख का मूल हो, अनागत मे जिस दु ख का मूल हो और वर्तमान में आहारपर्येषण का दुःख —ये आठ सवेग-वस्तु है। बुद्ध, धर्म और सघ के गुणो के अनुस्मरण से चित्त का सम्प्रसाद होता है।

७ जिस समय चित्त का उपेक्षा भाव होना चाहिये उस समय चित्त की उदासीन-वृत्ति से। जब भावना करते हुए योगी के चित्त का व्यापार मन्द नही होता, चित्त का विक्षेप नही होता, चित्त को उपशम-सुख का लाभ होता है, आलम्बन मे चित्त की सम-प्रवृत्ति होती है और शमथ के मार्ग मे चित्त का आरोहण होता है; तब प्रग्रह, निग्रह और सम्प्रहर्षण के विषय मे चित्त की उदासोन वृत्ति होती है।

८. ऐसे लोगो के परित्याग से जो अनेक कार्यों मे व्यापृत रहते है, जिनका हृदय विक्षिप्त है और जो ध्यान के मार्ग मे कभी प्रवृत्त नही हुए है।

९ समाधि-लाभी पुरुषों के आसेवन से।

१०. समाधि-परायण होने से।

उक्त दस प्रकार से अर्पणा मे कुशलता प्राप्त की जाती है।

आलस्य और चित्त-विक्षेप का निवारण कर जो योगी सम-प्रयोग से भावन-चित्त को प्रतिभाग-निमित्त मे स्थिर करता है वह अर्पणा-समाधि का लाभ करता है। चित्त के लीन और उद्धत भावो का परित्याग कर निमित्त की ओर चित्त को प्रवृत्त करना चाहिये।

जब योगी चित्त को निमित्त की ओर प्रेरित करता है तब चित्त-द्वार भावना के बल से उपस्थित उसी पृथ्वी-मण्डलरूपी आलम्बन को अपनी ओर आकृष्ट करता है। उस समय उस आलम्बन मे चार या पॉच चेतनाये (जवन) उत्पन्न होती है। इनमे से अन्तिम रूपावचर-भूमि की है; शेष तीन या चार चेतनाये काम-धातु की है। प्राकृतिक चित्त की अपेक्षा इन तीन या चार चेतनाओं के वित्तर्क, विचार, प्रीति, सुख और एकाग्रता आदि भावना के बल से पटुतर होते है। इन्हे 'परिकर्म' (परिकम्म) कहते है। क्योकि ये चेतनाये अर्पणा की प्रतिसंस्कारक है। अर्पणा के समोपवर्ती होने से इन्हे 'उपचार' भी कहते है। अर्पणा के अनुलोम होने से इनकी 'अनुलोम' सज्ञा भी है। तीसरी या चौथी

चेतना गोत्रभू कहलाती है। यह चेतना (=जवन) काम-तृष्णा के विषयों के विशेष रूप और अनुत्तरधर्मो के साम्परायिक रूप की सीमा पर स्थित है। इस प्रकार मे ये सब सज्ञाएँ सामान्य रूप से सब जवनों की है। यदि विशेषता के साथ कहा जाय तो पहला जवन 'परिकर्म', दूसरा 'उपचार', तीसरा 'अनुलोम' चौथा 'गोत्रभू', या पहला 'उपचार', दूसरा 'अनुलोम', तीसरा 'गोत्रभू', और चौथा या पाँचवाँ 'अर्पणा' है। जिसकी बुद्धि प्रखर है उसकी चौथे जवन मे अर्पणा की सिद्धि होती है; पर जिसकी बुद्धि मन्द है, उसको पाँचवे जवन मे अर्पणा-चित्त का लाभ होता है। चौथे या पाँचवे जवन मे ही अर्पणा की सिद्धि होती है। तत्पश्चात् चेतना भवाङ्ग मे अवतीर्ण होती है। अर्पणा का काल-परिच्छेद एक चित्त-क्षण है, तदनन्तर भवाङ्ग मे पात होता है। पीछे भवाङ्ग का उपच्छेद कर ध्यान की प्रत्यवेक्षा के लिए चित्तावर्जन होता है; तत्पश्चात् ध्यान की परीक्षा होती है।

काम और अकुशल के परित्याग से ही प्रथम ध्यान का लाभ होता है, यह प्रथम ध्यान के प्रतिपक्ष है। प्रथम ध्यान मे विशेष कर काम-धातु का अति-क्रमण होता है। काम से 'वस्तुकाम' का आशय है। जो वस्तु (जैसे, प्रिय-मनोरम-रूप) काम का उद्दीपन करे वह वस्तुकाम है, किसी वस्तु के लिए अभि-लाष, राग तथा लोभ के प्रभेद 'क्लेशकाम' कहलाते है। अकुशल से क्लेशकाम तथा अन्य अकुशल का आशय है। काम के परित्याग से कार्य-विवेक और अकुशल के विवर्जन से चित्त-विवेक सूचित होता है। पहले से तृष्णा आदि क्लेश के विषय का परित्याग और दूसरे से क्लेश का परित्याग सूचित होता है। पहले से काम-सुख का परित्याग और दूसरे से ध्यान-सुख का परिग्रह प्रकाशित होता है। पहले से चपल भाव के हेतु का परित्याग और दूसरे से अविद्या का परित्याग, पहले से प्रयोग-शुद्धि (प्राणातिपातादि अशुद्ध प्रयोग का परित्याग) और दूसरे से अध्याशय की शुद्धि सूचित होती है।

यद्यपि अकुशल धर्मों मे दृष्टि, मान आदि पाप भी सगृहीत है; तथापि यहाँ केवल उन्ही अकुशल धर्मो से तात्पर्य है जो ध्यान के अङ्गो के विरोधी है। यहाँ अकुशल धर्मो से पाँच नीवरणों से ही आशय है। ध्यान के अङ्ग इनके प्रतिपक्ष है और इनका विघात करते है। समाधि कामच्छन्द (अभिलाष, लोभ, तृष्णा) का प्रतिपक्ष है, प्रीति व्यापाद (हिंसा) का प्रतिपक्ष है, वितर्क का स्त्यान (आलस्य, अकर्मण्यता) प्रतिपक्ष है; सुख का औद्धत्य-कौकृत्य (अनवस्थितता, खेद) और विचार का विचिकित्सा प्रतिपक्ष है। इस प्रकार काम के विवेक से कामच्छन्द का विष्कम्भन और अकुशल धर्मों के विवेक से शेष चार नीवरणों का विष्कम्भन होता है। पहले से लोभ (अकुशल-मूल) और दूसरे से द्वेष-मोह,

पहले से तृष्णा तथा तत्सम्प्रयुक्त अवस्था, दूसरे से अविद्या तथा तत्सम्प्रयुक्त अवस्था का परित्याग सूचित होता है।

यह पाँच नीवरण प्रथम-ध्यान के प्रहाण-अङ्ग है। जब तक इनका विष्कम्भन नही होता तब तक ध्यान का उत्पाद नही होता। ध्यान के क्षण मे अन्य अकुशल धर्मो का भी प्रहाण होता है; तथापि पूर्वोक्त नीवरण ध्यान मे विशेष रूप से अन्तराय उपस्थित करते है। इन पाँच नीवरणो का परित्याग कर प्रथम ध्यान वितर्क, विचार, प्रीति, सुख, और समाधि इन पाँच अङ्गो से समन्वागत होता है।

आलम्बन के विषय मे यह कल्पना कि यह ऐसा है 'वितर्क' कहलाता है, अथवा आलम्बन के समीप चित्त का आनयन आलम्बन मे चित्त का प्रथम प्रवेश 'वितर्क' कहलाता है। आलम्बन मे चित्त की अविच्छिन्न-प्रवृत्ति 'विचार' है, वितर्क विचार का पूर्वगामी है। वितर्क चित्तका प्रथम अभिनिपात है। घण्टे के अभिघात से जो शब्द उत्पन्न होता है, वह वितर्क के समान है। इसका जो अनुरव होता है, वह विचार के समान है। जिस प्रकार आकाश मे उडने की इच्छा करनेवाला पक्षी पक्ष-विक्षेप करता है, इसी प्रकार वितर्क की प्रथमोत्पत्ति के काल मे विचार की वृत्ति शान्त होती है; उसमें चित्त का अधिक परिस्पन्दन नही होता। विचार आकाश मे उड़ते हुए पक्षी के पक्ष-प्रसारण या कमल के ऊपरी भाग पर भ्रमर के परिभ्रमण के समान है।

प्रीति, काय और चित्त के तर्पण, परितोषण को कहते है। प्रीति प्रणीत रूप से काम मे व्याप्त होती है और इसका उत्कृष्ट-भाव होता है। 'प्रीति' पाँच प्रकार की है—१. क्षुद्रिका-प्रीति, २ क्षणिका-प्रीति, ३ अवक्रान्तिका-प्रीति, ४ उद्वेगा-प्रीति, ५. स्फरणा-प्रीति। क्षुद्रिका-प्रीति शरीर को केवल रोमाञ्चित कर सकती है। क्षणिका-प्रीति क्षण क्षण पर होनेवाले विद्युत्पात के समान होती है। जिस प्रकार समुद्रतट पर लहरे टकराती है उसी प्रकार अवक्रान्तिका-प्रीति शरीर को अवक्रान्त कर भिन्न हो जाती है। उद्वेगा-प्रीति बलवती होती है। स्फरणा प्रीति निश्चला और चिरस्थायिनी होती है। यह सकल शरीर को व्याप्त करती है। यह पाँच प्रकार की प्रीति परिपक्व हो, काय और चित्त-प्रश्रब्धि(चित्तशान्ति) को सम्पन्न करती है। प्रश्रब्धि परिपाक को प्राप्त हो कायिक और चैतसिक सुख को सम्पन्न करती है। सुख परिपक्व हो समाधि का परिपूरण करता है। स्फरणा-प्रीति ही अर्पणा-समाधि का मूल है। यह प्रीति अनुक्रम से वृद्धि को पाकर अर्पणा-समाधि से सम्प्रयुक्त होती है। यहाँ यही प्रीति अभिप्रेत है। 'सुख' काय और चित्त की बाधा को नष्ट करता है। सुख से सम्प्रयुक्त धर्मो की अभिवृद्धि होती है।

वितर्क चित्त को आलम्बन के समीप ले जाता है। विचार से आलम्बन मे चित्त की अविच्छिन्न प्रवृत्ति होती है। वितर्क-विचार से चित्त-समाधान के लिए भावना-प्रयोग सम्पादित होता है। प्रीति से चित्त का तर्पण और सुख से चित्त की वृद्धि होती है। तदनन्तर एकाग्रता, अवशिष्ट स्पर्शादि धर्मो सहित चित्त को एक आलम्बन मे सम्यक् और समरूप से प्रतिष्ठित करती है। प्रतिपक्ष धर्मों के परित्याग से चित्त का लीन ओर उद्धत भाव दूर हो जाता है। इस प्रकार चित्त का सम्यक् और सम आधान होता है। ध्यान के क्षण मे एकाग्रता-वश चित्त सातिशय समाहित होता है।

इन पॉच अङ्गो का जब तक प्रादुर्भाव नही होता तब तक प्रथम ध्यान का लाभ नही होता। यह पॉच अङ्ग उपचार-क्षण में भी रहते है पर अर्पणा-समाधि मे पटुतर हो जाते है। क्योकि उस क्षण मे यह रूप-धातु के लक्षण प्राप्त करते है। प्रथम ध्यान की त्रिविध-कल्याणता है। इसके आदि, मध्य, और अन्त तीनो कल्याण के करने वाले है। प्रथम ध्यान दस लक्षणो से सम्पन्न है। ध्यान के उत्पाद-क्षण मे भावना-क्रम के पूर्व-भाग की (अर्थात् गोत्रभू तक) विशुद्धि होती है। यह ध्यान की आदि-कल्याणता है। इसके तीन लक्षण है—नीवरणो के विष्कम्भन से चित्त की विशुद्धि, चित्त की विशुद्धि से मध्यम शमथ-निमित्त का अभ्यास और इस अभ्यासवश उक्त निमित्त में चित्त का अनुप्रवेश। स्थिति-क्षण मे उपेक्षा की अभिवृद्धि विशेष रूप से होती है। यह ध्यान की मध्य-कल्याणता है, यह तीनो लक्षणो से समन्वागत है—विशुद्ध चित्त की उपेक्षा, शमथ की भावना मे रत चित्त की उपेक्षा और एक आलम्बन मे सम्यक् समाहित चित्त की उपेक्षा। ध्यान के अवसान मे प्रीति का लाभ होता है, अवसान-क्षण मे कार्य निष्पन्न होने से धर्मो के अनतिवर्तनादि-साधक ज्ञान की परिशुद्धि प्रकट होती है। इसके चार लक्षण है—१. जातधर्म एक दूसरे को अतिक्रान्त नही करते; २. इन्द्रियो की (पॉच मानसिक शक्तियो की) एक एक सत्ता होती है; ३ साधक इनके उपकारक वीर्य धारण करता है; ४ और वह इनका आसेवन करता है।

जिस क्षण मे अर्पणा का उत्पाद होता है, उसी क्षण में अन्तराय उपस्थित करने वाले क्लेशो से चित्त विशुद्ध होता है। 'परिकर्म' की विशुद्धि से अर्पणा को सातिशय विशुद्धि होती है, जब तक चित्त का आवरण दूर नही होता तब तक मध्यम शमथ-निमित्त का अभ्यास नही हो सकता। लीन और उद्धतभाव इन दो अन्तो का परित्याग करने से इसे मध्यम कहते है। विरोधी धर्मो का विशेष रूप से उपशम करने से शमथ और साधक के सुखविशेष का कारण होने से यह निमित्त कहलाता है। यह मध्यम शमथ-निमित्त लीन और उद्धत-भाव से रहित अर्पणासमाधि ही है। तदनन्तर गोत्रभू-चित्त एकत्व-नय से

अर्पणा-समाधि-वश समाहित-भाव को प्राप्त होता है, और इस निमित्त का अभ्यास करता है। अभ्यास-वश समाहित-भाव की प्राप्ति से निमित्त में चित्त अनुप्रविष्ट होता है। इस प्रकार प्रतिपद्विशुद्धि गोत्रभू-चित्त मे इन तीन लक्षणो को निष्पन्न करती है। एक बार विशुद्ध हो जाने से साधक फिर विशोधन की चेष्टा नही करता और इस प्रकार यह विशुद्ध चित्त को उपेक्षा-भाव से देखता है।

शमथ के अभ्यास-वश शमथ-भाव को प्राप्त होने के कारण साधक समाधान की चेष्टा नही करता और शमथ की भावना मे रत चित्त की उपेक्षा करता है। शमथ के अभ्यास और क्लेश के प्रहाण मे चित्त सम्यक् रूप से एक आलम्बन मे समाहित होता है। साधक समाहित चित्त की उपेक्षा करता है। इस प्रकार उपेक्षा की वृद्धि होती है। उपेक्षा की वृद्धि से ध्यानचित्त मे उत्पन्न एकाग्रता और प्रज्ञा बिना एक दूसरे को अतिक्रान्त किये प्रवृत्त होती है, श्रद्धा आदि इन्द्रियाँ (मानसिक शक्ति) नाना क्लेशो से विनिर्मुक्त हो विमुक्ति-रस से एकरसता को प्राप्त होती है, साधक इन अवस्थाओ के अनुकूल वीर्य प्रवृत्त करता है। स्थिति क्षण से आरम्भ कर ध्यान-चित्त की आसेवना प्रवृत्त होती है। यह सब अवस्थाएँ इस कारण निष्पन्न होती है; क्योकि ज्ञान द्वारा इस बात की प्रतीति होती है कि समाधि और प्रज्ञा की समरसता न होने से भावना सक्लिष्ट होती है और इनकी समरसता से विशुद्ध होती है।

इस विशोधक-ज्ञान के कार्य के निष्पन्न होने से चित्त का परितोष होता है। उपेक्षा-वश ज्ञान की अभिव्यक्ति होती है, प्रज्ञा द्वारा अर्पणा-प्रज्ञा की व्यापार-बहुलता होती है। उपेक्षा-वश नीवरण आदि नाना क्लेशो से चित्त विमुक्त होता है। इस विशुद्धि से और पूर्व-प्रवृत्त प्रज्ञा-वश प्रज्ञा की बहुलता होती है और श्रद्धा आदि धर्मो का व्यापार समान हो जाता है। इस एकरसता से भावना निष्पन्न होती है। यह ज्ञान का व्यापार है। इसलिए ज्ञान के व्यापार से चित्त-परितोषण की सिद्धि होती है।

प्रथम ध्यान के अधिगत होने पर यह देखना चाहिये कि किस प्रकार के आवास मे रहकर किस प्रकार का भोजन कर और किस ईर्यापथ मे विहार कर चित्त समाहित हुआ था। समाधि के नष्ट होने पर उपयुक्त अवस्थाओ को सम्पन्न करने से साधक बार-बार अर्पण का लाभी हो सकता है। इससे अर्पणा का लाभमात्र होता है पर वह चिरस्थायिनी नही होती।

समाधि के अन्तरायो और विरोधी धर्मो के सम्यक्-प्रहाण से ही अर्पणा की चिर-स्थिति होती है। उपचार-क्षण मे इनका प्रहाण होता है, पर अर्पणा की चिर-स्थिति के लिए अत्यन्त प्रहाण की आवश्यकता है। कामादि का दोष और नैष्क्रम्य का गुण चखकर लोभ-राग का भली प्रकार प्रहाण किये बिना,

काय-प्रश्रब्धि द्वारा कायक्लम को अच्छी तरह शान्त किये बिना, वीर्य द्वारा आलस्य और अकर्मण्यता का अच्छी तरह परित्याग किये बिना, शमथ, निमित्त की भावना द्वारा खेद और चित्त की अनवस्थितता का उन्मूलन किये बिना, तथा समाधि के अन्य अन्तरायो का उपशम किये बिना जो साधक ध्यान सम्पादित करता है, उसका ध्यान शीघ्र ही भिन्न हो जाता है। पर जो साधक समाधि के अन्तरायों का अत्यन्त प्रहाण कर ध्यान सम्पादित करता है वह दिन भर समाधि मे रत रह सकता है। इसलिए जो साधक अर्पणा की चिरस्थिति चाहता है, उसे अन्तरायों का अत्यन्त प्रहाण करके ही ध्यान सम्पन्न करना चाहिये। समाधि-भावना के विपुलभाव के लिए लब्ध-प्रतिभाग-निमित्त की वृद्धि करनी चाहिये। जिस प्रकार भावना द्वारा ही निमित्त की उत्पत्ति होती है; उसी प्रकार भावना द्वारा उसकी वृद्धि भी होती है। इस प्रकार ध्यान-भावना भी वृद्धि को प्राप्त होती है। प्रतिभाग-निमित्त की वृद्धि के लिए दो भूमियाँ हैं—१. उपचार और २ अर्पणा। इन दो स्थानो मे से एक मे तो अवश्य ही इसकी वृद्धि करनी चाहिये।

प्रतिभाग-निमित्त की वृद्धि परिच्छिन्न रूप से ही करनी चाहिये। क्योकि विना परिच्छेद के भावना की प्रवृत्ति नही होती। इसकी वृद्धि क्रम से चक्रवाल-पर्यन्त की जा सकती है। जिस साधक ने पहले ध्यान का लाभ किया है उसे प्रतिभाग-निमित्त का निरन्तर अभ्यास करना चाहिये; पर अधिक प्रत्यवेक्षा न करनी चाहिये। क्योकि प्रत्यवेक्षा के आधिक्य से ध्यान के अङ्ग अतिविभूत मालूम होते है और प्रगुण-भाव को नही प्राप्त होते। इस प्रकार वे स्थूल और दुर्बल ध्यान के अङ्ग उत्तर-ध्यान के लिए उत्सुकता उत्पन्न नही करते। उद्योग करने पर भी साधक प्रथम ध्यान से च्युत होता है दूसरे ध्यान का लाभ नही करता। साधक को इसलिए पाँच प्रकार से प्रथम ध्यान पर आधिपत्य प्राप्त करना चाहिये। तभी द्वितीय ध्यान की प्राप्ति हो सकती है। पाँच प्रकार ये हैं—१. आवर्जन, २ सम, ३ अधिष्ठान, ४ व्युत्थान और ५. प्रत्यवेक्षण।

इष्ट देश और काल मे ध्यान के प्रत्येक अङ्ग को इष्ट समय के लिए शीघ्र यथारुचि प्रवृत्त करने की सामर्थ्य आवर्जन-वशिता कहलाती है। जिसकी आवर्जन-वशिता सिद्ध हो चुकी है वह जहाँ चाहे जब चाहे और जितनी देर तक चाहे प्रथम ध्यान के किसी अङ्ग को तुरन्त प्रवृत्त कर सकता है। आवर्जन-वशिता प्राप्त करने के लिए साधक को क्रम से ध्यान के अङ्गो का आवर्जन करना चाहिये। जो साधक प्रथम ध्यान से उठकर पहले वितर्क का आवर्जन करता है और भवाङ्ग का उपच्छेद करता है; उसमे उत्पन्न आवर्जन के बाद ही वितर्क को आलम्बन बना चार या पाँच जवन (चेतनाएँ) उत्पन्न

होते है। तदनन्तर दो क्षण के लिए भवाङ्ग मे पात होता है। तब विचार को आलम्बन बना उक्त प्रकार से फिर जवन उत्पन्न होते है। इस प्रकार ध्यान के पाँचो अङ्गो मे चित्त को निरन्तर प्रेषित करने की शक्ति साधक को प्राप्त होती है।

अङ्गावर्जन के साथ ही ध्यान-समङ्गी होने की योग्यता एक या दस अङ्गुलि-स्फोट के काल तक वेग को रोक कर ध्यान की प्रतिष्ठा करने की शक्ति अधिष्ठान-वशिता है। ध्यानसमङ्गी होकर ध्यान से उठने की सामर्थ्य व्युत्थान-वशिता है यह व्युत्थान भवाङ्ग-चित्त की उत्पत्ति ही है। पूर्व परिकर्म-वश इस प्रकार की शक्ति सम्पन्न करना कि, मै इतने क्षण ध्यान-समङ्गी होकर ध्यान से व्युत्थान करूँगा, व्युत्थान-वशिता है। वितर्क आदि ध्यान के अङ्गो के यथाक्रम आवर्जन के अनन्तर जो जवन प्रवृत्त होते है वह प्रत्यवेक्षण के जवन है। इनके प्रत्यवेक्षण की शक्ति प्रत्यवेक्षण-वशिता है।

जो इन पाँच प्रकारो से प्रथम ध्यान मे अभ्यस्त हो जाता है वह परिचित प्रथम-ध्यान से उठकर यह विचारता है कि प्रथम-ध्यान सदोष है। क्योकि इसके वितर्क-विचार स्थूल है और इसलिए इसके अङ्ग दुर्बल और परिक्षीण (=ओळारिक) है। यह देख कर कि द्वितीय-ध्यान की वृत्ति शान्त है और उसके प्रीति, सुख आदि शान्ततर और प्रणीतर है, उसे द्वितीय-ध्यान के अधिगम के लिए यत्नशील होना चाहिये और प्रथम-ध्यान की अपेक्षा नही करनी चाहिये। जब स्मृति-सम्प्रजन्यपूर्वक वह ध्यान के अङ्गो की प्रत्यवेक्षा करता है तो उसे मालूम होता है कि वितर्क-विचार स्थूल है और प्रीति, सुख और एकाग्रता शान्त है। वह स्थूल अङ्गो के प्रहाण तथा शान्त अङ्गों के प्रतिलाभ के लिए उसी पृथ्वी-निमित्त का बारम्बार ध्यान करता है। तब भवाङ्ग का उपच्छेद हो चित्त का आवर्जन होता है। इससे यह सूचित होता है कि अब द्वितीयध्यान सम्पादित होगा। उसी पृथ्वी-कसिण में चार या पाँच जवन उत्पन्न होते हैं। केवल अन्तिम जवन रूपावचर दूसरे ध्यान का है।

द्वितीय ध्यान के पक्ष मे वितर्क और विचार का अनुत्पाद होता है। इसलिए द्वितीय ध्यान वितर्क और विचार से रहित है। वितर्क-सम्प्रयुक्त स्पर्श आदि धर्म द्वितीय ध्यान मे रहते है; पर प्रथम ध्यान के स्पर्श आदि से भिन्न प्रकार के होते है। द्वितीय ध्यान के केवल तीन अंग है—१. प्रीति, २. सुख, और ३. एकाग्रता द्वितीय-ध्यान 'सम्प्रसादन' है। अर्थात् श्रद्धायुक्त होने के कारण तथा वितर्क-विचार के क्षोभ के कारण यह चित्त को सुप्रसन्न करता है। सम्प्रसाद इस ध्यान का परिष्कार है। यह ध्यान वितर्क-विचार से अध्यारूढ न होने के कारण अग्र

और श्रेष्ठ हो ऊपर उठता है अर्थात् समाधि की वृद्धि करता है। इसलिए इसे 'एकोदिभाव' कहते है।

पहला ध्यान वितर्क-विचार के कारण क्षुब्ध और समाकुल होता है। इसलिए उसमे यथार्थ श्रद्धा होती है तथापि वह 'सम्प्रसादन' नहीं कहलाता। सुप्रसन्न न होने से प्रथम ध्यान की समाधि भी अच्छी तरह आविर्भूत नही होती। इसलिए उसका एकोदिभाव नही होता। किन्तु दूसरे ध्यान मे वितर्क और विचार के अभाव से श्रद्धा अवकाश पाकर बलवती होती है और बलवती श्रद्धा की सहायता से समाधि भी अच्छी तरह आविर्भूत होती है।

द्वितीय-ध्यान का भी उक्त पॉच प्रकार से अभ्यास करना चाहिये। द्वितीय ध्यान से उठ कर साधक विचार करता है कि द्वितीय-ध्यान भी सदोष है। क्योकि इसकी प्रीति स्थूल है और इसलिए इसके अङ्ग दुर्बल है। इस प्रीति के बारे मे कहा है कि इसने परिग्रह मे प्रेम का परित्याग नही किया और यह तृष्णासहगत होती है। क्योकि इस प्रीति की प्रवृत्ति का आकार उद्वेगपूर्ण होता है। यह देख कर कि तृतीय ध्यान की वृत्ति शान्त है, तृतीय-ध्यान के लिए यत्नशील होना चाहिये। जब वह ध्यान के अङ्गों की प्रत्यवेक्षा करता है, तो उसे प्रीति स्थूल और सुख-एकाग्रता शान्त मालूम होते है। वह स्थूल अङ्ग के प्रहाण के लिए पृथ्वी-निमित्त का बारम्बार चिन्तन करता है। तब भवाङ्ग का उच्छेद हो चित्त का आवर्जन होता है। तदनन्तर उसी पृथ्वी-कसिण आलम्बन मे चार या पॉच जवन उत्पन्न होते है। इनमे केवल अन्तिम जवन रूपावचर तृतीय-ध्यान का है। तृतीय-ध्यान के क्षण मे प्रीति का अनुत्पाद होता है। इस ध्यान के दो अग है—१ सुख और २ एकाग्रता। उपेक्षा, स्मृति और सम्प्रजन्य इसके परिष्कार है।

प्रीति का अतिक्रमण करने से और वितर्क-विचार के उपशम से तृतीय-ध्यान का लाभी उपेक्षाभाव रखता है, वह समदर्शी होता है अर्थात् पक्षपात रहित हो देखता है। इसकी समदर्शिता विशद, विपुल और स्थिर होती है। इस कारण तृतीय-ध्यान का लाभी उपेक्षक कहलाता है।

उपेक्षा दस प्रकार की होती है—१. षडगोपेक्षा, २. ब्रह्मविहारोपेक्षा, ३. बोध्यंगोपेक्षा, ४ वीर्योपेक्षा, ५. संस्कारोपेक्षा, ६ वेदनोपेक्षा, ७ विपश्यनोपेक्षा, ६ तत्रमध्यत्वोपेक्षा, ९ ध्यानोपेक्षा और १०. पारिशुद्धयुपेक्षा।

छ इन्द्रियो के छ. इष्ट अनिष्ट विषयों से क्लिष्ट न होना और अपनी शुद्ध-प्रकृति को निश्चल रखना 'षडङ्गोपेक्षा' है। सब प्राणियों के प्रति समभाव रखना 'ब्रह्मविहारोपेक्षा' कहलाती है। आलम्बन मे चित्त की समप्रवृत्ति से और प्रग्रह-

निग्रह-सम्प्रहर्षण के विषय में व्यापार का अभाव होने से सम्प्रयुक्त धर्मो मे उदासीन वृत्ति को 'बोध्यङ्गोपेक्षा' कहते है। जो वीर्य लीन और उद्धत भाव से रहित है उसे 'वीर्योपेक्षा' कहते है। भावना की समप्रवृत्ति के समय जो उपेक्षाभाव होता है, उसे वीर्योपेक्षा कहते है। प्रथम-ध्यान आदि से नीवरण आदि का प्रहाण होता है यह निश्चय कर और नीवरणादि धर्मो के स्वभाव की परीक्षा कर संस्कारों के ग्रहण में जो उपेक्षा उत्पन्न होती है वह 'संस्कारोपेक्षा' है। यह उपेक्षा समाधिवश आठ और विपश्यनावश दश प्रकार की है। जो उपेक्षा दु ख और सुख से रहित है वह 'वेदनोपेक्षा' कहलाती है। अनित्यादि लक्षणो पर विचार करने से पंचस्कन्ध के विषय मे जो उपेक्षा उत्पन्न होती है वह 'विपश्यनोपेक्षा' है। जो उपेक्षा सम्प्रयुक्त धर्मो की समप्रवृत्ति मे हेतु होती है वह 'तत्रमध्यत्वोपेक्षा' है। जो उपेक्षा तृतीय-ध्यान के अग्रसुख के विषय मे भी पक्षपातरहित है वह 'ध्यानोपेक्षा' कहलाती है। जो उपेक्षा नीवरण, वितर्क, विचारादि अन्तरायो से विमुक्त है और जो उनके उपशम के व्यापार मे प्रवृत्त नही है वह 'पारिशुद्ध्युपेक्षा' कहलाती है।

इन दश प्रकार की उपेक्षाओ मे षडङ्गोपेक्षा, ब्रह्मविहारोपेक्षा, बोध्यगोपेक्षा, तत्रमध्यत्वोपेक्षा, ध्यानोपेक्षा, और परिशुद्ध्युपेक्षा अर्थत एक है; केवल अवस्था-भेद से सज्ञा में भेद किया गया है। इसी प्रकार संस्कारोपेक्षा और विपश्यनोपेक्षा का अर्थत एकीभाव है। यथार्थ में दोनो प्रज्ञा के कार्य है, केवल कार्य के भेद से संज्ञा-भेद किया गया है। विपश्यना-ज्ञान द्वारा लक्षण-त्रय का ज्ञान होने से संस्कारो के अनित्यभावादि के विचार मे जो उपेक्षा उत्पन्न होती है वह विपश्यनोपेक्षा है। लक्षण-त्रय के ज्ञान से तीन भवो को आदीप्त देखने वाले साधक को सस्कारो के ग्रहण मे जो उपेक्षा होती है, वह सस्कारोपेक्षा है। किन्तु वीर्योपेक्षा और वेदनोपेक्षा, एक दूसरे से, तथा अन्य उपेक्षाओं से, अर्थत. भिन्न हैं। इन दश उपेक्षाओ में से यहाँ ध्यानोपेक्षा अभिप्रेत है। उपेक्षा-भाव इसका लक्षण है; प्रणीत सुख का भी यह आस्वाद नही करती, प्रीति से यह विरक्त है और व्यापाररहित है।

यह उपेक्षा-भाव प्रथम तथा द्वितीय-ध्यान मे भी पाया जाता है। पर वहाँ वितर्क आदि से अभिभूत होने के कारण इसका कार्य अव्यक्त रहता है, तृतीय-ध्यान में वितर्क, विचार और प्रीति से अनभिभूत होने के कारण इसका कार्य परिव्यक्त होता है, इसलिये इसी ध्यान के सम्बन्ध में कहा गया है कि साधक तृतीय-ध्यान का लाभ कर उपेक्षा-भाव से विहार करता है। तृतीय-ध्यान का लाभी सदा जागरूक रहता है और इस बात का ध्यान रखता है कि प्रीति से अपनीत तृतीय-ध्यान का सुख प्रीति से फिर सम्प्रयुक्त न हो जाय। तृतीय-

ध्यान का सुख अति मधुर है। इससे बढकर कोई दूसरा सुख नही है और जोव स्वभाव से ही सुख में अनुरक्त होते है। इसी लिए साधक इस ध्यान मे स्मृति और सम्प्रजन्य द्वारा सुख मे आसक्त नही होता और प्रीति को उत्पन्न नही होने देता। जिस प्रकार खड्ग की धार पर बहुत सँभाल कर चलना होता है उसी प्रकार इस ध्यान मे चित्त की गति का भली प्रकार निरूपण करना पड़ता है और सदा सतर्क और जागरूक रहना पडता है।

साधक इस ध्यान मे चैतसिक सुख का लाभ करता है और ध्यान से उठकर कायिक सुख का भी अनुभव करता है, क्योकि उसका शरीर अति प्रणीत रूप सेव्याप्त हो जाता है।

जब तीसरे ध्यान का पाँच प्रकार से अच्छी तरह अभ्यास हो जाता है, तब तृतीय ध्यान से उठकर साधक विचारता है कि तृतीय-ध्यान सदोष है, क्योकि इसका सुख स्थूल है और इसलिए इसके अग दुर्बल है। यह देखकर कि चतुर्थ ध्यान शान्त है उसे चतुर्थ-ध्यान के अधिगम के लिये यत्नशील होना चाहिये।

जब स्मृति-सम्प्रजन्यपूर्वक वह ध्यान के अगो की प्रत्यवेक्षा करता है तो उसे मालूम होता है कि चैतसिक सुख स्थूल है और उपेक्षा, वेदना तथा चित्तैकाग्रता शान्त है। तब स्थूल अग के प्रहाण तथा शान्त अगो के प्रनिलाभ के लिए वह उसी पृथ्वीनिमित्त का बार-बार ध्यान करता है। भवाग का उपच्छेद कर चित्त का आवर्जन होता है, जिससे यह सूचित होता है कि अब चतुर्थ-ध्यान सम्पादित होगा, उसी पृथ्वी-कसिण मे चार या पाँच जवन उत्पन्न होते है, केवल अन्तिम जवन रूपावचर चतुर्थ ध्यान का है।

चतुर्थ ध्यान के दो अग है—१ उपेक्षा-वेदना और २. एकाग्रता। चतुर्थ-ध्यान के उपचार-क्षण मे चैतसिक सुख का प्रहाण होता है। कायिक दु ख का प्रथम ध्यान के उपचार-क्षण मे, चैतसिक दु ख का द्वितीय और कायिक सुख का तृतीय-ध्यान के उपचार-क्षण मे निरोध होता है, पर अतिशय निरोध उस ध्यान की की अर्पणा मे ही होता है। प्रथम-ध्यान के उपचार-क्षण मे जो निरोध होता है वह अत्यन्त निरोध नही है, पर अर्पणा मे प्रीति के स्फुरण से सारा शरीर सुख से अवक्रान्त होता है। इस प्रकार प्रतिपक्षी सुख द्वारा दु खेन्द्रिय का अत्यन्त निरोध होता है। इसी प्रकार यद्यपि द्वितीय-ध्यान के उपचार-क्षण में चैतसिक दुःख का प्रहाण होता है तथापि वितर्क और विचार के कारण चित्त का उपघात हो सकता है, पर अर्पणा में वितर्क और विचार के अभाव से इसकी कोई सम्भावना नही है। इसी प्रकार यद्यपि तृतीय-ध्यान के उपचार-क्षण में कायिक-सुख का निरोध होता है तथापि सुख के प्रत्यय (हेतु) प्रीति के रहने

से कायिक-सुख की उत्पत्ति सम्भव है। पर अर्पणा मे प्रीति के अत्यन्त निरोध से इसकी सम्भावना नही रह जाती। इसी तरह चतुर्थ-ध्यान के उपचार-क्षण मे अर्पणा-प्राप्त उपेक्षा के अभाव तथा भली प्रकार से चैतसिक सुख का अतिक्रम न होने से चैतसिक सुख की उत्पत्ति सम्भव है, पर अर्पणा में इसकी संभावना नही है।

यह दु ख और सुख-रहित वेदना अतिसूक्ष्म और दुर्विज्ञेय है; सुगमता से इसका ग्रहण नही हो सकता। यह न कायिक सुख है, न कायिक दु ख, न चैतसिक सुख है न चैतसिक दु ख। यह सुख, दु ख, सौमनस्य (चैतसिक सुख) और दौर्मनस्य (चैतसिक दु ख) का अभावमात्र नही है। यह तीसरी वेदना है। इसे उपेक्षा भी कहते है। यही उपेक्षा चित्त की विमुक्ति (चेतोविमुत्ति) है। सुख दु खादि के प्रहाण से इसका अधिगम होता है।

सुख आदि के घात से राग-द्वेष प्रत्यय (हेतु) सहित नष्ट हो जाते है, अर्थात् उनका दूरीभाव हो जाता है। चतुर्थ-ध्यान मे स्मृति परिशुद्ध होती है। यह परिशुद्धि उपेक्षा के द्वारा होती है, अन्यथा नही। केवल स्मृति ही परिशुद्ध नही होती किन्तु सव सम्प्रयुक्त धर्म भी परिशुद्ध हो जाते है। यद्यपि पहले तीन ध्यानो में भी उपेक्षा विद्यमान है तथापि उनमे वितर्क आदि विरोधी धर्मो द्वारा अभिभूत होने से तथा सहायक प्रत्ययो की विकलता से उनकी अपेक्षा अपरिशुद्ध होती है और उसके अपरिशुद्ध होने से सहजात धर्म, स्मृति आदि भी अपरिशुद्ध होते है। पर चतुर्थ-ध्यान में वितर्क आदि विरोधी धर्मो के उपशम से तथा उपेक्षा-वेदना के प्रतिलाभ से उपेक्षा अत्यन्त परिशुद्ध होती है ओर साथ ही साथ स्मृति आदि भी परिशुद्ध होती है।

ध्यान-पञ्चक के द्वितीय-ध्यान मे केवल वितर्क नही होता और विचार, प्रीति, सुख, और एकाग्रता यह चार अङ्ग होते है, तृतीय-ध्यान मे विचार का परित्याग होता है और प्रीति, सुख और एकाग्रता यह तीन अङ्ग होते है, अन्तिम दो ध्यान ध्यान-चतुष्क के तृतीय और चतुर्थ है। ध्यान-चतुष्क के द्वितीय ध्यान को ध्यान-पञ्चक मे दो ध्यानो मे विभक्त करते है।

५. शेषकसिणनिर्देश

आपो-कसिण—सुख पूर्वक बैठकर जल मे निमित्त का ग्रहण करना चाहिए। नील, पीत, लोहित और अवदात वर्णो में से किसी वर्ण का जल ग्रहण न करना चाहिए। पूर्व इसके कि आकाश का जल भूमि पर प्राप्त हो, उसे शुद्ध वस्त्र मे ग्रहण कर किसी पात्र में रखना चाहिए। इस जल का या किसी दूसरे

शुद्ध जल का व्यवहार करना चाहिए। जल से भरे पात्र को (विदत्थिचतुरङ्गुल-वर्तुल) विहार के प्रत्यन्त में किसी ढँके स्थान मे रखना चाहिए। भावना करते हुए वर्ण और लक्षण की प्रत्यवेक्षा नही करनी चाहिए। भावना करते करते क्रम से पूर्वोक्त प्रकार से निमित्तद्वय की उत्पत्ति होती है, पर इसका उद्ग्रह-निमित्त चलित प्रतीत होता है। यदि जल में फेन और बुदबुदा उठते हो तो कसिण दोष प्रकट हो जाता है। प्रतिभाग-निमित्त स्थिर है। उक्तरीत्या साधक आपो-कसिण का आलम्बन कर ध्यानों का उत्पाद करता है।

तेजो-कसिण—तेजो-कसिण की भावना करने की इच्छा रखने वाले साधक को अग्नि में निमित्त का ग्रहण करना चाहिए। जो अधिकारी है वह अकृत अग्नि—जैसे दावाग्नि—मे भी निमित्त का उत्पाद कर सकता है, पर जो अधिकारी नही है उसे सूखी लकड़ी लेकर आग जलाना पड़ता है। चटाई, चमडे या कपड़े के टुकड़े मे एक बालिश्त चार अङ्गुल का छेद कर उसे अपने सामने रख लेना चाहिए, जिसमें नीचे का तृण-काष्ठ और ऊपर की धूमशिखा न दिखायी देकर केवल मध्यवर्ती अग्नि की घनी ज्वाला ही दिखलायी दे। इसी घनी ज्वाला में निमित्त का ग्रहण करना चाहिए। नील, पीत आदि वर्ण तथा उष्णता आदि लक्षण की प्रत्यवेक्षा नहीं करनी चाहिए। केवल प्रज्ञप्तिमात्र में चित्त को प्रतिष्ठित कर भावना करनी चाहिए। उक्त प्रकार से भावना करने पर क्रम-पूर्वक दोनों निमित्त उत्पन्न होते है। उद्ग्रह-निमित्त मे अग्निज्वाला खंड-खंड होकर गिरती हुई मालूम होती है। प्रतिभाग-निमित्त निश्चल होता है। उक्तरीत्या साधक उपचार-ध्यान का लाभी हो, क्रमपूर्वक ध्यानो का उत्पाद करता है।

वायो-कसिण—साधक को वायु मे निमित्त का ग्रहण करना होता है। दृष्टि द्वारा इस निमित्त का ग्रहण होता है। घने पत्तो सहित गन्ना, बाँस या किसी दूसरे वृक्ष के अग्रभाग को वायु से सचालित होते देखकर चलनाकार से निमित्त का ग्रहण कर प्रहारक-वायु-सघात मे स्मृति की प्रतिष्ठा करनी चाहिए या शरीर के किसी प्रदेश मे वायु का स्पर्श अनुभव कर सघटनाकार मे निमित्त का ग्रहण कर वायु-सघात में स्मृति की प्रतिष्ठा करनी चाहिए। उद्ग्रहनिमित्त चल और प्रतिभाग-निमित्त निश्चल और स्थिर होता है। ध्यानोत्पाद की प्रणाली पृथ्वी-कसिण की तरह है।

नील-कसिण—जो अधिकारी है उसे नील-पुष्प-सस्तर, नील वस्त्र या नीलमणि देखकर निमित्त का उत्पाद होता है। पर जो अधिकारी नहीं है उसे नीले रङ्ग के फूल लेकर उन्हे टोकरी में फैला देना चाहिए और ऊपर तक फूल

की पत्तियों को इस तरह भर देनी चाहिए जिसमें केसर या वृन्त न दिखलायी पडे या टोकरी को नीले कपडे से इस तरह बाँधना चाहिए जिसमे वह नील-मण्डल की तरह मालूम पडे, या नील वर्ण के किसी धातु को लेकर चल-मंडल बनावे या दीवाल पर उसी धातु से कसिण-मण्डल बनावे और उसे किसी असदृश वर्ण से परिच्छिन्न कर दे। फिर उस पर भावना करे। शेष-क्रिया पृथ्वी-कसिण के समान है।

पीत-कसिण—पीतवर्ण के पुष्प, वस्त्र या धातु में निमित्त का ग्रहण करना पड़ता है।

लोहित-कसिण—रक्तवर्ण के पुष्प, वस्त्र या धातु मे नीलकसिण की तरह भावना करनी होती है।

अवदात-कसिण—अवदात पुष्प, वस्त्र या धातु मे नीलकसिण की तरह भावना करनी होती है।

आलोक-कसिण—जो अधिकारी है वह प्राकृतिक आलोक-मण्डल मे निमित्त का ग्रहण करता है। सूर्य या चन्द्र का जो आलोक खिड़की या छेद के रास्ते प्रवेश कर दीवाल या जमीन पर आलोक-मण्डल बनाता है या घने वृक्ष की शाखाओं से निकलकर जो आलोक जमीन पर आलोक-मण्डल बनाता है, उसमे भावना द्वारा साधक निमित्त का उत्पाद करता है। पर यह अवभास-मण्डल चिरकाल तक नही रहता। इसलिये साधारण-जन इसके द्वारा निमित्त का उत्पाद करने मे असमर्थ भी होते है। ऐसे लोगो को घट मे दीपक जलाकर घट के मुख को ढक देना चाहिये, और घट मे छेदकर घट को दीवार के सामने रख देना चाहिये। छेद से दीप का जो आलोक निकलता है वह दीवाल पर मण्डल बनाता है। उसी आलोक-मण्डल में भावना करनी चाहिये। उद्ग्रह-निमित्त दीवाल या जमीन पर बने आलोक-मण्डल की तरह होता है। प्रतिभाग-निमित्त बहल और शुभ्र आलोक-पुञ्ज की तरह होता है।

परिच्छिन्नाकाश-कसिण—जो अधिकारी है वह किसी छिद्र मे निमित्त का उत्पाद कर लेता है। सामान्य साधक सुच्छन्न-मण्डल में या चमडे की चटाई मे एक बालिश्त चार अङ्गुल का छेद बनाकर उसी छेद में भावना द्वारा निमित्त का ग्रहण करता है। उद्ग्रह-निमित्त दीवाल के कोनो के साथ छेद की तरह होता है। उसकी वृद्धि नही होती। प्रतिभाग-निमित्त आकाश-मण्डल की तरह उपस्थित होता है। उसकी वृद्धि हो सकती है।

६. अशुभ-कर्मस्थाननिर्देश

कर्मस्थानो का संक्षिप्त विवरण ऊपर दिया गया है। उद्धुमातक आदि इन

दस कर्मस्थानो का ग्रहण आचार्य के पास ही करना चाहिये। कर्मस्थान सभाग है या विसभाग—इसकी परीक्षा करनी चाहिये। पुरुष के लिए स्त्री-शरीर विसभाग है और स्त्री के लिए पुरुष-शरीर। इसलिए अशुभ-कर्मस्थान अमुक जगह पर है—ऐसा जानने पर भी उसको ठीक जाँच करके ही उस स्थान पर जाना चाहिये। ऐसे कर्मस्थान प्राय श्मशान पर ही मिलते है, जहाँ वन्य पशु, भूत-प्रेत और चोरो का भय रहता है। सघ-स्थविर को कहकर जाने से योगावचर भिक्षु की पूर्ण व्यवस्था की जा सकती है। साधक को ऐसे कर्मस्थान के पास अकेला जाना चाहिये। उपस्थित स्मृति से, संवृत-इन्द्रियो से, एकाग्र चित्त से, जिस प्रकार क्षत्रिय अभिषेक स्थान पर, या यजमान यज्ञशाला पर, या निर्धन निधि-स्थान की ओर सौमनस्यचित्त से जाता है उसी प्रकार साधक को अशुभ-कर्मस्थान के पास जाना चाहिये। वही जाकर अशुभ-निमित्त को सहज भाव से देखना चाहिये। उसको वर्ण, लिङ्ग, संस्थान, दिशा, अवकाश, परिच्छेद, सन्धि विवर आदि निमित्तो को सुगृहीत करना चाहिये। साधक को अशुभ-ध्यान के गुणों का दर्शन करके अशुभ-कर्मस्थान को अमूल्य रत्न के समान देखकर चित्त को उस आलम्बन पर एकाग्र करना चाहिये और सोचना चाहिए कि—"मै इस प्रतिपदा के कारण जरा-मरण से मुक्त होऊँ"। चित्त की एकाग्रता के साथ ही वह कामो से विविक्त होता है, अकुशलधर्मो से विविक्त होता है और विवेकज प्रीति के साथ प्रथम-ध्यान को प्राप्त करता है। इस कर्मस्थान मे प्रथम-ध्यान से आगे बढा नही जाता, क्योकि यह आलम्बन दुर्बल होने से वितर्क के बिना चित्त उसमे स्थिर नही रहता। इसी कारण, प्रथम-ध्यान के बाद इसी आलम्बन को लेकर द्वितीय-ध्यान असम्भव है।

७. छह अनुस्मृति-निर्देश

दस कसिण और दस अशुभ-कर्मस्थान के बाद दस अनुस्मृति-कर्मस्थान उद्दिष्ट है। पुन. पुन. उत्पन्न होनेवाली स्मृति ही अनुस्मृति है। प्रवर्तन के योग्य स्थान मे ही प्रवृत्त होने के कारण अनुरूप स्मृति को भी अनुस्मृति कहते हैं। दस अनुस्मृतियाँ इस प्रकार है—

बुद्धानुस्मृति—बुद्ध की अनुस्मृति। जो साधक यह अनुस्मृति प्राप्त करना चाहता है उसे प्रसादयुक्त चित्त से एकान्त में बैठकर "भगवान् अर्हत् सम्यक्-सम्बुद्ध है, विद्याचरण-सम्पन्न है, सुगत हैं, लोकवित् है, शास्ता हैं"—इत्यादि प्रकार से भगवान् बुद्ध के गुणों का अनुस्मरण करना चाहिये। इस प्रकार बुद्ध के गुणों का अनुस्मरण करते समय साधक का चित्त न राग-पर्युत्थित होता है,

न द्वेष-पर्युत्थित होता है। न मोह-पर्युत्थित होता है। तथागत को चित्त का आलम्बन करने से उसका चित्त ऋजु होता है, नीवरण विष्कम्भित होते है, और बुद्ध के गुणो का ही चिन्तन करनेवाले वितर्क और विचार उत्पन्न होते है। बुद्धगुणो के वितर्क-विचार से प्रीति उत्पन्न होती है, प्रीति से प्रश्रब्धि पैदा होती है, जो काय और चित्त को प्रशान्त करती है। प्रशान्त भाव से सुख और सुख से समाधि की प्राप्ति होती है। इस प्रकार अनुक्रम से एक क्षण मे ध्यान के अङ्ग उत्पन्न होते है। बुद्ध-गुणो की गम्भीरता के कारण और नाना प्रकार के गुणो की स्मृति होने के कारण यह चित्त अर्पणा को प्राप्त नही होता, केवल उपचार-समाधि ही प्राप्त होती है। यह समाधि बुद्धगुणों के अनुस्मरण से उत्पन्न है, इसलिये इसे बुद्धानुस्मृति कहते है।

इस बुद्धानुस्मृति से अनुयुक्त साधक शास्ता मे सगौरव होता है, प्रसन्न होता है, श्रद्धा, स्मृति, प्रज्ञा और पुण्य-वैपुल्य को प्राप्त करता है, भय-भैरव को सहन करता है। बुद्धानुस्मृति के कारण उसका शरीर भी चैत्यगृह के समान पूजार्ह होता है, उसका चित्त बुद्धभूमि मे प्रतिष्ठित होता है। (१)

धर्मानुस्मृति—धर्मानुस्मृति को प्राप्त करने के इच्छुक साधक को विचार करना चाहिये—"भगवान् से धर्म स्वाख्यात है। यह धर्म सादृष्टिक, अकालिक, एहिपस्सिक, औपनेयिक और विज्ञो से प्रत्यक्ष जानने योग्य है।" इस प्रकार धर्म की स्मृति करने से वह धर्म मे सगौरव होता है। अनुत्तर धर्म के अधिगम मे उसका चित्त प्रवृत्त होता है। इसमे अर्पणा समाधि प्राप्त नही होती। केवल उपचार-समाधि ही प्राप्त होती है। (२)

सङ्घानुस्मृति—सङ्घानुस्मति को प्राप्त करने के इच्छुक साधक को विचार करना चाहिये—"भगवान् का श्रावक-सङ्घ सुप्रतिपन्न है, ऋजुप्रतिपन्न, आर्य-धर्म प्रतिपन्न है, सम्यक्त्वप्रतिपन्न है। भगवान् का श्रावकसङ्घ स्रोतआपन्न आदि अष्ट पुद्गल का बना हुआ है। वह दक्षिणेय है, अञ्जलिकरणीय है, और लोक के लिये अनुत्तर पुण्य-क्षेत्र है।" इस प्रकार की सङ्घानुस्मृति से साधक सङ्घ मे सगौरव होता है, अनुत्तर-मार्ग की प्राप्ति मे उसका चित्त दृढ होता है। यहाँ भी केवल उपचार-समाधि होती है। (३)

शीलानुस्मृति—शीलानुस्मृति मे साधक एकान्त स्थान मे अपने शीलों पर विचार करता है—"अहो! मेरे शील अखण्ड, अच्छिद्र, अशबल, अकिल्विष, स्वतन्त्र, विज्ञों से प्रशस्त, अपरामृष्ट और समाधि-सावर्तनिक है।" यदि साधक गृहस्थ हो तो गृहस्थ-शील का, प्रव्रजित हो तो प्रव्रजित-शील का स्मरण करना चाहिये। इस अनुस्मृति से साधक शिक्षा मे सगौरव होता है। अणुमात्र

दोष मे भी भय का दर्शन करता है, और अनुत्तर शील को प्राप्त करता है। इस अनुस्मृति मे भी अर्पणा नही होती। उपचार-ध्यान मात्र होता है। (४)

त्यागानुस्मृति—त्यागानुष्मृति को प्राप्त करने के इच्छुक साधक को चाहिये कि वह इस स्मृति को करने के पहले कुछ न कुछ दान दे। ऐसा निश्चय भी करे कि बिना कुछ दान दिये मै अन्नग्रहण न करूँगा। अपने दिए हुए दान को ही आलम्बन बनाकर वह सोचता है—"अहो! लाभ है मुझे, जो मत्सर-मलों से युक्त प्रजा के बीच मे भी विगत-मत्सर हो विहार करता हूं। मै मुक्त-त्याग, प्रयतपाणि, व्युत्सर्गरत, याचयोग और दान-सविभागरत हू।" इस विचार के कारण उसका चित्त प्रीति-बहुल होता है और उसे उपचार-समाधि प्राप्त होती है। (५)

देवतानुस्मृति—देवतानुस्मृति मे साधक आर्यमार्ग मे स्थिर रहकर चातुर्महाराजिक आदि देवों को साक्षी बनाकर अपने श्रद्धादि गुणो का तथा देवताओ के पुण्य-सम्भार का ध्यान करता है। इस अनुस्मृत्ति से साधक देवताओ का प्रिय होता है। इनमे भी वह उपचार-समाधि को प्राप्त करता है। (६)

८. अनुस्मृतिकर्मस्थाननिर्देश

मरणानुस्मृति—एकभव-पर्यापन्न जीवितेन्द्रिय के उपच्छेद को 'मरण' कहते है। अर्हतों का वर्तदु ख-समुच्छेद-मरण या सस्कारो का क्षणभङ्ग-मरण यहाँ अभिप्रेत नही है। जीवितेन्द्रिय के उपच्छेद से जो मरण होता है वही यहाँ अभिप्रेत है। उसकी भावना करने का इच्छुक साधक एकान्त स्थान मे जाकर 'मरण होगा, जीवितेन्द्रिय का उपच्छेद होगा'—ऐसा विचार करता है। 'मरण-मरण' इस प्रकार बार-बार चित्त में विचार करता है। मरणानुस्मृति मे योग्य आलम्बन को चुनना चाहिये। इष्टजनों के मरणानुस्मरण से शोक होता है, अनिष्टजनो के मरणानुस्मरण से प्रामोद्य होता है, मध्यस्थ जनो के मरणानुस्मरण से संवेग नही होता। अपने ही मरण के विचार से सन्त्रास उत्पन्न होता है। इसलिये जिनकी पूर्व सम्पत्ति और वैभव को देखा हो, ऐसे सत्त्वों के मरण का विचार करना चाहिये, जिससे स्मृति, संवेग और ज्ञान उपस्थित होता है। इस चिन्तन से उपचार-समाधि को प्राप्ति होती है। मरणानुस्मृति मे उपयुक्त साधक सतत अप्रमत्त रहता है, सर्व भवो से अनभिरति-सज्ञा को प्राप्त करता है, जीवित्त की तृष्णा को छोड़ता है और निर्वाण को प्राप्त करता है। (७)

कायगतानुस्मृति—यह अनुस्मृति बहुत महत्त्व की है। श्रीबुद्धघोष के अनुसार यह केवल बुद्धों से ही प्रवर्तित और सर्वतीर्थिको का अविषयभूत है। भगवान्

ने अङ्गुत्तरनिकाय मे कहा है—"भिक्षुओ! यदि एकधर्म भावित, बहुलीकृत है तो महान् संवेग को प्राप्त कराता है, महान् अर्थ को, योगक्षेम को, स्मृति-सम्प्रजन्य को, ज्ञान-दर्शन-प्रतिलाभ को, दृष्ट-धर्म-सुख-विहार को, विद्या-विमुक्ति-फल-साक्षात्करण को प्राप्त कराता है। कौन है वह एक एकधर्म? कायगता-स्मृति ही वह धर्म है। जो कायगता स्मृति को प्राप्त करता है वह अमृत को प्राप्त करता है।"

कायगता स्मृति को प्राप्त करने का इच्छुक साधक इस शरीर को पादतल से केश-मस्तक तक और त्वचा से अस्थियो तक देखता है। इस शरीर मे केश, लोम, नख, दन्त, त्वचा, मास, न्हारु, अस्थि, अस्थिमज्जा, वक्क, हृदय आदि बत्तीस कर्मस्थानो को देखकर अशुचि-भावना को प्राप्त करता है। ये कर्मस्थान आचार्य के पास ग्रहण कर इन (बत्तीस कर्मस्थानो) का अनुलोम-प्रतिलोम क्रम से बार-बार मन-वचन से स्वाध्याय करता है। फिर उन कर्मस्थानो के वर्ण-संस्थान, परिच्छेद आदि का चिन्तन करता है। इन कर्मस्थानो को अनुपूर्व से, नातिशीघ्र और नातिमन्द गति से, अविक्षिप्तचित्त से चिन्तन करता है। इस प्रकार इन बत्तीस कर्मस्थानो मे से एक-एक कर्मस्थान मे वह अर्पणासमाधि को प्राप्त करता है। कायगता स्मृति के पूर्व की सात अनुस्मृतियो मे अर्पणा प्राप्त नही होती, क्योकि वहाँ आलम्बन गम्भीर है और अनेक है। यहाँ पर योगी सतत अभ्यास से एक-एक कोट्ठास को लेकर प्रथम-ध्यान को प्राप्त करता है। इस कायगता-स्मृति मे अनुयुक्त साधक अरति-रति-सह होता है। उत्पन्नरति और अरति को अभिभूत करता है; भयभैरव को सहन करता है, शीतोष्ण को सहन करता है, चार ध्यानो को प्राप्त करता है और षडभिज्ञ भी होता है। (८)

आनापान-स्मृति

आनापान-स्मृति—स्मृतिपूर्वक आश्वास-प्रश्वास की क्रिया द्वारा जो समाधि प्राप्त होती है उसे आनापान स्मृति कहते है। यह शान्त, प्रणीत, अव्यवकीर्ण, ओजस्वी और सुख-विहार है।

चित्त के एकाग्र करने के लिये पातञ्जल-दर्शन मे कई उपाय निर्दिष्ट किये गये है। योग के ये विविध साधन 'परिकर्म' कहलाते है। विसुद्धि-मग्ग मे इन्हे **कर्म-स्थान** कहा है। ये विविध प्रकार के चित्त-सस्कार है, जिनसे चित्त एकाग्र होता है। योगशास्त्र का रेचन-पूर्वक कुभक इसी प्रकार का एक साधन है। इसका उल्लेख समाधिपाद के चौबीसवे सूत्र मे किया गया है—'प्रच्छर्दनविधारणाभ्या वा प्राणस्य'। योगशास्त्रोक्त प्रयत्नविशेष द्वारा भीतर की वायु को बाहर निकालना ही प्रच्छर्दन या रेचन कहलाता है।

रेचित वायु का बहि स्थापन कर प्राणरोध करना ही विधारण या कुम्भक है। इस क्रिया मे भीतर की वायु को बाहर निकालकर फिर श्वास का ग्रहण नही होता। इससे शरीर हल्का और चित्त एकाग्र होता है। यह एक प्रकार का प्राणायाम है। प्राणायाम के प्रसङ्ग मे इसे **बाह्य-वृत्तिक** प्राणायाम कहा है। योग-दर्शन मे चार प्रकार का प्राणायाम वर्णित है—१ बाह्य-वृत्तिक, २ आभ्यन्तर-वृत्तिक, ३ स्तभ-वृत्तिक और ४ बाह्याभ्तन्तर विषयाक्षेपी[1]। प्राणायाम का अर्थ है श्वास-प्रश्वास का अभाव अर्थात् श्वासरोध। बाह्यवृत्तिक रेचकपूर्वक कुम्भक है। आभ्यन्तर-वृत्तिक पूरक-पूर्वक कुम्भक है। इस प्राणायाम मे बाह्य वायु को नासिकापुट से भीतर खीचकर फिर श्वास का परित्याग नही किया जाता है। स्तभ-वृत्तिक प्राणायाम केवल कुम्भक है। इसमे रेचक या पूरक की क्रिया के विना ही सकृत्प्रयत्न द्वारा वायु की बहिर्गति और आभ्यन्तरगति का एक साथ अभाव होता है। चौथा प्राणायाम एक प्रकार का स्तभ-वृत्तिक प्राणायाम है। भेद इतना ही है कि स्तभवृत्तिक प्राणायाम सकृत्प्रयत्न द्वारा साध्य है किन्तु चौथा प्राणायाम बहु-प्रयत्न द्वारा साध्य है। अभ्यास करते-करते अनुक्रम से चतुर्थ प्राणायाम सिद्ध होता है, अन्यथा नही। तृतीय प्राणायाम मे पूरक और रेचक के देशादि विषय की आलोचना नही की जाती। केवल देश, काल और सख्या-परिदर्शन-पूर्वक स्तम्भवृत्तिक की आलोचना होती है। किन्तु चतुर्थ प्राणायाम मे पहले देशादि परिदर्शन-पूर्वक बाह्य वृत्ति और आभ्यन्तर वृत्ति का अभ्यास किया जाता है। चिरकाल के अभ्यास से जब ये दोनों वृत्तियाँ अत्यन्त सूक्ष्म हो जाती है, तब साधक इनका अतिक्रम कर श्वास का रोध करता है। यह चतुर्थ प्राणायाम है। तृतीय और चतुर्थ प्राणायाम मे बाह्य और आभ्यन्तर वृत्तियों का अतिक्रम होता है, अन्तर इतना ही है कि ततीय प्राणायाम मे यह अतिक्रम एक बार मे ही हो जाता है। किन्तु चतुर्थ प्राणायाम मे चिरकालीन अभ्यासवश ही अनुक्रम से यह अतिक्रम सिद्ध होता है। बाह्य और आभ्यन्तर वृत्तियो का अभ्यास करते-करते पूरण और रेचन का प्रयत्न इतना सूक्ष्म हो जाता है कि वह विधारण मे मिल जाता है।

प्राणायाम योग का एक उत्कृष्ट साधन है। बौद्धसाहित्य मे इसे **आनापान-स्मृति-कर्मस्थान** कहा है। 'आन' का अर्थ है 'सांस लेना' और 'अपान' का अर्थ है 'सांस छोडना'। इन्हे आश्वास-प्रश्वास भी कहते है। स्मृति-पूर्वक आश्वास-प्रश्वास की क्रिया साधक द्वारा जो समाधि मे निष्पन्न की जाती है, वह आनापान स्मृति-समाधि कहलाती है। भगवान् बुद्ध ने १६ प्रकार से इस समाधि की

१ (देखिए—पा० यो० सू० साधनपाद, सूत्र ५०-५१)

भावना करने की विधि निर्दिष्ट की है । बुद्ध-शासन मे इस समाधि की विधि का ग्रहण सर्वप्रकार से किया गया है ।

यह एक प्रकृष्ट कर्मस्थान समझा जाता है । आचार्य बुद्धघोष का कहना है कि ४० कर्मस्थानो मे इसका शीर्षस्थान है और इसी कर्मस्थान की भावना कर सब बुद्ध, प्रत्येक-बुद्ध और बुद्ध-श्रावको ने विशेष फल प्राप्त किया है । नाना प्रकार के वितर्कों के उपशम के लिए भगवान् ने इस कर्मस्थान को विशेष रूप से उपयुक्त बताया है । दस अशुभ कर्मस्थानो के आलम्बनो की तरह (मृत शरीर के भिन्न-भिन्न प्रकार की भावना) इसका आलम्बन बीभत्स और जुगुप्सा भाव उत्पन्न करने वाला नही है । यह कर्मस्थान किसी दृष्टि से भी अशान्त और अप्रणीत नही है । अन्य कर्मस्थानो मे शान्तभाव उत्पादित करने के लिये पृथ्वी-मण्डलादि बनाना पडता है और भावना द्वारा निमित्त का उत्पादन करना पड़ता है । पर इस कर्मस्थान में किसी विशेष क्रिया की आवश्यकता नही है । अन्य कर्मस्थानो मे उपचार-क्षण मे विघ्नो के विष्कम्भन और अगो के प्रादुर्भाव के कारण ही शान्ति होती है । पर यह समाधि तो स्वभाववश आरम्भ से ही शान्त और प्रणीत है । इसलिए यह असाधारण है । जब-जब इस समाधि की भावना होती है तब-तब चैतसिक सुख प्राप्त होता है और ध्यान से उठने के समय प्रणीत रूप से शरीर व्याप्त हो जाता है और इस प्रकार कायिक सुख का भो लाभ होता है । इस असाधारण समाधि की बार-बार भावना करने से उदय होने के साथ ही पाप क्षणमात्र मे सम्यक् रूप से विलीन होते है । जिनकी प्रज्ञा तीक्ष्ण है और जो उत्तरज्ञान की प्राप्ति चाहते है उनके लिए यह कर्मस्थान विशेष रूप से उपयोगी है; क्योंकि यह समाधि आर्य-मार्ग की भी साधिका है । क्रमपूर्वक इसकी वृद्धि करने से आर्य-मार्ग की प्राप्ति होती है और क्लेशो का सातिशय विनाश होता है । किन्तु इस कर्मस्थान की भावना सुगम नही है । क्षुद्र जीव इसकी भावना करने में समर्थ नही होते । यह कर्म-स्थान बुद्धादि महापुरुषों द्वारा ही आसेवित्त होता है । यह स्वभाव से ही शान्त और सूक्ष्म है । भावना-बल से उत्तरोत्तर अधिकाधिक शान्त और सूक्ष्म होता जाता है । यहाँ तक कि यह दुर्लक्ष्य हो जाता है । इसी लिए इस कर्मस्थान मे बलवती और सुविशदा स्मृति और प्रज्ञा की आवश्यकता है । सूक्ष्म अर्थ का साधन भी सूक्ष्म ही होता है । इसी लिये भगवान् सयुत्तनिकाय में कहते है कि "जिसकी आनापान-स्मृति की शिक्षा हो गयी है और जो सम्प्रजन्य से रहित है, उसके लिए स्मृति विनष्ट नही है । अन्य कर्मस्थान भावना से विभूत हो जाते है, पर यह कर्मस्थान विना स्मृति-सम्प्रजन्य के सुगृहीत नही होता" ।

जो साधक इस समाधि की भावना करना चाहता है उसे एकान्त-सेवन

चाहिये। शब्द ध्यान में कण्टक होता है। वहाँ दिन रात रूपादि इन्द्रिय-विषयों की ओर भिक्षु का चित्त प्रधावित्त होता रहता है और इसीलिये इस समाधि में चित्त आरोहण करना नही चाहता। अत जन-समाकुल स्थान मे भावना करना दुष्कर है। उसे अपने चित्त का दमन करने के लिये विषयो से दूर किसी निर्जन स्थान मे रहना चाहिये। वहाँ पर्यङ्कबद्ध होकर सुख-पूर्वक आसन पर बैठना चाहिये और शरीर के ऊपरी भाग को सीधा रखना चाहिये। इससे चित्त लीन और उद्धत भाव का परित्याग करता है। इस तरह आसन स्थिर होता है और सुखपूर्वक आश्वास-प्रश्वास का प्रवर्तन होता है। इस आसन मे बैठने से चर्म, मास और स्नायु नही नमते और जो वेदना इनके नमन से क्षण-क्षण पर उत्पन्न होती है, वह नही होती। इसलिये चित्त की एकाग्रता सुलभ हो जाती है। और कर्मस्थान वीथि का उल्लघन न कर वृद्धि को प्राप्त होता है।

पर्यङ्क-आसन मे बायी जाँघ पर दाहिना पैर और दाहिनी जाँघ पर बायाँ पैर रखना होता है। यह पद्मासन का लक्षण है। प्राय साधक इसी आसन का अनुष्ठान करते है।

साधक पर्यङ्क-बद्ध हो आसन की स्थिरता को प्राप्त कर विरोधी आलम्बनो का चित्त-द्वार से निवारण करता है। और इसी कर्मस्थान को अपने सम्मुख रखता है। वह स्मृति का कभी सम्प्रमोष नही होने देता। वह स्मृति-परायण हो श्वास छोड़ता और श्वास लेता है। आश्वास या प्रश्वास की एक भी प्रवृत्ति स्मृति-रहित नही होती, अर्थात् यह समस्त क्रिया उसकी जानकारी में होती है। जब वह दीर्घ श्वास छोडता है या दीर्घ श्वास लेता है तब वह अच्छी तरह जानता है कि मै दीर्घ श्वास छोड़ रहा हूँ या दीर्घ श्वास ले रहा हूँ। स्मृति-आलम्बन के समीप सदा उपस्थित रहती है और प्रत्येक क्रिया की प्रत्यवेक्षा करती है।

विसुद्धिमग्ग मे निम्नलिखित १६ प्रकार से आश्वास-प्रश्वास की क्रिया के करने का विधान है :—

१. यदि वह दीर्घ श्वास छोड़ता है तो जानता है कि मै दीर्घ श्वास छोड़ता हूँ, यदि वह दीर्घ श्वास लेता है तो जानता है कि मै दीर्घ श्वास लेता हूँ।

२ यदि वह ह्रस्व श्वास छोड़ता या ह्रस्व श्वास लेता है, तो जानता है कि मै ह्रस्व श्वास छोड़ता या ह्रस्व श्वास लेता हूँ।

आश्वास-प्रश्वास की दीर्घ-ह्रस्वता काल-निमित्त मानी जाती है। कुछ लोग धीरे-धीरे श्वास लेते और धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हैं, इनका आश्वास-प्रश्वास

दीर्घ-कालव्यापी होता है। कुछ लोग जल्दी-जल्दी श्वास लेते और जल्दी-जल्दी श्वास छोड़ते है। इनका आश्वास-प्रश्वास अल्प-कालव्यापी होता है। यह विभिन्नता शरीर-स्वभाववश देखी जाती है। साधक ९ प्रकार से आश्वास-प्रश्वास की क्रिया को ज्ञानपूर्वक करता है। इस प्रकार भावना की निरन्तर प्रवृत्ति होती रहती है। जब वह धीरे-धीरे श्वास छोडता है, तो जानता है कि मै दीर्घ श्वास छोडता हूँ। जब वह धीरे-धीरे श्वास लेता है, तो जानता है कि मै दीर्घ श्वास लेता हूँ। और जब धीरे-धीरे आश्वास-प्रश्वास दोनो क्रियाओ को करता है, तो जानता है कि मै आश्वास-प्रश्वास दोनो क्रियाओ को दीर्घ-काल मे करता हूँ। यह तीन प्रकार केवल काल-निमित्त है। इनमे पूर्व की अपेक्षा विशेष प्राप्त करने की कोई चेष्टा नही पायी जाती। भावना करते-करते साधक को यह शुभ इच्छा (छन्द) उत्पन्न होती है कि मै इस भावना मे विशेष निपुणता प्राप्त करूँ। इस प्रवृत्ति से प्रेरित्त हो वह विशेष रूप से भावना करता है और कर्मस्थान की वृद्धि करता है। भावना के बल से भय और परिताप दूर हो जाते है और शरीर के आश्वास-प्रश्वास पहले की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म हो जाते है। इस प्रकार इस शुभ इच्छा के कारण वह पहले से अधिक सूक्ष्म आश्वास, अधिक सूक्ष्म प्रश्वास और अधिक सूक्ष्म आश्वास-प्रश्वास की क्रियाओ को दीर्घकाल मे करता है। आश्वास-प्रश्वास के सूक्ष्मतर भाव के कारण आलम्बन के अधिक शान्त होने से तथा कर्मस्थान की वीथि मे प्रतिपत्ति होने से भावनाचित्त के साथ 'प्रामोद्य' अर्थात् तरुण प्रीति उत्पन्न होती है। प्रामोद्यवश वह और भी सूक्ष्म श्वास दीर्घकाल मे लेता है और भी सूक्ष्म श्वास दीर्घकाल में छोड़ता है तथा और भी सूक्ष्म आश्वास-प्रश्वास अत्यन्त सूक्ष्मभाव को प्राप्त हो जाते है; तब चित्त उत्पन्न प्रतिभाग-निमित्त की ओर ध्यान देता है। और इसलिये वह प्राकृतिक दीर्घ आश्वास-प्रश्वास से विमुख हो जाता है। प्रतिभाग निमित्त के उत्पाद से समाधि की उत्पत्ति होती है और इस प्रकार ध्यान के निष्पन्न होने से व्यापार का अभाव होता है और उपेक्षा उत्पन्न होती है।

इन ९ प्रकारो से दीर्घ श्वास लेता हुआ या दीर्घ श्वास छोडता हुआ या दोनो क्रियाओ को करता हुआ साधक जानता है कि मै दीर्घ श्वास लेता हूँ या दीर्घ श्वास छोड़ता हूँ या दोनो क्रियाओ को करता हूँ। ऐसा साधक इनमे से किसी एक प्रकार से कायानुपश्यना नामक स्मृत्युपस्थान की भावना सम्पन्न करता है। ९ प्रकार से जो आश्वास-प्रश्वास होते हैं, उनको 'काय' कहते है। यहाँ 'काय' समूह के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। आश्वास-प्रश्वास का आश्रयभूत शरीर भी 'काय' कहलाता है और यहाँ वह भी संगृहीत है। 'अनुपश्यना' ज्ञान

को कहते हैं। यह ज्ञान शमथ-वश निमित्त-ज्ञान है और विपश्यना-वश नाम रूप की व्यवस्था के अनन्तर कामविषयक यथाभूत ज्ञान है। इसलिए 'कायानु-पश्यना' वह ज्ञान है जिसके द्वारा काम के यथाभृत स्वभाव की प्रतीति होती है। जिसके द्वारा श्वास-प्रश्वास आदि शरीर की समस्त आभ्यन्तरिक और बाह्य क्रियाएँ ज्ञान और स्मृतिपूर्वक होती है। जिसके द्वारा शरीर का अनित्य-भाव, अनात्म-भाव दु ख-भाव और अशुचि-भाव जाना जाता है। इस ज्ञान के द्वारा यह विदित होता है कि समस्त 'काय' पैर के तलुवे से ऊपर और केशाग्र से नीचे केवल नाना प्रकार के मलो से परिपूर्ण है। इस काय के केश, लोम आदि ३२ आकार अपवित्र और जुगुप्सा उत्पन्न करनेवाले है। वह इस काय को रचना के अनुसार देखता है कि इस काय मे पृथ्वी-धातु है, तेजो धातु है, जल-धातु है। वह काय मे अहभाव और मम-भाव नही देखता तथा काय को कायमात्र ही समझता है।

इसी प्रकार जब वह जल्दी-जल्दी श्वास छोडता है या लेता है, तब जानता है कि—मै अल्पकाल मे श्वास छोडता या लेता हूँ। इस ह्रस्व आश्वास-प्रश्वास की क्रिया भी दीर्घ आश्वास-प्रश्वास की क्रिया के समान ही ९ प्रकार से की जाती है। यहाँ तक पूर्ववत् साधक कायानुपश्यना नामक स्मृत्युपस्थान की भावना सम्पन्न करता है।

३ साधक सकल आश्वास-काय के आदि, मध्य और अवसान—इन सब भागो का अवरोध कर अर्थात् उन्हे विशद और विभूत कर श्वास-परित्याग करने का अभ्यास करता है। इसी तरह सकल प्रश्वास-काय के आदि, मध्य और अवसान इन सब भागो का अवबोध कर श्वास ग्रहण करने का प्रयत्न करता है। उसके आश्वास-प्रश्वास का प्रवर्तन ज्ञान-युक्त चित्त से होता है। किसी को केवल आदि स्थान, किसी को केवल मध्य, किसी को केवल अवसान स्थान और किसी को तीनों स्थान विभूत होते है। साधक को स्मृति और ज्ञान को प्रतिष्ठित कर तीनो स्थानो मे ज्ञान-युक्त चित्त को प्रेरित करना चाहिये। इस प्रकार आनापान-स्मृति की भावना करते हुए साधक स्मृति-पूर्वक भावना-चित्त के साथ उच्चकोटि के शील, समाधि और प्रज्ञा का आसेवन करता है।

पहले दो प्रकार मे आश्वास-प्रश्वास के अतिरिक्त और कुछ नही करना होता है। किन्तु इनके आगे ज्ञानोत्पादनादि के लिए सातिशय उद्योग करना होता है।

४. साधक स्थूल **काय-संस्कार** का उपशम करते हुए श्वास छोडने और श्वास ग्रहण करने का अभ्यास करता है।

कर्मस्थान का आरम्भ करने के पूर्व शरीर और चित्त दोनो क्लेश-युक्त होते है। उनका गुरुभाव होता है। शरीर और चित्त की गुरुता के कारण आश्वास-

प्रश्वास प्रबल और स्थूल होते है; नाक के नथुने भी उनके वेग को नही रोक सकते। और साधक को मुँह से भी साँस लेना पडता है। किन्तु जब साधक पृष्ठ-वंश को सीधा कर पर्यक-आसन से बैठता है और स्मृति को सम्मुख उपस्थापित करता है तब उसके शरीर और चित्त का परिग्रह होता है। इससे बाह्य विक्षेप का उपशम होता है, चित्त एकाग्र होता है और कर्मस्थान मे चित्त की प्रवृत्ति होती है। चित्त के शान्त होने से चित्त-समुत्थित रूपधर्म लघु और मृदुभाव को प्राप्त होते है। आश्वास-प्रश्वास का भी स्वभाव शान्त हो जाता है और वह धीरे-धीरे इतने सूक्ष्म हो जाते है कि यह जानना भी कठिन हो जाता है कि वास्तव मे उनका अस्तित्व भी है या नही।

यह काय-संस्कार क्रमपूर्वक स्थूल से सूक्ष्म, सूक्ष्म से सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतर से सूक्ष्मतम हो जाता है। यहाँ तक कि चतुर्थ ध्यान के क्षण मे यह परम सूक्ष्मता की कोटि को प्राप्त हो दुर्लक्ष्य हो जाता है। जो काय-सस्कार कर्म-स्थान के आरम्भ करने के पूर्व प्रवृत्त था, वह चित्त-परिग्रह के समय शान्त हो जाता है। जो काय-सस्कार चित्त-परिग्रह के पूर्व प्रवृत्त था, वह प्रथम ध्यान के उपचार-क्षण मे शान्त हो जाता है। इसी प्रकार पूर्व काय-सस्कार उत्तरोत्तर काय-सस्कार द्वारा शान्त हो जाता है। काय-संस्कार के शान्त होने से शरीर का कम्पन, चलन, स्पन्दन और नमन भी शान्त हो जाता है।

आनापान-स्मृति-भावना के ये चार प्रकार प्रारम्भिक अवस्था के साधक के लिये बताये गये है, इन चार प्रकारो से भावना कर जो साधक ध्यानों का उत्पाद करता है, वह यदि विपश्यना द्वारा अर्हत् पद पाने का अभिलाष रखता है तो उसे शील को विशुद्ध कर आचार्य के समीप कर्म-स्थान को पाँच आकार से ग्रहण करना चाहिये। यह पाँच आकार कर्म-स्थान के सन्धि (=पर्व, भाग) कहलाते हैं। ये इस प्रकार हैं :—

उद्ग्रह, परिपृच्छा, उपस्थान, अर्पणा और लक्षण। कर्म-स्थान ग्रन्थ का स्वाध्याय 'उद्ग्रह' कहलाता है। कर्म-स्थान के अर्थ का स्पष्टीकरण करने के लिए प्रश्न पूछना 'परिपृच्छा' है। भावनानुयोगवश निमित्त के उपधारण को 'उपस्थान' कहते है। चित्त को एकाग्र कर भावना-बल से ध्यानों का प्रतिलाभ 'अर्पणा' और कर्म-स्थान के स्वभाव का उपधारण 'लक्षण' कहलाता है। साधक दीर्घकाल तक स्वाध्याय करता है, उपर्युक्त आवास में निवास करते हुए आना-पान-स्मृति कर्मस्थान की ओर चित्तावर्जन करता है और आश्वास-प्रश्वास पर चित्त को स्थिर करता है।

कर्मस्थान-अभ्यास की विधि इस प्रकार है :—

गणना—साधक पहले आश्वास-प्रश्वास की गणना द्वारा चित्त को स्थिर

करता है। एक बार मे एक से आरम्भ कर कम से कम पॉच तक और अधिक से अधिक दस तक गिनती गिननी चाहिये। गणना-विधि को खण्डित भी नही करनी चाहिये। अर्थात् एक, तीन, पाँच इस प्रकार बीच-बीच मे छोडते हुए गिनती नही गिननी चाहिए। पॉच से नीचे रुकने पर चित्त का स्पन्दन होता है और दस से अधिक गिनती गिनने पर चित कर्मस्थान का आश्रय छोड़ गणना का आश्रय लेता है। गणना-विधि के खण्डन होने से चित्त मे कम्पन होता है और कर्मस्थान की सिद्धि के विषय मे चित्त सशयान्वित हो जाता है। इसलिये इन दोषो का परित्याग करते हुए गणना करनी चाहिये। पहले धीरे-धीरे गिनती करनी चाहिये। जिस प्रकार धान का तौल्ने वाला गिनती करता है उसी प्रकार धीरे-धीरे पहले गिनती करनी चाहिये। धान का तौलने वाला तराजू के एक पलड़े मे धान भरता है और उसे तौलकर 'एक' कहकर जमीन पर उँडेल देता है। फिर पलडे मे धान भरता हे और जब तक दूसरी बार नही उँडेलता, तब तक बराबर 'एक'-'एक' कहता जाता है। आश्वास-प्रश्वासो मे जो विशद और विभूत होता है उसी का ग्रहण कर गणना आरम्भ होती है और जब तक दूसरा विशद और विभूत नही होता, तब तक निरन्तर आश्वास-प्रश्वास की ओर 'एक'-'एक' कहता रहता है, दृष्टि रखते हुए दस तक गणना की जाती है। तदनन्तर फिर से उस प्रकार गणना शुरू होती है। इस प्रकार गणना करने से जब आश्वास-प्रश्वास विशद और विभूत हो जाय तब जल्दी-जल्दी गणना करनी चाहिये। पूर्व प्रकार की गणना से आश्वास-प्रश्वास विशद हो जल्दी-जल्दी बार-बार निष्क्रमण और प्रवेश करते है। ऐसा जानकर योगी आभ्यन्तर और बाह्य प्रदेश में आश्वास-प्रश्वास का ग्रहण नहीं करता। वह द्वार पर (नासिका-पुट ही निष्क्रमण-द्वार और प्रवेश-द्वार है) ही आते-जाते उनका ग्रहण करता है। और 'एक-दो-तीन-चार-पॉच' 'एक-दो-तीन-चार-पॉच-छह . . .' इस प्रकार एक बार मे दस तक जल्दी-जल्दी गिनता है। इस प्रकार जल्दी-जल्दी गिनती करने से आश्वास-प्रश्वास का निरन्तर प्रवर्तन उपस्थित होता है। आश्वास-प्रश्वास की निरन्तर प्रवृत्ति जानकर आभ्यन्तरगत और बहिर्गत बात का ग्रहण न कर जल्दी-जल्दी गिनती करनी चाहिये। क्योकि आभ्यन्तरगत वात की गति की ओर ध्यान देने से चित्त उस स्थान पर वात से आहत मालूम पडता है, और बहिर्गत वात की गति का अन्वेषण करते समय नाना प्रकार के बाह्य आलम्बनों की ओर चित्त विधावित होता है और इस प्रकार विक्षेप उपस्थित होता है। इसलिये स्पृष्ट-स्पृष्ट स्थान पर ही स्मृति उपस्थापित कर भावना करने से भावना की सिद्धि होती है। जब तक गणना के विना ही चित्त आश्वास-प्रश्वास रूपी आलम्बन मे स्थिर न हो जाय, तबतक गणना की क्रिया

करनी चाहिये। बाह्य-वितर्क का उच्छेद कर आश्वास-प्रश्वास मे चित्त की प्रतिष्ठा करने के लिए ही गणना की क्रिया की जाती है।

अनुबन्धना—जब गणना का कार्य निष्पन्न हो जाता है तब गणना का परित्याग कर **अनुबन्धना** की क्रिया का आरभ होता है। इस क्रिया के द्वारा बिना गिनती के ही चित्त आश्वास-प्रश्वासरूपी आलम्बन मे आबद्ध हो जाता है। गणना का परित्याग कर स्मृति आश्वास-प्रश्वास का निरन्तर अनुगमन करती है। इस क्रिया को **अनुबन्धनास्पर्श** कहते है।(अभिधर्मकोश मे इसे 'अनुगम' कहा है।) आदि, मध्य, और अवसान का अनुगमन करने से अनुबन्धना नही होती। आश्वासवायु की उत्पत्ति पहले नाभि मे होती है, हृदय मध्य है और नासिकाग्र पर्यवसान है। इनका अनुगमन करने से चित्त असमाहित होता है और काम तथा चित्त का कम्पन और स्पन्दन होता है। इसलिए अनुबन्धना की क्रिया करते समय आदि, मध्य और अवसान-क्रम से कर्मस्थान का चिन्तन नही करना चाहिये।

स्पर्श और स्थापना—जिस प्रकार गणना और अनुबन्धना द्वारा अनुक्रम से अलग-अलग कर्मस्थान की भावना की जाती है उस प्रकार केवल स्पर्श या स्थापना द्वारा पृथक् रूप से भावना नही होती। गणना कर्म-स्थान-भावना का मूल है; **अनुबन्धना** स्थापना का मूल है। क्योंकि अनुबन्धना के विना स्थापना (= अर्पणा) असम्भव है।

इसलिए इन दोनो (गणना और अनुबन्धना) का प्रधान रूप से ग्रहण किया गया है। स्पर्श और स्थापना की प्रधानता नही है। स्पर्श गणना का अग है। स्पर्श का अर्थ है 'स्पृष्ट-स्थान'। (अभिधर्मकोश में इसे '**स्थान**' कहा है।) स्पर्श-स्थान नासिकाग्र है। स्पर्श-स्थान के समीप स्मृति को उपस्थापितकर गणना का कार्य करना चाहिये। इस प्रकार गणना और स्पर्श द्वारा एक साथ अभ्यास किया जाता है। जब गणना का परित्याग कर स्मृति स्पर्श-स्थान मे ही आश्वास-प्रश्वास का निरन्तर अनुगमन करती है और अनुबन्धना के निरन्तर अभ्यास से अर्पणा-समाधि के लिए चित्त एकाग्र होता है तब अनुबन्धना, स्पर्श और स्थापना तीनो द्वारा एक साथ कर्म-स्थान का चिन्तन होता है। इसके अर्थ को स्पष्ट करने के लिए हम यहाँ अट्ठकथा मे वर्णित पगुल और द्वारपाल की उपमा का उल्लेख करेगे।

जिस प्रकार पगुल खभे के पास बैठकर जिस समय बच्चों को झूला झुलाता है, उस समय झूले के पटरे का अगला भाग (आते समय), पिछला भाग (जाते समय) और मध्यभाग अनायास ही उसको दृष्टिगोचर होता है और इसके लिये

उसे कोई प्रयत्न नही करना पडता; उसी प्रकार स्पर्श-स्थान (=नासिकाग्र) मे स्मृति को उपस्थापित कर साधक का चित्त आते-जाते आश्वास-प्रश्वास के आदि, मध्य और अवसान का अनायास ही अनुगमन करता है।

जिस प्रकार नगर का द्वारपाल नगर के भीतर और बाहर लोगो की पूछ-ताछ नही करता फिरता किन्तु जो मनुष्य नगर के द्वार पर आता है उसकी जाँच करता है, उसी प्रकार साधक का चित्त अत्त प्रविष्ट वायु और बहिर्निष्क्रान्त वायु की उपेक्षा कर केवल द्वार-प्राप्त आश्वास-प्रश्वास का अनुगमन करता है। स्थान-विशेष पर स्मृति को उपस्थापित करने से क्रिया सुलभ हो जाती है, कोई विशेष प्रयत्न नही करना पडता।

'पटिसम्भिदामग्ग' में आरे की उपमा दी गयी है। जिस प्रकार आरे से काटते समय वृक्ष को समतल भूमि पर रखकर क्रिया की जाती है और आते-जाते आरे के दॉतो की ओर ध्यान न देकर जहॉ-जहॉ आरे का दॉत वृक्ष का स्पर्श करते है, वहॉ-वहॉ ही स्मृति उपस्थापित कर आते-जाते आरे के दाँत जाने जाते है और प्रयत्न-वश छेदन की क्रिया निष्पन्न होती है और यदि कोई विशेष प्रयोजन हो तो वह भी सम्पादित होता है, उसी प्रकार साधक नासिकाग्र या उत्तरोष्ठ मे स्मृति को उपस्थापित कर सुखासीन होता है। आते-जाते आश्वास-प्रश्वास की ओर ध्यान नही देता। किन्तु यह बात नही है कि वे उसको अविदित हो, भावना को निष्पन्न करने के लिए वह प्रयत्नशील होता है, विघ्नो (नीवरण) का नाश कर भावनानुयोग साधित करता है और उत्तरोत्तर लौकिक तथा लोकोत्तर-समाधि का प्रतिलाभ करता है।

काय और चित्त वीर्यारम्भ से भावना-कर्म मे समर्थ होता है, विघ्नो का नाश और वितर्क का उपशम होता है, दस सयोजनो का परित्याग होता है, इसलिये अनुशयो का लेश-मात्र भी नही रह जाता।

इस कर्मस्थान की भावना करने से थोडे ही समय मे प्रतिभाग-निमित्त का उत्पाद होता है और ध्यान के अन्य अङ्गो के साथ अर्पणा-समाधि का लाभ होता है। जब गणना-क्रिया-वश स्थूल आश्वास-प्रश्वास का क्रमशः निरोध होता है और शरीर का क्लेश दूर हो जाता है, तब शरीर और चित्त दोनों बहुत हल्के हो जाते है।

अन्य कर्मस्थान भावना के बल से उत्तरोत्तर विभूत होते जाते हैं। किन्तु यह कर्मस्थान अधिकाधिक सूक्ष्म होता जाता है। यहॉ तक कि यह उपस्थित भी नही होता। जब कर्मस्थान की उपलब्धि नही होती तो साधक को आसन से उठ जाना चाहिये। पर यह विचार कर न उठना चाहिए कि आचार्य से पूछना

है कि—क्या मेरा कर्मस्थान नष्ट हो गया है । ऐसा विचार करने से कर्मस्थान नवीन हो जाता है। इसलिये अनुपलब्ध आश्वास-प्रश्वास प्रवर्तन के समय नासिकाग्र का स्पर्श करते है और जिसकी नाक छोटी होती है उसके आश्वास-प्रश्वास उत्तरोष्ठ का स्पर्श कर प्रवर्त्तित होते है। स्मृति-सम्प्रजन्यपूर्वक साधक को प्रकृत स्पर्श-स्थान मे स्मृति प्रतिष्ठित करनी चाहिए। प्रकृत स्पर्श-स्थान को छोड़कर अन्यत्र पर्येषण न करना चाहिए। इस उपाय से अनुपस्थित आश्वास-प्रश्वास की सम्यक् उपलब्धि मे साधक समर्थ होता हैं।

भावना करते-करते प्रतिभाग-निमित्त उत्पन्न होता है। यह किसी को मणि के सदृश, किसी को मुक्ता, कुसुममाला, धूम-शिखा, पद्मपुष्प, चन्द्र-मण्डल या सूर्य-मण्डल के सदृश उपस्थित होता है। प्रतिभाग-निमित्त की उत्पत्ति सज्ञा से ही होती है। इसलिए सज्ञा की विविधता के कारण कर्मस्थान के एक होते हुए भी प्रतिभाग-निमित्त नानारूप से प्रकट होता है। जो यह जानता है कि आश्वास-प्रश्वास और निमित्त एक चित्त के आलबन नही है, उसी का कर्म-स्थान उपचार और अर्पणा-समाधि का लाभ करता है। प्रतिभाग-निमित्त के इस प्रकार उपस्थित होने पर साधक को इसकी सूचना आचार्य को देनी चाहिए। आचार्य, साधक के उत्साह को बढाते हुए बार-बार भावना करने का उपदेश करता है। उक्त प्रकार के प्रतिभाग-निमित्त मे ही अनुबन्धना और स्पर्श का परित्याग कर भावना-चित्त की स्थापना की जाती है। इस भावना से क्रमपूर्वक अर्पणा होती है। प्रतिभाग-निमित्त की उत्पत्ति के समय से विघ्न और क्लेश दूर हो जाते है, स्मृति उपस्थित होती है और चित्त उपचार-समाधि द्वारा समाहित होता है।

साधक को उक्त प्रतिभाग-निमित्त के वर्ण और लक्षण का ग्रहण न करना चाहिए। निमित्त की अच्छी तरह रक्षा करनी चाहिए। इसलिए अनुपयुक्त आवास आदि का परित्याग करना चाहिए। इस प्रकार निमित्त की रक्षा कर निरन्तर भावना द्वारा कर्मस्थान की वृद्धि करनी चाहिए। अर्पणा मे कुशलता प्राप्त कर, वीर्य का सम-भाव प्रतिपादित करना चाहिए। तदनन्तर ध्यानो का उत्पाद करना चाहिए।

इस प्रकार ध्यानों का उत्पाद कर जो योगी सलक्षणा (=विपश्यना, इसे अभिधर्मकोश में 'उपलक्षण' कहा है) और निवर्त्तना (=मार्ग) द्वारा कर्मस्थान की वृद्धि करना चाहता हैं और परिशुद्धि (=मार्गफल) प्राप्त करना चाहता है, उसे पॉच प्रकार से (आवर्जन, समङ्गी होना, अधिष्ठान, व्युत्थान और प्रत्य-वेक्षण) ध्यानों का अभ्यास करना चाहिए। और नाम-रूप की व्यवस्था कर

विपश्यना का आरम्भ करना चाहिए। साधक सोचता है कि शरीर और चित्त के कारण आश्वास-प्रश्वास होते है, चित्त इनका समुत्थापक है और शरीर के विना इनका प्रवर्तन सम्भव नही है। वह स्थिर करता है कि आश्वास-प्रश्वास और शरीर रूप है और चित्त तथा चैतसिक-धर्म अरूप (=नाम) हैं। इस प्रकार नाम-रूप की व्यवस्था कर वह इनके हेतु का पर्येषण करता है, वह अनित्यादि लक्षणो का विचार करता है, निमित्त का निवर्तन कर आर्य-मार्ग मे प्रवेश करता है, और सकल क्लेश का ध्वस कर अर्हत्फल मे प्रतिष्ठित हो विवर्त्तना और परिशुद्धि की प्रत्यवेक्षाज्ञान की कोटि को प्राप्त होता है। इस प्रत्यवेक्षा को पालि मे 'परिपस्सना' कहा है।

आनापान-स्मृति समाधि की प्रथम चार प्रकार की भावना का विवेचन पूर्णरूप से किया जा चुका है। अब हम शेष बारह प्रकार की भावना का विचार करेंगे—

यह बारह प्रकार भी तीन वर्गो मे विभक्त किये जाते है। एक-एक वर्ग मे चार प्रकार सम्मिलित है। इनमे से पहला वर्ग वेदनानुपश्यना-वश चार प्रकार का है।

५ इस वर्ग के पहले प्रकार मे साधक प्रीति का अनुभव करते हुए श्वास का परित्याग और ग्रहण करना सीखता है। दो तरह से प्रीति का अनुभव किया जाता है—शमथ-मार्ग (= लौकिक-समाधि) मे आलम्बन-वश और विपश्यना-मार्ग मे असमोह-वश। प्रीति-सहगत प्रथम और द्वितीय-ध्यान सम्पादित कर ध्यान-क्षण मे साधक प्रीति का अनुभव करता है। प्रीति के आश्रयभूत आलम्बन का सवेदन होने से प्रीति का अनुभव होता है। इसलिए यह संवेदन आलम्बन-वश होता है। साधक प्रीति-सहगत प्रथम और द्वितीय ध्यानो को सम्पादित कर ध्यान से व्युत्थान करता है और ध्यान-सम्प्रयुक्त प्रीति के क्षय-कर्म का ग्रहण करता है। विपश्यना प्रज्ञा द्वारा प्रीति के विशेष और सामान्य लक्षणो के यथावत् ज्ञान से दर्शन-क्षण में प्रीत्ति का अनुभव होता है। यह सवेदन असमोह-वश होता है।

'पटिसम्भिदामग्ग' में कहा है—जब साधक दीर्घश्वास लेता है और स्मृति को ध्यान के सम्मुख उपस्थापित करता है तब इस स्मृत्ति के कारण तथा इस ज्ञान के कारण कि चित्त एकाग्र है, साधक प्रीत्ति का अनुभव करता है। इसी प्रकार जब साधक दीर्घश्वास छोड़ता है, ह्रस्वश्वास लेता है, ह्रस्वश्वास छोड़ता है, सकल श्वास-काय सकल प्रश्वास-काय के आदि, मध्य और अवसान सब भागों का अवबोध कर तथा उन्हे विशद और विभूत कर श्वास छोड़ता और श्वास

लेता है, काय-सस्कार (श्वास-प्रश्वास) का उपशम करते हुए श्वास छोड़ता है और श्वास लेता है, तब उसका चित्त एकाग्र होता है और इस ज्ञान द्वारा वह प्रीति का अनुभव करता है। यह प्रीति-सवेदन आलम्बन-वश होता है । जो ध्यान की ओर चित्त का आवर्जन करता है, जो ध्यान-समापत्ति के क्षण मे आलम्बन को जानता है, जो ध्यान से उठकर ज्ञान-चक्षु से देखता है, जो ध्यान की प्रत्यवेक्षा करता है, जो यह विचार कर ध्यानचित्त का अवस्थान करता है कि 'मै इतने काल तक ध्यान-समर्जन रहूँगा' वह आलम्बन-वश प्रीति का अनुभव करता है । जिन धर्मो द्वारा शमथ और विपश्यना की सिद्धि होती है उनके द्वारा भी साधक प्रीति का अनुभव करता है । यह धर्म श्रद्धा आदि पाँच इन्द्रिय है (श्रद्धा, वीर्य, स्मृति, समाधि और प्रज्ञा । क्लेश के उपशम मे इनका आधिपत्य होने से 'इन्द्रिय' सज्ञा पडी है ।) जो शमथ और विपश्यना मे दृढ श्रद्धा रखता है, जो कुशलोत्साह करता है, जो स्मृति उपस्थापित करता है, जो चित्त समाहित करता है और जो प्रज्ञा द्वारा यथाभूत दर्शन करता है, वह प्रीति का अनुभव करता है । यह सवेदन आलम्बन-वश और असमोह-वश होता है । जिसने छह अभिज्ञाओ का अधिगम किया है, जिसने हेय दु ख को जान लिया है और जिसकी तद्विषयक जिज्ञासा निवृत्त हो गयी है, जिसने दु ख के कारण क्लेशो (हेय-हेतु या दु ख-समुदय) का परित्याग किया है, जिसके लिये और कुछ हेय नही है, जिसने मार्ग (हानोपाय) की भावना की है तथा जिसके लिये और कुछ कर्त्तव्य नही है तथा जिसने निरोध का साक्षात्कार किया है और जिसके लिये अब और कुछ प्राप्य नही है, उसको प्रीति का अनुभव होता है । यह प्रीति असम्मोहवश होती है ।

६ इस वर्ग के दूसरे प्रकार मे साधक सुख का अनुभव करते हुए श्वास छोडना और श्वास लेना सीखता है । सुख का अनुभव भी आलम्बन-वश और असम्मोह-वश होता है । सुख-सहगत प्रथम तीन ध्यान सम्पादित कर ध्यान मे साधक सुख का अनुभव करता है, और ध्यान से व्युत्थान कर ध्यान-सयुक्त सुख के क्षयधर्म का ग्रहण करता है । विपश्यना द्वारा सुख के सामान्य और विशेष लक्षणो को यथावत् जानने से दर्शन-क्षण मे असम्मोह-वश सुख का अनुभव होता है । विपश्यना-भूमि मे साधक कायिक और चैतसिक दोनो प्रकार के सुख का अनुभव करता है ।

७ इस वर्ग के तीसरे प्रकार मे साधक चारो ध्यान द्वारा चित्त-सस्कार (=सज्ञायुक्त वेदना[1]) का अनुभव करते हुए श्वास छोडता और श्वास लेता है ।

८. इस वर्ग के चौथे प्रकार में स्थूल चित्त-सस्कार का निरोध करते हुए

१ सज्ञा और वेदना चैतसिक धर्म है । चित्त ही इनका समुत्थापक है ।

श्वास छोडता और श्वास लेता है। इसका क्रम वही है जो काय-सस्कार के उपशम का है।

दूसरा वर्ग चित्तानुपश्यना-वश चार प्रकार का है।

९ पहले प्रकार मे साधक चारो ध्यान द्वारा चित्त का अनुभव करते हुए श्वास छोडना और लेना सीखता है।

१० दूसरे प्रकार मे साधक चित्त को प्रमुदित करते हुए श्वास छोडना या लेना सीखता है। समाधि और विपश्यना द्वारा चित्त प्रमुदित होता है। साधक प्रीति-सहगत प्रथम और द्वितीय-ध्यान को सम्पादित कर ध्यान-क्षण मे सम्प्रयुक्त प्रीति से चित्त को प्रमुदित करता है। यह समाधि-वश चित्त-प्रमोद है। प्रथम और द्वितीय-ध्यान से उठकर साधक ध्यान-सम्प्रयुक्त प्रीति के क्षय-धर्म का ग्रहण करता है। इस प्रकार साधक विपश्यना क्षण मे ध्यान-सम्प्रयुक्त प्रीति को आलम्बन बना, चित्त को प्रमुदित करता है। यह विपश्यना-वश चित्त-प्रमोद है।

११. तीसरे प्रकार मे साधक प्रथम-ध्यानादि द्वारा चित्त को आलम्बन में समरूप से अवस्थित करते हुए श्वास छोडना और श्वास लेना सीखता है। अर्पणा-क्षण मे समाधि के चरम उत्कर्ष के कारण चित्त किञ्चिन्मात्र भी लीन और उद्धत-भाव को नही प्राप्त होता तथा स्थिर और समाहित होता है। ध्यान से उठकर साधक ध्यान-सम्प्रयुक्त चित्त के क्षय-धर्म को देखता है और उसे विपश्यना-क्षण मे चित्त के अनित्यता आदि लक्षणो का क्षण-क्षण पर अवबोध होता है। इससे क्षणमात्र स्थायी समाधि उत्पन्न होती है। यह समाधि आलम्बन से एकाकार से निरन्तर प्रवृत्त होती मालूम पडती है और चित्त को निश्चल रखती है।

१२. चौथे प्रकार मे प्रथम-ध्यान द्वारा विघ्नो (= नीवरण) से चित्त को मुक्त कर, द्वितीय द्वारा वितर्क-विचार से' मुक्त कर, तृतीय द्वारा प्रीति से मुक्त कर, चतुर्थ-ध्यान द्वारा सुख-दु ख से चित्त को विमुक्त कर, साधक श्वास छोड़ने और लेने का अभ्यास करता है अथवा ध्यान से व्युत्थानकर ध्यान-सम्प्रयुक्त चित्त के क्षय-धर्म का ग्रहण करता है और विपश्यना-क्षण मे अनित्य-भावदर्शी हो चित्त को नित्य-सज्ञा से विमुक्त करता है अर्थात् साधक अनित्यता की परमकोटि 'भंग' का दर्शन कर सस्कार की अनित्यता का साक्षात्कार करता है। इसलिये सस्कृत धर्मो के सम्बन्ध में उसकी जो मिथ्या-संज्ञा है, वह दूर हो जाती है। जिसका अनित्य-भाव है वह दु.ख है, सुख कदापि नही है; जो दु:ख है वह अनात्मा है, आत्मा कभी नहीं है। इस ज्ञान द्वारा वह चित्त को सुख-संज्ञा और आत्म-सज्ञा से विमुक्त करता है। वह देखता है कि जो अनित्य, दु:ख और अनात्मा है उसमे अभिरति और राग नही होना चाहिये। उसके प्रति साधक को

को निर्वेद और वैराग्य उत्पन्न होता है। वह चित्त को प्रीति और राग से विमुक्त करता है। जब साधक का चित्त सस्कृत-धर्मो से विरक्त होता है, तब वह सस्कारो का निरोध करता है, उन्हे उत्पन्न नही होने देता। इस प्रकार निरोध-ज्ञान द्वारा वह चित्त को उत्पत्तिधर्म-समुदय से विमुक्त करता है। सस्कारो का निरोध कर वह नित्य आदि आकार से उनका ग्रहण नही करता, वह उनका परित्याग करता है, वह क्लेशो का परित्याग करता है और सस्कृत-धर्मो का दोष देखकर तद्विपरीत असंस्कृत-धर्म निर्वाण में चित्त का प्रवेश करता है।

तीसरा वर्ग भी चार प्रकार का है—

१३ पहले प्रकार मे साधक अनित्य-ज्ञान के साथ श्वास छोड़ना और श्वास लेना सीखता है। पहले यह जानना चाहिये कि अनित्य क्या है ? अनित्यता क्या है ? अनित्य-दर्शन किसे कहते है ? और अनित्यदर्शी कौन है ? पञ्चस्कन्ध अनित्य है, क्योकि इनके उत्पत्ति, विनाश, और अन्यथाभाव है। पञ्चस्कन्धो का उत्पत्ति-विनाश ही अनित्यता है। यह उत्पन्न होकर अभाव को प्राप्त होते है। उस आकार मे उनकी अवस्थिति नही होती। उनका क्षण-भङ्ग होता है। रूप आदि को अनित्य देखना अनित्यानुपश्यना है। इस ज्ञान से जो समन्वागत है, वह अनित्यदर्शी है।

१४ दूसरे प्रकार मे साधक विराग-ज्ञान के साथ श्वास छोडना और श्वास लेना सीखता है। विराग दो है—१ क्षय-विराग और २ अत्यन्त-विराग। सस्कारो का क्षण-भङ्ग क्षय-विराग है। यह क्षणिक निरोध है। अत्यन्त-विराग निर्वाण के अधिगम से सस्कारो का अत्यन्त, न कि क्षणिक, निरोध होता है। क्षय-विराग के ज्ञान से विपश्यना और अत्यन्त-विराग के ज्ञान से मार्ग की प्रवृत्ति होती है।

१५. तीसरे प्रकार मे साधक निरोधानुपश्यना से समन्वागत हो श्वास छोडना और श्वास लेना सीखता है। निरोध भी दो प्रकार का है—१ क्षय-निरोध और २ अत्यन्त-निरोध।

१६ चौथे प्रकार मे साधक प्रतिनिसर्गानुपश्यना मे समन्वागत हो श्वास छोडना और श्वास लेना सीखता है। प्रतिनिसर्ग (=त्याग) भी दो प्रकार का है—१. परित्याग-प्रतिनिसर्ग और २ प्रस्कन्दन-प्रतिनिसर्ग। विपश्यना और मार्ग को प्रतिनिसर्गानुपश्यना कहते है। विपश्यना द्वारा साधक अभिसस्कारक स्कन्धो सहित क्लेशो का परित्याग करता है; तथा संस्कृत-धर्मो का दोष देख कर तद्विपरीत-असस्कृत निर्वाण में प्रस्कन्दन अर्थात् प्रवेश करता है।

इस तरह १६ प्रकार से आनापान-स्मृति-समाधि की भावना की जाती है।

चार-चार प्रकार का एक-एक वर्ग है। अन्तिम वर्ग शुद्ध उपासना की रीति से उपदिष्ट हुआ है; शेष वर्ग शमथ तथा विपश्यना—दोनो रीतियो से उपदिष्ट हुए है। यह हम पहले ही बता आये है कि शमथ लौकिक-समाधि को कहते है। विपश्यना एक प्रकार का विशिष्ट ज्ञान है, इसे लोकोत्तर-समाधि भी कहते है।

आनापान-स्मृति-भावना का जब परमोत्कर्ष होता है तब चार स्मृत्युपस्थापन का परिपूरण होता है। स्मृत्युपस्थापनाओ के सुभावित होने से सात बोध्यङ्गो (स्मृति, धर्मविचय, वीर्य, प्रीति, प्रश्रब्धि, समाधि, उपेक्षा) का पूरण होता है और इनके पूरण से मार्ग और फल का अधिगम होता है।

इस भावना की विशेषता यह है कि मृत्यु के समय जब श्वास-प्रश्वास निरुद्ध होते है, तब साधक मोह को प्राप्त नही होता। मरण-समय के अन्तिम आश्वास-प्रश्वास उसको विशद और विभूत होते है। जो साधक आनापानस्मृति की भावना भली प्रकार करता है उसको मालूम पडता है कि मेरा आयु-संस्कार अब इतना अवशिष्ट रह गया है। यह जानकर वह अपना कृत्य सम्पादित करता है और शान्तिपूर्वक शरीर का परित्याग करता है। (९)

उपशमानुस्मृति—इस अनुस्मृति मे साधक निर्वाण का चिन्तन करता है। वह एकान्त मे समाहित चित्त से सोचता है कि जितने सस्कृत धर्म है, उन धर्मो में अग्र-धर्म निर्वाण है। वह मद का निर्मर्दन है, पिपासा का विनयन है, आलय का समुद्घात है, वर्त्त का उपच्छेद है, तृष्णा का क्षय है, विराग है, निरोध है। इस प्रकार सर्वदुखोपशम-स्वरूप निर्वाण का चिन्तन ही उपशमानुस्मृति है। भगवान् ने इसी के बारे मे सयुत्तनिकाय मे कहा है कि यह निर्वाण ही सत्य है, पार है, सुदुर्दर्श है, अजर, ध्रुव, निष्प्रपञ्च, अमृत, शिव, क्षेम, अव्याबाध्य और विशुद्ध है। निर्वाण ही दीप है, निर्वाण ही त्राण है।

इस उपशमानुस्मृति से अनुयुक्त साधक सुख से सोता है, सुख से प्रतिबुद्ध होता है। इसके इन्द्रिय और मन शान्त होते है। वह प्रासादिक होता है और अनुक्रम से निर्वाण को प्राप्त करता है।

उपशम गुणो की गम्भीरता के कारण और अनेक गुणो का अनुस्मरण करने के कारण इस अनुस्मृति मे अर्पणा-ध्यान की प्राप्ति नही होती। केवल उपचार-ध्यान की ही प्राप्ति होती है। (१०)

९. ब्रह्म-विहारनिर्देश

मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा ये चार चित्त की सर्वोत्कृष्ट और दिव्य अवस्थाएँ है। इनको 'ब्रह्म-विहार' कहते है। चित्त-विशुद्धि के ये उत्तम साधन

है। जीवो के प्रति किस प्रकार सम्यक् व्यवहार करना चाहिये—इसका भी यह निदर्शन है। जो साधक इन चार ब्रह्म-विहारो की भावना करता है उसकी सम्यक्-प्रतिपत्ति होती है। वह सब प्राणियो के हित-सुख की कामना करता है। वह दूसरो के दु खो को दूर करने की चेष्टा करता है। जो सम्पन्न है उनको देखकर वह प्रसन्न होता है, उनसे ईर्ष्या नही करता। सब प्राणियो के प्रति उनका समभाव होता है, किसी के साथ वह पक्षपात नही करता।

सक्षेप मे—इन चार भावनाओं द्वारा राग, द्वेष ईर्ष्या, असूया आदि चित्त के मलो का क्षालन होता है। योग के अन्य परिकर्म केवल आत्म-हित के साधन है, किन्तु यह चार ब्रह्म-विहार परहित के भी साधन है।

बौद्ध-धर्म के ग्रन्थो में इन्हे 'अप्रामाण्य' या 'अप्रमाण' भी कहा है, क्योकि इनकी इयत्ता नही है। अपरिमाण जीव इन भावनाओ के आलम्बन होते है।

मैत्रीभावना—जीवो के प्रति स्नेह और सुहृद्भाव।प्रवर्तित करना मैत्री है। मैत्री की प्रवृत्ति परहित-साधन के लिए है। जीवो का उपकार करना, उनके सुख की कामना करना, द्वेष और द्रोह का परित्याग इसके लक्षण है। मैत्री भावना की सम्यक्-निष्पत्ति से द्वेष का उपशम होता है। राग इसका आसन्न शत्रु है। राग के उत्पन्न होने से इस भावना का नाश होता है। मैत्री की प्रवृत्ति जीवो के शील आदि गुण-ग्रहणवश होती है। राग भी गुण देखकर प्रलोभित होता है। इस प्रकार राग और मैत्री की समान-शीलता है। इसलिये कभी-कभी राग मैत्रीवत् प्रतीयमान हो प्रवञ्चना करता है। स्मृति का किञ्चिन्मात्र भी लोप होने से राग मैत्री को अपनीत कर आलम्बन मे प्रवेश करता है। इसलिये यदि विवेक और सावधानी से भावना न की जाय तो चित्त के रागारूढ होने का भय रहता है। साधक को सदा स्मरण रखना चाहिये कि मैत्री का सौहार्द तृष्णा-वश नही होता, किन्तु जीवो की हित-साधना के लिये होता है। राग लोभ और मोह के वश होता है किन्तु मैत्री का स्नेह मोह-वश नहीं होता अपितु ज्ञानपूर्वक होता है। मैत्री का स्वभाव अद्वेष है और यह अलोभ-युक्त होता है। (१)

पराये दु:ख को देखकर सत्पुरुषो के हृदय का जो कम्पन होता है उसे '**करुणा**' कहते है। करुणा की प्रवृत्ति जीवों के दु ख का अपनय करने के लिए होती है, दूसरों के दु ख को देखकर साधु-पुरुष का हृदय करुणा से द्रवित हो जाता है। वह दूसरो के दु:ख को सहन नही कर सकता, जो करुणाशील पुरुष है वह दूसरो की विहिंसा नही करता। करुणा-भावना की सम्यक्-निष्पत्ति से विहिंसा का उपशम होता है। शोक की उत्पत्ति से इस भावना का नाश होता है। शोक, दौर्मनस्य इस भावना का निकट शत्रु है। (२)

मुदिता का लक्षण है 'हर्ष' । जो मुदिता की भावना करता है वह दूसरों को सम्पन्न देखकर हर्ष करता है, उनसे ईर्ष्या या द्वेष नही करता । दूसरो की सम्पत्ति, पुण्य और गुणोत्कर्ष को देखकर उसको असूया और अप्रीति नही उत्पन्न होती । मुदिता की भावना की निष्पत्ति से अरति का उपशम होता है, पर यह प्रीति ससारी पुरुष की प्रीति नही है । पृथग्जनोचित प्रीति-वश जो हर्ष का उद्वेग होता है उससे इस भावना का नाश होता है । मुदिता-भावना मे हर्ष का जो उत्पाद होता है उसका शान्त प्रवाह होता है । वह उद्वेग और क्षोभ से रहित होता है । (३)

जीवो के प्रति उदासीन भाव **उपेक्षा** है । 'उपेक्षा' की भावना करने वाला साधक जीवो के प्रति सम-भाब रखता है, वह प्रिय-अप्रिय मे कोई भेद नही करता । सबके प्रति उसकी उदासीनवृत्ति होती है । वह प्रतिकूल और अप्रतिकूल इन दोनो आकारो का ग्रहण नही करता, इसीलिए उपेक्षा-भावना की की निष्पत्ति होने से विहिसा और अनुनय दोनो का उपशम होता है । उपेक्षा-भावना द्वारा इस ज्ञान का उदय होता है कि "मनुष्य कर्म के अधीन है, कर्मानुसार ही सुख से सम्पन्न होता है या दु ख से मुक्त होता है या प्राप्त-सम्पत्ति से च्युत नही होता" । यही ज्ञान इस भावना का आसन्न-कारण है । मैत्री आदि प्रथम तीन भावनाओ द्वारा जो विविध प्रवृत्तियाँ होती थी उनका ज्ञान द्वारा प्रतिषेध होता है । पृथक्-जनोचित अज्ञान-वश उपेक्षा की उत्पत्ति से इस भावना का नाश होता है । (४)

ये चारो ब्रह्म-विहार समान रूप से ज्ञान और सुगति को देने वाले है ।

मैत्रीभाव-भावना का विशेष कार्य द्वेष (=व्यापाद) का प्रतिघात करना है । करुणा-भावना का विशेष कार्य विहिंसा का प्रतिघात करना है । मुदिता-भावना का विशेष कार्य अरति (अप्रीति) का नाश करना है और उपेक्षा-भावना का विशेष कार्य राग का प्रतिघात करना है ।

प्रत्येक भावना के दो शत्रु है—१ समीपवर्त्ती, २ दूरवर्त्ती । मैत्री-भावना के समीपवर्त्ती शत्रु राग है । राग की मैत्री से समानता है । व्यापाद उसका दूरवर्त्ती शत्रु है । दोनो एक दूसरे के प्रतिकूल है । दोनो एक साथ नही रह सकते । व्यापाद का नाश करके ही मैत्री की प्रवृत्ति होती है । करुणा-भावना का समीपवर्त्ती शत्रु शोक, दौर्मनस्य है । जिन जीवो की भोगादि-विपत्ति देखकर चित्त करुणा से आर्द्र हो जाता है, उन्ही के विषय मे तन्निमित्तक शोक भी उत्पन्न हो सकता है । यह शोक, दौर्मनस्य पृथग्जनोचित है । जो संसारी पुरुष है वे इष्ट, प्रिय, मनोरम और कमनीय रूप की अप्राप्ति से और प्राप्त-सम्पत्ति के नाश से उद्विग्न और शोकाकुल हो जाते है । जिस प्रकार दुःख के दर्शन से

करुणा उत्पन्न होती है उसी प्रकार शोक भी उत्पन्न होता है। शोक करुणा-भावना का आसन्न शत्रु है। विहिसा दूरवर्त्ती शत्रु है। दोनो से भावना की रक्षा करनी चाहिये।

पृथग्जनोचित सौमनस्य मुदित-भावना का समीपवर्त्ती शत्रु है। जिन जीवो की भोग-सम्पत्ति देखकर मुदिता की प्रवृत्ति होती है उन्ही के विषय मे तन्निमित्त पृथग्जनोचित सौमनस्य भी उत्पन्न हो सकता है। वह इष्ट, प्रिय, मनोरम और कमनीय रूपो के लाभ से ससारी पुरुष की तरह प्रसन्न हो जाता है। जिस प्रकार सम्पत्ति-दर्शन से मुदिता की उत्पत्ति होती हे, उसी प्रकार पृथग्जनोचित सौमनस्य भी उत्पन्न होता है। यह सौमनस्य मुदिता का आसन्न-शत्रु है। अरति, अप्रीति दूरवर्त्ती-शत्रु है। दोनो से भावना को सुरक्षित रखना चाहिये।

अज्ञान-सम्मोह प्रवर्त्तित उपेक्षा उपेक्षा-भावना का आसन्न-शत्रु है। मूढ़ और अज्ञ पुरुष, जिसने क्लेशो को नही जीता, जिसने सब क्लेशो के मूलभूत सम्मोह के दोष को नही जाना और जिसने शास्त्र का मनन नही किया, वह रूपो को देखकर उपेक्षा-भाव प्रदर्शित कर सकता है, पर इस सम्मोहपूर्वक उपेक्षा द्वारा क्लेशो का अतिक्रमण नही कर सकता। जिस प्रकार उपेक्षा-भावना गुण-दौष का विचार न कर केवल उदासीन-वृत्ति का अवलम्बन करती है, उसी प्रकार अज्ञानोपेक्षा जीवो के गुण-दोष का विचार न कर केवल उपेक्षा-वश प्रवृत्त होती हैं। यही दोनो की समानता है। इसलिए यह अज्ञानोपेक्षा उपेक्षा-भावना का आसन्न-शत्रु है। यह अज्ञानोपेक्षा पृथग्जनोचित है। राग और द्वेष इस भावना के दूरवर्त्ती शत्रु है। दोनो से भावना-चित्त की रक्षा करनी चाहिये।

सब कुशल-कर्म इच्छा-मूलक है। इसलिए चारो ब्रह्म-विहार के आदि मे इच्छा है, नीवरण (=योग के अन्तराय) आदि क्लेशो का परित्याग मध्य मे है, और अर्पणा-समाधि पर्यवसान मे है। एक जीव या अनेक प्रज्ञप्ति रूप मे इन भावनाओ के आलम्बन है। आलम्बन की वृद्धि क्रमशः होती है। पहले एक आवास के जीवो के प्रति भावना की जाती है। अनुक्रम से आलम्बन की वृद्धि कर एक ग्राम, एक जनपद, एक राज्य, एक दिशा, एक चक्रवाल के जीवो के प्रति भावना होती है।

सब क्लेश, द्वेष, मोह, राग पाक्षिक है। इनसे चित्त को विशुद्ध करने के लिए ये चार ब्रह्म-विहार उत्तम उपाय है। जीवों के प्रति कुशल-चित्त की चार ही वृत्तियाँ है—दूसरों का हित-साधन करना, उनके दु.ख का अपनयन करना, उनकी सम्पन्न अवस्था देखकर प्रसन्न होना और सब प्राणियों के प्रति पक्षपात-

रहित और समदर्शी होना। इसीलिये ब्रह्म-विहारो की सख्या चार है। जो साधक इन चारो की भावना चाहता है उसे पहले मैत्री-भावना द्वारा जीवो का हित करना चाहिये। तदनन्तर दु:ख से अभिभूत जीवो की प्रार्थना सुनकर करुणा-भावना द्वारा उनके दु ख का अपनयन करना चाहिये। तदनन्तर दु खी लोगो की सम्पन्न-अवस्था देखकर मुदिता-भावना द्वारा प्रमुदित होना चाहिये और तत्पश्चात् कर्त्तव्य के अभाव मे उपेक्षा-भावना द्वारा उदासीन-वृत्ति का अवलम्ब करना चाहिये। इसी क्रम से इन भावनाओ की प्रवृत्ति होती है, अन्यथा नही।

यद्यपि चारो ब्रह्म-विहार अप्रमाण है तथापि पहले तीन केवल प्रथम तीन ध्यानो का उत्पाद करते है और चौथा ब्रह्म-विहार अन्तिम ध्यान का ही उत्पाद करता है। इसका कारण यह है कि मैत्री, करुणा और मुदिता, दौर्मनस्य-सम्भूत व्यापाद, विहिसा और अरति के प्रतिपक्ष होने के कारण सौमनस्य-रहित नही होती। सौमनस्य-सहित होने के कारण इनमे सौमनस्य-विरहित उपेक्षासहगत चतुर्थ-ध्यान का उत्पाद नही हो सकता। उपेक्षा-वेदना से सयुक्त होने के कारण केवल उपेक्षा ब्रह्म-विहार मे अन्तिम-ध्यान का लाभ होता है।

१०. आरूप्य-निर्देश

चार ब्रह्म-विहारो के पश्चात् विसुद्धिमग्ग मे चार अरूप-कर्मस्थान उद्दिष्ट है। अरूप-आयतन चार है—आकाशानन्त्यायतन, विज्ञानानन्त्यायतन, आकिञ्चन्यायतन और नैवसञ्ज्ञानासञ्ज्ञायतन।

चार रूपध्यानो की प्राप्ति होने पर ही अरूप-ध्यान की प्राप्ति होती है, करज (कर्मज)रूपकाय मे और इन्द्रिय तथा उनके विषय मे दोष देखकर रूप का समतिक्रम करने के हेतु से यह ध्यान किया जाता है। चौथे ध्यान मे कसिण-रूप रहता है। उस कसिण-रूप का समतिक्रम इस ध्यान मे होता है। जिस प्रकार कोई पुरुष सर्प को देखकर भयभीत हो भाग जाता है, और सर्प के समान दिखायी देनेवाले रज्जु आदि का भी निवारण चाहता है, उसी प्रकार साधक करज-रूप से भयभीत हो चतुर्थ-ध्यान प्राप्त करता है, जहाँ करजरूप से समतिक्रम होता है, लेकिन उसके प्रतिभाग-रूप कसिण-रूप मे स्थित होता है। उस कसिण-रूप का निवारण करने की इच्छा से साधक अरूपध्यान को प्राप्त करता है, जहाँ सभी प्रकार के रूप का समतिक्रम सम्भव है।

आकाशानन्त्यायतन मे तीन सञ्ज्ञाओ का निवारण होता है—१. रूप-सञ्ज्ञा अर्थात् जडसृष्टि सम्बन्धी विचार; २. प्रतिघ-सञ्ज्ञा अर्थात् इन्द्रिय और विषयो का प्रत्याघात-मूलक विचार; ३ नानात्व-सञ्ज्ञा अर्थात् अनेकविध रूप-शब्दादि आलम्बनो का विचार। इन तीनो सञ्ज्ञाओ का अनुक्रम, अस्तङ्गम, और

अमनसिकार होने पर 'आकाश अनन्त है' ऐसी सज्ञा उत्पन्न होती है। इसे आकाशानन्त्यायतन-ध्यान कहते है।

परिच्छिन्न आकाश-कसिण को छोडकर अन्य किसी कसिण को आलम्बन कर चतुर्थ-ध्यान को प्राप्त करने पर ही यह भावना की जाती है। कसिण पर चतुर्थ-ध्यान साध्य करने के पूर्व ही उस कसिण की मर्यादा अनन्त की जानी चाहिये। कसिण प्रथम छोटे आकार का होता है, जिसे अनुक्रम से बढाकर समस्त विश्वाकार किया जाता है, उस विश्वाकार-आकृति पर चतुर्थ-ध्यान साध्य करने के पश्चात् साधक अपने ध्यान-बल से उस आकृति को दूर करके 'विश्व में केवल एक आकाश ही भरा हुआ है' ऐसा देखता है। चतुर्थ-ध्यान तक रूपात्मक आलम्बन था, अब अरूपात्मक आलम्बन है; इसलिए 'आकाश अनन्त है' ऐसी सज्ञा होने से इसे आकाशानन्त्यायतन कहा है। (१)

विज्ञानानन्त्यायतन—इस ध्यान मे साधक आकाश-सज्ञा का समतिक्रम करता है। आकाश की अनन्त मर्यादा ही विज्ञान की मर्यादा है। ऐसी सज्ञा उत्पन्न करने पर वह विज्ञान का आनन्त्य जिसका आलम्वन है, ऐसे ध्यान को प्राप्त करता है। (२)

आकिञ्चन्यायतन—इस ध्यान मे साधक विज्ञान मे भी दोष देखता है और उसका समतिक्रम करने के लिए विज्ञान के अभाव की सज्ञा प्राप्त करता है। "अभाव भी अनन्त है; कुछ भी नही है, सब कुछ शान्त है" इस प्रकार की भावना करने पर साधक इस तृतीय अरूप-ध्यान को प्राप्त होना है। (३)

नैवसंज्ञानासंज्ञायतन—अभाव की सज्ञा भी बडी स्थूल है। अभाव की सज्ञा का भी अभाव जिसमे है, ऐसा अति शान्त, सूक्ष्म यह चोथा आयतन है। इस ध्यान मे सज्ञा अति सूक्ष्म-रूप मे रहती है, इसलिये उसे असज्ञा नही कह सकते, और स्थूल-रूप मे न होने के कारण उसे सज्ञा भी नही कह पाते। पालि मे एक उपमा देकर इसे समझाया है। गुरु और शिष्य प्रवास मे थे। रास्ते मे थोडा पानी था। शिष्य ने कहा "आचार्य! मार्ग मे पानी है, इसलिये जूता निकाल लीजिये।" गुरु ने कहा—'अच्छा तो स्नान कर लूँ, पात्र दो।' शिष्य ने कहा—"गुरुदेव! स्नान करने योग्य पानी नही है।" जिस प्रकार उपानह को भिगाने के लिए पर्याप्त पानो है किन्तु स्नान के लिए पर्याप्त नही; इसी प्रकार इस आयतन मे संज्ञा का अतिसूक्ष्म अश विद्यमान है किन्तु सज्ञा का कार्य हो, इतना स्थूल भी वह नही है, इसीलिए इस आयतन को नैवसज्ञानासज्ञायतन कहा है।

इस आयतन को प्राप्त करने पर ही साधक निरोध-समापत्ति को प्राप्त कर

सकता, जिसमे निश्चित काल (=सात दिन) तक साधक की मनोवृत्तियो का आत्यन्तिक निरोध होता है। (४)

इन चार अरूप-ध्यानो मे केवल दो ही ध्यानाङ्ग रहते है—उपेक्षा और चित्तैकाग्रता। ये चार ध्यान अनुक्रम से शान्ततर, प्रणीततर और सूक्ष्मतर होते है।

११. समाधिनिर्देश

आहार मे प्रतिकूल-सञ्ञा

आरूप्य के अनन्तर आहार मे प्रतिकूल-सञ्ञा नामक कर्मस्थान निर्दिष्ट है। आहरण करने के कारण 'आहार' कहते है। यह चतुर्विध है—कवलीकाराहार (= खाद्य पदार्थ), स्पर्शाहार, मनोसञ्चेतनाहार और विज्ञानाहार। इनमे से कवलीकार आहार ओजयुक्त-रूप का आहरण करता है। स्पर्शाहार सुख, दु ख, उपेक्षा इन तीन वेदनाओ का आहरण करता है। मनोसञ्चेतनाहार काम, रूप, अरूप भवो मे प्रतिसन्धि का आहरण करता है। विज्ञानाहार प्रतिसन्धि के क्षण मे नाम-रूप का आहरण करता है। ये चारो आहार भयस्थान है, किन्तु यहाँ केवल कवलीकार आहार ही अभिप्रेत है। उस आहार मे जो प्रतिकूल-सञ्ञा उत्पन्न होती है, वही यह कर्मस्थान है। इस कर्मस्थान की भावना करने का इच्छुक साधक असित, पीत, खायित, सायित प्रभेद का जो कवलीकार आहार है, उसके गमन, पर्येषण, परिभोग, आशय, निधान, अपरिपक्वता, परिपक्वता, फल, निष्यन्द और सम्रक्षण रूप से जो अशुचिभाव का विचार करता है, उस विचार से उसे आहार मे प्रतिकूल-सञ्ञा उत्पन्न होती है, और कवलीकार आहार उसी प्रकार प्रकट होता है। वह उस प्रतिकूल भावना को बढाता है। उसके नीवरणो का विष्कम्भन होता है और चित्त उपचार-समाधि को प्राप्त होता है, अर्पणा नही होती है।

इस सञ्ञा से साधक की रस-तृष्णा नष्ट होती है। वह केवल दु ख-निस्सरण के लिए ही आहार का सेवन करता है; पञ्च काम-गुण मे राग उत्पन्न नही होता और कायगता स्मृति उत्पन्न होती है।

चतुर्धातु-व्यवस्थान

चालीस कर्मस्थानो मे यह अन्तिम कर्मस्थान है। स्वभाव-निरूपण द्वारा विनिश्चय को 'व्यवस्थान' कहते है। महासतिपट्ठान, महाहत्थिपदोपम, राहुलोवाद आदि सुत्तो मे इसका विशेष-वर्णन आता है। महासतिपट्ठान-सुत्त मे कहा है—"भिक्षुओ! जिस प्रकार कोई दक्ष गोघातक बैल को मार कर

चौराहे पर खण्ड-खण्ड कर रख दे और उसे उन खण्डो को देखकर 'यह बैल है' ऐसा सज्ञा नही उत्पन्न होती, उसी प्रकार भिक्षु इसी काय को धातु द्वारा व्यवस्थित करता है कि—इस काय मे पृथिवी-धातु है, आपो-धातु है, तेजो-धातु है, वायु-धातु है। इस प्रकार के व्यवस्थान से काय में "यह सत्त्व है, यह पुद्गल है, यह आत्मा है" ऐसी सज्ञा नष्ट होकर धातु-सज्ञा ही उत्पन्न होती है।"

साधक इस संज्ञा को उत्पन्न कर अपने आध्यात्मिक और बाह्य-रूप का का चिन्तन करता है। वह आचार्य के पास ही केश-लोम-नख-दन्त आदि कर्मस्थान को ग्रहण कर उनमे भी चतुर्धातु का व्यवस्थान करता है; फिर पृथिवी-आदि महाभूतो के लक्षण, समुत्थान, नानात्व, एकत्व, प्रादुर्भाव, सज्ञा, परिहार और विकास का चिन्तन करता है। उनमें अनात्म-सज्ञा, दु:ख-सज्ञा, और अनित्य-सज्ञा को उत्पन्न करता है और उपचार-समाधि को प्राप्त करता है। अर्पणा प्राप्त नही होती।

चतुर्धातु-व्यवस्थान मे अनुयुक्त साधक शून्यता मे अवगाह करता है, सत्त्व-सज्ञा का समुद्घात करता है और महाप्रज्ञा को प्राप्त करता है।

१२. ऋद्धिविध-निर्देश

भगवान् ने पाँच लौकिक अभिज्ञाएँ कही है—(१) ऋद्धिविध, (२) दिव्य-श्रोत्र, (३) चेत पर्यायज्ञान (४) पूर्वनिवासानुस्मृति ज्ञान (५) च्युत्युत्पाद ज्ञान।

१ ऋद्धिविध—इसको प्राप्त करने की इच्छा वाले प्रारम्भिक साधक को अवदात कसिण तक आठो कसिणो में आठ-आठ समापत्तियो को उत्पन्न कर कसिणके अनुलोम से, कसिण के प्रतिलोम से, कसिण के अनुलोम और प्रतिलोम से, ध्यान के अनुलोम से, ध्यान के प्रतिलोम से, ध्यान के अनुलोम और प्रतिलोम से, ध्यान को लाँघने से, कसिण को लाँघने से, ध्यान और कसिण को लाँघने से, अङ्ग के व्यवस्थापन से, आलम्बन के व्यवस्थापन से—इन चौदह आकारो से चित्त का भली प्रकार दमन करना चाहिए। चित्त का दमन हो जाने पर जब चतुर्थ ध्यान प्राप्त करने के पश्चात् साधक एकाग्र, शुद्ध, निर्मल, क्लेशों से रहित, मृदु, मनोरम, और निश्चल चित्तवाला हो जाता है, तब वह ऋद्धिविध को प्राप्त करता है और अनेक प्रकार की ऋद्धियो का अनुभव करने लगता है। ऋद्धियाँ दस हैं—(१) अधिष्ठान ऋद्धि (२) विकुर्वण ऋद्धि (३) मनोमय ऋद्धि (४) ज्ञानविस्फार ऋद्धि (६) आर्य ऋद्धि (७) कर्मविपाकज ऋद्धि (८) पुण्यवान् की ऋद्धि (९) विद्यामय ऋद्धि (१०) उन-उन स्थानो पर सम्यक् प्रयोग के कारण सिद्ध होने के अर्थ मे ऋद्धि। इन ऋद्धियो को प्राप्त साधक एक से अनेक होता है, प्रकट और अदृश्य होता है, आरपार बिना लगे जाता है, पृथ्वी

में जल की भाँति गोता लगाता है, जल पर पैदल चलता है, आकाश मे पालथी मारकर बैठता है, चाँद-सूरज को हाथ से स्पर्श करता है, दूर को पास कर देता है, मनोमय शरीर का निर्माण करता है।

१३. अभिज्ञा-निर्देश

२ शेष अभिज्ञाओ मे **दिव्य-श्रोत्र-ज्ञान** एक स्थान पर बैठकर मनमे विचारे हुए स्थानो के शब्दों को सुनने को कहते है। चतुर्थ ध्यान से उठकर जब साधक दिव्य-श्रोत्र ज्ञान की प्राप्ति के लिए अपने चित्त को लगाता है, तब वह अपने अलौकिक शुद्ध दिव्य-श्रोत्र से दोनो प्रकार के—मनुष्यो के भी और देवताओ के भी शब्द सुनने लगता है।

३. अपने चित्त से दूसरे व्यक्ति के चित्त को जानने के ज्ञान को **चेतःपर्याय ज्ञान** कहते है। इसे प्राप्त करने वाले साधक को दिव्य-चक्षुवाला भी होना चाहिए। उस साधक को आलोक की वृद्धि करके दिव्य-चक्षु से दूसरे के हृदय (कलेजे) के सहारे विद्यमान् रुधिर के रग को देखकर चित्त को ढूँढना चाहिए। जब सौमनस्यचित्त होता है, तब रुधिर पके हुए बरगद के समान लाल होता है। जब दौर्मनस्यचित्त होता है, तब पके हुए जामुन के समान काला होता है। जब उपेक्षाचित्त होता है, तब परिशुद्ध तिल के तेल के समान स्वच्छ होता है। इसलिए साधक को हृदय के सहारे रहने वाले रुधिर मे रग को देखकर चित्त को ढूँढते हुए चेत पर्याय ज्ञान को शक्ति-सम्पन्न बनाना चाहिए। इस प्रकार शक्ति-सम्पन्न होने पर वह क्रमश सभी कामावचर, रूपावचर और अरूपावचर चित्तो को अपने चित्त से जान लेता है, तब उसे हृदय के रुधिर के परीक्षण मे जाने की आवश्यकता नही होती है। वह जब अपने चित्त से दूसरे के चित्त की बातो को जानना चाहता है, तब वह दूसरे सत्त्वो के, दूसरे लोगो के चित्त को अपने चित्त से जान लेता है—रागसहित चित्त को राग सहित जान लेता है, वैराग्यसहित चित्त को वैराग्यसहित जान लेता है। इसी प्रकार वह द्वेष, मोह आदि से युक्त या रहित चित्तो को भी जान लेता है। आचार्य ने इसमे दर्पण की उपमा दी है। जैसे कोई स्त्री या पुरुष अपने को अलकृत कर दर्पण मे देखते हुए स्पष्ट रूप से देखे, उसी प्रकार वह दूसरे के चित्त को अपने चित्त से जान लेता है।

४. पूर्वजन्मो की बातो के ज्ञान को **पूर्वनिवासानुस्मृति** ज्ञान कहते है। इसे प्राप्त करने के लिए चतुर्थ ध्यान से उठ सब से अन्तिम बैठने का स्मरण करना चाहिए। तत्पश्चात् आसन बिछाने से लेकर प्रातः काल तक के प्रत्येक कार्य का स्मरण करना चाहिए। इस प्रकार प्रतिलोम ढग पर सम्पूर्ण रात और

दिन के किए हुए कार्यो का स्मरण करना चाहिए। यदि इनमे से कुछ प्रकट न हो तो पुन: चतुर्थध्यान को प्राप्त कर उससे उठ इन्हे स्मरण करना चाहिए। ऐसे क्रमश: दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवे, दसवे, पन्द्रहवे, तीसवे दिन के कार्यो का स्मरण करना चाहिए। यही नही, महीने से लेकर वर्ष भर के किए हुए कार्यो का स्मरण करना चाहिए। इसी प्रकार दस वर्ष, बीस वर्ष तक के कार्यो का स्मरण करना चाहिए। तदुपर्यन्त इस जन्म मे जन्म-ग्रहण से लेकर पूर्व जन्म की मृत्यु के समय तक का स्मरण करना चाहिए तथा उस जन्म के अपने रूप को देखना चाहिए। जब साधक इस ज्ञान को प्राप्त कर लेता है, तब वह अनेक पूर्वजन्मो की बातो को स्मरण करता है। जैसे, एक जन्म से लेकर हजार, लाख, अनेक संवर्त-कल्पो, अनेक विवर्त-कल्पो को जानता है—"मै वहाँ इस नाम वाला इस गोत्र वाला, इस रग का, इस आहार को खाने वाला, इतनी आयु वाला था, मैने इस प्रकार के सुख-दु ख का अनुभव किया। सो मै वहाँ से मरकर यहाँ उत्पन्न हुआ हूँ।" इस तरह आकार-प्रकार के साथ वह अनेक पूर्व-जन्मो को स्मरण करता है।

५. दिव्य-चक्षु के ज्ञान को ही **च्युत्युत्पाद ज्ञान** कहते है। जो साधक इसे प्राप्त करना चाहता हैं, उसे चतुर्थ ध्यान से उठकर प्राणियो की च्युति एव उत्पत्ति को जानने के लिए विचार करने पर दिव्य-चक्षु उत्पन्न हो जाता है। इसके लिये किसी विशेष साधन की आवश्यकता नही। साधक आलोक फैलाकर नरक एव स्वर्ग के सभी जीवो के कर्मो तथा उनके विपाको को जान सकता है। उसे यथाकर्मोपग-ज्ञान और अनागतांश-ज्ञान सिद्ध हो जाते है। वह च्युत्यु-त्पादज्ञानी कहा जाता है।

ऋद्धिविध, दिव्यश्रोत्र, चेत:पर्याय ज्ञान, पूर्वनिवासानुस्मृति ज्ञान और च्युत्युत्पाद ज्ञान—ये पाँचो अभिज्ञाएँ लौकिक हैं, किन्तु जब कोई अर्हत् इन्हे प्राप्त करता है, तब ये ही लोकोत्तर कही जाती है और उक्त पाँचो के साथ आश्रव-क्षयज्ञान और जुड जाता है। इस प्रकार लौकिक अभिज्ञाएँ पाँच और लोकोत्तर अभिज्ञाएँ छह है।

इस तरह समाधि-भावना का विवरण समाप्त हुआ ॥

१४. स्कन्ध-निर्देश

अब यहाँ से प्रज्ञा-भावना का विवरण प्रारम्भ होता है। इसको समझाने के लिए आचार्य ने प्रारम्भ में ये प्रश्न किए है :—

(१) प्रज्ञा क्या है ?

(२) किस अर्थ में प्रज्ञा है ?

(३) प्रज्ञा का लक्षण, कार्य, जानने का आकार तथा प्रत्यय क्या है ?

(४) प्रज्ञा कितने प्रकार होती है ?

(५) प्रज्ञा-भावना कैसे करनी चाहिए ?

(६) प्रज्ञा की भावना का क्या गुण है ?

कुशल चित्त से युक्त विपश्यना-ज्ञान प्रज्ञा होता है। यह भली प्रकार जानने के अर्थ मे प्रज्ञा है। धर्म के स्वभाव को जानने के लक्षण वाली प्रज्ञा है। वह धर्मो के स्वभाव को ढँकने वाले मोह के अन्धकार का नाश करने के कार्य-वाली है। असमोह इसके जानने का आकार है। समाधि प्रज्ञा का प्रत्यय है। धर्म के स्वभाव के प्रतिवेध के लक्षण से प्रज्ञा एक प्रकार की होती है। लौकिक और लोकोत्तर से दो प्रकार की। वैसे ही साश्रव, अनाश्रव आदि से, नामरूप के व्यवस्थापन से, सौमनस्य-उपेक्षा से युक्त होने से और दर्शन-भावना की भूमि से। चिन्ता, श्रुत तथा भावनामय से तीन प्रकार की होती है। वैसे ही परित्र, महद्गत, अप्रमाण से, आय, अपाय, उपाय-कौशल्य से और अध्यात्म-अभिनिवेश आदि से। चार सत्यो के ज्ञान और चार प्रतिसम्भिदा से प्रज्ञा चार प्रकार की होती है।

क्योकि इस प्रज्ञा की स्कन्ध, आयतन, धातु, इन्द्रिय, सत्य, प्रतीत्यसमुत्पाद आदि धर्म भूमि है। शीलविशुद्धि और चित्तविशुद्धि—ये दो विशुद्धियाँ मूल है। दृष्टि-विशुद्धि, कांक्षावितरणविशुद्धि, मार्गामार्गदर्शनविशुद्धि, प्रतिपदा ज्ञानदर्शन विशुद्धि, ज्ञानदर्शन विशुद्धि—ये पाँच विशुद्धियाँ शरीर है। इसलिए उन भूमिभूत धर्मो मे अभ्यास, परिपृच्छा (प्रश्नोत्तर) के अनुसार ज्ञान का परिचय करके मूलभूत दो विशुद्धियो का सम्पादन कर शरीरभूत पाँच विशुद्धियो का सम्पादन करते हुए भावना करनी चाहिए। इस निर्देश मे 'प्रज्ञा की धर्मभूमि' मे से प्रथम 'स्कन्ध' का वर्णन किया गया है।

स्कन्ध पाँच है—(१) रूप-स्कन्ध, (२) विज्ञान-स्कन्ध, (३) वेदना स्कन्ध, (४) सज्ञा-स्कन्ध, (५) सस्कार-स्कन्ध। जो कुछ शीत आदि से विकार प्राप्त होने के स्वभाव वाला धर्म है वह सब पुञ्जीभूत अर्थ मे 'रूपस्कन्ध' कहलाता है। वह विकार प्राप्त होने के स्वभाव से एक प्रकार का तथा भूत और उपादा के भेद से दो प्रकार का होता है। भूत-रूप चार है—पृथ्वी-धातु, जलधातु, तेजधातु और वायु-धातु। उपादा-रूप चौबीस प्रकार का होता है—चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, काय, रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्त्री-इन्द्रिय, पुरुषेन्द्रिय, जीवितेन्द्रिय, हृदयवस्तु, काय-विज्ञप्ति, वाक्-विज्ञप्ति, आकाशधातु, रूप की लघुता, रूप की मृदुता, रूप की कर्मण्यता, रूप का उपचय, रूप की सन्तति, रूप की जरता, रूप की अनित्यता, कवलीकार आहार।

विज्ञान-स्कन्ध—विज्ञान, चित्त, मन—अर्थत· एक है। इक्कीस कुशल, बारह अकुशल, छत्तीस विपाक, बीस क्रिया—सब मिलाकर निवासी(८९) प्रकार

के विज्ञान होते है, जो प्रतिसन्धि, भवाङ्ग, आवर्जन, देखना, सुनना, सूँघना, चाटना, स्पर्श स्वीकार करना, निश्चय करना, व्यवस्थापन, जवन, तदालम्बन, च्युति के अनुसार प्रवर्तित होते है। च्युति से पुन प्रतिसन्धि, प्रतिसन्धि से पुन भवाग—इस प्रकार भव, गति, स्थिति निवास मे चक्कर काटते हुए प्राणियो की—अटूट चित्त-धारा जारी रहती है। जो अर्हत्त्व को प्राप्त कर लेता है, उसके च्युति-चित्त के निरुद्ध होने पर निरुद्ध ही हो जाता है।

जो अनुभव करने के लक्षण वाला है, वह सब एक मे करके **वेदना-स्कन्ध** है। स्वभाव से वेदना पाँच प्रकार की होती है--सुख, दु ख, सौमनस्य, दौर्मनस्य और उपेक्षा। उत्पत्ति के अनुसार वह तीन प्रकार की होती है—कुशल अकुशल और अव्याकृत। इस प्रकार वेदना नाना होती है, जो अनुभव करने के लक्षण वाली है। संज्ञा की उत्पत्ति के अनुसार तीन प्रकार की होती है—कुशल, अकुशल और अव्याकृत।

जो कुछ पहचानने के लक्षण वाला है, वह सब एक मे करके **संज्ञास्कन्ध** है। ऐसा कोई विज्ञान नही है जो सज्ञा से रहित हो, इसलिए जितने विज्ञान के भेद है, उतने सज्ञा के भी।

जो कुछ राशि करने के लक्षण वाला है वह सब एक मे करके **संस्कार-स्कन्ध** है।

सस्करण करने के कारण सस्कार कहा जाता है। लौकिक कुशल और अकुशल चेतना ही सस्कार हैं। पुण्य-पाप कर्मो का राशिकरण इसका अर्थ है। जितने भी भूत, भविष्यत् वर्तमानकाल के सस्कार है, वे सब संस्कार-स्कन्ध के अन्तर्गत है। भले ही वे आध्यात्मिक हों या बाह्य, कुशल हो या अकुशल। स्पर्श, मनस्कार, जीवित, समाधि, वितर्क, विचार, वीर्य, प्रीति, छन्द, अधिमोक्ष, श्रद्धा, स्मृति, ह्री, अपत्रपा, अलोभ, अव्यापाद, प्रज्ञा, उपेक्षा, कायप्रश्रब्धि, चित्त-प्रश्रब्धि, काय-लघुता, चित्त-लघुता, काय-मृदुता, चित्त-मृदुता, काय-कर्मण्यता, चित्त-कर्मण्यता, काय-प्रागुण्य, चित्त-प्रागुण्य, काय-ऋजुष्कता, करुणा, मृदुता, सम्यक्कर्मान्त, सम्यक्आजीव, लोभ, द्वेष, मोह, दृष्टि, औद्धत्य, अ-ह्री, अनपत्रपा, विचिकित्सा, मान, ईर्ष्या, मात्सर्य, कौकृत्य, स्त्यानमृद्ध—ये सभी धर्म चेतना के साथ पचास, पुञ्जीभूत रूप मे सस्कार-स्कन्ध कहलाते है। ये काय, वाक् और मन द्वारा ही साध्य है। सस्कार दो प्रकार के होते है—(१) काय-सस्कार, वाक्-सस्कार, चित्त-सस्कार। (२) पुण्य सस्कार, अपुण्य सस्कार, आनेञ्ज संस्कार। आश्वास-प्रश्वास काय सस्कार हैं। वितर्क-विचार वाक् सस्कार है और संज्ञा तथा वेदना चित्त सस्कार। काय, चित्त और वाक्—इन्ही के द्वारा व्यक्ति पुण्य-पाप का संचय करता है, जिनसे सुगति-दुर्गति होती है। इन्हीं सस्कारो से व्यक्ति स सार-भ्रमण में लगा रहता है।

१५. आयतन-धातु-निर्देश

आयतन शब्द निवास, आकर, समवसरण, उत्पत्ति-स्थान और कारण के अर्थ मे प्रयुक्त है। आयतन बारह है। छह आभ्यन्तर आयतन है—चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, काय और मन। छह बाह्य आयतन हैं—रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्पर्श और धर्म।

धातु अठारह है—चक्षु-धातु, रूप-धातु, चक्षुर्विज्ञान-धातु; श्रोत्र-धातु, शब्द-धातु, श्रोत्र-विज्ञान-धातु; घ्राण-धातु, गन्ध-धातु, घ्राण-विज्ञान-धातु; जिह्वा-धातु, रस-धातु, जिह्वा-विज्ञान-धातु; काय-धातु, स्पर्श-धातु, काय-विज्ञान-धातु, मनो-धातु, धम-धातु और मनोविज्ञान-धातु। इन सबका विशेष विवरण ग्रन्थ मे देखे।

१६. इन्द्रिय-सत्य-निर्देश

इन्द्रियाॅ बाईस है—चक्षु-इन्द्रिय, श्रोत्र-इन्द्रिय, घ्राण-इन्द्रिय, जिह्वा-इन्द्रिय, काय-इन्द्रिय, मन-इन्द्रिय, स्त्री-इन्द्रिय, पुरुष-इन्द्रिय, जीवतेन्द्रिय, सुखेन्द्रिय, दु.खेन्द्रिय, सौमनस्येन्द्रिय, दौर्मनस्येन्द्रिय, उपेक्षेन्द्रिय, श्रद्धेन्द्रिय, वीर्येन्द्रिय, स्मृति-इन्द्रिय, समाधि-इन्द्रिय, प्रज्ञेन्द्रिय, अज्ञातज्ञास्यामि-इन्द्रिय, आज्ञेन्द्रिय, आज्ञातावो-इन्द्रिय।

चार आर्यसत्य है, जैसे—दु ख-आर्यसत्य, दु ख-समुदय आर्यसत्य, दु ख-निरोध आर्यसत्य, दु ख-निरोध-गामिनो प्रतिपदा आर्यसत्य।

चार आर्यसत्यो मे पहला दु ख आर्यसत्य है, वृद्ध होना दु.ख है, मरण दु.ख है, शोक करना दु ख है, रोना-पीटना दुःख है, पीड़ित होना दु ख है, इच्छा की पूर्ति न होना भी दु ख है, प्रिय व्यक्तियो से वियोग और अप्रिय व्यक्तियो से सयोग दुःख है। सक्षेप में सभी पञ्चस्कन्ध दु ख है—इस प्रकार के ज्ञान को ही 'दुःख आर्यसत्य' कहते है।

संसार मे बार-बार जन्म दिलाने वाली तृष्णा तीन प्रकार की होती है—भोग-विलास-सम्बन्धी तृष्णा (=काम-तृष्णा), संसार मे बार-बार जन्म लेकर आनन्द उठाने की तृष्णा (=भव-तृष्णा) और इन सबसे वञ्चित रहकर सर्वथा विलीन हो जाने की नास्तिक-भाववाली तृष्णा (=विभव-तृष्णा)। इन्हीं तृष्णाओ के ज्ञान को 'दु ख-समुदय आर्यसत्य' कहते है।

दुःख को उत्पत्ति का रुक जाना (निरोध) हो दुःख-निरोध आर्यसत्य है। सभी दुःखों को उत्पत्ति का मूल कारण तृष्णा है, अतः तृष्णा का सर्वथा निरोध ही 'दुःखनिरोध आर्यसत्य' है। दुःखनिरोध का ही दूसरा नाम निर्वाण है, जिसको प्राप्त कर संसार-चक्र रुक जाता है।

दु ख-निरोध-गामिनी प्रतिपदा आर्यसत्य ही मध्यम मार्ग आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग कहलाता है, जैसे—(१) सम्यक् दृष्टि (२) सम्यक् सकल्प (३) सम्यक् वाणी (४) सम्यक् कर्मान्त (५) सम्यक् आजीविका (६) सम्यक् व्यायाम (७) सम्यक् स्मृति (८) सम्यक् समाधि। दु ख से मुक्ति (निर्वाण) के लिए यह एकमात्र मार्ग है। इसी पर चलकर सारे दुःखो का क्षय हो सकता है।

१७. प्रज्ञाभूमि(प्रतीत्यसमुत्पाद)निर्देश

कार्य-कारण सिद्धान्त ही प्रतीत्य-समुत्पाद कहलता है। भगवान् बुद्ध ने उसे इस प्रकार बतलाया है—"अविद्या के प्रत्यय से सस्कार, सस्कार के प्रत्यय से विज्ञान, विज्ञान के प्रत्यय से नाम और रूप, नाम और रूप के प्रत्यय से छह आयतन, छह आयतनो के प्रत्यय से स्पर्श, स्पर्श के प्रत्यय से वेदना, वेदना के प्रत्यय से तृष्णा, तृष्णा के प्रत्यय से उपादान, उपादान के प्रत्यय से भव, भव के प्रत्यय से जाति (जन्म), जाति के प्रत्यय से बूढा होना, मरना, शोक करना, रोना-पीटना, दु:ख उठाना, बेचैनी और परेशानी होती है। इस तरह सारा दु खसमुदय उठ खडा होता है।"

प्रत्यय चौबीस है—हेतु प्रत्यय, आलम्बन प्रत्यय, अधिपति प्रत्यय, अनन्तर प्रत्यय, समनन्तर प्रत्यय, सहजात प्रत्यय, अन्योन्यप्रत्यय, निश्रय प्रत्यय, उपनिश्रय प्रत्यय, पुरेजात प्रत्यय, पश्चात्-जात प्रत्यय, आसेवन प्रत्यय, कर्म प्रत्यय, विपाक प्रत्यय, आहार प्रत्यय, इन्द्रिय प्रत्यय, ध्यान प्रत्यय, मार्ग प्रत्यय, सम्प्रयुक्त प्रत्यय, विप्रयुक्त प्रत्यय, अस्ति प्रत्यय, नास्ति प्रत्यय, विगत प्रत्यय, अविगत प्रत्यय।

इन प्रत्ययो मे अविद्या पुण्य-संस्कारो का आलम्बन और उपनिश्रय—इन दो प्रत्ययो से प्रत्यय होती है, अपुण्य-संस्कारो का अनेक प्रकार से प्रत्यय होती है और आनेञ्ज-सस्कारो का केवल उपनिश्रय प्रत्यय से ही प्रत्यय होती है। प्रतीत्यसमुत्पाद के सम्बन्ध मे दीघनिकाय मे भगवान् ने कहा है—"आनन्द! यह प्रतीत्यसमुत्पाद गम्भीर है और गम्भीर-सा दीखता भी है। इस धर्म के न जानने से ही यह प्रजा उलझे सूत-सी, गाँठ पडी रस्सी-सी, मूँज-वल्वज सी, अपाय, दुर्गति, विनिपात को प्राप्त हो, ससार से पार नही हो सकती।"

जिस प्रकार अविद्या अनेक प्रत्ययो से सस्कारो का प्रत्यय होती है, वैसे ही संस्कार भी विज्ञान के प्रत्यय होते है और ऐसे ही क्रमश. शेष भी शेष के प्रत्यय होते है और भव-चक्र चलता रहता है। च्युति के पश्चात् प्रतिसन्धि और प्रतिसन्धि के बाद पुनः च्युति का क्रम उस समय तक जारी रहता है, जब तक कि सभी दु.खो का निरोध (निर्वाण) प्राप्त नही हो जाता।

१८. दृष्टिविशुद्धि-निर्देश

विशुद्धियाँ सात है—(१) शील-विसुद्धि, (२) चित्त-विशुद्धि, (३) दृष्टि-विशुद्धि, (४) कांक्षा-वितरणविशुद्धि, (५) मार्गामार्ग-ज्ञान-दर्शनविशुद्धि, (६) प्रतिपदा-ज्ञान-दर्शनविशुद्धि, (७) ज्ञान-दर्शनविशुद्धि।

शील-विशुद्धि पूर्वोक्त सुपरिशुद्ध प्रातिमोक्ष-संवर आदि चार प्रकार के शील को कहते है। **चित्त-विशुद्धि** उपचार-सहित आठ समापत्तियाँ है। इनका वर्णन पहले शील-निर्देश मे सक्षेप मे कर ही चुके है।

पञ्चस्कध (= रूप, वेदना, सज्ञा, सस्कार और विज्ञान) को यथार्थ रूप से देखना **दृष्टि-विशुद्धि** कहलाता है। जो साधक पञ्चस्कन्ध को भली प्रकार देखता है, वह जानता है कि इस शरीर मे कोई 'मनुज' या 'सत्त्व' नही है, केवल नामरूप मात्र है। यह यन्त्र के समान शून्य है तथा नाना प्रकार के दु खो का घर है। नाम और रूप भी परस्पर आश्रित है, एक के नष्ट होने पर दूसरा भी नष्ट हो जाता है। जैसे डण्डे के मारने पर नगाडा बजता है, नगाडे से निकला हुआ शब्द दूसरा ही होता है और नगाड़ा तथा शब्द मिले हुए नही होते, नगाडा भी शब्द से शून्य होता है और शब्द नगाडा से शून्य; ऐसे ही नाम और रूप के सयोग से यह शरीर चल रहा है, किंतु दोनों निर्जीव है। इस प्रकार नाना ढग से नाम और रूप को निर्जीव रूप मे यथार्थ-देखना दृष्टि-विशुद्धि है।

१९. कांक्षा-वितरण-विशुद्धि-निर्देश

नाम और रूप के प्रति तीनो कालो मे उत्पन्न होनेवाले सन्देह को मिटाने वाला ज्ञान ही **कांक्षा-वितरण-विशुद्धि** कहलाता है। साधक जानता है कि कर्म और फल मात्र विद्यमान है। फल भी कर्म से उत्पन्न है। कर्म से पुनर्जन्म होता है। इस प्रकार संसार चल रहा है।

कर्म बारह प्रकार के होते है—दृष्टधर्म वेदनीय, उपपत्य वेदनीय, अपरापर्य वेदनीय, अहोसि कर्म। यद्गुरुक, यद्बहुल, यदासन्न, कर्तृत्व। जनक, उपस्थम्भक, उपपीडक, उपघातक। इन बारह प्रकार के कर्मो और उनके पश्चात् उनके विपाको को जानकर साधक नाम और रूप के प्रत्यय का विचार करता है। और तब वह जानता है कि "कर्म को करने वाला और फल को भोगने वाला कोई नही है। केवल शुद्ध धर्ममात्र प्रवर्तित होते है। यहाँ संसार को बनाने वाला न तो कोई देवता है और न ब्रह्मा, केवल कार्य एवं कारण से शुद्ध धर्म प्रवर्तित होते हैं।"

२०. मार्गामार्ग-ज्ञान-दर्शन-निर्देश

उचित और अनुचित मार्ग को जानने वाला ज्ञान ही **मार्गामार्ग-ज्ञान-दर्शन-विशुद्धि** है। तीन लौकिक परिज्ञाएँ है—ज्ञातपरिज्ञा, तीरणपरिज्ञा, प्रहाणपरिज्ञा। रूप आदि के लक्षण जानने की प्रज्ञा **ज्ञातपरिज्ञा** है। रूप, वेदना आदि की अनित्यता को जानने की प्रज्ञा **तीरणपरिज्ञा** है और उन्ही मे नित्य होने आदि के विचार को त्यागने की प्रज्ञा **प्रहाणपरिज्ञा** है।

इन तीनों परिज्ञाओ से साधक पञ्चस्कन्ध का विचार करता है और देखता है कि पञ्चस्कन्ध अनित्य, दु ख, रोग फोडा, काँटा, अघ, बाधा आदि है। वह कर्म, कर्मसमुत्थान, कर्मप्रत्यय; चित्त, चित्तसमुत्थान, चित्तप्रत्यय और आहार, ऋतु के अनुसार भी पञ्चस्कन्ध का मनन करके इसकी प्रवृत्ति को देखता है, तब उसे स्पष्ट रूप मे जान पडता है कि जीवन, आत्मभाव और सुखदु ख एक चित्त के साथ ही लगे रहते है। क्षण बहुत ही लघु है। वह यह जानता है कि अवभास आदि धर्म मार्ग नही है, जिससे कि निर्वाण-लाभ हो सके, प्रत्युत उपक्लेशो से विमुक्त विपश्यना-ज्ञान ही यथार्थ मार्ग है। इस प्रकार मार्ग और अमार्ग को जाननेवाला ज्ञान मार्गामार्ग-ज्ञान-दर्शन-विशुद्धि है।

२१. प्रतिपदाज्ञान-दर्शन-विशुद्धि-निर्देश

आठ ज्ञानो के अनुसार श्रेष्ठत्व-प्राप्त विपश्यना और सत्यानुलोमिक ज्ञान—इन्हे ही **प्रतिपदाज्ञान-दर्शन-विशुद्धि** कहते हैं। आठ विपश्यना-ज्ञान ये है—(१) उदयव्ययानुपश्यना ज्ञान, (२) भग्नानुपश्यना ज्ञान, (३) भयत उपस्थान, (४) आदोनवानुपश्यना ज्ञान, (५) निर्विदानुपश्यना ज्ञान, (६) मुञ्चितुकम्यता ज्ञान, (७) प्रतिसंख्यानुपश्यना ज्ञान, (८) संस्कार-उपेक्षा ज्ञान। इन ज्ञानो द्वारा अनित्य, दु:ख और अनात्म के रूप में भावना करनी चाहिए। इस भावना को उत्थान-गामिनी परिशुद्ध विपश्यना भी कहते है। इस भावना को करने वाला साधक जानता है कि सारा ससार क्षणिक, दु खमय और अनात्म है और वह इसी भावना में मनोयोग कर शान्त एव परिशुद्ध विपश्यना में सदा लगा हुआ महाभयानक संसार-दु:ख से मुक्त हो जाता है। उक्त आठो ज्ञानों का विशेष विस्तार ग्रन्थ से समझ लेना चाहिये।

२२. ज्ञानदर्शन-विशुद्धि-निर्देश

स्रोतआपत्ति मार्ग, सकृदागामी मार्ग, अनागामी मार्ग और अर्हत् मार्ग—इन चारो मार्गो का ज्ञान **ज्ञानदर्शन-विशुद्धि** कहलाता है। स्रोत आपत्ति-मार्ग-

ज्ञान की प्राप्ति के लिए साधक ने जो कुछ अनुलोम की अन्तिम विपश्यना उत्पन्न करते हुए किया है उससे अधिक कुछ नही करना है। वह उसी की भावना करते हुए सभी निमित्त-आलम्बनो को विघ्न के रूप मे देखकर अनिमित्त अर्थात् निर्वाण का आलम्बन करते-करते निर्वाण-भूमि मे उतरते हुए स्रोत-आपत्तिमार्ग-ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

इस ज्ञान के पश्चात् उससे ही प्रकट हुए दो-तीन फल चित्त उत्पन्न होते है, तब वह स्रोतआपन्न हो जाता है, वह देव-लोक तथा मनुष्य लोक में सात बार ही उत्पन्न होकर दु:ख का अन्त करने मे समर्थ हो जाता है, उसका आठवाँ जन्म नही होता।

फल के अन्त मे उसका चित्त भवाङ्ग मे उतर जाता है और फिर भवाङ्ग को काटकर मार्ग-प्रत्यवेक्षण करने के लिए मनोद्वारावर्जन उत्पन्न होता है। उसके विरुद्ध होने पर मार्ग-प्रत्यवेक्षण करने वाले जवन उत्पन्न होते है। पुन भवाङ्ग मे उतर कर उसी प्रकार फल आदि के प्रत्यवेक्षण के लिए जवन आदि उत्पन्न होते है। वह मार्ग, फल आदि का प्रत्यवेक्षण करते-करते निर्वाण का भी प्रत्यवेक्षण करने लगता है, तब उसे क्रमश प्रत्यवेक्षण करते-करते सकृदागामि-मार्ग-ज्ञान उत्पन्न होता है।

इसी प्रकार फल-चित्तो को भी जानना चाहिए। अब वह सकृदागामी हो जाता है। उसके राग, द्वेष और मोह दुर्वल हो जाते है। वह फिर केवल एक ही बार इस लोक मे आता है और आकार निर्वाण का साक्षात्कार करता है। वह सकृदागामी उक्त प्रकार से ही प्रत्यवेक्षण करके उसी आसन पर बैठे काम-राग और व्यापाद के सर्वथा प्रहाण के लिए प्रयत्न करता है और अनागामि-मार्ग-ज्ञान को प्राप्त कर लेता है।

तदनन्तर उक्त प्रकार से ही फल-चित्तो को जानना चाहिए। अब वह अनागामी हो जाता है। उसके कामराग, प्रतिहिसा, आत्मदृष्टि, मिथ्या व्रतादि और विचिकित्सा के भाव सर्वथा नष्ट हो जाते है। वह साधक मरकर साकार ब्रह्मलोक की शुद्धावास-भूमि मे उत्पन्न होता है और वही निर्वाण का साक्षात्कार कर लेता है। वह साधक शुद्धावास ब्रह्मलोक से फिर इस लोक मे जन्म ग्रहण नही करता।

अनागामी आर्यश्रावक अपने द्वारा प्राप्त मार्ग-फल का प्रत्यवेक्षण करते हुए उसी आसन पर बैठा रूप-अरूप-राग, मान, औद्धत्य और अविद्या के प्रहाण के लिए मनोयोग करता है। वह इन्द्रिय, बल और बोध्यङ्ग का उचित प्रतिपादन कर उन संस्कारों को अनित्य, दु:ख और अनात्म के रूप में ज्ञान से देखता है,

तब अर्हत्-मार्ग-ज्ञान उत्पन्न होता है। इस ज्ञान के पश्चात् फल-चित्त उत्पन्न होते है, तब वह अर्हत् हो जाता है। उसके सभी प्रकार के चित्त-मल क्षीण हो जाते है। वह इसी जन्म मे चित्त और प्रज्ञा की विमुक्ति को स्वय साक्षात्कार कर विहरता है। वह लोक में अग्र, दाक्षिणेय माना जाता है।

२३. प्रज्ञा-भावनानृशस्य-निर्देश

प्रज्ञा-भावना के माहात्म्यशाली अनन्त गुण (= आनृशस्य) है। सक्षेप मे उनमे से कुछ ये है--नाना प्रकार के क्लेशो को विध्वस करना, आर्य-फल से रस का अनुभव करना, निरोध-समापत्ति को प्राप्त कर विहरने का सामर्थ्य और आह्वानीय-भाव आदि की सिद्धि। क्योकि आर्यप्रज्ञा की भावना अनेक गुण-वाली हैं, इसलिए बुद्धिमान् व्यक्ति को उसमें मन लगाना चाहिए।

× × ×

विसुद्धिमग्ग की विषय-भूमि के ज्ञान के लिए हमने प्रत्येक निर्देश का परिचय सक्षेप में दे दिया है। स्थानाभाव के कारण, यहाँ कई विषयों का उल्लेख नही किया जा सका है, अत उन विषयों का पूर्ण ज्ञान विसुद्धिमग्ग के अध्ययन से ही हो सकेगा। फिर भी इस सक्षिप्त परिचय से जिज्ञासु को विसुद्धिमग्ग की विषय-भूमि का साधारण ज्ञान तो हो ही जायगा।



विसुद्धिमग्गे

उद्धरितगन्थानं संकेतविवरणं

अं०—१	अङ्गुत्तरनिकायो पठमो भागो, नालन्दा।
अ०—२	अङ्गुत्तरनिकायो दुतियो भागो, नालन्दा।
अं०—३	अङ्गुत्तरनिकायो ततियो भागो, नालन्दा।
अं०—४	अङ्गुत्तरनिकायो चतुत्थो भागो, नालन्दा।
अभि०—	अभिधम्मपिटक।
अभि०—१	अभिधम्मपिटके धम्मसङ्गणिपालि, नालन्दा।
अभि०—२	अभिधम्मपिटके विभङ्गपालि, नालन्दा।
अभि०—७ १	अभिधम्मपिटके पट्ठानपालि, पठमो भागो, नालन्दा।
अभि० ट्ठ०—१	धम्मसङ्गणिट्ठकथा। (अट्ठसालिनी) पूना।
खु०—१	खुद्दकनिकाये पठमो भागो, खुद्दकपाठ-धम्मपद-सुत्तनिपात-पालि, नालन्दा।
खु०—४ १	खुद्दकनिकाये चतुत्थभागे पठमो खन्धो, महानिद्देसपालि, नालन्दा।
खु०—४ · २	खुद्दकनिकाये चतुत्थभागे दुतियो खन्धो, चूळनिद्देसपालि, नालन्दा।
खु०—५	खुद्दकनिकाये पञ्चमो भागो, पटिसम्भिदामग्गपालि, नालन्दा।
दी०—१	दीघनिकायपालि पठमो भागो, सीलक्खन्धवग्गो, नालन्दा।
दी०—२	दीघनिकायपालि दुतियो भागो, महावग्गो, नाळन्दा।
दी०—३	दीघनिकायपालि ततियो भागो, पाथिकवग्गो, नालन्दा।
पे०	पेय्यालं।
म०—१	मज्झिमनिकायपालि, पठमो भागो (मूलपण्णासक), नालन्दा।
म०—२	मज्झिमनिकायपालि, दुतियो भागो (मज्झिमपण्णासक), नालन्दा।
म०—३	मज्झिमनिकायपालि, ततियो भागो (उपरिपण्णासक), नालन्दा।
मि० पञ्ह०	मिलिन्दपञ्हो, बम्बई।
वि०—१	विनयपिटके पाराजिकपालि, नालन्दा।
वि०—२	विनयपिटके पाचित्तियपालि, नालन्दा।
वि०—३	विनयपिटके महावग्गपालि, नालन्दा।

वि०—४	विनयपिटके चुल्लवग्गपालि, नालान्दा।
विसु०—	विसुद्धिमग्गो। (इदमेव सखरण)
सं०—१	संयुत्तनिकायपालि, पठमो भागो (सगाथवग्गो), नालन्दा।
स०—२	सयुत्तनिकायपालि, दुतियो भागो (निदानवग्गो खन्धवग्गो च), नालन्दा।
स०—३	सयुत्तनिकायपालि, ततियो भागो (सळायतनवग्गो), नालन्दा।
स०—४	सयुत्तनिकायपालि, चतुत्थो भागो (महावग्गो), नालन्दा।
सी०—	सीहळपोत्थके।



पिट्ठङ्कनिद्देससहितो

विसुद्धिमग्गट्ठविसयवत्थुक्कमो



सोधनपत्तं

दिट्ठिदोषा पमादा वा जातं य खलनं इध ।
खमनीयं, सोधनीयं दोसञ्ञूहि तहिं तहिं ।।

पिट्ठे	पन्तियं	असुद्धो पाठो	सुद्धो पाठो
४	टिप्पणियं	वुचति	वुच्चति
८	१८	गचति	गच्छति
९	१९	पदपट्ठान	पदट्ठान
१६	२	०धरादिताय'	०धरादिताय
३७	२१	०सामणेस्स	०सामणेरस्स
४५	११	०क्खन्धपमाय	०क्खन्धूपमाय
४८	१२	अब्भाकासिकङ्ग	अब्भोकासिकङ्ग
५१	२	रथियचाळ	रथियचोळं
५८	२२	वियट्ठकथासु	विनयट्ठकथासु
६५	६	धुतगणे	धुतगुणे
७९	१०	अवस्स	अवस्स
१२८	२२	जनन्ति	जवन्ति
१२८	२२	तयिय०	ततिय०
१२९	५	सम्पिण्डेत	सम्पिण्डेति
१३७	टिप्पणियं	द्विवा भिन्दिवा	द्विधा भिन्दित्वा
३००	,,	खेळुप्पात्त	खेळुप्पत्ति०
३२३	२८	सोळसह	सोळसहि
३२६	१३	चूळपन्थका	चूळपन्थको
३४३	२४	चेतापरिय०	चेतोपरिय०
३५३	१	आगञ्ञसुत्ते	अग्गञ्ञसुत्ते
३५८	१०	निसादित्वा	निसीदित्वा
३६७	२	परिच्छेदा	परिच्छेदो
३६८	२५	(मि० प० ९४)	(मि० प० ९०)
३९२	६	पदटठाना	पदट्ठाना
३९२	१३	कायुजुता	कायुजुकता

पिट्ठे	पन्तियं	असुद्धो पाठो	सुद्धो पाठो
४०२	९	०पादनक्खन्धा	०पादानक्खन्धा
४०२	१०	रूपुपादन०	रूपुपादान०
४०२	१२	पञ्चुपादन	पञ्चुपादान
४०६	१५	निनिच्छयो	विनिच्छयो
४०६	२६	वुत्तसु	वुत्तेसु
४११	२८	चख्खु	चक्खु
४३४	१६	कतो	एकतो
४३४	३२	वित्तक्केन	वितक्केन
४३९	३२	समप्पादो	समुप्पादो
४५१	१२	समन्तरभावेन	समनन्तरभावेन
४६१	१६	रूरावचर०	रूपावचर०
५३६	१२	विपस्सनापीती	विपस्सनापीति
५४३	१५	(खु० १–)	(खु० १–३३)
५३६	२२	०सिरसूपयो	०सिरसूपमो
५५६	२४	वुट्ठनगामिनी	वुट्ठानगामिनी
५९७	१७	आकिञ्ञायतनतो	आकिञ्चञ्ञायतनतो



तरन्तो दृश्यन्ते बहव इह गम्भीरसरसि
स्वसाराभ्यामाभ्यां हृदि विदधतः कौतुकशतम् ।
प्रविश्यान्तर्लीनं किमपि सुविवेच्योद्धरति य-
श्चिरं रुद्धश्वासः स खलु पुनरेतेषु विरलः ॥

* नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स *

विसुद्धिमग्गे

सीलनिद्देसो

पठमो परिच्छेदो

निदानादिकथा

१. "सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो, चित्तं पञ्ञं च भावयं।
आतापी निपको भिक्खु, सो इम विजटये जटं" ति ॥ (सं०१-१४)

इति हीद वुत्त। कस्मा पनेत वुत्त? भगवन्त किर सावत्थियं विहरन्तं रत्तिभागे अञ्ञतरो देवपुत्तो उपसङ्कमित्वा अत्तनो ससयसमुग्घातत्थ—

"अन्तो जटा बहि जटा जटाय जटिता पजा।
त तं गोतम पुच्छामि, को इम विजटये जट" (सं० १-१४)

ति इम पञ्ह पुच्छि।

२ तस्साय सङ्खेपत्थो—**जटा** ति। तण्हाय जालिनिया एत अधिवचन। सा हि रूपादीसु आरम्मणेसु हेट्ठूपरियवसेन पुनप्पुन उप्पज्जनतो ससिब्बनट्ठेन वेळुगुम्बादीन साखाजालसङ्खाता जटा विया ति जटा। सा पनेसा सकपरिक्खार-परपरिक्खारेसु सकअत्तभाव-परअत्तभावेसु अज्झत्तिकायतन-बाहिरायतनेसु च उपज्जनतो **अन्तो जटा बहि जटा** ति वुच्चति। ताय एव उप्पज्जमानाय **जटाय जटिता पजा**। यथा नाम वेळुगुम्बजटादीहि वेळुआदयो, एव ताय तण्हाजटाय सब्बा पि अयं सत्तनिकायसङ्खाता पजा जटिता = विनद्धा, संसिब्बिता ति अत्थो। यस्मा च एवं जटिता। **तं त गोतम पुच्छामी** ति तस्मा तं पुच्छामि। 'गोतमा' ति भगवन्तं गोत्तेन आलपति। **को इम विजटये जटं** ति। इमं एव तेधातुकं जटेत्वा ठितं जटं को विजटेय्य, विजटेतुं को समत्थो? ति पुच्छति।

३. एवम्पुट्ठो पनस्स सब्बधम्मेसु अप्पटिहतञाणचारो देवदेवो, सक्कानं अतिसक्को, ब्रह्मानं अतिब्रह्मा, चतुवेसारज्जविसारदो दसबलधरो अनावरण-ञाणो समन्तचक्खु भगवा तमत्थं विस्सज्जेन्तो—

"सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो चित्तं पञ्ञ च भावयं।
आतापी निपको भिक्खु सो इमं विजटये जटं" ॥ (सं० १-१४)

ति इमं गाथमाह।

४. इमिस्सा दानि गाथाय, कथिताय महेसिना।
वण्णयन्तो यथाभूत, अत्थं सीलादिभेदनं॥
सुदुल्लभ लभित्वान, पब्बज्जं जिनसासने।
सीलादिसङ्गहं खेम, उजु मग्गं विसुद्धिया॥
यथाभूतं अजानन्ता, सुद्धिकामा पि ये इध।
विसुद्धिं नाधिगच्छन्ति, वायमन्ता पि योगिनो॥
तेसं पामोज्जकरणं, सुविसुद्धविनिच्छय।
महाविहारवासीनं, देसनानयनिस्सित॥
विसुद्धिमग्गं भासिस्स, त मे सक्कच्च भासतो।
विसुद्धिकामा सब्बे पि, निसामयथ साधवो ति॥

५. तत्थ[1] **विसुद्धी** ति सब्बमलविरहितं अच्चन्तपरिसुद्ध निब्बानं वेदितब्बं। तस्सा विसुद्धिया मग्गो ति विसुद्धिमग्गो। **मग्गो** ति अधिगमूपायो वुच्चति। तं विसुद्धिमग्ग भासिस्सामी ति अत्थो।

६ सो पनायं **विसुद्धिमग्गो** कत्थचि **विपस्सनामत्तवसेनेव** देसितो। यथाह—

"सब्बे सङ्खारा अनिच्चा ति, यदा पञ्ञाय पस्सति।
अथ निब्बन्दति दुक्खे, एस मग्गो विसुद्धिया" (खु० १-४३) ति॥

कत्थचि **झानपञ्ञावसेन**। यथाह—

"यम्हि झानं च पञ्ञा च, स वे निब्बानसन्तिके" (खु० १–५२) ति।

कत्थचि **कम्मादिवसेन**। यथाह—

"कम्मं विज्जा च धम्मो च, सीलं जीवितमुत्तम।
एतेन मच्चा सुज्झन्ति, न गोत्तेन धनेन वा" (म० ३–३५०) ति॥

कत्थचि **सीलादिवसेन**। यथाह—

"सब्बदा सीलसम्पन्नो, पञ्ञवा सुसमाहितो।
आरद्धविरियो पहितत्तो, ओघ तरति दुत्तर" (सं० १–५१) ति॥

कत्थचि **सतिपट्ठानादिवसेन**। यथाह—

"एकायनो[2] अय, भिक्खवे, मग्गो सत्तान विसुद्धिया पे० निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं चत्तारो सतिपट्ठाना" (दी० २–२१७) ति।

---

१. तत्थेति। विसुद्धिमग्ग-सद्दे। २ एकायनो ति एकमग्गो। मग्गपरियायो हि इध अयनसद्दो, तस्मा 'एकपथभूतो अयं भिक्खवे मग्गो, न द्वेधापथभूतो' ति अत्थो। एकं वा निब्बानं अयति गच्छती ति एकायनो।

सम्मप्पधानादीसु पि एसेव नयो। इमस्मि पन पञ्हाव्याकरणे **सीलादिवसेन** देसितो।

७ तत्राय[1] सङ्खेपवण्णना—**सीले पतिट्ठाया** ति सीले ठत्वा। परिपूरयमानोयेव चेत्थ सीले ठितो ति वुच्चति, तस्मा सीलपरिपूरणेन सीले पतिट्ठहित्वा ति अयमेत्थ अत्थो। **नरो** ति सत्तो। **सपञ्ञो** ति। कम्मजतिहेतुकपटिसन्धिपञ्ञाय पञ्ञवा। **चित्तं पञ्ञं च भावयं** ति। समाधिं चेव विपस्सनं च भावयमानो। चित्तसीसेन हेत्थ समाधि निद्दिट्ठो, पञ्ञानामेन च विपस्सना ति। **आतापी** ति। विरियवा। विरियं हि किलेसानं आतापनपरितापनट्ठेन आतापो ति वुच्चति, तदस्स अत्थी ति आतापी। **निपको** ति नेपक्कं वुच्चति पञ्ञा, ताय समन्नागतो ति अत्थो। इमिना पदेन पारिहारिकपञ्ञं दस्सेति। इमस्मि हि पञ्हाव्याकरणे तिक्खत्तुं पञ्ञा आगता। तत्थ पठमा जातिपञ्ञा, दुतिया विपस्सनापञ्ञा, ततिया सब्बकिच्चपरिणायिका पारिहारिकपञ्ञा। संसारे भयं इक्खती ति **भिक्खु**। **सो इमं विजटये जटं** ति। सो इमिना च सीलेन, इमिना च चित्तसीसेन निद्दिट्ठसमाधिना, इमाय च तिविधाय पञ्ञाय, इमिना च आतापेना ति छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु। सेय्यथापि नाम पुरिसो पथवियं पतिट्ठाय सुनिसितं सत्थं उक्खिपित्वा महन्तं वेळुगुम्बं विजटेय्य, एवमेव सीलपथवियं पतिट्ठाय समाधिसिलायं सुनिसितं विपस्सनापञ्ञासत्थं विरियबलपग्गहितेन पारिहारिकपञ्ञाहत्थेन उक्खिपित्वा सब्बं पि तं अत्तनो सन्ताने पतितं तण्हाजटं विजटेय्य = सञ्छिन्देय्य, सम्पदालेय्य। मग्गक्खणे पनेस तं जटं विजटेति नाम। फलक्खणे विजटितजटो सदेवकस्स लोकस्स अग्गदक्खिणेय्यो होति।

तेनाह भगवा—

> "सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो, चित्तं पञ्ञं च भावयं।
> आतापी निपको भिक्खु, सो इमं विजटये जटं" ॥ ति।

८. तत्रायं[2] याय पञ्ञाय **सपञ्ञो** ति वुत्तो, तत्रास्स[3] करणीयं नत्थि। पुरिमकम्मानुभावेनेव हिस्स सा सिद्धा। **आतापी निपको** ति। एत्थ वुत्तविरियवसेन पन तेन सातच्चकारिना पञ्ञावसेन च सम्पजानकारिना हुत्वा सीले पतिट्ठाय चित्तपञ्ञावसेन वुत्ता समथविपस्सना भावेतब्बा ति इममत्र भगवा सीलसमाधिपञ्ञामुखेन विसुद्धिमग्गं दस्सेति।

---

१ तत्रा ति। तस्स उपरि वुच्चमानायं गाथायं। २ तत्रा ति। तस्स गाथायं। अयं ति। "नरो" ति च "भिक्खू" ति च वुत्तो योगावचरो। ३. तत्रा ति। तस्स पञ्ञाय। अस्सा ति। भिक्खुनो।

९. एत्तावता हि तिस्सो सिक्खा[1], तिविधकल्याण सासनं[2], तेविज्जतादीनं उपनिस्सयो[3], अन्तद्वयवज्जन[4]मज्झिमपटिपत्तिसेवनानि[5], अपायादिसमतिक्कमनुपायो, तोहाकारेहि किलेसप्पहान, वीतिक्कमादीन पटिपक्खो[6], सकिलेसत्तयविसोधनं, सोतापन्नादिभावस्स च कारण पकासित होति।

१० कथ ? एत्थ हि सीलेन अधिसालसिक्खा पकासिता होति, समाधिना अधिचित्तसिक्खा, पञ्ञाय अधिपञ्ञासिक्खा।

सीलेन च सासनस्स आदिकल्याणता पकासिता होति। "को चादि कुसलान धम्मान, सील च सुविसुद्ध" (स० ४–१२३) ति हि वचनतो, "सब्बपापस्स अकरण" (खु० १–३५) ति आदिवचनतो च सील सासनस्स आदि, त च कल्याण, अविप्पटिसारादिगुणावहत्ता। समाधिना मज्झेकल्याणता पकासिता होति। "कुसलस्स उपसम्पदा" (खु० १–३५) ति आदिवचनतो हि समाधि सासनस्स मज्झे, सो च कल्याणो, इद्धिविधादिगुणावहत्ता। पञ्ञाय सासनस्स परियोसानकल्याणता पकासिता होति। "सचित्तपरियोदपनं[7], एत बुद्धान सासन" खु० १–३५) ति हि वचनतो, पञ्ञुत्तरतो च पञ्ञा सासनस्स परियोसानं, सा च कल्याण, इट्ठानिट्ठेसु तादिभावावहनतो।

"सेलो यथा एकघनो वातेन न समीरति।
एवं निन्दापससासु, न समिञ्जन्ति पण्डिता"॥ (खु० १–२५)

ति हि वुत्तं।

११. तथा सीलेन तेविज्जताय उपनिस्सयो पकासितो होति। सीलसम्पत्ति हि निस्साय तिस्सो विज्जा पापुणाति, न ततो पर। समाधिना छळभिञ्ञताय उपनिस्सयो पकासितो होति। समाधिसम्पदं हि निस्साय छ अभिञ्ञा पापुणाति, न ततो परं। पञ्ञाय पटिसम्भिदापभेदस्स उपनिस्सयो पकासितो होति। पञ्ञासम्पत्ति हि निस्साय चतस्सो पटिसम्भिदा पापुणाति, न अञ्ञेन कारणेन।

सीलेन च कामसुखल्लिकानुयोगसङ्खातस्स अन्तस्स वज्जनं पकासितं होति। समाधिना अत्तकिलमथानुयोगसङ्खातस्य। पञ्ञाय मज्झिमाय पटिपत्तिया सेवन पकासितं होति।

१२. तथा सीलेन अपायसमतिक्कमनुपायो पकासितो होति, समाधिना कामधातुसमतिक्कमनुपायो, पञ्ञाय सब्बभवसमतिक्कमनुपायो।

---

१. सिक्खा ति। सिक्खितब्बट्ठेन सिक्खा। सिक्खनं चेत्थ आसेवनं दट्ठब्ब। सीलादि धम्मेहि संवरणादिवसेन आसेवन्तो ते सिक्खती ति वु चति। २ सासन ति। पटिपत्तिसेवनं। ३ उपनिस्सयो ति। बलवकारण। ४. वज्जन ति। अनुपगमनं। ५ सेवना ति। भावना। ६. पटिपक्खो ति। पहायकपटिपक्खो। ७. परियोदपनति। विसोधनं।

सीलेन च तदङ्गप्पहानवसेन किलेसप्पहान पकासितं होति, समाधिना विक्खम्भनप्पहानवसेन, पञ्ञाय समुच्छेदप्पहानवसेन ।

१३ तथा सीलेन किलेसान वीतिक्कमपटिपक्खो पकासितो होति, समाधिना परियुट्ठानपटिपक्खो, पञ्ञाय अनुसयपटिपक्खो ।

सीलेन च दुच्चरितसङ्किलेसविसोधनं पकासित होति, समाधिना तण्हासङ्किलेसविसोधनं, पञ्ञाय दिट्ठिसङ्किलेसविसोधनं ।

१४. तथा सीलेन सोतापन्न-सकदागामिभावस्स कारणं पकासितं होति, समाधिना अनागामिभावस्स, पञ्ञाय अरहत्तस्स । सोतापन्नो हि "सीलेसु परिपूरकारी" (अ० १–२१४) ति वुत्तो । तथा सकदागामी । अनागामी पन "समाधिस्मि परिपूरकारी" (अ० १–२१४) ति । अरहा पन "पञ्ञाय परिपूरकारी" (अ० १–२१५) ति ।

१५ एव एत्तावता तिस्सो सिक्खा, तिविधकल्याण सासन, तेविज्जतादीनं उपनिस्सयो, अन्तद्वयवज्जनमज्झिमपटिपत्तिसेवनानि, अपायादिसमतिक्कमनुपायो, तीहाकारेहि किलेसप्पहानं, वीतिक्कमादीन पटिपक्खो, सङ्किलेसत्तयविसोधन, सोतापन्नादिभावस्स च कारणं ति इमे नव, अञ्ञे[1] च एवरूपा[2] गुणत्तिका पकासिता होन्ती ति ॥

सीलसरूपादिकथा

१६ एव अनेकगुणसङ्गाहकेन सील-समाधि-पञ्ञामुखेन देसितो पि पनेस **विसुद्धिमग्गो** अतिसङ्खेपदेसितो येव होति । तस्मा नाल सब्बेसं उपकाराया ति वित्थारमस्स दस्सेतु सीलं ताव आरब्भ इदं पञ्हाकम्म होति—

कि सीलं ? केनट्ठेन सील ? कानस्स लक्खणरसपच्चुपट्ठानपदट्ठानानि ? किमानिसंसं सीलं ? कतिविध चेत सीलं ? को चस्स सङ्किलेसो ? किं वोदान[3] ति ?

(क) सीलसरूपं

१७. तत्रिदं विस्सज्जन—

किं सीलं ति ? पाणातिपातादीहि वा विरमन्तस्स वत्तपटिपत्तिं वा पूरेन्तस्स चेतनादयो धम्मा । वुत्तं हेतं **पटिसम्भिदायं**—"किं सीलं ति ? चेतना सीलं, चेतसिक सीलं, संवरो सील, अवीतिक्कमो सीलं" (खु० ५–४९) ति ।

---

१ अञ्ञे चा ति । तयो विवेका, तीणि कुसलमूलानि, तीणि विमोक्खमुखानि, तीणि इन्द्रियानी ति एवमादयो सिक्खत्तिकादीहि अञ्ञे गुणत्तिका ।

२. एवरूपा ति । यादिसका सिक्खत्तिकादयो इध सीलादीहि पकासिता होन्ति, एदिसा ।

३ वोदान ति । विसुद्धि ।

तत्थ **चेतना सीलं** नाम पाणातिपातादीहि वा विरमन्तस्स वत्तपटिपत्तिं वा पूरेन्तस्स चेतना।

चेतसिकं सीलं नाम पाणातिपातादीहि विरमन्तस्स विरति।

अपि च चेतना सील नाम पाणातिपातादीनि पजहन्तस्स सत्त कम्मपथ-चेतना। चेतसिकं सील नाम "अभिज्झ पहाय विगताभिज्झेन चेतसा विहरती" (दी० १-६३) ति आदिना नयेन वुत्ता अनभिज्झाब्यापादसम्मादिट्ठिधम्मा।

संवरो सीलं ति एत्थ पञ्चविधेन सवरो वेदितब्बो—१. पातिमोक्खसंवरो, २. सतिसंवरो, ३ ञाणसंवरो, ४. खन्तिसवरो, ५. वीरियसवरो ति। तत्थ "इमिना पातिमोक्खसंवरेन उपेतो होति समुपेतो" (अभि० २-२६१) ति अय **पातिमोक्खसंवरो**। "रक्खति चक्खुन्द्रियं, चक्खुन्द्रिये संवरं आपज्जती" ति (दी० १-६२) अय **सतिसंवरो**।

'यानि सोतानि लोकस्मि (अजिता ति भगवा), सति तेस निवारणं।
सोतानं संवरं ब्रूमि, पञ्ञायेते पिधिय्यरे" (खु० १-४२४) ति।

अयं **ञाणसंवरो**। पच्चयपटिसेवनं पि एत्थेव समोधानं गच्छति। यो पनाय "खमो होति सीतस्स उण्हस्सा" ति (म० १-१५) आदिना नयेन आगतो अयं **खन्तिसंवरो** नाम। "यो चाय उप्पन्न कामवितक्क नाधिवासेती" (म० १-१६) ति आदिना नयेन आगतो, अय **विरियसंवरो** नाम। आजीव-पारिसुद्धि पि एत्थेव समोधान गच्छति। इति अय पञ्चविधो पि संवरो, या च पापभीरुकानं कुलपुत्तान सम्पत्तवत्थुत्तो विरति, सब्बं पेतं संवरसील ति वेदितब्बं।

अवीतिक्कमो सीलं ति समादिन्नसीलस्स कायिकवाचसिको अनतिक्कमो। इद ताव "किं सीलं" ति पञ्हस्स विस्सज्जन॥

(ख) केनट्ठेन सील

१८ अवसेसेसु **केनट्ठेन सीलं** ति? सीलनट्ठेन सीलं। किमिद सीलनं नाम? (१) समाधानं[1] वा, कायकम्मादीन सुसील्यवसेन अविप्पकिण्णता ति अत्थो। (२) उपधारण[2] वा; कुसलानं धम्मानं पतिट्ठानवसेन आधारभावो ति अत्थो। एत्तदेव हेत्थ अत्थद्वयं सद्दलक्खणविदू अनुजानन्ति।

---

१. समाधानं ति। कायकम्मादीनं सण्ठपनं, सयमन।

२. उपधारणं ति। अधिट्ठानं, मूलभावो।

३ आदि-सद्देन सयन्ति अकुसला एतस्मिं सति अपविट्ठा होन्ती ति सील, सुपन्ति वा तेन विहतुस्साहानि सब्बदुच्चरितानी ति सीलं, सब्बेसं वा कुसलधम्मानं पवेसा-रहसाला ति सीलं ति एवमादीनं सङ्गहो दट्ठब्बो।

अञ्ञे पन—सिरट्ठो सीलत्थो, सीतलट्ठो सीलत्थो ति एवमादिना[3] पि नयेनेत्थ अत्थं वण्णयन्ति ॥

(ग) सीलस्स लक्खणादीनि

१९ इदानि **कानस्स लक्खणरसपच्चुपट्ठानपदट्ठानानी** ति ? एत्थ—

सीलनं **लक्खणं** तस्स भिन्नस्सा पि अनेकधा।
सनिदस्सनत्त रूपस्स यथा भिन्नस्सनेकधा॥

यथा हि नीलपीतादिभेदेन अनेकधा भिन्नस्सापि रूपायतनस्स सनिदस्सनत्तं लक्खणं, नीलादिभेदेन भिन्नस्सापि सनिदस्सनभावानतिक्कमनतो। तथा सीलस्स चेतनादिभेदेन अनेकधा भिन्नस्सापि यदेत कायकम्मादीन समाधानवसेन कुसलान धम्मानं पतिट्ठानवसेन वुत्तं सीलन, तदेव लक्खण; चेतनादिभेदेन भिन्नस्सापि समाधान-पतिट्ठानभावानतिक्कमनतो।

एवलक्खणस्स पनस्स—

दुस्सील्यविद्धसनता अनवज्जगुणो तथा।
किच्चसम्पत्ति अत्थेन **रसो** नाम पवुच्चति॥

तस्मा इद सील नाम किच्चट्ठेन रसेन दुस्सील्यविद्धसनरस, सम्पत्तिअत्थेन रसेन अनवज्जरस ति वेदितब्ब। लक्खणादासु हि किच्चमेव सम्पत्ति वा **रसो** ति वुच्चति।

सोचेय्य**पच्चुपट्ठानं** तयिद, तस्स विञ्ञुहि।
ओत्तप्प च हिरी चेव **पदपट्ठानं** ति वण्णित॥

तयिदं सील "कायसोचेय्यं, वचीसोचेय्यं, मनोसोचेय्य" (अ० १–२५२) ति एवं वुत्तसोचेय्यपच्चुपट्ठानं, सोचेय्यभावेन पच्चुपट्ठाति, गहणभावं गच्छति। हिरोत्तप्प च पनस्स विञ्ञूहि पदट्ठानं ति वण्णित, आसन्नकारण ति अत्थो। हिरोत्तप्पे हि सति सील उप्पज्जति चेव तिट्ठति च। असति नेव उप्पज्जति, न तिट्ठती ति। एव सीलस्स लक्खणरसपच्चुपट्ठानपदट्ठानि वेदितब्बानि॥

(घ) सीलानिसंसं

२० **किमानिसंसं सीलं** ति ? अविप्पटिसारादिअनेकगुणपटिलाभानिसंसं। वुत्तं हेत—"अविप्पटिसारत्थानि खो, आनन्द, कुसलानि सीलानि अविप्पटिसारानिससानी" (अ० ४–३५७) ति।

२१ अपर पि वुत्तं—"पञ्चिमे, गहपतयो, आनिसंसा सीलवतो सीलसम्पदाय। कतमे पञ्च ? इध, गहपतयो, सीलवा सीलसम्पन्नो अप्पमादाधिकरणं महन्तं भोगक्खन्धं अधिगच्छति, अय पठमो आनिससो सीलवतो सीलसम्पदाय।

"पुन च पर, गहपतयो, सीलवतो सीलसम्पन्नस्स कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गच्छति, अयं दुतियो आनिसमो सीलवतो सीलसम्पदाय।

"पुन च परं, गहपतयो, सीलवा सीलसम्पन्नो यञ्ञदेव परिस उपसङ्कमति, यदि खत्तियपरिस यदि ब्राह्मणपरिस यदि गहपतिपरिस यदि समणपरिसं, विसारदो उपसङ्कमति अमङ्कुभूतो, अय ततियो आनिससो सीलवतो सीलसम्पदाय।

"पुन च परं, गहपतयो, सीलवा सीलसम्पन्नो असम्मूळ्हो काल करोति, अयं चतुत्थो आनिससो सीलवतो सीलसम्पदाय।

"पुन च पर, गहपतयो, सीलवा सीलसम्पन्नो कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोक उपपज्जति, अय पञ्चमो आनिससो सीलवतो सीलसम्पदाया" (दी० २–६९) ति।

२२. अपरे पि—"आकङ्खेय्य चे, भिक्खवे, भिक्खु सब्रह्मचारीनं पियो च अस्स, मनापो च, गरु च भावनीयो चा ति, सीलेस्वेवस्स परिपूरकारी" (म० १–४४) ति आदिना नयेन पियमनापतादयो आसवक्खयपरियोसाना अनेका सीलानिससा वुत्ता। एव अविप्पटिसारादिअनेकगुणानिसस सीलं॥

२३. अपि च—

सासने कुलपुत्तानं, पतिट्ठा नत्थि यं विना।
आनिसंसं परिच्छेदं, तस्स सीलस्स को वदे॥
न गङ्गा यमुना चा पि, सरभू वा सरस्वती।
निन्नगा[1] वा चिरवती, मही वा पि महानदी॥
सक्कुणन्ति विसोधेतुं, तं मलं इध पाणिनं।
विसोधयति सत्तानं, य वे सीलजलं मलं॥
न त सजलदा वाता, न चापि हरिचन्दनं।
नेव हारा न मणयो, न चन्दकिरणङ्कुरा॥
समयन्तीध सत्तानं परिळाह सुरक्खितं।
य समेति इदं अरियं सीलं अच्चन्तसीतलं॥
सीलगन्धसमो गन्धो, कुतो नाम भविस्सति।
यो समं अनुवाते च, पटिवाते च वायति॥
सग्गारोहणसोपान, अञ्ञं सीलसम कुतो।
द्वारं वा पन निब्बाननगरस्स पवेसने॥

१. निन्नगा ति। नदी।

सोभन्तेव न राजानो मुत्तामणिविभूसिता।
यथा सोभन्ति यतिनो सीलभूसनभूसिता॥
अत्तानुवादादिभयं विद्धंसयति सब्बसो।
जनेति कित्तिहासं च सीलं सीलवत सदा॥
गुणान मूलभूतस्स, दोसानं बलघातिनो।
इति सीलस्स विञ्ञेय्यं, आनिससकथामुख ति॥

सीलप्पभेदो

२४. इदानि य वुत्त **कतिविधं चेतं सीलं** ति, तत्रिद विस्सज्जन—

सब्बमेव ताव इदं सील अत्तनो सीलनलक्खणेन **एकविधं**।

१ चारित्त-वारित्तवसेन **दुविधं**, तथा २ आभिसमाचारिक-आदिब्रह्मचरियक-वसेन, ३ विरति-अविरतिवसेन, ४ निस्सित-अनिस्सितवसेन ५. कालपरियन्त-आपाणकोटिकवसेन, ६ सपरियन्त-अपरियन्तवसेन, ७. लोकिय-लोकुत्तरवसेन च।

तिविधं १ हीन-मज्झिम-पणीतवसेन, तथा २ अत्ताधिपतेय्य-लोकाधिपतेय्य-धम्माधिपतेय्यवसेन, ३ परामट्ठ-अपरामट्ठ-पटिप्पस्सद्धिवसेन, ४ विसुद्ध-अविसुद्ध-वेमतिकवसेन, ५ सेक्ख-असेक्ख-नेवसेक्खनासेक्खवसेन च।

चतुब्बिधं १ हानभागिय-ठितिभागिय-विसेसभागिय-निब्बेधभागियवसेन, तथा २ भिक्खु-भिक्खुनी-अनुपसम्पन्न-गहट्ठसीलवसेन, ३ पकति-आचार-धम्मता-पुब्बहेतुकसीलवसेन, ४ पातिमोक्खसंवर-इन्द्रियसंवर-आजीवपारिसुद्धि-पच्चय-सन्निस्सितसीलवसेन च।

पञ्चविधं परियन्तपारिसुद्धिसीलादिवसेन। वुत्तं पि चेतं **पटिसम्भिदाय**— "पञ्च सीलानि—१. परियन्तपारिसुद्धिसीलं, २ अपरियन्तपारिसुद्धिसील, ३. परिपुण्णपारिसुद्धिसील, ४. अपरामट्ठपारिसुद्धिसीलं, ५. पटिपस्सद्धिपारिसुद्धि-सीलं" (खु० ५–४७) ति।

तथा पहान-वेरमणी-चेतना-सवरअवीतिक्कमवसेन।

सीलेककदुकानि

२५ तत्थ **एकविधकोट्ठासे** अत्थो वुत्तनयेनेव वेदितब्बो।

२६ **दुविधकोट्ठासे** य भगवता 'इद कत्तब्बं' ति पञ्ञत्तसिक्खापदपूरणं, तं **चारित्तं**। य 'इद न कत्तब्ब' ति[1] पटिक्खित्तस्स अकरण[1], तं **वारित्तं**। तत्राय वचनत्थो—चरन्ति तस्मिं, सीलेसु परिपूरकारिताय पवत्तन्ती ति चारित्तं। वारितं तायन्ति रक्खन्ति तेना ति वारित्तं। तत्थ सद्धाविरियसाधनं चारित्तं, सद्धासाधन वारित्तं। एवं चारित्त-वारित्तवसेन दुविध।

१–१ 'इदं दुच्चरित न कत्तब्बं' ति भगवता पटिक्खित्तस्स विरमणं।

दुतियदुके, अभिसमाचारो ति उत्तमसमाचारो। अभिसमाचारो एव **आभिसमाचारिकं**। अभिसमाचारं वा आरब्भ पञ्ञत्त आभिसमाचारिकं, आजीवट्ठमकतो[1] अवसेससीलस्सेत अधिवचन। मग्गब्रह्मचरियस्स आदिभावभूतं ति आदिब्रह्मचरियक, आजीवट्ठमकसीलस्सेतं अधिवचन। त हि मग्गस्स आदिभावभूत, पुब्बभागे येव परिसोधेतब्बत्तो। तेनाह—"पुब्बे व खो पनस्स कायकम्म वचीकम्म आजीवो सुपरिसुद्धो होती" (म० ३–३९१) ति। यानि वा सिक्खापदानि "खुद्दानुखुद्दकानी" ति वुत्तानि, इदं आभिसमाचारिकसीलं। सेस **आदिब्रह्मचरियक**। उभतोविभङ्गपरियापन्न[2] वा आदिब्रह्मचरियक। खन्धकवत्तपरियापन्नं आभिसमाचारिक। तस्स सम्पत्तिया आदिब्रह्मचरियकं सम्पज्जति। तेनेवाह—"सो बत, भिक्खवे, भिक्खु आभिसमाचारिक धम्मं अपरिपूरेत्वा आदिब्रह्मचरियक धम्मं परिपूरेस्सती ति नेत ठान विज्जति" (अं० २–२८४) ति। एव आभिसमाचारिक-आदिब्रह्मचरियकवसेन दुविध।

ततियदुके, पाणातिपातादीहि वेरमणिमत्त **विरतिसीलं**। सेसं चेतनादि **अविरतिसीलं** ति। एवं विरति-अविरतिवसेन दुविधं।

चतुत्थदुके, निस्सयो ति द्वे निस्सया—१ तण्हानिस्सयो च, २. दिट्ठिनिस्सयो च। तत्थ य "इमिनाहं सीलेन देवो वा भविस्सामि, देवञ्ञतरो बा" (दी० ३–१८५) ति एव भवसम्पत्ति आकङ्खमानेन पवत्तित, इदं तण्हानिस्सितं। यं "सीलेन सुद्धी" ति एव सुद्धिदिट्ठिया पवत्तित, इद दिट्ठिनिस्सित। य पन लोकुत्तरं लोकिय च तस्सेव सम्भारभूत, इद अनिस्सितं ति। एव निस्सितानिस्सितवसेन दुविध।

पञ्चमदुके, कालपरिच्छेद कत्वा समादिन्नं सील **कालपरियन्तं**। यावजीवं समादियित्वा तथेव पवत्तितं **आपाणकोटिकं** ति एव कालपरियन्त-आपाणकोटिकवसेन दुविध।

छट्ठदुके, लाभ-यस-ञाति-अङ्ग-जीवितवसेन दिट्ठपरियन्तं **सपरियन्तं** नाम। विपरीत **अपरियन्तं**। वुत्त पि चेत **पटिसम्भिदाय**—"कतमं त सील सपरियन्त? अत्थि सील लाभपरियन्तं, अत्थि सीलं यसपरियन्तं, अत्थि सील ञातिपरियन्त, अत्थि सीलं अङ्गपरियन्त, अत्थि सीलं जीवितपरियन्तं। कतम त सील लाभपरियन्त? इधेकच्चो लाभहेतु लाभपच्चया लाभकारणा यथासमादिन्नं सिक्खापदं वीतिक्कमति, इदं त सीलं लाभपरियन्त" (खु० ५–४८) ति। एतेनेव उपायेन इतरानि पि वित्थारेतब्बानि। अपरियन्तविस्सज्जने पि वुत्त—

१ आजीवो च अट्ठमो यस्स सीलस्स तं आजीवट्ठमकं, ततो।

२. भिक्खु-भिक्खुनीपातिमोक्खे परियापन्नं।

"कतमं तं सीलं न लाभपरियन्त ? इधेकच्चो लाभहेतु लाभपच्चया लाभकारणा यथासमादिन्नं सिक्खापद वीतिक्कमाय चित्त पि न उप्पादेति, किं सो वीतिक्कमिस्सति ! इदं त सील न लाभपरियन्त" (खु० ५-४८) ति। एतेनेव उपायेन इतरानि पि वित्थारेतब्बानि। एव सपरियन्तापरियन्तवसेन दुविधं।

सत्तमदुके, सब्ब पि सासव सील **लोकियं**, अनासव **लोकुत्तरं**। तत्थ लोकियं भवविसेसावहं होति, भवनिस्सरणस्स च सम्भारो। यथाह—"विनयो संवरत्थाय, संवरो अविप्पटिसारत्थाय, अविप्पटिसारो पामोज्जत्थाय, पामोज्जं पीतत्थाय, पीति पस्सद्धत्थाय, पस्सद्धि सुखत्थाय, सुखं समाधत्थाय, समाधि यथाभूतञाणदस्सनत्थाय, यथाभूतञाणदस्सन निब्बिदत्थाय, निब्बिदा विरागत्थाय, विरागो विमुत्तत्थाय, विमुत्ति विमुत्तिञाणदस्सनत्थाय, विमुत्तिञाणदस्सनं अनुपादापरिनिब्बानत्थाय। एतदत्था कथा, एतदत्था मन्तना, एतदत्था उपनिसा, एतदत्थ सोतावधानं, यदिद अनुपादाचित्तस्स विमोक्खो" (वि० ५-२९०) ति। लोकुत्तरं भवनिस्सरणावह होति, पच्चवेक्खणञाणस्स च भूमी ति। एवं लोकिय-लोकुत्तरवसेन दुविध।

सीलत्तिकानि

२७ **तिकेसु पठमत्तिके**, हीनेन छन्देन चित्तेन वीरियेन वीमंसाय वा पवत्तित **हीनं**। मज्झिमेहि छन्दादीहि पवत्तितं **मज्झिमं**। पणीतेहि **पणीतं**। यसकामताय वा समादिन्नं हीनं। पुञ्ञफलकामताय मज्झिमं। 'कत्तब्बमेविदं' ति अरियभावं निस्साय समादिन्नं पणीतं। "अहमस्मि सीलसम्पन्नो, इमे पनञ्ञे भिक्खू दुस्सीला पापधम्मा" (म० १-२५०) ति एवं अत्तुक्कसनपरवम्भनादीहि उपक्किलिट्ठं वा हीनं। अनुपक्किलिट्ठं लोकियं सीलं मज्झिमं। लोकुत्तरं पणीतं। तण्हावसेन वा भवभोगत्थाय पवत्तितं हीनं। अत्तनो विमोक्खत्थाय पवत्तित मज्झिमं। सब्बसत्तानं विमोक्खत्थाय पवत्तित पारमितासीलं पणीत ति,। एव हीनमज्झिमपणीतवसेन तिविधं।

दुतियत्तिके, अत्तनो अननुरूपं पजहितुकामेन अत्तगरुना अत्तनिगारवेन पवत्तित **अत्ताधिपतेय्यं**। लोकापवाद परिहरितुकामेन लोकगरुना लोके गारवेन पवत्तितं **लोकाधिपतेय्यं**। धम्ममहत्त पूजेतुकामेन धम्मगरुना धम्मगारवेन पवत्तितं **धम्माधिपतेय्यं** ति। एव अत्ताधिपतेय्यादिवसेन तिविधं।

ततियत्तिके, य दुकेसु 'निस्सितं' ति वुत्तं, तं तण्हादिट्ठीहि परामट्ठत्ता **परामट्ठं**। पुथुज्जनकल्याणकस्स मग्गसम्भारभूतं सेक्खान च मग्गसम्पयुत्तं **अपरामट्ठं**। सेक्खासेक्खानं फलसम्पयुत्तं **पटिपस्सद्धं** ति। एव परामट्ठादिवसेन तिविध।

चतुत्थत्तिके, य आपत्तिं अनापज्जन्तेन पूरित, आपज्जित्वा वा पुन कतपटिकम्म, त **विसुद्धं**। आपत्तिं आपन्नस्स अकतपटिकम्मं **अविसुद्ध**। वत्थुम्हि वा आपत्तिया वा अज्झाचारे वा वेमतिकस्स सीलं **वेमतिकसीलं** नाम। तत्थ योगिना अविसुद्धं सील विसोधेतब्बं, वेमतिके वत्थुज्झाचारं अकत्वा विमति पटिविनेतब्बा—"इच्चस्स फासु भविस्सती" ति। एवं विसुद्धादिवसेन तिविधं।

पञ्चमत्तिके, चतूहि अरियमग्गेहि, तीहि च सामञ्ञफलेहि सम्पयुत्तं सीलं **सेक्खं**। अरहत्तफलसम्पयुत्त **असेक्खं**, सेसं **नेवसेक्खनासेक्ख** ति। एवं सेक्खादिवसेन तिविध।

पटिसम्भिदायं पन, यस्मा लोके तेसं तेस सत्तान पकति पि सीलं ति वुच्चति, य सन्धाय—"अयं सुखसीलो, अयं दुक्खसीलो, अयं कलहसीलो, अयं मण्डनसीलो" ति भण न्त; तस्मा तेन परियायेन—"तीणि सीलानि, कुसलसीलं अकुसलसीलं अब्याकतसीलं" (खु० ५-४९) ति। एव कुसलादिवसेन पि तिविध ति वुत्त। तत्थ अकुसलं इमस्मिं अत्थे अधिप्पेतस्स सीलस्स लक्खणादीसु एकेन पि न समेती ति इध न उपनीत। तस्मा वुत्तनयेनेवस्स तिविधता वेदितब्बा।

सीलचतुक्कानि

२८ **चतुक्केसु पठमचतुक्के**,

योध सेवति दुस्सीले, सीलवन्ते न सेवति।
वत्थुवीतिक्कमे दोसं न पस्सति अविद्दसु॥
मिच्छासङ्कप्पबहुलो इन्द्रियानि न रक्खति।
एवरूपस्स वे सील जायते **हानभागियं**॥
यो पनत्तमनो होति सीलसम्पत्तिया इध।
कम्मट्ठानानुयोगम्हि न उप्पादेति मानसं॥
तुट्ठस्स सीलमत्तेन अघटन्तस्स उत्तरि।
तस्स त **ठितिभागियं** सील भवति भिक्खु नो॥
सम्पन्नसीलो घटति समाधत्थाय यो पन।
विसेसभागियं सीलं होति एतस्स भिक्खुनो॥
अतुट्ठो सीलमत्तेन निब्बिद योनुयुञ्जति।
होति **निब्बेधभागियं** सीलमेतस्स भिक्खुनो ति॥

एवं हानभागियादिवसेन चतुब्बिध।

दुतियचतुक्के, भिक्खू आरब्भ पञ्ञत्तसिक्खापदानि, यानि च नेसं भिक्खुनीनं पञ्ञत्तितो रक्खितब्बानि, इदं **भिक्खुसीलं**। भिक्खुनियो आरब्भ

पञ्ञत्तसिक्खापदानि, यानि च तास भिक्खून पञ्ञत्तितो रक्खितब्बानि, इदं **भिक्खुनीसीलं**। सामणेर-सामणेरीनं दससीलानि, (इदं) **अनुसम्पन्नसीलं**। उपासक-उपासिकानं निच्चसीलवसेन पञ्चसिक्खापदानि, सति वा उस्साहे दस, उपोसथङ्गवसेन अट्ठा ति इद **गहट्ठसीलं** ति। एवं भिक्खुसीलादि-वसेन चतुब्बिधं।

ततियचतुक्के, उत्तरकुरुकान मनुस्सान अवीतिक्कमो **पकतिसीलं**। कुलदेसपासण्डान अत्तनो अत्तनो मरियादाचारित्त **आचारसीलं**। "धम्मता एसा, आनन्द, यदा बोधिसत्तो मातुकुच्छि ओक्कन्तो होति, न बोधिसत्तमातु पुरिसेसु मानस उप्पज्जि कामगुणूपसहित" (म० ३–१८५) ति एव वुत्त बोधिसत्तमातुसील **धम्मतासीलं**। महाकस्सपादीन पन सुद्धसत्तान, बोधि-सत्तस्स च तासु तासु जातीसु सील **पुब्बहेतुकसीलं** ति। एव पकतिसीलादि-वसेन चतुब्बिधं।

चतुत्थचतुक्के, य भगवता "इध भिक्खु पातिमोक्खसवरसवुतो विहरति आचारगोचरसम्पन्नो, अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसू" (दी० १–५५) ति एव वुत्त सीलं, इद **पातिमोक्ख-संवरसीलं** नाम। यं पन "सो चक्खुना रूपं दिस्वा न निमित्तग्गाही होति नानुव्यञ्जनग्गाही, यत्वाधिकरणमेन चक्खुन्द्रिय असवुत विहरन्तं अभिज्झा-दोमनस्सा पापका अकुसला धम्मा अन्वास्सवेय्युं, तस्स सवराय पटिपज्जति, रक्खति चक्खुन्द्रिय, चक्खुन्द्रिये सवरं आपज्जति। सोतेन सद्दं सुत्वा ' पे०···· घानेन गन्धं घायित्वा ··पे०· जिव्हाय रस सायित्वा पे० कायेन फोट्ठब्बं फुसित्वा पे० ·मनसा धम्म विञ्ञाय न निमित्तग्गाही ·पे०· मनिन्द्रिये सवर आपज्जती" (म० १–३३०) ति वुत्त, इदं **इन्द्रियसंवरशीलं**। या पन आजीवहेतुपञ्ञत्तान छन्नं सिक्खापदानं वीतिक्कमस्स, "कुहना लपना नेमि-त्तिकता निप्पेसिकता लाभेन लाभ निजिगीसनता" ति एवमादीन च पाप-धम्मानं वसेन पवत्ता मिच्छाजीवा विरति, इद **आजीवपारिसुद्धिसीलं**। "पटिसङ्खा योनिसो चीवर पटिसेवति, यावदेव सीतस्स पटिघाताया" (म० १–१४) ति आदिना नयेन वुत्तो पटिसङ्खानपरिसुद्धो चतुपच्चयपरिभोगो **पच्चयसन्निस्सितसीलं** नाम।

(क) पातिमोक्खसंवरसीलं

२९. तत्रायं आदितो पट्ठाय[1] अनुपुब्बपदवण्णनाय सद्धि विनिच्छयकथा—

---

१ उपरि "इध भिक्खू" ति आगतदेसनायं आदितो पभुति।

इधा ति। इमस्मि सासने। **भिक्खू** ति। संसारे भय इक्खणताय वा भिन्नपट-धरादिताय[1] वा एवं लद्धवोहारो सद्धापब्बजितो कुलपुत्तो। **पातिमोक्खसंवर-संवुतो** ति। एत्थ पातिमोक्खं ति सिक्खापदसीलं। तं हि यो न पाति रक्खति, तं मोक्खेति, मोचयति आपायिकादीहि दुक्खेहि, तस्मा पातिमोक्खं ति वुच्चति। संवरण सवरो। कायिकवाचिकस्स अवीतिक्कमस्सेतं नाम। पातिमोक्खमेव संवरो पातिमोक्खसंवरो। तेन पातिमोक्खसंवरेन संवुतो पातिमोक्खसवरसंवुतो = उपगतो, समन्नागतो ति अत्थो। **विहरती** ति। इरियति। **आचारगोचरसम्पन्नो** ति आदीनं अत्थो पालिय आगतनयेनेव वेदितब्बो। वुत्त हेतं —

"आचारगोचरसम्पन्नो ति। अत्थि आचारो, अत्थि अनाचारो।

"तत्थ कतमो अनाचारो ? कायिको वीतिक्कमो, वाचसिको वीतिक्कमो, कायिकवाचसिको वीतिक्कमो, अय वुच्चति अनाचारो। सब्बं पि दुस्सील्यं अनाचारो। इधेकच्चो वेळुदानेन वा पत्तदानेन वा पुप्फफलसिनानदन्तकट्ठदानेन वा चाटुकम्यताय वा मुग्गसूप्यताय वा पारिभट्यताय वा जङ्घपेसनिकेन वा अञ्ञतरञ्ञतरेन वा बुद्धपटिकुट्ठेन[1] मिच्छाआजीवेन जीविकं कप्पेति, अयं वुच्चति अनाचारो।

"तत्थ कतमो आचारो ? कायिको अवीतिक्कमो, वाचसिको अवीतिक्कमो, कायिकवाचसिको अवीतिक्कमो, अयं वुच्चति आचारो। सब्बो पि सीलसंवरो आचारो। इधेकच्चो न वेळुदानेन वा, न पत्त० न पुप्फ० न फल० न सिनान० न दन्तकट्ठदानेन वा न चाटुकम्यताय वा न मुग्गसूप्यताय वा न पारि-भट्यताय वा न जङ्घपेसनिकेन वा न अञ्ञतरञ्ञतरेन वा बुद्धपटिकुट्ठेन[2] मिच्छाआजीवेन जीविक कप्पेति, अयं वुच्चति आचारो।

"गोचरो ति। अत्थि गोचरो, अत्थि अगोचरो।

"तत्थ कतमो अगोचरो ? इधेकच्चो वेसियागोचरो वा होति, विधवा-थुल्ल-कुमारिका-पण्डक-भिक्खुनी-पानागारगोचरो वा होति, संसट्ठो विहरति राजूहि राजमहामत्तेहि तित्थियेहि, तित्थियसावकेहि अननुलोमिकेन संसग्गेन, यानि वा पन तानि कुलानि अस्सद्धानि अप्पसन्नानि अक्कोसकपरिभासकानि अनत्थ-कामानि अहितकामानि अफासुककामानि अयोगक्खेमकामानि भिक्खूनं भिक्खुनीन उपासकान उपासिकान, तथारूपानि कुलानि सेवति भजति पयिरु-पासति, अय वुच्चति अगोचरो।

"तत्थ कतमो गोचरो ? इधेकच्चो न वेसियागोचरो वा होति' पे० ... न पानागारगोचरो वा होति, असंसट्ठो विहरति राजूहि ... पे० ... तित्थियसावकेहि

---

१ बुद्धपटिकुट्ठेनाति। बुद्धेहि गरहितेन, पटिसिद्धेन।

अननुलोमिकेन संसग्गेन, यानि वा पन तानि कुलानि सद्धानि पसन्नानि ओपानभूतानि कासावपज्जोतानि इसिवातपटिवातानि[1] अत्थकामानि पे० · योगक्खेमकामानि भिक्खून पे०·· ·उपासिकानं, तथारूपानि कुलानि सेवति भजति पयिरुपासति, अय वुच्चति गोचरो। इति इमिना च आचारेन इमिना च गोचरेन उपेतो होति समुपेतो उपगतो समुपगतो उपपन्नो सम्पन्नो समन्नागतो। तेन वुच्चति—"आचारगोचरसम्पन्नो" (अभि० २–२९६) ति।

अपि चेत्थ इमिना पि नयेन आचारगोचरा वेदितब्बा—दुविधो हि अनाचारो, कायिको वाचसिको च। तत्थ कतमो कायिको अनाचारो? इधेकच्चो सङ्घगता पि अचित्तीकारकतो थेरे भिक्खू घट्टयन्तो पि तिट्ठति, घट्टयन्तो पि निसीदति, पुरतो पि तिट्ठति, पुरतो पि निसीदति, उच्चे पि आसने निसीदति, ससीस पि पारुपित्वा निसीदति, ठितको पि भणति, बाहाविक्खेपको पि भणति, थेरान भिक्खून अनुपाहनान चङ्कमन्तान सउपाहनो चङ्कमति, नीचे चङ्कमे चङ्कमन्तानं उच्चे चङ्कमे चङ्कमति, छमाय चङ्कमन्तान चङ्कमे चङ्कमति, थेरे भिक्खू अनुपखज्जा पि तिट्ठति, अनुपखज्जा पि निसीदति, नवे पि भिक्खू आसनेन पटिबाहति, जन्ताघरे पि थेरे भिक्खू · अनापुच्छा कट्ठं पक्खिपति, द्वारं पिदहति, उदकतित्थे पि थेरे भिक्खू घट्टयन्तो पि ओतरति, पुरतो पि ओतरति, घट्टयन्तो पि न्हायति, पुरतो पि न्हायति, घट्टयन्तो पि उत्तरति, पुरतो पि उत्तरति, अन्तरघरं पविसन्तो पि थेरे भिक्खू घट्टयन्तो पि गच्छति, पुरतो पि गच्छति, वोक्कम्म च थेरानं भिक्खूनं पुरतो पुरतो गच्छति, यानि पि तानि होन्ति कुलान ओवरकानि गूळ्हानि च पटिच्छन्नानि च यत्थ कुलित्थियो कुलकुमारियो निसीदन्ति, तत्थ पि सहसा पविसति, कुमारकस्स पि सीस परामसति—अयं वुच्चति कायिको अनाचारो।

तत्थ कतमो वाचसिको अनाचारो? "इधेकच्चो सङ्घगतो पि अचित्तीकारकतो थेरे भिक्खू अनापुच्छा धम्मं भणति, पञ्ह विस्सज्जेति, पातिमोक्खं उद्दिसति, ठितको पि भणति, बाहाविक्खेपको पि भणति, अन्तरघरं पविट्ठो पि इत्थि वा कुमारिं वा एवमाह—'इत्थन्नामे, इत्थंगोत्ते, किं अत्थि? यागु अत्थि? भत्त अत्थि? खादनीय अत्थि? किं पिविस्साम? किं खादिस्साम? किं भुञ्जिस्साम? किं वा मे दस्सथा' ति विप्पलपति—अय वुच्चति वाचसिको अनाचारो" (खु० ४:१–१९१)। पटिपक्खवसेन पनस्स आचारो वेदितब्बो।

अपि च- भिक्खु सगारवो सप्पतिस्सो हिरोत्तप्पसम्पन्नो सुनिवत्थो सुपारुतो, पासादिकेन अभिक्कन्तेन पटिक्कन्तेन आलोकितेन विलोकितेन समिञ्जितेन पसारितेन ओक्खित्तचक्खु इरियापथसम्पन्नो, इन्द्रियेसु गुत्तद्वारो,

१. भिक्खुभिक्खुनीनं पविसन्तान निक्खमन्तानं च वातो च पटिवातो च यत्था ति।

भोजने मत्तञ्ञू, जागरियमनुयुत्तो, सतिसम्पजञ्ञेन समन्नागतो, अप्पिच्छो, सन्तुट्ठो, आरद्धविरियो, आभिसमाचारिकेसु सक्कच्चकारी, गरुचित्तीकारबहुलो विहरति—अय वुच्चति आचारो। एवं ताव आचारो वेदितब्बो।

गोचरो पन तिविधो—उपनिस्सयगोचरो, आरक्खगोचरो, उपनिबन्धगोचरो ति। तत्थ कतमो **उपनिस्सयगोचरो**? दसकथावत्थुगुणसमन्नागतो कल्याणमित्तो यं निस्साय अस्सुतं सुणाति, सुतं परियोदपेति, कङ्खं वितरति, दिट्ठिं उजुं करोति, चित्तं पसादेति। यस्स वा पन अनुसिक्खमानो सद्धाय वड्ढति, सीलेन, सुतेन, चागेन, पञ्ञाय वड्ढति—अय वुच्चति उपनिस्सयगोचरो।

कतमो **आरक्खगोचरो**? इध भिक्खु अन्तरघरं पविट्ठो वीथिं पटिपन्नो ओक्खित्तचक्खु युगमत्तदस्सावी सुसवुतो गच्छति, न हत्थिं ओलोकेन्तो, न अस्सं, न रथं, न पत्तिं, न इत्थिं, न पुरिसं ओलोकेन्तो, न उद्धं उल्लोकेन्तो, न अधो ओलोकेन्तो, न दिसाविदिसं पेक्खमानो गच्छति, अय वुच्चति आरक्खगोचरो।

कतमो **उपनिबन्धगोचरो**? चत्तारो सतिपट्ठाना यत्थ चित्त उपनिबन्धति। वुत्त हेत भगवता—"को च, भिक्खवे, भिक्खुनो गोचरो सको पेत्तिको विसयो? यदिदं चत्तारो सतिपट्ठाना" (सं० ४–१२७) ति, अय वुच्चति उपनिबन्धगोचरो। इति इमिना च आचारेन इमिना च गोचरेन उपेतो पे०· · समन्नागतो। तेन पि वुच्चति—आचारगोचरसम्पन्नो ति।

अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी ति। अणुप्पमाणेसु असञ्चिच्च आपन्नसेखियअकुसलचित्तुप्पादादिभेदेसु वज्जेसु भयदस्सनसीलो। **समादाय सिक्खति सिक्खापदेसू** ति। य किञ्चि सिक्खापदेसु सिक्खितब्ब, तं सब्ब सम्मा आदाय सिक्खति।

एत्थ च "पातिमोक्खसवरसवुतो" ति एत्तावता च पुग्गलाधिट्ठानाय देसनाय **पातिमोक्खसंवरसीलं** दस्सित। "आचारगोचरसम्पन्नो" ति आदि पन सब्बं यथापटिपन्नस्स त सीलं सम्पज्जति, तं पटिपत्तिं दस्सेतुं वुत्त ति वेदितब्बं॥

(ख) इन्द्रियसंवरशील

४०. यं पनेतं तदनन्तरं "सो चक्खुना रूप दिस्वा" ति आदिना नयेन दस्सितं इन्द्रियसंवरसीलं, तत्थ **सो** ति। सो पातिमोक्खसंवरसीले ठितो भिक्खु। **चक्खुना रूपं दिस्वा** ति। कारणवसेन चक्खू ति लद्धवोहारेन रूपदस्सनसमत्थेन चक्खुविञ्ञाणेन रूप दिस्वा। पोराणा पनाहु—"चक्खु रूपं न पस्सति, अचित्तकत्ता; चित्त न पस्सति, अचक्खुकत्ता; द्वारारम्मणसंघट्टे पन चक्खुपसादवत्थुकेन चित्तेन पस्सति। ईदिसी पनेसा 'धनुना विज्झती' ति आदिसु विय ससम्भारकथा नाम होति। तस्मा 'चक्खुविञ्ञाणेन रूप दिस्वा' ति अयमेवेत्थ अत्थो" ति।

न निमित्तग्गाही ति। इत्थिपुरिसनिमित्त वा सुभनिमित्तादिकं वा किलेसवत्थुभूत्तं निमित्त न गण्हाति, दिट्ठमत्ते येव सण्ठाति। **नानुब्यञ्जनग्गाही** ति। किलेसानं अनु अनु ब्यञ्जनतो पाकटभावकरणतो अनुब्यञ्जनं ति लद्धवोहारं हत्थपादसितहसितकथितआलोकितविलोकितादिभेद आकारं न गण्हाति, य तत्थ भूत, तदेव गण्हाति, चेतियपब्बतवासी **महातिस्सत्थेरो** विय।

थेर किर चेतियपब्बता अनुराधपुर पिण्डचारत्थाय आगच्छन्तं अञ्ञतरा कुलसुण्हा सामिकेन सद्धि भण्डत्वा सुमण्डितपसाधिता देवकञ्ञा विय कालस्सेव अनुराधपुरतो निक्खमित्वा ञातिघर गच्छन्तो अन्तरामग्गे दिस्वा विपल्लत्थचित्ता महाहसितं हसि। थेरो 'किमेत' ति ओलोकेन्तो तस्सा दन्तट्ठिके असुभसञ्ञं पटिलभित्वा अरहत्त पापुणि। तेन वुत्तं—

"तस्सा दन्तट्ठिक दिस्वा पुब्बसञ्ञं अनुस्सरि।
तत्थेव सो ठिती थेरो अरहत्त अपापुणी" ति॥

सामिको पि खो पनस्सा अनुमग्ग गच्छन्तो थेर दिस्वा "किञ्चि, भन्ते, इत्थि पस्सथा" ति पुच्छि। तं थेरो आह—

"नाभिजानामि इत्थी वा पुरिसो वा इतो गतो।
अपि च अट्ठिसङ्घातो गच्छतेस महापथे" ति॥

यत्वाधिकरणमेनं ति आदिम्हि यकारणा यस्स चक्खुन्द्रियासवरस्स हेतु एतं पुग्गल सतिकवाटेन चक्खुन्द्रियं असवुत अपिहितचक्खुद्वार हुत्वा विहरन्तं एते अभिज्झादयो धम्मा अन्वास्सवेय्यु, अनुबन्धेय्युं। **तस्स संवराय पटिज्जती** ति। तस्स चक्खुन्द्रियस्स सतिकवाटेन पिदहनत्थाय पटिपज्जति। एव पटिपज्जन्तो येव च रक्खति चक्खुन्द्रियं, चक्खुन्द्रिये सवर आपज्जती ति पि वुच्चति। तत्थ किञ्चापि चक्खुन्द्रिये संवरो वा असवरो वा नत्थि। न हि चक्खुपसाद निस्साय सति वा मुट्ठसच्चं वा उप्पज्जति। अपि च यदा रूपारम्मण चक्खुस्स आपाथं आगच्छति, तदा भवङ्गे द्विक्खत्तु उप्पज्जित्वा निरुद्धे, किरियमनोधातु आवज्जनकिच्चं साधयमाना उप्पज्जित्वा निरुज्झति। ततो चक्खुविञ्ञाण दस्सनकिच्च, ततो विपाकमनोधातु सम्पटिच्छनकिच्चं, ततो विपाकाहेतुकमनोविञ्ञाणधातु सन्तीरणकिच्च, ततो किरियाहेतुकमनोविञ्ञाणधातु वोट्ठपनकिच्चं साधयमाना उप्पज्जित्वा निरुज्झति, तदनन्तरं जवन जवति।

तत्रापि नेव भवङ्गसमये, न आवज्जनादीन अञ्ञतरसमये संवरो वा असंवरो वा अत्थि। जवनक्खणे पन सचे दुस्सील्य वा मुट्ठसच्च वा अञ्ञाण वा अक्खन्ति वा कोसज्जं वा उप्पज्जति, असवरो होति। एवं होन्तो पन सो 'चक्खुन्द्रिये असवरो' ति वुच्चति।

कस्मा ? यस्मा तस्मिं[1] सति द्वारं पि अगुत्तं होति, भवङ्गं पि, आवज्जनादीनि पि वीथिचित्तानि। यथा किं ? यथा नगरे चतूसु द्वारेसु असंवुतेसु किञ्चापि अन्तोघरद्वारकोट्ठकगब्भादयो सुसंवुता होन्ति, तथा पि अन्तोनगरे सब्बं भण्डं अरक्खितं अगोपितमेव होति। नगरद्वारेन हि पविसित्वा चोरा यदिच्छन्ति तं करेय्यु, एवमेव जवने दुस्सील्यादीसु उप्पन्नेसु तस्मिं असंवरे सति द्वारं पि अगुत्तं होति, भवङ्गं पि, आवज्जनादीनि पि वीथिचित्तानि।

५२ तस्मिं[2] पन सीलादीसु उप्पन्नेसु द्वारं पि गुत्तं होति, भवङ्गं पि आवज्जनादीनि पि वीथिचित्तानि। यथा किं ? यथा नगरद्वारेसु सुसंवुतेसु किञ्चापि अन्तोघरादयो असंवुता होन्ति, तथा पि अन्तोनगरे सब्बं भण्डं सुरक्खितं सुगोपितमेव होति। नगरद्वारेसु हि पिहितेसु चोरानं पवेसो नत्थि, एवमेव जवने सीलादीसु उप्पन्नेसु द्वारं पि गुत्तं होति, भवङ्गं पि आवज्जनादीनि पि वीथिचित्तानि। तस्मा जवनक्खणे उप्पज्जमानो पि 'चक्खुन्द्रिये संवरो' ति वुत्तो।

सोतेन सद्दं सुत्वा ति आदीसु पि एसेव नयो। एवमिदं सङ्खेपतो रूपादीसु किलेसानुबन्धनिमित्तादिग्गाहपरिवज्जनलक्खणं **इन्द्रियसंवरसीलं** ति वेदितब्बं ॥

(ग) आजीवपारिसुद्धिसीलं

३१ इदानि इन्द्रियसंवरसीलानन्तरं वुत्ते आजीवपारिसुद्धिसीले आजीवहेतु पञ्ञत्तानं **छन्नं सिक्खापदानं** ति यानि तानि १. "आजीवहेतु आजीवकारणा पापिच्छो इच्छापकतो असन्तं अभूतं उत्तरिमनुस्सधम्मं उल्लपति, आपत्ति पाराजिकस्स। २ आजीवहेतु आजीवकारणा सञ्चरित्तं समापज्जति, आपत्ति संघादिसेसस्स, ३ आजीवहेतु आजीवकारणा 'यो ते विहारे वसति, सो भिक्खु अरहा' ति भणति, पटिविजानन्तस्स आपत्ति थुल्लच्चयस्स, ४. आजीवहेतु आजीवकारणा भिक्खु पणीतभोजनानि अगिलानो अत्तनो अत्थाय विञ्ञापेत्वा भुञ्जति, आपत्ति पाचित्तियस्स, ५. आजीवहेतु आजीवकारणा भिक्खुनी पणीतभोजनानि अगिलाना अत्तनो अत्थाय विञ्ञापेत्वा भुञ्जति, आपत्ति पाटिदेसनियस्स, ६. आजीवहेतु आजीवकारणा सूपं वा ओदनं वा अगिलानो अत्तनो अत्थाय विञ्ञापेत्वा भुञ्जति, आपत्ति दुक्कटस्सा" (वि० ५–१८१) ति एवं पञ्ञत्तानि छ सिक्खापदानि, इमेसं छन्नं सिक्खापदानं।

कुहना ति आदीसु अयं पाळि—"तत्थ कतमा **कुहना** ? लाभसक्कार-सिलोकसन्निस्सितस्स पापिच्छस्स इच्छापकतस्स या पच्चयपटिसेवनसङ्खातेन

---

१ तस्मिं ति। असंवरे। २. तस्मिं ति। जवने।

वा सामन्तजप्पितेन[1] वा इरियापथस्स वा अट्ठपना, ठपना, सण्ठपना, भाकुटिका, भाकुटिय, कुहना, कुहायना, कुहितत्त—अय वुच्चति कुहना ।

तत्थ कतमा **लपना** ? लाभसक्कारसिलोकसन्निस्सितस्स पापिच्छस्स इच्छापकतस्स या परेस आलपना, लपना, सल्लपना, उल्लपना, समुल्लपना, उन्नहना, समुन्नहना, उक्काचना, समुक्काचना, अनुप्पियभाणिता, चाटुकम्यता, मुग्गसूप्यता, पारिभटयता—अय वुच्चति लपना ।

तत्थ कतमा **नेमित्तिकता** ? लाभसक्कारसिलोकसन्निस्सितस्स पापिच्छस्स इच्छापकतस्स य परेस निमित्त, निमित्तकम्म, ओभासो, ओभासकम्म, सामन्तजप्पा, परिकथा—अय वुच्चति नेमित्तिकता ।

तत्थ कतमा **निप्पेसिकता** ? लाभसक्कारसिलोकसन्निस्सितस्स पापिच्छस्स इच्छापकतस्स या परेस अक्कोसना, वम्भना, गरहना, उक्खेपना, समुक्खेपना, खिपना, सङ्खिपना, पापना, सम्पापना, अवण्णहारिका, परपिट्ठिमसिकता—अय वुच्चति निप्पेसिकता ।

तत्थ कतमा **लाभेन लाभं निजिगिंसनता** ? लाभसक्कारसिलोकसन्निस्सितो पापिच्छो इच्छापकतो इतो लद्ध आमिस अमुत्र हरति, अमुत्र वा लद्ध आमिसं इध आहरति, या एवरूपा आमिसेन आमिसस्स एट्ठि, गवेट्ठि, परियेट्ठि, एसना, गवेसना, परियेसना—अय वुच्चति लाभेन लाभ निजिगिसनता" (अभि० २–४१९) ति ।

इमिस्सा पन पाळिया एव अत्थो वेदितब्बो। कुहननिद्देसे ताव **लाभसक्कारसिलोकसन्निस्सितस्सा** ति। लाभ च सक्कारं च कित्तिसद्द च सन्निस्सितस्स, पत्थयन्तस्सा ति अत्थो। **पापिच्छस्सा** ति। असन्तगुणदीपनकामस्स। **इच्छापकतस्सा** ति। इच्छाय अपकतस्स, उपद्दुतस्सा ति अत्थो।

इतो पर यस्मा पच्चयपटिसेवनसामन्तजप्पनइरियापथसन्निस्सितवसेन **महानिद्देसे** तिविध कुहनवत्थु आगत, तस्मा तिविधं पेत दस्सेतुं **पच्चयपटिसेवनसङ्खातेन वा** ति एवमादि आरद्धं। तत्थ चीवरादीहि निमन्तितस्स, तदत्थिकस्सेव सतो पापिच्छतं निस्साय पटिक्खिपनेन, ते च गहपतिके अत्तनि, सुप्पतिट्ठितसद्धे ञत्वा पुन तेसं 'अहो, अय्यो अप्पिच्छो, न किञ्चि पटिग्गण्हितु इच्छति, सुलद्धं वत नो अस्स सचे अप्पमत्तकं पि किञ्चि पटिग्गण्हेय्या' ति नानाविधेहि उपायेहि पणीतानि चीवरादीनि उपनेन्तान तदनुग्गहकामतं येव आविकत्वा पटिग्गहणेन च ततो पभुति अपि सकटभारेहि उपनामनहेतुभूत विम्हापनं पच्चयपटिसेवनसङ्खातं कुहनवत्थू ति वेदितब्ब ।

---

१ **सामन्तजप्पनं** नाम अत्तानं उत्तरिमनुस्सधम्माधिगतस्स सामन्ते कत्वा जप्पनं ।

वुत्तं हेत **महानिद्देसे**—

"कतमं पच्चयपटिसेवनसङ्खात कुहनवत्थु ? इध गहपतिका भिक्खं निमन्तेन्ति चीवर-पिण्डपात-सेनासन-गिलानपच्चयभेसज्जपरिक्खारेहि । सो पापिच्छो इच्छापकतो अत्थिको चीवर ··पे० परिक्खारानं भिय्योकम्यत उपादाय चीवरं पच्चक्खाति, पिण्डपातं पच्चक्खाति, सेनासनं पच्चक्खाति, गिलानपच्चयभेसज्जपरिक्खार पच्चक्खाति। सो एवमाह—'किं समणस्स महग्घेन चीवरेन ? एतं सारुप्पं यं समणो सुसाना वा सङ्कारकूटा वा पापणिका वा नन्तकानि उच्चिनित्वा सङ्घाटिं कत्वा धारेय्य। किं समणस्स महग्घेन पिण्डपातेन ? एतं सारुप्पं य समणो उञ्छाचरियाय पिण्डियालोपेन जीविकं कप्पेय्य। किं समणस्स महग्घेन सेनासनेन ? एतं सारुप्प यं समणो रुक्खमूलिको वा अस्स, अब्भोकासिको वा। किं समणस्स महग्घेन गिलानपच्चयभेसज्जपरिक्खारेन ? एत सारुप्पं य समणो पूतिमुत्तेन वा हरीटकीखण्डेन वा ओसध करेय्या' ति। तदुपादाय लूख चीवर धारेति, लूखं पिण्डपातं परिभुञ्जति, लूख सेनासन पटिसेवति, लूख गिलानपच्चयभेसज्जपरिक्खारं पटिसेवति। तमेनं गहपतिका एवं जानन्ति—'अय समणो अप्पिच्छो सन्तुट्ठो पविवित्तो असंसट्ठो आरद्धविरियो धुतवादो' ति। भिय्यो भिय्यो निमन्तेन्ति चीवर' पे०·· परिक्खारेहि। सो एवं आह—'तिण्णं सम्मुखीभावा सद्धो कुलपुत्तो बहुं पुञ्ञं पसवति, सद्धाय सम्मुखीभावा सद्धो कुलपुत्तो बहुं पुञ्ञं पसवति, देय्यधम्मस्स···· पे०····दक्खिणेय्यान सम्मुखीभावा सद्धो कुलपुत्तो बहुं पुञ्ञं पसवति। तुम्हाक चेवायं सद्धा अत्थि, देय्यधम्मो च सविज्जति, अह च पटिग्गाहको, सचेहं न पटिग्गहेस्सामि, एव तुम्हे पुञ्ञेन परिबाहिरा भविस्सथ, न मय्ह इमिना अत्थो, अपि च तुम्हाक येव अनुकम्पाय पटिग्गण्हामी' ति। तदुपादाय बहुं पि चीवरं पटिग्गण्हाति, बहु पि पिण्डपातं ·· पे०····भेसज्जपरिक्खारं पटिग्गण्हाति। या एवरूपा भाकुटिका, भाकुटिय, कुहना, कुहायना, कुहितत्त—इदं वुच्चति पच्चयपटिसेवनसङ्खातं कुहनवत्थू" (खु० ४ १–१८८) ति।

५८. पापिच्छस्सेव पन सतो उत्तरिमनुस्सधम्माधिगमपरिदीपनवाचाय तथा तथा विम्हापनं सामन्तजप्पनसङ्खातं कुहनवत्थू ति वेदितब्ब। यथाह—

"कतमं सामन्तजप्पनसङ्खातं कुहनवत्थु ? इधेकच्चो पापिच्छो इच्छापकतो सम्भावनाधिप्पायो—'एवं मं जनो सम्भावेस्सती' ति, अरियधम्मसन्निस्सित वाचं भासति। 'यो एवरूप चीवरं धारेति, सो समणो महेसक्खो' ति भणति। 'यो एवरूपं पत्तं, लोहथालकं, धम्मकरणं, परिस्सावन, कुञ्चिक, कायबन्धनं, उपाहनं धारेति, सो समणो महेसक्खो' ति भणति। 'यस्स एवरूपो उपज्झायो,

आचरियो, समानुपज्झायको, समानाचरियको, मित्तो, सन्दिट्ठो, सम्भत्तो, सहायो०'। 'यो एवरूपे विहारे वसति अड्ढयोगे, पासादे, हम्मिये, गुहायं, लेणे, कुटिया, कूटागारे, अट्टे, माळे, उड्डण्डे, उपट्ठानसालाय, मण्डपे, रुक्खमूले वसति, सो समणो महेसक्खो' ति भणति। अथ वा कोरजिककोरजिको भाकुटिकभाकुटिको, कुहककुहको, लपकलपको, मुखसम्भाविको, अयं समणो इमासं एवरूपानं सन्तानं विहारसमापत्तीनं लाभी' ति एतादिसं गम्भीरं गूळ्हं निपुणं पटिच्छन्नं लोकुत्तरं सुञ्ञतापटिसंयुत्तं कथं कथेसि। या एवरूपा भाकुटिका, भाकुटियं, कुहना, कुहायना, कुहितत्तं—इदं सामन्तजप्पनसङ्खातं कुहनवत्थू" (खु० ४ १-१८९) ति।

पापिच्छस्सेव पन सतो सम्भावनाधिप्पायकतेन इरियापथेन विम्हापनं इरियापथसन्निस्सितं कुहनवत्थू ति वेदितब्बं। यथाह—"कतमं इरियापथसङ्खातं कुहनवत्थु? इधेकच्चो पापिच्छो इच्छापकतो सम्भावनाधिप्पायो 'एवं मं जनो सम्भावेस्सती' ति गमनं सण्ठपेति, ठानं सण्ठपेति, निसज्जं सण्ठपेति, सयनं सण्ठपेति, पणिधाय गच्छति, पणिधाय तिट्ठति, पणिधाय निसीदति, पणिधाय सेय्यं कप्पेति, समाहितो विय गच्छति, समाहितो विय तिट्ठति, निसीदति, सेय्यं कप्पेति, आपाथकज्झायी च होति, या एवरूपा इरियापथस्स अट्ठपना, ठपना, सण्ठपना, भाकुटिका, भाकुटियं, कुहना, कुहायना, कुहितत्तं—इदं इरियापथसङ्खातं कुहनवत्थू" (खु० ४.१-१८९) ति।

तत्थ **पच्चयपटिसेवनसङ्खातेना** ति। पच्चयपटिसेवनं ति एवं सङ्खातेन, पच्चयपटिसेवनेन वा सङ्खातेन। **सामन्तजप्पितेना** ति। समीपभणितेन। **इरियापथस्स वा** ति। चतुइरियापथस्स। **अट्ठपना** ति। आदि ठपना, आदरेन वा ठपना। **ठपना** ति। ठपनाकारो। **सण्ठपना** ति। अभिसङ्खरणा। पासादिकभावकरणं ति वुत्तं होति। **भाकुटिका** ति। पधानपुरिमट्ठितभावदस्सनेन भाकुटिकरणं। मुखसङ्कोचो ति वुत्तं होति। भाकुटिकरणं सीलमस्सा ति भाकुटिको, भाकुटिकस्स भावो **भाकुटियं**। **कुहना** ति। विम्हापना। कुहस्स आयना **कुहायना**। कुहितस्स भावो **कुहितत्तं** ति।

६१ लपनानिद्देसे **आलपना** ति। विहारं आगते मनुस्से दिस्वा "किमत्थाय भोन्तो आगता? किं भिक्खू निमन्तितुं? यदि एवं, गच्छथ रे, अहं पच्छतो पत्तं गहेत्वा आगच्छामी" ति एवं आदितो व लपना। अथ वा अत्तानं उपनेत्वा "अहं तिस्सो, मयि राजा पसन्नो, मयि असुको च असुको च राजमहामत्तो पसन्नो" ति एवं अत्तुपनायिका लपना आलपना। **लपना** ति। पुट्ठस्स सतो वुत्तप्पकारमेव लपनं। **सल्लपना** ति। गहपतिकानं उक्कण्ठने भीतस्स ओकासं

दत्वा दत्वा सुट्ठु लपना। **उल्लपना** ति। महाकुटुम्बिको महानाविको महादानपती ति एवं उद्धं कत्वा लपना। **समुल्लपना** ति। सब्बतोभागेन उद्ध कत्वा लपना।

उन्नहना ति। "उपासका पुब्बे ईदिसे काले नवदानं देथ, इदानि किं न देथा" ति एव याव "दस्साम, भन्ते, ओकास न लभामा" ति आदीनि वदन्ति, ताव उद्धं उद्धं नहना, वेठना ति वुत्तं होति। अथ वा—उच्छुहत्थ दिस्वा "कुतो आभतं, उपासका" ति पुच्छति। उच्छुखेत्ततो, भन्ते" ति। "किं तत्थ उच्छु मधुरं" ति? "खादित्वा, भन्ते, जानितब्ब" ति। "न, उपासक, भिक्खुस्स उच्छुं देथा" ति वत्तु वट्टती ति। या एवरूपा निब्बेठेन्तस्सा पि वेठनकथा, सा उन्नहना। सब्बतोभागन पुनप्पुन उन्नहना **समुन्नहना**।

उक्काचना ति। "एत कुल म येव जानाति। सचे एत्थ देय्यधम्मो उप्पज्जति, मय्हमेव देती" ति एव उक्खिपित्वा काचना उक्काचना। उद्दीपना ति वुत्त होति। तेलकन्दरिकवत्थु चेत्थ वत्तब्ब। सब्बतोभागेन पन पुनप्पुनं उक्काचना **समुक्काचना**।

अनुप्पियभाणिता ति। सच्चानुरूपं धम्मानुरूपं वा अनपलोकेत्वा पुनप्पुनं पियभणनमेव। **चाटुकम्यता** ति। नीचवुत्तिता अत्तान हेट्ठतो हेट्ठतो ठपेत्वा वत्तन। **मुग्गसूप्यता** ति। मुग्गसूपसदिसता। यथा हि मुग्गेसु पच्चमानेसु कोचिदेव न पच्चति, अवसेसा पच्चन्ति, एवं यस्स पुग्गलस्स वचने किञ्चिदेव सच्च होति, सेस अलीक, अयं पुग्गलो मुग्गसूप्यो ति वुच्चति, तस्स भावो मुग्गसूप्यता। **पारिभटचता** ति। पारिभटचभावो। यो हि कुलदारके धाति विय सयं अङ्केन वा खन्धेन वा परिभटति, धारेती ति अत्थो, तस्स परिभट्टस्स कम्म पारिभटच, पारिभटचस्स भावो पारिभटचता ति।

नेमित्तिकतानिद्देसे **निमित्तं** ति य किञ्चि परेस पच्चयदानसञ्ञोजनकं कायवचीकम्मं। **निमित्तकम्मं** ति। खादनीयं गहेत्वा गच्छन्ते दिस्वा "किं खादनीय लभित्था" ति आदिना नयेन निमित्तकरण। **ओभासो** ति। पच्चयपटिसंयुत्तकथा। **ओभासकम्मं** ति। वच्छपालके दिस्वा "किं इमे वच्छा खीरगोवच्छा, उदाहु तक्कगोवच्छा" ति पुच्छित्वा "खीरगोवच्छा, भन्ते" ति वुत्ते "न खीरगोवच्छा, यदि खीरगोवच्छा सियुं, भिक्खू पि खीरं लभेय्यु" ति एवमादिना नयेन तेसं दारकानं मातापितूनं निवेदेत्वा खीरदापनादिकं ओभासकरणं। **सामन्तजप्पा** ति। समीपं कत्वा जप्पनं। कुलूपकभिक्खुवत्थु चेत्थ वत्तब्ब।

कुलूपको किर भिक्खु भुञ्जितुकामो गेह पविसित्वा निसीदि। त दिस्वा अदातुकामा घरणी "तण्डुला नत्थी" ति भणन्ती तण्डुले आहरितुकामा विय पटिविस्सकघरं गता। भिक्खु पि अन्तोगब्भं पविसित्वा ओलोकेन्तो कवाटकोणे

उच्छुं, भाजने गुळं, पिटके लोणमच्छफाले, कुम्भियं तण्डुले, घटे घतं दिस्वा निक्खमित्वा निसीदि। घरणी "तण्डुले नालत्थं" ति आगता। भिक्खु "उपासिके, अज्ज भिक्खा न सम्पज्जिस्सती' ति पटिकच्चेव निमित्तं अद्दस" ति आह। "किं भन्ते ति"? "कवाटकोणे निक्खित्तं उच्छुं विय सप्पं अद्दसं, 'तं पहरिस्सामी' ति ओलोकेन्तो भाजने ठपितं गुळपिण्डं विय पासाणं, लेड्डुकेन पहटेन सप्पेन कतं पिटके निक्खित्तलोणमच्छफालसदिसं फणं, तस्स तं लेड्डुं डंसितुकामस्स कुम्भिया तण्डुलसदिसे दन्ते, अथस्स कुपितस्स घटे पक्खित्तघतसदिसं मुखतो निक्खमन्तं विसमिस्सकं खेळं" ति। सा "न सक्का मुण्डकं वञ्चेतुं" ति उच्छुं दत्वा ओदनं पचित्वा घतगुळमच्छेहि सद्धिं सब्बं अदासी ति। एवं समीपं कत्वा जप्पनं सामन्तजप्पा ति वेदितब्बं।

परिकथा ति। यथा तं लभति तस्स परिवत्तेत्वा कथनं ति।

निप्पेसिकतानिद्देसे—**अक्कोसना** ति। दसहि अक्कोसवत्थूहि अक्कोसनं। **वम्भना** ति। परिभवित्वा कथनं। **गरहणा** ति। 'अस्सद्धो अप्पसन्नो' ति आदिना नयेन दोसारोपना। **उक्खेपना** ति। 'मा एतं एत्थ कथेथा' ति वाचाय उक्खिपनं। सब्बतोभागेन सवत्थुकं सहेतुकं कत्वा उक्खेपना **समुक्खेपना**। अथ वा अदेन्तं दिस्वा 'अहो दानपती' ति एवं उक्खिपनं **उक्खेपना**। 'महादानपती' ति एवं सुट्ठु उक्खेपना **समुक्खेपना**। **खिपना** ति। किं इमस्स जीवितं बीजभोजिनो ति एवं उप्पण्डना। **संखिपना** ति। 'किं इमं अदायको ति भणथ, यो निच्चकालं सब्बेसं पि नत्थी ति वचनं देती' ति सुट्ठुतरं उप्पण्डना। **पापना** ति। अदायकत्तस्स अवण्णस्स वा पापनं। सब्बतोभागेन पापना **सम्पापना**। **अवण्णहारिका** ति। 'एवं मे अवण्णभया पि दस्सती' ति गेहतो गेहं, गामतो गामं, जनपदतो जनपदं अवण्णहरणं। **परपिट्ठिमंसिकता** ति। पुरतो मधुरं भणित्वा परम्मुखे अवण्णभासिता। एसा हि अभिमुखं ओलोकेतुं असक्कोन्तस्स परम्मुखानं पिट्ठिमंसखादनमिव होति, तस्मा परपिट्ठिमंसिकता ति वुत्ता। **अयं वुच्चति निप्पेसिकता** ति। अयं यस्मा वेळुपेसिका विय अब्भङ्गं, परस्स गुणं निप्पेसेति निपुञ्छति, यस्मा वा गन्धजातं निपिसित्वा गन्धमग्गना विय परगुणे निपिसित्वा विचुण्णेत्वा एसा लाभमग्गना होति, तस्मा निप्पेसिकता ति वुच्चती ति।

लाभेन लाभं निजिगीसनतानिद्देसे—**निजिगिंसनता इतो लद्धं** ति। इमम्हा गेहा लद्धं। **अमुत्रा** ति। अमुकम्हि गेहे। **एट्ठी** ति। इच्छना। **गवेट्ठी** ति। मग्गना। **परियेट्ठी** ति। पुनप्पुनं मग्गना। आदितो पट्ठाय लद्धं लद्धं भिक्खं तत्र तत्र कुलदारकानं दत्वा अन्ते खीरयागुं लभित्वा गतभिक्खुवत्थु चेत्थ कथेतब्बं। **एसना** ति आदीनि एट्ठी-आदीनमेव वेवचनानि। तस्मा एट्ठी ति

एसना, गवेट्ठी ति गवेसना, परियेट्ठी ति परियेसना—इच्चेवमेत्थ योजना वेदितब्बा। अथ कुहनादीनं अत्थो।

इदानि **एवमादीनं च पापधम्मानं** ति। एत्थ आदिसद्देन "यथा वा पनेके भोन्तो समणब्राह्मणा सद्धादेय्यानि भोजनानि भुञ्जित्वा ते एवरूपाय तिरच्छानविज्जाय मिच्छाजीवेन जीविकं कप्पेन्ति। सेय्यथीद—अङ्ग, निमित्त, उप्पात, सुपिन, लक्खणं, मूसिकच्छिन्न, अग्गिहोम, दब्बिहोम" (दी० १–९) ति आदिना नयेन **ब्रह्मजाले**[1] वुत्तान अनेकेस पापधम्मानं गहण वेदितब्ब। इति य्वाय इमेस आजीवहेतु पञ्ञत्तान छन्न सिक्खापदान वीतिक्कमवसेन, इमेसं च "कुहना, लपना, नेमित्तिकता, निप्पेसिकता, लाभेन लाभ निजिगिंसनता" ति एवमादीनं पापधम्मान वसेन पवत्तो मिच्छाजीवो, या तस्मा सब्बप्पकारा पि मिच्छाजीवा विरति, इदं आजीवपारिसुद्धिसील। तत्रायं वचनत्थो—एतं आगम्म जीवन्ती ति आजीवो। को सो? पच्चयपरियेसनवायामो। पारिसुद्धी ति परिसुद्धता। आजीवस्स पारिसुद्धि **आजीवपारिसुद्धि**।

(घ) पच्चयसन्निस्सितसीलं

३२. य पनेतं तदनन्तर पच्चयसन्निस्सितसील वुत्तं, तत्थ **पटिसङ्खा योनिसो** ति। उपायेन पथेन पटिसङ्खाय। ञत्वा, पच्चवेक्खित्वा ति अत्था। एत्थ च 'सीतस्स पटिघाताया' ति आदिना नयेन वुत्तपच्चवेक्खणमेव "योनिसो पटिसङ्खा" ति वेदितब्ब।

तत्थ **चीवरं** ति। अन्तरवासकादीसु यं किञ्चि। **पटिसेवती** ति। परिभुञ्जति, निवासेति वा, पारुपति वा। **यावदेवा** ति। पयोजनावधिपरिच्छेदननियमवचन। एत्तकमेव हि योगिनो चीवरपटिसेवने पयोजन यदिदं सीतस्स पटिघाताया ति आदि, न इतो भिय्यो। **सीतस्सा** ति। अज्झत्तधातुक्खोभवसेन वा बहिद्धाउतुपरिणामनवसेन वा उप्पन्नस्स यस्य कस्सचि सीतस्स। **पटिघाताया** ति। पटिहननत्थ। यथा सरीरे आबाधं न उप्पादेति, एव तस्स विनोदनत्थ। सीतब्भाहते हि सरीरे विक्खित्तचित्तो योनिसो पदहितुं न सक्कोति, तस्मा 'सीतस्स पटिघाताय चीवरं पटिसेवितब्ब' ति भगवा अनुञ्ञासि। एस नयो सब्बत्थ। केवल हेत्थ **उण्हस्सा** ति अग्गिसन्तापस्स। तस्स वनदाहादीसु सम्भवो वेदितब्बो। **डंसमकसवातातपसरीसपसम्फस्सानं** ति। एत्थ पन डंसा ति डंसनमक्खिका, अन्धमक्खिका ति पि वुच्चन्ति। **मकसा** मकसा एव। **वाता** ति। सरज-अरजादिभेदा। **आतपो**

---

१. दीघनिकाये ब्रह्मजालसुत्ते।

ति। सूरियातपो। **सरीसपा** ति। ये केचि सरन्ता गच्छन्ति दीघजातिका सप्पादयो, तेस दट्ठसम्फस्सो च फुट्ठसम्फस्सो चा ति दुविधो सम्फस्सो, सो पि चीवरं पारुपित्वा निसिन्न न बाधति, तस्मा तादिसेसु ठानेसु तेस पटिघातत्थाय पटिसेवति। **याव-देवा** ति। पुन एतस्स वचन नियतपयोजनावधिपरिच्छेददस्सनत्थं। हिरिकोपीन-पटिच्छादनं हि नियतपयोजन, इतरानि कदाचि कदाचि होन्ति। तत्थ **हिरिकोपीनं** ति त तं सम्बाधट्ठान। यस्मिं यस्मिं हि अङ्गे विवरियमाने हिरी कुप्पति विनस्सति, त तं हिरि कोपनतो हिरिकोपीनं ति वुच्चति। तस्स च हिरिकोपीनस्स पटिच्छाद-नत्थ ति **हिरिकोपीनपटिच्छादनत्थं**। हिरिकोपीनं पटिच्छादनत्थ ति पि पाठो।

पिण्डपातं ति। यं किञ्चि आहारं। यो हि कोचि आहारो भिक्खुनो पिण्डोल्येन[1] पत्ते पतितत्ता पिण्डपातो ति वुच्चति। पिण्डानं वा पातो पिण्डपातो, तत्थ तत्थ लद्धान भिक्खानं सन्निपातो समूहो ति वुत्तं होति। **नेव दवाया** ति। न गामदारकादयो विय दवत्थ, कीळानिमित्तं ति वुत्त होति। **न मदाया** ति। न मुट्ठिकमल्लादयो विय मदत्थ, बलमदनिमित्तं पोरिसमदनिमित्तं चा ति वुत्त होति। **न मण्डनाया** ति। न अन्तेपुरिकवेसियादयो विय मण्डनत्थं, अङ्गपच्चङ्गानं पीणनभावनिमित्त ति वुत्त होति। **न विभूसनाया** ति। न नटनच्चकादयो विय विभूसनत्थ, पसन्नच्छविवण्णतानिमित्त ति वुत्त होति। एत्थ च 'नेव दवाया' ति एत मोहूपनिस्सयप्पहानत्थ वुत्त। 'न मदाया' ति एत दोसूपनिस्सयप्पहानत्थं। 'न मण्डनाय न विभूसनाया' ति एत रागूपनिस्सयप्पहानत्थ। 'नेव दवाय न मदाया' ति चेतं अत्तनो सयोजनुप्पत्तिपटिसेधनत्थं। 'न मण्डनाय न विभूसनाया' ति एत परस्स पि संयोजनुप्पत्तिपटिसेधनत्थं। चतूहि पि चेतेहि अयोनिसो पटिपत्तिया कामसुखल्लिकानुयोगस्स च पहानं वुत्तं ति वेदितब्ब।

यावदेवा ति वुत्तत्थमेव। **इमस्स कायस्सा** ति। एतस्स चतुमहाभूतिकस्स रूपकायस्स। **ठितिया** ति। पबन्धट्ठितत्थ। **यापनाया** ति। पवत्तिया अविच्छेदत्थं, चिरकालट्ठितत्थ वा। घरूपत्थम्भमिव हि जिण्णघरसामिको, अक्खब्भञ्जनमिव च साकटिको कायस्स ठितत्थ यापनत्थ चेस पिण्डपात पटिसेवति, न दवमद-मण्डनविभूसनत्थ। अपि च ठिती ति जीवितिन्द्रियस्सेत अधिवचनं। तस्मा इमस्स कायस्स ठितिया यापनाया ति एत्तावता एतस्स कायस्स जीवितिन्द्रियपवत्ताप-नत्थ ति पि वुत्त होती ति वेदितब्ब। **विहिंसूपरतिया** ति। विहिंसा नाम जिघच्छा आबाधट्ठेन; तस्सा उपरमत्थ पेस पिण्डपातं पटिसेवति, वणालेपनमिव उण्हसीतादीसु तप्पटिकारं विय च। **ब्रह्मचरियानुग्गहाया** ति। सकलसासन-ब्रह्मचरियस्स च मग्गब्रह्मचरियस्स च अनुग्गहत्थं। अयं हि पिण्डपातपटिसेवन-पच्चया कायबलं निस्साय सिक्खत्तयानुयोगवसेन भवकन्तारनित्थरणत्थ पटि-

१. पिण्डाय = भिक्खाय उलतीति पिण्डोलो, तस्स कम्मं पिण्डोल्यं = भिक्खाचरिया, तेन।

पज्जन्तो ब्रह्मचरियानुग्गहाय पटिसेवति, कन्तारनित्थरणत्थिका पुत्तमंसं विय, नदीनित्थरणत्थिका कुल्ल विय, समुद्दनित्थरणत्थिका नावमिव च ।

इति पुराणं च वेदनं पटिहङ्खामि नवं च वेदनं न उप्पादेस्सामी ति । एवं इमिना पिण्डपातपटिसेवनेन पुराण च जिघच्छावेदनं पटिहङ्खामि, नवं च वेदनं अपरिमितभोजनपच्चय आहरहत्थक-अलसाटक-तत्रवट्टक-काकमासक-भुत्तवमितकब्राह्मणानं[1] अञ्ञतरो विय न उप्पादेस्सामी ति पि पटिसेवति, भेसज्जमिव गिलानो । अथ वा—या अधुना असप्पायापरिमितभोजन निस्साय पुराणकम्मपच्चयवसेन उप्पज्जनतो पुराणवेदना ति वुच्चति, सप्पायपरिमितभोजनेन तस्सा पच्चय विनासेन्तो तं पुराण च वेदन पटिहङ्खामि । या चायं अधुना कत्तं अयुत्तपरिभोगकम्मूपचयं निस्साय आयतिं उप्पज्जनतो नववेदना ति वुच्चति, युत्तपरिभोगवसेन तस्सा मूलं अनिब्बत्तेन्तो तं नव च वेदनं न उप्पादेस्सामी ति एव पेत्थ अत्थो दट्ठब्बो । एत्तावता युत्तपरिभोगसङ्गहो, अत्तकिलमथानुयोगप्पहान, धम्मिकसुखापरिच्चागो च दीपितो होति ति वेदितब्बो ।

यात्रा च मे भविस्सती ति । परिमितपरिभोगेन जीवितिन्द्रियुपच्छेदकस्स इरियापथभञ्जकस्स वा परिस्सयस्स अभावतो चिरकालगमनसङ्खाता यात्रा च मे भविस्सति इमस्स पच्चयात्तवुत्तिनो कायस्सा ति पि पटिसेवति, याप्यरोगी विय तप्पच्चय । **अनवज्जता च फासुविहारो चा** ति । अयुत्तपरियेसनपटिग्गहणपरिभोगपरिवज्जनेन अनवज्जता, परिमितपरिभोगेन फासुविहारो । असप्पायापरिमितपरिभोगपच्चया अरति-तन्दी-विजम्भिता-विञ्ञूगरहादिदोसाभावेन वा अनवज्जता, सप्पायपरिमितभोजनपच्चया कायबलसम्भवेन फासुविहारो । यावदत्थउदरावदेहकभोजनपरिवज्जनेन वा सेय्यसुखपस्ससुखमिद्धसुखान पहानतो अनवज्जता, चतुपञ्चालोपमत्तऊनभोजनेन चतुइरियापथयोग्यभावपटिपादनतो फासुविहारो च मे भविस्सती ति पि पटिसेवति । वुत्तं पि हेत—

"चत्तारो पञ्च आलोपे अभुत्वा उदक पिवे ।
अल फासुविहाराय पहितत्तस्स भिक्खुनो" ति ।। (खु० २–३६६)

---

१ यो बहु भुञ्जित्वा अत्तनो धम्मताय उट्ठातुं असक्कोन्तो "आहर हत्थं" ति वदति, अय **आहरहत्थको** । यो भुञ्जित्वा अच्चुद्धुमातकुच्छिवाय उट्ठितो पि साटकं निवासेतुं न सक्कोति, अय **अलसाटको** । यो भुञ्जित्वा उट्ठातु असक्कोन्तो तत्थेव परिवत्तति, अय **तत्रवट्टको** । यो यथा काकेहि आमसितुं सक्का, एव याव मुखद्वारं आहारेति, अय **काकमासको** । यो भुञ्जित्वा मुखे सन्धारेतु असक्कोन्तो तत्थेव वमति, अयं **भुत्तवामतको** ।

एत्तावता च पयोजनपरिग्गहो, मज्झिमा च पटिपदा दीपिता होती ति वेदितब्बा।

सेनासनं ति। सेनं च आसनं च। यत्थ यत्थ हि सेति विहारे वा अड्ढयोगादिम्हि वा, तं सेनं। यत्थ यत्थ आसति निसीदति, तं आसनं। तं एकतो कत्वा सेनासनं ति वुच्चति। **उतुपरिस्सयविनोदनपटिसल्लानारामत्थं** ति। परिसहनट्ठेन उतु येव उतुपरिस्सयो। उतुपरिस्सयस्स विनोदनत्थं च पटिसल्लानारामत्थं च। यो सरीराबाधचित्तविक्खेपकरो असप्पायो उतु सेनासनपटिसेवनेन विनोदेतब्बो होति, तस्स विनोदनत्थं एकीभावसुखत्थं चा ति वुत्त होति। काम च सीतपटिघातादिना व उतुपरिस्सयविनोदन वुत्तमेव। यथा पन चीवरपटिसेवने हिरिकोपीनपटिच्छादनं नियतपयोजन, इतरानि कदाचि कदाचि भवन्ती ति वुत्त, एवमिधापि नियत्त उतुपरिस्सयविनोदनं सन्धाय इद वुत्त ति वेदितब्बं। अथ वा—अयं वुत्तप्पकारो उतु उतु येव। परिस्सयो पन दुविधो—पाकटपरिस्सयो च, पटिच्छन्नपरिस्सयो च। तत्थ पाकटपरिस्सयो सीहब्यग्घादयो, पटिच्छन्नपरिस्सयो रागदोसादयो। ते यत्थ अपरिगुत्तिया च असप्पायरूपदस्सनादिना च आबाध न करोन्ति, त सेनासन एव जानित्वा पच्चवेक्खित्वा पटिसेवन्तो भिक्खु पटिसङ्खा योनिसो सेनासनं उतुपरिस्सयविनोदनत्थं पटिसेवती ति वेदितब्बो।

गिलानपच्चयभेसज्जपरिक्खारं ति। एत्थ रोगस्स पटिअयनट्ठेन पच्चयो, पच्चनीकगमनट्ठेना ति अत्थो। यस्स कस्सचि सप्पायस्सेतं अधिवचनं। भिसक्कस्स कम्मं तेन अनुञ्ञातत्ता ति भेसज्जं। गिलानपच्चयो व भेसज्जं गिलानपच्चयभेसज्जं। यं किञ्चि गिलानस्स सप्पायं भिसक्ककम्मं तेलमधुफाणितादी ति वुत्त होति। परिक्खारो ति पन "सत्तहि नगरपरिक्खारेहि सुपरिक्खत होति" (अं० ३–२३४) ति आदीसु परिवारो वुच्चति। "रथो सीलपरिक्खारेहि झानक्खो चक्कवीरियो" (सं० ४–७) ति आदीसु अलङ्कारो। "ये च खो इमे पब्बजितेन जीवितपरिक्खारा समुदानेतब्बा" (म० १–१४१) ति आदीसु सम्भारो। इध पन सम्भारो पि परिवारो पि वट्टति। तं हि गिलानपच्चयभेसज्ज जीवितस्स परिवारो पि होति, जीवितनासकाबाधुप्पत्तिया अन्तर अदत्वा रक्खणतो सम्भारो पि। यथा चिर पवत्तति, एवमस्स कारणभावतो, तस्मा परिक्खारो ति वुच्चति। एव गिलानपच्चयभेसज्ज च त परिक्खारो चा ति गिलानपच्चयभेसज्जपरिक्खारो, त गिलानपच्चयभेसज्जपरिक्खारं। गिलानस्स यं किञ्चि सप्पाय भिसक्कानुञ्ञात तेलमधुफाणितादिजीवितपरिक्खारं ति वुत्तं होति।

उप्पन्नानं ति। जातानं भूतानं निब्बत्तानं। **वेय्याबाधिकानं** ति। एत्थ

ब्याबाधो ति धातुक्खोभो, तं समुट्ठाना च कुट्ठगण्डपिळकादयो। ब्याबाधतो उप्पन्नता वेय्याबाधिका। **वेदनानं** ति। दुक्खवेदना अकुसलविपाकवेदना, तासं वेय्याबाधिकानं वेदनान। **अब्याबज्झपरमताया** ति। निद्दुक्खपरमताय। याव तं दुक्ख[1] सब्ब पहीनं होति तावा ति अत्थो।

एवमिदं सङ्खेपतो पटिसङ्खा योनिसो पच्चयपरिभोगलक्खणं पच्चयसन्निस्सितसील वेदितब्बं। वचनत्थो पनेत्थ—चीवरादयो हि यस्मा ते पटिच्च निस्साय परिभुञ्जमाना पाणिनो अयन्ति पवत्तन्ति, तस्मा पच्चया ति वुच्चन्ति। ते पच्चये सन्निस्सित ति **पच्चयसन्निस्सितं** ॥

चतुपारिसुद्धिसम्पादनविधि

१. पातिमोक्खसंवरसुद्धिसम्पादनविधि

३३. एवमेतस्मिं चतुब्बिधे सीले सद्धाय **पातिमोक्खसंवरो** सम्पादेतब्बो। **सद्धासाधनो** हि सो, सावकविसयातीतत्ता सिक्खापदपञ्ञत्तिया। सिक्खापदपञ्ञत्तियाचनपटिक्खेपो चेत्थ निदस्सनं। तस्मा यथा पञ्ञत्तं सिक्खापदं अनवसेसं सद्धाय समादियित्वा जीविते पि अपेक्ख अकरोन्तेन साधुकं सम्पादेतब्ब। वुत्तं पि हेतं—

"किकी व अण्ड चमरी व वालधिं, पियं व पुत्त नयन व एककं।
तथेव सील अनुरक्खमानका सुपेसला होथ सदा सगारवा" ति ॥

अपरं पि वुत्तं—"(…[2]) एवमेव खो, पहाराद, य मया सावकानं सिक्खापद पञ्ञत्तं, तं मम सावका जीवितहेतु पि नातिक्कमन्ती" (अं० ३-३०९) ति। इमस्मिं च पनत्थे अटविय चोरेहि बद्धथेरानं वत्थूनि वेदितब्बानि।

महावत्तनिअटविय[3] किर थेरं चोरा काळवल्लीहि बन्धित्वा निपज्जापेसुं। थेरो यथानिपन्नो व सत्त दिवसानि विपस्सनं वड्ढेत्वा अनागामिफलं पापुणित्वा तत्थेव काल कत्वा ब्रह्मलोके निब्बत्ति।

अपर पि थेरं तम्बपण्णिदीपे पूतिलताय बन्धित्वा निपज्जापेसुं। सो वनदाहे आगच्छन्ते वल्लि अच्छिन्दित्वा व विपस्सनं पट्ठपेत्वा समसीसी हुत्वा

---

१. दुक्खं ति। रोगनिमित्तकं दुक्ख।

२. "सेय्यथापि महासमुद्दो ठितधम्मो नातिक्कमती" ति सेसपाठो।

३. विञ्झाटविय। 'हिमवन्तपस्से अटवी' ति केचि।

परिनिब्बायि। दीघभाणक**अभयत्थेरो** पञ्चहि भिक्खुसतेहि सद्धिं आगच्छन्तो दिस्वा थेरस्स सरीरं झापेत्वा चेतियं कारापेसि। तस्मा अञ्ञो पि सद्धो कुलपुत्तो—

पातिमोक्खं विसोधेन्तो अप्पेव जीवितं जहे।
पञ्ञत्तं लोकनाथेन न भिन्दे सीलसंवरं॥

२. इन्द्रियसंवरसुद्धिसम्पादनविधि

३४. यथा च पातिमोक्खसंवरो सद्धाय, एवं सतिया **इन्द्रियसंवरो** सम्पादेतब्बो। **सतिसाधनो** हि सो, सतिया अधिट्ठितानं इन्द्रियानं अभिज्झादीहि अनन्वास्सवनीयत्तो। तस्मा "वरं, भिक्खवे, तत्ताय अयोसलाकाय आदित्ताय सम्पज्जलिताय सजोतिभूताय चक्खुन्द्रियं सम्पलिमट्ठं, न त्वेव चक्खुविञ्ञेय्येसु रूपेसु अनुब्यञ्जनसो निमित्तग्गाहो" (स० ३-१५२) ति आदिना नयेन आदित्तपरियायं समनुस्सरित्वा रूपादिसु विसयेसु चक्खुद्वारादिपवत्तस्स विञ्ञाणस्स अभिज्झादीहि अन्वास्सवनीयं निमित्तादिग्गाहं असम्मुट्ठाय सतिया निसेधेन्तेन एस साधुकं सम्पादेतब्बो। एवं असम्पादिते हि एतस्मिं पातिमोक्खसंवरसीलं पि अनद्धनियं होति अचिरट्ठितिकं, असंविहितसाखापरिवारमिव सस्सं। हञ्ञते चायं किलेसचोरेहि, विवटद्वारो विय गामो परस्सहारीहि। चित्तं चस्स रागो समतिविज्झति, दुच्छन्नमगारं वुट्ठि विय। वुत्तं पि हेतं—

"रूपेसु सद्देसु अथो रसेसु गन्धेसु फस्सेसु च रक्ख इन्द्रियं।
एते हि द्वारा विवटा अरक्खिता हनन्ति गामं व परस्सहारिनो"॥

"यथा अगारं दुच्छन्नं वुट्ठि समतिविज्झति।
एवं अभावितं चित्तं रागो समतिविज्झती" ति॥ (खु० १-१८)

सम्पादिते पन तस्मिं पातिमोक्खसंवरसीलं पि अद्धनियं होति चिरट्ठितिकं, सुसंविहितसाखापरिवारमिव सस्सं। न हञ्ञते चायं किलेसचोरेहि, सुसंवुतद्वारो विय गामो परस्सहारीहि। न चस्स **चित्तं** रागो समतिविज्झति, सुच्छन्नमगारं वुट्ठि विय। वुत्तं पि चेतं—

"रूपेसु सद्देसु अथो रसेसु गन्धेसु फस्सेसु च रक्ख इन्द्रियं।
एते हि द्वारा पिहिता सुसंवुता न हन्ति गामं व परस्सहारिनो"॥

"यथा अगारं सुच्छन्नं वुट्ठि न समतिविज्झति।
एवं सुभावितं चित्तं रागो न समतिविज्झती" ति॥ (खु० १-१८)

अयं पन अतिउक्कट्ठदेसना। चित्तं नामेतं लहुपरिवत्तं, तस्मा उप्पन्नं रागं असुभमनसिकारेन विनोदेत्वा इन्द्रियसंवरो सम्पादेतब्बो, अधुनापब्बजितेन **वङ्गीसत्थेरेन** विय। थेरस्स किर अधुनापब्बजितस्स पिण्डाय चरतो एकं इत्थिं दिस्वा रागो उप्पज्जति। ततो आनन्दत्थेरं आह—

"कामरागेन डय्हामि चित्तं मे परिडय्हति।
साधु निब्बापनं ब्रूहि अनुकम्पाय गोतमा" ति ॥

थेरो आह—

"सञ्ञाय विपरियेसा चित्तं ते परिडय्हति।
निमित्तं परिवज्जेहि सुभं रागूपसंहितं।
असुभाय चित्तं भावेहि एकग्गं सुसमाहितं ॥
सङ्खारे परतो पस्स दुक्खतो नो च अत्ततो।
निब्बापेहि महाराग मा डय्हित्थो पुनप्पुन" ति ॥ (स० १-१८८)

थेरो राग विनोदेत्वा पिण्डाय चरि।

अपि च—इन्द्रियसवरपूरकेन भिक्खुना कुरण्डकमहालेणवासिना **चित्तगुत्तत्थेरेन** विय चोरकमहाविहारवासिना **महामित्तत्थेरेन** विय च भवितब्ब। कुरण्डकमहालेणे किर सत्तन्नं बुद्धान्न अभिनिक्खमनचित्तकम्म मनोरम अहोसि, सम्बहुला भिक्खू सेनासनचारिक आहिण्डन्ता चित्तकम्म दिस्वा "मनोरमं, भन्ते, चित्तकम्म" ति आहसु। थेरो आह—"अतिरेकसट्ठि मे, आवुसो, वस्सानि लेणे वसन्तस्स चित्तकम्मं अत्थी ति पि न जानामि, अज्ज दानि चक्खुमन्ते निस्साय ञात" ति। थेरेन किर एत्तक अद्धान वसन्तेन चक्खु उम्मीलेत्वा लेणं न उल्लोकितपुब्बं। लेणद्वारे चस्स महानागरुक्खो पि अहोसि। सो पि थेरेन उद्धं न उल्लोकितपुब्बो। अनुसंवच्छरं भूमिय केसरनिपात दिस्वा वस्स पुप्फितभाव जानाति।

राजा थेरस्स गुणसम्पत्तिं सुत्वा वन्दितुकामो तिक्खत्तुं पेसेत्वा अनागच्छन्ते थेरे तस्मिं गामे तरुणपुत्तानं इत्थीन थने बन्धापेत्वा लञ्छापेसि "ताव दारका थञ्ञं मा लभिंसु, याव थेरो न आगच्छती" ति। थेरो दारकान अनुकम्पाय महागाम अगमासि। राजा सुत्वा "गच्छथ, भणे, थेर पवेसेथ, सीलानि गण्हिस्सामी" ति अन्तेपुरं अभिहरापेत्वा वन्दित्वा भोजेत्वा "अज्ज, भन्ते, ओकासो नत्थि, स्वे सीलानि गण्हिस्सामी" ति थेरस्स पत्त गहेत्वा थोक अनुगन्त्वा देविया सद्धिं वन्दित्वा निवत्ति। थेरो राजा वा वन्दतु देवी वा, "सुखी होतु, महाराजा ति" वदति। एवं सत्त दिवसा गता। भिक्खू आहंसु—"किं, भन्ते, तुम्हे रञ्ञे पि वन्दमाने देविया पि वन्दमानाय, 'सुखी होतु, महाराज' इच्चेव वदथा" ति। थेरो "नाहं, आवुसो, राजा ति वा देवी ति वा ववत्थानं[1] करोमी"

---

१. ववत्थान ति। विवेकं।

ति वत्वा सत्ताहात्तिकम्मे "थेरस्स इध वासो दुक्खो" ति रञ्ञा विस्सज्जितो कुरण्डकमहालेणं गन्त्वा रत्तिभागे चङ्कम आरुहि। नागरुक्खे अधिवत्था देवता दण्डदीपिक गहेत्वा अट्ठासि। अथस्स कम्मट्ठान अतिपरिसुद्ध पाकट अहोसि। थेरो "किं नु मे अज्ज कम्मट्ठान अतिविय पकासती" ति अत्तमनो मज्झिमयाम-समनन्तर सकल पब्बतं उन्नादयन्तो अरहत्तं पापुणि।

तस्मा अञ्ञो पि अत्तत्थकामो कुलपुत्तो—

मक्कटो व अरञ्ञम्हि वने भन्तमिगो विय।
बालो विय च उत्रस्तो न भवे लोललोचनो॥
अधो खिपेय्य चक्खूनि युगमत्तदसो सिया।
वनमक्कटलोलस्स न चित्तस्स वस वजे" ॥

महामित्तत्थेरस्सापि मातु विसगण्डकरोगो उप्पज्जि, धीता पिस्सा भिक्खुनोसु पब्बजिता होति। सा त आह—"गच्छ, अय्ये, भातु सन्तिकं गन्त्वा मम अफासुकभाव आरोचेत्वा भेसज्जं आहरा" ति। सा गन्त्वा आरोचेसि। थेरो आह—"नाहं मूलभेसज्जादीनि सहरित्वा भेसज्ज पचितु जानामि, अपि च ते भेसज्जं आचिक्खिस्स—'अह यतो पब्बजितो, ततो पट्ठाय न मया लोभसह-गतेन चित्तेन इन्द्रियानि भिन्दित्वा विसभागरूपं ओलोकितपुब्ब, इमिना सच्च-वचनेन मातुया मे फासु होतु', गच्छ इद वत्वा उपासिकाय सरीर परिमज्जा" ति। सा गन्त्वा इममत्थं आरोचेत्वा तथा अकासि। उपासिकाय त खण येव गण्डो फेणपिण्डो विय विलीयित्वा अन्तरधायि, सा उट्ठहित्वा "सचे सम्मासम्बुद्धो धरेय्य, कस्मा मम पुत्तसदिसस्स भिक्खुनो जालविचित्रेन हत्थेन सीसं न परा-मसेय्या" ति अत्तमनवाच निच्छारेसि। तस्मा—

कुलपुत्तमानि अञ्ञो पि पब्बजित्वान सासने।
मित्तत्थेरो व तिट्ठेय्य वरे इन्द्रियसवरे॥

(३) आजीवपारिसुद्धिसम्पादनविधि

३५. यथा पन इन्द्रियसंवरो सतिया, तथा वीरियेन **आजीवपारिसुद्धि** सम्पा-देतब्बा। **वीरियसाधना** हि सा, सम्मारद्धवीरियस्स मिच्छाजीवप्पहानसम्भवतो। तस्का अनेसनं अप्पटिरूपं पहाय वीरियेन पिण्डपातचरियादीहि सम्माएसनाहि एसा सम्पादेतब्बा, परिसुद्धुप्पादे येव पच्चये पटिसेवमानेन अपरिसुद्धुप्पादे आसीविसे विय परिवज्जयता। तत्थ अपरिग्गहितधुतङ्गस्स सङ्घतो, गणतो, धम्मदेसनादीहि चस्स गुणेहि पसन्नानं गिहीनं सन्तिका उप्पन्ना पच्चया परिसुद्धुप्पादा नाम। पिण्डपातचरियादीहि पन अतिपरिसुद्धुप्पादा येव।

परिग्गहीतधुतङ्गस्स पिण्डपातचरियादीहि धुतगुणे चस्स पसन्नान सन्तिका धुतङ्गनियमानुलोमेन उप्पन्ना परिसुद्धुप्पादा नाम। एकब्याधिवूपसमत्थ चस्स पूतिहरीटकीचतुमधुरेसु उप्पन्नेसु "चतुमधुरं अञ्ञे पि सब्रह्मचारिनो परिभुञ्जिस्सन्तो" ति चिन्तेत्वा हरीटकीखण्डमेव परिभुञ्जमानस्स धुतङ्गसमादान पतिरूप होति। एस हि "उत्तमअरियवसिको भिक्खू" ति वुच्चति।

ये पनेते चीवरादयो पच्चया, तेसु यस्स कस्सचि भिक्खुनो आजीव परिसोधेन्तस्स चीवरे च पिण्डपाते च निमित्तोभासपरिकथाविञ्ञत्तियो न वट्टन्ति। सेनासने पन अपरिग्गहितधुतङ्गस्स निमित्तोभासपरिकथा वट्टन्ति।

तत्थ **निमित्तं** नाम सेनासनत्थ भूमिपरिकम्मादीनि करोन्तस्स "किं भन्ते करियति, को कारापेती" ति गिहीहि वुत्ते "न कोची" ति पटिवचनं, यं वा पनञ्ञ पि एवरूपं निमित्तकम्म। **ओभासो** नाम "उपासका तुम्हे कुहिं वसथा" ति? "पासादे, भन्ते" ति। "भिक्खूनं पन उपासका पासादो न वट्टती" ति वचन, य वा पनञ्ञ पि एवरूप ओभासकम्म। **परिकथा** नाम "भिक्खुसङ्घस्स सेनासन सम्बाध" ति वचनं, या वा पनञ्ञा पि एवरूपा परियायकथा। भेसज्जे सब्ब पि वट्टति। तथा उप्पन्न पन भेसज्ज रोगे वूपसन्ते परिभुञ्जितु वट्टति, न वट्टती ति?

तत्थ **विनयधरा** "भगवता द्वारं दिन्न, तस्मा वट्टती" ति वदन्ति। **सुत्तन्तिका** पन—"किञ्चापि आपत्ति न होति आजीवं पन कोपेति, तस्मा न वट्टति" च्चेव वदन्ति।

यो पन भगवता अनुञ्ञाता पि निमित्तोभासपरिकथाविञ्ञत्तियो अकरोन्तो अप्पिच्छतादिगुणे येव निस्साय जीवितक्खये पि पच्चुपट्ठिते अञ्ञत्रेव ओभासादीहि उप्पन्नपच्चये पटिसेवति, एस "परमसल्लेखवुत्ती" ति वुच्चति, सेय्यथा पि थेरो **सारिपुत्तो**।

८३ सो किरायस्मा एकस्मिं समये पविवेक ब्रूहयमानो महामोग्गल्लानत्थेरेन सद्धिं अञ्ञतरस्मिं अरञ्ञे विहरति, अथस्स एकस्मिं दिवसे उदरवाताबाधो उप्पज्जित्वा अतिदुक्खं जनेसि। महामोग्गल्लानत्थेरो सायन्हसमये तस्सायस्मतो उपट्ठानं गतो। थेर निपन्न दिस्वा त पवत्तिं पुच्छित्वा "पुब्बे ते, आवुसो, केन फासु होती" ति पुच्छि। थेरो आह—"गिहकाले मे, आवुसो, माता सप्पिमधुसक्करादीहि योजेत्वा असम्भिन्नखीरपायास अदासि, तेन मे फासु अहोसी" ति। सो पि आयस्मा "होतु, आवुसो, सचे मय्ह वा तुम्ह वा पुञ्ञ अत्थि, अप्पेव नाम स्वे लभिस्सामा" ति आह।

इम पन नेस कथासल्लाप चङ्कमनकोटिय रुक्खे अधिवत्था देवता सुत्वा "स्वे अय्यस्स पायास उप्पादेस्सामी" ति तावदेव थेरस्स उपट्ठाककुलं गन्त्वा

जेट्ठपुत्तस्स सरीर आविसित्वा पीळ जनेसि। अथस्स तिकिच्छानिमित्तं सन्निपतिते ञातके आह—"सचे स्वे थेरस्स एवरूप नाम पायास पटियादेथ, मुञ्चिस्सामी" ति। ते तया अवुत्ते पि "मय थेरानं निबद्ध भिक्खं देमा" ति वत्वा दुतियदिवसे तथारूपं पायास पटियादियिंसु।

महामोग्गल्लानत्थेरो पातो व आगन्त्वा "आवुसो, याव अहं पिण्डाय चरित्वा आगच्छामि, ताव इधेव होही" त्ति वत्वा गामं पाविसि। ते मनुस्सा पच्चुग्गन्त्वा थेरस्स पत्त गहेत्वा वुत्तप्पकारस्स पायासस्स पूरेत्वा अदंसु। थेरो गमनाकारं दस्सेसि। ते "भुञ्जथ, भन्ते, तुम्हे, अपर पि दस्सामा" ति थेर भोजेत्वा पुन पत्तपूरं अदंसु। थेरो गन्त्वा "हन्दावुसो सारिपुत्त, परिभुञ्जा" ति उपनामेसि। थेरो पि तं दिस्वा "अतिमनापो पायासो, कथं नु खो उप्पन्नो" ति चिन्तेन्तो तस्स उप्पत्तिमूल दिस्वा आह—"आवुसो मोग्गल्लान, अपरिभोगारहो पिण्डपातो" ति। सो पायस्मा "मादिसेन नाम आभत पिण्डपातं न परिभुञ्जती" ति चित्त पि अनुप्पादेत्वा एकवचनेनेव पत्त मुखवट्टियं गहेत्वा एकमन्ते निक्कुज्जेसि। पायासस्स सह भूमियं पतिट्ठाना थेरस्स आबाधो अन्तरधायि, ततो पट्ठाय पञ्चचत्तालीस वस्सानि न पुन उप्पज्जि। ततो महामोग्गल्लान आह—"आवुसो, वचीविञ्ञत्ति निस्साय उप्पन्नो पायासो अन्तेसु निक्खमित्वा भूमियं चरन्तेसु पि परिभुञ्जितुं अयुत्तरूपो" ति। इमं च उदान उदानेसि—

"वचीविञ्ञत्तिविप्फारा उप्पन्न मधुपायसं।
सचे भुत्तो भवेय्याहं साजीवो गरहितो मम॥
यदि पि मे अन्तगुणं निक्खमित्वा बहि चरे।
नेव भिन्देय्यमाजीवं चजमानो पि जीवितं॥
आराधेमि सक चित्तं विवज्जेमि अनेसनं।
नाहं बुद्धप्पटिकुट्ठं काहामि च अनेसनं" ति॥

चिरगुम्बवासिकअम्बखादक**महातिस्सत्थेर**वत्थु पि चेत्थ कथेतब्बं। एवं सब्बथा पि।

अनेसनाय चित्त पि अजनेत्वा विचक्खणो।
आजीव परिसोधेय्य सद्धापब्बजितो यती ति॥

(४) पच्चयसन्निस्सितसीलसम्पादनविधि

८५. यथा च वीरियेन आजीवपारिसुद्धि, तथा **पच्चयसन्निस्सितसीलं** पञ्ञाय सम्पादेतब्बं। **पञ्ञासाधनं** हि त, पञ्ञवतो पच्चयेसु आदीनवानिसंस-

दस्सनसमत्थभावतो। तस्मा पहाय पच्चयगेध धम्मेन समेन उप्पन्ने पच्चये यथावुत्तेन विधिना पञ्ञाय पच्चवेक्खित्वा परिभुञ्जन्तेन सम्पादेतब्बं।

तत्थ दुविधं पच्चवेक्खण—पच्चयानं पटिलाभकाले च परिभोगकाले च। पटिलाभकाले पि हि धातुवसेन वा पटिक्कूलवसेन वा पच्चवेक्खित्वा ठपितानि चीवरादीनि ततो उत्तरि परिभुञ्जन्तस्स अनवज्जो व परिभोगो, परिभोगकाले पि। तत्राय सन्निट्ठानकरो[1] विनिच्छयो—

चत्तारो हि परिभोगा—थेय्यपरिभोगो, इणपरिभोगो, दायज्ज-परिभोगो, सामिपरिभोगो ति। तत्र सघमज्झे पि निसीदित्वा परिभुञ्जन्तस्स दुस्सीलस्स परिभोगो **थेय्यपरिभोगो** नाम। सीलवतो अपच्चवेक्खित्वा परिभोगो **इणपरिभोगो** नाम। तस्मा चीवरं परिभोगे परिभोगे पच्चवेक्खितब्बं, पिण्डपातो आलोपे आलोपे, तथा असक्कोन्तेन पुरेभत्त-पच्छाभत्त-पुरिमयाम-मज्झिमयाम-पच्छिमयामेसु। सचस्स अपच्चवेक्खतो व अरुणं उग्गच्छति, इणपरिभोगट्ठाने तिट्ठति। सेनासनं पि परिभोगे परिभोगे पच्चवेक्खितब्ब। भेसज्जस्स पटिग्गहणे पि परिभोगे पि सतिपच्चयता व वट्टति। एव सन्ते पि पटिग्गहणे सति कत्वा परिभोगे अकरोन्तस्सेव आपत्ति, पटिग्गहणे पन सतिं अकत्वा परिभोगे करोन्तस्स अनापत्ति।

चतुब्बिधा हि सुद्धि—देसनासुद्धि, संवरसुद्धि, परियेट्ठिसुद्धि, पच्चवेक्खण-सुद्धी ति। तत्थ **देसनासुद्धि** नाम पातिमोक्खसवरसील। त हि देसनाय सुज्झनतो देसनासुद्धी ति वुच्चति। **संवरसुद्धि** नाम इन्द्रियसवरसील। त हि "न पुन एव करिस्सामी" ति चित्ताधिट्ठानसवरेनेव सुज्झनतो सवरसुद्धी ति वुच्चति। **परियेट्ठिसुद्धि** नाम आजीवपारिसुद्धिसील। त हि अनेसनं पहाय धम्मेन समेन पच्चये उप्पादेन्तस्स परियेसनाय सुद्धत्ता परियेट्ठिसुद्धी ति वुच्चति। **पच्चवेक्खणसुद्धि** नाम पच्चयसन्निस्सितसील। त हि वुत्तप्पकारेन पच्चवेक्खणेन सुज्झनतो पच्चवेक्खणसुद्धी ति वुच्चति। तेन वुत्त--"पटिग्गहणे पन सतिं अकत्वा परिभोगे करोन्तस्स अनापत्ती" ति।

सत्तन्नं सेक्खानं पच्चयपरिभोगो **दायज्जपरिभोगो** नाम। ते हि भगवतो पुत्ता, तस्मा पितुसन्तकानं पच्चयानं दायादा हुत्वा ते पच्चये परिभुञ्जन्ति। किं पनेते भगवतो पच्चये परिभुञ्जन्ति, उदाहु गिहीनं पच्चये परिभुञ्जन्ती ति? गिहीहि दिन्ना पि भगवता अनुञ्ञातत्ता भगवतो सन्तका होन्ति, तस्मा भगवतो पच्चये परिभुञ्जन्ती ति वेदितब्बा। **धम्मदायाद-**

१. सन्निट्ठानकरो ति। असन्देहकरो, एकन्तिको।

सुत्त (म० १-१८) चेत्थ साधक। खीणासवानं परिभोगो **सामिपरिभोगो** नाम। ते हि तण्हाय दासब्य अतीतत्ता सामिनो हुत्वा परिभुञ्जन्ति।

इमेसु परिभोगेसु सामिपरिभोगो च दायज्जपरिभोगो च सब्बेस वट्टति। इणपरिभोगो न वट्टति। थेय्यपरिभोगे कथा येव नत्थि। यो पनाय सीलवतो पच्चवेक्खितपरिभोगो, सो इणपरिभोगस्स पच्चनीकत्ता आणण्यपरिभोगो वा होति, दायज्जपरिभोगे येव वा सङ्गह गच्छति। सीलवा पि हि इमाय सिक्खाय समन्नागतत्ता सेक्खो त्वेव सख्य गच्छति। इमेसु पन परिभोगेसु यस्मा सामिपरिभोगो अग्गो, तस्मा तं पत्थयमानेन भिक्खुना वुत्तप्पकाराय पच्चवेक्खणाय पच्चवेक्खित्वा परिभुञ्जन्तेन पच्चयसन्निस्सितसील सम्पादेतब्ब। एव करोन्तो हि किच्चकारी होति। वुत्त पि चेत—

"पिण्ड विहार सयनासन च आप च सङ्घाटिरजप्पवाहनं।
सुत्वान धम्म सुगतेन देसित सङ्खाय सेव वरपञ्ञसावको॥
तस्मा हि पिण्डे सयनासने च आपे च सङ्घाटिरजप्पवाहने।
एतेसु धम्मेसु अनुपलित्तो भिक्खु यथा पोक्खरे वारिबिन्दु॥
(खु० १-३२६)

कालेन लद्धा परतो अनुग्गहा खज्जेसु भोज्जेसु च सायनेसु च।
मत्त स जञ्ञा सतत उपट्ठितो वणस्स आलपनरूहने यथा॥
"कन्तारे पुत्तमसं व अक्खस्सब्भञ्जन यथा।
एव आहारे आहार यापनत्थममुच्छितो" ति॥

इमस्स च पच्चयसन्निस्सितसीलस्स परिपूरकारिताय भागिनेय्य**सङ्घरक्खित**सामणेस्स वत्थु कथेतब्बं। सो हि सम्मा पच्चवेक्खित्वा परिभुञ्जि। यथाह—

"उपज्झायो म भुञ्जमानं सालिकूर सुनिब्बुत।
'मा हेव त्वं सामणेर जिव्हं झापेसि असञ्ञतो'॥
उपज्झायस्स वचो सुत्वा सवेगमलभिं तदा।
एकासने निसीदित्वा अरहत्त अपापुणिं॥
सोहं परिपुण्णसङ्कप्पो चन्दो पन्नरसो यथा।
सब्बासवपरिक्खीणो नत्थि दानि पुनब्भवो" ति॥
तस्मा अञ्ञो पि दुक्खस्स पत्थयन्तो परिक्खयं।
योनिसो पच्चवेक्खित्वा पटिसेवेथ पच्चये ति॥

एवं पातिमोक्खसंवरसीलादिवसेन चतुब्बिध।

पठमसीलपञ्चकं

(१) परियन्तपारिसुद्धिसीलं

३६. पञ्चविधकोट्ठासस्स पठमपञ्चके अनुपसम्पन्नसीलादिवसेन अत्थो वेदितब्बो। वुत्तं हेतं **पटिसम्भिदायं**—

"कतम परियन्तपारिसुद्धिसीलं? अनुपसम्पन्नानं परियन्तसिक्खापदानं, इद परियन्तपारिसुद्धिसीलं। कतम अपरियन्तपारिसुद्धिसील? उपसम्पन्नानं अपरियन्तसिक्खापदान, इदं अपरियन्तपारिसुद्धिसील। कतम परिपुण्णपारिसुद्धिसीलं? पुथुज्जनकल्याणकान कुसलधम्मे युत्तानं सेक्खपरियन्ते परिपूरकारीनं काये च जीविते च अनपेक्खानं परिच्चत्तजीवितान, इद परिपुण्णपारिसुद्धिसीलं। कतम अपरामट्ठपारिसुद्धिसील? सत्तन्न सेक्खान, इद अपरामट्ठपारिसुद्धिसील। कतम पटिप्पस्सद्धिपारिसुद्धिसील? तथागतसावकान खीणासवानं पच्चेकबुद्धानं तथागतानं अरहन्तान सम्मासम्बुद्धान, इद पटिप्पस्सद्धिपारिसुद्धिसील" ति (खु० ५–४७)।

तत्थ अनुपसम्पन्नान सीलं गणनवसेन सपरियन्तत्ता **परियन्तपारिसुद्धिसीलं** ति वेदितब्बं। उपसम्पन्नानं—

> नव कोटिसहस्सानि असीति सतकोटियो।
> पञ्ञास सतसहस्सानि छत्तिसा च पुनापरे॥
> एते संवरविनया सम्बुद्धेन पकासिता।
> पेय्यालमुखेन निद्दिट्ठा सिक्खा विनयसंवरे ति॥

(२) अपरियन्तपारिसुद्धिसीलं

३७ एव गणनवसेन सपरियन्त पि अनवसेससवसेन समादानभाव च लाभयसञातिअङ्गजीवितवसेन अदिट्ठपरियन्तभाव च सन्धाय **अपरियन्तपारिसुद्धिसीलं** ति वुत्तं, चिरगुम्बवासिकअम्बखादक**महातिस्सत्थेरस्स** सीलमिव। तथा हि सो आयस्मा—

> "धन चजे अङ्गवरस्स हेतु अङ्ग चजे जीवित रक्खमानो।
> अङ्ग धन जीवितं चापि सब्ब चजे नरो धम्ममनुस्सरन्तो" ति॥

इम सप्पुरिसानुस्सतिं अविजहन्तो जीवितसमये पि सिक्खापदं अवीतिक्कम्म तदेव अपरियन्तपारिसुद्धिसील निस्साय उपासकस्स पिट्ठिगतो व अरहत्त पापुणि। यथाह—

"न पिता न पि ते माता न ञाति न पि बन्धवो।
करोतेतादिस किच्च सीलवन्तस्स कारणा ॥
सवेगं जनयित्वान सम्मसित्वान योनिसो।
तस्स पिट्ठिगतो सन्तो अरहत्त अपापुणी" ति ॥

(३) **परिपुण्णपारिसुद्धिसीलं**

३८ पुथुज्जनकल्याणकान सीलं उपसम्पदतो पट्ठाय सुधोतजातिमणि विय सुपरिकम्मकतसु-ण्ण विय च अतिपरिसुद्धत्ता चित्तुप्पादमत्तकेन पि मलेन विरहित अरहत्तस्सेव पदट्ठान होति, तस्मा **परिपुण्णपारिसुद्धी** ति वुच्चति, **महासङ्घरक्खित**भागिनेय्य**सङ्घरक्खितत्थेरानं** विय।

महासङ्घरक्खितत्थेरं किर अतिक्कन्तसट्ठिवस्स मरणमञ्चे निपन्न भिक्खुसङ्घो लोकुत्तराधिगम पुच्छि। थेरो—"नत्थि मे लोकुत्तरधम्मो" ति आह। अथस्स उपट्ठाको दहरभिक्खु आह—"भन्ते, तुम्हे परिनिब्बुता ति समन्ता द्वादसयोजना मनुस्सा सन्निपतिता तुम्हाक पुथुज्जनकालकिरियाय महाजनस्स विप्पटिसारो भविस्सती" ति। "आवुसो, अह मेत्तेय्य भगवन्त पस्सिस्सामी ति न विपस्सनं पट्ठपेसिं। तेन हि मं निसीदापेत्वा ओकास करोही" ति। सो थर निसीदापेत्वा बहि निक्खन्तो। थेरो तस्स सह निक्खमना व अरहत्त पत्वा अच्छरिकाय सञ्ञ अदासि। सङ्घो सन्निपतित्वा आह—"भन्ते, एवरूपे मरणकाले लोकुत्तरधम्म निब्बत्तेन्ता दुक्कर करित्था" ति। "नावुसो, एत दुक्कर, अपि च वो दुक्कर आचिक्खिस्सामि—'अहं आवुसो, पब्बजितकालतो पट्ठाय असतिया अञ्ञाण-पकतं कम्म नाम न पस्सामी''' ति।

भागिनेय्यो पिस्स पञ्ञासवस्सकाले एवमेव अरहत्तं पापुणी ति।

"अप्पस्सुतो पि चे होति सीलेसु असमाहितो।
उभयेन नं गरहन्ति सीलतो च सुतेन च ॥
अप्पस्सुतो पि चे होति सीलेसु सुसमाहितो।
सीलतो न पससन्ति तस्स सम्पज्जते सुत ॥
बहुस्सुतो पि चे होति सीलेसु असमाहितो।
सीलतो नं गरहन्ति नास्स सम्पज्जते सुतं ॥
बहुस्सुतो पि चे होति सीलेसु सुसमाहितो।
उभयन न पससन्ति सीलतो च सुतेन च ॥
बहुस्सुतं धम्मधर सपञ्ञ बुद्धसावक।
नेक्ख जम्बोनदस्सेव को तं निन्दितुमरहति।
देवा पि नं पससन्ति ब्रह्मुना पि पसंसितो ति ॥ (अं० २-९)

(४) अपरामट्ठपारिसुद्धिसीलं

३९. सेक्खानं पन सीलं दिट्ठिवसेन अपरामट्ठत्ता, पुथुज्जनानं वा पन रागवसेन अपरामट्ठसीलं **अपरामट्ठपारिसुद्धी** ति वेदितब्बं, कुटुम्बियपुत्त**तिस्सत्थेरस्स** सीलं विय। सो हि आयस्मा तथारूपं सीलं निस्साय अरहत्ते पतिट्ठातुकामो वेरिके आह—

"उभो पादानि भिन्दित्वा सञ्ञपेस्सामि वो अहं।
अट्टियामि हरायामि सरागमरणं अहं" ति॥
"एवाहं चिन्तयित्वान सम्मसित्वान योनिसो।
सम्पत्ते अरुणुग्गम्हि अरहत्तं अपापुणिं" ति॥
(दी० टु०—२-३३९)

अञ्ञतरो पि महाथेरो बाळ्हगिलानो सहत्था आहारं पि परिभुञ्जितुं असक्कोन्तो सके मुत्तकरीसे पलिपन्नो सम्परिवत्तति, तं दिस्वा अञ्ञतरो दहरो—"अहो दुक्खा जीवितसङ्खारा" ति आह। तमेनं महाथेरो आह—"अहं, आवुसो, इदानि मिय्यमानो सग्गसम्पत्तिं लभिस्सामि, नत्थि मे एत्थ संसयो, इमं पन सीलं भिन्दित्वा लद्धसम्पत्ति नाम सिक्खं पच्चक्खाय पटिलद्धगिहिभावसदिसी" ति वत्वा "सीलेनेव सद्धिं मरिस्सामी" ति तत्थेव निपन्नो तमेव रोगं सम्मसन्तो अरहत्तं पत्वा भिक्खुसङ्घस्स इमाहि गाथाहि ब्याकासि—

"फुट्ठस्स मे अञ्ञतरेन ब्याधिना रोगेन बाळ्हं दुखितस्स रुप्पतो।
परिसुस्सति खिप्पमिदं कळेवरं पुप्फं यथा पंसुनि आतपे कतं॥
अजञ्ञं जञ्ञसङ्खातं असुचिं सुचिसम्मतं।
नानाकुणपपरिपूरं जञ्ञरूपं अपस्सतो॥
धिरत्थु मं आतुरं पूतिकायं दुग्गन्धियं असुचिं ब्याधिधम्मं।
यत्थप्पमत्ता अधिमुच्छिता पजा हापेन्ति मग्गं सुगतूपपत्तिया" ति॥

(५) पटिपस्सद्धिपारिसुद्धिसीलं

४०. अरहन्तादीनं पन सीलं सब्बदरथप्पटिपस्सद्धिया परिसुद्धत्ता **पटिपस्सद्धिपारिसुद्धी** ति वेदितब्बं। एवं परियन्तपारिसुद्धिआदिवसेन पञ्चविधं।

दुतियसीलपञ्चकं

(पहानसीलादिवसेन)

४१. दुतियपञ्चके पाणातिपातादीनं पहानादिवसेन अत्थो वेदितब्बो। वुत्तं हेतं **पटिसम्भिदायं**—

"पञ्चसीलानि पाणातिपातस्स पहानं सीलं, वेरमणी सीलं, चेतना सीलं, संवरो सीलं, अवीतिक्कमो सीलं। अदिन्नादानस्स, कामेसु मिच्छाचारस्स, मुसावादस्स, पिसुणाय वाचाय, फरुसाय वाचाय, सम्फप्पलापस्स, अभिज्झाय, ब्यापादस्स, मिच्छादिट्ठिया, नेक्खम्मेन कामच्छन्दस्स, अब्यापादेन ब्यापादस्स, आलोकसञ्ञाय थीनमिद्धस्स, अविक्खेपेन उद्धच्चस्स, धम्मववत्थानेन विचिकिच्छाय, ञाणेन अविज्जाय, पामोज्जेन अरतिया, पठमेन झानेन नीवरणानं, दुतियेन झानेन वितक्कविचारानं, ततियेन झानेन पीतिया, चतुत्थेन झानेन सुखदुक्खानं, आकासानञ्चायतनसमापत्तिया रूपसञ्ञाय पटिघसञ्ञाय नानत्तसञ्ञाय, विञ्ञाणञ्चायतनसमापत्तिया आकासानञ्चायतनसञ्ञाय, आकिञ्चञ्ञायतनसमापत्तिया विञ्ञाणञ्चायतनसञ्ञाय, नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्तिया आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञाय, अनिच्चानुपस्सनाय निच्चसञ्ञाय, दुक्खानुपस्सनाय सुखसञ्ञाय, अनत्तानुपस्सनाय अत्तसञ्ञाय, निब्बिदानुपस्सनाय नन्दिया, विरागानुपस्सनाय रागस्स, निरोधानुपस्सनाय समुदयस्स, पटिनिस्सग्गानुपस्सनाय आदानस्स, खयानुपस्सनाय घनसञ्ञाय, वयानुपस्सनाय आयूहनस्स, विपरिणामानुपस्सनाय धुवसञ्ञाय, अनिमित्तानुपस्सनाय निमित्तस्स, अप्पणिहितानुपस्सनाय पणिधिया, सुञ्ञतानुपस्सनाय अभिनिवेसस्स, अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय सारादानाभिनिवेसस्स, यथाभूतञाणदस्सनेन सम्मोहाभिनिवेसस्स, आदीनवानुपस्सनाय आलयाभिनिवेसस्स, पटिसङ्खानुपस्सनाय अप्पटिसङ्खाय, विवट्टानुपस्सनाय सञ्ञोगाभिनिवेसस्स, सोतापत्तिमग्गेन दिट्ठेकट्ठानं किलेसानं, सकदागामिमग्गेन ओळारिकानं किलेसानं, अनागामिमग्गेन अणुसहगतानं किलेसानं अरहत्तमग्गेन सब्बकिलेसानं पहानं सीलं, वेरमणी० चेतना० संवरो० अवीतिक्कमो सीलं। एवरूपानि सीलानि चित्तस्स अविप्पटिसाराय संवत्तन्ति, पामोज्जाय, पीतिया, पस्सद्धिया, सोमनस्साय, आसेवनाय, भावनाय, बहुलीकम्माय, अलङ्काराय, परिक्खाराय, परिवाराय, पारिपूरिया, एकन्तनिब्बिदाय, विरागाय, निरोधाय, उपसमाय, अभिञ्ञाय, सम्बोधाय, निब्बानाय संवत्तन्ती" (खु० ५-५१) ति।

४२. एत्थ च पहानं ति कोचि धम्मो नाम नत्थि अञ्ञत्र वुत्तप्पकारानं पाणातिपातादीनं अनुप्पादमत्ततो। यस्मा पन तं तं पहानं तस्स तस्स कुसलधम्मस्स पतिट्ठानट्ठेन उपधारणं होति, विकम्पाभावकरणेन च समाधानं, तस्मा पुब्बे वुत्तेनेव (८ म पिट्ठे) उपधारणसमाधानसङ्खातेन सीलनट्ठेन सीलं ति वुत्तं। इतरे चत्तारो धम्मा ततो ततो वेरमणिवसेन, तस्स तस्स संवरवसेन, तदुभयसम्पयुत्तचेतनावसेन, तं तं अवीतिक्कमन्तस्स अवीतिक्कमनवसेन च चेतसो

पवत्तिसब्भाव सन्धाय वुत्ता। सीलट्ठो पन तेसं पुब्बे पकासितो येवा ति। एवं पहानसीलादिवसेन पञ्चविध ॥

एत्तावता च किं सील ? केनट्ठेन सील ? कानस्स लक्खण-रस-पच्चुपट्ठान-पदट्ठानानि ? किमानिसस सील ? कतिविधं चेत सीलं ?—ति इमेसं पञ्हान विस्सज्जन निट्ठित ॥

सीलस्स संकिलेस-वोदानं

४३. य पन वुत्त "**को चस्स संकिलेसो ? किं वोदानं ?**" ति। तत्र वदाम—खण्डादिभावो सीलस्स सङ्किलेसो, अखण्डादिभावो वोदान। सो पन खण्डादिभावो लाभयसादिहेतुकेन भेदेन च सत्तविधमेथुनसयोगेन च सङ्गहितो। तथा हि यस्स सत्तसु आपत्तिक्खन्धेसु आदिम्हि वा अन्ते वा सिक्खापद भिन्न होति, तस्स सीलं परियन्ते छिन्नसाटको विय **खण्डं** नाम होति। यस्स पन वेमज्झे भिन्न, तस्स मज्झे छिद्दसाटको विय **छिद्दं** नाम होति। यस्स पटिपाटिया द्वे तीणि भिन्नानि, तस्स पिट्ठिया वा कुच्छिया वा उट्ठितेन विसभागवण्णेन काळरत्तादीनं अञ्ञतरसरीरवण्णा गावो विय **सबलं** नाम होति। यस्स अन्तरन्तरा भिन्नानि, तस्स अन्तरन्तरा विसभागवण्णबिन्दु-विचित्रा गावी विय **कम्मासं** नाम होति। एव ताव लाभादिहेतुकेन भेदेन खण्डादिभावो होति।

४४. एवं सत्तविधमेथुनसंयोगवसेन। वुत्त हि भगवता—

"इध, ब्राह्मण, एकच्चो समणो वा ब्राह्मणो वा सम्मा ब्रह्मचारी पटिजान-मानो न हेव खो मातुगामेन सद्धिं द्वयन्द्वयसमापत्तिं समापज्जति, अपि च खो मातुगामस्स उच्छादन परिमद्दन न्हापनं सम्बाहनं सादियति, सो तदस्सादेति, तं निकामेति, तेन च वित्तिं आपज्जति। इद पि खो, ब्राह्मण, ब्रह्मचरियस्स खण्डं पि छिद्द पि सबल पि कम्मास पि। अय वुच्चति, ब्राह्मण, अपरिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति सयुत्तो मेथुनेन सयोगेन, न परिमुच्चति जातिया, जराय, मरणेन ...पे० ... न परिमुच्चति दुक्खस्मा ति वदामि। (१)

"पुन च परं, ब्राह्मण, इधेकच्चो समणो वा ...पे० पटिजानमानो न हेव खो मातुगामेन सद्धिं द्वयन्द्वयसमापत्तिं समापज्जति। न पि मातुगामस्स उच्छादन ...पे० ...सादियति। अपि च खो मातुगामेन सद्धिं सञ्जग्घति सङ्कीळति सकेलायति, सो तदस्सादेति ...पे० ...न परिमुच्चति दुक्खस्मा ति वदामि। (२)

"पुन च परं, ब्राह्मण, इधेकच्चो समणो वा ...पे० ...न हेव खो मातुगामेन

सद्धिंद्वयन्द्वयसमापत्तिं समापज्जति । न पि मातुगामस्स उच्छादनं पे०' सादियति । न पि मातुगामेन सद्धिं सञ्जग्घति संकीळति सकेलायति । अपि च खो मातुगामस्स चक्खुना चक्खुं उपनिज्झायति पेक्खति, सो तदस्सादेति ' पे० 'न परिमुच्चति दुक्खस्मा ति वदामि । (३)

"पुन च परं, ब्राह्मण, इधेकच्चो समणो वा' पे० ' न हेव खो मातुगामेन ' न पि मातुगामस्स न पि मातुगामेन न पि मातुगामस्स पे० ''पेक्खति । अपि च खो मातुगामस्स सद्दं सुणाति तिरोकुट्टा वा तिरोपाकारा वा हसन्तिया वा भणन्तिया वा गायन्तिया वा रोदन्तिया वा, सो तदस्सादेति पे०' दुक्खस्मा ति वदामि । (४)

"पुन च पर, ब्राह्मण, इधेकच्चो समणो वा पे०' न हेव खो मातुगामेन । न पि मातुगामस्स न पि मातुगामेन ' न पि मातुगामस्स पे० रोदन्तिया वा । अपि च खो यानिस्स तानि पुब्बे मातुगामेन सद्धिं हसितलपितकीळितानि, तानि अनुस्सरति, सो तदस्सादेति पे० दुक्खस्मा ति वदामि । (५)

"पुन च पर, ब्राह्मण, इधेकच्चो समणो वा' ·पे० ''न हेव खो मातुगामेन पे० न पि मातुगामस्स पे०' न पि यानिस्स तानि पुब्बे मातुगामेन सद्धिं हसितलपितकीळितानि, तानि अनुस्सरति । अपि च खो पस्सति गहपतिं वा गहपतिपुत्त वा पञ्चहि कामगुणेहि समप्पित समङ्गीभूत परिचारयमान, सो तदस्सादेति ''पे० ' दुक्खस्मा ति वदामि । (६)

"पुन च पर, ब्राह्मण, इधेकच्चो समणो वा ' पे० न हेव खो मातुगामेन' ''पे० ' न पि पस्सति गहपतिं वा गहपतिपुत्त वा ' पे०''''परिचारयमान । अपि च खो अञ्ञतर देवनिकायं पणिधाय ब्रह्मचरियं चरति 'इमिनाहं सीलेन वा वतेन वा तपेन वा ब्रह्मचरियेन वा देवो वा भविस्सामि देवञ्ञतरो वा' ति । सो तदस्सादेति, त निकामेति, तेन च वित्तिं आपज्जति । इद पि खो, ब्राह्मण, ब्रह्मचरियस्स खण्ड पि छिद्दं पि सबल पि कम्मासं पी" (अं० ३-१९४) ति । ( )

एव लाभादिहेतुकेन भेदेन च सत्तविधमेथुनसयोगेन च खण्डादिभावो सङ्गहितो ति वेदितब्बो ।

४५ अखण्डादिभावो पन सब्बसो सिक्खापदान अभेदेन, भिन्नान च सप्पटिकम्मान पटिकम्मकरणेन, सत्तविधमेथुनसयोगाभावेन च, अपराय च कोधो उपनाहो मक्खो पळासो इस्सा मच्छरिय माया साठेय्यं थम्भो सारम्भो मानो अतिमानो मदो पमादो—ति आदीनं पापधम्मान अनुप्पत्तिया, अप्पिच्छतासन्तुट्ठितासल्लेखतादीनं च गुणानं उप्पत्तिया सङ्गहितो ।

यानि हि सीलानि लाभादीनं पि अत्थाय अभिन्नानि, पमाददोसेन वा भिन्नानि पि पटिकम्मकतानि, मेथुनसयोगेहि वा कोधूपनाहादीहि वा पापधम्मेहि अनुपहतानि, तानि सब्बसो **अखण्डानि अच्छिद्दानि असबलानि अकम्मासानी** ति वुच्चन्ति। तानि येव भुजिस्सभावकरणतो **च भुजिस्सानि,** विञ्ञूहि पसत्थत्ता **विञ्ञुपसत्थानि,** तण्हादिट्ठीहि अपरामट्ठत्ता **अपरामट्ठानि,** उपचारसमाधिं वा अप्पनासमाधिं वा सवत्तयन्ती ति **समाधिसंवत्तनिकानि** च होन्ति। तस्मा नेस एस 'अखण्डादिभावो वोदानं' ति वेदितब्बो।

४६. तं पनेत वोदानं द्वीहाकारेहि सम्पज्जति—सीलविपत्तिया च आदीनवदस्सनेन, सीलसम्पत्तिया च आनिससदस्सनेन। तत्थ "पञ्चिमे, भिक्खवे, आदीनवा दुस्सीलस्स सीलविपत्तिया" (दी० २–६९) ति एवमादिसुत्तनवेन सीलविपत्तिया आदीनवो दट्ठब्बो।

अपि च दुस्सीलो पुग्गलो दुस्सील्यहेतु अमनापो होति देवमनुस्सान, अननुसासनीयो सब्रह्मचारान, दुक्खितो दुस्सील्यगरहासु, विप्पटिसारी सालवत पससासु, ताय च पन दुस्सील्यताय साणसाटको विय दुब्बण्णो होति। ये खो पनस्स दिट्ठानुगतिं आपज्जन्ति, तेस दीघरत्तं अपायदुक्खावहनतो दुक्खसम्फस्सो। येस देय्यधम्म पटिगण्हाति, तेस न महप्फलकरणतो अप्पग्घो। अनेकवस्सगणिकगूथकूपो विय दुब्बिसोधनो। छवालातमिव उभतो परिबाहिरो। भिक्खुभाव पटिजानन्तो पि अभिक्खु येव गोगण अनुबन्धगद्रभो विय सततुब्बिग्गो सब्बवेरिकपुरिसो विय, असंवासारहो मतकळेवर विय। सुतादिगुणयुत्तो पि सब्रह्मचारान अपूजारहो सुसानग्गि विय ब्राह्मणान। अभब्बो विससाधिगमे अन्धो विय रूपदस्सने। निरासो सद्धम्मे चण्डालकुमारको विय रज्जे। 'सुखितोस्मी' ति मञ्ञमानो पि दुक्खितो व अग्गिक्खन्धपरियाये वुत्तदुक्खभागिताय।

४७. दुस्सीलान हि पञ्चकामगुणपरिभोगवन्दनमाननादिसुखस्सादगधितचित्तान तप्पच्चयं अनुस्सरणमत्तेनापि हदयसन्ताप जनयित्वा उण्हलोहितुग्गारप्पवत्तनसमत्थं अतिकटुक दुक्ख दस्सेन्तो सब्बाकारेन पच्चक्खकम्मविपाको भगवा आह—

"पस्सथ नो तुम्हे, भिक्खवे, अमुं महन्त अग्गिक्खन्धं आदित्तं सम्पज्जलितं सजोतिभूत" ति? "एव, भन्ते" ति। "तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वरं यं अमुं महन्तं अग्गिक्खन्धं आदित्त सम्पज्जलितं सजोतिभतं आलिङ्गेत्वा उपनिसीदेय्य वा उपनिपज्जेय्य वा, यं खत्तियकञ्ञं वा ब्राह्मणकञ्ञं वा

गहपतिकञ्ञं वा मुदुतलुनहत्थपादं आलिगेत्वा उपनिसीदेय्य वा उपनिपज्जेय्य वा'' ति ? ''एतदेव, भन्ते, वरं यं खत्तियकञ्ञं वा''' पे० उपनिपज्जेय्य वा। दुक्ख हेत, भन्ते, य अमु महन्त अग्गिक्खन्ध ' पे०'' 'उपनिपज्जेय्य वा'' ति। ''आरोचयामि वो, भिक्खवे, पटिवेदयामि वो, भिक्खवे, यथा एतदेव तस्स वर दुस्सोलस्स पापधम्मस्स असुचिसङ्कस्सरसमाचारस्स पटिच्छन्नकम्मन्तस्स अस्समणस्स समणपटिञ्ञस्स अब्रह्मचारिस्स ब्रह्मचारिपटिञ्ञस्स अन्तोपूतिकस्स अवस्सुतस्स कसम्बुजातस्स यं अमु' महन्तं अग्गिक्खन्धं ''पे० उपनिपज्जेय्य वा। त किस्स हेतु ? ततो निदान हि सो, भिक्खवे, मरणं वा निगच्छेय्य मरणमत्त वा दुक्ख, न त्वेव तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपाय दुग्गति विनिपात निरयं उपपज्जेय्या'' ति (अ० ३-२५१)।

एव अग्गिक्खन्धपमाय इत्थिपटिबद्धपञ्चकामगुणपरिभोगपच्चयं दुक्ख दस्सेत्वा एतेनेव उपायेन—

''त किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतम नु खो वर य बलवा पुरिसो दळ्हाय वाळरज्जुया उभो जङ्घा वेठेत्वा घसेय्य, सा छविं छिन्देय्य, छविं छेत्वा चम्मं छिन्देय्य, चम्म छेत्वा मस छिन्देय्य, मस छेत्वा न्हारु छिन्देय्य, न्हारु छेत्वा अट्ठि छिन्देय्य, अट्ठि छेत्वा अट्ठिमिञ्ज आहच्च तिट्ठेय्य ? यं वा खत्तिय-महासालान वा ब्राह्मणमहासालान वा गहपतिमहासालान वा अभिवादन सादियेय्या ति च ?

''त किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वर य बलवा पुरिसो तिण्हाय सत्तिया तेलधोताय पच्चोरस्मि पहरेय्य ? यं वा खत्तियमहासालान वा ब्राह्मण-महासालान वा गहपतिमहासालान वा अञ्जलिकम्मं सादियेय्या ति च।

''त किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वर य बलवा पुरिसो तत्तेन अयोपट्टेन आदित्तेन सम्पज्जलितेन सजोतिभूतेन काय सम्पलिवेठेय्य, य वा खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं चीवर परिभुञ्जेय्या ति च।

''त किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतम नु खो वर यं बलवा पुरिसो तत्तेन अयोसङ्कुना आदित्तेन सम्पज्जलितेन सजोतिभूतेन मुख विवरित्वा तत्त लोहगुळ आदित्तं सम्पज्जलित सजोतिभूतं मुखे पक्खिपेय्य, त तस्स ओट्ठं पि डहेय्य, मुखं पि, जिव्हं पि, कण्ठ पि, उदर पि डहेय्य, अन्त पि, अन्तगुण पि आदाय अधोभाग निक्खमेय्य, यं वा खत्तिय० ब्राह्मण० गहपतिमहासालान वा सद्धादेय्य पिण्डपात परिभुञ्जेय्या ति च।

''त किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वरं यं बलवा पुरिसो सीसे वा गहेत्वा खन्धे वा गहेत्वा तत्तं अयोमञ्चं वा अयोपीठं वा आदित्त सम्पज्जलितं

सजोतिभूतं अभिनिसीदापेय्य वा अभिनिपज्जापेय्य वा, यं वा खत्तिय० ब्राह्मण० गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं मञ्चपीठं परिभुञ्जेय्या ति च।

"तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वरं यं बलवा पुरिसो उद्धंपादं अधोसिरं गहेत्वा तत्ताय अयोकुम्भिया पक्खिपेय्य आदित्ताय सम्पज्जलिताय सजोतिभूताय, सो तत्थ फेणुद्देहकं पच्चमानो सकिं पि उद्धं गच्छेय्य, सकिं पि अधो गच्छेय्य, सकिं पि तिरियं गच्छेय्य, यं वा खत्तिय० ब्राह्मण० गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं विहारं परिभुञ्जेय्या" ति (अ० ३-२५२) ति च।

४८ इमाहि वालरज्जु-तिण्हसत्ति-अयोपट्ट-अयोगुळ-अयोमञ्च-अयोपीठ-अयोकुम्भीउपमाहि अभिवादनअञ्जलिकम्मचीवरपिण्डपातमञ्चपीठविहारपरिभोगपच्चयं दुक्खं दस्सेसि।

तस्मा—

अग्गिक्खन्धालिङ्गन-दुक्खादिकदुक्खकटुकफलं।
अविजहतो कामसुखं सुखं कुतो भिन्नसीलस्स॥
अभिवादनसादने किं नाम सुखं विपन्नसीलस्स।
दळ्हवाळरज्जुघंसन-दुक्खाधिकदुक्खभागिस्स ॥
सद्धानं अञ्जलिकम्मसादने किं सुखं असीलस्स।
सत्तिप्पहारदुक्खाधिमत्तदुक्खस्स यं हेतु॥
चीवरपरिभोगसुखं किं नाम असंयतस्स येन चिरं।
अनुभवितब्बो निरये जलितअयोपट्टसम्फस्सो॥
मधुरो पि पिण्डपातो हलाहलविसूपमो असीलस्स।
आदित्ता गिलितब्बा अयोगुळा येन चिररत्तं॥
सुखसम्मतो पि दुक्खो असीलिनो मञ्चपीठपरिभोगो।
यं बाधिस्सन्ति चिरं जलितअयोमञ्च-पीठानि॥
दुस्सीलस्स विहारे सद्धादेय्यम्हि का निवासरति।
जलितेसु निवसितब्बं येन अयोकुम्भिमज्झेसु॥
सङ्कस्सरसमाचारो कसम्बुजातो अवस्सुतो पापो।
अन्तोपूती ति च यं निन्दन्तो आह लोकगरु॥
धी जीवितं असञ्ञतस्स तस्स समणजनवेसधारिस्स।
अस्समणस्स उपहतं खतमत्तानं वहन्तस्स॥
गूथं विय कुणपं विय मण्डनकामा विवज्जयन्तीध।
यं नाम सीलवन्तो सन्तो किं जीवितं तस्स॥
सब्बभयेहि अमुत्तो मुत्तो सब्बेहि अधिगमसुखेहि।
सुपिहितसग्गद्वारो अपायमग्गं समारूळ्हो॥

करुणाय वत्थुभूतो कारुणिकजनस्स नाम को अञ्ञो।
दुस्सीलसमो दुस्सीलताय इति बहुविधा दोसा ति॥

एवमादिना पच्चवेक्खणेन सीलविपत्तिय आदीनवदस्सनं वुत्तप्पकार-विपरीततो सीलसम्पत्तिया आनिसंसदस्सन च वेदितब्ब।

४९ अपि च—

तस्स पासादिक होति पत्तचीवरधारण।
पब्बज्जा सफला तस्स यस्स सीलं सुनिम्मलं॥
अत्तानुवादादिभय सुद्धसीलस्स भिक्खुनो।
अन्धकार विय रवि हृदय नावगाहति॥
सीलसम्पत्तिया भिक्खु सोभमानो तपोवने।
पभासम्पत्तिया चन्दो गगने विय सोभति॥
कायगन्धो पि पामोज्ज सीलवन्तस्स भिक्खुनो।
करोति अपि देवान सीलगन्धे कथा व का॥
सब्बेसं गन्धजातान सम्पत्ति अभिभुय्यति।
अविघाती दिसा सब्बा कीलगन्धो पवायति॥
अप्पका पि कता कारा सीलवन्ते महप्फला।
होन्ती ति सीलवा होति पूजासक्कारभाजनं॥
सीलवन्त न बाधन्ति आसवा दिट्ठधम्मिका।
सम्परायिकदुक्खान मूलं खणति सीलवा॥
या मनुस्सेसु सम्पत्ति या च देवेसु सम्पदा।
न सा सम्पन्नसीलस्स इच्छतो होति दुल्लभा॥
अच्चन्तसन्ता पन या अय निब्बानसम्पदा।
मनो सम्पन्नसीलस्स तमेव अनुधावति॥
सब्बसम्पत्तिमूलम्हि सीलम्हि इति पण्डितो।
अनेकाकारवोकार आनिसंस विभावये ति॥

एवं हि विभावयतो सीलविपत्तितो उब्बिज्जित्वा सीलसम्पत्तिनिन्न मानस होति। तस्मा यथावुत्त इम सीलविपत्तिया आदीनवं इम च सीलसम्पत्तिया आनिसस दिस्वा सब्बादरेन सीलं वोदापेतब्ब ति॥

५० एत्तावत्ता च 'सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो' ति इमिस्सा गाथाय सील-समाधि-पञ्ञामुखेन देसिते विसुद्धिमग्गे **सीलं** ताव परिदीपित होति।

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
सीलनिद्देसो नाम पठमो परिच्छेदो।

●

धुतङ्गनिद्देसो

दुतियो परिच्छेदो

१ इदानि येहि अप्पिच्छतासन्तुट्ठितादीहि गुणेहि वुत्तप्पकारस्स सीलस्स वोदानं होति, ते गुणे सम्पादेतु यस्मा समादिण्णसीलेन योगिना धुतङ्गसमादानं कातब्ब। एव हिस्स अप्पिच्छतासन्तुट्ठितासल्लेखपविवेकापचयविरियारम्भ-सुभरतादिगुणसलिलविक्खालितमल सील चेव सुपरिसुद्ध भविस्सति, वतानि च सम्पज्जिस्सन्ति। इति अनवज्जसीलब्बतगुणपरिसुद्धसब्बसमाचारो पोराणे अरियवसत्तये पतिट्ठाय चतुत्थस्स भावनारामतासङ्खातस्स अरियवसस्स अधिगमारहो भविस्सति, तस्मा धुतङ्गकथ आरभिस्साम।

तेरस धुतङ्गानि

२. भगवता हि परिच्चत्तलोकामिसान काये च जीविते च अनपेक्खान अनुलोमपटिपद येव आराधेतुकामान कुलपुत्तान तेरस धुतङ्गानि अनुञ्ञातानि। सेय्यथीदं १ पंसुकूलिकङ्ग, २ तेचीवरिकङ्ग, ३ पिण्डपातिकङ्गं, ४ सपदान-चारिकङ्गं, ५ एकासनिकङ्ग, ६ पत्तपिण्डिकङ्ग, ७ खलुपच्छाभत्तिकङ्ग, ८ आरञ्ञिकङ्गं, ९. रुक्खमूलिकङ्ग, १० अब्भाकासिकङ्ग ११ सोसानिकङ्ग, १२ यथासन्थतिकङ्ग, १३. नेसज्जिकङ्गं ति।

तेसं अत्थादितो विनिच्छयो

तत्थ—

अत्थतो लक्खणादीहि समादानविधानतो।
पभेदतो भेदतो च तस्स तस्सानिससतो॥
कुसलत्तिकतो चेव धुतादीन विभागतो।
समासब्यासतो चापि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो॥

३ तत्थ **अत्थतो** ति ताव—रथिक-सुमान-संकारकूटादीनं यत्थ कत्थचि पसून उपरि ठितत्ता अब्भुग्गतट्ठेन तेसु तेसु पंसुकूलमिवा ति पंसुकूल। अथ वा पसु विय[1] कुच्छितभाव उलता ति पसुकूलं, कुच्छितभावं गच्छती ति वुत्तं होति। एव लद्धनिब्बचनस्स पंसुकूलस्स धारणं पसुकूलं, त सीलमस्सा ति **पंसुकूलिको**[2]। पसुकूलिकस्स अङ्ग **पंसुकूलिकङ्गं**। अङ्ग ति कारण वुच्चति। तस्मा येन समादानेन सो पंसुकूलिको होति, तस्सेतं अधिवचनं ति वेदितब्बं।

---

१. पसु विय कुच्छित उलति पवत्तती ति पंसुकूल।

२ पसुकूलस्स धारणं उत्तरपदलोपेन, त सीलमस्सा ति पंसुकूलिको, यथा—"आपूपिको" ति। एवमुपरि पि।

एतेनेव नयेन सङ्घाटि-उत्तरासङ्ग-अन्तरवासकसङ्खातं तिचीवरं सीलमस्सा ति **तेचीवरिको**। तेचीवरिकस्स अङ्गं **तेचीवरिकङ्गं**।

भिक्खासङ्खातान पन आमिसपिण्डान पातो ति पिण्डपातो, परेहि दिन्नान पिण्डान पत्ते निपतनं ति वुत्तं होति। तं पिण्डपातं उञ्छति तं तं कुलं उपसङ्कमन्तो गवेसती ति **पिण्डपातिको**। पिण्डाय वा पतितुं वतमेतस्सा ति पिण्डपाती। पतितुं ति चरितुं। पिण्डपाती एव पिण्डपातिको। पिण्डपातिकस्स अङ्गं **पिण्डपातिकङ्गं**।

दानं वुच्चति अवखण्डनं, अपेतं दानतो ति अपदानं, अनवखण्डनं ति अत्थो। सह अपदानेन सपदानं, अवखण्डनरहितं, अनुघरं ति वुत्तं होति। सपदानं चरितु इदमस्स सीलं ति सपदानचारी, सपदानचारी एव **सपदानचारिको**। तस्स अङ्गं **सपदानचारिकङ्गं**।

एकासने भोजनं एकासनं, तं सीलमस्सा ति **एकासनिको**। तस्स अङ्गं **एकासनिकङ्गं**।

दुतियभाजनस्स पटिक्खित्तत्ता केवलं एकस्मिं येव पत्ते पिण्डो पत्तपिण्डो। इदानि पत्तपिण्डगहणे पत्तपिण्डसञ्ञं कत्वा पत्तपिण्डो सीलमस्सा ति **पत्तपिण्डको**। तस्स अङ्गं **पत्तपिण्डकङ्गं**।

खलू ति पटिसेधनत्थे निपातो। पवारितेन सता पच्छा लद्धं भत्तं पच्छाभत्तं नाम, तस्स पच्छाभत्तस्स भोजनं पच्छाभत्तभोजनं, तस्मिं पच्छाभत्तभोजने पच्छाभत्तसञ्ञं कत्वा पच्छाभत्तं सीलमस्सा ति पच्छाभत्तिको। न पच्छाभत्तिको **खलुपच्छाभत्तिको**। समादानवसेन पटिक्खित्तातिरित्तभोजनस्सेतं नामं। **अट्ठकथायं** पन वुत्तं—खलू ति एको सकुणो, सो मुखेन फलं गहेत्वा तस्मिं पतिते पुन अञ्ञं न खादति, तादिसो अयं ति खलुपच्छाभत्तिको। तस्स अङ्गं।

अरञ्ञे निवासो सीलमस्सा ति **आरञ्ञिको**। तस्स अङ्गं **आरञ्ञिकङ्गं**।

रुक्खमूले निवासो रुक्खमूलं, तं सीलमस्सा ति **रुक्खमूलिको**। रुक्खमूलिकस्स अङ्गं **रुक्खमूलिकङ्गं**।

अब्भोकासिक-सोसानिकङ्गेसु पि एसेव नयो।

यदेव सन्थतं यथासन्थतं, 'इदं तुय्हं पापुणाती' ति एवं पठमं उद्दिट्ठसेनासनस्सेतं अधिवचनं। तस्मिं यथासन्थते विहरितु सीलमस्सा ति **यथासन्थतिको**। तस्स अङ्गं **यथासन्थतिकङ्गं**।

सयनं पटिक्खिपित्वा निसज्जाय विहरितु सीलमस्सा ति **नेसज्जिको**। तस्स अङ्गं **नेसज्जिकङ्गं**।

४ सब्बानेव पनेतानि तेन तेन समादानेन धुतकिलेसत्ता धुतस्स भिक्खुनो अङ्गानि, किलेसधुननतो वा धुतं ति लद्धवोहार ञाणं अङ्गमेतेस ति **धुतङ्गानि**। अथ वा धुतानि च तानि पटिपक्खनिद्धुननतो अङ्गानि च पटिपत्तिया ति पि **धुतङ्गानि**।

एव तावेत्थ अत्थतो विञ्ञातब्बो विनिच्छयो ॥

५. सब्बानेव पनेतानि समादानचेतना**लक्खणानि**। वुत्त पि चेत—"यो समादियति, सो पुग्गलो। येन समादियति, चित्तचेतसिका एते धम्मा। या समादानचेतना, त धुतङ्ग। यं पटिक्खिपति, तं वत्थू" ति। सब्बानेव च लोलुप्पविद्धंसन**रसानि**, निल्लोलुप्पभाव**पच्चुपट्ठानानि**, अप्पिच्छतादिअरियधम्म**पदट्ठानानि**।

एवमेत्थ लक्खणादीहि वेदितब्बो विनिच्छयो ॥

६ **समादानविधानतो** ति आदीसु पन पञ्चसु सब्बानेव धुतङ्गानि, धरमाने भगवति भगवतो व सन्तिके समादातब्बानि। परिनिब्बुते, महासावकस्स सन्तिके। तस्मि असति खीणासवस्स, अनागामिस्स, सकदागामिस्स, सोतापन्नस्स, तिपिटकस्स, द्विपिटकस्स, एकपिटकस्स, एकसङ्गीतिकस्स, अट्ठकथाचरियस्स। तस्मि असति धुतङ्गधरस्स, तस्मि पि असति चेतियङ्गण सम्मज्जित्वा उक्कुटिक निसीदित्वा सम्मासम्बुद्धस्स सन्तिके वदन्तेन विय समादातब्बानि। अपि च सयं पि समादातु वट्टति एव। एत्थ च चेतियपब्बते द्वे भातिकत्थेरान जेट्ठकभातु धुतङ्गप्पिच्छताय वत्थु कथेतब्ब।

अय ताव साधारणकथा ॥

इदानि एकेकस्स समादानविधानप्पभेदभेदानिसंसे वण्णयिस्साम—

१. पंसुकूलिकङ्गकथा

७ **पंसुकूलिकङ्गं** ताव "गहपतिदानचीवर पटिक्खिपामि, पंसुकूलिकङ्ग समादियामी" ति इमेसु द्वीसु वचनेसु अञ्ञतरेन समादिन्नं होति। इदं तावेत्थ **समादानं**।

एवं समादिन्नधुतङ्गेन पन तेन सोसानिक, पापणिक, रथियचोळ, सङ्कारचोळं, सोत्थियं, न्हानचोळ, तित्थचोळं, गतपच्चागतं, अग्गिदड्ढ, गोखायितं, उपचिकाखायित, उन्दूरखायित, अन्तच्छिन्न, दसाच्छिन्न, धजाहटं, थूपचीवरं, समणचीवरं, आभिसेकिक, इद्धिमयं, पन्थिकं, वाताहट, देवदत्तियं, सामुद्दिय ति एतेसु अञ्ञतर चीवरं गहेत्वा फालेत्वा दुब्बलट्ठानं पहाय थिरट्ठानानि धोवित्वा चीवरं कत्वा पोराणं गहपतिचीवर अपनेत्वा परिभुञ्जितब्ब।

तत्थ **सोसानिकं** ति सुमाने पतितकं। **पापणिकं** ति। आपणद्वारे पतितकं। **रथियचोळं** ति। पुञ्ञत्थिकेहि वातपानन्तरेन रथिकाय छड्डित चोळक। **सङ्कारचोळं** ति। सङ्कारट्ठाने छड्डितचोळकं। **सोत्थियं** ति। गब्भमलं पुञ्छित्वा छड्डितवत्थ। तिस्सामच्चमाता किर सतग्घनकेन वत्थेन गब्भमल पुञ्छापेत्वा "पंसुकूलिका गण्हिस्सन्ती" ति तालवेळिमग्गे[1] छड्डापेसि। भिक्खू जिण्णकट्ठानत्थमेव गण्हन्ति। **न्हानचोळं** ति। य भूतवेज्जेहि ससीस न्हापिता कालकण्णिचोळ ति छड्डेत्वा गच्छन्ति। **तित्थचोळं** ति। न्हानतित्थे छड्डित-पिलोतिका। **गतपच्चागतं** ति। य मनुस्सा सुसान गत्वा पच्चागता न्हत्वा छड्डेन्ति। **अग्गिदड्ढं** ति। अग्गिना दड्ढपदेस। त हि मनुस्सा छड्डेन्ति। **गोखायितादीनि** पाकटानेव। तादिसानि पि हि मनुस्सा छड्डेन्ति। **धजाहटं** ति। नाव आरोहन्ता धज बन्धित्वा आरूहन्ति, त तेसं दस्सनातिक्कमे गहेतुं वट्टति। य पि युद्धभूमियं धज बन्धित्वा ठपित्त, तं द्विन्न पि सेनानं गतकाले गहेतु वट्टति। **थूपचीवरं** ति। वम्मिक परिक्खिपित्वा बलिकम्म कत्त। **समणचीवरं** ति। भिक्खुसन्तक। **आभिसेकिकं** ति। रञ्ञो अभिसेकट्ठाने छड्डित-चीवर। **इद्धिमयं** ति। एहिभिक्खुचीवर। **पन्थिकं** ति। अन्तरामग्गे पतितकं। यं पन सामिकान सतिसम्मोसेन पतित, तं थोकं रक्खित्वा गहेतब्ब। **वाताहटं** ति। वातेन पहरित्वा दूरे पातित। त पन सामिके अपस्सन्तेन गहेतुं वट्टति। **देवदत्तियं** ति। य अनुरुद्धत्थेरस्स विय देवताहि दिन्नक। **सामुद्दियं** ति। समुद्दवीचीहि थले उस्सारित।

८ यं पन 'सङ्घस्स देमा' ति दिन्नं, चोळकभिक्खाय वा चरमानेहि लद्ध, न तं पंसुकूल। भिक्खुदत्तिये पि यं वस्सग्गेन गाहेत्वा वा दीयति, सेनासनचीवरं वा होति, न त पंसुकूल। नो गाहापेत्वा दिन्नमेव पंसुकूलं। तत्रापि य दायकेहि भिक्खुस्स पादमूले निक्खित्त, तेन पन भिक्खुना पंसुकूलिकस्स हत्थे ठपेत्वा दिन्न, त एकतोसुद्धिकं नाम। यं भिक्खुनो हत्थे ठपेत्वा दिन्नं, तेन पन पादमूले ठपितं, त पि एकतोसुद्धिक। यं भिक्खुनो पि पादमूले ठपित, तेनापि तथेव दिन्नं, तं उभतोसुद्धिक। य हत्थे ठपेत्वा लद्ध, हत्थेयेव ठपित, त अनुक्कट्ठचीवरं नाम। इति इम पंसुकूलभेद ञत्वा पंसुकूलिकेन चीवर परिभुञ्जितब्बं ति इदमेत्थ **विधानं**।

९. अय पन **पभेदो**—तयो पंसुकूलिका, उक्कट्ठो मज्झिमो मुदु ति। तत्थ सोसानिकं येव गण्हन्तो **उक्कट्ठो** होति। 'पब्बजिता गण्हिस्सन्ती' ति ठपितकं गण्हन्तो **मज्झिमो**। पादमूले ठपेत्वा दिन्नकं गण्हन्तो **मुदु** ति।

---

१. तालवेळिमग्गो नाम महागामे अनुराधपुरे च एका वीथि।

१० तेसु यस्स कस्सचि अत्तनो रुचिया गिहिदिन्नक सादितक्खणे धुतङ्ग भिज्जति । अयमेत्थ **भेदो** ।

११ अयं पना**निसंसो**—"पंसुकूलचीवर निस्साय पब्बज्जा" (वि० ३–१००) ति वचनतो निस्सयानुरूपपटिपत्तिसब्भावो, पठमे अरियवसे पतिट्ठान, आरक्खदुक्खाभावो, अपरायत्तवुत्तिता, चोरभयेन अभयता, परिभोगतण्हाय अभावो, समणसारुप्पपरिक्खारता, "अप्पानि चेव सुलभानि च तानि च अनवज्जानी" (अं० २–२९) ति भगवता सवण्णितपच्चयता, पासादिकता, अप्पिच्छतादीनं फलनिप्फत्ति, सम्मापटिपत्तिया अनुब्रूहनं, पच्छिमाय जनताय दिट्ठानुगतिआपादन ति ।

मारसेनाविघाताय पंसुकूलधरो यति ।
सन्नद्धकवचो युद्धे खत्तियो विय सोभति ॥
पहाय कासिकादीनि वरवत्थानि धारित ।
य लोकगरुना, को तं पसुकूल न धारये ।
तस्मा हि अत्तनो भिक्खु पटिञ्ञ समनुस्सरं ।
योगाचारानुकूलम्हि पंसुकूले रतो सिया ति ॥

अयं ताव पंसुकूलिङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिससवण्णना ॥

२ तेचीवरिकङ्गकथा

१२. तदनन्तर पन **तेचीवरिकङ्गं** "चतुत्थकचीवरं पटिक्खिपामि, तेचीवरिकङ्गं समादियामी" ति इमेसं अञ्ञतरवचनेन समादिन्न होति ।

१३. तेन पन तेचीवरिकेन चीवरदुस्स लभित्वा याव अफासुकभावेन कातु वा न सक्कोति, विचारक वा न लभति, सूचिआदीसु वास्स किञ्चि न सम्पज्जति, ताव निक्खिपितब्बं । निक्खित्तपच्चया दोसो नत्थि । रजितकालतो पन पट्ठाय निक्खिपितु न वट्टति, धुतङ्गचोरो नाम होति । इदमस्स **विधानं** ।

१४ **पभेदतो** पन अयं पि तिविधो होति । तत्थ **उक्कट्ठेन** रजनकाले पठमं अन्तरवासक वा उत्तरासङ्ग वा रजित्वा त निवासेत्वा इतरं रजितब्बं । त पारुपित्वा सङ्घाटि रजितब्बा । सङ्घाटि पन निवासेतु न वट्टति । इदमस्स गामन्तसेनासन वत्त । आरञ्ञके पन द्वे एकतो धोवित्वा रजितु वट्टति । यथा पन किञ्चि दिस्वा सक्कोति कासावं आकड्ढित्वा उपरि कातुं, एव आसन्ने ठाने निसीदितब्ब । **मज्झिमस्स** पन रजनसालाय रजनकासाव नाम होति, तं निवासेत्वा वा पारुपित्वा वा रजनकम्म कातु वट्टति । **मुदुकस्स** सभागभिक्खूनं

चीवरानि निवासेत्वा वा पारुपित्वा वा रजनकम्मं कातुं वट्टति। तत्रट्ठकपच्चत्थरणं पि तस्स वट्टति, परिहरितु पन न वट्टति। सभागभिक्खूनं चीवरम्पि अन्तरन्तरा परिभुञ्जितु वट्टति। धुतङ्गतेचीवरिकस्स पन चतुत्थ वत्तमानं असकासावमेव वट्टति। त च खो वित्थारतो विदत्थि, दीघतो तिहत्थमेव वट्टति।

१५. इमेस पन तिण्ण पि चतुत्थकचीवरं सादितक्खणे येव धुतङ्ग भिज्जति। अयमेत्थ **भेदो**।

१६. अयं पना**निसंसो**—तेचीवरिको भिक्खु सन्तुट्ठो होति कायपरिहारिकेन चीवरेन, तेनस्स पक्खिनो विय समादायेव[१] गमन, अप्पसमारम्भता, वत्थसन्निधिपरिवज्जनं, सल्लहुकवुत्तिता, अतिरेकचीवरलोलुप्पप्पहानं कप्पिये मत्तकारिताय सल्लखवुत्तिता, अप्पिच्छतादीन फलनिप्फत्ती ति एवमादयो गुणा सम्पज्जन्ती ति।

अतिरेकवत्थतण्हं पहाय सन्निधिविवज्जितो धीरो।
सन्तोससुखरसञ्ञू तिचीवरधरो भवति योगी॥
तस्मा सपत्तचरणो पक्खी व सचीवरो व योगिवरो।
सुखमनुविचरितुकामो चीवरनियमे रतिं कयिरा ति॥

अयं तेचीवरिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिससवण्णना॥

३ पिण्डपातिकङ्गकथा

१७ **पिण्डपातिकङ्गं पि** "अतिरेकलाभ पटिक्खिपामि, पिण्डपातिकङ्गं समादियामी" ति इमेसं अञ्ञतरवचनेन समादिन्न होति।

१८. तेन पन पिण्डपातिकेन सङ्घभत्तं, उद्देसभत्त, निमन्तनभत्त, सलाकभत्तं, पाक्खकं, उपोसथिक, पाटिपदिक, आगन्तुकभत्त, गमिकभत्तं, गिलानभत्त, गिलानुपट्ठाकभत्तं, विहारभत्त, धुरभत्तं, वारभत्त[२] ति एतानि चुद्दस भत्तानि न सादितब्बानि। सचे पन "सङ्घभत्त गण्हथा" ति आदिना नयेन अवत्वा "अम्हाकं गेहे सघो भिक्खं गण्हाति, तुम्हे पि भिक्ख गण्हथा" ति वत्वा दिन्नानि होन्ति, तानि सादितु वट्टन्ति। संघतो निरामिससलाका पि विहारे पक्कभत्तं पि वट्टति येवा ति। इदमस्स **विधानं**।

१९ **पभेदतो** पन अयं पि तिविधो होति। तत्थ **उक्कट्ठो** पुरतो पि पच्छतो पि आहटभिक्ख गण्हति, बहिद्वारे ठत्वा पत्त गण्हन्तान पि देति, पटिक्कमनं आहरित्वा दिन्नभिक्खं पि गण्हाति, त दिवसं पन निसीदित्वा भिक्ख न गण्हाति। **मज्झिमो** त दिवसं निसीदित्वा पि गण्हाति, स्वातनाय पन नाधिवासेति।

---

१ समादायेवा ति। गहेत्वा एव। २. गामवासीहि वारेन दातब्बभत्तं।

मुदुको स्वातनाय पि पुनदिवसाय पि भिक्खं अधिवासेति। ते उभो पि सेरि-बिहारसुख न लभन्ति, उक्कट्ठो व लभति। एकस्मि किर गामे अरियवंसो होति, उक्कट्ठो इतरे आह—"आयामावुसो, धम्मसवनाया" ति। तेसु एको 'एकेनम्हि, भन्ते, मनुस्सेन निसीदापितो' ति आह। अपरो 'मया, भन्ते, स्वातनाय एकस्स भिक्खा अधिवासिता' ति। एव ते उभो परिहीना। इतरो पातो व पिण्डाय चरित्वा गन्त्वा धम्मरस पटिसवेदेसि।

२०. इमेस पन तिण्ण पि सघभत्तादिअतिरेकलाभं सादितक्खणे व धुतङ्ग भिज्जति। अयमेत्थ **भेदो**।

२१. अयं पना**निसंसो**—"पिण्डियालोपभोजन निस्साय पब्बज्जा" (वि० ३-५५) ति वचनतो निस्सयानुरूपपटिपत्तिसब्भावो, दुतिये, अरियवंसे पतिट्ठानं, अपरायत्तवुत्तिता, "अप्पानि चेव सुलभानि च तानि च अनवज्जानी" (अं० २–२९) ति भगवता संवण्णितपच्चयता, कोसज्जनिम्मद्दनता, परिसुद्धा-जीवता, सेखियपटिपत्तिपूरण, अपरपोसिता, परानुग्गहकिरिया, मानप्पहानं, रसतण्हानिवारण, गणभोजन-परम्परभोजन-चारित्तसिक्खापदेहि अनापत्तिता, अप्पिच्छतादीन अनुलोमवुत्तिता, सम्मापटिपत्तिब्रूहन, पच्छिमजनतानुकम्पनं ति।

पिण्डियालोपसन्तुट्ठो अपरायत्तजीविको।
पहीनाहारलोलुप्पो होति चातुद्दिसो यति॥
विनोदयत्ति कोसज्ज आजीवस्स विसुज्झति।
तस्मा हि नातिमञ्ञेय्य भिक्खाचरियाय सुमेधसो॥

एवरूपस्स हि—

"पिण्डपातिकस्स भिक्खुनो अत्तभरस्स अनञ्ञपोसिनो।
देवापि पिहयन्ति तादिनो नो चे लाभसिलोकनिस्सितो" ति॥

(खु० १–९८)

अयं पिण्डपातिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिससवण्णना॥

४. सपदानचारिकङ्गकथा

२२. **सपदानचारिकङ्गं** पि "लोलुप्पचार पटिक्खिपामि, सपदानचारिकङ्ग समादियामि" ति इमेस अञ्ञतरवचनेन समादिन्नं होति।

२३. तेन पन सपदानचारिकेन गामद्वारे ठत्वा परिस्सयाभावो सल्लक्खे-तब्बो। यस्सा रच्छाय वा गामे वा परिस्सयो होति, तं पहाय अञ्ञत्थ चरितुं वट्टति। यस्मि घरद्वारे वा रच्छाय वा गामे वा किञ्चि न लभति, अगामसञ्ञ कत्वा गन्तब्ब। यत्थ किञ्चि लभति, तं पहाय गन्तुं न वट्टति। इमिना च भिक्खुना कालतरं पविसितब्ब, एवं हि अफासुकट्ठानं पहाय अञ्ञत्थ गन्त

सक्खिस्सति। सचे पनस्स विहारे दान देन्ता, अन्तरामग्गे वा आगच्छन्ता मनुस्सा पत्तं गहेत्वा पिण्डपात देन्ति, वट्टति। इमिना च मग्ग गच्छन्तेनापि भिक्खाचारवेलाय सम्पत्तगाम अनतिक्कमित्वा चरितब्बमेव। तत्थ अलभित्वा वा थोक लभित्वा वा गामपटिपाटिया चरितब्ब ति। इदमस्स **विधानं**।

२४ **पभेदतो** पन अय पि तिविधो होति। तत्थ **उक्कट्ठो** पुरतो आहट-भिक्ख पि पच्छतो आहटभिक्ख पि पटिक्कमनं आहरित्वा दिय्यमानं पि न गण्हाति, पत्तद्वारे पन पत्तं विस्सज्जेति। इमस्मिं हि धुतङ्गे **महाकस्सप**त्थेरेन सदिसो नाम नत्थि। तस्स पि पत्तविस्सट्ठट्ठानमेव पञ्ञायति। **मज्झिमो** पुरतो वा पच्छतो वा आहट पि पटिक्कमनं आहट पि गण्हाति, पत्तद्वारे पि पत्तं विस्सज्जेति, न पन भिक्खं आगमयमानो निसीदति। एव सो उक्कट्ठ-पिण्डपातिकस्स अनुलोमेति। **मुदुको** त दिवसं निसीदित्वा आगमेति।

२५. इमेस पन तिण्णं पि लोलुप्पचारे उप्पन्नमत्ते धुतङ्गं भिज्जति। अयमेत्थ **भेदो**।

२६ अयं पना**निसंसो**—कुलेसु निच्चनवकता, चन्दूपमता, कुलमच्छेरप्पहानं, समानुकम्पिता, कुलूपकादीनवाभावो, अव्हानानभिनन्दना, अभिहारेन अनत्थिकता, अप्पिच्छतादीन अनुलोमवुत्तिता ति।

चन्दूपमो निच्चनवो कुलेसु अमच्छरी सब्बसमानुकम्पो।
कुलूपकादीनवविप्पमुत्तो होतीध भिक्खु सपदनाचारो॥
लोलुप्पचार च पहाय तस्मा ओक्खित्तचक्खु युगमत्तदस्सी।
आकङ्खमानो भुवि सेरिचार[1] चरेय्य धीरो सपदानचार ति॥

अयं सपदानचारिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिसंसवण्णना॥

५ एकासनिकङ्गकथा

२७ **एकासनिकङ्गं** पि "नानासनभोजन पटिक्खिपामि, एकासनिकङ्ग समादियामी" ति इमेस अञ्ञतरवचनेन समादिन्नं होमि।

२८. तेन पन एकासनिकेन आसनसालायं निसीदन्तेन थेरासने अनिसीदित्वा 'इदं मय्हं पापुणिस्सती' ति पटिरूप आसन सल्लक्खेत्वा निसीदितब्ब। सचस्स विप्पकते भोजने आचरियो वा उपज्झायो वा आगच्छति, उट्ठाय वत्त कातु वट्टति। तिपिटकचूळाभयत्थेरो पनाह—"आसन वा रक्खेय्य भोजनं वा, अय च विप्पकतभोजनो, तस्मा वत्तं करोतु, भोजन पन मा भुञ्जतू" ति। इदमस्स **विधान**।

१. यथारुचि विचरणं।

२९. **पभेदतो** पन अयं पि तिविधो होति। तत्थ **उक्कट्ठो** अप्पं वा होतु बहु वा, यम्हि भोजने हत्थ ओतारेति, ततो अञ्ञ गण्हितु न लभति। सचे पि मनुस्सा "थेरेन न किञ्चि भुत्त" ति सप्पिआदीनि आहरन्ति, भेसज्जत्थमेव वट्टन्ति, न आहारत्थ। **मज्झिमो** याव पत्ते भत्त न खीयति, ताव अञ्ञं गण्हितुं लभति। अय हि भोजनपरियन्तिको नाम होति। **मुदुको** याव वासना न वुट्ठाति, ताव भुञ्जितु लभति। सो हि उदकपरियन्तिको वा होति याव पत्तधोवनं न गण्हाति ताव भुञ्जनतो, आसनपरियन्तिको वा याव न वुट्ठाति ताव भुञ्जनतो।

३०. इमेस पन तिण्णि पि नानासनभोजन भुत्तक्खणे धुतङ्गं भिज्जति। अयमेत्थ **भेदो**।

३१. अय पना**निसंसो**—अप्पाबाधता, अप्पातङ्कता, लहुट्ठान, बल, फासुविहारो, अनतिरित्तपच्चया अनापत्ति, रसतण्हाविनोदन, अप्पिच्छतादीनं अनुलोमवुत्तिता ति।

एकासनभोजने रत न यतिं भोजनपच्चया रुजा।
विसहन्ति, रसे अलोलुपो परिहापेति न कम्ममत्तनो॥
इति फासुविहारकारणे सुचिसल्लेखरतूपसेविते।
जनयेथ विसुद्धमानसो रतिमेकासनभोजने यती ति॥

अय एकासनिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिससवण्णना॥

६ पत्तपिण्डिकङ्गकथा

३२. **पत्तपिण्डिकङ्गं** पि "दुतियभाजन पटिक्खिपामि, पत्तपिण्डिकङ्ग समादियामी" ति इमेस अञ्ञतरवचनेन समादिन्नं होति।

३३. तेन पन पत्तपिण्डिकेन यागुपानकाले भाजने ठपेत्वा ब्यञ्जने लद्धे ब्यञ्जनं वा पठमं खादितब्ब, यागु वा पातब्बा। सचे पन यागुयं पक्खिपति, पूतिमच्छकादिम्हि ब्यञ्जने पक्खित्ते यागु पटिकूला होति। अप्पटिकूलमेव च कत्वा परिभुञ्जितुं वट्टति। तस्मा तथारूपं ब्यञ्जन सन्धाय इदं वुत्त। यं पन मधुसक्करादिक अप्पटिकूलं होति, त पक्खिपितब्बं। गण्हन्तेन च पमाणयुत्तमेव गण्हितब्बं। आमकमाक हत्थेन गहेत्वा खादितुं वट्टति। तथा पन अकत्वा पत्ते येव पक्खिपितब्बं। दुतियकभाजनस्स पन पटिक्खित्तत्ता अञ्ञं रुक्खपण्णं पि न वट्टती ति। इदमस्स **विधानं**।

३४ **पभेदतो** पन अयं पि तिविधो होति। तत्थ **उक्कट्ठस्स** अञ्ञत्र उच्छुखादनकाला, कचवरं पि छड्डेतु न वट्टति, ओदनपिण्डमच्छमंसपूवे पि

भिन्दित्वा खादितु न वट्टति। **मज्झिमस्स** एकेन हत्थेन भिन्दित्वा खादितुं वट्टति, हत्थयोगी नामेस। **मुदुको** पन पत्तयोगी नाम होति, तस्स य सक्का होति पत्ते पक्खिपितु, सब्ब हत्थेन वा दन्तेहि वा भिन्दित्वा खादितु वट्टति।

३५ इमेस पन तिण्ण पि दुतियकभाजनं सादितक्खणे धुतङ्ग भिज्जति। अयमेत्थ **भेदो**।

३६ अय पना**निसंसो**—नानारसतण्हाविनोदन, अत्रिच्छताय पहान, आहारे पयोजनमत्तदस्सिता, थालकादिपरिहरणखेदाभावो, अविक्खित्तभोजिता, अप्पिच्छतादीन अनुलोमवुत्तिता ति।

नानाभाजनविक्खेप हित्वा ओक्खित्तलोचनो।
खणन्तो विय मूलानि रसतण्हाय सुब्बतो॥
सरूपं विय सन्तुट्ठिं धारयन्तो सुमानसो।
परिभुञ्जेय्य आहार को अञ्ञो पत्तपिण्डिको ति॥

अयं पत्तपिण्डिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिसंसवण्णना॥

७ खलुपच्छाभत्तिकङ्गकथा

३७ **खलुपच्छाभत्तिकङ्गं पि** "अतिरित्तभोजन पटिक्खिपामि, खलुपच्छाभत्तिकङ्गं समादियामी" ति इमेस अञ्ञतरवचनेन समादिन्न होति।

३८. तेन पन खलुपच्छाभत्तिकेन पवारेत्वा पुन भोजनं कप्पियं कारेत्वा न भुञ्जितब्ब। इदमस्स **विधानं**।

३९ **पभेदतो** पन अयं पि तिविधो होति। तत्थ **उक्कट्ठो** यस्मा पठमपिण्डे पवारणा नाम नत्थि, तस्मिं पन अज्झोहरियमाने अञ्ञं पटिक्खिपतो होति, तस्मा एव पवारितो पठमपिण्डं अज्झोहरित्वा दुतियपिण्ड न भुञ्जति। **मज्झिमो** यस्मिं भोजने पवारितो, तदेव भुञ्जति। **मुदुको** पन याव आसना न वुट्ठाति ताव भुञ्जति।

४० इमेसं पन तिण्णं पि पवारितानं कप्पिय कारापेत्वा भुत्तक्खणे धुतङ्गं भिज्जति। अयमेत्थ **भेदो**।

४१. अयं पना**निसंसो**—अनतिरित्तभोजनापत्तिया दूरीभावो, ओदरिकत्ताभावो, निरामिससन्निधिता, पुनपरियेसनाय अभावो, अप्पिच्छतादीनं अनुलोमवुत्तिता ति।

परियेसनाय खेदं न याति न करोति सन्निधिं धीरो।
ओदरिकत्तं पजहति खलुपच्छाभत्तिको योगी॥

तस्मा सुगतपसत्थ सन्तोसगुणादिवुड्ढिसञ्जनन ।
दोसे विधुनितुकामो भजेय्य योगी धुतङ्गमिदं ति ॥

अयं खलुपच्छाभत्तिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिससवण्णना ॥

८ आरञ्ञिकङ्गकथा

४२. **आरञ्ञिकङ्गं पि** "गामन्तसेनासनं पटिक्खिपामि, आरञ्ञिकङ्ग समादियामी" ति इमेस अञ्ञतरवचनेन समादिन्नं होति ।

४३. तेन पन आरञ्ञिकेन गामन्तसेनासनं पहाय अरञ्ञे अरुण उट्ठापेतब्बं । तत्थ सद्धि उपचारेन गामो येव **गामन्तसेनासनं** । **गामो** नाम यो कोचि एककुटिको वा अनेककुटिको वा, परिक्खित्तो वा अपरिक्खित्तो वा, समनुस्सो वा अमनुस्सो वा, अन्तमसो अतिरेकचातुमासनिविट्ठो यो कोचि सत्थो पि ।

गामूपचारो नाम परिक्खित्तस्स गामस्स सचे अनुराधपुरस्सेव द्वे इन्दखीला होन्ति, अब्भन्तरिम इन्दखीले ठितस्स थाममज्झिमस्स पुरिसस्स लेड्डुपातो । तस्स लक्खण—यथा तरुणमनुस्सा अत्तनो बल दस्सेन्ता बाहु पसारेत्वा लेड्डु खिपन्ति, एव खित्तस्स लेड्डुस्स पतनट्ठानब्भन्तर ति **विनयधरा** । **सुत्तन्तिका** पन काकनिवारणनियमेन खित्तस्सा ति वदन्ति । अपरिक्खित्तगामे य सब्बपच्छन्तिमस्स घरस्स द्वारे ठितो मातुगामो भाजनेन उदकं छड्डेति, तस्स पतनट्ठानं घरूपचारो । ततो वुत्तनयेन एको लेड्डुपातो गामो, दुतियो गामूपचारो ।

अरञ्ञं पन **विनय**परियाये ताव "ठपेत्वा गाम च गामूपचारं च सब्बमेत अरञ्ञं" (वि० १-५७) ति वुत्त । **अभिधम्म**परियाये "निक्खमित्वा बहि इन्दखीला, सब्बमेत अरञ्ञ" (अभि० २-३०२) ति वुत्तं । इमस्मि पन **सुत्तन्तिक**परियाये "आरञ्ञकं नाम सेनासन पञ्चधनुसतिक पच्छिम" ति इद लक्खण । तं आरोपितेन आचरियधनुना परिक्खित्तस्स गामस्स इन्दखीलतो अपरिक्खित्तस्स पठमलेड्डुपाततो पट्ठाय याव विहारपरिक्खेपा मिनित्वा ववत्थपेतब्बं ।

सचे पन विहारो अपरिक्खित्तो होति, यं सब्बपठमं सेनासनं वा भत्तसाला वा धुवसन्निपातट्ठानं वा बोधि वा चेतियं वा दूरे चे पि सेनासनतो होति, तं परिच्छेदं कत्वा मिनितब्ब ति **वियट्ठकथासु** वुत्तं । **मज्झिमट्ठकथायं** पन विहारस्स पि गामस्सेव उपचारं नीहरित्वा उभिन्नं लेड्डुपातानं अन्तरा मिनितब्बं ति वुत्तं । इदमेत्थ पमाण । सचे पि आसन्ने गामो होति, विहारे ठितेहि मानुसकानं सद्दो सुय्यति, पब्बतनदीआदीहि पन अन्तरितत्ता न सक्का उजु गन्तुं । यो तस्स पकतिमग्गो होति, सचे पि नावाय सञ्चरितब्बो, तेन मग्गेन पञ्च-

धनुमतिकं गहेतब्ब। यो पन आसन्नगामस्स अङ्गसम्पादनत्थ ततो ततो मग्गं पिदहति, अयं धुतङ्गचोरो होति।

सचे पन आरञ्ञिकस्स भिक्खुनो उपज्झायो वा आचरियो वा गिलानो होति, तेन अरञ्ञे सप्पाय अलभन्तेन, गामन्तसेनासन नेत्वा उपट्ठातब्बो। कालस्सेव पन निक्खमित्वा अगयुत्तट्ठाने अरुणं उट्ठापेतब्ब। सचे अरुणुट्ठानवेलायं तेस आबाधो वड्ढति, तेस येव किच्चं कातब्ब। न धुतङ्गसुद्धिकेन भवितब्ब ति। इदमस्स **विधानं**।

४४. **पभेदतो** पन अयं पि तिविधो होति। तत्थ **उक्कट्ठेन** सब्बकाल अरञ्ञे अरुण उट्ठापेतब्बं। **मज्झिमो** चत्तारो वस्सिके मासे गामन्ते वसितु लभति। मुदुको हेमन्तिके पि।

४५. इमेस पन तिण्ण पि यथापरिच्छिन्ने काले अरञ्ञतो आगन्त्वा गामन्तसेनासने धम्मस्सवन सुणन्तान अरुणे उट्ठिते पि धुतङ्ग न भिज्जति। सुत्वा गच्छन्तानं अन्तरामग्गे उट्ठिते पि न भिज्जति। सचे पन उट्ठिते पि धम्मकथिके 'मुहुत्त निपज्जित्वा गमिस्सामा' ति निद्दायन्तानं अरुण उट्ठहति, अत्तनो वा रुचिया गामन्तसेनासने अरुण उट्ठापेन्ति, धुतङ्ग भिज्जती ति अयमेत्थ **भेदो**।

४६. अय पना**निसंसो**—आरञ्ञिको भिक्खु अरञ्ञसञ्ञं मनसिकरोन्तो भब्बो अलद्ध वा समाधि पटिलद्धु, लद्धं वा रक्खितु। सत्था पिस्स अत्तमनो होति। यथाह—"तेनाह, नागित, तस्स भिक्खुनो अत्तमनो होमि अरञ्ञविहारेना" (अ० ३-५८) ति। पन्तसेनासनवासिनो चस्स असप्पायरूपादयो चित्तं न विक्खिपन्ति, विगतसन्तासो होति, जीवितनिकन्ति जहति, पविवेकसुखरसं अस्सादेति, पंसुकूलिकादिभावो पि चस्स पतिरूपो होतो ति।

पविवित्तो असंसट्ठो पन्तसेनासने रतो।
आराधयन्तो नाथस्स वनवासेन मानस॥
एको अरञ्ञे निवसं यं सुखं लभते यति।
रसं तस्स न विन्दन्ति अपि देवा सइन्दका॥
पंसुकूलं च एसो व कवचं विय धारय।
अरञ्ञसङ्गामगतो अवसेसधुतायुधो॥
समत्थो न चिरस्सेव जेतुं मारं सवाहिनिं।
तस्मा अरञ्ञवासम्हि रति कयिराथ पण्डितो ति॥

अयं आरञ्ञिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिसंसवण्णना॥

९ रुक्खमूलिकङ्गकथा

४७ **रुक्खमूलिकङ्गं** पि "छन्न पटिक्खिपामि, रुक्खमूलिकङ्गं समादियामी" ति इमेसं अञ्ञतरवचनेन समादिन्नं होति।

४८. तेन पन रुक्खमूलिकेन सीमन्तरिकरुक्खं, चेतियरुक्खं, निय्यासरुक्खं, फलरुक्खं, वग्गुलिरुक्खं, सुसिररुक्खं, विहारमज्झे ठितरुक्खं ति इमे रुक्खे विवज्जेत्वा विहारपच्चन्ते ठितरुक्खो गहेतब्बो ति। इदमस्स **विधानं**।

४९. **पभेदतो** पन अयं पि तिविधो होति। तत्थ **उक्कट्ठो** यथारुचितं रुक्खं गहेत्वा पटिजग्गापेतुं न लभति। पादेन पण्णसटं[१] अपनेत्वा वसितब्बं। **मज्झिमो** तं ठानं सम्पत्तेहि येव पटिजग्गापेतुं लभति। **मुदुकेन** आरामिकसमणुद्देसे पक्कोसित्वा सोधापेत्वा समं कारापेत्वा वालुकं ओकिरापेत्वा पाकारपरिक्खेपं कारापेत्वा द्वारं योजापेत्वा वसितब्बं। महदिवसे[२] पन रुक्खमूलिकेन तत्थ अनिसीदित्वा अञ्ञत्थ पटिच्छन्ने ठाने निसीदितब्बं।

५०. इमेसं पन तिण्णं पि छन्ने वासं कप्पितक्खणे धुतङ्गं भिज्जति। जानित्वा छन्ने अरुणं उट्ठापितमत्ते ति **अङ्गुत्तरभाणका**। अयमेत्थ **भेदो**।

५१. अयं पना**निसंसो**—"रुक्खमूलसेनासनं निस्साय पब्बज्जा" (वि० ३–१००) ति वचनतो निस्सयानुरूपपटिपत्तिसब्भावो, "अप्पानि चेव सुलभानि च तानि च अनवज्जानी" (अ० २–२९) ति भगवता संवण्णितपच्चयता, अभिण्हं तरुपण्णविकारदस्सनेन अनिच्चसञ्ञासमुट्ठापनता, सेनासनमच्छेरकम्मारामतानं अभावो, देवताहि सहवासिता, अप्पिच्छतादीनं अनुलोमवुत्तिता ति।

वण्णितो बुद्धसेट्ठेन निस्सयो ति च भासितो।
निवासो पविवित्तस्स रुक्खमूलसमो कुतो॥
आवासमच्छेरहरे देवतापरिपालिते।
पविवित्ते वसन्तो हि रुक्खमूलम्हि सुब्बतो॥
अभिरत्तानि नीलानि पण्डूनि पतितानि च।
पस्सन्तो तरुपण्णानि निच्चसञ्ञं पनूदति॥
तस्मा हि बुद्धदायज्जं भावनाभिरतालयं।
विवित्तं नातिमञ्ञेय्य रुक्खमूलं विचक्खणो ति॥

अयं रुक्खमूलिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिसंसवण्णना॥

१० अब्भोकासिकङ्गकथा

५२. **अब्भोकासिकङ्गं पि** "छन्नं च रुक्खमूलं च पटिक्खिपामि, अब्भोका-

---

१. पण्णसटं ति। रुक्खतो पतितपण्णं। २. महदिवसे ति। उस्सवदिवसे।

सिकङ्गं समादियामी" (वि० ३–१००) ति इमेस अञ्ञतरवचनेन समादिन्न होति ।

५३. तस्स पन अब्भोकासिकस्स धम्मस्सवनाय वा उपोसथत्थाय वा उपोसथागारं पविसितुं वट्टति। सचे पविट्ठस्स देवो वस्सति, देवे वस्समाने अनिक्खमित्वा वस्सूपरमे निक्खमितब्बं । भोजनसालं वा अग्गिसालं वा पविसित्वा वत्तं कातुं, भोजनसालाय थेरे भिक्खू भत्तेन आपुच्छितु, उद्दिसन्तेन वा उद्दिसापेन्तेन वा छन्न पविसितुं, बहि दुन्निक्खित्तानि मञ्चपीठादीनि अन्तोपवेसेतु च वट्टति । सचे मग्ग गच्छन्तेन वुड्ढतरान परिक्खारो गहितो होति, देवे वस्सन्ते मग्गमज्झे ठितं सालं पविसितु वट्टति । सचे न किञ्चि गहित होति, "सालाय ठस्सामी" ति वेगेन गन्तु न वट्टति। पकतिगतिया गन्त्वा पविट्ठेन पन याव वस्सूपरमा ठत्वा गन्तब्ब ति। इदमस्स **विधानं**। **रुक्खमूलिकस्सा**पि एसेव नयो ।

५४. **पभेदतो** पन अय पि तिविधो होति। तत्थ **उक्कट्ठस्स** रुक्ख वा पब्बतं वा गेह वा उपनिस्साय वसितुं न वट्टति। अब्भोकासे येव चीवरकुटिं कत्वा वसितब्ब । **मज्झिमस्स** रुक्खपब्बतगेहानि उपनिस्साय अन्तो अप्पविसित्वा वसितुं वट्टति । **मुदुकस्स** अच्छन्नमरियादं पब्भारं पि साखामण्डपो पि पीठपटो पि खेत्तरक्खकादीहि छड्डिता तत्रट्ठककुटिका पि वट्टती ति ।

५५. इमेसं पन तिण्णं पि वासत्थाय छन्नं वा रुक्खमूल वा पविट्ठक्खणे धुतङ्गं भिज्जति। जानित्वा तत्थ अरुण उट्ठापितमत्ते ति **अङ्गुत्तरभाणका।** अयमेत्थ **भेदो** ।

५६ अय पना**निसंसो**—आवासपलिबोधुपच्छेदो, थीनमिद्धपनूदनं, "मिगा विय असंगचारिनो, अनिकेता विहरन्ति भिक्खवो" (सं० १–२००) ति पसंसाय अनुरूपता, निस्सगता, चातुद्दिसता, अपिच्छतादीनं अनुलोमवुत्तिता ति ।

अनगारियभावस्स अनुरूपे अदुल्लभे ।
तारामणिवितानम्हि चन्ददीप्पभासिते ॥
अब्भोकासे वसं भिक्खु मिगभूतेन चेतसा ।
थीनमिद्धं विनोदेत्वा भावनारामतं सितो ॥
पविवेकरसस्सादं नचिरस्सेव विन्दति ।
यस्मा, तस्मा हि सप्पञ्ञो अब्भोकासरतो सिया ति ॥

अयं अब्भोकासिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिसंसवण्णना ॥

११ सोसानिकङ्गकथा

५७ सोसानिकङ्गे पि "न सुसान पटिक्खिपामि, सोसानिकङ्गं समादियामी" ति इमेस अञ्ञतरवचनेन समादिन्न होति।

५८ तेन पन सोसानिकेन य मनुस्सा गामं निवेसन्ता "इद सुसान" ति ववत्थपेन्ति, न तत्थ वसितब्ब। न हि मतसरारे अज्झापिते तं सुसान नाम होति, झापितकालतो पन पट्ठाय सचे पि द्वादसवस्सानि छड्डित, त सुसानमव।

तस्मि पन वसन्तेन चङ्कम-मण्डपादीनि कारेत्वा मञ्चपीठ पञ्ञपेत्वा पानीय-परिभोजनीय उपट्ठापेत्वा धम्म वाचेन्तेन न वसितब्ब। गरुक हि इदं धुतङ्गं, तस्मा उप्पन्नपरिस्सयविघातत्थाय संघत्थेर वा राजयुत्तक वा जानापेत्वा अप्पमत्तेन वसितब्ब। चङ्कमन्तेन अद्धक्खिकेन आळाहन ओलोकेन्तेन चङ्कमितब्ब।

सुसानं गच्छन्तेनापि महापथा उक्कम्म उप्पथमग्गेन गन्तब्बं। दिवा येव आरम्मणं ववत्थपेतब्ब। एव हिस्स त रत्तिं भयानक न भविस्सति, अमनुस्सा रत्ति विरवित्वा विरवित्वा आहिण्डन्ता पि न केनचि पहरितब्बा। एकदिवस पि सुसानं अगन्तुं न वट्टति। मज्झिमयाम सुसाने खेपेत्वा पच्छिमयामे पटिक्कमितु वट्टती ति **अङ्गुत्तरभाणका**। अमनुस्सानं पियं तिलपिट्ठमासभत्तमच्छमसखीरतेलगुळादिखज्जभोज्ज न सेवितब्बं। कुलगेह न पविसितब्ब ति। इदमस्स **विधानं**।

५९ **पभेदतो** पन अय पि तिविधो होति। तत्थ **उक्कट्ठेन** यत्थ धुवडाहधुवकुणप-धुवरादनानि अत्थि, तत्थेव वसितब्ब। **मज्झिमस्स** तीसु एकस्मि पि सति वट्टति। **मुदुकस्स** वुत्तनयेन सुसानलक्खण पत्तमत्ते वट्टति।

६०. इमेसं पन तिण्ण पि न सुसानम्हि वासं कप्पनेन धुतङ्गं भिज्जति। सुसान अगतदिवसे ति **अङ्गुत्तरभाणका**। अयमेत्थ **भेदो**।

६१ अय पना**निसंसा**—मरणस्सतिपटिलाभो, अप्पमादविहारिता, असुभनिमित्ताधिगमो, कामरागविनोदन, अभिण्ह कायसभावदस्सन, सवेगबहुलता, आरोग्यमदादिप्पहान, भयभेरवसहनता, अमनुस्सान गरुभावनीयता, अप्पिच्छतादीन अनुलोमवुत्तिता ति।

सोसानिक हि मरणानुमतिप्पभावा निद्दागतं पि न फुसन्ति पमाददोसा।
सम्पस्सतो च कुणपानि बहूनि तस्स कामानुभाववसगं पि न होति चित्तं॥
सवेगमेति विपुल न मदं उपेति सम्मा अथा घटति निब्बुतिमेसमानो।
सोसानिकङ्गमिति नेकगुणावहत्ता निब्बाननिन्नहदयेन निसेवितब्बं ति॥

अयं सोसानिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिसंसवण्णना॥

१२ यथासन्थतिकङ्गकथा

६२ **यथासन्थतिकङ्गं पि** "सेनासनलोलुप्प पटिक्खिपामि, यथासन्थतिकङ्ग समादियामी" ति इमेस अञ्ञतरवचनेन समादिन्नं होति ।

६३ तेन पन यथासन्थतिकेन यदस्स सेनासन "इद तुय्ह पापुणाती" ति गाहित होति, तेनेव तुट्ठब्ब, न अञ्ञो उट्ठापेतब्बो । इदमस्स **विधानं** ।

६४ **पभे**.तो पन अय पि तिविधो होति । तत्थ **उक्कट्ठो** अत्तनो पत्त-सेनासन दूरे ति वा अच्चासन्ने ति वा अमनुस्सदीघजातका उपद्दुतं लभति, ति वा उण्ह ति वा सीतल ति वा पुच्छितु न लभति । **मज्झिमो** पुच्छितु गन्त्वा पन ओलोकेतु न लभति । **मुदुको** गन्त्वा आलोकेत्वा सचस्स त न रुच्चति, अञ्ञं गहेतुं लभति ।

६५ इमेसं पन तिण्णं पि सेनासनलोलुप्पे उप्पन्नमत्ते धुतङ्गं भिज्जती ति । अयमेत्थ **भेदो** ।

६६. अय पना**निसंसो**—"यं लद्धं तेन तुट्ठब्बं" (खु० ३ : १–३१) ति वुत्तोवादकरण, सब्रह्मचारीनं हितेसिता, हीनपणातविकप्पपरिच्चागो, अनुरोध-विरोधप्पहानं, अत्रिच्छताय द्वारपिदहनं, अप्पिच्छतादीनं अनुलोमवुत्तिता ति ।

यं लद्धं तेन सन्तुट्ठो यथासन्थतिको यति ।
निब्बिकप्पो सुखं सेति तिणसन्थरणेसु पि ॥
न सो रज्जति सेट्ठम्हि हीनं लद्धा न कुप्पति ।
सब्रह्मचारिनवके हितेन अनुकम्पति ॥
तस्मा अरियसताचिण्णं मुनितुङ्गववण्णित ।
अनुयुञ्जेथ मेधावी यथासन्थतरामतं ति ॥

अयं यथासन्थतिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिससवण्णना ॥

१३. नेसज्जिकङ्गकथा

६७. **नेसज्जिकङ्गं** पि "सेय्यं पटिक्खिपामि, नेसज्जिकङ्गं समादियामी" ति इमेस अञ्ञतरवचनेन समादिन्नं होति ।

६८ तेन पन नेसज्जिकेन रत्तिया तीसु यामेसु एकं यामं उट्ठाय चङ्क-मितब्बं । इरियापथेसु हि निपज्जितुमेव न वट्टति । इदमस्स **विधानं** ।

६९. **पभेदतो** पन अय पि तिविधो होति । तत्थ **उक्कट्ठस्स** नेव अपस्सेनं, न दुस्सपल्लत्थिका, न आयोगपट्टो वट्टति । **मज्झिमस्स** इमेसु तीसु यं किञ्चि वट्टति । **मुदुकस्स** अपस्सेनं पि दुस्सपल्लत्थिका पि आयोगपट्टो पि बिब्बोहनं पि

पञ्चङ्गो पि सत्तङ्गो पि वट्टति। पञ्चङ्गो पन पिट्ठिअपस्सयेन सद्धिं कतो। सत्तङ्गो नाम पिट्ठिअपस्सयेन च उभतोपस्सेसु अपस्सयेहि च सद्धिं कतो। तं किर **पीठाभयत्थेरस्स** अकंसु। थेरो अनागामी हुत्वा परिनिब्बायि।

७० इमेस पन तिण्ण पि सेय्य कप्पितमत्ते धुतङ्ग भिज्जति। अयमेत्थ **भेदो**।

७१. अय पना**निसंसो**—"सेय्यसुखं पस्ससुख मिद्धसुख अनुयुत्तो विहरती" (दी० ३–१८५) ति वुत्तस्स चेतसो विनिबन्धस्स उपच्छेदनं, सब्बकम्मट्ठानानुयोगसप्पायता, पासादिकइरियापथता, विरियारम्भानुकूलता, सम्मापटिपत्तिया अनुब्रूहनं ति।

आभुजित्वान पल्लङ्कं पणिधाय उजु तनुं।
निसीदन्तो विकम्पेति मारस्स हृदय यति॥
सेय्यसुख मिद्धसुखं हित्वा आरद्धवीरियो।
निसज्जाभिरतो भिक्खु सोभयन्तो तपोवनं॥
निरामिस पीतिसुखं यस्मा समधिगच्छति।
तस्मा समनुयुञ्जेय्य धीरो नेसज्जिकं वतं ति॥

अय नेसज्जिकङ्गे समादानविधानप्पभेदभेदानिससवण्णना॥

धुतङ्गपकिण्णककथा

७२. इदानि—

कुसलत्तिकतो चेव धुतादीनं विभागतो।
समासव्यासतो चापि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो ति॥

इमिस्सा गाथाय वसेन वण्णना होति।

तत्थ **कुसलत्तिकतो** ति सब्बानेव हि धुतङ्गानि सेक्ख-पुथुज्जन-खीणासवान वसेन सिया कुसलानि, सिया अब्याकतानि, नत्थि धुतङ्ग अकुसल ति।

यो पन वदेय्य "पापिच्छो इच्छापकतो आरञ्ञिको होती" (अ० २-४६३) ति आदिवचनतो अकुसल पि धुतङ्ग" ति। सो वत्तब्बो—न मयं 'अकुसलचित्तेन अरञ्ञे न वसती' ति वदाम। यस्स हि अरञ्ञे निवासो, सो आरञ्ञिको। सो च पापिच्छो वा भवेय्य, अप्पिच्छो वा। इमानि पन तेन तेन समादानेन धुतकिलेसत्ता धुतस्स भिक्खुना अङ्गानि, किलेसधुननतो वा धुतं ति लद्धवोहारं ञाण अङ्गमेतेसं ति धुतङ्गानि। अथ वा—धुतानि च तानि पटिपक्खनिद्धुननतो अङ्गानि च पटिपत्तिया ति पि धुतङ्गानी[1] ति वुत्तं। न च

१. पुब्बं ५० पिट्ठे।

अकुसलेन कोचि धुतो नाम होति, यस्सेतानि अङ्गानि भवेय्युं, न च अकुसलं किञ्चि धुनाति, येस त अङ्ग ति कत्वा धुतङ्गानी ति वुच्चेय्यु। नापि अकुसलं चीवरलोलुप्पादीनि चेव निद्धुनाति, पटिपत्तिया च अङ्गं होति, तस्मा सुवुत्तमिद "नत्थि अकुसल धुतङ्ग ति॥

येस पि कुसलत्तिकविनिमुत्तं धुतङ्गं, तेसं अत्थतो धुतङ्गमेव नत्थि। असन्तं कस्स धुननतो धुतङ्ग नाम भविस्सति! "धुतगुणे समादाय वत्तती" ति वचनविरोधो पि च नेसं आपज्जति, तस्मा त न गहेतब्ब" ति।

अय ताव कुसलत्तिकतो वण्णना।

७३ **धुतादीनं विभागतो** ति। धुतो वेदितब्बो, धुतवादो वेदितब्बो, धुतधम्मा वेदितब्बा, धुतङ्गानि वेदितब्बानि, कस्स धुतङ्गसेवना सप्पाया ति वेदितब्बं।

७४ तत्थ **धुतो** ति। धुतकिलेसो वा पुग्गलो, किलेसधुननो वा धम्मो।

७५. **धुतवादो** ति। एत्थ पन अत्थि धुतो न धुतवादो, अत्थि न धुतो धुतवादो, अत्थि नेव धुतो न धुतवादो, अत्थि धुतो चेव धुतवादो च।

तत्थ यो धुतङ्गेन अत्तनो किलेसे धुनि, पर पन धुतङ्गेन न ओवदति, नानुसासति **बक्कुलत्थेरो** विय, अयं धुतो न धुतवादो। यथाह—"तयिद आयस्मा बक्कुलो धुतो न धुतवादो" ति। यो पन न धुतङ्गेन अत्तनो किलेसे धुनि, केवलं अञ्ञे धुतङ्गेन ओवदति अनुसासति **उपनन्दत्थेरो** विय, अयं न धुतो धुतवादो। यथाह—"तयिद आयस्मा उपनन्दो सक्यपुत्तो न धुतो धुतवादो" ति। यो उभयविपन्नो **लाळुदायी** विय, अयं नेव धुतो न धुतवादो। यथाह— "तयिद आयस्मा लाळुदायी नेव धुतो न धुतवादो" ति। यो पन उभयसम्पन्नो धम्मसेनापति विय, अयं धुतो चेव धुतवादो च। यथाह—"तयिद आयस्मा **सारिपुत्तो** धुतो चेव धुतवादो चा" ति।

७६ **धुतधम्मा वेदितब्बा** ति। अप्पिच्छिता, सन्तुट्ठिता, सल्लेखता, पविवेकता, इदमत्थिता ति इमे धुतङ्गचेतनाय परिवारका पञ्च धम्मा "अप्पिच्छतं येव निस्साया" (अ० २-४६४) ति आदि वचनतो धुतधम्मा नाम। तत्थ अप्पिच्छता च सन्तुट्ठिता च अलोभो। सल्लेखता च पविवेकता च द्वीसु धम्मेसु अनुपतन्ति अलोभे च अमोहे च। इदमत्थिता ञाणमेव। तत्थ च अलोभेन पटिक्खेपवत्थुसु लोभं, अमोहेन तेस्वेव आदीनवपटिच्छादकं मोहं धुनाति। अलोभेन च अनुञ्ञातान पटिसेवनमुखेन पवत्त कामसुखानुयोगं, अमोहेन धुतङ्गेसु अतिसल्लेखमुखेन पवत्तं अत्तकिलमथानुयोग धुनाति। तस्मा इमे धम्मा 'धुतधम्मा' ति वेदितब्बा।

७७ **धुतङ्गानि वेदितब्बानी** ति। तेरस धुतङ्गानि वेदितब्बानि—पंसुकूलिकङ्ग पे० नेसज्जिकङ्ग ति। तानि अत्थतो लक्खणादीहि च वुत्तानेव।

७८ **कस्स धुतङ्गसेवना सप्पाया** ति? रागचरितस्स चेव मोहचरितस्स च। कस्मा? धुतङ्गसेवना हि दुक्खापटिपदा चेव सल्लेखविहारो च। दुक्खापटिपदं च निस्साय रागो वूपसम्मति। सल्लेखं निस्साय अप्पमत्तस्स मोहो पहीयति। आरञ्ञिकङ्ग रुक्खमूलिकङ्गपटिवेसना वा एत्थ दोसचरितस्सापि सप्पाया। तत्थ हिस्स असङ्घट्टियमानस्स विहरतो दोसो पि वूपसम्मती ति॥

अथ धुतादीनं विभागतो वण्णना।

७९. **समासब्यासतो** ति। इमानि पन धुतङ्गानि **समासतो** तीणि सीसङ्गानि, पञ्च असम्भिन्नङ्गानी ति अट्ठेव होन्ति। तत्थ सपदानचारिकङ्गं, एकासनिकङ्गं, अब्भोकासिकङ्ग ति इमानि तीणि सीसङ्गानि। सपदानचारिकङ्गं हि रक्खन्तो पिण्डपातिकङ्गं पि रक्खिस्सति। एकासनिकङ्गं च रक्खतो पत्तपिण्डिकङ्ग-खलुपच्छाभत्तिकङ्गानि पि सुरक्खणीयानि भविस्सन्ति। अब्भोकासिकङ्गं रक्खन्तस्स किं अत्थि रुक्खमूलिकङ्गयथासन्थतिकङ्गेसु रक्खितब्ब नाम! इति इमानि तीणि सीसङ्गानि; आरञ्ञिकङ्ग, पंसुकूलिकङ्ग, तेचीवरिकङ्ग, नेसज्जिकङ्गं, सोसानिकङ्ग ति इमानि पञ्च असम्भिन्नङ्गानि चा ति अट्ठेव होन्ति।

पुन द्वे चीवरपटिसंयुत्तानि, पञ्च पिण्डपातपटिसंयुत्तानि, पञ्च सेनासनपटिसंयुत्तानि, एकं विरियपटिसंयुत्तं ति एवं चत्तारो व होन्ति। तत्थ नेसज्जिकङ्गं विरियपटिसंयुत्तं। इतरानि पाकटानेव।

पुन सब्बानेव निस्सयवसेन द्वे होन्ति पच्चयनिस्सितानि द्वादस, विरियनिस्सितं एकं ति। सेवितब्बासेवितब्बवसेन पि द्वे येव होन्ति। यस्स हि धुतङ्गं सेवेन्तस्स कम्मट्ठानं वड्ढति, तेन सेवितब्बानि। यस्स सेवतो हायति, तेन न सेवितब्बानि। यस्स पन सेवतो पि असेवतो पि वड्ढतेव, न हायति, तेनापि पच्छिमं जनतं अनुकम्पन्तेन सेवितब्बानि। यस्सापि सेवतो पि असेवतो पि न वड्ढति, तेनापि सेवितब्बानि येव आयतिं वासनत्थाया ति।

एवं सेवितब्बासेवितब्बवसेन दुविधानि पि सब्बानेव चेतनावसेन एकविधानि होन्ति। एकमेव हि धुतङ्गं समादानचेतना ति। **अट्ठकथायं** पि वुत्तं—"या चेतना, तं धुतङ्गं ति वदन्ती" ति।

८० **ब्यासतो** पन भिक्खूनं तेरस, भिक्खुनीनं अट्ठ, सामणेरानं द्वादस, सिक्खमानसामणेरीनं सत्त, उपासक-उपासिकानं द्वे ति द्वाचत्तालीस होन्ति।

सचे पन अब्भोकासे आरञ्ञिकङ्गसम्पन्नं सुसानं होति, एको पि भिक्खु एकप्पहारेन सब्बधुतङ्गानि परिभुञ्जितु सक्कोति। भिक्खुनीनं पन आरञ्ञिकङ्ग खलुपच्छाभत्तिकङ्ग च द्वे पि सिक्खापदेनेव पटिक्खित्तानि, अब्भोकासिकङ्ग, रुक्खमूलिकङ्ग, सोसानिकङ्ग ति इमानि तीणि दुप्परिहारानि। भिक्खुनिया हि दुतियिकं विना वसितु न वट्टति। एवरूपे च ठाने समानच्छन्दा दुतियिका दुल्लभा। सचे पि लभेय्य ससट्ठविहारतो न मुच्चेय्य। एव सति यस्सत्थाय धुतङ्ग सेवेय्य, स्वेवस्सा अत्थो न सम्पज्जेय्य। एव परिभुञ्जितु असक्कुणेय्यताय पञ्च हापेत्वा भिक्खुनीनं अट्ठेव होन्ती ति वेदितब्बानि। यथावुत्तेसु पन ठपेत्वा तेचीवरिकङ्ग सेसानि द्वादस सामणेरानं, सत्त[1] सिक्खमानसामणेरीनं वेदितब्बानि। उपासकउपासिकानं पन एकासनिकङ्गं, पत्तपिण्डिकङ्गं ति इमानि द्वे पतिरूपानि चेव सक्का च परिभुञ्जितु ति द्वे धुतङ्गानी ति एव व्यासतो द्वेचत्तालीस होन्ती ति॥

अयं समासब्यासतो वण्णना।

एत्तावता च "सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो" ति इमिस्सा गाथाय सील-समाधिपञ्ञामुखेन देसिते विसुद्धिमग्गे येहि अप्पिच्छतासन्तुट्ठितादीहि गुणेहि वुत्तप्पकारस्स सीलस्स वोदानं होति, तेस सम्पादनत्थं समादातब्बधुतङ्गकथा भासिता होति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
धुतङ्गनिद्देसो नाम दुतियो परिच्छेदो।

---

१. भिक्खुनीन वुत्तेसु अट्ठसु एकं 'तेचीवरिकङ्ग' पहाय सत्त।

कम्मट्ठानग्गहणनिद्देसो

ततियो परिच्छेदो

समाधिकथा

१. इदानि यस्मा एवं धुतङ्गपरिहरणसम्पादितेहि अप्पिच्छतादीहि गुणेहि परियोदाते इमस्मिं सीले पतिट्ठितेन "सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो चित्तं पञ्ञं च भावयं" ति वचनतो चित्तसीसेन निद्दिट्ठो समाधि भावेतब्बो। सो च अतिसङ्खेपदेसितत्ता विञ्ञातुं पि ताव न सुकरो, पगेव भावेतुं, तस्मा तस्स वित्थारं च भावनानयं च दस्सेतुं इदं पञ्हाकम्मं होति—

को समाधि? केनट्ठेन समाधि? कानस्स लक्खणरसपच्चुपट्ठानपदट्ठानानि? कतिविधो समाधि? को चस्स सङ्किलेसो? किं वोदानं? कथं भावेतब्बो? समाधिभावनाय को आनिसंसो ति?

समाधिसरूपं

२. तत्रिदं विसज्जनं—

को समाधी ति? समाधि बहुविधो नानप्पकारको। तं सब्बं विभावयितुं आरब्भमानं विस्सज्जनं अधिप्पेतं चेव अत्थं न साधेय्य, उत्तरिं च विक्खेपाय संवत्तेय्य, तस्मा इधाधिप्पेतमेव सन्धाय वदाम—कुसलचित्तेकग्गता समाधि।

केनट्ठेन समाधि?

३. **केनट्ठेन समाधी** ति? समाधानट्ठेन समाधि। किमिदं समाधानं नाम? एकारम्मणे चित्तचेतसिकानं समं सम्मा च आधानं, ठपनं ति वुत्तं होति। तस्मा यस्स धम्मस्सानुभावेन[1] एकारम्मणे चित्तचेतसिका समं सम्मा च अविक्खिपमाना अविप्पकिण्णा च हुत्वा तिट्ठन्ति, इदं समाधानं ति वेदितब्बं।

समाधिस्स लक्खणादीनि

४. **कानस्स लक्खणरसपच्चुपट्ठानपदट्ठानानी** ति? एत्थ पन अविक्खेपलक्खणो समाधि, विक्खेपविद्धंसनरसो, अविकम्पनपच्चुपट्ठानो। "सुखिनो चित्तं समाधियती" (दी० १–६५) ति वचनतो पन सुखमस्स पदट्ठानं।

समाधिभेदा

५. **कतिविधो समाधी** ति? अविक्खेपलक्खणेन ताव एकविधो।

---

१. आनुभावेना ति। बलेन। पच्चयभावेना ति अत्थो।

उपचार-अप्पनावसेन दुविधो, तथा लोकिय-लोकुत्तरवसेन सप्पीतिक-निप्पीतिकवसेन सुखसहगत-उपेक्खासहगतवसेन च।

तिविधो हीनमज्झिमपणीतवसेन, तथा सवितक्कसविचारादिवसेन, पीतिसहगतादिवसेन, परित्तमहग्गतप्पमाणवसेन च।

चतुब्बिधो दुक्खापटिपदादन्धाभिञ्ञादिवसेन, तथा परित्तपरित्तारम्मणादिवसेन, चतुझानङ्गवसेन, हानभागियादिवसेन, कामावचरादिवसेन, अधिपतिवसेन च।

पञ्चविधो पञ्चकनये पञ्चझानङ्गवसेना ति।

समाधिएककदुकानि

६. तत्थ **एकविध**कोट्ठासो उत्तानत्थो येव।

दुविधकोट्ठासे—छन्न अनुस्सतिट्ठानान, मरणस्सतिया, उपसमानुस्सतिया, आहारे पटिकूलसञ्ञाय, चतुधातुववत्थानस्मा ति इमेसं वसेन लद्धचित्तकग्गता, या च अप्पनासमाधीन पुब्बभागे एकग्गता, अय **उपचारसमाधि**। "पठमस्स झानस्स परिकम्म पठमस्स झानस्स अनन्तरपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७·२–३४१) ति आदि वचनतो पन या परिकम्मानन्तरा एकग्गता, अयं **अप्पनासमाधी** ति एव उपचारप्पनावसेन दुविधो।

दुतियदुके—तीसु भूमिसु कुसलचित्तेकग्गता **लोकियो** समाधि। अरियमग्गसम्पयुत्ता एकग्गता **लोकुत्तरो** समाधा ति एवं लोकियलोकुत्तरवसेन दुविधो।

ततियदुके—चतुक्कनये द्वीसु, पञ्चकनये तीसु झानेसु एकग्गता सप्पीतिको समाधि। अवसेसेसु द्वीसु झानेसु एकग्गता निप्पीतिको समाधि। उपचारसमाधि पन सिया सप्पीतिको, सिया निप्पीतिको ति एवं सप्पीतिक-निप्पीतिकवसेन दुविधो।

चतुत्थदुके—चतुक्कनये तीसु, पञ्चकनये चतूसु झानेसु एकग्गता सुखसहगतो समाधि। अवसेसस्मि उपेक्खासहगतो समाधि। उपचारसमाधि पन सिया सुखसहगतो, सिया उपेक्खासहगतो ति एव सुखसहगतउपेक्खासहगतवसेन दुविधो।

समाधितिकानि

७. **तिकेसु—पठमत्तिके** पटिलद्धमत्तो हीनो, नातिसुभावितो मज्झिमो, सुभावित्तो वसिप्पत्तो पणीतो ति एव हीन-मज्झिम-पणीतवसेन तिविधो।

दुतियत्तिके—पठमज्झानसमाधि सद्धिं उपचारसमाधिना सवितक्कसविचारो। पञ्चकनये दुतियज्झानसमाधि अवितक्कविचारमत्तो। यो हि वितक्क-

मत्ते येव आदीनवं दिस्वा विचारे अदिस्वा केवलं वितक्कप्पहानमत्तं आकङ्ख-मानो पठमज्झानं अतिक्कमति, सो अवितक्कविचारमत्तं समाधिं पटिलभति। तं सन्धायेतं वुत्तं। चतुक्कनये पन दुतियादीसु, पञ्चकनये ततियादीसु तीसु झानेसु एकग्गता अवितक्काविचारो समाधी ति एवं सवितक्कसविचारादिवसेन तिविधो।

ततियत्तिके—चतुक्कनये आदितो द्वीसु, पञ्चकनये च तीसु झानेसु एकग्गता पीतिसहगतो समाधि। तेस्वेव ततिये च चतुत्थे च झाने एकग्गता सुखसहगतो समाधि। अवसाने उपेक्खासहगतो। उपचारसमाधि पन पीतिसुखसहगतो वा होति उपेक्खासहगतो वा ति एवं पीतिसहगतादिवसेन तिविधो।

चतुत्थत्तिके—उपचारभूमियं एकग्गता परित्तो समाधि। रूपावचरारूपाव-चरकुसले एकग्गता महग्गतो समाधि। अरियमग्गसम्पयुत्ता एकग्गता अप्पमाणो समाधी ति एव परित्त-महग्गतप्पमाणवसेन तिविधो।

समाधिचतुक्कानि

८. **चतुक्केसु पठमचतुक्के**—अत्थि समाधि दुक्खापटिपदो दन्धाभिञ्ञो, अत्थि दुक्खापटिपदो खिप्पाभिञ्ञो, अत्थि सुखापटिपदो दन्धाभिञ्ञो, अत्थि सुखापटिपदो खिप्पाभिञ्ञो ति।

तत्थ पठमसमन्नाहारतो पट्ठाय याव तस्स तस्स झानस्स उपचारं उप्पज्जति, ताव पवत्ता समाधिभावना **पटिपदा** ति वुच्चति। उपचारतो पन पट्ठाय याव अप्पना, ताव पवत्ता पञ्ञा **अभिञ्ञा** ति वुच्चति। सा पनेसा पटिपदा एकच्चस्स दुक्खा होति, नीवरणादिपच्चनीकधम्मसमुदाचारगहणताय किच्छा असुखा-सेवना ति अत्थो। एकच्चस्स तदभावेन सुखा। अभिञ्ञा पि एकच्चस्स दन्धा होति मन्दा असीघप्पवत्ति। एकच्चस्स खिप्पा अमन्दा सीघप्पवत्ति।

तत्थ यानि परतो सप्पायासप्पायानि च, पलिबोधुपच्छेदादीनि पुब्बकिच्चानि च, अप्पनाकोसल्लानि च वण्णयिस्साम, तेसु यो असप्पायसेवी होति, तस्स दुक्खा पटिपदा दन्धा च अभिञ्ञा होति। सप्पायसेविनो सुखा पटिपदा खिप्पा च अभिञ्ञा। यो पन पुब्बभागे असप्पायं सेवित्वा अपरभागे सप्पायसेवी होति, पुब्बभागे वा सप्पायं सेवित्वा अपरभागे असप्पायसेवी, तस्स वोमिस्सकता वेदितब्बा। तथा पलिबोधुपच्छेदादिकं पुब्बकिच्चं असम्पादेत्वा भावनमनुयुत्तस्स दुक्खा पटिपदा होति विपरियायेन सुखा। अप्पनाकोसल्लानि पन असम्पादेन्तस्स दन्धा अभिञ्ञा होति। सम्पादेन्तस्स खिप्पा।

अपि च तण्हाअविज्जावसेन समथविपस्सनाधिकारवसेन चापि एतास पभेदो

वेदितब्बो। तण्हाभिभूतस्स हि दुक्खा पटिपदा होति। अनभिभूतस्स सुखा। अविज्जाभिभूतस्स च दन्धा अभिञ्ञा होति। अनभिभूतस्स खिप्पा। यो च समथे अकताधिकारो, तस्स दुक्खा पटिपदा होति। कताधिकारस्स सुखा। यो पन विपस्सनाय अकताधिकारो होति, तस्स दन्धा अभिञ्ञा होति। कताधिकारस्स खिप्पा।

किलेसिन्द्रियवसेन चापि एतासं पभेदो वेदितब्बो। तिब्बकिलेसस्स हि मुदिन्द्रियस्स दुक्खा पटिपदा होति दन्धा च अभिञ्ञा, तिक्खिन्द्रियस्स पन खिप्पा अभिञ्ञा। मन्दकिलेसस्स च मुदिन्द्रियस्स सुखा पटिपदा होति दन्धा च अभिञ्ञा, तिक्खिन्द्रियस्स पन खिप्पा अभिञ्ञा ति।

इति इमासु पटिपदाअभिञ्ञासु यो पुग्गलो दुक्खाय पटिपदाय दन्धाय च अभिञ्ञाय समाधिं पापुणाति, तस्स सो समाधि दुक्खापटिपदो दन्धाभिञ्ञो ति वुच्चति। एस नयो सेसत्तये पी ति। एवं दुक्खापटिपदा दन्धाभिञ्ञादिवसेन चतुब्बिधो।

दुतियचतुक्के—अत्थि समाधि परित्तो परित्तारम्मणो, अत्थि परित्तो अप्पमाणारम्मणो, अत्थि अप्पमाणो परित्तारम्मणो, अत्थि अप्पमाणो अप्पमाणारम्मणो ति। तत्थ यो समाधि अप्पगुणो उपरिझानस्स पच्चयो भवितुं न सक्कोति, अयं परित्तो। यो पन अवड्ढिते आरम्मणे पवत्तो, अयं परित्तारम्मणो। यो पगुणो सुभावितो, उपरिझानस्स पच्चयो भवितुं सक्कोति, अयं अप्पमाणो। यो च वड्ढिते आरम्मणे पवत्तो, अयं अप्पमाणारम्मणो। वुत्तलक्खणवोमिस्सताय पन वोमिस्सकनयो वेदितब्बो। एवं परित्त-परित्तारम्मणादिवसेन चतुब्बिधो।

ततियचतुक्के—विक्खम्भितनीवरणानं वितक्कविचारपीतिसुखसमाधीनं वसेन पञ्चङ्गिकं पठमं झानं, ततो वूपसन्तवितक्कविचारं तिवङ्गिकं दुतियं, ततो विरत्तपीतिकं दुवङ्गिकं ततियं, ततो पहीनसुखं उपेक्खावेदनासहितस्स समाधिनो वसेन दुवङ्गिकं चतुत्थं। इति इमेसं चतुन्नं झानानं अङ्गभूता चत्तारो समाधी होन्ति। एवं चतुझानङ्गवसेन चतुब्बिधो।

चतुत्थचतुक्के—अत्थि समाधि हानभागियो, अत्थि ठितिभागियो, अत्थि विसेसभागियो, अत्थि निब्बेधभागियो। तत्थ पच्चनीकसमुदाचारवसेन हानभागियता, तदनुधम्मताय सतिया सण्ठानवसेन ठितिभागियता, उपरिविसेसाधिगमवसेन विसेसभागियता, निब्बिदासहगतसञ्ञामनसिकारसमुदाचारवसेन निब्बेधभागियता च वेदितब्बा। यथाह—"पठमस्स झानस्स लाभी कामसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति हानभागिनी पञ्ञा। तदनुधम्मता सति सन्तिट्ठति ठितिभागिनी पञ्ञा। अवितक्कसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति

विसेसभागिनी पञ्ञा। निब्बिदासहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति विरागूपसहिता, निब्बेधभागिनी पञ्ञा" (अभि० २–३९२) ति। ताय पन पञ्ञाय सम्पयुत्ता समाधी पि चत्तारो होन्ती ति। एवं हानभागियादिवसेन चतुब्बिधो।

पञ्चमचतुक्के—कामावचरो समाधि, रूपावचरो समाधि, अरूपावचरो समाधि, अपरियापन्नो समाधी ति एवं चत्तारो समाधी। तत्थ सब्बा पि उपचारेकग्गता कामावचरो समाधि, तथा रूपावचरादिकुसलचित्तेग्गता इतरे तयो ति। एव कामावचरादिवसेन चतुब्बिधो।

छट्ठचतुक्के—"छन्दं चे, भिक्खु, अधिपतिं करित्वा लभति समाधिं, लभति चित्तस्सेकग्गतं—अयं वुच्चति छन्दसमाधि। विरिय चे भिक्खु ·पे०· चित्त चे, भिक्खु· पे०···वीमस चे, भिक्खु, अधिपतिं करित्वा लभति समाधिं, लभति चित्तस्सेकग्गत—अय वुच्चति वीमसासमाधी" (अभि० २–२६४) ति। एव अधिपतिवसेन चतुब्बिधो।

९. **पञ्चके**—य चतुक्कभेदे वुत्तं दुतियं झानं, त वितक्कमत्तातिक्कमेन दुतिय, वितक्कविचारातिक्कमेन ततिय ति एव द्विधा भिन्दित्वा पञ्च झानानि वेदितब्बानि। तेसं अङ्गभूता च पञ्च समाधी ति। एवं पञ्चझानङ्गवसेन पञ्चविधता वेदितब्बा।

समाधिसंकिलेसवोदानं

१० **को चस्स संकिलेसो ? किं वोदानं** ति ? एत्थ पन विस्सज्जनं विभङ्गे वुत्तमेव। वुत्त हि तत्थ—"सङ्किलेस ति हानभागियो धम्मो। वोदानं ति विसेसभागियो धम्मो" (अभि० २–४०६) ति। तत्थ "पठमस्स झानस्स लाभी कामसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति हानभागिनी पञ्ञा" (अभि० २–३९२) ति इमिना नयेन हानभागियधम्मो वेदितब्बो। "अवितक्कसहगता सञ्ञामनसिकारा समुदाचरन्ति विसेसभागिनी पञ्ञा" (अभि० २-३९२) ति इमिना नयेन विसेसभागियधम्मो वेदितब्बो।

दसपलिबोधकथा

११. **कथं भावेतब्बो** ति। एत्थ पन यो ताव अयं लोकियलोकुत्तरवसेन दुविधो ति आदीसु अरियमग्गसम्पयुत्तो समाधि वुत्तो, तस्स भावनानयो पञ्ञाभावनानयेनेव सङ्गहितो। पञ्ञाय हि भाविताय सो भावितो होति। तस्मा त सन्धाय एवं भावेतब्बो ति न किञ्चि विसु वदाम।

यो पनायं लोकियो, सो वुत्तनयेन सीलानि विसोधेत्वा सुपरिसुद्धे सीले

पतिट्ठितेन य्वास्स दससु पलिबोधेसु पलिबोधो अत्थि, त उपच्छिन्दित्वा कम्मट्ठानदायक कल्याणमित्त उपसङ्कमित्वा अत्तनो चरियानुकूल चत्तालीसाय कम्मट्ठानेसु अञ्ञतरं कम्मट्ठानं गहेत्वा समाधिभावनाय अननुरूपं विहार पहाय अनुरूपे विहारे विहरन्तेन खुद्दकपलिबोधुपच्छेदं कत्वा सब्बं भावनाविधान अपरिहापेन्तेन **पलिबोधो** भावेतब्बो ति अयमेत्थ सङ्खेपो ।

१२ अय पन वित्थारो । य ताव वुत्त—"**य्वास्स दससु पलिबोधेसु अत्थि, तं उपच्छिन्दित्वा**" ति, एत्थ—

> आवासो च कुलं लाभो गणो कम्मं च पञ्चमं ।
> अद्धानं ञाति आबाधो गन्थो इद्धी ति ते दसा ति ।।

इमे दस पलिबोधा नाम । तत्थ आवासो येव आवासपलिबोधो । एस नयो कुलादोसु ।

१३. तत्थ[1] **आवासो** ति । एको पि ओवरको वुच्चति, एकं पि परिवेणं, सकलो पि सङ्घारामो । स्वाय न सब्बस्सेव पलिबोधो होति । यो पनेत्थ नवकम्मादीसु उस्सुक्क वा आपज्जति, बहुभण्डसन्निचयो वा होति, येन केनचि वा कारणेन अपेक्खवा पटिबद्धचित्तो, तस्सेव पलिबोधो होति, न इतरस्स ।

तत्रिद वत्थु—द्वे किर कुलपुत्ता अनुराधपुरा निक्खमित्वा अनुपुब्बेन थूपारामे पब्बजिंसु । तेसु एको द्वेमातिका पगुणा कत्वा पञ्चवस्सिको हुत्वा पवारेत्वा पाचीनखण्डराजिं[2] नाम गतो । एको तत्थेव वसति । पाचीनखण्डराजिगतो तत्थ चिरं वसित्वा थेरो हुत्वा चिन्तेसि—"पटिसल्लानसारुप्पमिद ठान, हन्द नं सहायकस्सापि आरोचेमो" ति । ततो निक्खमित्वा अनुपुब्बेन थूपारामं पाविसि । पविसन्तं येव च नं दिस्वा समानवस्सिकत्थेरो पच्चुग्गन्त्वा पत्तचीवर पटिग्गहेत्वा वत्तं अकासि ।

आगन्तुकत्थेरो सेनासन पविसित्वा चिन्तेसि—"इदानि मे सहायो सप्पि वा फाणितं वा पानकं वा पेसेस्सति । अयं हि इमस्मिं नगरे चिरनिवासी" ति । सो रत्तिं अलद्धा पातो चिन्तेसि—"इदानि उपट्ठाकेहि गहित यागुखज्जकं पेसेस्सती" ति । तं पि अदिस्वा "पहिणन्ता नत्थि, पविट्ठस्स मञ्ञे दस्सन्ती" ति पातो व तेन सद्धिं गाम पाविसि । ते द्वे एक वीथिं चरित्वा उळुङ्कमत्त यागुं लभित्वा आसनसालाय निसीदित्वा पिविंसु ।

ततो आगन्तुको चिन्तेसि—"निबद्धयागु मञ्ञे नत्थि, भत्तकाले इदानि मनुस्सा पणीतं भत्तं दस्सन्ती" ति । ततो भत्तकाले पि पिण्डाय चरित्वा लद्धमेव

---

१. गाथायं । २ पुरत्थिमदिसायं पब्बतखण्डानं अन्तरे वनराजिट्ठानं ।

भुञ्जित्वा इतरो आह—"किं, भन्ते, सब्बकालं एवं यापेथा" ति ? 'आमावुसो' ति। 'भन्ते, पाचीनखण्डराजि फासुका, तत्थ गच्छामा' ति। थेरो नगरतो दक्खिणद्वारेन निक्खमन्तो कुम्भकारगाममग्गं पटिपज्जि। इतरो आह—"किं पन, भन्ते, इमं मग्गं पटिपन्नत्था" ति ? "ननु त्वं आवुसो, पाचीनखण्डराजिया वण्ण अभासो" ति ? "किं पन, भन्ते, तुम्हाक एत्तक काल वसितट्ठाने न कोचि अतिरेकपरिक्खारो अत्थो" ति ? "आमावुसो मञ्चपीठं सघिक, तं पटिसामितमेव, अञ्ञं किञ्चि नत्थी" ति। "मय्हं पन भन्ते कत्तदण्डो तेलनाळिउपाहनत्थविका च तत्थेवा" ति। "तया आवुसो एकदिवस वसित्वा एत्तक ठपित" ति ? 'आम भन्ते।"

सो पसन्नचित्तो थेर वन्दित्वा "तुम्हादिसानं भन्ते सब्बत्थ अरञ्ञवासो येव। थूपारामो चतुन्नं बुद्धानं धातुनिधानट्ठानं, लोहपासादे सप्पाय धम्मस्सवन महाचेतियदस्सनं थेरदस्सन च लब्भति, बुद्धकालो विय पवत्तति। इधेव तुम्हे वसथा" ति दुतियदिवसे पत्तचीवरं गहेत्वा सयमेव अगमासी ति। ईदिसस्स आवासो न पलिबोधो होति। (१)

कुल ति। ञातिकुल वा उपट्ठाककुल वा। एकच्चस्स हि उपट्ठाककुल पि "सुखितेसु सुखितो" (अभि० २–४२५) ति आदिना नयेन संसट्ठस्स विहरतो पलिबोधो होति, सो कुलमानुसकेहि विना धम्मस्सवनाय सामन्तविहारं पि न गच्छति। एकच्चस्स मातापितरो पि पलिबोधा न होन्ति, कोरण्डकविहारवासित्थेरस्स भागिनेय्यदहरभिक्खुनो विय।

सो किर उद्देसत्थ रोहण अगमासि। थेरभगिनी पि उपासिका सदा थेरं तस्स पवत्ति पुच्छति। थेरो एकदिवस 'दहर आनेस्सामी' ति रोहणाभिमुखो पायासि।

दहरो पि "चिर मे इध वुत्थ, उपज्झायं दानि पस्सित्वा उपासिकाय च पवत्तिं ञत्वा आगमिस्सामी" ति रोहणतो निक्खमि। ते उभो पि गङ्गातीरे समागच्छिंसु। सो अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले थेरस्स वत्तं कत्वा "कुहिं यासी" ति पुच्छितो तमत्थं आरोचेसि। "थेरो सुट्ठ ते कतं, उपासिका पि सदा पुच्छति, अह पि एतदत्थमेव आगतो, गच्छ त्व, अहं पन इधेव इम वस्स वसिस्सामी" ति त उय्योजेमि। सो वस्सूपनायिकदिवसे येव त विहार पत्तो। सेनासनं पिस्स पितरा कारितमेव पत्त।

अथस्स पिता दुतियदिवसे आगन्त्वा "कस्स, भन्ते, अम्हाक सेनासनं पत्तं" ति पुच्छन्तो "आगन्तुकस्स दहरस्सा" ति सुत्वा त उपसङ्कमित्वा वन्दित्वा आह—"भन्ते, अम्हाक सेनासने वस्स उपगतस्स वत्त अत्थी" ति। "किं उपासका" ति ? "तेमास अम्हाक येव घरे भिक्खं गहेत्वा पवारेत्वा गमनकाले आपुच्छितब्ब" ति। सो तुण्हिभावेन अधिवासेसि। उपासको पि घरं गन्त्वा "अम्हाकं

आवासे एको आगन्तुको अय्यो उपगतो सक्कच्चं उपट्ठातब्बो" ति आह। उपासिका "साधू" ति सम्पटिच्छित्वा पणीतं खादनीयं भोजनीयं पटियादेसि। दहरो पि भत्तकाले ञातिघरं अगमासि। न नं कोचि सञ्जानि।

सो तेमासं पि तत्थ पिण्डपातं परिभुञ्जित्वा वस्संवुत्थो "अहं गच्छामी" ति आपुच्छि। अथस्स ञातका "स्वे, भन्ते, गच्छथा" ति दुतियदिवसे घरे येव भोजेत्वा तेलनाळिं पूरेत्वा एकं गुळपिण्डं नवहत्थं च साटकं दत्वा "गच्छथ, भन्ते" ति आहंसु। सो अनुमोदनं कत्वा रोहणाभिमुखो पायासि।

उपज्झायो पिस्स पवारेत्वा पटिपथं आगच्छन्तो पुब्बे दिट्ठट्ठाने येव तं अद्दस। सो अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले थेरस्स वत्तं अकासि। अथ नं थेरो पुच्छि "किं, भद्दमुख, दिट्ठा ते उपासिका" ति? सो "आम, भन्ते" ति सब्बं पवत्तिं आरोचेत्वा तेन तेलेन थेरस्स पादे मक्खेत्वा गुळेन पानकं कत्वा तं पि साटकं थेरस्सेव दत्वा थेरं वन्दित्वा "मय्हं, भन्ते, रोहणं येव सप्पाय" न्ति अगमासि। थेरो पि विहारं आगन्त्वा दुतियदिवसे कोरण्डकगामं पाविसि।

उपासिका पि "मय्हं भाता मम पुत्तं गहेत्वा इदानि आगच्छती" ति सदा मग्गं ओलोकयमाना व तिट्ठति। सा तं एकमेव आगच्छन्तं दिस्वा "मतो मे मञ्ञे पुत्तो, अयं थेरो एकको व आगच्छती" ति थेरस्स पादमूले निपतित्वा परिदेवमाना रोदि। थेरो "नूनं दहरो अप्पिच्छताय अत्तानं अजानापेत्वा व गतो" ति तं समस्सासेत्वा सब्बं पवत्तिं आरोचेत्वा पत्तत्थविकतो तं साटकं नीहरित्वा दस्सेति।

उपासिका पसीदित्वा पुत्तेन गतदिसाभिमुखा उरेन निपज्जित्वा नमस्समाना आह—"मय्हं पुत्तसदिसं वत मञ्ञे भिक्खुं कायसक्खिं कत्वा भगवा रथविनीतपटिपदं (म० १–१९२), नालकपटिपदं (खु० १–३७७), तुवट्टकपटिपदं (खु० १–४१०), चतुपच्चयसन्तोसभावनारामतादीपकं महाअरियवंसपटिपदं (अं० २–३०) च देसेसि। विजातमातुया नाम गेहे तेमासं भुञ्जमानो पि 'अहं पुत्तो त्वं माता' ति न वक्खति, अहो अच्छरियमनुस्सो" ति। एवरूपस्स मातापितरो पि पलिबोधा न होन्ति, पगेव अञ्ञं उपट्ठाककुलं ति। (२)

लाभो ति। चत्तारो पच्चया। ते कथं पलिबोधा होन्ति? पुञ्ञवन्तस्स हि भिक्खुनो गतगतट्ठाने मनुस्सा महापरिवारे पच्चये देन्ति। सो तेसं अनुमोदेन्तो धम्मं देसेन्तो समणधम्मं कातुं ओकासं न लभति। अरुणुग्गमनतो याव पठमयामो, ताव मनुस्ससंसग्गो न उपच्छिज्जति। पुन बलवपच्चूसे येव बाहुल्लिकपिण्डपातिका आगन्त्वा "भन्ते, असुको उपासको उपासिका अमच्चो अमच्चधीता तुम्हाकं दस्सनकामा" ति वदन्ति। सो 'गण्ह, आवुसो, पत्तचीवरं'

त्ति गमनसज्जो व होती ति निच्चब्यावटो। तस्सेव ते पच्चया पलिबोधा होन्ति। तेन गणं पहाय यत्थ नं न जानन्ति, तत्थ एककेन चरितब्ब। एवं सो पलिबोधो उपच्छिज्जतो ति। (३)

गणो ति। सुत्तन्तिकगणो वा आभिधम्मिकगणो वा, यो तस्स उद्देस वा परिपुच्छं वा देन्तो समणधम्मस्स ओकास न लभति, तस्सेव गणो पलिबोधो होति, तेन सो एवं उपच्छिन्दितब्बो—सचे तेस भिक्खून बहु गहितं होति, अप्प अवसिट्ठं, तं निट्ठपेत्वा अरञ्ञ पविसितब्ब। सचे अप्प गहित, बहु अवसिट्ठं, योजनतो पर अगन्त्वा अन्तोयोजनपरिच्छेदे अञ्ञं गणवाचकं उपसङ्कमित्वा "इमे आयस्मा उद्देसादीहि सङ्गण्हतू" ति वत्तब्ब। एव अलभमानेन "मय्ह, आवुसो, एकं किच्चं अत्थि, तुम्हे यथाफासुकट्ठानानि गच्छथा" ति गणं पहाय अत्तनो कम्मं कत्तब्ब ति। (४)

कम्मं ति। नवकम्म। त करोन्तेन वड्ढकीआदीहि लद्धालद्धं जानितब्ब, कताकते उस्सुक्क आपज्जितब्बं ति सब्बदा पलिबोधो होति। सो पि एव उपच्छिन्दितब्बा—सचे अप्प अवसिट्ठं होति निट्ठपेतब्बं। सचे बहु, सङ्घिक चे नवकम्म, सङ्घस्स वा सङ्घभारहारकभिक्खूनं वा निय्यादेतब्ब। अत्तनो सन्तक चे, अत्तनो भारहारकानं निय्यादेतब्ब। तादिसे अलभन्तेन सङ्घस्स परिच्चजित्वा गन्तब्ब ति। (५)

अद्धानं ति। मग्गगमन। यस्स हि कत्थचि पब्बज्जापेक्खो वा होति, पच्चयजात वा किञ्चि लद्धब्बं होति। सचे त अलभन्तो न सक्कोति अधिवासेतु, अरञ्ञं पविसित्वा समणधम्म करोन्तस्स पि गमिकचित्त नाम दुप्पटिविनोदनीय होति, तस्मा गन्त्वा त किच्च तीरेत्वा व समणधम्मे उस्सुक्कं कातब्ब ति। (६)

ञाती ति। विहारे आचरियुपज्झायसद्धिविहारिकअन्तेवासिकसमानुपज्झायकसमानाचरियका, घरे माता पिता भाता ति एवमादिका। ते गिलाना इमस्स पलिबाधा होन्ति, तस्मा सो पलिबोधो उपट्ठहित्वा तेसं पाकतिककरणेन उपच्छिन्दितब्बो।

तत्थ उपज्झायो ताव गिलानो सचे लहु न वुट्ठाति, यावजीव पि पटिजग्गितब्बो। तथा पब्बज्जाचरियो उपसम्पदाचरियो सद्धिविहारिको उपसम्पादितपब्बाजितअन्तेवासिकसमानुपज्झायका च। निस्सयाचरियउद्देसाचरियनिस्सयन्तेवासिकउद्देसन्तेवासिकसमानाचरियका पन याव निस्सयउद्देसा अनुपच्छिन्ना, ताव पटिजग्गितब्बा। पहोन्तेन ततो उद्धं पि पटिजग्गितब्बा एव।

मातापितूसु उपज्झाये विय पटिपज्जितब्बं। सचे पि हि ते रज्जे ठिता

होन्ति, पुत्ततो च उपट्ठान पच्चासीसन्ति, कातब्बमेव। अथ तेसं भेसज्जं नत्थि, अत्तनो सन्तकं दातब्बं। असति भिक्खाचरियाय परियेसित्वा पि दातब्बमेव। भातुभगिनीनं पन तेसं सन्तकमेव योजेत्वा दातब्ब। सचे नत्थि अत्तनो सन्तकं तावकालिकं दत्वा पच्छा लभन्तेन गण्हितब्बं। अलभन्तेन न चोदेतब्बा। अञ्ञातकस्स भगिनिसामिकस्स भेसज्जं नेव कातुं न दातु वट्टति। "तुय्ह सामिकस्स देही" ति वत्वा पन भगिनिया दातब्बं। भातुजायाय पि एसेव नयो। तेस पन पुत्ता इमस्स ञातका एवा ति तेस कातु वट्टती ति। (७)

आबाधो ति। यो कोचि रोगो। सो बाधयमानो पलिबोधो होति, तस्मा भेसज्जकरणेन उपच्छिन्दितब्बो। सचे पन कतिपाहं भेसज्ज करोन्तस्स पि न वूपसम्मति, "नाहं तुय्ह दासो, न भटको, त यव हि पोसेन्तो अनमतग्गे ससारवट्टे दुक्खं पत्ता" ति अत्तभाव गरहित्वा समणधम्मो कातब्बो ति। (८)

गन्थो ति। परियत्तिहरण। त सज्झायादीहि निच्चब्यावटस्स पलिबोधो होति, न इतरस्स। तत्रिमानि वत्थूनि—मज्झिमभाणक**देवत्थेरो** किर मलयवासि**देवत्थेरस्स** सन्तिक गन्त्वा कम्मट्ठान याचि। थेरो "कीदिसोसि, आवुसो, परियत्तिय" ति पुच्छि। मज्झिमा "मे, भन्ते, पगुणो" ति। "आवुसो, मज्झिमो नामेसो दुप्परिहारो, मूलपण्णासं सज्झायन्तस्स मज्झिमपण्णासको आगच्छति, तं सज्झायन्तस्स उपरिपण्णासको, कुतो तुय्हं कम्मट्ठानं" ति? "भन्ते, तुम्हाकं सन्तिके कम्मट्ठानं लभित्वा पुन न ओलोकेस्सामी" ति कम्मट्ठान गहेत्वा एकूनवीसतिवस्सानि सज्झायं अकत्वा वीसतिमे वस्से अरहत्तं पत्वा सज्झायत्थाय आगतानं भिक्खूनं "वीसति मे, आवुसो, वस्सानि परियत्ति अनोलोकेन्तस्स, अपि च खो कतपरिचयो अहमेत्थ आरभथा" ति वत्वा आदितो पट्ठाय याव परियोसाना एकब्यञ्जने पिस्स कङ्खा नाहोसि।

करुळियगिरिवासी**नागत्थेरो** पि अट्ठारसवस्सानि परियत्ति छड्डेत्वा भिक्खूनं **धातुकथं** उद्दिसि। तेसं गामवासिकत्थेरेहि सद्धिं संसन्देन्तानं एकपञ्हो पि उप्पटिपाटिया आगतो नाहोसि।

महाविहारे पि तिपिटक**चूळाभयत्थेरो** नाम 'अट्ठकथ अनुग्गहेत्वा व पञ्चनिकायमण्डले तीणि पिटकानि परिवत्तेस्सामी' ति सुवण्णभेरिं पहरापेसि। भिक्खुसङ्घो कतमाचरियानं उग्गहो, अत्तनो आचरियुग्गहं येव वदतु, इतरथा वत्तुं न देमा ति आह। उपज्झाया पि नं अत्तनो उपट्ठान आगतं पुच्छि—"त्वं आवुसो, भेरिं पहरापेसी" ति? "आम, भन्ते"। "किं कारणा" ति? "परियत्ति, भन्ते, परिवत्तेस्सामी" ति। "आवुसो अभय, आचरिया इद पदं कथं वदन्तो" ति? "एव वदन्ति, भन्ते" ति। थेरो 'हुं' ति पटिबाहि। पुन सो अञ्ञेन

अञ्ञेन परियायेन "एव वदन्ति, भन्ते" ति तिक्खत्तुं आह। थेरो सब्बं "हु" ति पटिबाहित्वा "आवुसो, तया पठम कथितो एव आचरियमग्गो, आचरियमुखतो पन अनुग्गहितत्ता, 'एव आचरिया वदन्ती' ति सण्ठातु नासक्खि। गच्छ, अत्तनो आचरियान सन्तिके सुणाही" ति। "कुहिं, भन्ते, गच्छामी" ति ? "गङ्गाय परतो रोहणजनपदे तुलाधारपब्बतविहारे सब्बपरियत्तिको महाधम्मरक्खितत्थेरो नाम वसति, तस्स सन्तिक गच्छा" ति। "साधु, भन्ते" ति थेर वन्दित्वा पञ्चहि भिक्खुसतेहि सद्धिं थेरस्स सन्तिक गन्त्वा वन्दित्वा निसीदि। थेरो "कस्मा आगतोसी" ति पुच्छि। "धम्मं सोतु, भन्ते' ति। "आवुसो अभय, दीघमज्झिमेसु म कालेन काल पुच्छन्ति। अवसेस पन मे तिंसमत्तानि वस्सानि न ओलोकितपुब्ब। अपि च त्व रत्ति मम सन्तिके परिवत्तेहि। अह ते दिवा कथयिस्सामी" ति। सो "साधु भन्ते" ति तथा अकासि।

परिवेणद्वारे महामण्डप कारेत्वा गामवासिनो दिवसे दिवसे धम्मसवनत्थाय आगच्छन्ति। थेरो रत्तिं परिवत्ति। त दिवा कथयन्तो अनुपुब्बेन देसन निट्ठपेत्वा अभयत्थेरस्स सन्तिके तट्टिकाय निसीदित्वा "आवुसो, मय्ह कम्मट्ठान कथेही" ति आह। "भन्ते किं भणथ ? ननु मया तुम्हाकमेव सन्तिके सुत ? किमह तुम्हेहि अञ्ञात कथेस्सामी" ति ? ततो न थेरो "अञ्ञो एस, आवुसो, गतकस्स मग्गो नामा" ति आह।

अभयत्थेरो किर तदा सोतापन्नो होति। अथस्स सो कम्मट्ठान दत्वा आगन्त्वा लोहपासादे धम्म परिवत्तेन्तो थेरो परिनिब्बुतो ति अस्सोसि। सुत्वा "आहरथावुसो चीवरं" ति चीवर पारुपित्वा "अनुच्छविको, आवुसो, अम्हाक आचरियस्स अरहत्तमग्गो। आचरियो नो, आवुसो, उजु आजानीयो। सो अत्तनो धम्मन्तेवासिकस्स सन्तिके तट्टिकाय निसीदित्वा 'मय्ह कम्मट्ठान कथेही' ति आह। अनुच्छविको, आवुसो, थेरस्स अरहत्तमग्गो" ति। एवरूपानं गन्थो पलिबोधो न होती ति। (९)

इद्धी ति। पोथुज्जनिका इद्धि। सा हि उत्तानसेय्यकदारको विय तरुणसस्सं विय च दुप्परिहारा होति। अप्पमत्तकेनेव भिज्जति। सा पन विपस्सनाय पलिबोधो होति, न समाधिस्स, समाधिं पत्वा पत्तब्बतो। तस्मा विपस्सनत्थिकेन इद्धिपलिबोधो उपच्छिन्दितब्बो, इतरेन अवसेसा ति। (१०)

अयं ताव पलिबोधकथाय वित्थारो।

कम्मट्ठानदायककथा

१४. **कम्मट्ठानदायकं कल्याणमित्तं उपसङ्कमित्वा** ति। एत्थ पन दुविध कम्मट्ठानं—सब्बत्थककम्मट्ठानं, पारिहारियकम्मट्ठान च। तत्थ सब्बत्थक-

कम्मट्ठान नाम भिक्खुसङ्घादीसु मेत्ता मरणस्सति च असुभसञ्ञा ति पि एके।

कम्मट्ठानिकेन हि भिक्खुना पठमं ताव परिच्छिन्दित्वा सीमट्ठकभिक्खुसङ्घे 'सुखिता होन्तु अब्यापज्जा' ति मेत्ता भावेतब्बा। ततो सीमट्ठकदेवतासु, ततो गोचरगामम्हि इस्सरजने, ततो तत्थ मनुस्से उपादाय सब्बसत्तेसु। सो हि भिक्खुसङ्घे मेत्ताय सहवासीनं मुदुचित्तत जनेति। अथस्स ते सुखसंवासा होन्ति। सीमट्ठकदवतासु मेत्ताय मुदुकतचित्ताहि देवताहि धम्मिकाय रक्खाय सुसविहित-रक्खो होति। गोचरगामम्हि इस्सरजने मेत्ताय मुदुकतचित्तसन्तानेहि इस्सरेहि धम्मिकाय रक्खाय सुरक्खितपरिक्खारो होति। तत्थ मनुस्सेसु मेत्ताय पसादित-चित्तहि तेहि अपरिभूतो हुत्वा विचरति। सब्बसत्तेसु मेत्ताय सब्बत्थ अप्पटिहत-चारो होति। मरणस्सतिया पन 'अवस्स मया मरितब्ब' ति चिन्तेतो अनेसनं पहाय उपरूपरि वड्ढमानसवेगो अनोलानवुत्तिको होति। असुभसञ्ञापरिचित-चित्तस्स पनस्स दिब्बानि पि आरम्मणानि लोभवसेन चित्त न परियादियन्ति।

एव बहूपकारत्ता सब्बत्थ अत्थयितब्ब इच्छितब्बं ति च अधिप्पेतस्स योगानुयोगकम्मस्स ठानं चा ति **सब्बत्थक**कम्मट्ठान ति वुच्चति।

चत्तालीसाय पन कम्मट्ठानेसु य यस्स चरियानुकूल, त तस्स निच्च परिहरितब्बत्ता उपरिमस्स च उपरिमस्स भावनाकम्मस्स पदट्ठानत्ता **पारि-हारिय**कम्मट्ठान ति वुच्चति। इति इम दुविध पि कम्मट्ठान यो देति अयं **कम्मट्ठानदायको** नाम, त **कम्मट्ठानदायकं**।

कल्याणमित्तं ति।

> "पियो गरु भावनीयो वत्ता च वचनक्खमो।
> गम्भीर च कथ कत्ता नो चट्ठाने नियोजको ति॥ (अ०-३-१७७)

एवमादिगुणसमन्नागत एकन्तेन हितेसिं वुद्धिपक्खे ठितं कल्याणमित्त।

"मम हि, आनन्द, कल्याणमित्तं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परि-मुच्चन्ती" (स०-१-८७) ति आदिवचनतो पन सम्मासम्बुद्धो येव सब्बाकार-सम्पन्नो कल्याणमित्तो। तस्मा तस्मिं सति तस्सेव भगवतो सन्तिके गहित-कम्मट्ठान सुगहितं होति। परिनिब्बुते पन तस्मिं असीतिया महासावकेसु यो धरति, तस्स सन्तिके गहेतु वट्टति। तस्मिं असति यं कम्मट्ठान गहेतुकामो होति, तस्सेव वसेन चतुक्कपञ्चकज्झानानि निब्बत्तेत्वा झानपदट्ठान विपस्सनं वड्ढेत्वा आसवक्खयप्पत्तस्स खीणासवस्स सन्तिके गहेतब्ब।

किं पन खीणासवो 'अहं खीणासवो' ति अत्तानं पकासेती ति? किं वत्तब्बं? कारकभाव हि जानित्वा पकासेति। ननु **अस्सगुत्तत्थेरो** आरद्धकम्मट्ठानस्स

भिक्खुनो 'कम्मट्ठानकारको अयं' ति जानित्वा आकासे चम्मखण्डं पञ्ञापेत्वा तत्थ पल्लङ्केन निसिन्नो कम्मट्ठानं कथेसी ति ?

तस्मा सचे खीणासवं लभति, इच्चेतं कुसलं। नो चे लभति, अनागामिसकदागामिसोतापन्नझानलाभिपुथुज्जनतिपिटकधरद्विपिटकधरएकपिटकधरेसु पुरिमस्स पुरिमस्स सन्तिके। एकपिटकधरे पि असति, यस्स एकसङ्गीति पि अट्ठकथाय सिद्धिं पगुणा, सयं च लज्जी होति, तस्स सन्तिके गहेतब्बं। एवरूपो हि तन्तिधरो वंसानुरक्खको पवेणीपालको आचरियो आचरियमतिको व होति, न अत्तनोमतिको होति। तेनेव पोराणकत्थेरा 'लज्जी रक्खिस्सति लज्जी रक्खिस्सती' ति तिक्खत्तुं आहंसु।

पुब्बे वुत्तखीणासवादयो चेत्थ अत्तना अधिगतमग्गमेव आचिक्खन्ति। बहुस्सुतो पन तं तं आचरियं उपसङ्कमित्वा उग्गहपरिपुच्छानं विसोधितत्ता इतो चितो च सुत्तं च कारणं च सल्लक्खेत्वा सप्पायासप्पायं योजेत्वा गहनट्ठाने गच्छन्तो महाहत्थी विय महामग्गं दस्सेन्तो कम्मट्ठानं कथेस्सति। तस्मा एवरूपं कम्मट्ठानदायकं कल्याणमित्तं उपसङ्कमित्वा तस्स वत्तपटिपत्तिं कत्वा कम्मट्ठानं गहेतब्बं।

सचे पनेतं एकविहारे येव लभति, इच्चेतं कुसलं। नो चे लभति, यत्थ सो वसति, तत्थ गन्तब्बं। गच्छन्तेन च न धोतमक्खितेहि पादेहि उपाहना आरुहित्वा छत्तं गहेत्वा तेलनाळिमधुफाणितादीनि गाहापेत्वा अन्तेवासिकपरिवुतेन गन्तब्बं। गमिकवत्तं पन पूरेत्वा अत्तनो पत्तचीवरं सयमेव गहेत्वा अन्तरामग्गे यं यं विहारं पविसति सब्बत्थ वत्तपटिपत्तिं कुरुमानेन सल्लहुकपरिक्खारेन परमसल्लेखवुत्तिना हुत्वा गन्तब्बं।

तं विहारं पविसन्तेन अन्तरामग्गे येव दन्तकट्ठं कप्पियं कारापेत्वा गहेत्वा पविसितब्बं। न च "मुहुत्तं विस्समित्वा पादधोवनमक्खनादीनि कत्वा आचरियस्स सन्तिकं गमिस्सामी" ति अञ्ञं परिवेणं पविसितब्बं। कस्मा ? सचे हिस्स तत्र आचरियस्स विसभागा भिक्खू भवेय्युं, ते आगमनकारणं पुच्छित्वा आचरियस्स अवण्णं पकासेत्वा—'नट्ठोसि सचे तस्स सन्तिकं आगतो' ति विप्पटिसारं उप्पादेय्युं, येन ततो व पटिनिवत्तेय्य। तस्मा आचरियस्स वसनट्ठानं पुच्छित्वा उजुकं तत्थेव गन्तब्बं।

सचे आचरियो दहरतरो होति, पत्तचीवरपटिग्गहणादीनि न सादितब्बानि। सचे वुड्ढतरो होति, गन्त्वा आचरियं वन्दित्वा ठातब्बं। "निक्खिपावुसो, पत्तचीवरं" ति वुत्तेन निक्खिपितब्बं। "पानीयं पिवा" ति वुत्तेन सचे इच्छति पातब्बं। "पादे धोवाही" ति वुत्तेन न ताव पादा धोवितब्बा। सचे हि

आचरियेन आभत उदक भवेय्य, न सारुप्प सिया। "धोवाहावुसो, न मया आभत, अञ्ञेहि आभत" ति वुत्ते पन यत्थ आचरियो न पस्सति, एवरूपे पटिच्छन्ने वा ओकासे, अब्भोकासे विहारस्सा पि वा एकमन्ते निसीदित्वा पादा धोवितब्बा।

सचे आचरियो तेलनाळि आहरति, उट्ठहित्वा उभोहि हत्थेहि सक्कच्चं गहेतब्बा। सचे हि न गण्हेय्य, "अय भिक्खु इतो एव पट्ठाय सम्भोगं कोपेती" ति आचरियस्स अञ्ञथत्त भवेय्य। गहेत्वा पन न आदितो व पादा मक्खेतब्बा। सच हि तं आचरियस्स गत्तब्भञ्जनतेल भवेय्य, न सारुप्पं सिया। तस्मा सीसं मक्खेत्वा खन्धादीनि मक्खेतब्बानि। "सब्बपारिहारियतेलमिदं, आवुसो, पादे पि मक्खेही" ति वुत्तेन पन थोक सीसे कत्वा पादे मक्खेत्वा "इम तेलनाळि ठपेमि, भन्ते" ति वत्वा आचरिये गण्हन्ते दातब्बा।

आगतदिवसतो पट्ठाय "कम्मट्ठान मे, भन्ते, कथेथ" इच्चेवं न वत्तब्बं। दुतियदिवसतो पन पट्ठाय, सचे आचरियस्स पकतिउपट्ठाको अत्थि, तं याचित्वा वत्तं कातब्बं। सचे याचितो पि न देति, ओकासे लद्धे येव कातब्ब। करोन्तेन च खुद्दकमज्झिममहन्तानि तीणि दन्तकट्ठानि उपनामेतब्बानि। सीतं उण्हं ति दुविधं मुखधोवनउदकं च न्हानोदक च पटियादेतब्ब। ततो यं आचरियो तीणि दिवसानि परिभुञ्जति, तादिसमेव निच्चं उपनामेतब्ब। नियम अकत्वा यं वा तं वा परिभुञ्जन्तस्स यथालद्धं उपनामेतब्ब। किं बहुना वुत्तेन? य तं भगवता "अन्तेवासिकेन, भिक्खवे, आचरियम्हि सम्मा वत्तितब्बं। तत्राय सम्मा वत्तना—कालस्सेव उट्ठाय उपाहना ओमुञ्चित्वा एकंसं उत्तरासङ्ग करित्वा दन्तकट्ठ दातब्ब, मुखोदक दातब्बं, आसनं पञ्ञापेतब्ब। सचे यागु होति, भाजन धोवित्वा यागु उपनामेतब्बा" (वि० ३—५८) ति आदिकं **खन्धके** सम्मा वत्तं पञ्ञत्तं, तं सब्बं पि कातब्ब।

एवं वत्तसम्पत्तिया गरु आराधयमानेन साय वन्दित्वा 'याही' ति विस्सज्जितेन गन्तब्ब। यदा सो 'किस्सागतोसी' ति पुच्छति, तदा आगमनकारण कथेतब्ब। सचे सो नेव पुच्छति, वत्त पन सादियति, दसाहे वा पक्खे वा वीतिवत्ते एकदिवस विस्सज्जितेनापि अगन्त्वा ओकास कारेत्वा आगमनकारण आरोचेतब्ब। अकाले वा गन्त्वा 'किमत्थ आगतोसी' ति पुट्ठेन आरोचेतब्ब। सचे सो 'पातो व आगच्छा' ति वदति, पातो व गन्तब्बं।

सचे पनस्स ताय वेलाय पित्ताबाधेन वा कुच्छि परिडय्हति, अग्गिमन्दताय वा भत्तं न जीरति, अञ्ञो वा कोचि रोगो बाधति, त यथाभूतं आविकत्वा

अत्तनो सप्पायवेलं आरोचेत्वा ताय वेलाय उपसङ्कमितब्ब। असप्पायवेलाय हि वुच्चमान पि कम्मट्ठानं न सक्का होति मनसिकातुं ति।

अय कम्मट्ठानदायकं कल्याणमित्तं उपसङ्कमित्वा ति एत्थ वित्थारो।

चरियाकथा

१५ इदानि **अत्तनो चरियानुकूलं** ति। एत्थ **चरिया** ति छ चरिया—रागचरिया, दोसचरिया, मोहचरिया, सद्धाचरिया, बुद्धिचरिया, वितक्कचरिया ति। केचि पन रागादीन ससग्गसन्निपातवसेन अपरा पि चतस्सो, तथा सद्धादीनं ति इमाहि अट्ठहि सद्धिं चुद्दस इच्छन्ति। एव पन भेदे वुच्चमाने रागादीन सद्धादीहि पि ससग्ग कत्वा अनेका चरिया होन्ति। तस्मा सङ्खेपेन छळेव चरिया वेदितब्बा। चरिया, पकति, उस्सन्नता ति अत्थतो एक।

तास वसेन छळेव पुग्गला होन्ति—रागचरितो, दोसचरितो, मोहचरितो, सद्धाचरितो, बुद्धिचरितो, वितक्कचरितो ति।

तत्थ यस्मा रागचरितस्स कुसलप्पवत्तिसमये सद्धा बलवती होति, रागस्स आसन्नगुणत्ता। यथा हि अकुसलपक्खे रागो सिनिद्धो नातिलूखो, एव कुसलपक्खे सद्धा रागो वत्थुकामे परियेसति, एव सद्धा सीलादिगुणे। यथा रागो अहित न परिच्चजति, एव सद्धा हित न परिच्चजति, तस्मा रागचरितस्स सद्धाचरितो सभागो।

यस्मा पन दोसचरितस्स कुसलप्पवत्तिसमये पञ्ञा बलवती होति, दोसस्स आसन्नगुणत्ता। यथा हि अकुसलपक्खे दोसो निस्सिनेहो न आरम्मण अल्लीयति, एव कुसलपक्खे पञ्ञा। यथा च दोसो अभूत पि दोसमेव परियेसति, एव पञ्ञा भूतं दोसमेव। यथा दोसो सत्तपरिवज्जनाकारेन पवत्तति, एव पञ्ञा सङ्खारपरिवज्जनाकारेन, तस्मा दोसचरितस्स बुद्धिचरितो सभागो।

यस्मा पन मोहचरितस्स अनुप्पन्नानं कुसलान धम्मानं उप्पादाय वायममानस्स येभुय्येन अन्तरायकरा वितक्का उप्पज्जन्ति, मोहस्स आसन्नलक्खणत्ता। यथा हि मोहो परिब्याकुलताय अनवट्ठितो, एव वितक्को नानप्पकारवितक्कनताय। यथा च मोहो अपरियोगाहनताय चञ्चलो, तथा वितक्को लहुपरिकप्पनताय, तस्मा मोहचरितस्स वितक्कचरितो सभागो ति।

१६. अपरे तण्हामानदिट्ठिवसेन अपरा पि तिस्सो चरिया वदन्ति। तत्थ तण्हा रागो येव, मानो च तसम्पयुत्ता ति तदुभय रागचरिय नातिवत्तति। मोहनिदानत्ता च दिट्ठिया दिट्ठिचरिया मोहचरियमेव अनुपतति।

१७. ता पनेता चरिया किंनिदाना ? कथ च जानितब्बं—"अयं पुग्गलो रागचरितो, अय पुग्गलो दोसादीसु अञ्ञतरचरितो" ति ? किंचरितस्स पुग्गलस्स किं सप्पाय ति ?

१८ तत्र पुरिमा ताव तिस्सो चरिया पुब्बाचिण्णनिदाना धातुदोसनिदाना चा ति एकच्चे वदन्ति । पुब्बे किर इट्ठप्पयोगसुभकम्मबहुलो रागचरितो होति, सग्गा वा चवित्वा इधूपपन्नो । पुब्बे छेदनवधबन्धनवेरकम्मबहुलो दोसचरितो होति, निरयनागयोनीहि वा चवित्वा इधूपपन्नो । पुब्बे मज्जपानबहुलो सुतपरिपुच्छाविहीनो च मोहचरितो होति, तिरच्छानयोनिया वा चवित्वा इधूपपन्नो ति । एवं पुब्बाचिण्णनिदाना ति वदन्ति । द्विन्नं पन धातून उस्सन्नत्ता पुग्गलो मोहचरितो होति, पथवीधातुया च आपोधातुया च । इतरासं द्विन्नं उस्सन्नत्ता दोसचरितो । सब्बास समत्ता पन रागचरितो ति । दोसेसु च सेम्हाधिको रागचरितो होति । वाताधिको मोहचरितो सेम्हाधिको वा मोहचरितो, वाताधिको रागचरितो ति । एवं धातुदोसनिदाना ति वदन्ति ।

तत्थ यस्मा पुब्बे इट्ठप्पयोगसुभकम्मबहुला पि सग्गा चवित्वा इधूपपन्ना पि च न सब्बे रागचरिता येव होन्ति, न इतरे वा दोसमोहचरिता । एवं धातूनं च यथावुत्तेनेव नयेन उस्सदनियमो नाम नत्थि । दोसनियमे च रागमोहद्वयमेव वुत्त, तं पि च पुब्बापरविरुद्धमेव । सद्धाचरियादीसु च एकिस्सा पि निदानं न वुत्तमेव, तस्मा सब्बमेतं अपरिच्छिन्नवचनं ।

१९ अयं पनेत्थ अट्ठकथाचरियानं मतानुसारेन विनिच्छयो । वुत्त हेतं उस्सदकित्तन—"इमे सत्ता पुब्बहेतुनियामेन लोभुस्सदा, दोसुस्सदा, मोहुस्सदा, अलोभुस्सदा, अदोसुस्सदा, अमोहुस्सदा च होन्ति ।

"यस्स हि कम्मायूहनक्खणे लोभो बलवा होति अलोभो मन्दो, अदोसामोहा बलवन्तो दोसमोहा मन्दा, तस्स मन्दो अलोभो लोभं परियादातु न सक्कोति । अदोसामोहा पन बलवन्तो दोसमोहे परियादातु सक्कोन्ति । तस्मा सो तेन कम्मेन दिन्नपटिसन्धिवसेन निब्बत्तो लुद्धो होति सुखसीलो अक्कोधनो पञ्ञवा वजिरूपमञाणो ।

"यस्स पन कम्मायूहनक्खणे लोभदोसा बलवन्तो होन्ति अलोभादोसा मन्दा, अमोहो बलवा मोहो मन्दो, सो पुरिमनयेनेव लुद्धो चेव होति दुट्ठो च । पञ्ञवा पन होति वजिरूपमञाणो **दत्ताभयत्थेरो** विय ।

"यस्स कम्मायूहनक्खणे लोभादोसमोहा बलवन्तो होन्ति इतरे मन्दा, सो पुरिमनयेनेव लुद्धो चेव होति दन्धो च, सीलको पन होति अक्कोधनो **बाहुलत्थेरो** विय ।

"तथा यस्स कम्मायूहनक्खणे तयो पि लोभदोसमोहा बलवन्तो होन्ति अलोभादयो मन्दा, सो पुरिमनयेनेव लुद्धो चेव होति, दुट्ठो च मूळ्हो च।

"यस्स पन कम्मायूहनक्खणे अलोभदोसमोहा बलवन्तो होन्ति इतरे मन्दा, सो पुरिमनयेनेव अलुद्धो अप्पकिलेसो होति, दिब्बारम्मणं पि दिस्वा निच्चलो, दुट्ठो पन होति दन्धपञ्ञो च।

"यस्स पन कम्मायूहनक्खणे अलोभादोसमोहा बलवन्तो होन्ति इतरे मन्दा, सो पुरिमनयेनेव अलुद्धो चेव होति अदुट्ठो च सीलको च, दन्धो पन होति।

"तथा यस्स कम्मायूहनक्खणे अलोभदोसामोहा बलवन्तो होन्ति इतरे मन्दा, सो पुरिमनयेनेव अलुद्धो चेव होति पञ्ञवा च, दुट्ठो च पन होति कोधनो।

"यस्स पन कम्मायूहनक्खणे तयो पि अलोभादोसामोहा बलवन्तो होन्ति लोभादयो मन्दा, सो पुरिमनयेनेव **महासङ्घरक्खितत्थेरो** विय, अलुद्धो अदुट्ठो पञ्ञवा च होती" ति। (म० अट्ठ०)

एत्थ च या लुद्धो ति वुत्तो, अयं रागचरितो। दुट्ठदन्धा दोसमोहचरिता। पञ्ञवा बुद्धिचरितो। अलुद्धअदुट्ठा पसन्नपकतिताय सद्धाचरिता। यथा वा अमोहपरिवारेन कम्मुना निब्बत्तो बुद्धिचरितो, एवं बलवसद्धापरिवारेन कम्मुना निब्बत्तो सद्धाचरितो, कामवितक्कादिपरिवारेन कम्मुना निब्बत्तो वितक्कचरितो, लोभादिना वोमिस्सपरिवारेन कम्मुना निब्बत्तो वोमिस्सचरितो ति। एवं लोभादीसु अञ्ञतरञ्ञतरपरिवारं पटिसन्धिजनकं कम्मं चरियान निदानं ति वेदितब्बं॥

२०. यं पन वुत्तं—**कथं च जानितब्बं अयं पुग्गलो रागचरितो** ति आदि। तत्राय नयो—

इरियापथतो किच्चा भोजना दस्सनादितो।
धम्मप्पवत्तितो चेव चरियायो विभावये ति॥

२१ तत्थ **इरियापथतो** ति। रागचरितो हि पकतिगमनेन गच्छन्तो चातुरियेन गच्छति, सणिकं पादं निक्खिपति, समं निक्खिपति, समं उद्धरति, उक्कुटिकं चस्स पदं होति। दोसचरितो पादग्गेहि खणन्तो विय गच्छति, सहसा पादं निक्खिपति, सहसा उद्धरति, अनुकड्ढितं चस्स पदं होति। मोहचरितो परिब्याकुलाय गतिया गच्छति, छम्भितो विय पदं निक्खिपति, छम्भितो विय उद्धरति, सहसानुपीळितं चस्स पदं होति। वुत्तं पि चेतं **मागण्डियसुत्तुप्पत्तियं**—

"रत्तस्स हि उक्कुटिकं पदं भवे, दुट्ठस्स होति अनुकड्ढितं पदं।
मूळ्हस्स होति सहसानुपीळितं, विवट्टच्छदस्स इदमीदिसं पदं" ति॥

ठानं पि रागचरितस्स पासादिकं होति मधुराकारं, दोसचरितस्स थद्धाकारं, मोहचरितस्स आकुलाकारं। निसज्जाय पि एसेव नयो। रागचरितो च अतर-

मानो सम सेय्य पञ्ञापेत्वा सणिकं निपज्जित्वा अङ्गपच्चङ्गानि समोधाय पासादिकेन आकारेन सयति, वुट्ठापियमानो च सीघं अवुट्ठाय सङ्कितो विय सणिक पटिवचन देति। दोसचरितो तरमानो यथा वा तथा वा सेय्यं पञ्ञापेत्वा पक्खित्तकायो भाकुटि कत्वा सयति, वुट्ठापियमानो च सीघ वुट्ठाय कुपितो विय पटिवचन देति। मोहचरितो दुस्सण्ठान सेय्यं पञ्ञापेत्वा विक्खित्तकायो बहुल अधोमुखो सयति, वुट्ठापियमानो च हुङ्कार करोन्तो दन्धं वुट्ठाति। सद्धाचरितादयो पन यस्मा रागचरितादीन सभागा, तस्मा तेस पि तादिसो व इरियापथो होतो ति।

एव ताव इरियापथतो चरियायो विभावये ॥

किच्चा ति। सम्मज्जनादीसु च किच्चेसु रागचरितो साधुक सम्मज्जनिं गहेत्वा अतरमानो वालिक अविप्पकिरन्तो सिन्दुवारकुसुमसन्थरमिव सन्थरन्तो सुद्ध सम सम्मज्जति। दोसचरितो गाळ्ह सम्मज्जनिं गहेत्वा तरमानरूपो उभतो वालिक उस्सारेन्तो खरेन सद्देन असुद्ध विसम सम्मज्जति। मोहचरितो सिथिल सम्मज्जनिं गहेत्वा सम्परिवत्तक आलोळयमानो असुद्ध विसम सम्मज्जति।

यथा सम्मज्जने, एव चीवरधोवनरजनादोसु पि सब्बकिच्चेसु निपुणमधुरसमसक्कच्चकारी रागचरितो, गाळ्हथद्धविसमकारी दोसचरितो, अनिपुणब्याकुलविसमापरिच्छिन्नकारी मोहचरितो। चीवरधारणं पि च रागचरितस्स नातिगाळ्ह नातिसिथिलं होति पासादिक परिमण्डल। दोसचरितस्स अतिगाळ्ह अपरिमण्डल। मोहचरितस्स सिथिल परिब्याकुल। सद्धाचरितादयो तेस येवानुसारेन वेदितब्बा, तसभागत्ता ति।

एवं किच्चतो चरियायो विभावये ॥

भोजना ति। रागचरितो सिनिद्धमधुरभोजनप्पियो होति, भुञ्जमानो च नातिमहन्त परिमण्डलं आलोपं कत्वा रसपटिसवेदी अतरमानो भुञ्जति, किञ्चिदेव च सादु लभित्वा सोमनस्स आपज्जति। दोसचरितो लूखअम्बिलभोजनप्पियो होति, भुञ्जमानो च मुखपूरक आलोप कत्वा अरसपटिसवेदी तरमानो भुञ्जति, किञ्चिदेव च असादु लभित्वा दोमनस्स आपज्जति। मोहचरितो अनियतरुचिको होति, भुञ्जमानो च अपरिमण्डल परित्तमालोपं कत्वा भाजने छड्डेन्तो मुख मक्खेन्तो विक्खित्तचित्तो तं त वितक्केन्तो भुञ्जति। सद्धाचरितादयो पि तेस येवानुसारेन वेदितब्बा, तंसभागत्ता ति।

एवं भोजनतो चरियायो विभावये ॥

दस्सनादितो ति। रागचरितो ईसकं पि मनोरम रूप दिस्वा विम्हयजातो विय चिरं ओलोकेति, परित्ते पि गुणे सज्जति, भूतं पि दोस न गण्हाति, पक्कमन्तो पि अमुञ्चितुकामो व हुत्वा सापेक्खो पक्कमति। दोसचरितो ईसक पि

अमनोरमं रूपं दिस्वा किलन्तरूपो विय न चिरं ओलोकेति, परित्ते पि दोसे पटिहञ्ञति, भूत पि गुणं न गण्हाति, पक्कमन्तो पि मुञ्चितुकामो व हुत्वा अनपेक्खो पक्कमति। मोहचरितो य किञ्चि रूप दिस्वा परपच्चयिको होति, पर निन्दन्तं सुत्वा निन्दति, पससन्त सुत्वा पसमति, सय पन अञ्ञाणुपेक्खाय उपेक्खको व होति। एस नयो सद्दमवनादीसु पि। सद्धाचरितादयो पन तेसं येवानुसारेन वेदितब्बा, तसभागत्ता ति।

एव दस्सनादितो चरियायो विभावये ॥

धम्मप्पवत्तितो चेवा ति। रागचरितस्स च माया, साठेय्य, मानो, पापिच्छता, महिच्छता, असन्तुट्ठिता, सिङ्ग, चापल्य ति एवमादयो धम्मा बहुल पवत्तन्ति। दोसचरितस्स कोधो, उपनाहो[1], मक्खो[2], पळासो[3], इस्सा[4], मच्छरिय[5], ति एवमादयो। मोहचरितस्स थिनं[6], मिद्ध[7], उद्धच्चं[8], कुक्कुच्चं[9], विचिकिच्छा[10], आदानग्गाहिता[11], दुप्पटिनिस्सग्गिता[12] ति एवमादयो। सद्धाचरि तस्स मुत्तचागता, अरियानं दस्सनकामता, सद्धम्मं सोतुकामता, पामोज्जबहुलता, असठता, अमायाविता, पसादनीयेसु ठानेसु पसादो ति एवमादयो। बुद्धिचरितस्स सोव-चस्सता, कल्याणमित्तता, भोजने मत्तञ्ञुता, सतिसम्पजञ्ञ, जागरियानुयोगो, सवेजनीयेसु ठानेसु सवेगो, सविग्गस्स च योनिसो पधानं ति एवमादयो। वितक्कचरितस्स भस्सबहुलता, गणारामता, कुसलानुयोगे अरति, अनवट्ठित-किच्चता, रत्ति धूमायना, दिवा पज्जलना, हुराहुर धावना ति एवमादयो धम्मा बहुल पवत्तन्ती ति।

एवं धम्मप्पवत्तितो चरियायो विभावये ॥

२२. यस्मा पन इदं चरियाविभावनविधानं सब्बाकारेन नेव पाळिय, न अट्ठकथाय आगतं, केवल आचरियमतानुसारेन वुत्त, तस्मा न सारतो पच्चेतब्ब। रागचरितस्स हि वुत्तानि इरियापथादीनि दोसचरितादयो पि अप्पमादविहारिनो कातु सक्कोन्ति। समट्ठचरितस्स च पुग्गलस्स एकस्सेव भिन्नलक्खणा इरिया-पथादयो न उपपज्जन्ति। य पनेत **अट्ठकथासु** चरियाविभावनविधान वुत्त, तदेव सारतो पच्चेतब्ब। वुत्तं हेत— 'चेतोपरियञाणस्स लाभी आचरियो चरियं ञत्वा कम्मट्ठानं कथेस्सति, इतरेन अन्तेवासिको पुच्छितब्बो" ति।

---

१. परापराधस्स उपनय्हनलक्खणो। २. परेसं गुणमक्खणलक्खणो। ३. परस्स गुणे डंसित्वा अपनेन्तो विय युगग्गाहलक्खणो। ४. परसम्पत्तिउसूयनलक्खणा। ५ अत्त-सम्पत्तिनिगूहनलक्खणं। ६. अनुस्साहनं। ७. असत्तिविघातो। ८. चेतसो अवूप-समो। ९. विप्पटिसारो। १०. ससयो। ११. अयोनिसो दळ्हग्गाहो। १२ यथाग-हितस्स मिच्छागाहस्स दुब्बिवेठियता।

तस्मा चेतोपरियञाणेन वा त वा पुग्गल पुच्छित्वा जानितब्ब—अय पुग्गलो रागचरितो, अय दोसादीसु अञ्ञतरचरितो ति।

२३. **किं चरितस्स पुग्गलस्स किं सप्पायं** ति। एत्थ पन सेनासन ताव रागचरितस्स अधोतवेदिक भूमट्ठक अकतपब्भारक तिणकुटिक पण्णसालादीनं अञ्ञतर रजोकिण्ण जतुकाभरित[1] ओलुग्गविलुग्ग अतिउच्च वा अतिनीच वा उज्जङ्गल सासङ्क असुचि विसममग्गं, यत्थ मञ्चपीठ पि मङ्कुणभरित दुरूपं दुब्बण्ण, यं ओलोकेन्तस्सेव जिगुच्छा उप्पज्जति, सप्पाय। निवासनपारुपनं अन्तच्छिन्नं ओलम्बविलम्बसुत्तकाकिण्णं जालपूवसदिसं साणि विय खरसम्फस्स किलिट्ठ भारिक किच्छपरिहरण सप्पायं। पत्तो पि दुब्बण्णो मत्तिकापत्तो वा आणिगण्ठिकाहतो अयापत्तो वा गरुको दुस्सण्ठानो सीसकपालमिव जेगुच्छो वट्टति। भिक्खाचारमग्गो पि अमनापो अनासन्नगामो विसमो वट्टति। भिक्खाचारगामो पि यत्थ मनुस्सा अपस्सन्ता विय चरन्ति, यत्थ एककुले पि भिक्खं अलभित्वा निक्खमन्त "एहि, भन्ते" ति आसनसाल पवेसेत्वा यागुभत्त दत्वा गच्छन्ता गावो विय वजे पवेसेत्वा अनवलोकेन्ता गच्छन्ति, तादिसो वट्टति। परिविसकमनुस्सा पि दासा वा कम्मकरा वा दुब्बण्णा दुद्दसिका किलिट्ठवसना दुग्गन्धा जेगुच्छा, ये अचित्तीकारेन यागुभत्त छड्डेन्ता विय परिविसन्ति, तादिसा सप्पाया। यागुभत्तखज्जक पि लूख दुब्बण सामाककुद्रूसककणाजकादिमय पूतितक्क बिलङ्ग जिण्णसाकसूपेय्य, य किञ्चिदेव केवलं उदरपूरमत्त वट्टति। इरियापथो पिस्स ठान वा चङ्कमो वा वट्टति। आरम्मण नीलादीसु वण्णकसिणसु य किञ्चि अपरिसुद्धवण्णं ति। इदं रागचरितस्स सप्पाय।

दोसचरितस्स सेनासनं नातिउच्चं नातिनीच छायूदकसम्पन्नं सुविभत्तभित्तिथम्भसोपानं सुपरिनिट्ठितमालाकम्मलताकम्म नानाविधचित्तकम्मसमुज्जल समसिनिद्धमुदुभूमितल, ब्रह्मविमानमिव कुसुमदामविचित्रवण्णचेलवितानसमलङ्कत सुपञ्ञत्तसुचिमनोरमत्थरणमञ्चपीठं तत्थ वासत्थाय निक्खित्तकुसुमवासगन्धसुगन्ध यं दस्सनमत्तेनव पीतिपामोज्जं जनयति, एवरूप सप्पाय।

तस्स पन सेनासनस्स मग्गो पि सब्बपरिस्सयविमुत्तो सुचिसमतलो अलङ्कतपटियत्तो व वट्टति। सेनासनपरिक्खारो पेत्थ कीटमङ्कुणदीघजातिमूसिकानं निस्सयपरिच्छिन्दनत्थ नातिबहुको, एकमञ्चपीठमत्तमेव वट्टति। निवासनपारुपनं पिस्स चीनपट्टसोमारपट्टकोसेय्यकप्पासिकसुखुमखोमादीनं य य पणीत, तेन तेन एकपट्टं वा दुपट्टं वा सल्लहुक समणसारुप्पेन सुरत्तं सुद्धवण्ण वट्टति। पत्तो उदकबुब्बुळमिव सुसण्ठानो मणि विय सुमट्ठो निम्मलो, समणसारुप्पेन सुपरिसुद्धवण्णो अयोमयो वट्टति। भिक्खाचारमग्गो परिस्सयविमुत्तो समो

१. अधोमुखाहि ओलम्बमानमुखाहि खुद्दकवग्गुलीहि पटिपुण्णं।

मनापो नातिदूरनाच्चासन्नगामो वट्टति। भिक्खाचारगामो पि यत्थ मनुस्सा "इदानि अय्यो आगमिस्सती" ति सित्तसम्मट्ठे पदेसे आसनं पञ्ञापेत्वा पच्चुग्गन्त्वा पत्त आदाय घर पवेसेत्वा पञ्ञत्तासने निसीदापेत्वा सक्कच्च सहत्था परिविसन्ति, तादिसो वट्टति।

परिवेसका पनस्स ये होन्ति अभिरूपा पासादिका सुन्हाता सुविलित्ता धूपवासकुसुमगन्धसुरभिनो नानाविरागसुचिमनुञ्ञवत्थाभरणपटिमण्डिता सक्कच्चकारिनो, तादिसा सप्पाया। यागुभत्तखज्जक पि वण्णगन्धरससम्पन्न ओजवन्त मनोरम सब्बाकारपणीत यावदत्थ वट्टति। इरियापथो पिस्स सेय्या वा निसज्जा वा वट्टति। आरम्मण नीलादीसु वण्णकसिणेसु य किञ्चि सुपरिसुद्धवण्ण ति। इद दोसचरितस्स सप्पाय।

मोहचरितस्स सेनासनं दिसामुख असम्बाध वट्टति, यत्थ निसिन्नस्स विवटा दिसा खायन्ति, इरियापथेसु चङ्कमो वट्टति। आरम्मणं पनस्स परित्तं सुप्पमत्तं सरावमत्तं वा खुद्दक न वट्टति। सम्बाधस्मि हि ओकासे चित्तं भिय्यो सम्मोह आपज्जति, तस्मा विपुल महाकसिण वट्टति। सेसं दोसचरितस्स वुत्तसदिसमेवा ति। इद मोहचरितस्स सप्पाय।

सद्धाचरितस्स सब्बं पि दोसचरितम्हि वुत्तविधान सप्पायं। आरम्मणेसु चस्स अनुस्सतिट्ठान पि वट्टति।

बुद्धिचरितस्स सेनासनादीसु इद नाम असप्पायं ति नत्थि।

वितक्कचरितस्स सेनासनं विवट दिसामुखं, यत्थ निसिन्नस्स आरामवनपोक्खरणीरामणेय्यकानि गामनिगमजनपदपटिपाटियो नीलोभासा च पब्बता पञ्ञायन्ति, तं न वट्टति। त हि वितक्कविधावनस्सेव पच्चयो होति। तस्मा गम्भीरे दरीमुखे वनपटिच्छन्ने हत्थिकुच्छिपब्भारमहिन्दगुहासदिसे सेनासने वसितब्बं। आरम्मण पिस्स विपुल्ल न वट्टति। तादिसं हि वितक्कवसेन सन्धावनस्स पच्चयो होति। परित्तं पन वट्टति। सेसं रागचरितस्स वुत्तसदिसमेवा ति। इदं वितक्कचरितस्स सप्पायं।

अयं **अत्तनो चरियानुकूल** ति एत्थ आगतचरियानं पभेदनिदानविभावनसप्पायपरिच्छेदतो वित्थारो।

न च ताव चरियानुकूलं कम्मट्ठानं सब्बाकारेन आविकत। तं हि अनन्तरस्स मातिकापदस्स वित्थारे सयमेव आविभविस्सति।

चत्तालीसकम्मट्ठानकथा

२४ तस्मा यं वुत्तं "चत्तालीसाय कम्मट्ठानेसु अञ्ञतरं कम्मट्ठानं गहेत्वा" ति, एत्थ सङ्खातनिद्देसतो, उपचारप्पनावहतो, झानप्पभेदतो, समतिक्कमतो,

वड्ढनावड्ढनतो, आरम्मणतो, भूमितो, गहणतो, पच्चयतो, चरियानुकूलतो ति इमेहि ताव दसहाकारेहि कम्मट्ठानविनिच्छयो वेदितब्बो।

२५. तत्थ **सङ्खातनिद्देसतो** ति। चत्तालीसाय कम्मट्ठानेसू ति हि वुत्त, तत्रिमानि चत्तालीस कम्मट्ठानानि—दस कसिणा, दस असुभा, दस अनुस्सतियो, चत्तारो ब्रह्मविहारा, चत्तारो आरुप्पा, एका सञ्ञा, एक ववत्थानं ति।

तत्थ पथवीकसिण, आपोकसिणं, तेजोकसिण, नीलकसिण, पीतकसिण, लोहितकसिण, ओदातकसिण, आलोककसिणं, परिच्छिन्नाकासकसिण ति इमे **दस कसिणा**।

उद्धुमातकं, विनीलकं, विपुब्बक, विच्छिद्दकं, विक्खायितक, विक्खित्तक, हतविक्खित्तकं, लोहितकं, पुळुवकं, अट्ठिक ति इन **दस असुभा**।

बुद्धानुस्सति, धम्मानुस्सति, सङ्घानुस्सति, सीलानुस्सति, चागानुस्सति, देवतानुस्सति, मरणानुस्सति, कायगतासति, आनापानस्सति, उपसमानुस्सति ति इमा **दस अनुस्सतियो**।

मेत्ता, करुणा, मुदिता, उपेक्खा ति इमे **चत्तारो ब्रह्मविहारा**।

आकासानञ्चायतनं, विञ्ञाणञ्चायतनं, आकिञ्चञ्ञायतन, नेवसञ्ञानासञ्ञायतन ति इमे **चत्तारो आरुप्पा**। आहारे पटिकूलसञ्ञा **एका सञ्ञा**। चतधातुववत्थान **एकं ववत्थानं** ति। एव सङ्खातनिद्देसतो विनिच्छयो वेदितब्बो।

२६ **उपचारप्पनावहतो** ति। ठपेत्वा कायगतासतिं च आनापानस्सति च अवसेसा अट्ठ अनुस्सतियो, आहारे पटिकूलसञ्ञा, चतुधातुववत्थानं ति इमानेव हेत्थ दस कम्मट्ठानानि उपचारावहानि, सेसानि अप्पनावहानि। एव उपचारप्पनावहतो।

२७. **झानप्पभेदतो** ति। अप्पनावहेसु चेत्थ आनापानस्सतिया सद्धि दस कसिणा चतुक्कज्झानिका होन्ति। कायगतासतिया सद्धि दस असुभा पठमज्झानिका। पुरिमा तयो ब्रह्मविहारा तिकज्झानिका। चतुत्थब्रह्मविहारो चत्तारो च आरुप्पा चतुत्थज्झानिका ति। एव झानप्पभेदतो।

२८. **समतिक्कमतो** ति। द्वे समतिक्कमा—अङ्गसमतिक्कमो च, आरम्मणसमतिक्कमो च। तत्थ सब्बेसु पि तिकचतुक्कज्झानिकेसु कम्मट्ठानेसु अङ्गसमतिक्कमो होति वितक्कविचारादीनि झानङ्गानि समतिक्कमित्वा तेस्वेवारम्मणेसु दुतियज्झानादीनं पत्तब्बतो, तथा चतुत्थब्रह्मविहारे। सो पि हि मेत्तादीनं येव आरम्मणे सोमनस्स समतिक्कमित्वा पत्तब्बो ति। चतूसु पन आरुप्पेसु आरम्मणसमतिक्कमो होति। पुरिमेसु हि नवसु कसिणेसु अञ्ञतरं समतिक्कमित्वा

आकासानञ्चायतनं पत्तब्बं, आकासादीनि च समतिक्कमित्वा विञ्ञाणञ्चायतनादीनि। सेसेसु समतिक्कमो नत्थीति। एवं समतिक्कमतो।

२९ **वड्ढनावड्ढनतो** ति। इमेसु चत्तालीसाय कम्मट्ठानेसु दस कसिणानेव वड्ढेतब्बानि। यत्तक हि ओकासं कसिणेन फरति, तदब्भन्तरे दिब्बाय सोतधातुया सद्दं सोतुं, दिब्बेन चक्खुना रूपानि पस्सितुं, परसत्तानं चेतसा चित्तमञ्ञातु समत्थो होति।

कायगतासति पन असुभानि च न वड्ढेतब्बानि। कस्मा? ओकासेन परिच्छिन्नत्ता आनिससाभावा च। सा च नेसं ओकासेन परिच्छिन्नत्ता भावनानये आविभविस्सति। तेसु पन वड्ढितेसु कुणपरासि येव वड्ढति, न कोचि आनिससो अत्थि। वुत्तं पि चेतं सोपाकपञ्हाव्याकरणे—"विभूता, भगवा, रूपसञ्ञा, अविभूता अट्ठिकसञ्ञा" ति। तत्र हि निमित्तवड्ढनवसेन रूपसञ्ञा विभूता ति वुत्ता, अट्ठिकसञ्ञा अवड्ढनवसेन अविभूता ति वुत्ता।

यं पनेतं "केवलं अट्ठिकसञ्ञाय अफरी पथविं इमं" (खु० २-२३८) ति वुत्तं, तं लाभिस्स सतो उपट्ठानाकारवसेन वुत्तं। यथेव हि **धम्मासोक**काले करवीकसकुणो समन्ता आदासभित्तीसु अत्तनो छायं दिस्वा सब्बदिसासु करवीकसञ्ञी हुत्वा मधुरं गिरं निच्छारेसि, एवं थेरो पि अट्ठिकसञ्ञाय लाभित्ता सब्बदिसासु उपट्ठितं निमित्तं पस्सन्तो केवला पि पथवी अट्ठिकभरिता ति चिन्तेसी ति।

यदि एवं, या असुभज्झानानं अप्पमाणारम्मणता वुत्ता सा विरुज्झती ति? सा च न विरुज्झति। एकच्चो हि उद्धुमातके वा अट्ठिके वा महन्ते निमित्तं गण्हाति, एकच्चो अप्पके। इमिना परियायेन एकच्चस्स परित्तारम्मणं झानं होति, एकच्चस्स अप्पमाणारम्मणं ति। यो वा एतं वड्ढने आदीनवं अपस्सन्तो वड्ढेति। तं सन्धाय "अप्पमाणारम्मणं" ति वुत्तं। आनिससाभावा पन न वड्ढेतब्बानी ति।

यथा च एतानि, एवं सेसानि पि न वड्ढेतब्बानि। कस्मा? तेसु हि आनापाननिमित्तं ताव वड्ढयतो वातरासि येव वड्ढति, ओकासेन च परिच्छिन्नं। इति सादीनवत्ता ओकासेन च परिच्छिन्नत्ता न वड्ढेतब्बं। ब्रह्मविहारा सत्तारम्मणा, तेसं निमित्तं वड्ढयतो सत्तरासि येव वड्ढेय्य, न च तेन अत्थो अत्थि, तस्मा तं पि न वड्ढेतब्बं। यं पन वुत्तं—"मेत्तासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा" (दी० १-२१०) ति आदि, तं परिग्गहवसेनेव वुत्तं। एकावासद्विआवासादिना हि अनुक्कमेन एकिस्सा दिसाय सत्ते परिग्गहेत्वा

भावेन्तो एकं दिसं फरित्वा ति वुत्तो, न निमित्तं वड्ढेन्तो। पटिभागनिमित्तमेव चेत्थ नत्थि, यदय वड्ढेय्य। परित्तअप्पमाणरम्मणता पेत्थ परिग्गहवसेनेव वेदितब्बा।

आरुप्पारम्मणेसु पि आकास कसिणुग्घाटिमत्ता। त हि कसिणापगमवसेनेव मनसि कातब्बं। ततो पर वड्ढयतो पि न किञ्चि होति। विञ्ञाणं सभावधम्मत्ता। न हि सक्का सभावधम्मं वड्ढेतुं। विञ्ञाणापगमो विञ्ञाणस्स अभावमत्तत्ता। नेवसञ्ञानासञ्ञायतनारम्मण सभावधम्मत्ता येव न वड्ढेतब्ब। सेसानि अनिमित्तत्ता। पटिभागनिमित्त हि वड्ढेतब्ब नाम भवेय्य। बुद्धानुस्सतिआदीन च नेव पटिभागनिमित्त आरम्मणं होति। तस्मा तं न वड्ढेतब्ब ति। एवं वड्ढनावड्ढनतो।

३०. **आरम्मणतो** ति। इमेसु च चत्तालीसाय कम्मट्ठानेसु दस कसिणा, दस असुभा, आनापानस्सति, कायगतासती ति इमानि द्वावीसति पटिभागनिमित्तारम्मणानि, सेसानि न पटिभागनिमित्तारम्मणानि। तथा दससु अनुस्सतीसु ठपेत्वा आनापानस्सतिं च कायगतासतिं च अवसेसा अट्ठ अनुस्सतियो, आहारे पटिकूलसञ्ञा, चतुधातुववत्थान, विञ्ञाणञ्चायतनं, नेवसञ्ञानासञ्ञायतन ति इमानि द्वादस सभावधम्मारम्मणानि। दस कसिणा, दस असुभा, आनापानस्सति, कायगतासती ति इमानि द्वावीसति निमित्तारम्मणानि। सेसानि छ न वत्तब्बारम्मणानि। तथा विपुब्बकं, लोहितकं, पुळुवकं, आनापानस्सति, आपोकसिण, तेजोकसिण, वायोकसिण, य च आलोककसिणे सूरियादीन ओभासमण्डलारम्मण ति इमानि अट्ठ चलितारम्मणानि, तानि च खो पुब्बभागे। पटिभाग पन सन्निसिन्नमेव होति। सेसानि न चलितारम्मणानि ति। एव आरम्मणतो।

३१ **भूमितो** ति। एत्थ च दस असुभा, कायगतासति, आहारे पटिकूलसञ्ञा ति इमानि द्वादस देवेसु नप्पवत्तन्ति। तानि द्वादस आनापानस्सति चा ति इमानि तेरस ब्रह्मलोके नप्पवत्तन्ति। अरूपभवे पन ठपेत्वा चत्तारो आरुप्पे अञ्ञं नप्पवत्तति। मनुस्सेसु सब्बानि पि पवत्तन्ती ति। एव भूमितो।

३२. **गहणतो** ति। दिट्ठफुट्ठसुतग्गहणतो पेत्थ विनिच्छयो वेदितब्बो। तत्र ठपेत्वा वायोकसिणं सेसा नव कसिणा, दस असुभा ति इमानि एकूनवीसति दिट्ठेन गहेतब्बानि। पुब्बभागे चक्खुना ओलोकेत्वा निमित्त नेस गहेतब्ब ति अत्थो। कायगतासतियं तचपञ्चक दिट्ठेन, सेसं सुतेना ति एवं तस्सा आरम्मणं दिट्ठसुतेन गहेतब्ब। आनापानस्सति फुट्ठेन, वायोकसिण दिट्ठफुट्ठेन, सेसानि अट्ठारस सुतेन गहेतब्बानि। उपेक्खाब्रह्मविहारो चत्तारो आरुप्पा ति इमानि

चेत्थ न आदिकम्मिकेन गहेतब्बानि, सेसानि पञ्चतिंस गहेतब्बानी ति। एव गहणतो।

३३ **पच्चयतो** ति। इमेसु पन कम्मट्ठानेसु ठपेत्वा आकासकसिणं सेसा नव कसिणा आरुप्पानं पच्चया होन्ति। दस कसिणा अभिञ्ञान। तयो ब्रह्मविहारा चतुत्थब्रह्मविहारस्स। हेट्ठिम हेट्ठिमं आरुप्प उपरिमस्स उपरिमस्स। नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं निरोधसमापत्तिया। सब्बानि पि सुखविहारविपस्सनाभवसम्पत्तीन ति। एवं पच्चयता।

३४. **चरियानुकूलतो** ति। चरियान अनुकूलतो पेत्थ विनिच्छयो वेदितब्बो। सेय्यथोद—रागचरितस्स ताव एत्थ दस असुभा कायगतासती ति एकादस कम्मट्ठानानि अनुकूलानि। दोसचरितस्स चत्तारो ब्रह्मविहारा, चत्तारि वण्णकसिणानी ति अट्ठ। मोहचरितस्स वितक्कचरितस्स च एकं आनापानस्सतिकम्मट्ठानमेव। सद्धाचरितस्स पुरिमा छ अनुस्सतियो। बुद्धिचरितस्स मरणस्सति, उपसमानुस्सति, चतुधातुववत्थान, आहारे पटिक्कूलसञ्ञा ति चत्तारि। सेसकसिणानि चत्तारो च आरुप्पा सब्बचरितान अनुकूलानि। कसिणेसु च य किञ्चि परित्तं वितक्कचरितस्स, अप्पमाण मोहचरितस्सा ति। एवमेत्थ "चरियानुकूलतो विनिच्छयो वेदितब्बो" ति।

सब्बं चेतं उजुविपच्चनीकवसेन च अतिसप्पायवसेन च वुत्त। रागादीन पन अविक्खम्भिका सद्धादीन वा अनुपकारा कुसलभावना नाम नत्थि।

वुत्तं पि चेतं **मेघियसुत्ते**—"चत्तारो धम्मा उत्तरि भावेतब्बा। असुभा भावेतब्बा रागस्स पहानाय। मेत्ता भावेतब्बा ब्यापादस्स पहानाय। आनापानस्सति भावेतब्बा वितक्कुपच्छेदाय। अनिच्चसञ्ञा भावेतब्बा अस्मिमानसमुग्घाताया" (खु० १-१०५) ति।

राहुलसुत्ते पि—"मेत्त, राहुल, भावन भावेही" (म० २-१०४) ति आदिना नयेन एकस्सव सत्त कम्मट्ठानानि वुत्तानि। तस्मा वचनमत्त अभिनिवेस अकत्वा सब्बत्थ अधिप्पायो परियेसितब्बो ति।

अयं कम्मट्ठान गहेत्वा ति एत्थ कम्मट्ठानकथाविनिच्छयो।

३५. **गहेत्वा** ति। इमस्स पन पदस्स अयमत्थदीपना—"तेन योगिना कम्मट्ठानदायकं कल्याणमित्त उपसङ्कमित्वा" ति एत्थ वुत्तनयेनेव वुत्तप्पकारं कल्याणमित्त उपसङ्कमित्वा, बुद्धस्स वा भगवतो, आचरियस्स वा अत्तानं निय्यातेत्वा सम्पन्नज्झासयेन सम्पन्नाधिमुत्तिना च हुत्वा कम्मट्ठानं याचितब्बं।

३६. तत्र "इमाहं भगवा अत्तभावं तुम्हाकं परिच्चजामी" ति एव बुद्धस्स भगवतो अत्ता निय्यातेतब्बो। एवं हि अनिय्यातेत्वा पन्तेसु सेनासनेसु विहरन्तो

भेरवारम्मणे आपाथमागते सन्थम्भितुं असक्कोन्तो गामन्तं ओसरित्वा गिहीहि संसट्ठो हुत्वा अनेसनं आपज्जित्वा अनयब्यसनं पापुणेय्य। निय्यातितत्त-भावस्स पनस्स भेरवारम्मणे आपाथमागते पि भयं न उप्पज्जति। "ननु तया, पण्डित, पुरिममेव अत्ता बुद्धानं निय्यातितो" ति पच्चवेक्खतो पनस्स सोम-नस्समेव उप्पज्जति।

यथा हि पुरिसस्स उत्तमं कासिकवत्थं भवेय्य। तस्स तस्मिं मूसिकाय वा कीटेहि वा खादिते उप्पज्जेय्य दोमनस्सं। सचे पन तं अचीवरकस्स भिक्खुनो ददेय्य, अथस्स तं तेन भिक्खुना खण्डाखण्डं करियमानं दिस्वा पि सोमनस्समेव उप्पज्जेय्य। एवसम्पदमिदं वेदितब्बं।

३७ आचरियस्स निय्यातेन्तेना पि "इमाहं, भन्ते, अत्तभावं तुम्हाकं परिच्चजामी" ति वत्तब्बं। एवं अनिय्यातितत्तभावो हि अतज्जनीयो वा होति दुब्बचो वा अनोवादकरो, येनकामङ्गमो वा आचरियं अनापुच्छा व यत्थिच्छति तत्थ गन्ता। तमनं आचरियो आमिसेन वा धम्मेन वा न सङ्गण्हाति, गूळ्हं गन्थं न सिक्खापेति। सो इमं दुविधं सङ्गहं अलभन्तो सासने पतिट्ठं न लभति, न चिरस्सेव दुस्सील्यं वा गिहिभावं वा पापुणाति। निय्यातितत्तभावो पन नेव अतज्जनीयो होति, न येनकामङ्गमो, सुवचो आचरियायत्तवुत्ति येव होति। सो आचरियतो दुविधं सङ्गहं लभन्तो सासने वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं पापुणाति चूळपिण्डपातिक**तिस्सत्थेरस्स** अन्तेवासिका विय।

थेरस्स किर सन्तिकं तयो भिक्खू आगमंसु। तेसु एको "अहं, भन्ते, तुम्हाक-मत्थाया" ति वुत्ते सतपारिसे पपाते पतितुं उस्सहेय्यं ति आह। दुतियो "अहं, भन्ते, तुम्हाकमत्थाया" ति वुत्ते इमं अत्तभावं गण्हितो पट्ठाय पासाणपिट्ठे घंसेन्तो निरवसेसं खेपेतुं उस्सहेय्यं ति आह। ततियो "अहं, भन्ते तुम्हाकमत्थाया" ति वुत्ते अस्सासपस्सासे उपरुन्धित्वा कालकिरियं कातुं उस्सहेय्यं ति आह। थेरो "भब्बा वतिमे भिक्खू" ति कम्मट्ठानं कथेसि। ते तस्स ओवादे ठत्वा तयो पि अरहत्तं पापुणिंसू ति अयमानिसंसो अत्तनिय्यातने। तेन वुत्तं—"बुद्धस्स वा भगवतो आचरियस्स वा अत्तानं निय्यातेत्वा" ति।

३८. **सम्पन्नज्झासयेन सम्पन्नाधिमुत्तिना च हुत्वा** ति। एत्थ पन तेन योगिना अलोभादीनं वसेन छहाकारेहि सम्पन्नज्झासयेन भवितब्बं। एवं सम्पन्नज्झासयो हि तिस्सन्नं बोधीनं अञ्ञतरं पापुणाति। यथाह—"छ अज्झासया बोधिसत्तानं बोधिपरिपाकाय संवत्तन्ति, अलोभज्झासया च बोधिसत्ता लोभे दोसदस्साविनो। अदोसज्झासया च बोधिसत्ता दोसे दोसदस्साविनो। अमोहज्झासया च बोधिसत्ता मोहे दोसदस्साविनो। नेक्खम्मज्झासया च बोधिसत्ता घरावासे दोसदस्साविनो।

पविवेकज्झासया च बोधिसत्ता सङ्गणिकाय दोसदस्साविनो। निस्सरणज्झासया च बोधिसत्ता सब्बभवगतीसु दोसदस्साविनो" ति। ये हि केचि अतीतानागतपच्चुप्पन्ना सोतापन्नसकदागामिअनागामिखीणासवपच्चेकबुद्धसम्मासम्बुद्धा, सब्बे ते इमेहेव छहाकारेहि अत्तना अत्तना पत्तब्ब विसेसं पत्ता। तस्मा इमे हि छहाकारेहि सम्पन्नज्झासयेन भवितब्बं।

तदधिमुत्तताय पन अधिमुत्तिसम्पन्नेन भवितब्ब। समाधाधिमुत्तेन समाधिगरुकेन समाधिपब्भारेन, निब्बानाधिमुत्तेन निब्बानगरुकेन निब्बानपब्भारेन च भवितब्ब ति अत्थो।

३९. एव सम्पन्नज्झासयाधिमुत्तिनो पनस्स कम्मट्ठानं याचतो चेतोपरियञाणलाभिना आचरियेन चित्ताचार ओलोकेत्वा चरिया जानितब्बा। इतरेन किंचरितोसि? के वा ते धम्मा बहुलं समुदाचरन्ति? किं वा ते मनसिकरोतो फासु होति? कतरस्मिं वा ते कम्मट्ठाने चित्त नमती ति एवमादीहि नयेहि पुच्छित्वा जानितब्बा। एव ञत्वा चरियानुकूलं कम्मट्ठानं कथेतब्ब।

४०. कथेन्तेन च तिविधेन कथेतब्ब। पकतिया उग्गहितकम्मट्ठानस्स एकं द्वे निसज्जानि सज्झाय कारेत्वा दातब्ब। सन्तिके वसन्तस्स आगतागतक्खणे कथेतब्ब। उग्गहेत्वा अञ्ञत्र गन्तुकामस्स नातिसङ्खित्त नातिवित्थारिक कत्वा कथेतब्ब।

तत्थ पथवीकसिणं ताव कथेन्तेन चत्तारो कसिणदोसा, कसिणकरणं, कतस्स भावनानयो, दुविध निमित्त, दुविधो समाधि, सत्तविध सप्पायासप्पाय, दसविध अप्पनाकोसल्लं, विरियसमता, अप्पनाविधान ति इमे नव आकारा कथेतब्बा। सेसकम्मट्ठानेसु पि तस्स तस्स अनुरूप कथेतब्ब। त सब्ब तेस भावनाविधाने आविभविस्सति।

एव कथियमाने पन कम्मट्ठाने तेन योगिना निमित्त गहेत्वा सोतब्बं।

४१. **निमित्तं गहेत्वा** ति। इद हेट्ठिमपदं, उपरिमपद, अयमस्स अत्थो, अयमधिप्पायो, इदमोपम्मं ति एव तं तं आकार उपनिबन्धित्वा ति अत्थो। एवं निमित्तं गहेत्वा सक्कच्चं सुणन्तेन हि कम्मट्ठान सुगहित होति। अथस्स त निस्साय विसेसाधिगमो सम्पज्जति, न इतरस्सा ति।

अय "गहेत्वा" ति इमस्स पदस्स अत्थपरिदीपना॥

एत्तावता **कल्याणमित्तं उपसङ्कमित्वा अत्तनो चरियानुकूलं चत्तालीसाय कम्मट्ठानेसु अञ्ञतरं कम्मट्ठानं गहेत्वा** ति इमानि पदानि सब्बाकारेन वित्थरितानि होन्ती ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे समाधिभावनाधिकारे
कम्मट्ठानग्गहणनिद्देसो नाम ततियो परिच्छेदो॥

पथवीकसिणनिद्देसो

चतुत्थो परिच्छेदो

१ इदानि यं वुत्त "**समाधिभावनाय अननुरूपं विहारं पहाय अनुरूपे विहारे विहरन्तेना**" ति एत्थ यस्स यस्स ताव आचरियेन सद्धिं एकविहारे वसतो फासु[1] होति, तेन तत्थेव कम्मट्ठान परिसोधेन्तेन वसितब्ब। सचे तत्थ फासु न होति, यो अञ्ञो गावुते वा अड्ढयोजने वा योजनमत्ते पि वा सप्पायो विहारो होति, तत्र वसितब्ब। एव हि सति कम्मट्ठानस्स किस्मिञ्चिदेव ठाने सन्देहे वा सति-सम्मोसे वा जाते कालस्सेव विहारे वत्तं कत्वा अन्तरामग्गे पिण्डाय चरित्वा भत्तकिच्चपरियोसाने येव आचरियस्स वसनट्ठानं गन्त्वा त दिवस आचरियस्स सन्तिके कम्मट्ठानं सोधेत्वा दुतियदिवसे आचरिय वन्दित्वा निक्खमित्वा अन्तरा-मग्गे पिण्डाय चरित्वा अकिलमन्तो येव अत्तनो वसनट्ठान आगन्तु सक्खिस्सति। यो पन योजनप्पमाणे पि फासुकट्ठान न लभति, तेन कम्मट्ठाने सब्ब गण्ठिट्ठानं छिन्दित्वा सुविसुद्ध आवज्जनपटिबद्ध कम्मट्ठान कत्वा दूर पि गन्त्वा समाधि-भावनाय अननुरूप विहारं पहाय अनुरूपे विहारे विहातब्बं।

अननुरूपविहारो

२ तत्थ अननुरूपो नाम अट्ठारसन्नं दोसानं अञ्ञतरेन समन्नागतो। तत्रिमे अट्ठारस दोसा–महत्तं, नवत्तं, जिण्णत्त, पन्थनिस्सितत्तं, सोण्डी, पण्णं, पुप्फं, फलं, पत्थनीयता, नगरसन्निस्सितता, दारुसन्निस्सितता, खेत्तसन्निस्सितता, विसभागान पुग्गलानं अत्थिता, पट्टनसन्निस्सितता, पच्चन्तसन्निस्सितता, रज्जसीमसन्निस्सितता, असप्पायता, कल्याणमित्तानं अलाभो ति इमेस अट्ठार-सन्नं दोसान अञ्ञतरेन दोसेन समन्नागतो अननुरूपो नाम, न तत्थ विहातब्बं।

कस्मा ?

महाविहारे ताव बहू नानाछन्दा सन्निपतन्ति। ते अञ्ञमञ्ञं पटि-विरुद्धताय वत्त न करोन्ति, बोधियङ्गणादीनि असम्मट्ठानेव होन्ति, अनुपट्ठा-पितं पानीय परिभोजनीयं। तत्रायं 'गोचरगाम पिण्डाय चरिस्सामा' ति पत्तचीवरं आदाय निक्खन्तो सचे पस्सति वत्तं वा अकतं, पानीयघट वा रित्त, अथानेन वत्तं, कातब्ब होति, पानीयं उपट्ठापेतब्बं। अकरोन्तो वत्तभेदे दुक्कटं आपज्जति,

---

१. फासु होती ति। आवाससप्पायादिलाभेन भावनानुकूलता।

करोन्तस्स कालो अतिक्कमति, अतिदिवा पविट्ठो निट्ठिताय भिक्खाय किञ्चि न लभति। पटिसल्लानगतो पि सामणेर-दहरभिक्खूनं उच्चासद्देन सङ्घकम्मेहि च विक्खिपति। (१)

यत्थ पन सब्बं वत्तं कतमेव होति, अवसेसा पि च सङ्घट्टना नत्थि। एवरूपे महाविहारे पि विहातब्बं।

नवविहारे बहु नवकम्म होति, अकरोन्त उज्झायन्ति। (२)

यत्थ पन भिक्खू एवं वदन्ति—"आयस्मा यथासुखं समणधम्मं करोतु, मयं नवकम्म करिस्सामा" ति, एवरूपे विहातब्ब।

जिण्णविहारे पन बहु पटिजग्गितब्बं होति, अन्तमसो अत्तनो सेनासन-मत्तं पि अपटिजग्गन्त उज्झायन्ति, पटिजग्गन्तस्स कम्मट्ठानं परिहायति।[1] (३)

पन्थनिस्सिते महापथविहारे रत्तिन्दिवं आगन्तुका सन्निपतन्ति। विकाले आगतान अत्तनो सेनासन दत्वा रुक्खमूले वा पासाणपिट्ठे वा वसितब्ब होति, पुनदिवसे पि एवमेवा ति कम्मट्ठानस्स ओकासो न होति। यत्थ पन एवरूपो आगन्तुकसम्बाधो न होति, तत्थ विहातब्ब। (४)

सोण्डी नाम पासाणपोक्खरणी होति। तत्थ पानीयत्थ महाजनो समोसरति, नगरवासीनं राजकुलूपकत्थेरानं अन्तेवासिका रजनकम्मत्थाय आगच्छन्ति, तेस भाजनदारुदोणिकादानि पुच्छन्तानं असुके च असुके च ठाने ति दस्सेतब्बानि होन्ति, एवं सब्बकाल पि निच्चब्यावटो होति। (५)

यत्थ नानाविध **साकपण्णं** होति, तत्थस्स कम्मट्ठान गहेत्वा दिवाविहार निसिन्नस्सा पि सन्तिके साकहारिका गायमाना पण्ण उच्चिनन्तियो विसभाग-सद्दसङ्घट्टनेन कम्मट्ठानन्तराय करोन्ति। (६)

यत्थ पन नानाविधा मालागच्छा सुपुप्फिता होन्ति, तत्रा पि तादिसो येव उपद्दवो। (७)

यत्थ नानाविध अम्बजम्बुपनसादिफलं होति, तत्थ फलत्थिका आगन्त्वा याचन्ति, अदेन्तस्स कुज्झन्ति, बलक्कारेन वा गण्हन्ति। सायन्हसमये विहार-मज्झे चङ्कमन्तेन ते दिस्वा "किं, उपासका, एवं करोथा" ति वुत्ता यथारुचि अक्कोसन्ति। अवासाय पिस्स परक्कमन्ति। (८)

---

१. जिण्णविहारे पि यत्र भिक्खू एवं वदन्ति—"आयस्मा यथासुखं समणधम्मं करोतु, मय पटिजग्गिस्सामा" ति एवरूपे विहातब्बं ति अयं पि नयो लब्भति, वुत्तनयत्ता पन न वुत्तो।

पन्थनीये पन लेणमम्मते दक्खिणगिरि-हत्थिकुच्छि-चेतियगिरि-चित्तल-पब्बतसदिसे विहारे विहरन्त 'अयमरहा' ति सम्भावेत्वा वन्दितुकामा मनुस्सा समन्ता ओसरन्ति, तेनस्स न फासु होति। (९)

यस्स पन त सप्पाय होति, तेन दिवा अञ्ञत्र गन्त्वा रत्तिं वसितब्ब।

नगरसन्निस्सिते विसभागारम्मणानि आपाथमागच्छन्ति, कुम्भदासियो पि घटेहि निघमन्तिया गच्छन्ति, ओक्कमित्वा मग्ग न देन्ति, इस्सरमनुस्सा पि विहारमज्झे साणिं परिक्खिपित्वा निसीदन्ति। (१०)

दारुसन्निस्सये पन यत्थ कट्ठानि च दब्बूपकरणरुक्खा च सन्ति, तत्थ कट्ठहारिका पुब्बेवुत्तसाकपुप्फहारिका विय अफासुं करोन्ति, 'विहारे रुक्खा सन्ति, ते छिन्दित्वा घरानि करिस्सामा' ति मनुस्सा आगन्त्वा छिन्दन्ति। सचे सायन्हसमय पधानघरा निक्खमित्वा विहारमज्झे चङ्कमन्तो ते दिस्वा "किं उपासका एव करोथा" ति वदति, यथारुचि अक्कोसन्ति, अवासाय पिस्स परक्कमन्ति। (११)

यो पन **खेत्तसन्निस्सितो** होति समन्ता खेत्तेहि परिवारितो, तत्थ मनुस्सा विहारमज्झयेव खल[1] कत्वा धञ्ञं मद्दन्ति, पमुखेसु सयन्ति, अञ्ञ पि बहु अफासु करोन्ति। यत्रापि महासङ्घभोगो होति, आरामिका कुलान गावो रुन्धन्ति, उदकवार परिसेधेन्ति, मनुस्सा वोहिसीसं गहेत्वा "पस्सथ तुम्हाक आरामिकान कम्मं" ति सङ्घस्स दस्सेन्ति। तेन तेन कारणेन राजराज-महामत्तान घरद्वारं गन्तब्ब होति। अयं पि खेत्तसन्निस्सितेनेव सङ्गहितो। (१२)

विसभागानं पुग्गलानं अत्थिता ति। यत्थ अञ्ञमञ्ञं विसभागवेरी भिक्खू विहरन्ति, ये कलह करोन्ता "मा, भन्ते, एव करोथा" ति वारियमाना "एतस्स पसुकूलिकस्स आगतकालतो पट्ठाय नट्ठम्हा" ति वत्तारो भवन्ति। (१३)

यो पि **उदकपट्टनं** वा **थलपट्टनं** वा निस्सितो होति, तत्थ अभिण्हं नावाहि च सत्थेहि च आगतमनुस्सा 'ओकासं देथ, पानीयं देथ, लोणं देथा' ति घट्टयन्ता अफासु करोन्ति। (१४)

पच्चन्तसन्निस्सिते पन मनुस्सा बुद्धादीसु अप्पसन्ना होन्ति। (१५)

रज्जसीमसन्निस्सिते राजभयं होति। तं हि पदेसं एको राजा 'न मय्हं वसे वत्तती' ति पहरति, इतरो पि 'न मय्हं वसे वत्तती' ति। तत्रायं भिक्खु कदाचि इमस्स रञ्ञो विजिते विचरति, कदाचि एतस्स। अथ नं 'चरपुरिसो अयं' ति मञ्ञमाना अनयब्यसनं पापेन्ति। (१६)

---

१. खलंति। धञ्ञकरणट्ठानं।

असप्पायता ति। विसभागरूपादिआरम्मणसमोसरणेन वा अमनुस्सपरिग्गहिताय वा असप्पायता। तत्रिद वत्थु—एको किर थेरो अरञ्ञे वसति। अथस्स एका यक्खिनी पण्णसालद्वारे ठत्वा गायि। सो निक्खमित्वा द्वारे अट्ठासि। सा गन्त्वा चङ्कमनसीसे गायि। थेरो चङ्कमनसीस अगमासि। सा सतपोरिसे पपाते ठत्वा गायि। थेरो पटिनिवत्ति। अथ न सा वेगेन गहेत्वा "मया, भन्ते, न एको न द्वे तुम्हादिसा खादिता" ति आह। (१७)

कल्याणमित्तानं अलाभो ति। यत्थ न सक्का होति आचरिय वा आचरियसम वा उपज्झाय वा उपज्झायसम वा कल्याणमित्त लद्धु। तत्थ सो कल्याणमित्तान अलाभा महादोसो येवा ति। इमेस अट्ठारसन्न दोसान अञ्ञतरेन समन्नागतो अननुरूपो ति वेदितब्बो। (१८) वुत्त पि चेत्त **अट्ठकथासु**—

"महावासं नवावास जरावास च पन्थनिं।
सोण्डि पण्णं च पुप्फं च फलं पत्थितमेव च॥
नगरं दारुना खेत्त विसभागेन पट्टन।
पच्चन्तसीमासप्पायं यत्थ मित्तो न लब्भति॥
अट्ठारसेतानि ठानानि इति विञ्ञाय पण्डितो।
आरका परिवज्जेय्य मग्ग सप्पटिभय यथा" ति॥

अनुरूपविहारो

३. यो पन गोचरगामतो नातिदूरनाच्चासन्नतादीहि पञ्चहि अङ्गेहि समन्नागतो, अय अनुरूपो नाम। वुत्त हेतं भगवता—"कथं च, भिक्खवे, सेनासनं पञ्चङ्गसमन्नागतं होति? इध, भिक्खवे, सेनासन नातिदूर होति नाच्चासन्नं गमनागमनसम्पन्न, दिवा अप्पाकिण्ण रत्तिं अप्पसद्दं अप्पनिग्घोस, अप्पडंसमकसवातातपसरीसपसम्फस्सं होति, तस्मिं खो पन सेनासने विहरन्तस्स अप्पकसिरेनेव उप्पज्जन्ति चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानपच्चयभेसज्जपरिक्खारा, तस्मिं खो पन सेनासने थेरा भिक्खू विहरन्ति बहुस्सुता आगतागमा धम्मधरा विनयधरा मातिकाधरा, ते कालेन काल उपसङ्कमित्वा परिपुच्छति परिपञ्हति 'इदं, भन्ते, कथं, इमस्स को अत्थो' ति, तस्स ते आयस्मन्तो अविवट चेव विवरन्ति, अनुत्तानीकतं च उत्तानीकरोन्ति, अनेकविहितेसु च कङ्खट्ठानियेसु धम्मेसु कङ्खं पटिविनोदेन्ति। एवं खो, भिक्खवे, सेनासनं पञ्चङ्गसमन्नागतं होती" (अं० ४-११०) ति।

अयं "समाधिभावनाय अननुरूपं विहारं पहाय अनुरूपे विहारे विहरन्तेना" ति एत्थ वित्थारो॥

खुद्दकपलिबोधा

४ **खुद्दकपलिबोधुपच्छेदं कत्वा** ति। एवं पतिरूपे विहारे विहरन्तेन ये पिस्स ते होन्ति खुद्दकपलिबोधा, ते पि उपच्छिन्दितब्बा। सेय्यथीदं—दीघानि केसनखलोमानि छिन्दितब्बानि। जिण्णचीवरेसु दळ्हीकम्मं वा तुन्नकम्मं वा कातब्बं। किलिट्ठानि वा रजितब्बानि। सचे पत्ते मलं होति, पत्तो पचितब्बो। मञ्चपीठादीनि सोधेतब्बानी ति।

अयं 'खुद्दकपलिबोधुपच्छेदं कत्वा' ति एत्थ वित्थारो॥

भावनाविधिकथा

५ इदानि **सब्बं भावनाविधानं अपरिहापेन्तेन भावेतब्बो** ति। एत्थ अयं पथवीकसिणं आदिं कत्वा सब्बकम्मट्ठानवसेन वित्थारकथा होति। एवं उपच्छिन्नखुद्दकपलिबोधेन हि भिक्खुना पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तेन भत्तसम्मदं पटिविनोदेत्वा पविवित्ते ओकासे सुखनिसिन्नेन कताय वा अकताय वा पथविया निमित्तं गण्हितब्बं।

६ वुत्तं हेतं—

"पथवीकसिणं उग्गण्हन्तो पथविया निमित्तं गण्हाति कते वा अकते वा, सान्तके नो अनन्तके, सकोटिये नो अकोटिये, सवटुमे नो अवटुमे, सपरियन्ते नो अपरियन्ते, सुप्पमत्ते वा सरावमत्ते वा। सो तं निमित्तं सुग्गहितं करोति, सूपधारितं उपधारेति, सुववत्थितं ववत्थपेति। सो तं निमित्तं सुग्गहितं कत्वा, सूपधारितं उपधारेत्वा, सुववत्थितं ववत्थपेत्वा, आनिसंसदस्सावी रतनसञ्ञी हुत्वा, चित्तीकारं उपट्ठपेत्वा सम्पियायमानो तस्मिं आरम्मणे चित्तं उपनिबन्धाति 'अद्धा इमाय पटिपदाय जरामरणम्हा मुच्चिस्सामी' ति। सो विविच्चेव कामेहि पे० पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरती" ( ) ति।

७. तत्थ येन अतीतभवे पि सासने वा इसिपब्बज्जाय वा पब्बजित्वा पथवीकसिणे चतुक्कपञ्चकज्झानानि निब्बत्तितपुब्बानि, एवरूपस्स पुञ्ञवतो उपनिस्सयसम्पन्नस्स अकताय पथविया कसिनट्ठाने वा खलमण्डले वा निमित्तं उप्पज्जति **मल्लकत्थेरस्स** विय। तस्स किरायस्मतो कसितट्ठानं ओलोकेन्तस्स तंठानप्पमाणमेव निमित्तं उदपादि। सो तं वड्ढेत्वा पञ्चकज्झानानि निब्बत्तेत्वा झानपदट्ठानं विपस्सनं पट्ठपेत्वा अरहत्तं पापुणि।

८ यो पनेवं अकताधिकारो होति, तेन आचरियस्स सन्तिके उग्गहितकम्मट्ठानविधानं अविराधेत्वा चत्तारो कसिणदोसे परिहरन्तेन कसिणं कातब्बं।

नील-पीत-लोहित-ओदातसम्भेदवसेन हि चत्तारो पथवीकसिणदोसा। तस्मा नीलादिवण्ण मत्तिकं अग्गहेत्वा गङ्गावहे[1] मत्तिकासदिसाय अरुणवण्णाय मत्तिकाय कसिण कातब्बं। तं च खो विहारमज्झे सामणेरादीन सञ्चरणट्ठाने न कातब्बं। विहारपच्चन्ते पन पटिच्छन्नट्ठाने पब्भारे वा पण्णसालाय वा संहारिमं वा तत्रट्ठकं वा कातब्ब।

तत्र संहारिमं चतूसु दण्डकेसु पिलोतिक वा चम्म वा कटसारकं वा बन्धित्वा तत्थ अपनीततिणमूलसक्खरकथलिकाय सुमद्दिताय मत्तिकाय वुत्तप्पमाणं वट्टं लिम्पेत्वा कातब्ब। त परिकम्मकाले भूमियं अत्थरित्वा ओलोकेतब्ब। तत्रट्ठकं भूमियं पदुमकण्णिकाकारेन खाणुके आकोटेत्वा वल्लीहि विनन्धित्वा कातब्बं। यदि सा मत्तिका नप्पहोति, अधो अञ्ञ पक्खिपित्वा उपरिभागे सुपरिसोधिताय अरुणवण्णाय मत्तिकाय विदत्थिचतुरङ्गुलवित्थारं वट्टं कातब्ब। एतदेव हि पमाणं सन्धाय—"**सुप्पमत्तं वा सरावमत्तं वा**" ति वुत्तं। "सान्तके नो अनन्तके" ति आदि पनस्स परिच्छेदत्थाय वुत्तं।

९. तस्मा एव वुत्तप्पमाणपरिच्छेदं कत्वा रुक्खपाणिका विसभागवण्णं समुट्ठपेति, तस्मा त अग्गहेत्वा—पासाणपाणिकाय घसेत्वा समं भेरीतलसदिसं कत्वा त ठान सम्मज्जित्वा न्हात्वा आगन्त्वा कसिणमण्डलतो अड्ढतेय्यहत्थन्तरे पदेसे पञ्ञत्ते विदत्थिचतुरङ्गुलपादके सुअत्थते पीठे निसीदितब्ब। ततो दूरतरे निसिन्नस्स हि कसिण न उपट्ठाति, आसन्नतरे कसिणदोसा पञ्ञायन्ति। उच्चतरे निसिन्नेन गीवं ओनमित्वा ओलोकेतब्बं होति, नीचतरे जण्णुकानि रुजन्ति।

१०. तस्मा वुत्तनयेनेव[2] निसीदित्वा "अप्पस्सादा कामा" ति आदिना नयेन कामेसु आदीनवं पच्चवेक्खित्वा कामनिस्सरणे सब्बदुक्खसमतिक्कमस्स उपायभूते नेक्खम्मे[3] जाताभिलासेन बुद्ध-धम्म-सङ्घगुणानुस्सरणेन पीतिपामोज्जं जनयित्वा "अयं दानि सा सब्बबुद्ध-पच्चेकबुद्ध-अरियसावकेहि पटिपन्ना नेक्खम्मपटिपदा" ति पटिपत्तिया सञ्जातगारवेन "अद्धा इमाय पटिपदाय पविवेकसुखरसस्स भागी भविस्सामी" ति उस्साहं जनयित्वा समेन आकारेन चक्खूनि उम्मीलेत्वा निमित्तं गण्हन्तेन भावेतब्बं।

११. अतिउम्मीलयतो हि चक्खु किलमति, मण्डलं च अतिविभूतं होति, तेनस्स निमित्त नुप्पज्जति। अतिमन्दं उम्मीलयतो मण्डलं अविभूत होति, चित्तं च लीनं होति, एव पि निमित्तं नुप्पज्जति। तस्मा, आदासतले मुखनिमित्तदस्सिना विय, समेन आकारेन चक्खूनि उम्मीलेत्वा निमित्त गण्हन्तेन भावेतब्बं।

---

१. गङ्गावहे ति। गङ्गासोते। २. अड्ढतेय्यहत्थन्तरे पदेसे, विदत्थिचतुरङ्गुलपादके पीठे ति च वुत्तविधिना व। ३. नेक्खम्मे ति। झाने।

न वण्णो पच्चवेक्खितब्बो, न लक्खणं मनसि कातब्बं। अपि च—वण्णं अमुञ्चित्वा निस्सयसवण्ण कत्वा उस्सदवसेन पण्णत्तिधम्मे चित्त पट्ठपेत्वा मनसि कातब्बं। पथवी, मही, मेदिनी, भूमि, वसुधा, वसुन्धरा ति आदासु पथवीनामेसु य इच्छति, यदस्स सञ्ञानुकूल होति, त वत्तब्ब। अपि च 'पथवी' ति एतदेव नामं पाकट, तस्मा पाकटवसेनेव 'पथवी', 'पथवी' ति भावेतब्ब। कालेन उम्मीलेत्वा कालेन निम्मीलेत्वा आवज्जितब्ब। याव उग्गहनिमित्त नुप्पज्जति, ताव कालसतं पि कालसहस्स पि ततो भिय्यो पि एतेनेव नयेन भावेतब्ब।

१२. तस्सेव भावयतो यदा निम्मीलेत्वा आवज्जन्तस्स उम्मीलितकाले विय आपाथ आगच्छति, तदा उग्गहनिमित्तं जातं नाम होति। तस्स जातकालतो पट्ठाय न तस्मि ठाने निसीदितब्ब। अत्तनो वसनट्ठान पविसित्वा तत्थ निसिन्नेन भावेतब्बं। पादधोवनपपञ्चपरिहारत्थं पनस्स एकपटलिकुपाहना च कत्तरदण्डो च इच्छितब्बो। अथानेन सचे तरुणो समाधि केनचिदेव असप्पायकारणेन नस्सति, उपाहना आरुय्ह कत्तरदण्ड गहेत्वा त ठान गन्त्वा निमित्तं आदाय आगन्त्वा सुखनिसिन्नेव भावेतब्ब, पुनप्पुन समन्नाहरितब्बं, तक्काहत वितक्काहतं कातब्ब।

तस्स एव करोन्तस्स अनुक्कमेन नीवरणानि विक्खम्भन्ति, किलेसा सन्निसीदन्ति, उपचारसमाधिना चित्त समाधियति, पटिभागनिमित्त उप्पज्जति।

१३. तत्रायं पुरिमस्स च उग्गहनिमित्तस्स इमस्स च विसेसो—उग्गहनिमित्ते कसिणदोसो पञ्ञायति। पटिभागनिमित्त थविकतो नीहटादासमण्डल विय सुधोतसङ्खथालं विय वलाहकन्तरा निक्खन्तचन्दमण्डल विय, मेघमुखे बलाका विय, उग्गहनिमित्त पदालेत्वा निक्खन्तमिव तता सतगुण सहस्सगुण सुपरिसुद्ध हुत्वा उपट्ठाति। तं च खो नेव वण्णवन्त, न सण्ठानवन्त। यदि हि तं ईदिसं भवेय्य, चक्खुविञ्ञेय्य सिया ओळारिक सम्मसनूपग तिलक्खणब्भाहतं। न पनेत तादिस। केवल हि समाधिलाभिनो उपट्ठानाकारमत्त सञ्ञजमेत ति।

उप्पन्नकालतो च पनस्स पट्ठाय नीवरणानि विक्खम्भितानेव होन्ति, किलेसा सन्निसिन्ना व, उपचारसमाधिना चित्त समाहितमेवा ति।

१४. दुविधो हि समाधि—उपचारसमाधि च, अप्पनासमाधि च। द्वीहाकारेहि चित्त समाधियति—उपचारभूमियं[1] वा, पटिलाभभूमियं[2] वा। तत्थ उपचारभूमियं नीवरणप्पहानेन चित्तं समाहितं होति, पटिलाभभूमियं अङ्गपातुभावेन।

१५. द्विन्नं पन समाधीन इदं नानाकरण—उपचारे अङ्गानि न थामजातानि[3]

---

१. उपचारभूमियं ति। उपचारावत्थायं। २ पटिलाभभूमियं ति। झानस्स अधिगमावत्थाय। ३. न थामजातानी ति। न जातथामानि, भावनाबलं पत्तानी ति अत्थो।

होन्ति। अङ्गान अथामजातत्ता यथा नाम दहरो कुमारको उक्खिपित्वा ठपियमानो पुनप्पुन भूमिय पतति, एवमेव उपचारे उप्पन्ने चित्त कालेन निमित्त आरम्मण करोति, कालेन भवङ्ग ओतरात। अप्पनाय पन अङ्गानि थामजातानि होन्ति। तेस थामजातत्ता यथा नाम बलवा पुरिसो आसना वुट्ठाय दिवस पि तिट्ठेय्य, एवमेव अप्पनासमाधिम्हि उप्पन्ने चित्त सकि भवङ्गवारं छिन्दित्वा केवल पि रत्ति केवल पि दिवस तिट्ठति। कुसलजवनपटिपाटिवसनेव पवत्तती ति।

तत्र यदेत उपचारसमाधिना सद्धिं पटिभागनिमित्त उप्पन्नं, तस्स उप्पादन नाम आतिदुक्करं। तस्मा सचे तेनेव पल्लङ्केन त निमित्त वड्ढेत्वा अप्पन अधिगन्तु सक्कोति, सुन्दर। नो चे सक्कोति, अथानेन त निमित्त अप्पमत्तेन चक्कवत्तिगब्भो विय रक्खितब्ब। एव हि—

निमित्त रक्खतो लद्धपरिहानि न विज्जति।
आरक्खम्हि असन्तम्हि लद्धं लद्धं विनस्सति॥

सत्तसप्पायसेवनकथा

१६ तत्राय रक्खणविधि—

आवासो, गोचरो, भस्सं, पुग्गलो, भोजन, उतु।
इरियापथो ति सत्तेते असप्पाये विवज्जये॥
सप्पाये सत्त सेवेथ, एवं हि पटिपज्जतो।
नचिरेनेव कालेन होति कस्सचि अप्पना॥

(१) तत्रस्स यस्मि **आवासे** वसन्तस्स अनुप्पन्न वा निमित्तं नुपज्जति, उप्पन्न वा विनस्सति, अनुपट्ठिता च सति न उपट्ठाति, असमाहित च चित्तं न समाधियति, अय असप्पायो। यत्थ निमित्त उप्पज्जति चेव थावर च होति, सति उपट्ठाति, चित्त समाधियति नागपब्बतवासिपधानियतिस्सत्थेरस्स विय, अयं सप्पायो। तस्मा यस्मि विहारे बहू आवासा होन्ति, तत्थ एकमेकस्मि तीणि तीणि दिवसानि वसित्वा यत्थस्स चित्त एकग्ग होति, तत्थ वसितब्ब। आवाससप्पायताय हि तम्बपण्णिदीपम्हि चूळनागलेण वसन्ता तत्थेव कम्मट्ठान गहेत्वा पञ्चसता भिक्खू अरहत्त पापुणिसु। सोतापन्नादीन पन अञ्ञत्थ अरियभूमि पत्वा तत्थ अरहत्तपत्तानं च गणना नत्थि। एव अञ्ञेसु पि चित्तलपब्बतविहारादीसु।

(२) **गोचरगामो** पन यो सेनासनतो उत्तरेन वा दक्खिणेन वा नातिदूरे दियड्ढकोसब्भन्तरे होति सुलभसम्पन्नभिक्खो, सो सप्पायो। विपरीतो असप्पायो।

(३) **भस्सं** ति द्वात्तिसतिरच्छानकथापरियापन्नं। त हिस्स निमित्तन्तर-प्रधानाय सवत्तति। दसकथावत्थुनिस्सित सप्पायं, तं पि मत्ताय भावितब्ब।

(४) **पुग्गलो** पि अतिरच्छानकथिको सीलादिगुणसम्पन्नो, य निस्साय असमाहित वा चित्तं समाधियति, समाहित वा चित्त थिरतर होति, एवरूपो सप्पायो। कायदळ्हीबहुलो पन तिरच्छानकथिको असप्पायो। सो हि त कद्द-मोदकमिव अच्छ उदक, मलिनमेव करोति, तादिस च आगम्म कोटपब्बतवासी-दहरस्सेव समापत्ति पि नस्सति, पगेव निमित्त।

(५) **भोजनं** पन कस्सचि मधुर, कस्सचि अम्बिल सप्पायं होति।

(६) **उतु** पि कस्सचि सीतो उण्हो सप्पायो होति। तस्मा य भोजन वा उतुं वा सेवन्तस्स फासु होति, असमाहितं वा चित्त समाधियति, समाहित वा चित्त थिरतर होति, त भोजन सो च उतु सप्पायो। इतर भोजन इतरो च उतु असप्पायो।

(७) **इरियापथेसु** पि कस्सचि चङ्कमो सप्पायो होति, कस्सचि सयनट्ठान-निसज्जान अञ्ञतरो। तस्मा त आवास विय ताणि दिवसानि उपपरिक्खित्वा यस्मि इरियापथ असमाहित वा चित्त समाधियति, समाहित वा चित्त थिरतर होति, सो सप्पायो। इतरो असप्पायो ति वेदितब्बो।

इति इम सत्तविध असप्पाय वज्जेत्वा सप्पायं सेवितब्ब। एव पटिपन्नस्स हि निमित्तासेवनबहुलस्स नचिरेनेव कालेन होति कस्सचि अप्पना।

दसविधं अप्पनाकोसल्लं

१७. यस्स पन एव पि पटिपज्जतो न होति[1], तेन दसविध अप्पनाकोसल्लं सम्पादेतब्ब। तत्राय नयो—दसहाकारेहि अप्पनाकोसल्लं इच्छितब्ब . १. वत्थु-विसदकिरियतो, २ इन्द्रियसमत्तपटिपादनतो, ३. निमित्तकुसलतो, ४. यस्मि समये चित्त पग्गहेतब्ब तस्मि समये चित्त पग्गण्हाति, ५ यस्मि समये चित्त निग्गहेतब्बं तस्मि समये चित्तं निग्गण्हाति, ६. यस्मि समये चित्त सम्पहसितब्बं तस्मि समये चित्तं सम्पहमेति, ७ यस्मि समये चित्तं अज्झुपेक्खितब्बं तस्मि समये चित्त अज्झुपेक्खति, ८. असमाहितपुग्गलपरिवज्जनतो, ९ समाहितपुग्गल-सेवनतो, १०. तदधिमुत्तितो ति।

(१) तत्थ **वत्थुविसदकिरिया** नाम अज्झत्तिकबाहिरानं वत्थून विसद-भावकरण। यदा हिस्स केसनखलोमानि दीघानि होन्ति, सरीरं वा सेदमलग्गहितं,

---

१ न होतीति। अप्पना ति सेसो।

तदा अज्झत्तिकं वत्थु अविसदं होति अपरिसुद्ध । यदा पन अस्स चीवरं जिण्णं किलिट्ठ दुग्गन्ध होति, सेनासन वा उक्लाप होति, तदा बाहिरवत्थु अविसद होति अपरिसुद्ध । अज्झत्तिकबाहिरे च वत्थुम्हि अविसदे उप्पन्नेसु चित्तचेतसिकेसु ञाण पि अपरिसुद्ध होति, अपरिसुद्धानि दीपकपल्लिकवट्टितेलानि निस्साय उप्पन्नदीपसिखाय ओभासो विय । अपरि सुद्धेन च ञाणेन सङ्खारे सम्मसतो सङ्खारा पि आविभूता होन्ति, कम्मट्ठानमनुयुञ्जतो कम्मट्ठान पि वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं न गच्छति । विसदे पन अज्झत्तिकबाहिरे वत्थुम्हि उप्पन्नसु चित्तचेतसिकसु ञाण पि विसद होति परिसुद्ध, परिसुद्धानि दीपकपल्लिकवट्टितेलानि निस्साय उप्पन्नदीपसिखाय ओभासो विय । परिसुद्धन च ञाणेन सङ्खारे सम्मसतो सङ्खारा पि विभूता होन्ति, कम्मट्ठानमनुयुञ्जतो कम्मट्ठान पि वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं गच्छति ।

(२) **इन्द्रियसमत्तपटिपादनं** नाम सद्धादीनं इन्द्रियानं समभावकरणं । सचे हिस्स सद्धिन्द्रिय बलव होति इतरानि मन्दानि, ततो विरियिन्द्रियं पग्गहकिच्चं, सतिन्द्रिय उपट्ठानकिच्च, समाधिन्द्रिय अविक्खेपकिच्च, पञ्ञिन्द्रिय दस्सनकिच्च कातु न सक्कोति, तस्मा त धम्मसभावपच्चवेक्खणेन वा यथा वा मनसिकरोतो बलव जात, तथा अमनसिकारेन हापेतब्बं । **वक्कलित्थेर**वत्थु (सं० २–३४१) चेत्थ निदस्सन । सचे पन विरियिन्द्रियं बलव होति, अथ नेव सद्धिन्द्रियं अधिमोक्खकिच्चं कातु सक्कोति, न इतरानि इतरकिच्चभेद, तस्मा तं पस्सद्धादिभावनाय हापेतब्ब । तत्रापि **सोणत्थेर**वत्थु (वि० ३–२००) दस्सेतब्ब । एव सेसेसु पि एकस्स बलवभावे सति इतरेसं अत्तना किच्चेसु असमत्थता वेदितब्बा ।

विसेसतो पनत्थ[1] सद्धापञ्ञानं समाधिविरियानं च समत पसंसन्ति । बलवसद्धा हि मन्दपञ्ञा मुद्धप्पसन्नो होति, अवत्थुस्मि पसीदति । बलवपञ्ञो मन्दसद्धो केराटिकपक्ख[2] भजति, भेसज्जसमुट्ठिता विय रोगो अतेकिच्छो होति । उभिन्न समताय वत्थुस्मि येव पसीदति । बलवसमाधि पन मन्दविरियं समाधिस्स कोसज्जपक्खत्ता कोसज्ज अभिभवति । बलवविरियं मन्दसमाधि विरियस्स उद्धच्चपक्खत्ता उद्धच्च अभिभवति । समाधि पन विरियेन संयोजितो कोसज्जे पतितु न लभति । विरिय समाधिना सयोजितं उद्धच्चे पतितु न लभति, तस्मा तदुभय सम कातब्बं । उभयसमताय हि अप्पना होति ।

अपि च—समाधिकम्मिकस्स बलवती पि सद्धा वट्टति । एव सद्दहन्तो ओकप्पेन्तो अप्पनं पापुणिस्सति । समाधिपञ्ञासु पन समाधिकम्मिकस्स

---

१. एत्था ति । एतेसु पञ्चसु इन्द्रियेसु । २ साठेय्यपक्ख त्यत्थो ।

एकग्गता बलवती वट्टति। एवं हि सो अप्पनं पापुणाति। विपस्सनाकम्मिकस्स पञ्ञा बलवती वट्टति। एवं हि सो लक्खणपटिवेधं पापुणाति। उभिन्नं पन समताय पि अप्पना होति येव। सति पन सब्बत्थ बलवती वट्टति। सति हि चित्तं उद्धच्चपक्खिकानं सद्धाविरियपञ्ञानं वसेन उद्धच्चपाततो कोसज्ज-पक्खेन च समाधिना कोसज्जपाततो रक्खति, तस्मा सा लोणधूपनं विय सब्ब-ब्यञ्जनेसु, सब्बकम्मिकअमच्चो विय च सब्बराजकिच्चेसु, सब्बत्थ इच्छितब्बा। तेनाह—"सति च पन सब्बत्थिका वुत्ता भगवता। किं कारणा? चित्तं हि सतिपटिसरणं, आरक्खपच्चुपट्ठाना च सति, न विना सतिया चित्तस्स पग्गहनिग्गहो होती" ति।

(३) **निमित्तकोसल्लं नाम** पथवीकसिणादिकस्स चित्तेकग्गतानिमित्तस्स अकतस्स करणकोसल्लं, कतस्स च भावनाकोसल्लं, भावनाय लद्धस्स रक्खण-कोसल्लं च, तं इध अधिप्पेतं।

(४) कथं च **यस्मिं समये चित्तं पग्गहेतब्बं, तस्मिं समये चित्तं पग्गण्हाति?** यदास्स अतिसिथिलविरियतादीहि लीनं चित्तं होति, तदा पस्सद्धिसम्बोज्झ-ङ्गादयो तयो अभावेत्वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गादयो भावेति। वुत्तं हेतं भगवता—

"सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो परित्तं[1] अग्गिं उज्जालेतुकामो अस्स, सो तत्थ अल्लानि चेव तिणानि पक्खिपेय्य, अल्लानि च गोमयानि पक्खिपेय्य, अल्लानि च कट्ठानि पक्खिपेय्य, उदकवातं च ददेय्य, पंसुकेन च ओकिरेय्य, भब्बो नु खो सो, भिक्खवे, पुरिसो परित्तं अग्गिं उज्जालेतु" न्ति? "नो हेतं, भन्ते"। "एवमेव खो, भिक्खवे, यस्मिं समये लीनं चित्तं होति, अकालो तस्मिं समये पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, अकालो समाधि...पे०... अकालो उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय। तं किस्स हेतु? लीनं भिक्खवे चित्तं, तं एतेहि धम्मेहि दुसमुट्ठापयं होति। यस्मिं च खो, भिक्खवे, लीनं चित्तं होति, कालो तस्मिं समये धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो विरियसम्बोज्झ-ङ्गस्स भावनाय, कालो पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय। तं किस्स हेतु? लीनं भिक्खवे चित्तं, तं एतेहि धम्मेहि सुसमुट्ठापयं होति।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो परित्तं अग्गिं उज्जालेतुकामो अस्स, सो तत्थ सुक्खानि चेव तिणानि पक्खिपेय्य, सुक्खानि च गोमयानि पक्खिपेय्य, सुक्खानि च कट्ठानि पक्खिपेय्य, मुखवातं च ददेय्य, न च पंसुकेन ओकिरेय्य, भब्बो नु

१. परित्त ति। अप्पक।

खो सो, भिक्खवे, पुरिसो परित्त अग्गिं उज्जालेतुं"? ति "एवं भन्ते" (सं० ४-१०१) ति।

एत्थ च यथामकं आहारवसेन धम्मविचयसम्बोज्झङ्गादीन भावना वेदितब्बा। वुत्त हेतं—

"अत्थि, भिक्खवे, कुसलाकुसला धम्मा, सावज्जानवज्जा धम्मा, हीनप्पणीता धम्मा, कण्हसुक्कसप्पटिभागा धम्मा। तत्थ योनिसो मनसिकारबहुलीकारो, अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया सवत्तता" (स० ४-९४) ति।

तथा "अत्थि, भिक्खवे, आरम्भधातु निक्कमधातु परक्कमधातु। तत्थ योनिसो मनसिकारबहुलीकारो, अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तति" (स० ४-९४) ति।

तथा "अत्थि, भिक्खवे, पीतिसम्बोज्झङ्गट्ठानिया धम्मा। तत्थ योनिसो मनसिकारबहुलीकारो, अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय उप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय परिपूरिया संवत्तती" (स० ४-२४) ति।

तत्थ[१] सभावसामञ्ञलक्खणपटिवेधवसेन पवत्तमनसिकारो कुसलादीसु **योनिसो मनसिकारो** नाम। आरम्भधातुआदीन उप्पादनवसेन पवत्तमनसिकारो आरम्भधातुआदीसु **योनिसो मनसिकारो** नाम। तत्थ **आरम्भधातू** ति पठम-विरिय वुच्चति। **निक्कमधातू** ति कोसज्जतो निक्खन्तत्ता ततो बलवतरं। **परक्कमधातू** ति पर परं ठान अक्कमनतो ततो पि बलवतरं। **पीतिसम्बोज्झङ्ग-ट्ठानिया धम्मा** ति पन पीतिया एव एतं नामं। तस्सापि उप्पादकमनसिकारो व **योनिसो मनसिकारो** नाम।

अपि च सत्त धम्मा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय सवत्तन्ति— परिपुच्छकता, वत्थुविसदकिरिया, इन्द्रियसमत्तपटिपादना, दुप्पञ्ञपुग्गलपरि-वज्जना, पञ्ञवन्तपुग्गलसेवना, गम्भीरञाणचरियपच्चवेक्खणा, तदधि-मुत्तता ति।

एकादस धम्मा विरियसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय सवत्तन्ति—अपायादिभय-पच्चवेक्खणता[२], विरियायत्तलोकियलोकुत्तरविसेसाधिगमानिसंसदस्सिता, "बुद्ध-

---

१ तत्था ति। "अत्थि भिक्खवे" ति आदिना दस्सितपालियं।

२. अपायादी ति। आदि-सद्देन जातिआदिं अतीते वट्टमूलकं दुक्खं, अनागते वट्टमूलकं दुक्खं, पच्चुपन्ने आहारपरियेट्ठिमूलकं च दुक्खं सङ्गण्हाति।

पच्चेकबुद्धमहासावकेहि गतमग्गो मया गन्तब्बो, सो च न सक्का कुसीतेन गन्तुं" ति एव गमनवीथिपच्चवेक्खणता, दायकान महप्फलभावकरणेन पिण्डापचायनता, "विरियारम्भस्स वण्णवादी मे सत्था, सो च अनतिक्कमनीयसासनो, अम्हाक च बहूपकारो, पटिपत्तिया च पूजियमानो पूजितो होति, न इतरथा" ति एव सत्थु महत्तपच्चवेक्खणता, "सद्धम्मसङ्खातं मे महादायज्ज गहेतब्बं, त च न सक्का कुसीतेन गहेतु" ति एवं दायज्जमहत्तपच्चवेक्खणता, आलोकसञ्ञामनसिकार-इरियापथपरिवत्तन-अब्भोकाससेवनादीहि थीनमिद्धविनोदनता, कुसीतपुग्गलपरिवज्जनता, आरद्धविरियपुग्गलसेवनता, सम्मप्पधानपच्चवेक्खणता, तदधिमुत्तता ति ।

एकादस धम्मा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय सवत्तन्ति, बुद्धानुस्सति, धम्म० सङ्घ० सील० चाग० देवतानुस्सति, उपसमानुस्सति, लूखपुग्गलपरिवज्जनता, सिनिद्धपुग्गलसेवनता, पसादनियसुत्तन्तपच्चवेक्खणता, तदधिमुत्तता ति । इति इमेहि आकारेहि एते धम्मे उप्पादेन्तो धम्मविचयसम्बोज्झङ्गादयो भावेति नाम । एव "यस्मिं समये चित्त पग्गहेतब्बं तस्मिं समये चित्तं पग्गण्हाति" ।

(५) कथ **यस्मिं समये चित्तं निग्गहेतब्बं तस्मिं समये चित्तं निग्गण्हाति ?** यदास्स अच्चारद्धवीरियतादीहि उद्धतं चित्तं होति, तदा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गादयो तयो अभावेत्वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गादयो भावेति ।

वुत्त हेत भगवता—

"सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो महन्त अग्गिक्खन्ध निब्बापेतुकामो अस्स, सो तत्थ सुक्खानि चेव तिणानि पक्खिपेय्य ·पे० न च पसुकेन ओकिरेय्य, भब्बो नु खो सो, भिक्खवे, पुरिसो महन्त अग्गिक्खन्ध निब्बापेतुं" ति ? "नो हेत, भन्ते ।" "एवमेव खो, भिक्खवे, यस्मिं समये उद्धत चित्तं होति, अकालो तस्मिं समये धम्मविचयसम्बज्झङ्गस्स भावनाय, अकालो विरिय· ·पे०···· अकालो पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय । त किस्स हेतु ? उद्धत भिक्खवे चित्तं, तं एतेहि धम्मेहि दुवूपसमय होति । यस्मिं च खो, भिक्खवे, समये उद्धतं चित्त होति, कालो तस्मिं समये पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय । तं किस्स हेतु ? उद्धत भिक्खवे चित्तं, त एतेहि धम्मेहि सुवूपसमयं होति ।"

"सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो महन्तं अग्गिक्खन्धं निब्बापेतुकामो अस्स, सो तत्थ अल्लानि चेव तिणानि पक्खिपेय्य····पे०····पंसुकेन च ओकिरेय्य, भब्बो

नु खो सो, भिक्खवे, पुरिसो महन्तं अग्गिक्खन्धं निब्बापेतुं'' ति ? ''एवं भन्ते'' (सं० ४–१०२) ति ।

एत्थापि यथामकं आहारवसेन पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गादीन भावना वेदितब्बा ।

वुत्त हेतं भगवता—

''अत्थि, भिक्खवे, कायपस्सद्धि चित्तपस्सद्धि । तत्थ योनिसो मनसिकारबहुलीकारो, अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तती'' (स० ४–९५) ति ।

तथा ''अत्थि, भिक्खवे, समथनिमित्त अब्यग्गनिमित्त । तत्थ योनिसो मनसिकारबहुलीकारो, अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया सवत्तती'' (स० ४–९५) ति ।

तथा ''अत्थि, भिक्खवे, उपेक्खासम्बोज्झङ्गट्ठानिया धम्मा । तत्थ योनिसो मनसिकारबहुलीकारो, अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया सवत्तती'' (सं० ४–९५) ति ।

तत्थ[1] यथास्स पस्सद्धिआदयो उप्पन्नपुब्बा, तं आकारं सल्लक्खेत्वा तेसं उप्पादनवसेन पवत्तमनसिकारा व तीसु पि पदेसु **योनिसो मनसिकारो** नाम । **समथनिमित्तं** ति च समथस्सेवेत अधिवचन । अविक्खेपट्ठेन च तस्सेव **अब्यग्गनिमित्तं** ति ।

अपि च सत्त धम्मा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय संवत्तन्ति—पणीतभोजनसेवनता, उतुसुखसेवनता, इरियापथसुखसेवनता, मज्झत्तपयोगता, सारद्धकायपुग्गलपरिवज्जनता, पस्सद्धकायपुग्गलसेवनता, तदधिमुत्तता ति ।

एकादस धम्मा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय संवत्तन्ति—वत्थुविसदता, निमित्तकुसलता, इन्द्रियसमत्तपटिपादनता, समये चित्तस्स निग्गहणता, समये चित्तस्स पग्गहणता, निरस्सादस्स चित्तस्स सद्धासवेगवसेन सम्पहसनता, सम्मापवत्तस्स अज्झुपेक्खणता, असमाहितपुग्गलपरिवज्जनता, समाहितपुग्गलसेवनता, झानविमोक्खपच्चवेक्खणता, तदधिमुत्तता ति ।

पञ्च धम्मा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय सवत्तन्ति—सत्तमज्झत्तता, सङ्खारमज्झत्तता, सत्तसङ्खारकेलायनपुग्गलपरिवज्जनता, सत्तसङ्खारमज्झत्त-

१. ''अत्थि भिक्खवे'' ति आदिना दस्सितपालियं ।

पुग्गलसेवनता, तदधिमुत्तता ति। इति इमेहाकारेहि एते धम्मे उप्पादेन्तो पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गादयो भावेति नाम। एव "यस्मिं समये चित्त निग्गहेतब्बं तस्मिं समये चित्तं निग्गण्हाति"।

(६) कथं **यस्मिं समये चित्तं सम्पहंसितब्बं तस्मिं समये चित्तं सम्पहंसेति?** यदास्स पञ्ञापयोगमन्दताय वा उपसमसुखानधिगमेन वा निरस्साद चित्त होति, तदा नं अट्ठसवेगवत्थुपच्चवेक्खणेन सवेजेति। अट्ठ सवेगवत्थूनि नाम—जाति-जरा-ब्याधि-मरणानि चत्तारि, अपायदुक्ख पञ्चमं, अतीते वट्टमूलक दुक्खं, अनागते वट्टमूलकं दुक्ख, पच्चुप्पन्ने आहारपरियेट्ठिमूलक दुक्खं ति। बुद्ध-धम्म-सङ्घगुणानुस्सरणेन चस्स पसाद जनेति। एवं "यस्मि समये चित्तं सम्पहसितब्बं तस्मि समये चित्त सम्पहसेति"।

(७) कथं **यस्मिं समये चित्तं अज्झुपेक्खितब्बं तस्मिं समये चित्तं अज्झुपेक्खति?** यदास्स एव पटिपज्जतो अलीनं अनुद्धतं अनिरस्साद आरम्मणे समप्पवत्त समथवीथिपटिपन्न चित्तं होति, तदास्स पग्गहनिग्गहसम्पहंसनेसु न ब्यापारं आपज्जति, सारथि विय समप्पवत्तेसु अस्सेसु। एव "यस्मिं समये चित्तं अज्झुपेक्खितब्ब तस्मि समये चित्तं अज्झुपेक्खति"।

(८) **असमाहितपुग्गलपरिवज्जनता** नाम नेक्खम्मपटिपद अनारूळ्हपुब्बानं अनेककिच्चपसुतानं विक्खित्तहदयानं पुग्गलानं आरका परिच्चागो।

(९) **समाहितपुग्गलसेवनता** नाम नेक्खम्मपटिपदं पटिपन्नान समाधिलाभीनं पुग्गलानं कालेन काल उपसङ्कमनं।

(१०) **तदधिमुत्तता** नाम समाधिअधिमुत्तता, समाधिगरु-समाधिनिन्न-समाधिपोण-समाधिपब्भारता ति अत्थो।

एवमेत दसविधं अप्पनाकोसल्लं सम्पादेतब्बं।

१८. एवं हि सम्पादयतो अप्पनाकोसलं इमं।
पटिलद्धे निमित्तस्मि अप्पना सम्पवत्तति॥
एव हि पटिपन्नस्स सचे सा नप्पवत्तति।
तथा पि न जहे योग वायमेथेव पण्डितो॥
हित्वा हि सम्मावायाम विसेसं नाम मानवो।
अधिगच्छे परित्त पि ठानमेतं न विज्जति॥
चित्तप्पवत्तिआकार तस्मा सल्लक्खय बुधो।
समतं विरियस्सेव योजयेथ पुनप्पुनं॥
ईसक पि लयं यन्तं पग्गण्हेथेव मानसं।
अच्चारद्धं निसेधेत्वा सममेव पवत्तये॥

निमित्ताभिमुखपटिपादनं

रेणुम्हि उप्पलदले सुत्ते नावाय नाळिया।
यथा मधुकरादीन पवत्ति सम्मवण्णिता ॥
लीन-उद्धतभावेहि मोचयित्वान सब्बसो।
एव निमित्ताभिमुखं मानस पटिपादये ति ॥

१९. तत्राय[1] अत्थदीपना—यथा हि अछेको[2] मधुकरो असुकस्मि रुक्खे पुप्फं पुप्फित ति ञत्वा तिक्खेन वेगेन पक्खन्दो[3] त अतिक्कमित्वा पटिनिवत्तन्तो खीणे रेणुम्हि सम्पापुणाति। अपरो अछेको मन्देन जवेन पक्खन्दो खीणे येव सम्पापुणाति। छेको पन समेन जवेन पक्खन्दो सुखेन पुप्फरासि सम्पत्वा यावदिच्छक रेणु आदाय मधु सम्पादेत्वा मधुरस अनुभवति।

यथा च सल्लकत्तअन्तेवासिकेसु उदकथालगते उप्पलपत्ते सत्थकम्म सिक्खन्तेसु एको अछेको वेगेन सत्थ पातेन्तो उप्पलपत्त द्विधा वा छिन्दति, उदके वा पवेसेति। अपरो अछेको छिज्जनपवेसनभया सत्थकेन फुसितु पि न विसहति। छेको पन समेन पयोगेन तत्थ सत्थप्पहार दस्सेत्वा परियोदातसिप्पो हुत्वा तथारूपेसु ठानेसु कम्म कत्वा लाभ लभति।

यथा च "यो चतुब्यामप्पमाण मक्कटसुत्त[4] आहरति, सो चत्तारि सहस्सानि लभती" ति रञ्ञा वुत्ते एको अछेकपुरिसो वेगेन मक्कटकसुत्त आकड्ढन्तो तहि तहि छिन्दति येव। अपरो अछेको छदनभया हत्थेन फुसितु पि न विसहति। छेको पन कोटितो पट्ठाय समेन पयोगेन दण्डके वेधेत्वा आहरित्वा लाभ लभति।

यथा च अछेको नियामको बलववाते लङ्कार[5] पूरेन्तो नाव विदेस पक्खन्दापेति। अपरो अछेको मन्दवाते लङ्कार आरोपेन्तो नाव तत्थेव ठपेति। छेको पन मन्दवाते लङ्कारं पूरेत्वा बलववाते अड्ढलङ्कारं कत्वा सोत्थिना इच्छितट्ठानं पापुणाति।

यथा च "यो तेलेन अछड्डेन्तो नाळिं पूरेति, सो लाभं लभती" ति आचरियेन अन्तेवासिकान वुत्ते एको अछेको लाभलुद्धो वेगेन पूरेन्तो तेलं छड्डेति। अपरो तेलछड्डनभया आसिञ्चितु पि न विसहति। छेको पन समेन पयोगेन पूरेत्वा लाभं लभति।

---

१ तत्रा ति। तस्मि "रेणुम्ही" ति आदिना वुत्तगाथाद्वये।

२. अछेको ति। अकुसलो। ३. पक्खन्दो ति। धावितुं आरद्धो।

४. मक्कटसुत्तं ति। लूतसुत्तं। ५ लङ्कार ति। किलञ्जादिमय नावाकटसारकं।

एवमेव एको भिक्खु "उप्पन्ने निमित्ते सीघमेव अप्पन पापुणिस्सामी" ति गाळ्ह विरियं करोति, तस्स चित्त अच्चारद्धविरियत्ता उद्धच्चे पतति, सो न सक्कोति अप्पनं पापुणितु। एको अच्चारद्धविरियताय दोस दिस्वा, 'किं दानि मे अप्पनाया' ति विरिय हापेति। तस्स चित्त अतिलीनविरियत्ता कोसज्जे पतति, सो पि न सक्कोति अप्पन पापुणितु। यो पन ईमक पि लीन लीनभावतो, उद्धत उद्धच्चतो मोचेत्वा समेन पयोगेन निमित्ताभिमुख पवत्तेति, सो अप्पनं पापुणाति। तादिसेन भवितब्ब।

इममत्थ सन्धाय एत वुत्त—

> रेणुम्हि उप्पलदले, सुत्ते, नावाय, नाळिया।
> यथा मधुकरादीन पवत्ति सम्मवण्णिता॥
> लीनउद्धतभावेहि मोचयित्वान सब्बसो।
> एवं निमित्ताभिमुख मानस पटिपादये ति॥

पठमज्झानकथा

२० इति एव निमित्ताभिमुख मानस पटिपादयतो पनस्स 'इदानि अप्पना इज्झिस्सती' ति भवङ्ग उपच्छिन्दित्वा 'पथवी, पथवी' ति अनुयोगवसेन उपट्ठित तदेव पथवीकसिण आरम्मण कत्वा मनोद्वारावज्जनं उप्पज्जति। ततो तस्मिं येवारम्मणे चत्तारि पञ्च वा जवनानि जवन्ति। तेसु अवसाने एकं रूपावचरं, सेसानि कामावचरानि। पकतिचित्तेहि बलवतरवितक्कविचारपीतिसुख-चित्तेकग्गतानि यानि अप्पनाय परिकम्मत्ता परिकम्मानी ति पि, यथा गामादीनं आसन्नपदेसो गामूपचारो नगरूपचारो ति वुच्चति, एव अप्पनाय आसन्नत्ता समीपचारित्ता वा उपचारानी ति पि, इतो पुब्बो परिकम्मान, उपरि अप्पनाय च अनुलोमतो अनुलोमानी ति पि वुच्चन्ति। य चेत्थ सब्बन्तिम, त परित्त-गोत्ताभिभवनतो महग्गतगोत्तभावनतो च गोत्रभू ति पि वुच्चति।

अग्गहितग्गहणेन पनेत्थ पठम परिकम्मं, दुतिय उपचारं, ततियं अनुलोम, चतुत्थ गोत्रभु। पठम वा उपचार, दुतिय अनुलोम, ततिय गोत्रभु, चतुत्थ पञ्चम वा अप्पनाचित्त। चतुत्थमेव हि पञ्चम वा अप्पेति, तं च खो खिप्पा-भिञ्ञदन्धाभिञ्ञवसेन। ततो परं जवनं पतति, भवङ्गस्स वारो होति।

२१. आभिधम्मिक**गोदत्त**त्थेरो पन "पुरिमा पुरिमा कुसला धम्मा पच्छिमानं कुसलानं धम्मानं आसेवनपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ · १–८) ति इम सुत्त वत्वा आसेवनपच्चयेन पच्छिमो पच्छिमो धम्मो बलवा होति, तस्मा छट्ठे पि

सत्तमे पि अप्पना होती ति आह। त अट्ठकथासु "अत्तनो मतिमत्त थेरस्सेत" ति वत्वा पटिक्खित्त।

२२ चतुत्थपञ्चमेसु येव पन अप्पना होति, परतो जवन पतितं नाम होति, भवङ्गस्स आसन्नत्ता ति वुत्त। तं एव विचारेत्वा वुत्तत्ता न सक्का पटिक्खिपितुं। यथा हि पुरिसो छिन्नपपाताभिमुखो धावन्तो ठातुकामो पि परियन्ते पादं कत्वा ठातुं न सक्कोति पपाते एव पतति, एव छट्ठे वा सत्तमे वा अप्पेतुं न सक्कोति, भवङ्गस्स आसन्नत्ता। तस्मा चतुत्थपञ्चमेसु येव अप्पना होती ति वेदितब्बा।

२३ सा[1] च पन एकचित्तक्खणिका येव। सत्तसु हि ठानेसु अद्धानपरिच्छेदो[2] नाम नत्थि—पठमप्पनाय, लोकियाभिञ्ञासु, चतूसु मग्गेसु, मग्गानन्तरे फले, रूपारूपभवेसु भवङ्गज्झाने, निरोधस्स पच्चये नेवसञ्ञानासञ्ञायतने, निरोधा वुट्ठहन्तस्स फलसमापत्तियं ति। एत्थ मग्गानन्तरं फल तिण्णं उपरि न होति। निरोधस्स पच्चयो नेवसञ्ञानासञ्ञायतन द्विन्न उपरि न होति। रूपारूपेसु भवङ्गस्स परिमाणं नत्थि। सेसट्ठानेसु एकमेव चित्तं ति। इति एकचित्तक्खणिका येव अप्पना, ततो भवङ्गपातो। अथ भवङ्गं वोच्छिन्दित्वा झानपच्चवेक्खणत्थाय आवज्जनं, ततो झानपच्चवेक्खण ति।

२४ एत्तावता च पनेस "**विवच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति**" (अभि० १–४५)। **एवमनेन पञ्चङ्गविप्पहीनं पञ्चङ्गसमन्नागतं तिविधकल्याणं दसलक्खणसम्पन्नं पठमं झानं अधिगतं होति पथवीकसिणं।**

२५. तत्थ[3] **विविच्चेव कामेही** ति। कामेहि विविच्चित्वा, विना हुत्वा, अपक्कमित्वा। यो पनायमेत्थ एवकारो, सो नियमत्थो ति वेदितब्बो। यस्मा च नियमत्थो, तस्मा तस्मिं पठमज्झानं उपसम्पज्ज विहरणसमये अविज्जमानान पि कामानं तस्स पठमज्झानस्स पटिपक्खभावं कामपरिच्चागेनेव चस्स अधिगमं दीपेति।

कथ? 'विविच्चेव कामेही' ति एवं हि नियमे करियमाने इदं पञ्ञायति, नूनमिमस्स झानस्स कामा पटिपक्खभूता येसु सति इद नप्पवत्तति, अन्धकारे सति पदीपोभासो विय। तेसं परिच्चागेनेव चस्स अधिगमो होति, ओरिमतीर-परिच्चागेन पारिमतीरस्सेव, तस्मा नियमं करोती ति।

तत्थ सिया—कस्मा पनेस पुब्बपदं येव वुत्तो, न उत्तरपदे? किं अकुसलेहि धम्मेहि अविविच्चा पि झान उपसम्पज्ज विहरेय्या ति? न खो पनेत एव

---

१. सा ति। अप्पना। २. अद्धानेति। कालपरिच्छेदो। ३. तत्था ति। तस्मिं झानपाळिय।

दट्ठब्बं। तंनिस्सरणतो हि पुब्बपदे एस वुत्तो। कामधातुसमतिक्कमनतो हि कामरागपटिपक्खतो च इदं झान कामानमेव निस्सरण। यथाह—"कामानमेतं निस्सरणं यदिद नेक्खम्म" (दी० ३–२१२) ति। उत्तरपदे पि पन यथा—

"इधेव, भिक्खवे, समणो, इध दुतियो समणो" (म० १–९०) ति। एत्थ एवकारो आनेत्वा वुच्चति, एवं वत्तब्बो। न हि सक्का इतो अञ्ञेहि पि नीवरणसङ्खातेहि अकुसलेहि धम्मेहि अविविच्च झान उपसम्पज्ज विहरितु। तस्मा "विविच्चेव कामेहि विविच्चेव अकुसलेहि धम्मेही" ति एव पदद्वये पि एस दट्ठब्बो। पदद्वये पि च किञ्चापि 'विविच्चा' ति इमिना साधारणवचनेन तदङ्गविवेकादयो कायविवेकादयो च सब्बे पि विवेका सङ्गहं गच्छन्ति, तथा पि कायविवको चित्तविवेको विक्खम्भनविवेको ति तयो एव इध दट्ठब्बा।

२६ **कामेही** ति। इमिना पन पदेन ये च **निद्देसे**[1] "कतमे वत्थुकामा? मनापिका रूपा" (खु० ४ १–१) ति आदिना नयेन वत्थुकामा वुत्ता, ये च तत्थेव **विभङ्गे** च "छन्दो कामो, रागो कामो, छन्दरागो कामो, सङ्कप्पो कामो, रागो कामो, सङ्कप्परागो कामो इमे वुच्चन्ति कामा" (अभि० २–३०८) ति एव किलेसकामा वुत्ता, ते सब्बे पि सङ्गहिता इच्चेव दट्ठब्बा। एव हि सति विविच्चेव कामेही ति वत्थुकामेहि पि विविच्चेवा ति अत्थो युज्जति, तेन कायविवेको वुत्तो होति। **विविच्च अकुसलेहि धम्मेही** ति। किलेसकामेहि सब्बाकुसलेहि वा विविच्चा ति अत्थो युज्जति, तेन चित्तविवेको वुत्तो होति। पुरिमेन चेत्थ वत्थुकामेहि विवेकवचनतो एव कामसुखपरिच्चागो, दुतियेन किलेसकामेहि विवेकवचनतो नेक्खम्मसुखपरिग्गहो विभावितो होति।

एवं वत्थुकामकिलेसकामविवेकवचनतोयेव च एतेस पठमेन सङ्किलेसवत्थुप्पहानं, दुतियेन सङ्किलसप्पहानं। पठमेन लोलभावस्स हेतुपरिच्चागो, दुतियेन बालभावस्स[2]। पठमेन च पयोगसुद्धि, दुतियेन आसयपोसन विभावित होती ति विञ्ञातब्बं। एस ताव नयो कामेही ति एत्थ वुत्तकामेसु वत्थुकामपक्खे।

किलेसकामपक्खे पन छन्दो ति च रागो ति च एवमादीहि अनेकभेदो कामच्छन्दो येव कामो ति अधिप्पेतो। सो च अकुसलपरियापन्नो पि समानो "तत्थ कतमो कामो? छन्दो कामो" (अभि० २–३०८) ति आदिना नयेन **विभङ्गे** झानपटिपक्खतो विसु वुत्तो। किलेसकामत्ता वा पुरिमपदे वुत्तो, अकुसलपरियापन्नत्ता दुतियपदे। अनेकभेदतो चस्स कामतो ति अवत्वा कामेही ति वुत्त।

---

१. महानिद्देसे। २. बालभावस्सा ति। अविज्जाय।

अञ्ञेस पि च धम्मान अकुसलभावे विज्जमाने "तत्थ कतमे अकुसलाधम्मा ? कामच्छन्दो" (अभि० २-३०८) ति आदिना नयेन **विभङ्गे** उपरि झानङ्गान पच्चनीक पटिपक्खभावदस्सनतो नीवरणानेव वुत्तानि। नीवरणानि हि झानङ्गपच्चनीकानि, तेस झानङ्गानेव पटिपक्खानि, विद्धसकानि विघातकानी ति वुत्त होति। तथा हि "समाधि कामच्छन्दस्स पटिपक्खो, पीति ब्यापादस्स, वितक्को थीनमिद्धस्स, सुख उद्धच्चकुक्कुच्चस्स, विचारो विचिकिच्छाया" ति पेटके[1] वुत्त।

एवमेत्थ "विविच्चेव कामेही" ति इमिना कामच्छन्दस्स विक्खम्भनविवेको वुत्तो होति। विविच्च अकुसलेहि धम्मेही" ति इमिना पञ्चन्न पि नीवरणान, अगहितग्गहणेन पन पठमेन कामच्छन्दस्स, दुतियेन सेसनीवरणान। तथा पठमेन तीसु अकुसलमूलेसु पञ्चकामगुणभेदविसयस्स लोभस्स, दुतियेन आघातवत्थुभेदादिविसयान दोसमोहान। ओघादासु वा धम्मसु पठमेन कामोघकामयोगकामासवकामुपादानअभिज्झाकायगन्थकामरागसयोजनान, दुतियेन अवसेसओघयोगासव-उपादान-गन्थ-सयोजनान। पठमेन च तण्हाय तसम्पयुत्तकान च, दुतियेन अविज्जाय तसम्पयुत्तकान च। अपि च पठमेन लाभसम्पयुत्तान अट्ठन्नं चित्तुप्पादान, दुतियेन सेसानं चतुन्न अकुसलचित्तुप्पादान विक्खम्भनविवेको वुत्तो होती ति वेदितब्बो। अय ताव "विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मही" ति एत्थ अत्थप्पकासना।

२७. एत्तावता च पठमस्स झानस्स पहानङ्ग दस्सेत्वा इदानि सम्पयोगङ्ग दस्सेतु **सवितक्कं सविचारं** ति आदि वुत्तं। तत्थ वितक्कन वितक्को, ऊहनं ति वुत्त होति। स्वायं आरम्मणे चित्तस्स अभिनिरोपनलक्खणो, आहननपरियाहननरसो। तथा हि तेन योगावचरो आरम्मण वितक्काहत वितक्कपरियाहत करोती ति वुच्चति, आरम्मणे चित्तस्स आनयनपच्चुपट्ठानो।

विचरण विचारो, अनुसञ्चरण ति वुत्त होति। स्वाय आरम्मणानुमज्जनलक्खणो, तत्थ सहजातानुयोजनरसो, चित्तस्स अनुप्पबन्धनपच्चुपट्ठानो।

सन्ते पि च नेस कत्थचि अविप्पयोगे, ओळारिकट्ठेन पुब्बङ्गमट्ठेन च घण्टाभिघातो विय चेतसो पठमाभिनिपातो वितक्को। सुखुमट्ठेन अनुमज्जनसभावेन च घण्टानुरवो विय अनुप्पबन्धो विचारो। विप्फारवा[2] चेत्थ वितक्को पठमुप्पत्तिकाले परिप्फन्दनभूतो चित्तस्स, आकासे उप्पतितुकामस्स पक्खिनो पक्खविक्खेपो विय, पदुमाभिमुखपातो विय च गन्धानुबन्धचेतसो भमरस्स।

---

१ महाकच्चानत्थेरेन देसितं पिटकान संवण्णना पेटकं, तस्मि पेटके।

२. विप्फारवा ति। विचलनयुत्तो, सपरिप्फन्दो।

सन्तवुत्ति विचारो नातिपरिफन्दनभावो चित्तस्स, आकासे उप्पतितस्स पक्खिनो पक्खप्पसारणं विय, परिब्भमनं विय च पदुमाभिमुखपतितस्स भमरस्स पदुमस्स उपरिभागे।

दुकनिपातट्ठकथायं पन "आकासे गच्छतो महासकुणस्स उभोहि पक्खेहि वातं गहेत्वा पक्खे सन्निसीदापेत्वा गमनं विय आरम्मणे चेतसो अभिनिरोपनभावेन पवत्तो वितक्को। वातग्गहणत्थं पक्खे फन्दापयमानस्स गमनं विय अनुमज्जनभावेन पवत्तो विचारो" ( ) ति वुत्तं, तं अनुप्पबन्धेन पवत्तियं युज्जति। सो पन नेसं विसेसो पठमदुतियज्झानेसु पाकटो होति।

अपि च—मलग्गहितं कंसभाजनं एकेन हत्थेन दळ्हं गहणहत्थो विय वितक्को, परिमज्जनहत्थो विय विचारो। तथा कुम्भकारस्स दण्डप्पहारेन चक्कं भमयित्वा भाजनं करोन्तस्स उप्पीळनहत्थो विय वितक्को, इतो चितो च सञ्चरणहत्थो विय विचारो। तथा मण्डलं करोन्तस्स मज्झे सन्निरुम्भित्वा[2] ठितकण्टको विय अभिनिरोपनो वितक्को, बहि परिब्भमनकण्टको विय अनुमज्जनो विचारो।

इति इमिना च वितक्केन इमिना च विचारेन सह वत्तति रुक्खो विय पुप्फेन चा ति इदं झानं "सवितक्कं सविचारं" ति वुच्चति। **विभङ्गे** पन "इमिना च वितक्केन इमिना च विचारेन उपेतो होति समुपेतो" (अभि० २–३०९) ति आदिना नयेन पुग्गलाधिट्ठाना देसना कता। अत्थो पन तत्रापि एवमेव दट्ठब्बो।

२८ **विवेकजं** ति। एत्थ विवित्ति विवेको, नीवरणविगमो ति अत्थो। विवित्तो ति वा विवेको, नीवरणविवित्तो झानसम्पयुत्तधम्मरासी ति अत्थो। तस्मा विवेका, तस्मिं वा विवेके जातं ति विवेकजं।

२९ **पीतिसुखं** ति। एत्थ पीणयती ति पीति। सा सम्पियायनलक्खणा, कायचित्तपीणनरसा, फरणरसा वा, ओदग्यपच्चुपट्ठाना। सा पनेसा १. खुद्दिका पीति, २ खणिका पीति, ३ ओक्कन्तिका पीति, ४ उब्बेगा पीति, ५. फरणा पीती ति पञ्चविधा होति।

तत्थ **खुद्दिका पीति** सरीरे लोमहंसमत्तमेव कातुं सक्कोति। **खणिका पीति** खणे खणे विज्जुप्पादसदिसा होति। **ओक्कन्तिका पीति** समुद्दतीरं वीचि विय कायं ओक्कमित्वा ओक्कमित्वा भिज्जति। **उब्बेगा पीति** बलवती होति, कायं उद्धग्गं कत्वा आकासे लङ्घापनप्पमाणप्पत्ता।

तथा हि पुण्णवल्लिकवासी **महातिस्सत्थेरो** पुण्णमदिवसे सायं चेतियङ्गणं गन्त्वा चन्दालोकं दिस्वा महाचेतियाभिमुखो हुत्वा "इमाय वत वेलाय चतस्सो

परिसा महाचेतिय वन्दन्ती" ति पकतिया दिट्ठारम्मणवसेन बुद्धारम्मणं उब्बेगापीतिं उप्पादेत्वा सुधातले पट्टचित्रगेण्डुको विय आकासे उप्पतित्वा महाचेतियङ्गणे येव पतिट्ठासि।

तथा गिरिकण्डकविहारस्स उपनिस्सये वत्तकालकगामे एका कुलधीता पि बलवबुद्धारम्मणाय उब्बेगापीतिया आकासे लङ्घेसि।

३० तस्सा किर मातापितरो सायं धम्मस्सवनत्थाय विहारं गच्छन्ता "अम्म, त्व गरुभारा अकाले विचरितु न सक्कोसि, मय तुय्ह पत्ति कत्वा धम्म सोस्सामा" ति अगमसु। सा गन्तुकामा पि तेस वचन पटिबाहितु असक्कोन्ती घरे ओहायित्वा घराजिरे ठत्वा चन्दालोकेन गिरिकण्डके आकासचेतियङ्गण ओलोकेन्ती चेतियस्स दीपपूजं अद्दस, चतस्सो च परिसा मालागन्धादीहि चेतियपूज कत्वा पदक्खिण करोन्तियो भिक्खुसङ्घस्स च गणसज्झायसद्दं अस्सोसि। यथस्सा "धञ्ञा वतिमे ये विहारं गन्त्वा एवरूपे चेतियङ्गणे अनुसञ्चरितु, एवरूप च मधुरधम्मकथ सोतु लभन्ती" ति मुत्तारासिसदिसं चेतिय पस्सन्तिया एव उब्बेगापीति उदपादि। सा आकासे लङ्घित्वा मातापितून पुरिमतरं येव आकासतो चेतियङ्गणे ओरुय्ह चेतिय वन्दित्वा धम्म सुणमाना अट्ठासि।

अथ न मातापितरो आगन्त्वा "अम्म, त्व कतरेन मग्गेन आगतासी" ति पुच्छिसु। सा "आकासेन आगताम्हि, न मग्गेना" ति वत्वा "अम्म, आकासेन नाम खीणासवा सञ्चरन्ति, त्व कथ आगता" ति वुत्ता आह—"मय्हं चन्दालोकेन चेतिय ओलोकेन्तिया ठिताय बुद्धारम्मणा बलवपीति उप्पज्जि। अथाह नेव अत्तनो ठितभाव, न निसिन्नभावं अञ्ञासिं, गहितनिमित्तेनेव पन अकासे लङ्घित्वा चेतियङ्गणे पतिट्ठिताम्ही" ति। एव उब्बेगापीति आकासे लङ्घापनप्पमाणा होति।

फरणापीतिया पन उप्पन्नाय सकलसरीरं धमित्वा पूरितवत्थि विय महता उदकोघेन पक्खन्दपब्बतकुच्छि विय च अनुपरिप्फुट होति।

३१. सा पनेसा पञ्चविधा पीति गब्भ गण्हन्ती परिपाक गच्छन्ती दुविधं पस्सद्धि परिपूरेति, कायपस्सद्धि च, चित्तपस्सद्धि च। पस्सद्धि गब्भ गण्हन्ती परिपाकं गच्छन्ती दुविध पि सुख परिपूरेति—कायिक च, चेतसिक च। सुखं गब्भं गण्हत परिपाकं गच्छन्तं तिविधं समाधिं परिपूरेति—खणिकसमाधिं, उपचारसमाधिं, अप्पनासमाधिं ति। तासु या अप्पनासमाधिस्स मूल हुत्वा वड्ढमाना समाधिसम्पयोग गता फरणापीति, अयं इमस्मिं अत्थे अधिप्पेता पीती ति।

३२. इतरं पन सुखनं सुखं, सुट्ठु वा खादति खणति च कायचित्ताबाधं ति सुखं। तं सातलक्खणं, सम्पयुत्तानं उपब्रूहनरसं, अनुग्गहपच्चुपट्ठानं। सति पि च नेसं कत्थचि अविप्पयोगे इट्ठारम्मणपटिलाभतुट्ठि पीति। पटिलद्धस्सानुभवनं सुखं। यत्थ पीति, तत्थ सुखं। यत्थ सुखं, तत्थ न नियमतो पीति। सङ्खारक्खन्धसङ्गहिता पीति, वेदनाक्खन्धसङ्गहितं सुखं। कन्तारखिन्नस्स वनन्तुदकदस्सनसवनेसु विय पीति, वनच्छायापवेसनउदकपरिभोगेसु विय सुखं। तस्मिं तस्मिं समये पाकटभावतो चेतं वुत्तं ति वेदितब्बं। इति अयं च पीति इदं च सुखं अस्स झानस्स, अस्मिं वा झाने अत्थी ति इदं झानं **पीतिसुखं** ति वुच्चति।

३३. अथ वा पीति च सुखं च पीतिसुखं, धम्मविनयादयो विय। विवेकजं पीतिसुखमस्स झानस्स, अस्मिं वा झाने अत्थी ति एवं पि विवेकजं पीतिसुखं। यथेव हि झानं, एवं पीतिसुखं पेत्थ विवेकजमेव होति। तं चस्स अत्थि, तस्मा एकपदेनेव "विवेकजं पीतिसुखं" ति पि वुत्तं युज्जति। **विभङ्गे** पन "इदं सुखं इमाय पीतिया सहगतं" (अभि० २-३०९) ति आदिना नयेन वुत्तं। अत्थो पन तत्था पि एवमेव दट्ठब्बो।

३४. **पठमं झानं** ति। इदं परतो[1] आविभविस्सति। **उपसम्पज्जा** ति। उपगन्त्वा, पापुणित्वा ति वुत्तं होति। उपसम्पादयित्वा वा, निप्फादेत्वा ति वुत्तं होति। **विभङ्गे** पन "उपसम्पज्जा ति पठमस्स झानस्स लाभो पटिलाभो पत्ति सम्पत्ति फुसना सच्छिकिरिया उपसम्पदा" (अभि० २-३०२) ति वुत्तं। तस्सा पि एवमेव अत्थो दट्ठब्बो।

विहरती ति। तदनुरूपेन इरियापथविहारेन इतिवुत्तप्पकारझानसमङ्गी हुत्वा अत्तभावस्स इरियं वुत्तिं पालनं यपनं यापनं चारं विहारं अभिनिप्फादेति। वुत्तं हेतं **विभङ्गे**—"विहरती ति इरियति वत्तति पालेति यपेति यापेति चरति विहरति, तेन वुच्चति विहरती" (अभि० २-३०३) ति।

पञ्चङ्गविप्पहीनादीनमत्थो

३५. यं पन वुत्तं[2] "**पञ्चङ्गविप्पहीनं पञ्चङ्गसमन्नागतं** ति। तत्थ १ कामच्छन्दो, २. ब्यापादो, ३ थीनमिद्धं, ४. उद्धच्चकुक्कुच्चं, ५ विचिकिच्छा ति इमेसं पञ्चन्नं नीवरणानं पहानवसेन पञ्चङ्गविप्पहीनता वेदितब्बा। न हि एतेसु अप्पहीनेसु झानं उप्पज्जति। तेनस्सेतानि पहानङ्गानी ति वुच्चन्ति।

---

१. १२० पिट्ठे। २. ११२ पिट्ठे।

किञ्चापि हि झानक्खणे अञ्ञे पि अकुसला धम्मा पहीयन्ति, तथापि एतानेव विसेसेन झानन्तरायकरानि।

कामच्छन्देन हि नानाविसयप्पलोभितं चित्तं न एकत्तारम्मणे समाधियति। कामच्छन्दाभिभूतं वा तं न कामधातुप्पहानाय पटिपदं पटिपज्जति। ब्यापादेन चारम्मणे पटिहञ्ञमानं न निरन्तरं पवत्तति। थीनमिद्धाभिभूतं अकम्मञ्ञं होति। उद्धच्चकुक्कुच्चपरेतं अवूपसन्तमेव हुत्वा परिब्भमति। विचिकिच्छाय उपहतं झानाधिगमसाधिकं पटिपदं नारोहति। इति विसेसेन झानन्तरायकरत्ता एतानेव पहानङ्गानी ति वुत्तानी ति।

३६. यस्मा पन वितक्को आरम्मणे चित्तं अभिनिरोपेति, विचारो अनुप्पबन्धति, तेहि अविक्खेपाय सम्पादितपयोगस्स चेतसो पयोगसम्पत्तिसम्भवा पीति पीणनं, सुखं च उपब्रूहनं करोति। अथ नं ससेससम्पयुत्तधम्मं एतेहि अभिनिरोपनानुप्पबन्धपीणनउपब्रूहनेहि अनुग्गहिता एकग्गता एकत्तारम्मणे समं सम्मा च आधियति, तस्मा वितक्को विचारो पीति सुखं चित्तेकग्गता ति इमेसं पञ्चन्नं उप्पत्तिवसेन पञ्चङ्गसमन्नागतता वेदितब्बा।

उप्पन्नेसु हि एतेसु पञ्चसु झानं उप्पन्नं नाम होति। तेनस्स एतानि पञ्च समन्नागतङ्गानी ति वुच्चन्ति। तस्मा न एतेहि समन्नागतं अञ्ञदेव झानं नाम अत्थी ति गहेतब्बं। यथा पन अङ्गमत्तवसेनेव चतुरङ्गिनी सेना, पञ्चङ्गिकं तुरियं, अट्ठङ्गिको च मग्गो ति वुच्चति, एवमिदं पि अङ्गमत्तवसेनेव पञ्चङ्गिकं ति वा पञ्चङ्गसमन्नागतं ति वा वुच्चती ति वेदितब्बं।

३७ एतानि च पञ्चङ्गानि किञ्चापि उपचारक्खणे पि अत्थि, अथ खो उपचारे पकतिचित्ततो बलवतरानि। इध पन उपचारतो पि बलवतरानि रूपावचरलक्खणप्पत्तानि। एत्थ हि वितक्को सुविसदेन आकारेन आरम्मणे चित्तं अभिनिरोपयमानो उप्पज्जति। विचारो अतिविय आरम्मणं अनुमज्जमानो। पीतिसुखं सब्बावन्तं पि कायं फरमानं। तेनेवाह—"नास्स किञ्चि सब्बावतो कायस्स विवेकजेन पीतिसुखेन अप्फुटं होती" (दी० १–६५) ति। चित्तेकग्गता पि हेट्ठिमम्हि समुग्गपटले उपरिमं समुग्गपटलं विय आरम्मणेसु फुसिता हुत्वा उप्पज्जति—अयमेतेसं इतरेहि विसेसो।

तत्थ चित्तेकग्गता किञ्चापि सवितक्कं सविचारं ति इमस्मिं पाठे न निद्दिट्ठा, तथापि **विभङ्गे**—"झानं ति वितक्को विचारो पीति सुखं चित्तस्सेकग्गता" (अभि० २–३०९) ति एवं वुत्तत्ता अङ्गमेव। येन हि अधिप्पायेन भगवता उद्देसो कतो, सो येव तेन **विभङ्गे** पकासितो ति।

तिविधकल्याणं

३८ **तिविधकल्याणं दसलक्खणसम्पन्नं** ति । एत्थ पन आदिमज्झपरियोसानवसेन तिविधकल्याणता । तेसं येव च आदिमज्झपरियोसानान लक्खणवसेन दसलक्खणसम्पन्नता वेदितब्बा ।

तत्राय पालि—

"पठमस्स ज्ञानस्स पटिपदाविसुद्धि आदि, उपेक्खानुब्रूहना मज्झे, सम्पहंसना परियोसान । पठमस्स ज्ञानस्स पटिपदाविसुद्धि आदि, आदिस्स कति लक्खणानि ? आदिस्स तीणि लक्खणानि—यो तस्स परिपन्थो ततो चित्त विसुज्झति, विसुद्धत्ता चित्त मज्झिम समथनिमित्त पटिपज्जति, पटिपन्नत्ता तत्थ चित्त पक्खन्दति । य च परिपन्थतो चित्त विसुज्झति, य च विसुद्धत्ता चित्त मज्झिम समथनिमित्त पटिपज्जति, य च पटिपन्नत्ता तत्थ चित्त पक्खन्दति । पठमस्स ज्ञानस्स पटिपदाविसुद्धि आदि, आदिस्स इमानि तीणि लक्खणानि । तेन वुच्चति—पठमं ज्ञानं आदिकल्याणं चेव होति तिलक्खणसम्पन्न च ।

"पठमस्स ज्ञानस्स उपेक्खानुब्रूहना मज्झे, मज्झस्स कति लक्खणानि ? मज्झस्स तीणि लक्खणानि—विसुद्ध चित्त अज्झुपेक्खति, समथपटिपन्न अज्झुपेक्खति, एकत्तुपट्ठानं अज्झुपेक्खति । य च विसुद्धं चित्त अज्झुपेक्खति, यं च समथपटिपन्नं अज्झुपेक्खति, य च एकत्तुपट्ठान अज्झुपेक्खति । पठमस्स ज्ञानस्स उपेक्खानुब्रूहना मज्झे, मज्झस्स इमानि तीणि लक्खणानि । तेन वुच्चति—पठम ज्ञान मज्झेकल्याण चेव होति तिलक्खणसम्पन्न च ।

"पठमस्स ज्ञानस्स सम्पहंसना परियोसान । परियोसानस्स कति लक्खणानि ? परियोसानस्स चत्तारि लक्खणानि—तत्थ जातान धम्मान अनतिवत्तट्ठेन सम्पहंसना, इन्द्रियान एकरसट्ठेन सम्पहंसना, तदुपगविरियवाहनट्ठेन सम्पहंसना, आसेवनट्ठेन सम्पहंसना । पठमस्स ज्ञानस्स सम्पहंसना परियोसान, परियोसानस्स इमानि चत्तारि लक्खणानि । तेन वुच्चति—पठम ज्ञान परियोसानकल्याण चेव होति चतुलक्खणसम्पन्न चा" (खु० ५–१९६) ति ।

३९. तत्र **पटिपदाविसुद्धि** नाम ससम्भारिको उपचारो । **उपेक्खानुब्रूहना** नाम अप्पना । **सम्पहंसना** नाम पच्चवेक्खणा ति एवमेके वण्णयन्ति । यस्मा पन "एकत्तगत चित्त पटिपदाविसुद्धिपक्खन्द चेव होति उपेक्खानुब्रूहित च ञाणेन च सम्पहंसित" (खु० ५–१९५) ति **पाळियं** वुत्तं, तस्मा अन्तोअप्पनायमेव आगमनवसेन पटिपदाविसुद्धि, तत्रमज्झत्तुपेक्खाय किच्चवसेन उपेक्खानुब्रूहना, धम्मान अनतिवत्तनादिभावसाधनेन परियोदापकस्स ञाणस्स किच्चनिप्फत्तिवसेन सम्पहंसना च वेदितब्बा ।

४०. कथं ? यस्मिं हि वारे अप्पना उप्पज्जति, तस्मिं यो नीवरणसङ्खातो किलेसगणो तस्स झानस्स परिपन्थो, ततो चित्तं विसुज्झति। विसुद्धत्ता आवरणविरहितं हुत्वा मज्झिमं समथनिमित्तं पटिपज्जति। मज्झिमं समथनिमित्तं नाम समप्पवत्तो अप्पनासमाधि येव। तदनन्तरं पन पुरिमचित्तं एकसन्ततिपरिणामनयेन तथत्तं उपगच्छमानं मज्झिमं समथनिमित्तं पटिपज्जति नाम एवं पटिपन्नत्ता तथत्तमुपगमनेन तत्थ पक्खन्दति नाम। एवं ताव पुरिमचित्ते विज्जमानाकारनिप्फादिका पठमस्स झानस्स उप्पादक्खणे येव आगमनवसेन पटिपदाविसुद्धि वेदितब्बा।

४१. एवं विसुद्धस्स पन तस्स पुन विसोधेतब्बाभावतो विसोधने ब्यापारं अकरोन्तो विसुद्धं चित्तं अज्झुपेक्खति नाम। समथभावूपगमनेन समथपटिपन्नस्स पुन समाधाने ब्यापारं अकरोन्तो समथपटिपन्नं अज्झुपेक्खति नाम। समथपटिपन्नभावतो एव चस्स किलेससंसग्गं पहाय एकत्तेन उपट्ठितस्स पुन एकत्तुपट्ठाने ब्यापारं अकरोन्तो एकत्तुपट्ठानं अज्झुपेक्खति नाम। एवं तत्रमज्झत्तुपेक्खाय किच्चवसेन उपेक्खानुब्रूहना वेदितब्बा।

४२ ये पनेते एवं उपेक्खानुब्रूहिते तत्थ जाता समाधिपञ्ञासङ्खाता युगनद्धधम्मा अञ्ञमञ्ञं अनतिवत्तमाना हुत्वा पवत्ता, यानि च सद्धादीनि इन्द्रियानि नानाकिलेसेहि विमुत्तत्ता विमुत्तिरसेन एकरसानि हुत्वा पवत्तानि, यं चेस तदुपगं तेसं अनतिवत्तनएकरसभावानं अनुच्छविकं वीरियं वाहयति, या चस्स तस्मिं खणे पवत्ता आसेवना, सब्बे पि ते आकारा यस्मा ञाणेन सङ्किलेसवोदानेसु तं तं आदीनवं च आनिसंसं च दिस्वा तथा तथा सम्पहंसितत्ता विसोधितत्ता परियोदापितत्ता निप्फन्ना व। तस्मा "धम्मानं अनतिवत्तनादिभावसाधनेन परियोदापकस्स ञाणस्स किच्चनिप्फत्तिवसेन सम्पहंसना वेदितब्बा" ति वुत्तं।

४३ तत्थ यस्मा उपेक्खावसेन ञाणं पाकटं होति। यथाह—"तथापग्गहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खति, उपेक्खावसेन पञ्ञावसेन पञ्ञिन्द्रियं अधिमत्तं होति, उपेक्खावसेन नानत्तकिलेसेहि चित्तं विमुच्चति, विमोक्खवसेन पञ्ञावसेन पञ्ञिन्द्रियं अधिमत्तं होति। विमुत्तत्ता ते धम्मा एकरसा होन्ति। एकरसट्ठेन भावना०" (खु० ५-२६१) ति। तस्मा ञाणकिच्चभूता सम्पहंसना परियोसानं ति वुत्ता।

४४ इदानि **पठमं झानं अधिगतं होति पथवीकसिणं** ति एत्थ गणनानुपुब्बता पठमं। पठमं उप्पन्नं ति पि पठमं। आरम्मणूपनिज्झानतो पच्चनीकझापनतो

वा झानं। पथवीमण्डलं पन सकलट्ठेन पथवीकसिणं ति वुच्चति, तं निस्साय पटिलद्धनिमित्तं पि, पथवीकासिणनिमित्ते पटिलद्धझानं पि। तत्र इमस्मिं अत्थे झानं पथवीकसिणं ति वेदितब्बं। तं सन्धाय वुत्तं—"पठमं झानं अधिगतं होति पथवीकसिणं" ति।

चिरट्ठितिसम्पादनं

४५ एवमधिगते पन एतस्मिं तेन योगिना वालवेधिना[1] विय सूदेन[2] विय च आकारा परिग्गहेतब्बा। यथा हि सुकुसलो धनुग्गहो वालवेधाय कम्मं कुरुमानो यस्मिं वारे वालं विज्झति, तस्मिं वारे अक्कन्तपदानं च धनुदण्डस्स च जियाय च सरस्स च आकारं परिग्गण्हेय्य—"एवं मे ठितेन एवं धनुदण्डं एवं जियं एवं सरं गहेत्वा वालो विद्धो" ति, सो ततो पट्ठाय तथेव ते आकारे सम्पादेन्तो अविराधेत्वा वालं विज्झेय्य; एवमेव योगिना पि "इमं नाम मे भोजनं भुञ्जित्वा एवरूपं पुग्गलं सेवमानेन एवरूपे सेनासने इमिना नाम इरियापथेन इमस्मिं काले इदं अधिगतं" ति एते भोजनसप्पायादयो आकारा परिग्गहेतब्बा। एवं हि सो नट्ठे वा तस्मिं ते आकारे सम्पादेत्वा पुन उप्पादेतुं, अप्पगुणं वा पगुणं करोन्तो पुनप्पुनं अप्पेतुं सक्खिस्सति।

४६ यथा च कुसलो सूदो भत्तारं परिविसन्तो तस्स यं यं रुचिया भुञ्जति, तं तं सल्लक्खेत्वा ततो पट्ठाय तादिसं येव उपनामेन्तो लाभस्स भागी होति; एवमयं पि अधिगतक्खणे भोजनादयो आकारे गहेत्वा ते सम्पादेन्तो नट्ठे नट्ठे पुनप्पुनं अप्पनाय लाभी होति। तस्मा तेन वालवेधिना विय सूदेन विय च आकारा परिग्गहेतब्बा।

वुत्तं पि चेतं भगवता—

"सेय्यथापि, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो सूदो राजानं वा राजमहामत्तं वा नानच्चयेहि सूपेहि पच्चुपट्ठितो अस्स—अम्बिलग्गेहि पि तित्तकग्गेहि पि कटुकग्गेहि पि मधुरग्गेहि पि खारिकेहि पि अखारिकेहि पि लोणिकेहि पि। स खो सो, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो सूदो सकस्स भत्तु निमित्तं उग्गण्हाति—'इदं वा मे अज्ज भत्तु सूपेय्यं रुच्चति, इमस्स वा अभिहरति, इमस्स वा बहुं गण्हाति, इमस्स वा वण्णं भासति, अम्बिलग्गं वा मे अज्ज भत्तु सूपेय्यं रुच्चति, अम्बिलग्गस्स वा अभिहरति, अम्बिलग्गस्स वा बहुं

---

१. लक्खट्ठाने ठितं सरेन वालं विज्झति ति वालवेधी। इध पन अनेकधाभिन्नस्स वालस्स अंसुं विज्झन्तो "वालवेधी" ति अधिप्पेतो, तेन वालवेधिना।

२. सूदेना ति। भत्तकारेन।

गण्हाति, अम्बिलग्गस्स वा वण्णं भामति"...पे० "अलोणिकस्स वा वण्ण भामती' ति। स खो सो, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो सूदो लाभी चेव होति अच्छादनस्स, लाभी वेतनस्स, लाभी अभिहारान। त किस्स हेतु ? तथा हि सो, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो सूदो सकस्स भत्तु निमित्त उग्गण्हाति। एवमेव खो, भिक्खवे, इधेकच्चो पण्डितो ब्यत्तो कुसलो भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति० वेदनासु वेदना० चित्ते चित्ता० धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्स। तस्स धम्मेसु धम्मानुपस्सिनो विहरतो चित्त समाधियति, उपक्किलेसा पहीयन्ति। सो तं निमित्त उग्गण्हाति। स खो सो, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो भिक्खु लाभी चेव होति दिट्ठधम्मसुखविहारान, लाभी सतिसम्पजञ्ञस्स। त किस्स हेतु ? तथा हि सो, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो भिक्खु सकस्स चित्तस्स निमित्त उग्गण्हाती" (स०—४-१२९) ति।

४७ निमित्तगहणेन चस्स पुन ते आकारे सम्पादयतो अप्पनामत्तमेव इज्झति, न चिरट्ठान। चिरट्ठानं पन समाधिपरिपन्थान धम्मान सुविसोधितत्ता होति।

यो हि भिक्खु कामादीनवपच्चवेक्खणादीहि कामच्छन्द न सुट्ठु विक्खम्भेत्वा, कायपस्सद्धिवसेन कायदुट्ठुल्ल न सुप्पटिपस्सद्ध कत्वा, आरम्भधातुमनसिकारादिवसेन थीनमिद्धं न सुट्ठु पटिविनोदेत्वा, समथनिमित्तमनसिकारादिवसेन उद्धच्चकुक्कुच्चं न सुसमूहत कत्वा, अञ्ञे पि समाधिपरिपन्थे धम्मे न सुट्ठु विसोधेत्वा झान समापज्जति, सो अविसोधित आसय पविट्ठभमरो विय अविसुद्धं उय्यान पविट्ठराजा विय च खिप्पमेव निक्खमति। यो पन समाधिपरिपन्थे धम्मे सुट्ठु विसोधेत्वा झानं समापज्जति, सो सुविसोधित आसय पविट्ठभमरो विय सुपरिसुद्धं उय्यान पविट्ठराजा विय च सकल पि दिवसभागं अन्तोसमापत्तिय येव होति।

४८. तेनाहु पोराणा—

"कामेसु छन्द पटिघ विनोदये, उद्धच्चमिद्ध विचिकिच्छपञ्चम।
विवेकपामुज्जकरेन चेतसा राजा व सुद्धन्तगतो तहि रमे" ति॥

तस्मा चिरट्ठितिकामेन परिबन्धकधम्मे विसोधेत्वा झानं समापज्जितब्बं। चित्तभावनावेपुल्लत्थं च यथालद्ध पटिभागनिमित्त वड्ढेतब्ब। तस्स द्वे वड्ढनाभूमियो—उपचारं वा, अप्पनं वा। उपचार पत्वा पि हि त वड्ढेतु वट्टति, अप्पन पत्वा पि। एकस्मि पन ठाने अवस्सं वड्ढेतब्ब। तेन वुत्त—' यथालद्धं पटिभागनिमित्त वड्ढेतब्ब" ति।

निमित्तवड्ढननयो

४९ तत्राय[1] वड्ढननयो—तेन योगिना त निमित्त पत्तवड्ढन-पूववड्ढन-भत्तवड्ढन-लतावड्ढन-दुस्सवड्ढनयोगेन अवड्ढेत्वा यथा नाम कस्सको कसितब्बट्ठान नङ्गलेन परिच्छिन्दित्वा परिच्छेदब्भन्तरे कसति, यथा वा पन भिक्खू सीम बन्धन्ता पठम निमित्तानि सल्लक्खेत्वा पच्छा बन्धन्ति, एवमेव तस्स यथालद्धस्स निमित्तस्स अनुक्कमेन एकङ्गुलद्वङ्गुलतिवङ्गुलचतुरङ्गुलमत्त मनसा परिच्छिन्दित्वा यथापरिच्छेद वड्ढेतब्ब। अपरिच्छिन्दित्वा पन न वड्ढेतब्ब। ततो विदत्थि-रतन-पमुख-परिवेण-विहारसीमान गाम-निगम-जनपद-रज्ज-समुद्द-सीमान च परिच्छेदवसेन वड्ढयन्तेन चक्कबाळपरिच्छेदेन वा ततो वा पि उत्तरि परिच्छिन्दित्वा वड्ढेतब्ब।

५० यथा हि हसपोतका पक्खान उट्ठितकालतो पट्ठाय परित्त परित्त पदेस उप्पतन्ता परिचय कत्वा अनुक्कमेन चान्दमसूरियसान्तक गच्छन्ति, एवमेव भिक्खु वुत्तनयेन निमित्त परिच्छिन्दित्वा वड्ढेन्तो याव चक्कवाळपरिच्छेदा ततो वा उत्तरि वड्ढेति। अथस्स त निमित्त वड्ढितवड्ढितट्ठाने पथविया उक्कूल-विकूल-नदी-विदुग्ग-पब्बतविसमेसु[2] सङ्कुसतसमब्भाहत उसभचम्म विय होति।

५१ तस्मि पन निमित्ते पत्तपठमज्झानेन आदिकम्मिकेन समापज्जनबहुलेन भवितब्ब, न पच्चवक्खणबहुलेन। पच्चवेक्खणबहुलस्स हि झानङ्गानि थूलानि दुब्बलानि हुत्वा उपट्ठहन्ति। अथस्स तानि एव उपट्ठितत्ता उपरि उस्सुक्कनाय पच्चयतं आपज्जन्ति। सो अप्पगुणे झाने उस्सुक्कमानो पत्तपठमज्झाना च परिहायति, न च सक्कोति दुतिय पापुणितु।

तेनाह भगवा—

"सेय्यथापि, भिक्खवे, गावी पब्बतेय्या बाला अब्यत्ता अखेत्तञ्ञू अकुसला विसमे पब्बते चरितु। तस्सा एवमस्स य नूनाह अगतपुब्ब चेव दिस गच्छेय्य, अखादितपुब्बानि च तिणानि खादेय्यं, अपीतपुब्बानि च पानीयानि पिवेय्य ति। सा पुरिमं पाद न सुप्पतिट्ठित पतिट्ठापेत्वा पच्छिम पादं उद्धरेय्य, सा न चेव अगतपुब्ब दिसं गच्छेय्य, न च अखादितपुब्बानि तिणानि खादेय्य, न च अपीतपुब्बानि पानीयानि पिवेय्य। यस्मि चस्सा पदेसे ठिताय एवमस्सा य नूनाहं

---

१ तत्रा ति। सामिअत्थे भुम्मवचनं, तस्सा ति अत्थो।

२ उक्कूल उन्नतट्ठान। विकूल निन्नट्ठानं नदीसोतेन कत विदुग्ग नदीविदुग्गं ठितो ब्बनपदेसो पब्बतविसमो।

अगतपुब्ब चेव पे० पिबेय्य ति। तं च पदेस न सोत्थिना पच्चागच्छेय्य। त किस्स हेतु ? तथा हि सा, भिक्खवे, गावा पब्बतेय्या बाला अब्यत्ता अखेत्तञ्ञू अकुसला विसमे पब्बते चरितु। एवमेव खो, भिक्खवे, इधेकच्चो भिक्खु बालो अब्यत्तो अखेत्तञ्ञू अकुसलो विविच्चेव कामेहि पे० पठम झान उपसम्पज्ज विहरितुं। सो त निमित्त नासेवति, न भावेति, न बहुलीकरोति, न स्वाधिट्ठित अधिट्ठाति। तस्स एव होति य नूनाहं वितक्कविचारानं वूपसमा 'पे० ' दुतिय झान उपसम्पज्ज विहरेय्य ति। सो न सक्कोति वितक्कविचारानं वूपसमा पे०' 'दुतिय झान उपसम्पज्ज विहरितु। तस्सेव होति य नूनाहं विविच्चेव कामेहि' 'पे० पठमं झान उपसम्पज्ज विहरेय्य' ति। सो न सक्कोति विविच्चेव कामेहि' ''पे०''' पठम झान उपसम्पज्ज विहरितु। अय वुच्चति, भिक्खवे, भिक्खु उभतो भट्ठो, उभतो परिहीनो, सेय्यथापि गावी पब्बतेय्या बाला अब्यत्ता अखेत्तञ्ञू अकुसला विसमे पब्बते चरितु'' (अ० ४-५७) ति।

तस्मानेन तस्मि येव ताव पठमज्झाने पञ्चहाकारेहि चिण्णवसिना भवितब्बं।

पञ्चवसीकथा

५२ तत्रिमा पञ्च वसियो[1]—१. आवज्जनवसी, २. समापज्जनवसी, ३. अधिट्ठानवसी, ४ वुट्ठानवसी, ५ पच्चवेक्खणवसी ति। पठमं झान यत्थिच्छकं यदिच्छकं यावदिच्छक आवज्जेति, आवज्जनाय दन्धायितत्त नत्थी ति **आवज्जनवसी**। पठमं झान यत्थिच्छक पे० समापज्जति, समापज्जनाय दन्धायितत्त नत्थी ति **समापज्जनवसी**। एव सेसापि वित्थारेतब्बा।

अय पनेत्थ अत्थप्पकासना—

(१) पठमज्झानतो वुट्ठाय पठम वितक्कं आवज्जयतो भवङ्ग उपच्छिन्दित्वा उप्पन्नावज्जनानन्तर वितक्कारम्मणानेव चत्तारि पञ्च वा जवन्ति, ततो द्वे भवङ्गानि, ततो पुन विचारारम्मण आवज्जनं, वुत्तनयानेव जवनानी ति एवं पञ्चसु झानङ्गेसु यदा निरन्तर चित्तं पेसेतु सक्कोति, अथस्स **आवज्जनवसी** सिद्धा होति। अयं पन मत्थकप्पत्ता वसी भगवतो यमकपाटिहारिये लब्भति, अञ्ञेस वा एवरूपे काले। इतो पर सीघतरा आवज्जनवसी नाम नत्थि।

(२) आयस्मतो पन महामोग्गल्लानस्स नन्दोपनन्दनागराजदमने विय सीघं समापज्जनसमत्थता **समापज्जनवसी** नाम।

---

१. **वसियो** ति। यथारुचि पवत्तियो ति अत्थो।

(३) अच्छरामत्तं वा दसच्छरामत्तं वा खणं ठपेतुं समत्थता **अधिट्ठानवसी** नाम।

(४) तथेव लहुं वुट्ठातुं समत्थता **वुट्ठानवसी** नाम। तदुभयदस्सनत्थं **बुद्धरक्खितत्थेरस्स** वत्थुं कथेतुं वट्टति।

सो हायस्मा उपसम्पदाय अट्ठवस्सिको हुत्वा थेरम्बत्थले महारोहणगुत्तत्थेरस्स गिलानुपट्ठानं आगतानं तिंसमत्तानं इद्धिमन्तसहस्सानं मज्झे निसिन्नो, "थेरस्स यागुं पटिग्गाहयमानं उपट्ठाकनागराजानं गहेस्सामी" ति आकासतो पक्खन्दन्तं सुपण्णराजानं दिस्वा तावदेव पब्बतं निम्मिनित्वा नागराजानं बाहाय गहेत्वा तत्थ पाविसि। सुपण्णराजा पब्बते पहारं दत्वा पलायि। महाथेरो आह— "सचे, आवुसो, बुद्धरक्खितो नाभविस्स, सब्बे व गारय्हा अस्सामा" ति।

(५) **पच्चवेक्खणवसी** पन आवज्जनवसिया एव वुत्ता। पच्चवेक्खण-जवनानेव हि तत्थ आवज्जनानन्तरानी ति।

दुतियज्झानकथा

५३ इमासु पन पञ्चसु वसीसु चिण्णवसिना पगुणपठमज्झानतो वुट्ठाय "अयं समापत्ति आसन्ननीवरणपच्चत्थिका, वितक्कविचारानं ओळारिकत्ता अङ्गदुब्बला" ति च तत्थ दोसं दिस्वा दुतियं झानं सन्ततो मनसिकत्वा पठमज्झाने निकन्तिं[१] परियादाय दुतियाधिगमाय योगो कातब्बो।

अथस्स यदा पठमज्झाना वुट्ठाय सतस्स सम्पजानस्स झानङ्गानि पच्चवेक्खतो वितक्कविचारा ओळारिकतो उपट्ठहन्ति, पीतिसुखं चेव चित्तेकग्गता च सन्ततो उपट्ठाति, तदास्स ओळारिकङ्गप्पहानाय सन्तङ्गपटिलाभाय च तदेव निमित्तं "पथवी पथवी" ति पुनप्पुनं मनसिकरोतो "इदानि दुतियज्झानं उप्पज्जिस्सती" ति भवङ्गं उपच्छिन्दित्वा तदेव पथवीकसिणं आरम्मणं कत्वा मनोद्वारावज्जनं उप्पज्जति, ततो तस्मिं येवारम्मणे चत्तारि पञ्च वा जवनानि जवन्ति, येसं अवसाने एकं रूपावचरं दुतियज्झानिकं। सेसानि वुत्तप्पकारानेव कामावचरानी ति।

एत्तावता **चेस "वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। (दी० १–६५) एवमनेन द्वङ्गविप्पहीनं तिवङ्गसमन्नागतं तिविध-कल्याणं दसलक्खणसम्पन्नं दुतियं झानं अधिगतं होति पथवीकसिणं।**

५३ तत्थ **वितक्कविचारानं वूपसमा** ति। वितक्कस्स च विचारस्स चा ति इमेसं द्विन्नं वूपसमा समतिक्कमा, दुतियज्झानक्खणे अपातुभावा ति वुत्तं

१. निकन्ति ति। निकामनं, अपेक्खं त्यत्थो।

होति। तत्थ किञ्चापि दुतियज्झाने सब्बे पि पठम झानधम्मा न सन्ति। अञ्ञे येव हि पठमज्झाने फस्सादयो, अञ्ञे इध। ओळारिकस्स पन अङ्गस्स समतिक्कमा पठमज्झानतो परेस दुतियज्झानादीन अधिगमो होती ति दीपनत्थ "वितक्कविचारानं वूपसमा" ति एवं वुत्त ति वेदितब्बं।

५४ **अज्झत्तं** ति। इध नियकज्झत्त अधिप्पेत्त। **विभङ्गे** पन "अज्झत्त पच्चत्त" ति एत्तकमेव वुत्तं। यस्मा च नियकज्झत्त अधिप्पेतं, तस्मा अत्तनि जात, अत्तनो सन्ताने निब्बत्तं ति अयमेत्थ अत्थो। **सम्पसाद**ं ति। सम्पसादन वुच्चति सद्धा। सम्पसादनयोगतो झान पि सम्पसादन। नीलवण्णयोगतो नीलवत्थ विय। यस्मा वा त झानं सम्पसादनसमन्नागतत्ता वितक्कविचारक्खोभ-वूपसमनेन च चेतसो सम्पसादयति, तस्मा पि सम्पसादनं ति वुत्तं। इमस्मिं च अत्थविकप्पे[1] सम्पसादन चेतसो ति एव पदसम्बन्धो वेदितब्बो। पुरिमस्मिं[2] पन अत्थविकप्पे चेतसो[3] ति एतं एकोदिभावेन सद्धिं योजेतब्बं।

५५ तत्रायं अत्थयोजना—एको उदेती ति एकोदि, वितक्कविचारेहि अनज्झारूळ्हत्ता अग्गो सेट्ठो हुत्वा उदेती ति अत्थो। सेट्ठो पि हि लोके एको ति वुच्चति। वितक्कविचारविरहितो वा एको असहायो हुत्वा इति पि वत्तु वट्टति। अथ वा सम्पयुत्तधम्मे उदायती ति उदि, उट्ठापेती ति अत्थो। सेट्ठट्ठेन एको च सो उदि चा ति एकोदि, समाधिस्सेत अधिवचन। इति इम एकोदिं भावेति वड्ढेती ति इद दुतियज्झान एकोदिभावं। सो पनाय एकोदि यस्मा चेतसो, न सत्तस्स, न जीवस्स, तस्मा एत **चेतसो एकोदिभावं** ति वुत्तं।

५६. ननु चाय सद्धा पठमज्झाने पि अत्थि, अय च एकोदिनामको समाधि, अथ कस्मा इदमेव "सम्पसादन चेतसो एकोदिभाव चा" ति वुत्तं? वुच्चते—अदु हि पठमज्झान वितक्कविचारक्खोभेन वीचितरङ्गसमाकुलमिव जलं न सुप्पसन्न होति, तस्मा सतिया पि सद्धाय "सम्पसादन" ति न वुत्तं। न सुप्पसन्नत्ता येव चेत्थ समाधि पि न सुट्ठु पाकटो, तस्मा "एकोदिभावं" ति पि न वुत्त। इमस्मिं पन झाने वितक्कविचारपलिबोधाभावेन लद्धोकासा बलवती सद्धा, बलवसद्धासहायपटिलाभेनेव च समाधि पि पाकटो, तस्मा इमदेव एव वुत्त ति वेदितब्बं। **विभङ्गे** पन "सम्पसादन ति या सद्धा सद्दहना ओकप्पना अभिप्पसादो। चेतसो एकोदिभाव ति या चित्तस्स ठिति प० सम्मा-

---

१ इमस्मिं च अत्थविकप्पे ति। "चेतसो सम्पसादयती" ति एतस्मिं पक्खे 'चेतसो' ति उपयोगत्थे सामिवचन। २ पुरिमस्मिं ति। "सम्पसादनयोगतो झान सम्पसादनं" ति वुत्तपक्खे। ३. चेतसो ति। सम्बन्धे सामिवचन।

समाधी" (अभि० २-३१०) ति एत्तकमेव वुत्तं। एवं वुत्तेन पन तेन सद्धिं अयं अत्थवण्णना यथा न विरुज्झति, अञ्ञदत्थु ससन्दति चेव समेति च, एव वेदितब्बा।

५७ **अवितक्कं अविचारं** ति। भावनाय पहीनत्ता एतस्मिं, एतस्स वा वितक्को नत्थी ति अवितक्कं। इमिना व नयेन अविचारं। **विभङ्गे** पि वुत्तं—"इति अयं च वितक्को अयं च विचारो सन्ता[1] होन्ति समिता[2] वूपसन्ता[3] अत्थङ्गता[4] अब्भत्थङ्गता[5] अप्पिता[6] ब्यप्पिता[7] विसोसिता ब्यन्तीकता[8], तेन वुच्चति अवितक्कं अविचारं" ति।

५८ एत्थाह—"ननु च वितक्कविचारानं वूपसमा ति इमिना पि अयमत्थो सिद्धो, अथ कस्मा पुन वुत्तं अवितक्कं अविचारं" ति? वुच्चते—एवमेतं, सिद्धो वायमत्थो, न पनेतं तदत्थदीपकं। ननु अवोचुम्ह—"ओळारिकस्स पन ओळारिकस्स अङ्गस्स समतिक्कमा पठमज्झानतो परेसं दुतियज्झानादीनं समधिगमो होती ति दस्सनत्थं 'वितक्कविचारानं वूपसमा' ति एवं वुत्तं" ति।

अपि च वितक्कविचारानं वूपसमा इदं सम्पसादनं, न किलेसकालुस्सियस्स। वितक्कविचारानं च वूपसमा एकोदिभावं, न उपचारज्झानमिव नीवरणप्पहाना, पठमज्झानमिव च न अङ्गपातुभावा ति एवं सम्पसादनएकोदिभावानं हेतुपरिदीपकमिदं वचनं। तथा वितक्कविचारानं वूपसमा इदं अवितक्कं अविचारं, न ततियचतुत्थज्झानानि विय चक्खुविञ्ञाणादीनि विय च अभावा ति एवं अवितक्कअविचारभावस्स हेतुपरिदीपकं च, न वितक्कविचाराभावमत्तपरिदीपकं। वितक्कविचाराभावमत्तपरिदीपकमेव पन "अवितक्कं अविचारं" ति इदं वचनं। तस्मा पुरिमं वत्वा पि वत्तब्बमेवा ति।

५९. **समाधिजं** ति। पठमज्झानसमाधितो सम्पयुत्तसमाधितो वा जातं ति अत्थो। तत्थ किञ्चापि पठमं पि सम्पयुत्तसमाधितो जातं, अथ खो अयमेव समाधि "समाधी" ति वत्तब्बतं अरहति, वितक्कविचारक्खोभविरहेन अतिविय अचलत्ता, सुप्पसन्नत्ता च। तस्मा इमस्स वण्णभणनत्थं इदमेव "समाधिजं" ति वुत्तं। **पीतिसुखं** ति। इदं वुत्तनयमेव।

६०. **दुतियं** ति। गणनानुपुब्बता दुतियं। इदं दुतियं समापज्जती ति पि दुतियं। यं पन वुत्तं—"**दुवङ्गविप्पहीनं तिवङ्गसमन्नागतं**" ति। तत्थ वितक्क-

१. **सन्ता** ति। समं निरोधं गता। २ **समिता** ति। भावनाय समं गमिता निरोधिता।
३. **वूपसन्ता** ति। ततो एव सुट्ठु उपसन्ता। ४. **अत्थङ्गता** ति। अत्थं विनासं गता।
५. **अब्भत्थङ्गता** ति। उपसग्गेन पदं वड्ढेत्वा वुत्तं। ६ **अप्पिता** ति। विनासं गमिता।
७. **सोसिता** ति। पवत्तिसङ्खातस्स सन्तानस्स अभावेन सोसं सुक्खभावं इता।
८ **ब्यन्तीकता** ति। विगतन्तकता।

विचारान पहानवसेन द्वङ्गविप्पहीनता वेदितब्बा। यथा च पठमज्झानस्स उपचारक्खणे नीवरणानि पहीयन्ति, न तथा इमस्स वितक्कविचारा। अप्पना-क्खणे येव पनेतं विना तेहि उप्पज्जति। तेनस्स ते "पहानङ्ग" ति वुच्चन्ति। पीति, सुख, चित्तेकग्गता ति इमेसं पन तिण्ण उप्पत्तिवसेन तिवङ्गसमन्नागतता वेदितब्बा। तस्मा य **विभङ्गे** "झानं ति सम्पसादो पीति सुख चित्तस्स एकग्गता" (अभि० २–३११) ति वुत्त त सपरिक्खार झान दस्सेतु परियायेन वुत्तं। ठपेत्वा पन सम्पसादन निप्परियायेन उपनिज्झानलक्खणप्पत्तान अङ्गान वसेन तिवङ्गिकमेव एत होति। यथाह—"कतम तस्मि समये तिवङ्गिक झानं होति, पीति सुख चितस्स एकग्गता" (अभि० २–३१९) ति। सेस पठमज्झाने वुत्तनयमेव।

ततियज्झानकथा

६१. एवमधिगते पन तस्मि पि वुत्तनयेनेव पञ्चहाकारेहि चिण्णवसिना हुत्वा पगुणदुतियज्झानतो वुट्ठाय "अय समापत्ति आसन्नवितक्कविचारपच्च-त्थिका, 'यदेव तत्थ पीतिगत चेतसो उप्पिलावित, एतेनेत ओळारिकं अक्खायती" (दी० १–३३) ति वुत्ताय पीतिया ओळारिकत्ता अङ्गदुब्बला" ति च तत्थ दोसं दिस्वा ततियज्झान सन्ततो मनसिकरित्वा दुतियज्झाने निकन्ति परियादाय ततियाधिगमाय योगो कातब्बो। अथस्स यदा दुतियज्झानतो वुट्ठाय सतस्स सम्पजानस्स झानङ्गानि पच्चवेक्खतो पीति ओळारिकतो उपट्ठाति, सुखं चेव एकग्गता च सन्ततो उपट्ठाति। तदास्स ओळारिकङ्गप्पहानाय सन्तङ्ग-पटिलाभाय च तदेव निमित्त "पथवी पथवी" ति पुनप्पुनं मनसिकरोतो "इदानि ततियज्झान उप्पज्जिस्सती" ति भवङ्ग उपच्छिन्दित्वा तदेव पथवी-कसिण आरम्मण कत्वा मनोद्वारावज्जन उप्पज्जति। ततो तस्मि येवारम्मणे चत्तारि पञ्च वा जवनानि जवन्ति, येसं अवसाने एक रूपावचरं ततियज्झानिकं, सेसानि वुत्तनयेनेव कामावचरानी ति।

६२. एत्तावता च पनेस **"पीतिया च विरागा उपेक्खको च विहरति सतो च सम्पजानो, सुखं च कायेन पटिसंवेदेति, यं तं अरिया आचिक्खन्ति उपेक्खको सतिमा सुखविहारी ति, ततियं झान उपसम्पज्ज विहरती"** (दी० १–६६) ति। **एवमनेन एकङ्गविप्पहीनं दुवङ्गसमन्नागतं तिविधकल्याणं दसलक्खणसम्पन्नं ततियं झानं अधिगतं होति पथवीकसिणं।**

६३. तत्थ **पीतिया च विरागा** ति। विरागो नाम वुत्तप्पकाराय पीतिया जिगुच्छनं वा, समतिक्कमो वा। उभिन्नं पन अन्तरा च-सद्दो सम्पिण्डनत्थो, सो

वूपसमं वा सम्पिण्डेति वितक्कविचारान वूपसम वा। तत्थ यदा वूपसममेव सम्पिण्डेति, तदा "पीतिया च विरागा किञ्च भिय्यो वूपसमा चा" ति एव योजना वेदितब्बा। इमिस्सा च योजनाय विरागा जिगुच्छनत्थो होति, तस्मा "पीतिया जिगुच्छना च वूपसमा चा" ति अयमत्थो दट्ठब्बो। यदा पन वितक्कविचारवूपसम सम्पिण्डेति, तदा "पीतिया च विरागा, किञ्च भिय्यो वितक्कविचारान च वूपसमा" ति एव योजना वेदितब्बा। इमिस्सा च योजनाय विरागो समतिक्कमत्थो होति, तस्मा "पीतिया च समतिक्कमा वितक्कविचारानं च वूपसमा ति अयमत्थो दट्ठब्बो।

६४ काम चेते वितक्कविचारा दुतियज्झाने येव वूपसन्ता, इमस्स पन झानस्स मग्गपरिदीपनत्थ वण्णभणनत्थ चेत वुत्त। 'वितक्कविचारान च वूपसमा' ति हि वुत्ते इद पञ्ञायति—नून वितक्कविचारवूपसमो मग्गो[1] इमस्स झानस्सा ति। यथा च ततिये अरियमग्गे अप्पहीनान पि सक्कायदिट्ठादीन "पञ्चन्नं ओरम्भागियान सयोजनानं पहाना" (दी० १–१३३) ति एव पहानं वुच्चमान वण्णभणन होति, तदधिगमाय[2] उस्सुक्कान उस्साहजनक; एवमेव इध अवूपसन्तान पि वितक्कविचारानं वूपसमो वुच्चमानो वण्णभणन होति। तेनायमत्थो वुत्तो—"पीतिया च समतिक्कमा वितक्कविचारानं च वूपसमा" ति।

६५ **उपेक्खको च विहरती** ति। एत्थ उपपत्तितो इक्खती ति उपेक्खा। समं पस्सति, अपक्खपतिता हुत्वा पस्सती ति अत्थो। ताय विसदाय विपुलाय थामगताय समन्नागतत्ता ततियज्झानसमङ्गी उपेक्खको ति वुच्चति।

उपेक्खा पन दसविधा होति—छळङ्गुपेक्खा, ब्रह्मविहारुपेक्खा, बोज्झङ्गुपेक्खा, विरियपेक्खा, सङ्खारुपेक्खा, वेदनुपेक्खा, विपस्सनुपेक्खा, तत्रमज्झत्तुपेक्खा, झानुपेक्खा, पारिसुद्धिउपेक्खा ति।

(१) तत्थ या "इध, भिक्खवे, भिक्खु चक्खुना रूप दिस्वा नेव सुमनो होति, न दुम्मनो, उपेक्खको च विहरति सतो सम्पजानो" (अ० ३–३) ति एवमागता खीणासवस्स छसु द्वारेसु इट्ठानिट्ठछळारम्मणापाथे परिसुद्धपकतिभावाविजहनाकारभूता उपेक्खा, अयं **छळङ्गुपेक्खा** नाम।

(२) या पन "उपेक्खासहगतेन चेतसा एक दिसं फरित्वा विहरती" ति एवमागता सत्तेसु मज्झत्ताकारभूता उपेक्खा, अय **ब्रह्मविहारुपेक्खा** नाम।

(३) या "उपक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सित" ति एवमागता सहजातधम्मानं मज्झत्ताकारभूता उपेक्खा, अय **बोज्झङ्गुपेक्खा** नाम।

(४) या पन 'कालेन काल उपेक्खानिमित्त मनसिकरोती" ति एवमागता

---

१. मग्गो ति। उपायो। २ तदधिगमाया ति। ततियमग्गाधिगमाय।

अनच्चारद्धनातिसिथिलविरियसङ्खाता उपेक्खा, अयं **विरियुपेक्खा** नाम।

(५) या "कति सङ्खारुपेक्खा समथवसेन उप्पज्जन्ति ? कति सङ्खारुपेक्खा विपस्सनावसेन उप्पज्जन्ति ? अट्ठ सङ्खारुपेक्खा समाधिवसेन उप्पज्जन्ति, दस सङ्खारुपेक्खा विपस्सनावसेन उप्पज्जन्ती" ति एवमागता नीवरणादिपटिसङ्खासन्तिट्ठाना गहणे मज्झत्तभूता उपेक्खा, अयं **सङ्खारुपेक्खा** नाम।

(६) या पन "यस्मिं समये कामावचरं कुसलं चित्तं उप्पन्नं होति उपेक्खासहगतं" ति एवमागता अदुक्खमसुखसञ्ञिता उपेक्खा, अयं **वेदनुपेक्खा** नाम।

(७) या "यदत्थि यं भूतं तं पजहति, उपेक्खं पटिलभती" ति एवमागता विचिनने मज्झत्तभूता उपेक्खा, अयं विपस्सनुपेक्खा नाम।

(८) या पन छन्दादीसु येवापनकेसु आगता सहजातानं समवाहितभूता उपेक्खा, अयं तत्रमज्झत्तुपेक्खा नाम।

(९) या "उपेक्खको च विहरती" ति एवमागता अग्गसुखे पि तस्मिं अपक्खपातजननी उपेक्खा, अयं झानुपेक्खा नाम।

(१०) या पन "उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं" ति एवमागता सब्बपच्चनीकपारिसुद्धा पच्चनीकवूपसमने पि अब्यापारभूता उपेक्खा, अयं पारिसुद्धिउपेक्खा नाम।

६६ तत्र छळङ्गुपेक्खा च ब्रह्मविहारुपेक्खा च बोज्झङ्गुपेक्खा च तत्रमज्झत्तुपेक्खा च झानुपेक्खा च पारिसुद्धुपेक्खा च अत्थतो एका, तत्रमज्झत्तुपेक्खा व होति। तेन तेन अवत्थाभेदेन पनस्सा अयं भेदो, एकस्सा पि सतो सत्तस्स कुमारयुवथेरसेनापतिराजादिवसेन भेदो विय। तस्मा तासु यत्थ छळङ्गुपेक्खा, न तत्थ बोज्झङ्गुपेक्खादयो। यत्थ वा पन बोज्झङ्गुपेक्खा, न तत्थ छळङ्गुपेक्खादयो होन्ती ति वेदितब्बा।

६७. यथा चेतासमत्थतो एकीभावो, एवं सङ्खारुपेक्खाविपस्सनुपेक्खानं पि। पञ्ञा एव हि सा किच्चवसेन द्विधा भिन्ना। यथा हि पुरिसस्स सायं गेहं पविट्ठं सप्पं अजपददण्डं गहेत्वा परियेसमानस्स तं थुसकोट्ठके निपन्नं दिस्वा "सप्पो नु खो, नो" ति अवलोकेन्तस्स सोवत्तिकत्तयं दिस्वा निब्बेमतिकस्स "सप्पो, न सप्पो" ति विचिनने मज्झत्तता होति, एवमेव या आरद्धविपस्सकस्स विपस्सनाञाणेन लक्खणत्तये दिट्ठे सङ्खारानं अनिच्चभावादिविचिनने मज्झत्तता उप्पज्जति, अयं विपस्सनुपेक्खा नाम। यथा पन तस्स पुरिसस्स अजपददण्डेन गाळ्हं सप्पं गहेत्वा "किं ताहं इमं सप्पं अविहेठेन्तो अत्तानं च इमिना अडसापेन्तो मुञ्चेय्यं" ति मुञ्चनाकारमेव परियेसतो गहणे मज्झत्तता होति। एवमेव या लक्खणत्तयस्स दिट्ठत्ता आदित्ते विय तयो भवे पस्सतो

सङ्खारग्गहणे मज्झत्तता, अय मङ्खारुपेक्खा नाम। इति विपस्सनुपेक्खाय सिद्धाय सङ्खारुपेक्खा पि सिद्धा व होति। इमिना पनेसा विचिननगहणेसु मज्झत्तसङ्खातेन किच्चेन द्विधा भिन्ना ति।

विरियपेक्खा पन वेदनुपेक्खा च अञ्ञमञ्ञं च अवसेसाहि च अत्थतो भिन्ना एवा ति।

६८. इति इमास उपेक्खास झानुपेक्खा इध अधिप्पेता। सा मज्झत्तलक्खणा, अनाभोगरसा, अब्यापारपच्चुपट्ठाना, पीतिविरागपदट्ठाना ति। एत्थाह— ननु च अय अत्थतो तत्रमज्झत्तुपेक्खा व होति, सा च पठमदुतियज्झानेसु पि अत्थि, तस्मा तत्रापि उपेक्खको च विहरती ति एवमय वत्तब्बा सिया, सा कस्मा न वुत्ता ति? अपरिब्यत्तकिच्चतो। अपरिब्यत्तं हि तस्सा तत्थ किच्च वितक्कादीहि अभिभूतत्ता। इध पनाय वितक्कविचारपीतीहि अनभिभूतत्ता उक्खित्तसिरा विय हुत्वा परिब्यत्तकिच्चा जाता, तस्मा वुत्ता ति।

निट्ठिता "उपेक्खको च विहरती" ति एतस्स सब्बसो अत्थवण्णना।

६९. इदानि **सतो च सम्पजानो** ति। एत्थ सरती ति सतो। सम्पजानाती ति सम्पजानो। पुग्गलेन सति च सम्पजञ्ञ च वुत्त। तत्थ सरणलक्खणा सति, असम्मुस्सनरसा, आरक्खपच्चुपट्ठाना। असम्मोहलक्खण सम्पजञ्ञ, तीरणरस, पविचयपच्चुपट्ठान।

७० तत्थ किञ्चापि इदं सतिसम्पजञ्ञं पुरिमज्झानेसु पि अत्थि। मुट्ठसतिस्स हि असम्पजानस्स उपचारमत्त पि न सम्पज्जति, पगेव अप्पना। ओळारिकत्ता पन तेस झानान, भूमिय विय पुरिसस्स, चित्तस्स गति सुखा होति, अब्यत्तं तत्थ सतिसम्पजञ्ञकिच्च। ओळारिकङ्गप्पहानेन पन सुखुमत्ता इमस्स झानस्स पुरिसस्स खुरधाराय विय सतिसम्पजञ्ञकिच्चपरिग्गहिता एव चित्तस्स गति इच्छितब्बा ति इधेव वुत्तं। किञ्च भिय्यो, यथा धेनूपगो वच्छो धेनुतो अपनीतो अरक्खियमानो पुनदेव धेनु उपगच्छति, एवमिदं ततियज्झानसुखं पीतितो अपनीत, तं सतिसम्पजञ्ञारक्खेन अरक्खियमानं पुनदेव पीतिं उपगच्छेय्य, पीतिसम्पयुत्तमेव सिया। सुखे वा पि सत्ता सारज्जन्ति, इदं च अतिमधुरं सुख, ततो पर सुखाभावा। सतिसम्पजञ्ञानुभावेन पनेत्थ सुखे असारज्जना होति, नो अञ्ञथा ति इमं पि अत्थविसेसं दस्सेतुं इदं इधेव वुत्तं ति वेदितब्ब।

७१ इदानि **सुखं च कायेन पटिसंवेदेती** ति एत्थ किञ्चापि ततियज्झानसमङ्गिनो सुखपटिसंवेदनाभोगो नत्थि। एवं सन्ते पि यस्मा तस्स नामकायेन सम्पयुत्तं सुखं, यं वा तं नामकायसम्पयुत्तं सुखं, तंसमुट्ठानेनस्स यस्मा अति-

पणीतेन रूपेन रूपकायो फुटो, यस्स फुटत्ता झाना वुट्ठितो पि सुखं पटिसंवेदेय्य। तस्मा एतमत्थं दस्सेन्तो, सुखं च कायेन पटिसंवेदेती ति आह।

७२ इदानि **यं तं अरिया आचिक्खन्ति उपेक्खको सतिमा सुखविहारी** ति। एत्थ यंझानहेतु यंझानकारणा तं ततियज्झानसमङ्गिपुग्गलं बुद्धादयो अरिया आचिक्खन्ति देसेन्ति पञ्ञपेन्ति पट्ठपेन्ति विवरन्ति विभजन्ति उत्तानीकरोन्ति पकासेन्ति, पसंसन्ती ति अधिप्पायो। किं ति? उपेक्खको सतिमा सुखविहारी ति। तं ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरती ति एवमेत्थ योजना वेदितब्बा।

७३. कस्मा पन तं ते एवं पसंसन्ती ति? पसंसारहतो। अयं हि यस्मा अतिमधुरसुखे सुखपारमिप्पत्ते पि ततियज्झाने उपेक्खको, न तत्थ सुखाभिसङ्गेन आकड्ढियति। यथा च पीति न उप्पज्जति, एवं उपट्ठितसतिताय सतिमा। यस्मा च अरियकन्तं अरियजनसेवितमेव च असङ्किलिट्ठं सुखं नामकायेन पटिसंवेदेति, तस्मा पसंसारहो होति। इति पसंसारहतो नं अरिया ते एवं पसंसाहेतुभूते गुणे पकासेन्तो "उपेक्खको सतिमा सुखविहारी" ति एवं पसंसन्ती ति वेदितब्बं।

७४. **ततियं** ति। गणनानुपुब्बता ततियं, इदं ततियं समापज्जती ति ततियं। यं पन वुत्तं "एकङ्गविप्पहीनं दुवङ्गसमन्नागतं" ति, एत्थ पीतिया पहानवसेन एकङ्गविप्पहीनता वेदितब्बा। सा पनेसा दुतियज्झानस्स वितक्कविचारा विय अप्पनाक्खणे येव पहीयति। तेनस्स सा पहानङ्गं ति वुच्चति। सुखं चित्तेकग्गता ति इमेसं पन द्विन्नं उप्पत्तिवसेन **दुवङ्गसमन्नागतता** वेदितब्बा। तस्मा यं **विभङ्गे**—"झानं ति उपेक्खा सति सम्पजञ्ञं सुखं चित्तस्सेकग्गता" (अभि० २–३१२) ति वुत्तं, तं सपरिक्खारं झानं दस्सेतुं परियायेन वुत्तं। ठपेत्वा पन उपेक्खासतिसम्पजञ्ञानि निप्परियायेन उपनिज्झानलक्खणप्पत्तानं अङ्गानं वसेन दुवङ्गिकमेवेतं होति। यथाह—"कतमं तस्मिं समये दुवङ्गिकं झानं होति? सुखं चित्तस्सेकग्गता" (अभि० २–३१७) ति। सेसं पठमज्झाने वुत्तनयमेव।

चतुत्थज्झानकथा

७५ एवमधिगते पन तस्मिं पि वुत्तनयेनेव पञ्चहाकारेहि चिण्णवसिना हुत्वा पगुणततियज्झानतो वुट्ठाय "अयं समापत्ति आसन्नपीतिपच्चत्थिका, यदेव तत्थ सुखमिति चेतसो आभोगो, एतेनेतं ओळारिकमक्खायती" ति एवं वुत्तस्स सुखस्स "ओळारिकत्ता अङ्गदुब्बलता" ति च तत्थ दोसं दिस्वा चतुत्थज्झानं सन्ततो

मनसिकत्वा ततियज्झाने निकन्ति परियादाय चतुत्थाधिगमाय योगो कातब्बो। अथस्स यदा ततियज्झानतो वुट्ठाय सतस्स सम्पजानस्स झानङ्गानि पच्चवेक्खतो चेतसिकसोमनस्ससङ्खात सुख ओळारिकतो उपट्ठाति, उपेक्खावेदना चव चित्तेकग्गता च सन्ततो उपट्ठाति, तदास्स ओळारिकङ्गप्पहानाय सन्तङ्गपटिलाभाय च तदेव निमित्त "पथवी, पथवी" ति पुनप्पुन मनसिकरोतो "इदानि चतुत्थज्झान उप्पज्जिस्सती" ति भवङ्ग उपच्छिन्दित्वा तदेव पथवीकसिण आरम्मण कत्वा मनोद्वारावज्जन उप्पज्जति। ततो तस्मि येवारम्मणे चत्तारि पञ्च वा जवनानि उप्पज्जन्ति, येसं अवसाने एक रूपावचर चतुत्थज्झानिक, सेसानि वुत्तप्पकारानेव कामावचरानि।

अय पन विसेसो—यस्मा सुखवेदना अदुक्खमसुखाय वेदनाय आसेवनपच्चयेन पच्चयो न होति, चतुत्थज्झाने च अदुक्खमसुखाय वेदनाय उप्पज्जितब्बं, तस्मा तानि उपेक्खावेदनासम्पयत्तानि होन्ति। उपेक्खासम्पयुत्तत्ता येव चेत्थ पीति पि परिहायती ति।

एत्तावता चेस सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एवमनेन एकङ्गविप्पहीनं दुवङ्गसमन्नागतं तिविधकल्याणं दसलक्खणसम्पन्नं चतुत्थं झान अधिगतं होति पथवीकसिणं।

७६ तत्थ **सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना** ति। कायिकसुखस्स च कायिकदुक्खस्स च पहाना। **पुब्बे वा** ति। त च खो पुब्बेव, न चतुत्थज्झानक्खण। **सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा** ति। चेतसिकसुखस्स च चेतसिकदुक्खस्स चा ति। इमेस पि द्विन्न पुब्बेव अत्थङ्गमा, पहाना इच्चेव वुत्त होति।

कदा पन नेस पहानं होती ति? चतुन्न झानान उपचारक्खणे। सोमनस्स हि चतुत्थज्झानस्स उपचारक्खणे येव पहीयति। दुक्खदोमनस्ससुखानि पठमदुतियततियज्झानान उपचारक्खणेसु। एवमेतेस पहानक्कमेन अवुत्तान पि इन्द्रियविभङ्गे ( ) पन इन्द्रियान उद्देसक्कमेनेव इधापि वुत्तान सुखदुक्खसोमनस्सदोमनस्सान पहान वेदितब्बं।

७७ यदि पनेतानि तस्स तस्स झानस्स उपचारक्खणे येव पहीयन्ति, अथ कस्मा "कत्थ चुप्पन्नं दुक्खिन्द्रिय अपरिसेसं निरुज्झति? इध, भिक्खवे, भिक्खु विविच्चेव कामेहि···पे०···पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एत्थ चुप्पन्नं दुक्खिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति। कत्थ चुप्पन्नं दोमनस्सिन्द्रिय, सुखिन्द्रिय, सोमनस्सिन्द्रिय अपरिसेस निरुज्झति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सुखस्स च पहाना···पे०···चतुत्थ झान उपसम्पज्ज विहरति, एत्थ चुप्पन्न सोमनस्सिन्द्रिय अप-

रिसेस निरुज्झती" (स० ४-१८५) ति एवं झानेस्वेव निरोधो वुत्तो ति, अतिसयनिरोधत्ता। अतिसयनिरोधा हि नेस पठमज्झानादीसु, न निरोधो येव। निरोधो येव पन उपचारक्खणे, नातिसयनिरोधो।

७८ तथा हि नानावज्जने पठमज्झानुपचारे निरुद्धस्सा पि दुक्खिन्द्रियस्स डसमकसादिसम्फस्सेन वा विसमासनुपतापेन वा सिया उप्पत्ति, न त्वेव अन्तोअप्पनाय। उपचारे वा निरुद्ध पेत न सुट्ठु निरुद्ध होति, पटिपक्खेन अविहतत्ता। अन्तोअप्पनाय पन पीतिफरणेन सब्बो कायो सुखोक्कन्तो होति, सुखोक्कन्तकायस्स च सुट्ठु निरुद्ध होति दुक्खिन्द्रिय, पटिपक्खेन विहतत्ता। नानावज्जने येव च दुतियज्झानुपचारे पहीनस्स दोमनस्सिन्द्रियस्स, यस्मा एतं वितक्कविचारपच्चये पि कायकिलमथे चित्तुपघाते च सति उप्पज्जति। वितक्कविचाराभावे च नेव उप्पज्जति। यत्थ पन उप्पज्जति, तत्थ वितक्कविचारभावे, अप्पहीना एवं च दुतियज्झानुपचारे वितक्कविचारा ति तत्थस्स सिया उप्पत्ति, न त्वेव दुतियज्झाने, पहीनपच्चयत्ता। तथा ततियज्झानुपचारे पहीनस्सा पि सुखिन्द्रियस्स पीतिसमुट्ठानपणीतरूपफुटकायस्स सिया उत्पत्ति, न त्वेव ततियज्झाने। ततियज्झाने हि सुखस्स पच्चयभूता पीति सब्बसो निरुद्धा ति। तथा चतुत्थज्झानुपचारे पहीनस्सा पि सोमनस्सिन्द्रियस्स आसन्नता अप्पनाप्पत्ताय उपेक्खाय अभावेन सम्मा अनतिक्कन्तत्ता च सिया उप्पत्ति, न त्वेव चतुत्थज्झाने। तस्मा येव च एत्थुप्पन्न दुक्खिन्द्रिय अपरिसेस निरुज्झती ति तत्थ अपरिसेसग्गहणं कत ति।

७९. एत्थाह—"अथेवं तस्स तस्स झानस्सुपचारे पहीना पि एता वेदना इध कस्मा समाहटा" ति? सुखग्गहणत्थ। या हि अय अदुक्खमसुखं ति एत्थ अदुक्खमसुखा वेदना वुत्ता, सा सुखुमा दुविञ्ञेय्या न सक्का सुखेन गहेतु। तस्मा यथा नाम दुट्ठस्स यथा वा तथा वा उपसङ्कमित्वा गहेतु असक्कुणेय्यस्स गोणस्स सुखग्गहणत्थ गोपो एकस्मि वजे सब्बा गावो समाहरति, अथकेक नीहरन्तो पटिपाटिया आगत "अय सो, गण्हथ न" ति त पि गाहयति, एवमेव भगवा सुखग्गहणत्थ सब्बा एता समाहरि। एव हि समाहटा एता दस्सेत्वा यं नेव सुखं न दुक्खं न सोमनस्सं न दोमनस्स, अयमदुक्खमसुखा वेदना ति सक्का होति एसा गाहयितु।

८० अपि च—अदुक्खमसुखाय चेतोविमुत्तिया पच्चयदस्सनत्थं चा पि एता वुत्ता ति वेदितब्बा। दुक्खप्पहानादयो हि तस्सा पच्चया। अथाह—"चत्तारो खो, आवुसो, पच्चया अदुक्खमसुखाय चेतोविमुत्तिया समापत्तिया। इधावुसो, भिक्खु सुखस्स च पहाना ' पे०" चतुत्थ झान उपसम्पज्ज विहरति।

इमे खो आवसो चत्तारो पच्चया अदुक्खमसुखाय चेतोविमुत्तिया समापत्तिया" (म० १–३६६) ति।

८१ यथा वा अञ्ञत्थ पहीना पि सक्कायदिट्ठिआदयो ततियमग्गस्स वण्णभणनत्थ तत्थ पहीना ति वुत्ता, एव वण्णभणनत्थ पेतस्स झानस्सेता इध वुत्ता ति पि वेदितब्बा।

पच्चयघातेन वा एत्थ रागदोसानमतिदूरभाव दस्सेतु पेता वुत्ता ति वेदितब्बा। एतासु हि सुख सोमनस्सस्स पच्चयो, सोमनस्स रागस्स। दुक्ख दोमनस्सस्स पच्चयो, दोमनस्स दोसस्स। सुखादिघातेन चस्स सप्पच्चया रागदोसा हता ति अतिदूरे होन्तो ति।

८२. **अदुक्खमसुखं** ति। दुक्खाभावेन अदुक्खं। सुखाभावेन असुख। एतेनेत्थ दुक्खसुखपटिपक्खभूत ततियवेदन दीपेति, न दुक्खसुखाभावमत्त। ततियवेदना नाम अदुक्खमसुखा, उपेक्खा ति पि वुच्चति। सा इट्ठानिट्ठविपरीतानुभवन-लक्खणा, मज्झत्तरसा, अविभूतपच्चुपट्ठाना, सुखदुक्खनिरोधपदट्ठाना ति वेदितब्बा।

८३. **उपेक्खासतिपारिसुद्धि** ति। उपेक्खाय जनितसतिया पारिसुद्धि। इमस्मि हि झाने सुपरिसुद्धा सति, या च तस्सा सतिया पारिसुद्धि, सा उपेक्खाय कता, न अञ्ञेन। तस्मा एतं "उपेक्खासतिपारिसुद्धि" ति वुच्चति। **विभङ्गे** पि वुत्त—"अयं सति इमाय उपेक्खाय विसदा होति परिसुद्धा परियोदाता। तेन वुच्चति उपेक्खासतिपारिसुद्धी" (अभि० २–३१४) ति। याय च उपेक्खाय एत्थ सतिया पारिसुद्धि होति, सा अत्थतो तत्रमज्झत्तता ति वेदितब्बा। न केवलं चेत्थ ताय सति येव परिसुद्धा, अपि च खो सब्बे पि सम्पयुत्तधम्मा, सतिसीसेन पन देसना वुत्ता।

तत्थ किञ्चापि अय उपेक्खा हेट्ठा पि तीसु झानेसु विज्जति। यथा पन दिवा सुरियप्पभाभिभवा सोम्मभावेन च अत्तनो उपकारकत्तेन वा सभागाय रत्तिया अलाभा दिवा विज्जमाना पि चन्दलेखा अपरिसुद्धा होति अपरियोदाता, एवमय पि तत्रमज्झत्तुपेक्खा चन्दलेखा वितक्कादिपच्चनीकधम्मतेजाभिभवा सभागाय च उपेक्खावेदनारत्तिया अप्पटिलाभा विज्जमाना पि पठमादिज्झान-भेदेसु अपरिसुद्धा होति। तस्सा च अपरिसुद्धाय दिवा अपरिसुद्धचन्दलेखाय पभा विय सहजाता पि सतिआदयो अपरिसुद्धा व होन्ति। तस्मा तेसु एक पि "उपेक्खासतिपारिसुद्धि" ति न वुत्तं। इध पन वितक्कादिपच्चनीकधम्मतेजा-भिभवाभावा सभागाय च उपेक्खावेदनारत्तिया पटिलाभा अय तत्र मज्झत्तु-

पेक्खा चन्दलेखा अति विय परिसुद्धा। तस्सा परिसुद्धत्ता परिसुद्धचन्दलेखाय पभा विय सहजाता पि सतिआदयो परिसुद्धा होन्ति परियोदाता। तस्सा इदमेव "उपेक्खासतिपारिसुद्धि" ति वुत्त ति वेदितब्ब।

८४. **चतुत्थं** ति। गणनानुपुब्बता चतुत्थ। इद चतुत्थ समापज्जती ति चतुत्थ। य पन वुत्त "**एकङ्गविप्पहीनं दुवङ्गसमन्नागतं**" ति, तत्थ सोमनस्सस्स पहानवसेन एकङ्गविप्पहीनता वेदितब्बा। त च पन सोमनस्स एकवीथिय पुरिमजवनेसु येव पहीयति। तेनस्स त पहानङ्ग ति वुच्चति। उपेक्खावेदना चित्तस्सेकग्गता ति इमेसं पन द्विन्न उप्पत्तिवसन दुवङ्गसमन्नागतता वेदितब्बा। सेस पठमज्झाने वुत्तनयमेव॥

एस ताव चतुक्कज्झाने नयो॥

पञ्चकज्झानकथा

८५ पञ्चकज्झान पन निब्बत्तेन्तेन पगुणपठमज्झानतो वुट्ठाय "अय समापत्ति आसन्ननीवरणपच्चत्थिका, वितक्कस्स ओळारिकत्ता अङ्गदुब्बला" ति च तत्थ दोस दिस्वा दुतियज्झान सन्ततो मनसिकरित्वा पठमज्झाने निकन्ति परियादाय दुतियाधिगमाय योगो कातब्बो। अथस्स यदा पठमज्झाना वुट्ठाय सतस्स सम्पजानस्स झानङ्गानि पच्चवेक्खतो वितक्कमत्त ओळारिकतो उपट्ठाति, विचारादयो सन्ततो। तदास्स ओळारिकङ्गप्पहानाय सन्तङ्गपटिलाभाय च तदेव निमित्त "पथवी, पथवी" ति पुनप्पुनं मनसिकरोतो वुत्तयेनेव दुतियज्झानं उप्पज्जति। तस्स वितक्कमत्तमेव पहानङ्ग। विचारादानि चत्तारि समन्नागतानि। सेस वुत्तप्पकारमेव।

एवमधिगते पन तस्मि पि वुत्तनयेनेव पञ्चहाकारेहि चिण्णवसिना हुत्वा पगुणदुतियज्झानतो वुट्ठाय "अय समापत्ति आसन्नवितक्कपच्चत्थिका, विचारस्स ओळारिकत्ता अङ्गदुब्बला" ति च तत्थ दोस दिस्वा ततियज्झानं सन्ततो मनसिकरित्वा दुतियज्झाने निकन्ति परियादाय ततियाधिगमाय योगो कातब्बो। अथस्स यदा दुतियज्झानतो वुट्ठाय सतस्स सम्पजानस्स झानङ्गानि पच्चवेक्खतो विचारमत्त ओळारिकतो उपट्ठाति, पीतिआदीनि सन्ततो। तदास्स ओळारिकङ्गप्पहानाय सन्तङ्गपटिलाभाय च तदेव निमित्तं "पथवी, पथवी" ति पुनप्पुन मनसिकरोतो वुत्तनयेनेव ततियज्झान उपज्जति। तस्स विचारमत्तमेव पहानङ्गं, चतुक्कनयस्स दुतियज्झाने विय पीतिआदीनि तीणि समन्नागतङ्गानि। सेस वुत्तप्पकारमेव।

८६ इति यं चतुक्कनये दुतियं, तं द्विधा भिन्दित्वा[1] पञ्चकनये दुतियं चेव ततिय च होति। यानि च तत्थ ततियचतुत्थानि, तानि च चतुत्थपञ्चमानि होन्ति। पठमं पठममेवा ति।

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
समाधिभावनाधिकारे पथवीकसिणनिद्देसो नाम
चतुत्थो परिच्छेदो।



१. **तं द्विधा भिन्दित्वा** ति। चतुक्कनये दुतिय "अवितक्कं विचारमत्तं, अवितक्कं अविचारं" ति च एवं द्विधा भिन्दित्वा **पञ्चकनये दुतियं चेव ततियं च होति** अभिधम्मे ति (अभि० १-४७) अधिप्पायो। सुत्तन्तेसु पन सरूपतो पञ्चकनयो न गहितो।

सेसकसिणनिद्देसो

पञ्चमो परिच्छेदो

आपोकसिणकथा

१ इदानि पथवीकसिणान्तरे आपोकसिणे वित्थारकथा होति। यथेव हि पथवीकसिणं, एव आपोकसिणं पि भावेतुकामेन सुखनिसिन्नेन आपस्मि निमित्त गण्हितब्ब, "कते वा अकते वा" ति सब्बं वित्थारेतब्बं। यथा च इध, एव सब्बत्थ। इतो परं हि एत्तक पि अवत्वा विसेसमत्तमेव वक्खाम।

२ इधा पि पुब्बेकताधिकारस्स[1] पुञ्ञवतो अकते आपस्मि पोक्खरणिया वा तलाके वा लोणियं[2] वा समुद्दे वा निमित्त उप्पज्जति **चूळसीवत्थेरस्स** विय। तस्स किरायस्मतो 'लाभसक्कारं पहाय विवित्तवास वसिस्सामी' ति महातित्थे नावं आरुहित्वा जम्बुदीपं गच्छतो अन्तरा महासमुद्द ओलोकयतो तप्पटिभाग कसिणनिमित्त उदपादि।

३ अकताधिकारेन चत्तारो कसिणदोसे परिहरन्तेन नील-पीत-लोहितो-दातवण्णान अञ्ञतरवण्ण आप अगहेत्वा य पन भूमि असम्पत्तमेव आकासे सुद्धवत्थेन गहित्त उदकं, अञ्ञ वा तथारूप विप्पसन्न अनाविलं, तेन पत्त वा कुण्डिकं वा समतित्तिकं पूरेत्वा विहारपच्चन्ते वुत्तप्पकारे[3] पटिच्छन्ने ओकासे ठपेत्वा सुखनिसिन्नेन न वण्णो पच्चवेक्खितब्बो। न लक्खण मनसि कातब्बं। निस्सयसवण्णमेव कत्वा उस्सदवसेन पण्णत्तिधम्मे चित्त ठपेत्वा अम्बु, उदक, वारि, सलिल ति आदीसु आपोनामेसु पाकटनामवसेनेव "आपो, आपो" ति भावेतब्ब।

४ तस्सेवं भावयतो अनुक्कमेन वुत्तनयेनेव[4] निमित्तद्वय उप्पज्जति। इध पन उग्गहनिमित्तं चलमानं विय उपट्ठाति, सचे फेणपुप्फुळकमिस्सं उदकं होति, तादिसमेव उपट्ठाति, कसिणदोसो पञ्ञायति। पटिभागनिमित्तं पन

---

१. पुब्बेकतेति। पुब्बभवे आपोकसिणे कतपरिचयस्स।

२. लोणुदकेन भरितो जलासयो लोणी, तस्स लोणियं।

३. पथवीकसिणनिद्देसे (विसु० ४) वुत्तप्पकारे ठाने।

४. पथवीकसिणभावनायं वुत्तनयेनेव।

निप्परिनिप्फन्दं आकासे ठपितमणितालवण्ट[1] विय मणिमयादासमण्डल विय च हुत्वा उपट्ठाति। सो तस्स सह उपट्ठानेनेव उपचारज्झान, वुत्तनयेनेव चतुक्कपञ्चकज्झानानि च पापुणाती ति।

आपोकसिण ॥

तेजोकसिणकथा

५. तेजोकसिणं भावेतुकामेना पि तेजस्मि निमित्तं गण्हितब्ब। तत्थ कताधिकारम्म पुञ्ञवतो अकते निमित्त गण्हन्तस्स दीपसिखाय वा उद्धने वा पत्तपचनट्ठाने वा दवदाहे वा यत्थ कत्थचि अग्गिजाल ओलाकेन्तस्स निमित्त उप्पज्जति **चित्तगुत्तत्थेरस्स** विय। तस्स हायस्मतो धम्मस्सवनदिवसे उपोसथागार पविट्ठस्म दीपसिखं ओलोकेन्तस्सेव निमित्त उप्पज्जि।

६. इतरेन पन कातब्ब। तत्रिद करणविधान—सिनिद्धानि सारदारूनि[2] फालेत्वा सुक्खापेत्वा घटिक[3] घटिक कत्वा[3] पटिरूप रुक्खमूल वा मण्डप वा गन्त्वा पत्तपचनाकारेन रासि कत्वा आलिम्पेत्वा[4] कटसारके वा चम्मे वा पटे वा विदत्थिचतुरङ्गुलप्पमाणं छिद्द कातब्ब। त पुरतो ठपेत्वा वुत्तनयेनेव निसीदित्वा हेट्ठा तिणकट्ठ वा उपरि धूमसिख वा अमनसिकरित्वा वेमज्झे घनजालाय निमित्तं गण्हितब्बं। नील ति वा, पीत ति वा ति आदिवसेन वण्णो न पच्चवेक्खितब्बो। उण्हत्तवसेन लक्खण न मनसि कातब्ब। निस्सयसवण्णमेव कत्वा उस्सदवसेन पण्णत्तिधम्मे चित्त ठपेत्वा पावको, कण्हवत्तनी, जातवेदो, हुतासनो ति आदीसु अग्गिनामेसु पाकटनामवसेनेव "तेजो, तेजो" ति भावेतब्ब।

७ तस्सेव भावयतो अनुक्कमेन वुत्तनयेनेव निमित्तद्वयं उप्पज्जति। तत्थ उग्गहनिमित्त जाल छिज्जित्वा छिज्जित्वा पतनसदिस हुत्वा उपट्ठाति। अकते गण्हन्तस्स पन कसिणदोसो पञ्ञायति, अलातखण्ड वा अङ्गारपिण्डो वा छारिका वा धूमो वा उपट्ठाति। पटिभागनिमित्तं निच्चल आकासे ठपितरत्तकम्बलखण्ड विय सुवण्णतालवण्ट विय कञ्चनत्थम्भो विय च उपट्ठाति। सो तस्स सह उपट्ठानेनेव उपचारज्झान, वुत्तनयेनेव चतुक्कपञ्चकज्झानानि पापुणाती ति।

तेजोकसिण ॥

वायोकसिणकथा

८ वायोकसिण भावेतुकामेना पि वायुस्मि निमित्तं गण्हितब्ब। त च खो दिट्ठवसेन वा फुट्ठवसेन वा।

---

१. मणिमयवीजनी। २. सारेति। येसं जाला चिरट्ठिता होति।
३-३. खण्डसो करित्वा। ४ आलिम्पेत्वा ति। जालेत्वा।

वुत्त हेत अट्ठकथासु—"वायोकसिण उग्गण्हन्तो वायुस्मि निमित्त गण्हाति, उच्छग्ग वा एरित समेरित उपलक्खेति, वेळुग्ग वा पे० रुक्खग्गं वा केसग्ग वा एरित समेरितं उपलक्खेति, कायस्मि वा फुट्ठ उपलक्खेती" ति। तस्मा समसीसट्ठित घनपत्त उच्छु वा वेळु वा रुक्ख वा चतुरङ्गुलप्पमाण घनकेसस्स पुरिसस्स सीस वा वातेन पहरियमान दिस्वा "अय वातो एतस्मि ठाने पहरती" ति सति ठपेत्वा, यं वा पनस्स वातपानन्तरिकाय वा भित्तिछिद्देन वा पविसित्वा वातो कायप्पदेस पहरति, तत्थ सति ठपेत्वा वात-मालुत-अनिलादीसु वायुनामेसु पाकटनामवसेनेव "वातो वातो" ति भावेतब्ब। इध उग्गहनिमित्तवड्ढनतो ओतारितमत्तस्स पायासस्स उसुमवट्टिसदिस चलं हुत्वा उपट्ठाति। पटिभागनिमित्त सन्निसिन्न होति निच्चल। सेस वुत्तनयेनेव वेदितब्ब ति।

वायोकसिण ॥

नीलकसिणकथा

९ तदनन्तरं पन "नीलकसिणं उग्गण्हन्तो नीलकस्मि निमित्तं गण्हाति पुप्फस्मि वा वत्थस्मि वा वण्णधातुया वा" ति वचनतो कताधिकारस्स पुञ्ञवतो ताव तथारूप मालागच्छ वा पूजाठानेसु पुप्फसन्थर वा नीलवत्थमणीन वा अञ्ञतरं दिस्वा व निमित्त उप्पज्जति। इतरेन नीलुप्पलगिरिकण्णिकादीनि पुप्फानि गहेत्वा यथा केसर वा वण्टं वा न पञ्ञायति, एवं चङ्गोटक[1] वा करण्डपटलं वा पत्तेहि येव समतित्तिक पूरेत्वा सन्थरितब्ब। नीलवण्णेन वा वत्थेन भण्डिकं बन्धित्वा पूरेतब्ब। मुखवट्टिय वा अस्स भेरितलमिव बन्धितब्ब। कंसनील-पलासनील-अञ्जननीलान वा अञ्ञतरेन धातुना पथवीकसिणे वुत्तनयेन संहारिमं वा भित्तियं येव वा कसिणमण्डल कत्वा विसभागवण्णेन परिच्छिन्दितब्ब। ततो पथवीकसिणे वुत्तनयेन "नील नीलं" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। इधापि उग्गहनिमित्ते कसिणदोसो पञ्ञायति, केसरदण्डकपत्तन्तरिकादीनि उपट्ठहन्ति। पटिभागनिमित्त कसिणमण्डलतो मुञ्चित्वा आकासे मणितालवण्टसदिस[2] उपट्ठाति। सेसं वुत्तनयेनेव वेदितब्ब ति।

नीलकसिण ॥

पीतकसिणकथा

१० पीतकसिणे पि एसेव नयो। वुत्तं हेत—"पीतकसिणं उग्गण्हन्तो पीतकस्मि निमित्त गण्हाति पुप्फस्मि वा वत्थस्मि वा वण्णधातुया वा" ति।

---

१. चङ्गोटक ति। करण्डकविसेसं।

२. मणितालवण्टं ति। इन्दनीलमणिमय तालवण्टं।

तस्मा इधा पि कताधिकारस्स पुञ्ञवतो तथारूप मालागच्छं वा पुप्फसन्थरं वा पीतवत्थधातूनं वा अञ्ञतर दिस्वा व निमित्तं उप्पज्जति चित्तगुत्तत्थेरस्स विय। तस्स किरायस्मतो चित्तलपब्बते पतङ्गपुप्फेहि कत आसनपूज पस्सतो सह दस्सनेनेव आसनप्पमाण निमित्त उदपादि। इतरेन कणिकारपुप्फादिना वा पीतवत्थेन वा धातुना वा नीलकसिणे वुत्तनयेनेव कसिण कत्वा "पीतक, पीतक" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। सेस तादिसमेवा ति॥

पीतकसिणं॥

लोहितकसिणकथा

११ लोहितकसिणे पि एसेव नयो। वुत्तं हेत—"लोहितकसिण उग्गण्हतो लोहितकस्मि निमित्त गण्हाति पुप्फस्मि वा वत्थस्मि वा वण्णधातुया वा" ति। तस्मा इधा पि कताधिकारस्स पुञ्ञवतो तथारूपं बन्धुजीवकादिमालागच्छ वा पुप्फसन्थर वा लोहितकवत्थमणिधातून अञ्ञतर दिस्वा व निमित्तं उप्पज्जति। इतरेन जयसुमन-बन्धुजीवक-रत्तकोरण्डकादिपुप्फेहि वा रत्तवत्थेन वा धातुना वा नीलकसिणे वुत्तनयेनेव कसिण कत्वा "लोहितक, लोहितकं" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। सेस तादिसमेवा ति॥

लोहितकसिणं॥

ओदातकसिणकथा

१२. ओदातकसिणे पि "ओदातकसिण उग्गण्हन्तो ओदातस्मि निमित्त गण्हाति पुप्फस्मि वा वत्थस्मि वा वण्णधातुया वा" ति वचनतो कताधिकारस्स ताव पुञ्ञवतो तथारूप मालागच्छ वा वस्सिकसुमनादिपुप्फसन्थरं वा कुमुद-पदुमरासि वा ओदातवत्थधातून वा अञ्ञतर दिस्वा व निमित्त उप्पज्जति, तिपुमण्डल-रजतमण्डल-चन्दमण्डलेसु पि उप्पज्जति येव। इतरेन वुत्तप्पकारेहि ओदातपुप्फेहि वा ओदातवत्थेन वा धातुना वा नीलकसिणे वुत्तनयेनव कसिण कत्वा "ओदातं, ओदातं" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। सेस तादिसमेवा ति॥

ओदातकसिणं॥

आलोककसिणकथा

१३ आलोककसिणे पन "आलोककसिण उग्गण्हन्तो आलोकस्मि निमित्त गण्हाति भित्तिछिद्दे वा तालच्छिद्दे वा वातपानन्तरिकाय वा" ति वचनतो कताधिकारस्स ताव पुञ्ञवतो य भित्तिछिद्दादीन अञ्ञतरेन सुरियालोको वा चन्दालोको वा पविसित्वा भित्तिय वा भूमियं वा मण्डल समुट्ठापेति, घनपण्ण-रुक्खसाखन्तरेन वा घनसाखामण्डपन्तरेन वा निक्खमित्वा भूमियमेव मण्डलं समुट्ठापेति, तं दिस्वा व निमित्तं उप्पज्जति। इतरेना पि तदेव वुत्तप्पकारं

ओभासमण्डलं "ओभासो, ओभासो" ति वा "आलोको, आलोको" ति वा भावेतब्बं। तथा असक्कोन्तेन घटे दीपं जालेत्वा घटमुखं पिदहित्वा घटे छिद्दं कत्वा भित्तिमुखं ठपेतब्बं। तेन छिद्देन दीपालोको निक्खमित्वा भित्तियं मण्डलं करोति, तं आलोको आलोको ति भावेतब्बं। इदं इतरेहि चिरट्ठितिकं होति। इध उग्गहनिमित्तं भित्तिया वा भूमियं वा उट्ठितमण्डलसदिसमेव होति। पटिभागनिमित्तं घनविप्पसन्नं आलोकपुञ्जसदिसं। सेसं तादिसमेवा ति।

आलोककसिणं ॥

परिच्छिन्नाकासकसिणकथा

१४. परिच्छिन्नाकासकसिणे पि "आकासकसिणं उग्गण्हन्तो आकासस्मिं निमित्तं गण्हाति भित्तिछिद्दे वा ताळच्छिद्दे[1] वा वातपानन्तरिकाय वा" ति वचनतो कताधिकारस्स ताव पुञ्ञवतो भित्तिछिद्दादीसु अञ्ञतरं दिस्वा व निमित्तं उप्पज्जति। इतरेन सुच्छन्नमण्डपे वा चम्मकटसारकादीनं वा अञ्ञतरस्मिं विदत्थिचतुरङ्गुलप्पमाणं छिद्दं कत्वा तदेव वा भित्तिछिद्दादिभेदं छिद्दं "आकासो, आकासो" ति भावेतब्बं। इध उग्गहनिमित्तं सद्धिं भित्तिपरियन्तादीहि छिद्दसदिसमेव होति, वड्ढियमानं पि न वड्ढति। पटिभागनिमित्तं आकासमण्डलमेव हुत्वा उपट्ठाति, वड्ढियमानं च वड्ढति। सेसं पथवीकसिणे वुत्तनयेनेव वेदितब्बं ति।

परिच्छिन्नाकासकसिणं ॥

इति कसिणानि दसबलो दस यानि अवोच सब्बधम्मदसो।
रूपावचरम्हि चतुक्कपञ्चकज्झानहेतूनि ॥

पकिण्णककथा[2]

एवं तानि च तेसं च भावनानयमिमं विदित्वान।
तेस्वेव अयं भिय्यो पकिण्णककथा पि विञ्ञेय्या ॥

१५. इमेसु हि **पथवीकसिणवसेन** एको पि हुत्वा बहुधा होती ति आदिभावो, आकासे वा उदके वा पथविं निम्मिनित्वा पदसा गमनं, ठाननिसज्जादिकप्पनं वा, परित्तअप्पमाणनयेन अभिभायतनपटिलाभो ति एवमादीनि इज्झन्ति।

१६. **आपोकसिणवसेन** पथवियं उम्मुज्जननिमुज्जनं, उदकवुट्ठिसमुप्पादनं, नदीसमुद्दादिनिम्मानं, पथवीपब्बतपासादादीनं कम्पनं ति एवमादीनि इज्झन्ति।

---

१. ताळच्छिद्दे ति। कुञ्चिकाछिद्दे। २. एतेसु कसिणेसु असाधारणं साधारणं च कथं एकट्ठं कत्वा या कथा सा **पकिण्णककथा**।

१७ **तेजोकसिणवसेन** धूमायना[1], पज्जलना, अङ्गारवुट्ठिसमुप्पादनं, तेजसा तेजोपरियादानं, यदेव सो इच्छति तस्स डहनसमत्थता, दिब्बेन चक्खुना रूपदस्सनत्थाय आलोककरणं, परिनिब्बानसमये तेजोधातुया सरीरज्झापन ति एवमादीनि इज्झन्ति।

१८ **वायोकसिणवसेन** वायुगतिगमन[2], वातवुट्ठिसमुप्पादन ति एवमादीनि इज्झन्ति।

१९. **नीलकसिणवसेन** नीलरूपनिम्मानं, अन्धकारकरण, सुवण्णदुब्बण्णनयेन अभिभायतनपटिलाभो, सुभविमोक्खाधिगमो ति एवमादीनि इज्झन्ति।

२० **पीतकसिणवसेन** पीतकरूपनिम्मान, सुवण्ण ति अधिमुच्चना, वुत्तनयेनेव[3] अभिभायतनपटिलाभो, सुभविमोक्खाधिगमो चा ति एवमादीनि इज्झन्ति।

२१. **लोहितकसिणवसेन** लोहितकरूपनिम्मानं, वुत्तनयेनेव अभिभायतनपटिलाभो, सुभविमोक्खाधिगमो ति एवमादीनि इज्झन्ति।

२२. **ओदातकसिणवसेन** ओदातरूपनिम्मानं, थीनमिद्धस्स दूरभावकरणं, अन्धकारविधमनं दिब्बेन चक्खुना रूपदस्सनत्थाय आलोककरणं ति एवमादीनि इज्झन्ति।

२३ **आलोककसिणवसेन** सप्पभारूपनिम्मानं थीनमिद्धस्स दूरभावकरण, अन्धकारविधमनं, दिब्बेन चक्खुना रूपदस्सनत्थं आलोककरणं ति एवमादीनि इज्झन्ति।

२४. **आकासकसिणवसेन** पटिच्छन्नान विवटकरणं, अन्तोपथवीपब्बतादीसु पि आकासं निम्मिनित्वा इरियापथकप्पन, तिरोकुड्डादीसु असज्जमानगमन ति एवमादीनि इज्झन्ति।

२५ सब्बानेव उद्धं अधो तिरिय अद्वयं अप्पमाण ति इम पभेद लभन्ति। वुत्त हेतं—"पथवीकसिणमेको सञ्जानाति। उद्धमधोतिरिय अद्वयमप्पमाण" ति आदि।

२६ तत्थ **उद्धं** ति उपरि गगनतलाभिमुखं। **अधो** ति हेट्ठाभूमितलाभिमुखं। **तिरियं** ति। खेत्तमण्डलमिव समन्ता परिच्छिन्दित। एकच्चो हि उद्धमेव कसिण वड्ढेति, एकच्चो अधो, एकच्चो समन्ततो। तेन तेन वा कारणेन एवं पसारेति, आलोकमिव दिब्बचक्खुना रूपदस्सनकामो। तेन वुत्तं उद्धमधो-

---

१ धूमायना ति। धूमस्स उप्पादनं। २. वायुगतिगमन ति। अतिसीघगमन।
३ वुत्तनयेना ति। सुवण्णदुब्बण्णनयेन।

तिरिय ति। **अद्वयं** ति। इद पन एकस्स अञ्ञभावानुपगमनत्थ वुत्त। यथा हि उदकं पविट्ठस्स सब्बदिसासु उदकमेव होति, न अञ्ञ, एवमेव पथवीकसिण पथवीकसिणमेव होति, नत्थि तस्स अञ्ञो कसिणसम्भेदो ति। एसेव नयो सब्बत्थ। **अप्पमाणं** ति। इद तस्स फरणअप्पमाणवसेन वुत्त। तं हि चेतसा फरन्तो सकलमेव फरति। न 'अयमस्स आदि, इदं मज्झ' ति पमाण गण्हाती ति।

२७ ये च ते सत्ता कम्मावरणेन वा समन्नागता, किलेसावरणेन वा समन्नागता, विपाकावरणेन वा समन्नागता अस्सद्धा अच्छन्दिका दुप्पञ्ञा अभब्बा नियाम ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्त ति वुत्ता, तेसमेकस्सापेककसिणे पि भावना न इज्झति।

२८. तत्थ **कम्मावरणेन समन्नागता** ति। आनन्तरियकम्मसमङ्गिनो। **किलेसावरणेन समन्नागता** ति। नियतमिच्छादिट्ठिका[1] चेव उभतोब्यञ्जनकपण्डका च। **विपाकावरणेन समन्नागता** ति। अहेतुकपटिसन्धिका। **अस्सद्धा** ति। बुद्धादीसु सद्धाविरहिता। **अच्छन्दिका** ति। अपच्चनीकपटिपदाय छन्दविरहिता। **दुप्पञ्ञा** ति। लोकियलोकुत्तरसम्मादिट्ठिया विरहिता। **अभब्बा नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं** ति। कुसलेसु धम्मेसु[2] नियामसङ्खात सम्मत्तसङ्खात च अरियमग्गं ओक्कमितु[3] अभब्बा ति अत्थो। न केवल च कसिणे येव, अञ्ञेसु पि कम्मट्ठानेसु एतेस एकस्स पि भावना न इज्झति। तस्मा विगतविपाकावरणेन पि कुलपुत्तेन कम्मावरण च किलेसावरण च आरका परिवज्जेत्वा सद्धम्मस्सवनसप्पुरिसूपनिस्सयादीहि सद्ध च छन्द च पञ्ञ[4] च वड्ढेत्वा कम्मट्ठानानुयोगे योगो करणीयो ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे समाधिभावनाधिकारे
सेसकसिणनिद्देसो नाम पञ्चमो परिच्छेदो।



१. अहेतुकदिट्ठि, अकिरियदिट्ठि, नत्थिकदिट्ठीति तीसु मिच्छादिट्ठीसु याय कायचि नियताय मिच्छादिट्ठिया समन्नागता।

२. कुसलेसु धम्मेसू ति। अनवज्जधम्मेसु, सुखविपाकधम्मेसु वा।

३. ओक्कमितु ति। अधिगन्तुं। ४ पञ्ञं ति। पारिहारियपञ्ञं।

असुभकम्मट्ठाननिद्देसो

छट्ठो परिच्छेदो

उद्धुमातकादिपदत्थानि

१ कसिणानन्तरं उद्दिट्ठेसु पन उद्धुमातकं, विनीलकं, विपुब्बकं, विच्छिद्दकं, विक्खायितकं, विक्खित्तकं, हतविक्खित्तकं, लोहितकं, पुळवकं, अट्ठिकं ति दससु अविञ्ञाणकासुभेसु भस्ता विय वायुना उद्धं जीवितपरियादाना यथानुक्कमं समुग्गतेन सूनभावेन[1] उद्धुमातत्ता[2] उद्धुमातं, उद्धुमातमेव **उद्धुमातकं**। पटिक्कूलत्ता वा कुच्छितं उद्धुमातं ति उद्धुमातकं। तथारूपस्स छवसरीरस्सेतं अधिवचनं।

२. विनीलं वुच्चति विपरिभिन्ननीलवण्णं, विनीलमेव **विनीलकं**। पटिक्कूलत्ता वा कुच्छितं विनीलं ति **विनीलकं**। मंसुस्सदट्ठानेसु रत्तवण्णस्स, पुब्बसन्निच्चयट्ठानेसु सेतवण्णस्स येभुय्येन च नीलवण्णस्स, नीलट्ठाने नीलसाटकपारुतस्सेव छवसरीरस्सेतं अधिवचनं।

३ परिभिन्नट्ठानेसु विस्सन्दमानं पुब्बं विपुब्बं, विपुब्बमेव **विपुब्बकं**। पटिक्कूलत्ता वा कुच्छितं विपुब्बं ति विपुब्बकं। तथारूपस्स छवसरीरस्सेतं अधिवचनं।

४ विच्छिद्दं वुच्चति द्विधा छिन्दनेन अपवारितं[3], विच्छिद्दमेव **विच्छिद्दकं**। पटिक्कूलत्ता वा कुच्छितं विच्छिद्दं ति विच्छिद्दकं। वेमज्झे छिन्नस्स छवसरीरस्सेतं अधिवचनं।

५. इतो च एत्तो च विविधाकारेन सोणसिङ्गालादीहि खायितं ति विक्खायितं, विक्खायितमेव **विक्खायितकं**। पटिक्कूलत्ता वा कुच्छितं विक्खायितं ति विक्खायितकं। तथारूपस्स छवसरीरस्सेतं अधिवचनं।

६ विविधं खित्तं विक्खित्तं, विक्खित्तमेव **विक्खित्तकं**। पटिक्कूलत्ता वा कुच्छितं विक्खित्तं ति विक्खित्तकं। अञ्ञेन हत्थं अञ्ञेन पादं अञ्ञेन सीसं ति एवं ततो ततो खित्तस्स छवसरीरस्सेतं अधिवचनं।

७ हतं च तं पुरिमनयेनेव विक्खित्तकं चा ति **हतविक्खित्तकं**। काकपदाकारेन अङ्गपच्चङ्गेसु सत्थेन हनित्वा वुत्तनयेन विक्खित्तस्स छवसरीरस्सेतं अधिवचनं।

---

१. परं मरणा सरीरस्स उग्गतभावेन। २. उद्धं धुमातत्ता, धमित्वा वड्ढितभस्ताय सदिसत्ता। ३ विवटं, उग्घाटितं। (अपावृतम्)।

८. लोहितं किरति विक्खिरति इतो चितो च पग्घरती ति **लोहितकं**। पग्घरितलोहितमक्खितस्स छवसरीरस्सेत अधिवचन।

९ पुळवा वुच्चन्ति किमयो। पुळवे किरती ति **पुळवकं**। किमिपरिपुण्णस्स छवसरीरस्सेत अधिवचनं।

१० अट्ठि येव **अट्ठिकं**। पटिक्कूलत्ता वा कुच्छित अट्ठी ति अट्ठिक। अट्ठिमङ्खलिकाय पि एकट्ठिकस्स पि एतं अधिवचनं।

इमानि च पन उद्धुमातकादीनि निस्साय उप्पन्ननिमित्तान पि निमित्तेसु पटिलद्धज्झानान पि एतानेव नामानि।

उद्धुमातकभावनाविधानं

११ तत्थ उद्धुमातकसरीरे उद्धुमातकनिमित्त उप्पादेत्वा उद्धुमातकसङ्खात झान भावेतुकामेन योगिना पथवीकसिणे वुत्तनयेनेव वुत्तप्पकार आचरिय उपसङ्कमित्वा कम्मट्ठान उग्गहेतब्ब। तेनस्स कम्मट्ठान कथेन्तेन असुभनिमित्तत्थाय गमनविधान, समन्ता निमित्तुपलक्खण एकादसविधेन निमित्तग्गाहो, गतागतमग्गपच्चवेक्खणं ति एव अप्पनाविधानपरियोसान सब्ब कथेतब्ब। तेनापि सब्ब साधुक उग्गहेत्वा पुब्बे वुत्तप्पकार सेनासन उपगन्त्वा उद्धुमातकनिमित्त परियेसन्तेन विहातब्ब।

१२ एव विहरन्तेन च 'असुकस्मि नाम गामद्वारे वा अटविमुखे वा पन्थे वा पब्बतपादे वा रुक्खमूले वा सुसाने वा उद्धुमातकसरीरं निक्खित्त' ति कथेन्तान वचन सुत्वा पि न तावदेव अतित्थेन पक्खन्दन्तेन विय गन्तब्बं।

कस्मा ? असुभ हि नामेत वाळमिगाधिट्ठितं पि अमनुस्साधिट्ठित पि होति। तत्रस्स जीवितन्तरायो पि सिया। गमनमग्गो वा पनेत्थ गामद्वारेन वा न्हानतित्थेन वा केदारकाटिया[1] वा होति। तत्थ विसभागरूप आपाथमागच्छति, तदेव वा सरीरं विसभागं होति। पुरिसस्स हि इत्थिसरीरं, इत्थिया च पुरिससरीरं विसभागं, तदेतं अधुनामतं[2] सुभतो पि उपट्ठाति, तेनस्स ब्रह्मचरियन्तरायो पि सिया। सचे पन "नयिदं मादिसस्स भारियं" ति अत्तानं तक्कयति, एव तक्कयमानेन गन्तब्बं।

१३. गच्छन्तेन च सङ्घत्थेरस्स वा अञ्ञतरस्स वा अभिञ्ञातस्स भिक्खुनो कथेत्वा गन्तब्बं। कस्मा ? सचे हिस्स सुसाने अमनुस्ससीहब्यग्घादीनं रूपसद्दादिअनिट्ठारम्मणाभिभूतस्स अङ्गपच्चङ्गानि वा पवेधेन्ति भुत्तं वा न परिसण्ठाति, अञ्ञो वा आबाधो होति, अथस्स सो विहारे पत्तचीवरं सुरक्खितं करिस्सति। दहरे वा सामणेरे वा पहिणित्वा तं भिक्खुं पटिजग्गिस्सति।

---

१ केदारकोटिया ति। केदारमरियादाय। २. अधुनामत ति। अचिरमतं।

अपि च 'सुसानं नाम निरासङ्कट्ठानं' ति मञ्ञमाना कतकम्मा[1] पि अकतकम्मा[2] पि चोरा समोसरन्ति। ते मनुस्सेहि अनुबद्धा भिक्खुस्स समीपे भण्डकं छड्डेत्वा पि पलायन्ति। मनुस्सा "सहोड्ढ[3] चोर अदस्सामा" ति भिक्खु गहेत्वा विहेठेन्ति। अथस्स सो "मा इमं विहेठयित्थ, ममायं कथेत्वा इमिना नाम कम्मेन गतो" ति ते मनुस्से सञ्ञापेत्वा सोत्थिभाव करिस्सति। अयं आनिससो कथेत्वा गमने।

तस्मा वुत्तप्पकारस्स भिक्खुनो कथेत्वा असुभनिमित्तदस्सने सञ्जाताभिलासेन, यथा नाम खत्तियो अभिसेकट्ठान, यजमानो यञ्ञसालं, अधनो वा पन निधिट्ठान पीतिमोमनस्सजातो गच्छति, एवं पीतिसोमनस्सं उप्पादेत्वा **अट्ठकथासु** वुत्तेन विधिना गन्तब्ब।

१४. वुत्त हेतं—

"उद्धुमातकं असुभनिमित्तं उग्गण्हन्तो एको अदुतियो गच्छति, उपट्ठिताय सतिया असम्मुट्ठाय अन्तोगतेहि इन्द्रियेहि अबहिगतेन मानसेन, गतागतमग्गं पच्चवेक्खमानो। यस्मिं पदेसे उद्धुमातक असुभनिमित्त निक्खित्तं होति, तस्मिं पदेसे पासाण वा वम्मिक वा रुक्खं वा गच्छं वा लतं वा सनिमित्तं करोति, सारम्मणं करोति। सनिमित्तं कत्वा सारम्मण कत्वा उद्धुमातकं असुभनिमित्तं सभावभावतो उपलक्खेति, वण्णतो पि लिङ्गतो पि सण्ठानतो पि दिसतो पि ओकासतो पि परिच्छेदतो पि सन्धितो विवरतो निन्नतो थलतो समन्ततो। सो तं निमित्त सुग्गहितं करोति, सूपधारितं उपधारेति, सुववत्थितं ववत्थपेति। सो त निमित्त सुग्गहित कत्वा सूपधारित उपधारेत्वा सुववत्थितं ववत्थपेत्वा एको अदुतियो गच्छति उपट्ठिताय सतिया असम्मुट्ठाय अन्तोगतेहि इन्द्रियेहि अबहिगतेन मानसेन गतागतमग्ग पच्चवेक्खमानो। सो चङ्कमन्तो पि तब्भागियं येव[4] चङ्कमं अधिट्ठाति। निसीदन्तो पि तब्भागियञ्ञेव आसनं पञ्ञपेति।

समन्ता निमित्तुपलक्खणा किमत्थिया किमानिसंसा ति? समन्ता निमित्तुपलक्खणा असम्मोहत्था असम्मोहानिसंसा। एकादसविधेन निमित्तग्गाहो किमत्थियो किमानिससो ति? एकादसविधेन निमित्तग्गाहो उपनिबन्धनत्थो उपनिबन्धनानिससो। गतागतमग्गपच्चवेक्खणा किमत्थिया किमानिसंसा ति? गतागतमग्गपच्चवेक्खणा वीथिसम्पटिपादनत्था वीथिसम्पटिपादनानिससा।

---

१ कतकम्मा ति। कतथेय्यकम्मा। २. अकतकम्मा ति। थेय्यकम्मं कातुकामा।
३. सह ओड्ढेना ति। सहोड्ढं, थेनेत्वा गहियमानभण्डेन सद्धिं ति अत्थो।
४ तब्भागियं येवा ति। तप्पक्खिय येव। असुभनिमित्तमनसिकारसहितमेव।

सो आनिसंसदस्सावी रतनसञ्ञी हुत्वा चित्तीकारं उपट्ठपेत्वा सम्पियायमानो तस्मिं आरम्मणे चित्तं उपनिबन्धति—'अद्धा इमाय पटिपदाय जरामरणम्हा परिमुच्चिस्सामी' ति। सो विविच्चेव कामेहि पे० पठमं झान उपसम्पज्ज विहरति। तस्साधिगत होति रूपावचरं पठम झान, दिब्बो च विहारो, भावनामयं च पुञ्ञकिरियवत्थु" (   ) ति।

१५. तस्मा यो चित्तसञ्ञत्तत्थाय सिवथिकदस्सनं गच्छति, सो घण्टिं पहरित्वा गण सन्निपातेत्वा पि गच्छतु। कम्मट्ठानमीसेन[1] पन गच्छन्तेन एककेन अदुतियेन मूलकम्मट्ठानं अविस्सज्जेत्वा त मनसिकरोन्तेनेव सुसाने सोणादि-परिस्सयविनोदनत्थं कत्तरदण्डं वा यट्ठिं वा गहेत्वा, सूपट्ठितभावसम्पादनेन असम्मुट्ठं सतिं कत्वा मनच्छट्ठानं च इन्द्रियान अन्तोगतभावसम्पादनतो अबहिगतमनेन हुत्वा गन्तब्बं।

१६ विहारतो निक्खमन्तेनेव 'असुकदिसाय असुकद्वारेन निक्खन्तोम्ही' ति द्वारं सल्लक्खेतब्ब। ततो येन मग्गेन गच्छति, सो मग्गो ववत्थपेतब्बो 'अय मग्गो पाचीनदिसाभिमुखो वा गच्छति, पच्छिम०उत्तर०दक्खिणदिसाभिमुखो वा विदिसा-भिमुखो वा' ति। 'इमस्मिं पन ठाने वामतो गच्छति, इमस्मिं ठाने दक्खिणतो, इमस्मिं चस्स ठाने पासाणो, इमस्मिं वम्मिको, इमस्मिं रुक्खो, इमस्मिं गच्छो, इमस्मिं लता' ति एव गमनमग्गं ववत्थपेन्तेन निमित्तट्ठान गन्तब्बं, नो च खो पटिवात। पटिवात गच्छन्तस्स हि कुणपगन्धो घान पहरित्वा मत्थलुङ्ग वा सङ्खोभेय्य, आहार वा छड्डापेय्य[2], विप्पटिसारं वा जनेय्य 'ईदिस नाम कुणपट्ठान आगतोम्ही' ति। तस्मा पटिवातं वज्जेत्वा अनुवातं गन्तब्ब। सचे अनुवातमग्गेन न सक्का होति गन्तु, अन्तरा पब्बतो वा पपातो वा पासाणो वा वति वा कण्ट-कट्ठानं[3] वा उदक वा चिक्खल्ल वा होति, चीवरकण्णेन नास पिदहित्वा गन्तब्बं। इदमस्स गमनवत्त।

१७ एव गतेन पन न ताव असुभनिमित्त ओलोकेतब्ब। दिसा ववत्थपेतब्बा। एकस्मिं हि दिसाभागे ठितस्स आरम्मण च न विभूत हुत्वा खायति, चित्त च न कम्मनिय होति। तस्मा त वज्जेत्वा यत्थ ठितस्स आरम्मण च विभूतं हुत्वा खायति, चित्त च कम्मनिय होति, तत्थ ठातब्ब। पटिवातानुवात च पहातब्बं। पटिवाते ठितस्स हि कुणपगन्धेन उब्बाळ्हस्स चित्त विधावति। अनुवाते ठितस्स सचे तत्थ अधिवत्था अमनुस्सा होन्ति, ते कुज्झित्वा अनत्थं करोन्ति। तस्मा ईसक उक्कम्म[4] नातिअनुवाते ठातब्बं।

---

१ कम्मट्ठानेन सीसभूतेन, तं उत्तमङ्गं पधानं कारणं कत्वा।

२. आहारं छड्डापेय्या ति। वमन कारापेय्य। ३. कण्टकवन्तं ठान।

४. उक्कम्मा ति। उजुकं अनुवाततो अपक्कम्म।

एव तिट्ठमानेना पि नातिदूरे नाच्चासन्ने नानुपादं नानुसीस ठातब्बं। अतिदूरे ठितस्स हि आरम्मण अविभूत होति। अच्चासन्ने भय उप्पज्जति। अनुपाद वा अनुसीस वा ठितस्स सब्ब असुभं सम न पञ्ञायति। तस्मा नातिदूरे नाच्चासन्ने ओलोकेन्तस्स फासुकट्ठाने सरीरवेमज्झभागे ठातब्ब।

१८. एव ठितेन "तस्मिं पदेसे पासाण वा · पे॰ लत वा सनिमित्त करोती" ति एवं वुत्तानि समन्ता[1] निमित्तानि उपलक्खेतब्बानि। तत्रिद उपलक्खण-विधान—सचे तस्स निमित्तस्स समन्ता[2] चक्खुपथे पासाणो होति, सो अय पासाणो उच्चो वा नीचो वा, खुद्दको वा महन्तो वा, तम्बो वा काळो वा सेतो वा दीघो वा परिमण्डलो वा ति ववत्थपेतब्बो। ततो इमस्मिं नाम ओकासे अय पासाणो इद असुभनिमित्त, इद असुभनिमित्त अय पासाणो ति सल्लक्खेतब्ब।

सचे वम्मिको होति, सो पि उच्चो वा नीचो वा, खुद्दको वा महन्तो वा, तम्बो वा काळो वा सेतो वा, दीघो वा परिमण्डलो वा ति ववत्थपेतब्बो। ततो इमस्मिं नाम ओकासे अय वम्मिको इद असुभनिमित्त ति सल्लक्खेतब्ब।

सचे रुक्खो होति, सो पि अस्सत्थो वा निग्रोधो वा कच्छको वा कपीतनो वा उच्चो वा नीचो वा, खुद्दको वा महन्तो वा, तम्बो वा काळो वा सेतो वा ति ववत्थपेतब्बो। ततो इमस्मिं नाम ओकासे अय रुक्खो इद असुभनिमित्तं ति सल्लक्खेतब्ब।

सचे गच्छो होति, सो पि सिन्दि[3] वा करमन्दो वा कणवीरो वा कुरण्डको वा उच्चो वा नीचो वा, खुद्दको वा महन्तो वा ति ववत्थपेतब्बो। ततो इमस्मिं नाम ओकासे अय गच्छो इद असुभनिमित्त ति सल्लक्खेतब्ब।

सचे लता होति, सा पि लाबु वा कुम्भण्डी वा सामा वा काळवल्लि[4] वा पूतिलता वा ति ववत्थपेतब्बा। ततो इमस्मिं नाम ओकासे अय लता इद असुभ-निमित्तं, इदं असुभनिमित्त अय लता ति सल्लक्खेतब्बं।

१९. य पन वुत्तं 'सनिमित्त करोति सारम्मण करोती' ति, त इधेव अन्तोगधं। पुनप्पुन ववत्थपेन्तो हि सनिमित्त करोति नाम। 'अय पासाणो इद असुभनिमित्तं', 'इदं असुभनिमित्तं अयं पासाणो' ति एवं द्वे द्वे समासेत्वा समासेत्वा ववत्थपेन्तो सारम्मणं करोति नाम।

एवं सनिमित्तं सारम्मणं च कत्वा पन **सभावभावतो ववत्थपेती** ति वुत्तत्ता य्वास्स सभावभावो अनञ्ञसाधारणो अत्तनियो उद्धुमातकभावो, तेन मनसिकातब्ब। वणित उद्धुमातक ति एव सभावेन सरसेन ववत्थपेतब्ब ति अत्थो।

१ समन्ता ति। समन्ततो। २. समन्ता ति। सामन्ता, समीपे।

३. सिन्दी ति। खुद्दकखज्जुरी।

४ काळवल्ली ति। काळवण्णा अपत्तिका एका लताजाति। पूतिलता ति। जीवनवल्लि।

२० एवं ववत्थपेत्वा १. वण्णतो पि २ लिङ्गतो पि ३ सण्ठानतो पि ४. दिसतो पि ५. ओकासतो पि ६ परिच्छेदतो पी ति छब्बिधेन निमित्त गहेतब्ब।

कथ ? तेन हि यागिना इद सरीरं काळस्स वा ओदातस्स वा मङ्गुरच्छविनो वा ति **वण्णतो** ववत्थपेतब्ब।

लिङ्गता पन इत्थिलिङ्गं वा पुरिसलिङ्ग वा नि अववत्थपेत्वा, पठमवये वा मज्झिमवये वा पच्छिमवये वा ठितस्स इदं सरीरं ति ववत्थपेतब्बं।

सण्ठानतो उद्धुमातकस्स सण्ठानवसेनेव इदमस्स सीससण्ठान, इदं गीवासण्ठान, इद हत्थसण्ठान, इद उदरसण्ठान इद नाभिसण्ठान, इदं कटिसण्ठान, इदं ऊरुसण्ठानं, इदं जङ्घासण्ठान, इद पादसण्ठानं ति ववत्थपेतब्ब।

दिसतो पन 'इमस्मिं सरीरे द्वे दिसा—नाभिया अधो हेट्ठिमदिसा, उद्ध उपरिमदिसा' ति ववत्थपेतब्ब। अथ वा 'अहं इमिस्सा दिसाय ठितो, असुभनिमित्त इमिस्सा' ति ववत्थपेतब्ब।

ओकासतो पन 'इमस्मि नाम ओकासे हत्था, इमस्मिं पादा, इमस्मिं सीसं, इमस्मिं मज्झिमकायो ठितो' ति ववत्थपेतब्ब। अथ वा 'अह इमस्मिं ओकासे ठितो असुभनिमित्त इमस्मिं' ति ववत्थपेतब्बं।

परिच्छेदतो 'इद सरीरं अधो पादतलेन उपरि केसमत्थकेन तिरियं तचेन परिच्छिन्नं, यथापरिच्छिन्ने च ठाने द्वत्तिंसकुणपभरितमेवा' ति ववत्थपेतब्ब। अथ वा 'अयमस्स हत्थपरिच्छेदो, अयं पादपरिच्छेदो, अय सीसपरिच्छेदो, अयं मज्झिमकायपरिच्छेदो' ति ववत्थपेतब्बं। यत्तक वा पन ठान गण्हति, तत्तकमेव इदं ईदिस उद्धुमातक ति परिच्छिन्दितब्ब।

पुरिसस्स पन इत्थिसरीरं, इत्थिया वा पुरिससरीरं न वट्टति। विसभागे सरीरे आरम्मणं न उपट्ठाति, विप्फन्दनस्सेव पच्चयो होति। "उग्घाटिता[1] पि हि इत्थी पुरिसस्स चित्त परियादाय तिट्ठति" ति **मज्झिमट्ठकथायं** वुत्तं। तस्मा सभागसरीरे येव एव छब्बिधेन निमित्त गण्हितब्ब।

२१. यो पन पुरिमबुद्धान सन्तिके आसेवितकम्मट्ठानो परिहतधुतङ्गो परिमद्दितमहाभूतो परिग्गहितसङ्खारो ववत्थापितनामरूपो उग्घाटितसत्तसञ्ञो कतसमणधम्मो वासितवासनो भावितभावनो सबीजो ञाणुत्तरो अप्पकिलेसो कुलपुत्तो, तस्स ओलोकितोलोकितट्ठाने येव पटिभागनिमित्त उपट्ठाति। नो चे एवं उपट्ठाति, अथेवं छब्बिधेन निमित्त गण्हतो उपट्ठाति।

२२. यस्स पन एव पि न उपट्ठाति, तेन १ सन्धितो, २. विवरतो, ३. निन्नतो ४. थलतो, ५. समन्ततो ति पुन पि पञ्चविधेन निमित्त गहेतब्ब।

---

१. **उग्घाटिता** ति। सब्बसो कुथितसरीरा।

तत्थ **सन्धितो** ति। असीतिसतसन्धितो। उद्धुमातके पन कथं असीतिसतसन्धियो ववत्थपेस्सति? तस्मानेन तयो दक्खिणहत्थसन्धी, तयो वामहत्थसन्धी, तयो वामपादसन्धी, एको गीवसन्धि, एको कटिसन्धी ति एव चुद्दसमहासन्धिवसेन सन्धितो ववत्थपेतब्ब।

विवरतो ति। विवरं नाम हत्थन्तर[1] पादन्तर[2] उदरन्तर[3] कण्णन्तर[4] ति एवं विवरतो ववत्थपेतब्ब। अक्खीनं पि निम्मीलितभावो वा उम्मीलितभावो वा, मुखस्स च पिहितभावो वा विवटभावो वा ववत्थपेतब्बो।

निन्नतो ति। य सरीरे निन्नट्ठानं अक्खिकूपो वा अन्तोमुख वा गलवाटको वा, तं ववत्थपेतब्ब। अथ वा 'अह निन्ने ठितो, सरीर उन्नते' ति ववत्थपेतब्ब।

थलतो ति। यं सरीरे उन्नतट्ठान जण्णुक वा उरो वा नलाट वा, तं ववत्थपेतब्ब। अथ वा 'अह थले ठितो, सरीरं निन्ने' ति ववत्थपेतब्ब।

समन्ततो ति। सब्बं सरीरं समन्ततो ववत्थपेतब्बं। सकलसरीरे ञाणं य ठान विभूतं हुत्वा उपट्ठाति, तत्थ "उद्धुमातक उद्धुमानक" ति चित्त ठपेतब्ब। सचे एव पि न उपट्ठा त उदरपरियोसान अतिरेक उद्धुमातक होति, तत्थ "उद्धुमातक उद्धुमातकं" ति चित्त ठपेतब्बं।

विनिच्छियकथा

२३ इदानि **सो तं निमित्तं सुग्गहितं करोती** ति आदीसु अयं विनिच्छय**कथा**—

तेन योगिना तस्मि सरीरे यथावुननिमित्तग्गाहवसेन सुट्ठ निमित्त गण्हितब्बं, सतिं सूपट्ठित कत्वा आवज्जितब्ब, एवं पुनप्पुनं करोन्तेन साधुकं उपधारेतब्ब चेव ववत्थपेतब्बं च। सरीरतो नातिदूरे नाच्चासन्ने पदेसे ठितेन वा निसिन्नेन वा चक्खु उम्मालेत्वा ओलोकेत्वा निमित्त गण्हितब्ब। "उद्धुमातकपटिक्कूल उद्धुमातकपटिक्कूल" ति सतक्खत्तु सहस्सक्खत्तु उम्मीलेत्वा ओलोकेतब्बं, निमीलेत्वा आवज्जितब्बं।

एव पुनप्पुन करोन्तस्स उग्गहनिमित्तं सुग्गहित होति। कदा सुग्गहित होति? यदा उम्मीलेत्वा आलोकेन्तस्स निमीलेत्वा आवज्जेन्तस्स च एकसदिस हुत्वा आपाथ आगच्छति, तदा सुग्गहित नाम होति।

२४ सो त निमित्त एवं सुग्गहितं कत्वा सूपधारित उपधारेत्वा सुववत्थितं ववत्थपेत्वा सचे तत्थेव भावनापरियोसानं पत्तु न सक्कोति, अथानेन आगमन-

---

१ **हत्थन्तरं** ति। दक्खिणहत्थदक्खिणपस्सानं वामहत्थवामपस्सानं च अन्तरं विवरं।

२ **पादन्तरं** ति। उभिन्न पादानं वेमज्झं। ३ **उदरन्तरं** ति। नाभिट्ठानसङ्खितं कुच्छिवेमज्झ, उदरस्स वा अब्भन्तरं। ४. **कण्णन्तरं** ति। कण्णछिद्दं।

काले[1] वुत्तनयेनेव एककेन अदुतियेन तदेव कम्मट्ठानं मनसिकरोन्तेन सूपट्ठित सतिं कत्वा अन्तोगतेहि इन्द्रियेहि अबहिगतेन मानसेन अत्तनो सेनासनमेव गन्तब्बं।

सुसाना निक्खमन्तेनेव च आगमनमग्गो ववत्थपेतब्बो—'येन मग्गेन निक्खन्तोस्मि, अयं मग्गो पाचीनदिसाभिमुखो वा गच्छति, पच्छिम०उत्तर०दक्खिणदिसाभिमुखो वा गच्छति, विदिसाभिमुखो वा गच्छति, इमस्मिं पन ठाने वामतो गच्छति, इमस्मिं दक्खिणतो, इमस्मिं चस्स ठाने पासाणो, इमस्मिं वम्मिको, इमस्मिं रुक्खो, इमस्मिं गच्छो, इमस्मिं लता' ति। एवं आगमनमग्ग ववत्थपेत्वा आगतेन चङ्कमन्तेना पि तब्भागियो व चङ्कमो अधिट्ठातब्बो। असुभनिमित्तदिसाभिमुखे भूमिप्पदेसे चङ्कमितब्ब ति अत्थो। निसीदन्तेन आसनं पि तब्भागियमेव पञ्ञपेतब्बं। सचे पन तस्स दिसाय सोब्भो वा पपातो वा रुक्खो वा वति वा कलल वा होति, न सक्का तदिमाभिमुखे भूमिप्पदेसे चङ्कमितुं, आसन्नं पि अनोकासत्ता न सक्का पञ्ञपेतु। त दिस अनपलोकेन्तेना पि ओकासानुरूपं ठाने चङ्कमितब्बं चेव निसीदितब्ब च। चित्त पन तंदिसाभिमुखं येव कातब्ब।

२५ इदानि **समन्ता निमित्तुपलक्खणा किमत्थिया** ति आदिपञ्हानं **असम्मोहत्था** ति आदि विस्सज्जने अय अधिप्पायो—यस्स हि अवेलाय उद्धुमातकनिमित्तट्ठान गन्त्वा समन्ता निमित्तुपलक्खणं कत्वा निमित्तग्गहणत्थं चक्खु उम्मीलेत्वा ओलोकेन्तस्सेव त मतसरीर उट्ठहित्वा ठित विय अज्झात्थरमानं विय अनुबन्धमानं विय च हुत्वा उपट्ठाति, सो त बीभच्छ भेरवारम्मण दिस्वा विक्खित्तचित्तो उम्मत्तको विय होति, भयं छम्भितत्त लोमहस पापुणाति। पाळियं हि विभत्तअट्ठतिंसारम्मणेसु अञ्ञ एवरूप भेरवारम्मणं नाम नत्थि। इमस्मिं हि कम्मट्ठाने झानविब्भन्तको नाम होति। कस्मा? अतिभेरवत्ता कम्मट्ठानस्स। तस्मा तेन योगिना सन्थम्भित्वा सतिं सूपट्ठित कत्वा मतसरीर उट्ठहित्वा अनुबन्धकं नाम नत्थि। सचे हि सो "एतस्स समीपे ठितो पासाणो वा लता वा आगच्छेय्य, सरीरं पि आगच्छेय्य, यथा पन सो पासाणो वा लता वा नागच्छति, एवं सरीरं पि नागच्छति। अयं पन तुय्हं उपट्ठानाकारो सञ्ञजो सञ्ञासम्भवो, कम्मट्ठानं ते अज्ज उपट्ठितं, मा भायि, भिक्खू" ति तासं विनोदेत्वा हासं उप्पादेत्वा तस्मिं निमित्ते चित्त सञ्चरापेतब्ब। एव विसेसं अधिगच्छति। इदमेत सन्धाय वुत्त—"**समन्ता निमित्तुपलक्खणा असम्मोहत्था**" ति।

---

१ **आगमनकाले** ति। विहारतो सुसानं उद्दिस्स आगमनकाले।

२६. एकादसविधेन पन निमित्तग्गाहं सम्पादेन्तो कम्मट्ठानं उपनिबन्धति। तस्स[1] हि चक्खूनि उम्मीलेत्वा ओलोकनपच्चया उग्गहनिमित्तं उप्पज्जति, तस्मिं मानसं चारेन्तस्स पटिभागनिमित्तं उप्पज्जति। तत्थ मानसं चारेन्तो अप्पनं पापुणाति। अप्पनाय ठत्वा विपस्सनं वड्ढेन्तो अरहत्तं सच्छिकरोति। तेन वुत्तं—**एकादसविधेन निमित्तग्गाहो उपनिबन्धनत्थो** ति।

२७. **गतागतमग्गपच्चवेक्खणा वीथिसम्पटिपादनत्था** ति। एत्थ पन या गतमग्गस्स च आगतमग्गस्स च पच्चवेक्खणा वुत्ता, सा कम्मट्ठानवीथिया सम्पटिपादनत्था ति अत्था। सचे हि इमं भिक्खुं कम्मट्ठानं गहेत्वा आगच्छन्तं अन्तरामग्गे केचि 'अज्ज भन्ते कतिमो'[2] ति दिवसं वा पुच्छन्ति, पञ्हं वा पुच्छन्ति, पटिसन्थारं वा करोन्ति, 'अहं कम्मट्ठानिको' ति तुण्हीभूतेन गन्तुं न वट्टति। दिवसो कथेतब्बो। पञ्हो विस्सज्जेतब्बो। सचे न जानाति, 'न जानामी' ति वत्तब्बं। धम्मिको पटिसन्थारो कातब्बो। तस्सेवं करोन्तस्स उग्गहितं तरुणनिमित्तं नस्सति। तस्मिं नस्सन्ते पि दिवसं पुट्ठेन कथेतब्बमेव। पञ्हं अजानन्तेन 'न जानामी' ति वत्तब्बं। जानन्तेन एकदेसेन कथेतुं पि वट्टति। पटिसन्थारो पि कातब्बो। आगन्तुकं पन भिक्खुं दिस्वा आगन्तुकपटिसन्थारो कातब्बो व। अवसेसानि पि चेतियङ्गणवत्त-बोधियङ्गणवत्त-उपोसथागारवत्त-भोजनसाला-जन्ताघर-आचरियुपज्झाय-आगन्तुक गमिकवत्तादीनि सब्बानि खन्धकवत्तानि पूरेतब्बानेव। तस्स तानि पूरेन्तस्सा पि तं तरुणनिमित्तं नस्सति, 'पुन गन्त्वा निमित्तं गण्हिस्सामी' ति गन्तुकामस्सा पि अमनुस्सेहि वा वाळमिगेहि वा अधिट्ठितत्ता सुसानं पि गन्तुं न सक्का होति, निमित्तं वा अन्तरधायति। उद्धुमातकं हि एकमेव वा द्वे वा दिवसे ठत्वा विनीलकादिभावं गच्छति। सब्बकम्मट्ठानेसु एतेन समं दुल्लभं कम्मट्ठानं नाम नत्थि। तस्मा[3] एवं नट्ठे निमित्ते तेन भिक्खुना रत्तिट्ठाने वा दिवाठाने वा निसीदित्वा—'अहं इमिना नाम द्वारेन विहारा निक्खमित्वा असुकदिसाभिमुखं मग्गं पटिपज्जित्वा असुकस्मिं नाम ठाने वामं गण्हिं, असुकस्मिं दक्खिणं। तस्स असुकस्मिं ठाने पासाणो,असुकस्मिं वम्मिक-रुक्ख-गच्छ-लतानं अञ्ञतरं। सोहं तेन मग्गेन गन्त्वा असुकस्मिं नाम ठाने असुभं अद्दसं, तत्थ असुकदिसाभिमुखो ठत्वा एवं चेवं च समन्ता निमित्तानि सल्लक्खेत्वा एवं असुभनिमित्तं उग्गहेत्वा असुकदिसाय सुसानतो निक्खमित्वा एवरूपेन नाम मग्गेन इदं चिदं च करोन्तो आगन्त्वा इध निसन्नो' ति एवं याव पल्लङ्कं आभुजित्वा निसिन्नट्ठानं, ताव गतागतमग्गो पच्चवेक्खितब्बो। तस्सेवं पच्चवेक्खतो तं निमित्तं पाकटं होति, पुरतो

१. तस्सा ति। योगिनो। २. कतिमी ति। पक्खस्स कतमी, किं दुतिया, ततियादीसु वा अञ्ञतरा ति अत्थो। ३. तस्मा ति। तेन कारणेन।

निक्खित्तं विय उपट्ठाति। कम्मट्ठानं पुरिमाकारेनेव वीथिं पटिपज्जति। तेन वुत्तं—**गतागतमग्गपच्चवेक्खणा वीथिसम्पटिपादनत्था** ति।

२८. इदानि **आनिसंसदस्सावी रतनसञ्ञी हुत्वा चित्तीकारं उपट्ठपेत्वा सम्पियायमानो तस्मिं आरम्मणे चित्तं उपनिबन्धतो** ति। एत्थ उद्धुमातकपटिक्कूले मानसं चारेत्वा झानं निब्बत्तेत्वा झानपदट्ठानं विपस्सनं वड्ढन्तो "अद्धा इमाय पटिपदाय जरामरणम्हा परिमुच्चिस्सामो" ति एवं आनिसंसदस्साविना भवितब्बं।

यथा पन दुग्गतो पुरिसो महग्घं मणिरतनं लभित्वा 'दुल्लभं वत मे लद्धं' ति तस्मिं रतनसञ्ञी हुत्वा गारवं जनेत्वा विपुलेन पेमेन सम्पियायमानो तं रक्खेय्य, एवमेव "दुल्लभं मे इदं कम्मट्ठानं लद्धं, दुग्गतस्स महग्घमणिरतनसदिसं। चतुधातुकम्मट्ठानिको हि अत्तनो चत्तारो महाभूते परिग्गण्हाति, आनापानकम्मट्ठानिको अत्तनो नासिकावातं परिग्गण्हाति, कसिणकम्मट्ठानिको कसिणं कत्वा यथासुखं भावेति, एवं इतरानि कम्मट्ठानानि सुलभानि। इदं पन एकमेव वा द्वे वा दिवसे तिट्ठति, ततो परं विनीलकादिभावं पापुणाती ति नत्थि इतो दुल्लभतरं" ति तस्मिं रतनसञ्ञिना हुत्वा चित्तीकारं उपट्ठपेत्वा सम्पियायमानो तं निमित्तं रक्खितब्बं। रत्तिट्ठाने च दिवाठाने च "उद्धुमातकपटिक्कूलं उद्धुमातकपटिक्कूलं" ति तत्थ पुनप्पुनं चित्तं उपनिबन्धितब्बं। पुनप्पुनं तं निमित्तं आवज्जितब्बं, मनसिकातब्बं, तक्काहतं वितक्काहतं कातब्बं।

२९. तस्सेवं करोतो पटिभागनिमित्तं उप्पज्जति। तत्रिदं निमित्तद्वयस्स नानाकरणं। उग्गहनिमित्तं विरूपं बीभच्छं भेरवदस्सनं हुत्वा उपट्ठाति। पटिभागनिमित्तं पन यावदत्थं भुञ्जित्वा निपन्नो थूलङ्गपच्चङ्गपुरिसो विय।

तस्स पटिभागनिमित्तपटिलाभसमकालमेव बहिद्धा कामानं अमनसिकारा विक्खम्भनवसेन कामच्छन्दो पहीयति। अनुनयप्पहानेनेव चस्स लोहितप्पहानेन पुब्बो विय ब्यापादो पि पहीयति। तथा आरद्धविरियताय थीनमिद्धं अविप्पटिसारकरसन्तधम्मानुयोगवसेन[1] उद्धच्चकुक्कुच्चं, अधिगतविसेसस्स पच्चक्खताय पटिपत्तिदेसके सत्थरि पटिपत्तिया पटिपत्तिफले च विचिकिच्छा पहीयती ति पञ्च नीवरणानि पहीयन्ति।

३०. तस्मिञ्ञेव च निमित्ते चेतसो अभिनिरोपनलक्खणो वितक्को, निमित्तानुमज्जनकिच्चं साधयमानो विचारो, पटिलद्धविसेसाधिगमपच्चया

१ विप्पटिसारो = पच्छानुतापो, तप्पटिपक्खतो **अविप्पटिसारो**। तस्स पहानं करोतीति अविप्पटिसारकरो, अयं असुभभावनामयो सन्तधम्मो, तस्सानुयोगवसेन।

पीति, पीतिमनस्स पस्सद्धिसम्भवतो पस्सद्धि, तंनिमित्त सुख, सुखितस्स चित्तसमाधिसम्भवतो सुखनिमित्ता एकग्गता चा ति झानङ्गानि पातुभवन्ति। एवमस्स पठमज्झानपटिबिम्बभूत उपचारज्झान पि त खण येव निब्बत्तति। इतो पर याव पठमज्झामस्स अप्पना चेव वसिप्पत्ति च, ताव सब्बं पथवीकसिणे वुत्तनयेनेव वेदितब्ब ।

विनीलकादिभावनाविधानं

३१. इतो परेसु पन विनोल्कादीमु पि यं तं "उद्धुमातकं असुभनिमित्तं उग्गण्हन्तो एको अदुतियो गच्छति उपट्ठिताय सतिया" ति आदिना नयेन गमन आदि कत्वा लक्खण वुत्त, त सब्ब "विनीलकं असुभनिमित्तं उग्गण्हन्तो, विपुब्बकं असुभनिमित्तं उग्गण्हन्तो" ति एव तस्स वसेन तत्थ तत्थ उद्धुमातक-पदमत्त परिवत्तेत्वा वुत्तनयेनेव[1] सविनिच्छयाधिप्पायं वेदितब्बं ।

३२. अयं पन विसेसो—**विनीलके** "विनीलकपटिक्कूल विनीलकपटिक्कूल" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। उग्गहनिमित्तं चेत्थ कबरकबरवण्णं हुत्वा उपट्ठाति। पटिभागनिमित्त पन उस्सदवसेन उपट्ठाति।

३३ **विपुब्बके** "विपुब्बकपटिक्कूल विपुब्बकपटिक्कूल" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। उग्गहनिमित्तं पनेत्थ पग्घरन्तमिव उपट्ठाति। पटिभागनिमित्तं निच्चलं सन्निसिन्नं हुत्वा उपट्ठाति।

३४ **विच्छिद्दकं** युद्धमण्डले वा चोराटवियं[2] वा सुसाने वा यत्थ राजानो चोरे छिन्दापेन्ति, अरञ्ञे वा पन सीहब्यग्घेहि छिन्नपुरिसट्ठाने लब्भति। तस्मा तथारूपं ठानं गन्त्वा सचे नानादिसायं पतित पि एकावज्जनेन आपाथ आगच्छति इच्चेत कुसलं, नो चे आगच्छति, सयं हत्थेन न परामसितब्ब। परामसन्तो हि विस्सासं आपज्जति। तस्मा आरामिकेन वा समणुद्देसेन वा अञ्ञेन वा केनचि एकट्ठाने कारेतब्ब। अलभन्तेन कत्तरयट्ठिया वा दण्डकेन वा एकङ्गुलन्तरं कत्वा उपनामेतब्बं। एव उपनामेत्वा "विच्छिद्दकपटिक्कूलं विच्छिद्दकपटिक्कूल" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। तत्थ उग्गहनिमित्तं मज्झे छिद्दं विय उपट्ठाति। पटिभागनिमित्तं पन परिपुण्ण हुत्वा उपट्ठाति।

३५ **विक्खायितके** "विक्खायितपटिक्कूलं विक्खायितपटिक्कूल" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। उग्गहनिमित्तं पनेत्थ तहिं तहिं खायितसदिसमेव उपट्ठाति। पटिभागनिमित्तं परिपुण्णं व हुत्वा उपट्ठाति।

३६ **विक्खित्तकं** पि विच्छिद्दके वुत्तनयेनेव अङ्गुलङ्गुलन्तर कारेत्वा वा कत्वा वा "विक्खित्तकपटिक्कूल विक्खित्तकपटिक्कूल" ति मनसिकारो पवत्ते-

---

१ वुत्तनयेनेवा ति। उद्धुमातके वुत्तनयेनेव।

२. चोराटवियं ति। चोरेहि परियुट्ठितअरञ्ञे।

तब्बो। एत्थ उग्गहनिमित्तं पाकटन्तर हुत्वा उपट्ठाति। पटिभागनिमित्त पन परिपुण्ण व हुत्वा उपट्ठाति।

३७ **हतविक्खित्तकं** पि विच्छिद्दके वुत्तप्पकारेसु येव ठानेसु लब्भति। तस्मा तत्थ गन्त्वा वुत्तनयेनेव अङ्गुलङ्गुलन्तर कारेत्वा वा कत्वा वा "हतविक्खित्तकपटिक्कूलं हतविक्खित्तकपटिकूल" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। उग्गहनिमित्त पनेत्थ पञ्ञायमानं पहारमुख विय होति, पटिभागनिमित्तं परिपुण्णमेव हुत्वा उपट्ठाति।

३८ **लोहितकं** युद्धमण्डलादीसु लद्धप्पहारान हत्थपादादीसु वा छिन्नेसु भिन्नगण्डपीळकादीनं मुखतो पग्घरमानकाले लब्भति। तस्मा त दिस्वा "लोहितकपटिक्कूलं लोहितकपटिक्कूल" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। एत्थ उग्गहनिमित्त, वातप्पहता विय रत्तपटाका, चलमानाकार उपट्ठाति। पटिभागनिमित्तं पन सन्निसिन्नं हुत्वा उपट्ठाति।

३९ **पुळवकं** द्वीहतीहच्चयेन कुणपस्स नवहि वणमुखेहि किमिरासिपग्घरकाले होति। अपि च—तं सोणसिङ्गालमनुस्सगोमहिंसहत्थिअस्सअजगरादीनं सरीरप्पमाणमेव हुत्वा सालिभत्तरासि विय तिट्ठति। तेसु यत्थ कत्थचि "पुळवकपटिक्कूल पुळवकपटिक्कूल"ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। **चूळपिण्डपातिकतिस्सत्थेरस्स** हि काळदीघवापिया अन्तो हत्थिकुणपे निमित्त उपट्ठासि। उग्गहनिमित्त पनेत्थ चलमानं विय उपट्ठाति। पटिभागनिमित्तं सालिभत्तपिण्डो विय सन्निसिन्न हुत्वा उपट्ठाति।

४०. **अट्ठिकं** "सो पस्सेय्य सरीर सीवथिकाय छड्डित्त अट्ठिसङ्खलिकं समसलोहितं न्हारुसम्बन्ध" (म० ३–१५४) ति आदिना नयेन नानप्पकारतो वुत्त। तत्थ यत्थ त निक्खित्तं होति, तत्थ पुरिमनयेनेव गन्त्वा समन्ता पासाणादीन वसेन सनिमित्तं सारम्मण कत्वा इदं अट्ठिकं ति सभावभावतो उपलक्खेत्वा वण्णादिवसेन एकादसहाकारेहि निमित्त उग्गहेतब्ब।

४१. त पन **वण्णतो** सेत ति ओलोकेन्तस्स न उपट्ठाति, ओदातकसिणसम्भेदो होति। तस्मा अट्ठिक ति पटिक्कूलवसेनेव ओलोकेतब्बं।

लिङ्गं ति इध हत्थादीनं नामं। तस्मा हत्थपादसीसउरबाहुकटिउरुजङ्घानं वसेन **लिङ्गतो** ववत्थपेतब्बं। दीघरस्सवट्टचतुरस्सखुद्दकमहन्तवसेन पन **सण्ठानतो** ववत्थपेतब्ब। **दिसोकासा** वुत्तनया एव। तस्स तस्स अट्ठिनो परियन्तवसेन **परिच्छेदतो** ववत्थपेत्वा यदेवेत्थ पाकटं हुत्वा उपट्ठाति, तं गहेत्वा अप्पना पापुणितब्बा। तस्स तस्स अट्ठिनो निन्नट्ठानवसेन पन **निन्नतो च थलतो** च ववत्थपेतब्बं। पदेसवसेना पि 'अहं निन्ने ठितो अट्ठि थले, अहं थले अट्ठि निन्ने'

ति पि ववत्थपेतब्बं। छिन्नं पन अट्ठिकानं घटितघटितट्ठानवसेन **सन्धितो** ववत्थपेतब्बं। अट्ठिकानं येव अन्तरवसेन **विवरतो** ववत्थपेतब्बं। सब्बत्थेव पन ञाणं चारेत्वा इदमस्मिं ठाने इदमट्ठी ति **समन्ततो** ववत्थपेतब्बं। एवं पि निमित्ते अनुपट्ठहन्ते नलाटट्ठिम्हि चित्तं सण्ठपेतब्बं।

४२ यथा चेत्थ, एवं इदं एकादसविधेन निमित्तगहणं इतो पुरिमेसु पुळवकादीसु पि युज्जमानवसेन सल्लक्खेतब्बं।

इदं च पन कम्मट्ठानं सकलाय पि अट्ठिकसङ्खलिकाय एकस्मिं पि अट्ठिके सम्पज्जति। तस्मा तेसु यत्थ कत्थचि एकादसविधेन निमित्तं उग्गहेत्वा "अट्ठिकपटिक्कूलं अट्ठिपटिक्कूलं" ति मनसिकारो पवत्तेतब्बो। इध उग्गहनिमित्तं पि पटिभागनिमित्तं पि एकसदिसमेव होती ति वुत्तं, तं एकस्मिं अट्ठिके युत्तं। अट्ठिकसङ्खलिकाय पन उग्गहनिमित्ते पञ्ञायमाने विवरता। पटिभागनिमित्ते परिपुण्णभावो युज्जति। एकट्ठिके पि च उग्गहनिमित्तेन बीभच्छेन भयानकेन भवितब्बं। पटिभागनिमित्तेन पीतिसोमनस्सजनकेन, उपचारावहत्ता।

४३. इमस्मिं हि ओकासे यं अट्ठकथासु वुत्तं, तं द्वारं दत्वा व वुत्तं। तथा हि तत्थ "चतूसु ब्रह्मविहारेसु दससु च असुभेसु पटिभागनिमित्तं नत्थि। ब्रह्मविहारेसु हि सीमसम्भेदो येव निमित्तं। दससु च असुभेसु निब्बिकप्पं कत्वा पटिक्कूलभावे येव दिट्ठे निमित्तं नाम होती" ति वत्वा पि पुन अन्तरन्तरमेव, "दुविधं इध निमित्तं—उग्गहनिमित्तं, पटिभागनिमित्तं। उग्गहनिमित्तं विरूपं बीभच्छं भयादकं हुत्वा उपट्ठाती" ति आदि वुत्तं। तस्मा यं विचारेत्वा अवोचुम्ह, इदमेवेत्थ युत्तं।

अपि च—**महातिस्सत्थेरस्स** दन्तट्ठिकमत्तावलोकनेन सकलित्थिसरीरस्स अट्ठिसङ्खानभावेन उपट्ठानादीनि चेत्थ निदस्सनानी ति।

इति असुभानि सुभगुणो [1]दससतलोचनेन थुतकित्ति।
यानि अवोच दसबलो एकेकज्झानहेतूनी ति॥

पकिण्णककथा

एवं तानि च तेसं च भावनानयमिमं विदित्वान।
तेस्वेव अयं भिय्यो पकिण्णककथा पि विञ्ञेय्या॥

४४ एतेसु हि यत्थ कत्थचि अधिगतज्झानो सुविक्खम्भितरागत्ता वीतरागो विय निल्लोलुप्पचारो होति। एवं सन्ते पि य्वायं असुभप्पभेदो वुत्तो, सो सरीरसभावप्पत्तिवसेन च रागचरितभेदवसेन चा ति वेदितब्बो।

१ दससतलोचनेना ति। सहस्सक्खेन देवानमिन्देन।

छवसरीरं हि पटिक्कूलभावं आपज्जमानं उद्धुमातकसभावप्पत्तं वा सिया, विनीलकादीनं वा अञ्ञतरसभावप्पत्तं। इति यादिसं यादिसं सक्का होति लद्धुं, तादिसे तादिसे उद्धुमातकपटिक्कूलं ति एवं निमित्तं गण्हितब्बं एवा ति सरीरसभावप्पत्तिवसेन दसधा असुभप्पभेदो वुत्तो ति वेदितब्बो।

४५. विसेसतो चेत्थ **उद्धुमातकं** सरीरसण्ठानविपत्तिप्पकासनतो सण्ठानरागिनो सप्पायं। **विनीलकं** छविरागविपत्तिप्पकासनतो सरीरवण्णरागिनो सप्पायं। **विपुब्बकं** कायवणपटिबद्धस्स दुग्गन्धभावस्स पकासनतो मालागन्धादिवसेन समुट्ठापितसरीरगन्धरागिनो सप्पायं। **विच्छिद्दकं** अन्तोसुसिरभावप्पकासनतो सरीरे घनभावरागिनो सप्पायं। **विक्खायितकं** मंसूपचयसम्पत्तिविनासप्पकासनतो थनादीसु सरीरप्पदेसेसु मंसूपचयरागिनो सप्पायं। **विक्खित्तकं** अङ्गपच्चङ्गानं विक्खेपप्पकासनतो अङ्गपच्चङ्गलीलारागिनो सप्पायं। **हतविक्खित्तकं** सरीरसङ्घातभेदविकारप्पकासनतो सरीरसङ्घातसम्पत्तिरागिनो सप्पायं। **लोहितकं** लोहितमक्खितपटिक्कूलभावप्पकासनतो अलङ्काररजनितसोभारागिनो सप्पायं। **पुळवकं** कायस्स अनेककिमिकुलसाधारणभावप्पकासनतो काये ममत्तरागिनो सप्पायं। **अट्ठिकं** सरीरट्ठीनं पटिक्कूलभावप्पकासनतो दन्तसम्पत्तिरागिनो सप्पायं ति।

एवं रागचरितभेदवसेना पि दसधा असुभप्पभेदो वुत्तो ति वेदितब्बो।

४६. यस्मा पन दसविधे पि एतस्मिं असुभे सेय्यथापि नाम अपरिसण्ठितजलाय सीघसोताय नदिया अरित्तबलेनेव[1] नावा तिट्ठति, विना अरित्तबलेन न सक्का ठपेतुं, एवमेव दुब्बलत्ता आरम्मणस्स वितक्कबलेनेव चित्तं एकग्गं हुत्वा तिट्ठति, विना वितक्केन न सक्का ठपेतुं, तस्मा पठमज्झानमेवेत्थ होति, न दुतियादीनि।

४७ पटिक्कूले पि च एतस्मिं आरम्मणे "अद्धा इमाय पटिपदाय जरामरणम्हा परिमुच्चिस्सामी" ति एवं आनिससदस्साविताय चेव नीवरणसन्तापप्पहानेन च पीतिसोमनस्सं उप्पज्जति, 'बहुं दानि वेतनं लभिस्सामी' ति आनिससदस्साविनो पुप्फछड्डकस्स गूथरासिम्हि विय उस्सन्नब्याधिदुक्खस्स रोगिनो वमनविरेचनप्पवत्तियं विय च।

४८. दसविधं पि चेतं असुभं **लक्खणतो** एकमेव होति। दसविधस्सा पि हेतस्स असुचिदुग्गन्धजेगुच्छपटिक्कूलभावो एव लक्खणं। तदेतं इमिना लक्खणेन न केवलं मतसरीरे, दन्तट्ठिकदस्साविना पन चेतियपब्बतवासिनो **महातिस्सत्थेरस्स** विय इत्थिक्खन्धगतं राजानं ओलोकेन्तस्स **सङ्घरक्खितत्थेरूपट्ठाकसामणेरस्स** विय च जीवमानकसरीरे पि उपट्ठाति। यथेव हि मतसरीरं एवं

१. अरित्तबलेना ति। पाजनदण्डबलेन।

जीवमानक पि असुभमेव। असुभलक्खण पनेत्थ आगन्तुकेन अलङ्कारेन पटिच्छन्नत्ता न पञ्ञायति। पकतिया पन इद सरीर नाम अतिरेकतिसतअट्ठिकसमुस्सय असीतिसतसन्धिसङ्घटितं नवन्हारुसतनिबन्धनं नवमंसपेसिसतानुलित्त अल्लचम्मपरियोनद्ध छविया पटिच्छन्नं छिद्दावछिद्द मेदकथालिका विय निच्चुग्घरितपग्घरित किमिसङ्घनिसेवित रोगान आयतन दुक्खधम्मान वत्थु परिभिन्नपुराणगण्डो विय नवहि वणमुखेहि सततविस्सन्दन। यस्स उभोहि अक्खीहि अक्खिगूथको पग्घरति, कण्णबिलेहि कण्णगूथको, नासापुटेहि सिङ्घाणिका, मुखतो आहारपित्तसेम्हरुधिरानि, अधोद्वारेहि उच्चारपस्सावा, नवनवुतिया लोमकूपसहस्सेहि असुचिसेदयूसो पग्घरति। नीलमक्खिकादयो सम्परिवारेन्ति। य दन्तकट्ठ-मुखधोवन-सीसमक्खन-न्हाननिवासन-पारुपनादीहि अपटिजग्गित्वा यथाजातो व फरुसविप्पकिण्णकेसो हुत्वा गामेन गाम विचरन्तो राजा पि पुप्फछड्डकचण्डालादीसु अञ्ञतरा पि समसरीरपटिक्कूलताय निब्बिसेसो होति, एव असुचिदुग्गन्धजेगुच्छपटिक्कूलताय रञ्ञो वा चण्डालस्स वा सरीरवेमत्त नाम नत्थि।

दन्तकट्ठ-मुखधोवनादीहि पनेत्थ दन्तमलादीनि पमज्जित्वा नानावत्थेहि हिरिकोपीन पटिच्छादेत्वा नानावण्णेन सुरभिविलेपनेन विलिम्पित्वा पुप्फाभरणादीहि अलङ्करित्वा अहं मम ति गहेतब्बाकारप्पत्त करोन्ति। ततो इमिना आगन्तुकेन अलङ्कारेन पटिच्छन्नत्ता तदस्स याथावसरस[1] असुभलक्खण असञ्जानन्ता पुरिसा इत्थिसु, इत्थियो च पुरिसेसु रतिं करोन्ति। परमत्थतो पनेत्थ रज्जितब्बकयुत्तट्ठानं नाम अणुमत्त पि नत्थि।

तथा हि केसलोमनखदन्तखेळसिङ्घाणिकउच्चारपस्सावादीसु एककोट्ठास पि सरीरतो बहि पतितं सत्ता हत्थेन छुपितु पि न इच्छन्ति अट्टियन्ति, हरायन्ति, जिगुच्छन्ति। य य पनेत्थ अवसेस होति, तं त एवं पटिक्कूल पि समान, अविज्जन्धकारपरियोनद्धा अत्तसिनेहरागरत्ता, इट्ठ कन्त निच्च सुखं अत्ता ति गण्हन्ति। ते एवं गण्हन्ता अटविय किंसुकरुक्ख दिस्वा रुक्खतो अपतितपुप्फ "अय मसपेसी" ति विहञ्ञमानेन जरसिङ्गालेन समानत आपज्जन्ति। तस्मा—

४९. यथा पि पुप्फितं दिस्वा सिङ्गालो किंसुक वने।
'ममरुक्खो मया लद्धो' इति गन्त्वान वेगसा॥
पतितं पतितं पुप्फं डंसित्वा अतिलोलुपो।
नयिद मंसं अदुं मंसं यं रुक्खस्मि ति गण्हाति॥

---

१. यथाभूत सभावं।

कोट्ठासं पतितं येव असुभं ति तथा बुधो।
अग्गहेत्वान गण्हेय्य सरीरट्ठं पि न तथा॥
इमं हि सुभतो कायं गहेत्वा तत्थ मुच्छिता।
बाला करोन्ता पापानि दुक्खा न परिमुच्चरे॥
तस्मा पस्सेय्य मेधावी जीवतो वा मतस्स वा।
सभाव पूतिकायस्स सुभभावेन वज्जितं॥

५० वुत्तं हेतं—

"दुग्गन्धो असुचि कायो कुणपो उक्करूपमो[1]।
निन्दितो चक्खुभूतेहि कायो बालाभिनन्दितो॥
अल्लचम्मपटिच्छन्नो नवद्वारो महावणो।
समन्ततो पग्घरति असुचि पूतिगन्धियो॥
सचे इमस्स कायस्स अन्तो बाहिरको सिया।
दण्डं नून गहेत्वान काके सोणे निवारये"[2] ति॥

तस्मा दब्बजातिकेन[3] भिक्खुना जीवमानसरीरं वा होतु मतसरीरं वा, यत्थ यत्थ असुभाकारो पञ्ञायति, तत्थ तत्थेव निमित्तं गहेत्वा कम्मट्ठानं अप्पनं पापेतब्बं ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे समाधिभावनाधिकारे
असुभकम्मट्ठाननिद्देसो नाम छट्ठो परिच्छेदो॥



१ **उक्करूपमो** ति। उच्चारपस्सावट्ठानसमो।

२. **तु०**—यदि स्यादस्य कायस्य यदन्तस्तद्बहिर्भवेत्।
दण्डमादाय लोकोऽयं शुनः काकांश्च वारयेत्॥

३. **दब्बजातिकेना** ति। उत्तरिमनुस्सधम्मे पटिलद्धु भब्बरूपेन।

छअनुस्सतिनिद्देसो

सत्तमो परिच्छेदो

१ असुभानन्तरं[1] उद्दिट्ठासु पन दससु अनुस्सतिसु[2] पुनप्पुन उप्पज्जनतो येव अनुस्सति। पवत्तितब्बट्ठानम्हि येव वा पवत्तत्ता सद्धापब्बजितस्स कुलपुत्तस्स अनुरूपा सती ति पि अनुस्सति।

(१) बुद्धं आरब्भ उप्पन्ना अनुस्सति **बुद्धानुस्सति**। बुद्धगुणारम्मणाय सतिया एतं अधिवचनं। (२) धम्मं आरब्भ उप्पन्ना अनुस्सति **धम्मानुस्सति**। स्वाक्खाततादिधम्मगुणारम्मणाय सतिया एतं अधिवचनं। (३) सङ्घं आरब्भ उप्पन्ना अनुस्सति **सङ्घानुस्सति**। सुप्पटिपन्नतादिसङ्घगुणारम्मणाय सतिया एतं अधिवचनं। (४) सीलं आरब्भ उप्पन्ना अनुस्सति **सीलानुस्सति**। अखण्डतादिसीलगुणारम्मणाय सतिया एतं अधिवचनं। (५) चागं आरब्भ उप्पन्ना अनुस्सति **चागानुस्सति**। मुत्तचागतादिचागगुणारम्मणाय सतिया एतं अधिवचनं। (६) देवता आरब्भ उप्पन्ना अनुस्सति **देवतानुस्सति**। देवता सक्खिट्ठाने ठपेत्वा अत्तनो सद्धादिगुणारम्मणाय सतिया एतं अधिवचनं। (७) मरणं आरब्भ उप्पन्ना अनुस्सति **मरणानुस्सति**। जीवितिन्द्रियुपच्छेदारम्मणाय सतिया एतं अधिवचनं। (८) केसादिभेदं रूपकायं गता, काये वा गता ति कायगता। कायगता च सा सति चा ति कायगतसती ति वत्तब्बे रस्सं अकत्वा **कायगतासती** ति वुत्ता। केसादिकायकोट्ठासनिमित्तारम्मणाय सतिया एतं अधिवचनं। (९) आनापाने आरब्भ उप्पन्ना सति **आनापानस्सति**। अस्सासपस्सासनिमित्तारम्मणाय सतिया एतं अधिवचनं। (१०) उपसमं आरब्भ उप्पन्ना अनुस्सति **उपसमानुस्सति**। सब्बदुक्खूपसमारम्मणाय सतिया एतं अधिवचनं।

बुद्धानुस्सतिकथा

२. इति इमासु दससु अनुस्सतिसु बुद्धानुस्सतिं ताव भावेतुकामेन अवेच्चप्पसादसमन्नागतेन योगिना पटिरूपे सेनासने रहोगतेन पटिसल्लीनेन "इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो

---

१. असुभानन्तरं ति। असुभकम्मट्ठानानन्तरं।

२. अनुस्सतीसू ति। अनुस्सतिकम्मट्ठानेसु।

पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा" (अ० ३-८) ति एव बुद्धस्स भगवतो गुणा अनुस्सरितब्बा।

३ तत्राय अनुस्सरणनयो—सो भगवा इति पि अरह, इति पि सम्मासम्बुद्धो पे० इति पि भगवा ति अनुस्सरति। इमिना च इमिना च कारणेना ति वुत्त होति।

४ तत्थ आरकत्ता, अरीनं अरानं च हतत्ता, पच्चयादीन अरहत्ता, पापकरणे रहाभावा ति इमेहि ताव कारणेहि सो भगवा अरह ति अनुस्सरति।

आरका हि सो सब्बकिलेसेहि सुविदूरविदूरे ठितो मग्गेन सवासनानं किलेसानं विद्धसितत्ता ति आरकत्ता अरहं[1]।

सो ततो आरका नाम यस्स येनासमङ्गिता[2]।
असमङ्गी च दोसेहि नाथो तेनारहं मतो ति॥

ते च अनेन किलेसारयो मग्गेन हता ति **अरीनं हतत्ता पि अरहं।**

यस्मा रागादिसङ्खाता सब्बे पि अरयो हता।
पञ्ञासत्थेन नाथेन तस्मा पि **अरहं** मतो ति॥

यं चेतं अविज्जाभवतण्हामयनाभि पुञ्ञादिअभिसङ्खारार जरामरणनेमि आसवसमुदयमयेन अक्खेन विज्झित्वा तिभवरथे समायोजितं अनादिकालप्पवत्तं संसारचक्क, तस्सानेन बोधिमण्डे विरियपादेहि सीलपथविय पतिट्ठाय सद्धाहत्थेन कम्मक्खयकरं ञाणफरसु गहेत्वा सब्बे अरा हता ति **अरानं हतत्ता पि अरहं।**

अथ वा संसारचक्क ति अनमतग्गं ससारवट्ट वुच्चति। तस्स च अविज्जा नाभि मूलत्ता, जरामरण[3] नेमि परियोसानत्ता, सेसा दसधम्मा अरा अविज्जामूलकत्ता जरामरणपरियन्तत्ता च।

तत्थ दुक्खादीसु[4] अञ्ञाणं अविज्जा। कामभवे च अविज्जा कामभवे सङ्खारानं पच्चयो होति। रूपभवे अविज्जा रूपभवे सङ्खारान पच्चयो होति। अरूपभवे अविज्जा अरूपभवे सङ्खारान पच्चयो होति। कामभवे सङ्खारा कामभवे पटिसन्धिविञ्ञाणस्स पच्चया होन्ति। एस नयो इतरेसु। कामभवे

---

१. आरका ति। एत्थ आ-कारस्स रस्सत्तं, क-कारस्स च ह्-कारं सानुसारं कत्वा निरुत्तिनयेन "अरह" ति पदसिद्धि।

२. समञ्जनसीलो समङ्गी, न समङ्गिता असमङ्गिता। असमन्नागमो, असहवुत्तिता।

३. तत्थ तत्थ भवे परियन्तभावेन पाकटं जरामरण नेमिट्ठानियं।

४. दुक्खादीसू ति। दुक्खसमुदयनिरोधमग्गेसु।

पटिसन्धिविञ्ञाण कामभवे नामरूपस्स पच्चयो होति । तथा रूपभवे । अरूपभवे नामस्सेव पच्चयो होति । कामभवे नामरूपं कामभवे सळायतनस्स पच्चयो होति । रूपभवे नामरूप रूपभवे तिण्णं आयतनान[1] पच्चयो होति । अरूपभवे नामं अरूपभवे एकस्स आयतनस्स पच्चयो होति । कामभवे सळायतनं कामभवे छब्बिधस्स फस्सस्स पच्चयो होति । रूपभवे तीणि आयतनानि रूपभवे तिण्णं फस्सानं पच्चया होन्ति । अरूपभवे एक आयतनं अरूपभवे एकस्स फस्सस्स पच्चयो होति । कामभवे छ फस्सा कामभवे छन्न वेदनानं पच्चया होन्ति । रूपभवे तयो फस्सा तत्थेव तिस्सन्न । अरूपभवे एको तत्थेव एकिस्सा वेदनाय पच्चया होति । कामभवे छ वेदना कामभवे छन्न तण्हाकायानं पच्चया होन्ति । रूपभवे तिस्सो तत्थेव तिण्ण । अरूपभवे एका वेदना अरूपभवे एकस्स तण्हाकायस्स पच्चयो होति । तत्थ तत्थ सा सा तण्हा तस्स तस्स उपादानस्स, उपादानादयो भवादीन ।

कथ ? इधेकच्चो 'कामे परिभुञ्जिस्सामी' ति कामुपादानपच्चया कायेन दुच्चरित चरति, वाचाय दुच्चरितं चरति, मनसा दुच्चरित चरति, दुच्चरितपारिपूरिया अपाये उपपज्जति । तत्थस्स उपपत्तिहेतुभूत कम्म कम्मभवो, कम्मनिब्बत्ता खन्धा उपपत्तिभवो, खन्धान निब्बत्ति जाति, परिपाको जरा, भेदो मरण ।

अपरो 'सग्गसम्पत्ति अनुभविस्सामी' ति तथेव सुचरितं चरति, सुचरितपारिपूरिया सग्गे उप्पज्जति । तत्थस्स उपपत्तिहेतुभूत कम्म कम्मभवो ति सो एव नयो ।

अपरो पन 'ब्रह्मलोकसम्पत्ति अनुभविस्सामी' ति कामुपादानपच्चया एव मेत्तं भावेति, करुण मुदितं उपेक्खं भावेति, भावनापारिपूरिया ब्रह्मलोके निब्बत्तति । तत्थस्स निब्बत्तिहेतुभूत कम्म कम्मभवो ति सो एव नयो ।

अपरो 'अरूपभवे सम्पत्ति अनुभविस्सामी' ति तथेव आकासानञ्चायतनादिसमापत्तियो भावेति, भावानापारिपूरिया तत्थ तत्थ निब्बत्तति, तत्थस्स निब्बत्तिहेतुभूतं कम्मं कम्मभवो, कम्मनिब्बत्ता खन्धा उपपत्तिभवो, खन्धानं निब्बत्ति जाति परिपाको जरा, भेदो मरणं ति ।

एस नयो सेसुपादानमूलिकासु पि योजनासु ।

एव अय "अविज्जा हेतु, सङ्खारा हेतुसमुप्पन्ना, उभो पेते हेतुसमुप्पन्ना ति पच्चयपरिग्गहे पञ्ञा धम्मट्ठितिञाणं । अतीतं पि अद्धानं अनागतं पि अद्धानं

---

१. तिण्णं आयतनानं ति । चक्खु-सोत-मनायतनानं ।

अविज्जा हेतु सङ्खारा हेतुसमुप्पन्ना, उभो पेते हेतुसमुप्पन्ना ति पच्चयपरिग्गहे पञ्ञा धम्मट्ठितिञाण" ति।

एतेनेव नयेन सब्बपदानि वित्थारेतब्बानि।

तत्थ अविज्जासङ्खारा एको सङ्खेपो, विञ्ञाणनामरूपसळायतनफस्सवेदना एको, तण्हुपादानभवा एको, जातिजरामरणं एको। पुरिमसङ्खेपो चेत्थ अतीतो अद्धा, द्वे मज्झिमा पच्चुप्पन्नो, जातिजरामरण अनागतो। अविज्जासङ्खारग्गहणेन चेत्थ तण्हुपादानभवा गहिता व होन्ती ति इमे पञ्च धम्मा अतीते कम्मवट्ट, विञ्ञाणादयो पञ्च एतरहि विपाकवट्ट, तण्हुपादानभवग्गहणेन अविज्जासङ्खारा गहिता व होन्ती ति इमे पञ्च धम्मा एतरहि कम्मवट्ट, जातिजरामरणापदेसेन विञ्ञाणादीनं निद्दिट्ठत्ता इमे पञ्च धम्मा आयतिं विपाकवट्ट। ते आकारतो वीसतिविधा होन्ति। सङ्खारविञ्ञाणान चेत्थ अन्तरा एको सन्धि, वेदनातण्हानमन्तरा एको भवजातीनमन्तरा एको ति।

इति भगवा एतं चतुसङ्खेप तियद्धं वीसताकारं तिसन्धि पटिच्चसमुप्पाद सब्बाकारतो जानाति पस्सति अञ्ञाति पटिविज्झति। "त ञातट्ठेन ञाण, पजाननट्ठेन पञ्ञा, तेन वुच्चति—"पच्चयपरिग्गहे पञ्ञा धम्मट्ठितिञाणं" ति। इमिना धम्मट्ठितिञाणेन भगवा ते धम्मे यथाभत ञत्वा तेसु निब्बिन्दन्तो विरज्जन्तो विमुच्चन्तो वुत्तप्पकारस्स इमस्स ससारचक्कस्स अरे हनि विहनि विद्धंसेसि। एव पि अरान हतत्ता **अरहं**।

अरा ससारचक्कस्स हता ञाणासिना यतो।
लोकनाथेन तेनेस अरहं ति पवुच्चति॥

अग्गदक्खिणेय्यत्ता च चीवरादिपच्चये अरहति, पूजाविसेस च। तेनेव च उप्पन्ने तथागते ये केचि महेसक्खा देवमनुस्सा, न ते अञ्ञत्थ पूज करोन्ति, तथा हि ब्रह्मा सहम्पति सिनेरुमत्तेन रतनदामेन तथागतं पूजेसि। यथाबल च अञ्ञे देवा मनुस्सा च बिम्बिसारकोसलराजादयो। परिनिब्बुत पि च भगवन्तं उद्दिस्स छन्नवुतिकोटिधन विस्सज्जेत्वा असोकमहाराजा सकलजम्बुदीपे चतुरासीतिविहारसहस्सानि पतिट्ठापेसि। को पन वादो अञ्ञसं पूजाविसेसान ति **पच्चयादीनं अरहत्ता पि अरहं।**

पूजाविसेसं सह पच्चयेहि यस्मा अयं अरहति लोकनाथो।
अत्थानुरूप अरहं ति लोके तस्मा जिनो अरहति नाममेतं॥

यथा च लोके ये केचि पण्डितमानिनो बाला असिलोकभयेन[1] रहो पाप करोन्ति, एवमेव न कदाचि करोती[2] ति **पापकरणे रहाभावतो पि अरहं**।

---

१. **असिलोकभयेना** ति। अकित्तिभयेन। २ पापहेतून बोधिमण्डे एव सुप्पहीनत्ता।

यस्मा नत्थि रहो नाम पापकम्मेसु तादिनो ।
रहाभावेन तेनेस अरहं इति विस्सुतो ॥

एवं सब्बथा पि—

आरकत्ता हतत्ता च किलेसारीन[1] सो मुनि ।
हतससारचक्कारो पच्चयादीन[1] चारहो ।
न रहो करोति पापानि अरहं तेन वुच्चती ति ॥

५ सम्मा[2] साम च[3] सब्बधम्मान बुद्धत्ता पन **सम्मासम्बुद्धो** । तथाहि एस सब्बधम्मे सम्मा सामं च बुद्धो, अभिञ्ञेय्ये धम्मे अभिञ्ञेय्यतो बुद्धो, परिञ्ञेय्ये धम्मे परिञ्ञेय्यतो, पहातब्बे धम्मे पहातब्बतो, सच्छिकातब्बे धम्मे सच्छिकातब्बसो, भावेतब्बे धम्मे भावेतब्बतो ।

तेनेव चाह—

"अभिञ्ञेय्यं अभिञ्ञात भावेतब्ब च भावित ।
पहातब्बं पहानं मे तस्मा बुद्धोस्मि ब्राह्मणा ति ॥ (खु० १-३५८)

अपि च चक्खु दुक्खसच्च, तस्स मूलकारणभावेन समुट्ठापिका पुरिमतण्हा समुदयसच्चं, उभिन्न अप्पवत्ति निरोधसच्च, निरोधपजानना पटिपदा मग्गसच्च ति एव एकेकपदुद्धारेना पि सब्बधम्मे सम्मा सामं च बुद्धो । एस नयो सोत-घान-जिह्वा-काय-मनेसु ।

एतेनेव नयेन रूपादीनि छ आयतनानि, चक्खुविञ्ञाणादयो छ विञ्ञाण-काया, चक्खुसम्फस्सादयो छ फस्सा, चक्खुसम्फस्सजादयो छ वेदना, रूप-सञ्ञादयो छ सञ्ञा, रूपसञ्चेतनादयो छ चेतना, रूपतण्हादयो छ तण्हाकाया, रूपवितक्कादयो छ वितक्का, रूपविचारादयो छ विचारा, रूपक्खन्धादयो पञ्चक्खन्धा, दस कसिणानि, दस अनुस्सतियो, उद्धुमातकसञ्ञादिवसेन दस सञ्ञा, केसादयो द्वत्तिसाकारा, द्वादसायतनानि, अट्ठारस धातुयो, कामभवादयो नव भवा, पठमादीनि चत्तारि झानानि, मेत्ताभावनादयो चतस्सो अप्पमञ्ञा, चतस्सो अरूपसमापत्तियो, पटिलोमतो जरामरणादीनि, अनुलोमतो अविज्जा-दीनि पटिच्चसमुप्पादङ्गानि च योजेतब्बानि ।

तत्रायं एकपदयोजना—"जरामरणं दुक्खसच्चं, जाति समुदयसच्चं, उभिन्नं पि निस्सरण निरोधसच्च, निरोधपजानना पटिपदा मग्गसच्चं" ति । एव एकेकपदुद्धारेन सब्बधम्मे सम्मा सामं च बुद्धो अनुबुद्धो पटिबुद्धो । तेन वुत्तं—"सम्मा सामं च सब्बधम्मानं बुद्धत्ता पन सम्मासम्बुद्धो" ति ।

---

१. एत्थ निग्गहितलोपो । किलेसारीनं, पच्चयादीनं त्यत्थो ।

२. **सम्मा** ति । अविपरीतं । ३. सामं ति । सयमेव ।

६ विज्जाहि पन चरणेन च सम्पन्नता **विज्जाचरणसम्पन्नो**। तत्थ **विज्जा** ति तिस्सो पि विज्जा, अट्ठ पि विज्जा। तिस्सो विज्जा **भयभेरवसुत्ते** (म० १-२९) वुत्तनयेनेव वेदितब्बा, अट्ठ **अम्बट्ठसुत्ते** (दी० १-८७)। तत्र हि विपस्सनाञाणेन मनोमयिद्धिया च सह छ अभिञ्ञा परिग्गहेत्वा अट्ठ विज्जा वुत्ता।

चरणं ति सीलसंवरो, इन्द्रियेसु गुत्तद्वारता, भोजने मत्तञ्ञुता, जागरियानुयोगो, सत्त सद्धम्मा[1], चत्तारि रूपावचरज्झानानी ति इमे पन्नरस धम्मा वेदितब्बा। इमे येव हि पन्नरस धम्मा, यस्मा एतेहि चरति अरियसावको, गच्छति अमतं दिसं, तस्मा चरणं ति वुत्ता। यथाह—"इध, महानाम, अरियसावको सीलवा होती" ति सब्बं **मज्झिमपण्णासके** (म० २-२१) वुत्तनयेनेव वेदितब्बं। भगवा इमाहि विज्जाहि इमिना च चरणेन समन्नागतो, तेन वुच्चति **विज्जाचरणसम्पन्नो** ति।

तत्थ विज्जासम्पदा भगवतो सब्बञ्ञुतं पूरेत्वा ठिता, चरणसम्पदा महाकारुणिकतं। सो सब्बञ्ञुताय सब्बसत्तानं अत्थानत्थं ञत्वा महाकारुणिकताय अनत्थं परिवज्जेत्वा अत्थे नियोजेति, यथा तं विज्जाचरणसम्पन्नो। तेनस्स सावका सुप्पटिपन्ना होन्ति नो दुप्पटिपन्ना, विज्जाचरणविपन्नानं सावका अत्तन्तपादयो विय।

७ सोभनगमनत्ता, सुन्दरं ठानं गतत्ता, सम्मा गतत्ता, सम्मा च गदत्ता **सुगतो**। गमनं पि गतं ति वुच्चति, तं च भगवतो सोभनं परिसुद्धमनवज्जं। किं पन तं ति? अरियमग्गो। तेन हेस गमनेन खेमं दिसं असज्जमानो गतो ति सोभनगमनत्ता **सुगतो**। सुन्दरं चेस ठानं गतो अमतं निब्बानं ति सुन्दरं ठानं गतत्ता पि **सुगतो**।

सम्मा च गतो तेन तेन मग्गेन पहीने किलेसे पुन अपच्चागच्छन्तो। वुत्तं हेतं—"सोतापत्तिमग्गेन ये किलेसा पहीना, ते किलेसे न पुनेति न पच्चेति न पच्चागच्छती ति सुगतो पे०... अरहत्तमग्गेन ये किलेसा पहीना, ते किलेसे न पुनेति न पच्चेति न पच्चागच्छती ति सुगतो" ( ) ति। सम्मा वा गतो दीपङ्करपादमूलतो पभुति याव बोधिमण्डा ताव समत्तिंसपारमीपूरिकाय सम्मापटिपत्तिया सब्बलोकस्स हितसुखमेव करोन्तो सस्सतं, उच्छेदं, कामसुखं, अत्तकिलमथं ति इमे च अन्ते अनुपगच्छन्तो गतो ति **सम्मा गतत्ता पि सुगतो**।

सम्मा चेस गदति युत्तट्ठाने युत्तमेव वाचं भासती ति **सम्मा गदत्ता पि सुगतो**।

---

१. **सत्त सद्धम्मा** नाम—**सद्धा**, हिरी, ओत्तप्पं, बाहुसच्चं, विरियं, सति, पञ्ञा च।

तत्रिद साधकसुत्त—"यं तथागतो वाचं जानाति अभूत अतच्छं अनत्थसहितं, सा च परेस अप्पिया अमनापा, न तं तथागतो वाच भासति। य पि तथागतो वाचं जानाति भूत तच्छ अनत्थसहितं, सा च परेस अप्पिया अमनापा, तं पि तथागतो वाचं न भासति। य च खो तथागतो वाचं जानाति भूत तच्छं अत्थसहित, सा च परेसं अप्पिया अमनापा, तत्र कालञ्ञू तथागतो होति तस्सा वाचाय वेय्याकरणाय। य तथागतो वाचं जानाति अभूत अतच्छ अनत्थसहित, सा च परेस पिया मनापा, न त तथागतो वाच भासति। य पि तथागतो वाच जानाति भूतं तच्छ अनत्थसहित, सा च परेस पिया मनापा, त पि तथागतो वाच न भासति। य च खो तथागतो वाच जानाति भूतं तच्छं अत्थसहित, सा च परेस पिया मनापा, तत्र कालञ्ञू तथागतो होति तस्सा वाचाय वेय्याकरणाया" ति (म० २–७०)। एव **सम्मा गदत्ता पि सुगतो** ति वेदितब्बो।

८. सब्बथा पि विदितलोकत्ता पन **लोकविदू**। सो हि भगवा सभावतो समुदयतो निराधतो निरोधूपायतो ति सब्बथा लोक अवदि अञ्ञासि पटिविज्झि। यथाह—"तत्थ खो, आवुसो, न जायति न जीयति न मीयति न चवति न उपपज्जति, नाहं त गमनेन लोकस्स अन्त ञातेय्य[1] दट्ठेय पत्तय ति वदामि, न चाहं, आवुसो, अप्पत्वा व लोकस्स अन्तं दुक्खस्स अन्तकिरियं वदामि। अपि चाहं, आवुसो, इमस्मिं येव ब्याममत्त कळेवरे ससञ्ञिम्हि समनके लोकं च पञ्ञपेमि, लोकसमुदय च लोकनिरोधं च लोकनिरोधगामिनिं च पटिपद।

"गमनेन न पत्तब्बो लोकस्सन्तो कुदाचनं।
न च अपत्वा लोकन्तं दुक्खा अत्थि पमोचनं॥
तस्मा हवे लोकविदू सुमेधो लोकन्तगू वूसितब्रह्मचरियो।
लोकस्स अन्तं समितावि ञत्वा नासीसती लोकमिमं परं चा" ति॥

(सं० १–६०)

अपि च तयो लोका—सङ्खारलोको, सत्तलोको, ओकासलोको ति। तत्थ "एको लोको सब्बे सत्ता आहारट्ठितिका" (खु० ५–१३५) ति आगतट्ठाने **सङ्खारलोको** वेदितब्बो। "सस्सतो लोको ति वा असस्सतो लोको ति वा" (दी० १–१५७) ति आगतट्ठाने **सत्तलोको**।

---

१ **ञातेय्यं** ति जानितब्बं। "ञातायं" ति वा पाठो। ञाता अयं, निब्बानत्थिको ति अधिप्पायो।

"यावता चन्दिमसूरिया परिहरन्ति[1] दिसा भन्ति विरोचमाना।
ताव सहस्सधा लोको एत्थ ते वत्तती वसो" ति॥
(म० १-४०२)

आगतट्ठाने **ओकासलोको**।

तं पि भगवा सब्बथा अवेदि। तथा हिस्स "एको लोको, सब्बे, सत्ता आहारट्ठितिका। द्वे लोका, नामं च रूप च। तयो लोका, तिस्सो वेदना। चत्तारो लोका, चत्तारो आहारा। पञ्च लोका, पञ्चुपादानक्खन्धा। छ लोका, छ अज्झत्तिकानि आयतनानि। सत्त लोका, सत्तविञ्ञाणट्ठितियो। अट्ठ लोका अट्ठ लोकधम्मा। नव लोका नव सत्तावासा। दस लोका दसायतनानि। द्वादस लोका द्वादसायतनानि। अट्ठारस लोका अट्ठारस धातुयो" (खु० ५-१३५) ति अय सङ्खारलोको पि सब्बथा विदितो।

यस्मा पनेस सब्बेस पि सत्तान आसय जानाति, अनुसय जानाति, चरितं[2] जानाति, अधिमुत्ति[3] जानाति, अप्परजक्खे[4] महारजक्खे, तिक्खिन्द्रिये मुदिन्द्रिये, स्वाकारे द्वाकारे, सुविञ्ञापये दुविञ्ञापये, भब्बे अभब्बे सत्ते जानाति, तस्मास्स सत्तलोको पि सब्बथा विदितो।

यथा च सत्तलोको एवं ओकासलोको पि। तथा हेस एक चक्कवाळं आयामतो च वित्थारतो च योजनान द्वादससतसहस्सानि चतुत्तिससतानि च पञ्ञास च योजनानि। परिक्खेपतो पन—

सब्ब मतसहस्सानि छत्तिसपरिमण्डलं।
दस चेव सहस्सानि अड्ढुड्ढानि सतानि च॥

तत्थ—

दुवे सतसहस्सानि चत्तारि नहुतानि च।
एत्तकं बहलत्तेन सङ्खाताय वसुन्धरा॥

तस्सा एव सन्धारकं—

चत्तारि सतसहस्सानि अट्ठेव नहुतानि च।
एतकं बहलत्तेन जल वाते पतिट्ठितं॥

---

१. **यावता चन्दिमसूरिया परिहरन्ती** ति। यत्तके ठाने चन्दिमसूरिया परिवत्तन्ति परिब्भमन्ति। २ **चरित** ति। सुचरितदुच्चरित।

३. **अधिमुत्ति** अज्झासयधातु। सा दुविधा—हीनाधिमुत्ति, पणीताधिमुत्ती ति।

४. अप्परज अक्ख एतेसं ति अप्परजक्खा, अप्प वा रजं पञ्ञामये अक्खिम्हि एतेसं ति अप्परजक्खा, अनुस्सदरागादिरजा सत्ता, ते अप्परजक्खे। एव महारजक्खे ति।

तस्सा पि सन्धारको—

नव सतसहस्सानि मालुतो नभमुग्गतो।
सट्ठि चेव सहस्सानि एसा लोकस्स सण्ठिति[1]॥

एव सण्ठिते चेत्थ[2] योजनान—

चतुरासीति सहस्सानि अज्झोगाळ्हो महण्णवे।
अच्चुग्गतो तावदेव सिनेरु पब्बतुत्तमो॥
ततो उपड्ढुपड्ढेन पमाणेन यथाक्कम।
अज्झोगाळ्हुग्गता दिब्बा नानारतनचित्तिता॥
युगन्धरो ईसधरो करवीको सुदस्सनो।
नेमिन्धरो विनतको अस्सकण्णो गिरि ब्रह्मा[3]॥
एते सत्त महासेला सिनेरुस्स समन्ततो।
महाराजानमावासा देवयक्खनिसेविता॥
योजनानं सतानुच्चो हिमवा पञ्च पब्बतो[4]।
योजनानं सहस्सानि तीणि आयतवित्थतो॥
चतुरासीतिसहस्सेहि कूटेहि पटिमण्डितो।
तिपञ्चयोजनक्खन्धपरिक्खेपा नगव्हया॥
पञ्ञासयोजनक्खन्धसाखायामा समन्ततो।
सतयोजनवित्थिण्णा तावदेव च उग्गता॥
जम्बु यस्सानुभावेन जम्बुदीपो पकासितो।

यं चेतं जम्बुया पमाणं, एतदेव असुरान चित्रपाटलिया, गरुळान सिम्बलिरुक्खस्स, अपरगोयाने कदम्बस्स, उत्तरकुरूसु कप्परुक्खस्स, पुब्बविदेहे सिरीसस्स, तावतिंसेसु पारिच्छत्तकस्सा ति। तेनाहु पोराणा—

"पटली सिम्बली जम्बु देवान पारिच्छत्तको।
कदम्बो कप्परुक्खो च सिरीसेन भवति सत्तम[5]" ति॥
द्वेअसीति सहस्सानि अज्झोगाळ्हो महण्णवे।
अच्चुग्गतो तावदेव चक्कवाळसिलुच्चयो॥
परिक्खिपित्वा तं सब्बं लोकधातुमय ठितो" ति।

---

१. सण्ठिती ति। हेट्ठा उपरितो चा ति सब्बसो ठिति। २. एत्था ति। चक्कवाळे।
३. ब्रह्मा ति। महन्तो। ४ हिमवा पब्बतो पञ्च योजनानं सतानि उच्चो उब्बेधो त्यत्थो।
५. सत्तमं ति। लिङ्गविपल्लासेन वुत्त, सिरीसो भवति सत्तमो ति अत्थो।

तत्थ चन्दमण्डल एकूनपञ्ञासयोजनं। सुरियमण्डलं पञ्ञासयोजन। तावतिसभवन दससहस्सयोजन। तथा असुरभवन अवीचिमहानिरयो जम्बुदीपो च। अपरगोयान सत्तसहस्सयोजनं। तथा पुब्बविदेहं। उत्तरकुरु अट्ठसहस्स-योजन। एकमेको चेत्थ महादीपो पञ्चसतपञ्चसतपरित्तदीपपरिवारो। त सब्ब पि एक चक्कवाळं, एका लोकधातु। तदन्तरेसु लोकन्तरिकनिरया।

एव अनन्तानि चक्कवाळानि, अनन्ता लोकधातुयो भगवा अनन्तेन बुद्धञाणेन अवेदि, अञ्ञासि, पटिविज्झि। एवमस्स ओकासलोको पि सब्बथा विदितो। एवं पि **सब्बथा विदितलोकत्ता लोकविदू।**

९ अत्तना पन गुणेहि विसिट्ठतरस्स कस्सचि अभावतो नत्थि एतस्स उत्तरो ति **अनुत्तरो**। तथा हेस सीलगुणेना पि सब्बलोक अभिभवति, समाधि-पञ्ञा-विमुत्ति-विमुत्तिञाणदस्सनगुणेना पि। सीलगुणेना पि असमो असमसमो अप्पटिमो अप्पटिभागो अप्पटिपुग्गलो 'पे०' विमुत्तिञाणदस्सनगुणेना पि। यथाह—"न खो पनाहं समनुपस्सामि सदेवके लोके समारके 'पे० सदेवमनुस्साय पजाय अत्तना सीलसम्पन्नतरं" ति वित्थारो। एवं **अग्गप्पसादसुत्तादीनि** (अ० २–३७) "न मे आचरियो अत्थी" (वि० ३–११) ति आदिका गाथायो[१] च वित्थारेतब्बा।

१० पुरिसदम्मे सारेति ति **पुरिसदम्मसारथि**। दमेति विनेती ति वुत्त होति। तत्थ पुरिसदम्मा ति अदन्ता दमेतु युत्ता तिरच्छानपुरिसा पि मनुस्स-पुरिसा पि अमनुस्सपुरिसा पि। तथा हि भगवता तिरच्छानपुरिसा पि अपलालो नागराजा, चूळोदरो, महोदरो, अग्गिसिखो, धूमसिखो, आरवाळो नागराजा, धनपालको हत्थी ति एवमादयो दमिता, निब्बिसा कता, सरणेसु च सीलेसु च पतिट्ठापिता। मनुस्सपुरिसा पि सच्चक-निगण्ठपुत्त-अम्बट्ठमाणव-पोक्खरसाति-सोणदण्ड-कूटदन्तादयो, अमनुस्सपुरिसा पि आळवक सूचिलोम-यक्ख-सक्कदेव-राजादयो दमिता, विनीता विचित्रेहि विनयनूपायेहि। "अहं खो, केसि, पुरिसदम्मे सण्हेन पि विनेमि, फरुसेन पि विनेमि, सण्हफरुसेन पि विनेमी" (अं० २–११२) ति इद चेत्थ सुत्तं वित्थारेतब्बं।

---

१. **आदिका गाथायो** ति।

"अहं हि अरहा लोके अहं सत्था अनुत्तरो।
एकोम्हि सम्मासम्बुद्धो सीतिभूतोस्मि निब्बुतो॥
दन्तो दमयतं सेट्ठो सन्तो समयतं इसि।
मुत्तो मोचयतं अग्गो तिण्णो तारयतं वरो"॥

ति एवमादिका गाथायो वित्थारेतब्बा।

अपि च भगवा विसुद्धसीलादीनं पठमज्झानादीनि सोतापन्नादीन च उत्तरि-मग्गपटिपदं आचिक्खन्तो दन्ते पि दमेति येव।

अथ वा अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथी ति एकमेविदं अत्थपद। भगवा हि तथा पुरिसदम्मे सारेति, यथा एकपल्लङ्केनेव निसिन्ना अट्ठ दिसा असज्जमाना धावन्ति। तस्मा **अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथी** ति वुच्चति। "हत्थिदमकेन, भिक्खवे, हत्थिदम्मो सारितो एकं येव दिसं धावति" (म० ३–३०३) ति। इदं चेत्थ सुत्तं वित्थारेतब्ब।

११. दिट्ठधम्मिकसम्परायिकपरमत्थेहि यथारहं अनुसासती ति **सत्था**। अपि च "सत्था विया ति सत्था, भगवा सत्थवाहो। यथा **सत्थवाहो** सत्थे कन्तारं तारेति, निरुदककन्तार तारेति, उत्तारेति, नित्तारेति, पतारेति, खेमन्तभूमिं सम्पापेति, एवमेव भगवा सत्था सत्थवाहो सत्ते कन्तार तारेति, जातिकन्तारं तारेती" (अं० ४·१–३९१) ति आदिना निद्देसनयेन पेत्थ अत्थो वेदितब्बो।

१२ **देवमनुस्सानं** ति। देवानं च मनुस्सान च। उक्कट्ठपरिच्छेदवसेन भब्बपुग्गलपरिच्छेदवसेन चेत वुत्त। भगवा पन तिरच्छानगतान पि अनुसासनि-प्पदानेन सत्था येव। ते पि हि भगवतो धम्मस्सवनेन उपनिस्सयसम्पत्तिं पत्वा ताय एव उपनिस्सयसम्पत्तिया दुतिये वा ततिये वा अत्तभावे मग्गफल-भागिनो होन्ति।

मण्डूकदेवपुत्तादयो चेत्थ निदस्सन। भगवति किर गग्गराय[1] पोक्खरणिया तीरे चम्पानगरवासीनं धम्मं देसियमाने एको मण्डूको भगवतो सरे निमित्त अग्गहेसि। तं एको वच्छपालको दण्ड ओलुब्भ तिट्ठन्तो सीसे सन्निरुम्भित्वा अट्ठासि। सो तावदेव कालं कत्वा तावतिंसभवने द्वादसयोजनिके कनकविमाने निब्बत्ति। सुत्तप्पबुद्धो विय च तत्थ अच्छरासङ्घपरिवुतं अत्तानं दिस्वा "अरे, अहं पि नाम इध निब्बत्तो, किं नु खो कम्मं अकासिं" ति आवज्जेन्तो न अञ्ञं किञ्चि अद्दस, अञ्ञत्र भगवतो सरे निमित्तग्गाहा। सो तावदेव सह विमानेन आगन्त्वा भगवतो पादे सिरसा वन्दि। भगवा जानन्तो व पुच्छि—

"को मे वन्दति पादानि इद्धिया यससा जलं।
अभिक्कन्तेन वण्णेन सब्बा ओभासयं दिसा" ति॥
"मण्डूकोहं पुरे आसिं उदके वारिगोचरो।
तव धम्म सुणन्तस्स अवधी वच्छपालको" ति॥

---

१. गग्गराया ति। गग्गराय नाम रञ्ञो देविया, ताय वा कारितत्ता "गग्गरा" ति लद्धनामाय।

भगवा तस्स धम्मं देसेसि। चतुरासीतिया पाणसहस्सानं धम्माभिसमयो अहोसि। देवपुत्तो पि सोतापत्तिफले पतिट्ठाय सित कत्वा पक्कमी ति। (खु० २-७७)

१३ य पन किञ्चि अत्थि ञेय्यं नाम सब्बस्सेव बुद्धत्ता विमोक्खन्तिकञाण-वसेन **बुद्धो**। यस्मा वा चत्तारि सच्चानि अत्तना पि बुज्झि, अञ्ञे पि सत्ते बोधेसि, तम्मा एवमादीहि पि कारणेहि बुद्धो। इमस्स च पनत्थस्स विञ्ञापनत्थ "बुज्झिता सच्चानी ति बुद्धो। बोधेता पजाया ति बुद्धो" ति एव पवत्तो सब्बो पि **निद्देस**नयो, (खु० ४ १-१६७) **पटिसम्भिदा**नयो (खु० ५-२०२) वा वित्थारेतब्बो।

१४ **भगवा** ति। इदं पनस्स गुणविसिट्ठसब्बसत्तुत्तमगरुगारवाधिवचन। तेनाहु **पोराणा**—

भगवा ति वचनं सेट्ठ भगवा ति वचनमुत्तम।
गरुगारवयुत्तो सो भगवा तेन वुच्चती" ति॥ (१)

चतुब्बिध वा नाम—आवत्थिकं, लिङ्गिक, नेमित्तिकं, अधिच्चसमुप्पन्नं ति। **अधिच्चसमुप्पन्नं** नाम लोकिय्वोहारेन यादिच्छक ति वुत्त होति। तत्थ वच्छो, दम्मो, बलीबद्दो ति एवमादि आवत्थिकं। दण्डी, छत्ती, सिखी, करी ति एवमादि **लिङ्गिकं**। तेविज्जो, छळभिञ्ञो ति एवमादि **नेमित्तिकं**। सिरि-वड्ढको, धनवड्ढको ति एवमादि वचनत्थ अनपेक्खित्वा पवत्तं **अधिच्चसमुप्पन्नं**।

इदं पन 'भगवा' ति नाम नेमित्तिक। न **महामायाय**, न **सुद्धोदन**महाराजेन, न असीतिया ञातिसहस्सेहि कतं, न सक्कसन्तुसितादीहि देवताविसेसेहि। वुत्तं पि चेतं धम्मसेनापतिना—"भगवा ति नेतं नाम मातरा कत · पे० विमोक्खन्तिकमेतं बुद्धान भगवन्तान बोधिया मूले सह सब्बञ्ञुतञाणस्स पटिलाभा सच्छिका पञ्ञत्ति यदिद भगवा" (खु० ४ १-१७६) ति।

यगुणनेमित्तिकं चेतं नामं, तेसं गुणान पकासनत्थ इमं गाथ वदन्ति—

"भगी भजी भागि विभत्तवा इति अकासि भग्गं ति गरू ति भाग्यवा।
बहूहि ञायेहि सुभावितत्तनो भवन्तगो सो भगवा ति वुच्चती' ति॥

निद्देसे (खु० ४ : १-१७६) वुत्तनयेनेव चेत्थ तेसं तेसं पदानं अत्थो दट्ठब्बो। (२)

अय पन अपरो नयो—

भाग्यवा भग्गवा वुत्तो भगेहि च विभत्तवा।
भत्तवा वन्तगमनो भवेसु भगवा ततो ति॥

तत्थ "वण्णागमो वण्णविपरियो" ति आदिकं निरुत्तिलक्खणं[1] गहेत्वा सद्दनयेन वा पिसोदरादिपक्खेपलक्खणं[2] गहेत्वा यस्मा लोकियलोकुत्तरसुखाभिनिब्बत्तक दानसीलादिपारप्पत्त भाग्यमस्स अत्थि, तस्मा भाग्यवा ति वत्तब्बे **भगवा** ति वुच्चती ति ञातब्बं। (३)

यस्मा पन लोभदोसमोहविपरीतमनसिकारअहिरिकानोत्तप्पकोधूपनाहमक्खपळासइस्सामच्छरियमायासाठेय्यथम्भसारम्भमानातिमानमदपमादतण्हाअविज्जातिविधाकुसलमूलदुच्चरितसकिलेसमलविसमसञ्ञावितक्कपपञ्चचतुब्बिधविपरियेसआसवगन्थओघयोगअगतितण्हुप्पादुपादानपञ्चचेतोखिलविनिबन्धनीवरणाभिनन्दनाछविवादमूलतण्हाकायसत्तानुसयअट्ठमिच्छत्तनवतण्हामूलकदसाकुसलकम्मपथद्वासट्ठिदिट्ठिगतअट्ठसततण्हाविचरितप्पभेदसब्बदरथपरिळाहकिलेससतसहस्सानि, सङ्खेपतो वा पञ्च किलेसखन्धअभिसङ्खारदेवपुत्तमच्चुमारे अभञ्जि, तस्मा भग्गत्ता एतेसं परिस्सयान भग्गवा ति वत्तब्बे **भगवा** ति वुच्चति।

आह चेत्थ—

"भग्गरागो भग्गदोसो भग्गमोहो अनासवो।
भग्गास्स पापका धम्मा भगवा तेन वुच्चती" ति॥

भाग्यवताय चस्स सतपुञ्ञलक्खणधरस्स रूपकायसम्पत्ति दीपिता होति। भग्गदोसताय धम्मकायसम्पत्ति। तथा लोकियसरिक्खकानं बहुमतभावो, गहट्ठपब्बजितेहि अभिगमनीयता, अभिगतान च नेसं कायचित्तदुक्खापनयने पटिबलभावो, आमिसदानधम्मदानेहि उपकारिता, लोकियलोकुत्तरसुखेहि च सञ्ञोजनसमत्थता दीपिता होति। (४)

यस्मा च लोके इस्सरियधम्मयससिरिकामपयत्तेसु छसु धम्मेसु भगसद्दो पवत्तति, परमं चस्स सकचित्ते इस्सरिय, अणिमालङ्घिमादिकं वा लोकियसम्मत सब्बाकारपरिपूर अत्थि। तथा लोकुत्तरो धम्मो। लोकत्तयब्यापको यथाभुच्चगुणाधिगतो अति विय परिसुद्धो यसो। रूपकायदस्सनब्यावटजननयनप्पसादजननसमत्था सब्बाकारपरिपूरा सब्बङ्गपच्चङ्गसिरी। यं यं एतेन इच्छित पत्थित अत्तहित परहित वा तस्स तस्स तथेव अभिनिप्फन्नत्ता इच्छितत्थ-

---

१ "वर्णागमो वर्णविपर्ययश्च द्वौ चापरौ वर्णविकारनाशौ।
धातोस्तदर्थातिशयेन योगस्तदुच्यते पञ्चविध निरुक्तम्"॥
इति य कासिकावुत्तियं वुत्तं (काशिका ६–३–१०९)।

२. पिसोदरादीति। "पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्" (पा० सू० ६·३·१०९) ति सुत्तेन पिसोदरादिगणे पक्खिपित्वा तं लक्खणं गहेत्वा ति।

निब्बत्तिसञ्ञितो कामो। सब्बलोकगरुभावप्पत्तिहेतूभतो सम्मावायामसङ्खातो पयत्तो च अत्थि। तस्मा इमेहि भगेहि युत्तत्ता पि भगा अस्स सन्ती ति इमिना अत्थेन **भगवा** ति वुच्चति। (५)

यस्मा पन कुलादीहि भेदेहि सब्बधम्मे, खन्धायतनधातुसच्चइन्द्रियपटिच्चसमुप्पादादीहि वा कुसलादिधम्मे, पीळनसङ्खतसन्तापविपरिणामट्ठेन वा **दुक्खं** अरियसच्चं, आयूहन-निदान-संयोग-पलिबोधट्ठेन **समुदयं,** निस्सरण-विवेकासङ्खत-अमतट्ठेन **निरोधं,** निय्यानिक-हेतु-दस्सनाधिपतेय्यट्ठेन **मग्गं** विभत्तवा, विभजित्वा विवरित्वा देसितवा ति वुत्तं होति, तस्मा विभत्तवा ति वत्तब्बे **भगवा** ति वुच्चति। (६)

यस्मा च एस दिब्ब-ब्रह्म-अरियविहारे[1] काय-चित्त-उपधिविवेके[2] सुञ्ञतप्पणिहितानिमित्तविमोक्खे अञ्ञे[3] च लोकियलोकुत्तरे उत्तरिमनुस्सधम्मे भजि सेवि बहुलं अकासि, तस्मा भत्तवा ति वत्तब्बे **भगवा** ति वुच्चति। (७)

यस्मा पन तीसु भवेसु तण्हासङ्खातं गमनं अनेन वन्तं, तस्मा भवेसु वन्तगमनो ति वत्तब्बे भवसद्दतो भ-कारं, गमनसद्दतो ग-कारं, वन्तसद्दतो व-कारं च दीघं कत्वा आदाय **भगवा** ति वुच्चति, यथा लोके 'मेहनस्स खस्स माला' ति वत्तब्बे 'मेखला' ति। (८)

१५. तस्सेव इमिना च इमिना च कारणेन सो भगवा अरहं पे० इमिना च इमिना च कारणेन भगवा ति बुद्धगुणे अनुस्सरतो "नेव तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति। उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति तथागतं आरब्भ" (अ० ३-८)।

इच्चस्स एवं रागादिपरियुट्ठानाभावेन विक्खम्भितनीवरणस्स कम्मट्ठानाभिमुखताय उजुगतचित्तस्स बुद्धगुणपोणा[4] वितक्कविचारा पवत्तन्ति। बुद्धगुणे अनुवितक्कयतो अनुविचारयतो पीति उप्पज्जति, पीतिमनस्स पीतिपदट्ठानस्स पस्सद्धिया कायचित्तदरथा पटिप्पस्सम्भन्ति, पस्सद्धदरथस्स कायिकं पि चेतसिकं पि सुखं उप्पज्जति, सुखिनो बुद्धगुणारम्मणं हुत्वा चित्तं समाधियती

---

१. कसिणादिआरम्मणानि रूपावचरज्झानानि **दिब्बविहारो**। मेत्तादिज्झानानि **ब्रह्मविहारो**। फलसमापत्ति **अरियविहारो**।

२ कामेहि विवेकट्ठकायतावसेन एकीभावो **कायविवेको**। पठमज्झानादिना नीवरणादीहि विचित्तचित्तता **चित्तविवेको**। **उपधिविवेको** निब्बानं।

३. **अञ्ञे** ति। लोकियाभिञ्ञादिके।

४. **बुद्धगुणपोणा** ति। बुद्धगुणनिन्ना।

ति अनुक्कमेन एकक्खणे झानङ्गानि उप्पज्जन्ति। बुद्धगुणान पन गम्भीरताय नानप्पकारगुणानुस्सरणाधिमुत्तताय वा अप्पन अप्पत्वा उपचारप्पत्तमेव झान होति। तदेतं बुद्धगुणानुस्सरणवसेन उप्पन्नत्ता बुद्धानुस्सतिच्चेव सङ्खं गच्छति।

१६ इम च पन बुद्धानुस्मतिमनुयत्तो भिक्खु सत्थरि सगारवो होति सप्पतिस्सो, सद्धावेपुल्ल सतिवेपुल्लं पञ्ञावेपुल्ल पुञ्ञवेपुल्लं च अधिगच्छति, पीतिपामोज्जबहुलो होति, भयभेरवसहो, दुक्खाधिवासनसमत्थो, सत्थारा सवाससञ्ञं पटिलभति, बुद्धगुणानुस्सतिया अज्झावुत्थ चस्स सरीर पि चेतियघरमिव पूजारहं होति, बुद्धभूमिय चित्त नमति। वीतिक्कमितब्बवत्थुसमायागे चस्स सम्मुखा सत्थार पस्सतो विय हिरोत्तप्पं पच्चुपट्ठाति, उत्तरि अप्पटिविज्झन्तो पन सुगतिपरायनो होति।

तस्मा हवे अप्पमादं कयिराम सुमेधसो।
एव महानुभावाय बुद्धानुस्सतिया सदा ति॥

इद ताव बुद्धानुस्सतिय वित्थारकथामुखं॥

धम्मानुस्सतिकथा

१७. धम्मानुस्सति भावेतुकामेना पि रहोगतेन पटिसल्लीनेन "स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्त वेदितब्बो विञ्ञूही" ति एवं परियत्तिधम्मस्स चेव नवविधस्स च लोकुत्तरधम्मस्स गुणा अनुस्सरितब्बा।

१८. **स्वाक्खातो** ति। इमस्मि हि पदे परियत्तिधम्मो पि सङ्गह गच्छति, इतरेसु लोकुत्तरधम्मो व। तत्थ परियत्तिधम्मो ताव स्वाक्खातो आदिमज्झपरियोसानकल्याणत्ता,सात्थसब्यञ्जनकेवलपरिपुण्णपरिसुद्धब्रह्मचरियप्पकासनत्ता च।

यं हि भगवा एकगाथं पि देसेति, सा समन्तभद्दकत्ता[1] धम्मस्स पठमपादेन आदिकल्याणा, दुतियततियपादेहि मज्झेकल्याणा, पच्छिमपादेन परियोसानकल्याणा। एकानुसन्धिक सुत्त निदानेन आदिकल्याणं, निगमनेन परियोसानकल्याण, सेसेन मज्झेकल्याण। नानानुसन्धिकं सुत्तं पठमानुसन्धिना आदिकल्याण, पच्छिमेन परियोसानकल्याण, सेसेहि मज्झेकल्याण। अपि च सनिदानसउप्पत्तिकत्ता[2] आदिकल्याणं, वेनेय्यानं अनुरूपतो अत्थस्स अविपरीतताय च हेतूदाहरणयुत्ततो च मज्झेकल्याणं, सोतून सद्धापटिलाभजनेन निगमनेन च परियोसानकल्याण।

---

१ **समन्तभद्दकत्ता** ति। सब्बभागेहि सुन्दरत्ता। २ **सनिदानसउप्पत्तिकत्ता** ति। यथावुत्तनिदानेन सनिदानताय सअट्ठुप्पत्तिकताय च।

सकलो पि सासनधम्मो[1] अत्तनो अत्थभूतेन[2] सीलेन आदिकल्याणो, समथ-विपस्सनामग्गफलेहि मज्झेकल्याणो, निब्बानेन परियोसानकल्याणो। सील-समाधीहि वा आदिकल्याणो, विपस्सनामग्गेहि मज्झेकल्याणो, फलनिब्बानेहि परियोसानकल्याणो। बुद्धसुबोधिताय आदिकल्याणो, धम्मसुधम्मताय मज्झे-कल्याणो, सङ्घसुप्पटिप्पत्तिया परियोसानकल्याणो। त सुत्वा तथत्थाय पटि-पन्नेन अधिगन्तब्बाय अभिसम्बोधिया[3] वा आदिकल्याणो, पच्चेकबोधिया[4] मज्झेकल्याणो, सावकबोधिया[5] परियोसानकल्याणो।

सुय्यमानो चेस नीवरणविक्खम्भनतो सवनेन पि कल्याणमेव आवहती ति आदिकल्याणो, पटिपज्जियमानो समथविपस्सनासुखावहनतो पटिपत्तिया पि कल्याणं आवहती ति मज्झेकल्याणो, तथापटिपन्नो[6] च पटिपत्तिफले निट्ठिते तादिभावावहनतो[7] पटिपत्तिफलेन पि कल्याणं आवहतो ति परियोसानकल्याणो ति एव आदि-मज्झ-परियोसानकल्याणत्ता **स्वाक्खातो**।

यं पनेस भगवा धम्मं देसेन्तो सासनब्रह्मचरिय[8] मग्गब्रह्मचरियं[9] च पकासेति, नानानयेहि दीपेति, तं यथानुरूपं अत्थसम्पत्तिया सात्थ, ब्यञ्जनसम्पत्तिया सब्यञ्जनं। सङ्कासन-पकासन-विवरण-विभजन-उत्तानीकरण-पञ्ञत्ति-अत्थपद-समायोगतो[10] सात्थं, अक्खरपदब्यञ्जनाकारनिरुत्तिनिद्देससम्पत्तिया सब्यञ्जन। अत्थगम्भीरता-पटिवेधगम्भीरताहि सात्थ, धम्मगम्भीरता-देसनागम्भीरताहि सब्यञ्जनं। अत्थपटिभानपटिसम्भिदाविसयतो सात्थ, धम्मनिरुत्तिपटिसम्भिदा-विसयतो सब्यञ्जन। पण्डितवेदनीयतो परिक्खकजनप्पसादक ति सात्थं, सद्धेय्यतो लोकियजनप्पसादकं ति सब्यञ्जनं। गम्भीराधिप्पायतो सात्थं, उत्तानपदतो

---

१ "सब्बपापस्स अकरण कुसलस्स उपसम्पदा।
सचित्तपरियोदपनं एतं बुद्धान सासन" ति॥ (खु० १–३५)
एवं वुत्तस्स सत्थुसासनस्स पकासको परियत्तिधम्मो।

२ अत्थभूतेना ति। उपकारकेन। ३ अभिसम्बोधिया ति। सम्बुद्धञाणेन।

४. पच्चेकबोधिया ति। पच्चेकबुद्धञाणेन। ५. सावकबोधिया ति। अरहत्तञाणेन।

६ **तथापटिपन्नो** ति। यथा समथविपस्सनासुखं आवहति, यथा वा सत्थारा अनुसिट्ठं, तथा पटिपन्नो सासनधम्मो। ७ **तादिभावावहनतो** ति। छळङ्गुपेक्खावसेन इट्ठादीसु तादिभावस्स लोकधम्मेहि अनुपलेपस्स आवहनतो।

८ अविसेसेन तिस्सो सिक्खा, सकलो च तन्तिधम्मो—सासनब्रह्मचरियं।

९. सब्बसिक्खानं मण्डभूतसिक्खत्तयसङ्गहितो अरियमग्गो—मग्गब्रह्मचरियं।

१०. अक्खरेहि दीपनं **सङ्कासनं**। पदेहि **पकासन**। ब्यञ्जनेहि **विवरणं**। आकारेहि **विभजनं**। निरुत्तीहि **उत्तानीकरण**। निद्देसेहि पञ्ञापनं **पञ्ञत्ति**।

सब्यञ्जनं, उपनेतब्बस्स अभावतो सकलपरिपुण्णभावेन केवलपरिपुण्णं, अपनेतब्बस्स अभावतो निद्दोसभावेन परिसुद्ध।

अपि च पटिपत्तिया अधिगमब्यत्तितो[1] सात्थं। परियत्तिया आगमब्यत्तितो[2] सब्यञ्जनं, सीलादिपञ्चधम्मक्खन्धयुत्ततो[3] केवलपरिपुण्ण, निरुपक्किलेसतो नित्थरणताय पवत्तितो लोकामिसनिरपेक्खतो च परिसुद्धं ति एव सात्थसब्यञ्जन-केवलपरिपुण्ण-परिसुद्धब्रह्मचरियप्पकासनतो स्वाक्खातो।

अत्थविपल्लासाभावतो वा सुट्ठु अक्खातो ति स्वाक्खातो। यथा हि अञ्ञतित्थियानं धम्मस्स अत्थो विपल्लासं आपज्जति, अन्तरायिका ति वुत्त-धम्मान अन्तरायिकत्ताभावतो, निय्यानिका ति वुत्तधम्मान निय्यानिकत्ता-भावतो। तेन ते दुरक्खातधम्मा येव होन्ति, न तथा भगवतो धम्मस्स अत्थो विपल्लास आपज्जति। 'इमे धम्मा अन्तरायिका, इमे धम्मा निय्यानिका' ति एवं वुत्तधम्मान तथाभावानतिक्कमनतो ति एवं ताव परियत्तिधम्मो स्वाक्खातो।

लोकुत्तरधम्मो पन निब्बानानुरूपाय पटिपत्तिया पटिपदानुरूपस्स च निब्बानस्स अक्खातत्ता **स्वाक्खातो**। यथाह—"सुपञ्ञत्ता खो पन तेन भगवता सावकान निब्बानगामिनी पटिपदा, संसन्दति निब्बान च पटिपदा च। सेय्यथा पि नाम गङ्गोदकं यमुनोदकेन ससन्दति समेति, एवमेव सुपञ्ञत्ता खो पन तेन भगवता सावकानं निब्बानगामिनी पटिपदा, ससन्दति निब्बानं च पटिपदा चा" (दी० २-१६७) ति।

अरियमग्गो चेत्थ अन्तद्वयं[4] अनुपगम्म मज्झिमा पटिपदाभूतो व "मज्झिमा पटिपदा" ति अक्खातत्ता स्वाक्खातो। सामञ्ञफलानि पटिप्पस्सद्धकिलेसानेव "पटिप्पस्सद्धकिलेसानी" ति अक्खातत्ता स्वाक्खातानि। निब्बानं सस्सता-मतताणालेणादिसभावमेव सस्सतादिसभाववसेन अक्खातत्ता स्वाक्खात ति। एवं लोकुत्तरधम्मो पि स्वाक्खातो। (१)

१९. **सन्दिट्ठिको** ति। एत्थ पन अरियमग्गो ताव अत्तनो सन्ताने रागादीनं अभावं करोन्तेन अरियपुग्गलेन सामं दट्ठब्बो ति **सन्दिट्ठिको**। यथाह—"रत्तो खो, ब्राह्मण, रागेन अभिभूतो परियादिण्णचित्तो अत्तब्याबाधाय पि चेतेति, परब्याबाधाय पि चेतेति, उभयब्याबाधाय पि चेतेति। चेतसिकपि दुक्खं दोमनस्सं

१. बोधस्स पाकटभावतो। २ आगमानं पाकटभावतो।

३ सीलादीहि पञ्चहि धम्मकोट्ठासेहि अविरहितत्ता।

४. अन्तद्वय ति। सस्सतुच्छेदं कामसुखअत्तकिलमथानुयोगं, लीनुद्धच्च, पतिट्ठानायूहनं ति एवंपभेद अन्तद्वयं।

पटिसवेदेति। रागे पहीने नेव अत्तब्याबाधाय चेतेति, न परब्याबाधाय चेतेति, न उभयब्याबाधाय चतेति, न चेतसिकं दुक्खं दामनस्स पटिसवेदेति। एव पि खो, ब्राह्मण, सन्दिट्ठिको धम्मो होति" (अ० १–१४४) ति।

अपि च नवविधो पि लोकुत्तरधम्मो येन येन अधिगतो होति, तेन तेन परसद्धाय गन्तब्बत हित्वा पच्चवेक्खणञाणेन सय दट्ठब्बो ति **सन्दिट्ठिको**।

अथ वा पसत्था दिट्ठि सन्दिट्ठि, सन्दिट्ठिया जयती[1] ति सन्दिट्ठिको। तथा हेत्थ अरियमग्गो सम्पयुत्ताय, अरियफल कारणभूताय, निब्बान विसयिभूताय सन्दिट्ठिया किलेसे जयति। तस्मा यथा रथेन जयती ति रथिको, एवं नवविधो पि लोकुत्तरधम्मो सन्दिट्ठिया जयती ति **सन्दिट्ठिको**।

अथ वा दिट्ठं ति दस्सन वुच्चति। दिट्ठमेव सन्दिट्ठं, दस्सन ति अत्थो। सन्दिट्ठं अरहती[2] ति सन्दिट्ठिको। लोकुत्तरधम्मो हि भावनाभिसमयवसेन सच्छिकिरियाभिसमयवसेन च दिस्समानो येव वट्टभयं निवत्तेति। तस्मा यथा वत्थ अरहती ति वत्थिको, एव सन्दिट्ठं अरहती ति **सन्दिट्ठिको**॥ (२)

अत्तनो फलदान सन्धाय नास्स कालो ति अकालो। अकालो येव **अकालिको**। न पञ्चाहसत्ताहादिभेद काल खेपेत्वा फलं देति, अत्तनो पन पवत्तिसमनन्तरमेव फलदो ति वुत्त होति।

अथ वा अत्तनो फलदाने पकट्ठो कालो पत्तो अस्सा ति कालिको। को सो? लोकियो कुसलधम्मो। अय पन समनन्तरफलत्ता न कालिको ति **अकालिको**। इद मग्गमेव सन्धाय वुत्त॥ (३)

२१. "एहि, पस्स इमं धम्म" ति एव पवत्त एहिपस्सविधिं[3] अरहती ति **एहिपस्सिको**। कस्मा पनेस तं विधिं अरहती ति? विज्जमानत्ता[4] परिसुद्धत्ता[5] च। रित्तमुट्ठियं हि हिरञ्ञ वा सुवण्णं वा अत्थी ति वत्वा पि "एहि पस्स इम" ति न सक्का वत्तु। कस्मा? अविज्जमानत्ता। विज्जमान पि च गूथं वा मुत्त वा मनुञ्ञभावप्पकासनेन चित्तसम्पहसनत्थ "एहि, पस्स इम" ति न सक्का वत्तु। अपि च खो पन तिणेहि वा पण्णेहि वा पटिच्छादेतब्बमेव होति। कस्मा? अपरिसुद्धत्ता। अयं पन नवविधो पि लोकुत्तरधम्मो सभावतो

१. "तेन दीव्यति" (पा० सू० ४।४।२) इति पाणिनिसुत्तानुसार वुत्तं।

२ "तदर्हति" (पा० सू० ५।१।६३) इति पाणिनिसुत्तानुसारं वुत्तं।

३. **विधिं** ति। विधान, "एहि पस्सा" ति एवपवत्तविधिवचन।

४. **विज्जमानत्ता** ति। परमत्थतो उपलब्भमानत्ता।

५. **परिसुद्धत्ता** ति। किलेसमलविरहेन सब्बथा विसुद्धत्ता।

विज्जमानो विगतवलाहके आकासे सम्पुण्णचन्दमण्डल विय पण्डुकम्बले निक्खित्त-जातिमणि विय च परिसुद्धो। तस्मा विज्जमानत्ता परिसुद्धत्ता च एहिपस्सविधिं अरहती ति **एहिपस्सिको**॥ (४)

२२ उपनतब्बो ति **ओपनेय्यिको**। अय पनेत्थ विनिच्छयो—उपनयन उपनयो, आदित्त चेलं वा सीस वा अज्झुपेक्खित्वा पि भावनावसेन अत्तनो चित्ते उपनयन अरहती ति ओपनयिको, ओपनयिको व ओपनेय्यिको। इदं सङ्खते लोकुत्तरधम्मे युज्जति। असङ्खतो पन अत्तनो चित्तेन उपनयनं अरहती ति ओपनय्यिको। सच्छिकिरियावसन अल्लीयन अरहती ति अत्थो।

अथ वा निब्बान उपनेती ति। अरियमग्गो उपनेय्यो। सच्छिकातब्बतं उपनेतब्बो ति फलनिब्बानधम्मो उपनेय्यो। उपनेय्यो एव ओपनेय्यिको॥ (५)

२३ **पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही** ति। सब्बेहि पि उग्घटितञ्ञूआदीहि[1] विञ्ञूहि अत्तनि अत्तनि वेदितब्बो "भावितो मे मग्गो, अधिगतं फलं, सच्छिकतो निरोधो" ति। न हि उपज्झायेन भावितेन मग्गेन सद्धिविहारिकस्स किलेसा पहीयन्ति। न सो तस्स फलसमापत्तिया फासु विहरति। न तेन सच्छिकतं निब्बानं सच्छिकरोति। तस्मा न एस परस्स सीसे आभरणं विय दट्ठब्बो। अत्तनो पन चित्त येव दट्ठब्बो, अनुभवितब्बो विञ्ञूही ति वुत्त होति। बालानं पन अविसयो चेम॥ (६)

२४ अपि च स्वाक्खातो अयं धम्मो। कस्मा? सन्दिट्ठिकत्ता। सन्दिट्ठिको, अकालिकत्ता। अकालिको, एहिपस्सिकत्ता। यो च एहिपस्सिको, सो नाम ओपनेय्यिको होती ति।

२५. तस्सेवं स्वाक्खातत्तादिभेदे धम्मगुणे अनुस्सरतो "नेव तस्मिं समये रागपरियुट्ठित चित्तं होति। न दोस पे० न मोहपरियुट्ठित चित्तं होति। उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति धम्मं आरब्भा" (अ० ३-८) ति पुरिम-नयेनेव[2] विक्खम्भितनीवरणस्स एकक्खणे झानङ्गानि उप्पज्जन्ति। धम्मगुणानं पन गम्भीरताय नानप्पकारगुणानुस्सरणाधिमुत्तताय वा अप्पन अप्पत्वा उपचार-प्पत्तमेव झानं होति। तदेत धम्मगुणानुस्सरणवसेन उप्पन्नत्ता धम्मानुस्सतिच्चेव सङ्ख्यं गच्छति।

इम च पन धम्मानुस्सतिं अनुयुत्तो भिक्खु एवं ओपनेय्यिकस्स धम्मस्स देसेतारं इमिना पङ्गेन समन्नागतं सत्थारं नेव अतीतसे समनुपस्सामि, न पनेतरहि अञ्ञत्र तेन भगवता ति एवं धम्मगुणदस्सनेनेव सत्थरि सगारवो होति

---

१ कतमो च पुग्गलो उग्घटितञ्ञू? इच्चेतस्स पञ्हस्स विस्सज्जनं पुग्गलपञ्ञत्तियं (६४ पि०) दट्ठब्ब। २ बुद्धानुस्सतियं वुत्तनयेन।

सप्पतिस्सो। धम्मे गरुचित्तिकारो सद्धादिवेपुल्लं अधिगच्छति, पीतिपामोज्ज-बहुलो होति, भयभेरवसहो, दुक्खाधिवासनसमत्थो, धम्मेन संवाससञ्ञं पटि-लभति, धम्मगुणानुस्सतिया अज्झावुत्थं चस्स सरीरं पि चेतियघरमिव पूजारहं होति, अनुत्तरधम्माधिगमाय चित्तं नमति, वीतिक्कमितब्बवत्थुसमायोगे चस्स धम्मसुधम्मतं समनुस्सरतो हिरोत्तप्पं पच्चुपट्ठाति। उत्तरि अप्पटिविज्झन्तो पन सुगतिपरायनो होति।

तस्मा हवे अप्पमादं कयिराथ सुमेधसो।
एवं महानुभावाय धम्मानुस्सतिया सदा ति॥

इदं धम्मानुस्सतियं वित्थारकथामुखं॥

सङ्घानुस्सतिकथा

२६ सङ्घानुस्सतिं भावेतुकामेना पि रहोगतेन पटिसल्लीनेन "सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, उजुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, ञायप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, सामीचिप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, यदिदं चत्तारि-पुरिसयुगानि अट्ठ पुरिसपुग्गला—एस भगवतो सावकसङ्घो आहुनेय्यो, पाहुनेय्यो, दक्खिणेय्यो, अञ्जलिकरणीयो, अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा" ति एवं अरिय-सङ्घगुणा अनुस्सरितब्बा।

२७ तत्थ **सुप्पटिपन्नो** ति। सुट्ठु पटिपन्नो। सम्मापटिपदं अनिवत्तिपटिपदं अनुलोमपटिपदं अपच्चनीकपटिपदं धम्मानुधम्मपटिपदं पटिपन्नो ति वुत्तं होति। भगवतो ओवादानुसासनिं सक्कच्चं सुणन्ती ति सावका। सावकानं सङ्घो **सावकसङ्घो**, सीलदिट्ठिसामञ्ञताय सङ्घातभावं आपन्नो सावकसमूहो ति अत्थो। यस्मा पन सा सम्मापटिपदा उजु अवङ्का अकुटिला अजिम्हा, अरियो च ञायो[1] ति पि वुच्चति, अनुच्छविकत्ता च सामीचो ति पि सङ्ख्यं गता। तस्मा तं पटिपन्नो अरियसङ्घो **उजुप्पटिपन्नो ञायप्पटिपन्नो सामीचिप्पटिपन्नो** ति पि वुत्तो।

एत्थ च ये मग्गट्ठा, ते सम्मापटिपत्तिसमङ्गिताय सुप्पटिपन्ना। ये फलट्ठा, ते सम्मापटिपदाय अधिगन्तब्बस्स अधिगतत्ता अतीतं पटिपदं सन्धाय सुप्पटिपन्ना ति वेदितब्बा।

अपि च स्वाक्खाते धम्मविनये यथानुसिट्ठं पटिपन्नत्ता पि अपण्णकपटिपदं पटिपन्नत्ता पि **सुप्पटिपन्नो**।

---

१. अपण्णकभावेन ञायति कमति निब्बानं, तं वा ञायति पटिविज्झीयति एतेना ति ञायो।

२८ मज्झिमाय पटिपदाय अन्तद्वय अनुपगम्म पटिपन्नत्ता कायवचीमनोवङ्क-कुटिलजिम्हदोसप्पहानाय पटिपन्नत्ता च उजुप्पटिपन्नत्ता च **उजुप्पटिपन्नो**।

२९ ञायो वुच्चति निब्बान। तदत्थाय पटिपन्नत्ता **ञायप्पटिपन्नो**।

३० यथा पटिपन्ना सामीचिपटिपन्नारहा होन्ति, तथा पटिपन्नत्ता **सामीचिप्पटिपन्नो**।

३१ **यदिदं** ति। यानि इमानि। **चत्तारि पुरिसयुगानी** ति। युगलवसेन पठममग्गट्ठो फलट्ठो ति इदमेकं युगल ति एव चत्तारि पुरिसयुगलानि होन्ति। **अट्ठ पुरिसपुग्गला** ति। पुरिसपुग्गलवसेन एको पठममग्गट्ठो एको फलट्ठो ति इमिना नयेन अट्ठेव पुरिसपुग्गला होन्ति। एत्थ च पुरिसो ति वा पुग्गलो ति वा एकत्थानि एतानि पदानि। वेनेय्यवसेन पनेतं वुत्त। **एस भगवतो सावकसंघो** ति। यानिमानि युगवसेन चत्तारि पुरिसयुगानि, पाटिएक्कतो अट्ठ पुरिसपुग्गला, एस भगवतो सावकसङ्घो।

३२ **आहुनेय्यो** ति आदीसु, आनेत्वा हुनितब्बं ति आहुन। दूरतो पि आनेत्वा सीलवन्तेसु दातब्बं ति अत्थो। चतुन्न पच्चयानमेत अधिवचन। तं आहुन पटिग्गहेतु युत्तो तस्स महप्फलकरणतो ति **आहुनेय्यो**।

अथ वा दूरतो पि आगन्त्वा सब्बसापतेय्य पि एत्थ हुनितब्ब ति आहवनीयो। सक्कादीन पि वा आहवन अरहती ति आहवनीयो। यो चाय ब्राह्मणान आहवनीयो नाम अग्गि, यत्थ हुत महप्फल ति तेसं लद्धि। सचे हुतस्स महप्फलताय आहवनीयो, सङ्घो व आहवनीयो। सङ्घे हुतं हि महप्फल होति।

यथाह—

"यो च वस्ससतं जन्तु अग्गि परिचरे वने।
एक च भावितत्तानं मुहुत्तमपि पूजये।
सा येव पूजना सेय्यो य चे वस्ससत हुत[1]" ति॥ (खु० १-२७)

तदेत निकायन्तरे[2] आहवनीयो ति पद इध आहुनेय्यो ति इमिना पदेन अत्थतो एक, ब्यञ्जनतो पनेत्थ किञ्चिमत्तमेव नानं। इति **आहुनेय्यो**।

३३ **पाहुनेय्यो** ति। एत्थ पन पाहुनं वुच्चति दिसाविदिसतो आगतान पियमनापानं ञातिमित्तान अत्थाय सक्कारेन पटियत्त आगन्तुकदान। तं पि ठपेत्वा ते तथारूपे पाहुनके सङ्घस्सेव दातु युत्त। सङ्घो व तं पटिग्गहेतुं युत्तो। सङ्घसदिसो हि पाहुनको नत्थि। तथा हेस एकबुद्धन्तरे च दिस्सति, अब्बोकिण्ण च पियमनापत्तकरेहि धम्मेहि समन्नागतो ति। एव पाहुनमस्स दातुं

१. **हुतं** ति। दिन्न। २. **निकायन्तरे** ति। सब्बत्थिकवादिनिकाये।

युत्तं, पाहुनं च पटिग्गहेतु युत्तो ति पाहुनेय्यो। येसं पन पाहवनीयो ति पाळि, तेस यस्मा सङ्घो पुब्बकारं अरहति, तस्मा सब्बपठमं आनेत्वा एत्थ हुनितब्बं ति **पाहवनीयो**। सब्बप्पकारेन वा आवहन अरहतो ति पाहवनीयो। स्वायमिध तेनेव अत्थेन **पाहुनेय्यो** ति वुच्चति।

३४. दक्खिणा ति पन परलोकं सद्दहित्वा दातब्बदान वुच्चति। त दक्खिण अरहति, दक्खिणाय वा हितो यस्मा न महप्फलकरणताय विसोधेतो ति **दक्खिणेय्यो**।

३५. उभो हत्थे सिरस्मि पतिट्ठापेत्वा सब्बलोकेन करियमान अञ्जलिकम्मं अरहती ति **अञ्जलिकरणीयो**।

३६. **अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा** ति। सब्बलोकस्स असदिसं पुञ्ञविरूहनट्ठानं। यथा हि रञ्ञो वा अमच्चस्स वा सालीन वा यवान वा विरूहनट्ठान रञ्ञो सालिक्खेत्त रञ्ञो यवक्खेत्तं ति वुच्चति, एव सङ्घो सब्बलोकस्स पुञ्ञान विरूहनट्ठानं। सङ्घ निस्साय हि लोकस्स नानप्पकारहितसुखसवत्तनिकानि पुञ्ञानि विरूहन्ति। तस्मा **सङ्घो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा** ति।

३७. एव सुप्पटिपन्नतादिभेदे सङ्घगुणे अनुस्सरतो "नेव तस्मिं समये रागपरियुट्ठित चित्त होति। न दोस पे० न मोहपरियुट्ठित चित्त होति। उजुगतमवस्स तस्मिं समये चित्त होति सङ्घ आरब्भा" (अं० ३–९) ति पुरिमनयेनेव विक्खम्भितनीवरणस्स एकक्खणे झानङ्गानि उप्पज्जन्ति। सङ्घगुणान पन गम्भीरताय नानप्पकारगुणानुस्सरणाधिमुत्तताय वा अप्पन अप्पत्वा उपचारप्पत्तमेव झान होति। तदेत सङ्घगुणानुस्सरणवसेन उप्पन्नत्ता सङ्घानुस्सतिच्चेव सङ्ख गच्छति।

इमं च पन सङ्घानुस्सतिं अनुयुत्तो भिक्खु सङ्घे सगारवो होति सप्पतिस्सो। सद्धादिवेपुल्ल अधिगच्छति, पीतिपामोज्जबहुला होति, भयभेरवसहो, दुक्खाधिवासनसमत्थो, सङ्घेन सवाससञ्ञ पटिलभति। सङ्घगुणानुस्सतिया अज्झावुत्थ चस्स सरीर सन्निपतितसङ्घमिव उपोसथागार पूजारह होति, सङ्घगुणाधिगमाय चित्त नमति, वीतिक्कमितब्बवत्थुसमायोगे चस्स सम्मुखा सङ्घ पस्सतो विय हिरोत्तप्पं पच्चुपट्ठाति, उत्तरि अप्पटिविज्झन्तो पन सुगतिपरायनो होति।

तस्मा हवे अप्पमाद कयिराथ सुमेधसो।
एव महानुभावाय सङ्घानुस्सतिया सदा ति॥

इदं सङ्घानुस्सतिय वित्थारकथामुख॥

सीलानुस्सतिकथा

३८. सीलानुस्सतिं भावेतुकामेन पन रहोगतेन पटिसल्लीनेन "अहो वत मे सीलानि अखण्डानि अच्छिद्दानि असबलानि अकम्मासानि भुजिस्सानि

विञ्ञुप्पसत्थानि अपरामट्ठानि समाधिसवत्तनीकानी" (अं० ३-९) ति एव अखण्डतादिगुणवसेन अत्तनो सीलानि अनुस्सरितब्बानि। तानि च गहट्ठेन गहट्ठसीलानि, पब्बजितेन पब्बजितसीलानि।

३९. गहट्ठसीलानि वा होन्तु पब्बजितसीलानि वा, येस[1] आदिम्हि वा अन्ते वा एकं पि न भिन्न, तानि परियन्ते छिन्नसाटको विय न खण्डानी ति **अखण्डानि**। येसं वेमज्झे एक पि न भिन्नं, तानि मज्झे विनिविद्धसाटको विय न छिद्दानी ति **अच्छिद्दानि**। येस पटिपाटिया द्वे वा तीणि वा न भिन्नानि, तानि पिट्ठिया वा कुच्छिया वा उट्ठितेन दीघवट्टादिसण्ठानेन विसभागवण्णेन काळरत्तादीन अञ्ञतरसरीरवण्णा गावी विय न सबलानी ति **असबलानि**।

यानि अन्तरन्तरा न भिन्नानि, तानि विसभागबिन्दुचित्रा गावी विय न कम्मासानी ति **अकम्मासानि**। अविसेसेन वा सब्बानि पि सत्तविधेन मेथुनसयोगेन कोधुपनाहादीहि च पापधम्मेहि अनुपहतत्ता अखण्डानि अच्छिद्दानि असबलानि **अकम्मासानि**। तानि येव तण्हादासब्यतो मोचेत्वा भुजिस्सभावकरणेन **भुजिस्सानि**। बुद्धादीहि विञ्ञूहि पसत्थत्ता **विञ्ञूपसत्थानि**। तण्हादिट्ठीहि अपरामट्ठत्ता, केनचि वा 'अयं ते सीलेसु दोसो' ति एव परामट्ठु असक्कुणेय्यताय **अपरामट्ठानि**। उपचारसमाधिं अप्पनासमाधिं वा, अथ वा पन मग्गसमाधिं फलसमाधिं चा पि सवत्तन्ती ति **समाधिसवत्तनिकानि**।

एव अखण्डतादिगुणवसेन अत्तनो सीलानि अनुस्सरतो "नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठित चित्त होति। न दोस ·पे०···न मोहपरियुट्ठितं चित्त होति। उजुगतमेवस्स तस्मि समये चित्त होति, सील आरब्भा" ति पुरिमनयेनव[2] विक्खम्भितनीवरणस्स एकक्खणे झानङ्गानि उप्पज्जन्ति। सीलगुणान पन गम्भीरताय नानप्पकारगुणानुस्सरणाधिमुत्तताय वा अप्पनं अप्पत्वा उपचारप्पत्त-मेव झान होति। तदेत सीलगुणानुस्सरणवसेन उप्पन्नत्ता सीलानुस्सतिच्चेव सङ्खं गच्छति।

इम च पन सीलानुस्सतिं अनुयुत्तो भिक्खु सिक्खाय सगारवो होति, सभाग-वुत्ति, पटिसन्थारे अप्पमत्तो, अत्तानुवादादिभयविरहितो, अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, सद्धादिवेपुल्ल अधिगच्छति, पीतिपामोज्जबहुलो होति। उत्तरि अप्पटिविज्झन्तो पन सुगतिपरायनो होति।

तस्मा हवे अप्पमादं कयिराथ सुमेधसो।
एव महानुभावाय सीलानुस्सतिया सदा ति॥

इदं सीलानुस्सतिय वित्थारकथामुख॥

---

१. येसं ति। सीलादीनं। २ बुद्धानुस्सतियं वुत्तनयेन।

चागानुस्सतिकथा

४०. चागानुस्सतिं भावेतुकामेन पन पकतिया चागाधिमुत्तेन निच्चप्पवत्तदान-संविभागेन भवितब्बं। अथ वा पन भावनं आरभन्तेन 'इतो दानि पभुति सति पटिग्गाहके अन्तमसो एकालोपमत्तं पि दानं अदत्वा न भुञ्जिस्सामी' ति समादानं कत्वा तं दिवसं गुणविसिट्ठेसु पटिग्गाहकेसु यथासत्ति यथाबलं दानं दत्वा तत्थ निमित्तं गण्हित्वा रहोगतेन पटिसल्लीनेन "लाभा वत मे, सुलद्धं वत मे, योहं मच्छेरमलपरियुट्ठिताय पजाय विगतमलमच्छेरेन चेतसा विहरामि, मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो दानसंविभागरतो" ति एवं विगतमल-मच्छेरतादिगुणवसेन अत्तनो चागो अनुस्सरितब्बो।

४१. तत्थ **लाभा वत मे** ति। मय्हं वत लाभा, ये इमे "आयु खो पन दत्वा आयुस्स भागी होति दिब्बस्स वा मानुस्स वा" (अं०-२-३०७) इति च, "ददं पियो होति भजन्ति नं बहू" (अं० २-३०६) इति च, "ददमानो पियो होति, सतं धम्ममनुक्कमं" (इति च एवमादीहि नयेहि भगवता दायकस्स लाभा संवण्णिता, ते मय्हं अवस्सं भागिनो ति अधिप्पायो।

४२ **सुलद्धं वत** मे ति। यं मया इदं सासनं मनुस्सत्तं वा लद्धं, तं सुलद्धं वत मे। कस्मा? योहं मच्छेरमलपरियुट्ठिताय पजाय···पे०···दानसंविभागरतो ति।

तत्थ **मच्छेरमलपरियुट्ठिताया** ति। मच्छेरमलेन अभिभूताय। **पजाया** ति। पजायनवसेन सत्ता वुच्चन्ति। तस्मा अत्तनो सम्पत्तीनं परसाधारणभावमसहन-लक्खणेन चित्तस्स पभस्सरभावदूसकानं कण्हधम्मानं[1] अञ्ञतरेन मच्छेरमलेन अभिभूतेसु सत्तेसू ति अयमेत्थ अत्थो।

विगतमलमच्छेरेना ति। अञ्ञेसं पि रागदोसादिमलानं चेव मच्छेरस्स च विगतत्ता विगतमलमच्छेरेन। **चेतसा विहरामी** ति। यथावुत्तप्पकारचित्तो हुत्वा वसामी ति अत्थो। सुत्तेसु पन **महानाम**सक्कस्स सोतापन्नस्स सतो निस्सय-विहारं पुच्छतो निस्सयविहारवसेन देसितत्ता **अगारं अज्झावसामी** ति वुत्तं। तत्थ अभिभवित्वा वसामी ति अत्थो।

४३ **मुत्तचागो** ति। विसट्ठचागो। **पयतपाणी** ति। परिसुद्धहत्थो। सक्कच्चं सहत्था देय्यधम्मं दातुं सदा धोतहत्थो येवा ति वुत्तं होति। **वोस्सग्गरतो** ति। वोस्सज्जनं वोस्सग्गो, परिच्चागो ति अत्थो। तस्मिं वोस्सग्गे सततामियोगवसेन रतो ति वोस्सग्गरतो। **याचयोगो** ति। यं यं परे याचन्ति, तस्स तस्स दानतो

---

१. कण्हधम्मानं ति। लोभादिएकन्तकाळकानं पापधम्मानं।

याचनयोगो ति अत्थो। याजयोगो ति पि पाठो। यजनसङ्खातेन याजेन युत्तो ति अत्थो। **दानसंविभागरतो** ति। दाने च संविभागे च रतो। 'अहं हि दानं च देमि, अत्तना परिभुञ्जितब्बतो पि च संविभागं करोमि, एत्थेव चस्मि उभये रतो' ति एवं अनुस्सरती ति अत्थो।

४४. तस्सेवं विगतमलमच्छेरतादिगुणवसेन अत्तनो चागं अनुस्सरतो "नेव तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति न दोस पे०...न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति। उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति चागं आरब्भा" (अ० ३ ९) ति पुरिमनयेनेव विक्खम्भितनीवरणस्स एकक्खणे झानङ्गानि उप्पज्जन्ति। चागगुणानं पन गम्भीरताय नानप्पकारचागगुणानुस्सरणाधिमुत्तताय वा अप्पनं अप्पत्वा उपचारप्पत्तमेव झानं होति। तदेतं चागगुणानुस्सरणवसेन उप्पन्नत्ता चागानुस्सतिच्चेव सङ्खं गच्छति।

इमं च पन चागानुस्सतिं अनुयुत्तो भिक्खु भिय्योसो मत्ताय चागाधिमुत्तो होति, अलोभज्झासयो, मेत्ताय अनुलोमकारी, विसारदो, पीतिपामोज्जबहुलो, उत्तरिं अप्पटिविज्झन्तो पन सुगतिपरायनो होति।

तस्मा हवे अप्पमादं कयिराथ सुमेधसो।
एवं महानुभावाय चागानुस्सतिया सदा ति॥

इदं चागानुस्सतियं वित्थारकथामुखं॥

देवतानुस्सतिकथा

४५. देवतानुस्सतिं भावेतुकामेन पन अरियमग्गवसेन समुदागतेहि सद्धादीहि गुणेहि समन्नागतेन भवितब्बं। ततो रहोगतेन पटिसल्लानेन "सन्ति देवा चातुमहाराजिका, सन्ति देवा तावतिंसा, यामा, तुसिता, निम्मानरतिनो, परनिम्मितवसवत्तिनो, सन्ति देवा ब्रह्मकायिका, सन्ति देवा ततुत्तरि, यथारूपाय सद्धाय समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थ उपपन्ना, मय्हं पि तथारूपा सद्धा संविज्जति। यथारूपेन सीलेन...यथारूपेन सुतेन...यथारूपेन चागेन... यथारूपाय पञ्ञाय समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थ उपपन्ना, मय्हं पि तथारूपा पञ्ञा संविज्जती" (अं० ३-१०) ति एवं देवता सक्खिट्ठाने ठपेत्वा अत्तनो सद्धादिगुणा अनुस्सरितब्बा।

४६ सुत्ते पन—"यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको अत्तनो च तासं च देवतानं सद्धं च सीलं च सुतं च चागं च पञ्ञं च अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होती" ति वुत्तं। किञ्चापि वुत्तं ? अथ खो तं सक्खिट्ठाने ठपेतब्बदेवतानं अत्तनो सद्धादीहि समानगुणदीपनत्थं वुत्तं ति वेदितब्बं। **अट्ठकथाय** हि "देवता सक्खिट्ठाने ठपेत्वा अत्तनो गुणे अनुस्सरती" ति दळ्हं कत्वा वुत्तं।

४७ तस्मा पुब्बभागे देवतानं गुणे अनुस्सरित्वा अपरभागे अत्तनो सविज्ज-माने सद्धादिगुणे अनुस्सरतो चस्स "नेव तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति। न दोस पे० न मोहपरियुट्ठित चित्त होति। उज्जुगतमेवस्स तस्मि समये चित्त होति देवता आरब्भा" (अ० ३-१०) ति पुरिमनयेनेव विक्खम्भित-नीवरणस्स एकक्खणे झानङ्गानि उप्पज्जन्ति। सद्धादिगुणान पन गम्भीरताय नानप्पकारगुणानुस्सरणाधिमुत्तताय वा अप्पन अप्पत्वा उपचारप्पत्तमेव झानं होति। तदेत देवतान गुणसदिससद्धादिगुणानुस्सरणवसेन देवतानुस्सतिच्चेव सङ्ख गच्छति।

इम च पन देवतानुस्सतिं अनुयुत्तो भिक्खु देवतान पियो होति मनापो, भिय्योसो मत्ताय सद्धादिवेपुल्ल अधिगच्छति, पीतिपामोज्जबहुलो विहरति, उत्तरि अप्पटिविज्झन्तो पन सुगतिपरायनो होति।

तस्मा हवे अप्पमाद कयिराथ सुमेधसो।
एवं महानुभावाय देवतानुस्सतिया सदा ति॥

इद देवतानुस्सतिय वित्थारकथामुख॥

पकिण्णककथा

४८. यं पन एतास वित्थारदेसनाय "उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति तथागत आरब्भा" (अ० ३-८) ति आदीनि वत्वा "उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसहित पामोज्ज, पमुदितस्स पीति जायती" (अ० ३-८) ति वुत्तं, तत्थ 'इति पि सो भगवा' ति आदीन अत्थ निस्साय उप्पन्न तुट्ठि सन्धाय **लभति अत्थवेद** ति वुत्त। पाळि निस्साय उप्पन्न तुट्ठि सन्धाय **लभति धम्मवेदं**। उभयवसेन **लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं** ति वुत्त ति वेदितब्बं।

४९ यं च देवतानुस्सतिय **देवता आरम्भा** ति वुत्त, तं पुब्बभागे देवता आरब्भ पवत्तचित्तवसेन देवतागुणसदिसे वा देवताभावनिप्फादके गुणे आरब्भ पवत्तचित्तवसेन वुत्तं ति वेदितब्बं।

५०. इमा पन छ अनुस्सतियो अरियसावकान येव इज्झन्ति। तेसं हि बुद्ध-धम्मसङ्घगुणा पाकटा होन्ति। ते च अखण्डतादिगुणेहि सीलेहि, विगतमल-मच्छेरेन चागेन, महानुभावान देवतान गुणसदिसेहि सद्धादिगुणेहि समन्नागता।

महानामसुत्ते (अं० ३-७) च सोतापन्नस्स निस्सयविहार पुट्ठेन भगवता सोतापन्नस्स निस्सयविहारदस्सनत्थमेव एता वित्थारतो कथिता।

गेधसुत्ते पि "इध, भिक्खवे, अरियसावको तथागत अनुस्सरति, इति पि सो भगवा··· पे०··· उजुगतमेवस्स तस्मि समये चित्तं होति, निक्खन्त मुत्त वुट्ठितं गेधम्हा। गेधो ति खो, भिक्खवे, पञ्चन्नेत कामगुणान अधिवचनं। इद पि

खो, भिक्खवे, आरम्मण करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुज्झन्ती" (अं० ३–३१) ति एव अरियसावकस्स अनुस्सतिवसेन चित्त विसोधेत्वा उत्तरि परमत्थविसुद्धि-अधिगमत्थाय कथिता।

५१ आयस्मता **महाकच्चानेन** देसिते सम्बाधोकाससुत्ते पि "अच्छरियं, आवुसो, अब्भुत, आवुसो, यावञ्चिद तेन भगवता जानता पस्सता अरहता सम्मासम्बुद्धेन सम्बाधे ओकासाधिगमो अनुबुद्धो सत्तान विसुद्धिया पे० निब्बानस्स सच्छिकिरियाय यदिद छ अनुस्सतिट्ठानानि। कतमानि छ? इधावुसो, अरियसावको तथागतं अनुस्सरति पे० एवमिधेकच्चे सत्ता विसुद्धिधम्मा भवन्ती" (अ० ३–३३) ति एव अरियसावकस्सेव परमत्थविसुद्धिधम्मताय ओकासाधिगमवसेन कथिता।

उपोसथसुत्ते पि "कथ च, विसाखे, अरियूपोसथो होति? उपक्किलिट्ठस्स, विसाखे, चित्तस्स उपक्कमेन परियोदपना होति। कथ च, विसाखे, उपक्किलिट्ठस्स चित्तस्स उपक्कमेन परियोदपना होति? इध, विसाखे, अरियसावको तथागतं अनुस्सरती" (अं० १–१९१) ति। एव अरियसावकस्सेव उपोसथ उपवसतो चित्तविसोधनकम्मट्ठानवसेन उपोसथस्स महप्फलदस्सनत्थ कथिता।

एकादसनिपाते पि "सद्धो खो, महानाम, आराधको होति नो अस्सद्धो। आरद्धविरियो उपट्ठितसति समाहितो पञ्ञवा, महानाम, आराधको होति, नो दुप्पञ्ञो। इमेसु खो त्वं, महानाम, पञ्चसु धम्मेसु पतिट्ठाय छ धम्मे उत्तरि भावेय्यासि। इध त्वं, महानाम, तथागतं अनुस्सरेय्यासि इति, पि सो भगवा" ति एवमरियसावकस्सेव "तेसं नो, भन्ते, नानाविहारेन विहरतं केनस्स विहारेन विहरितब्ब" (अं० ४–३७२) ति पुच्छतो विहारदस्सनत्थ कथिता।

५२. एव सन्ते पि परिसुद्धसीलादिगुणसमन्नागतेन पुथुज्जनेना पि मनसि कातब्बा। अनुस्सववसेना पि बुद्धादीनं गुणे अनुस्सरतो चित्त पसीदति येव। यस्सानुभावेन नीवरणानि विक्खम्भेत्वा उळारपामोज्जो विपस्सन आरभित्वा अरहत्त येव सच्छिकरेय्य। कटकन्धकारवासो **फुस्सदेवत्थेरो** विय।

सो किरायस्मा मारेन निम्मितं बुद्धरूप दिस्वा 'अय ताव सरागदोसमोहो एव सोभति, कथ नु खो भगवा न सोभति? सो हि सब्बसो वीतरागदोसमोहो' ति बुद्धारम्मणं पीतिं पटिलभित्वा विपस्सनं वड्ढेत्वा अरहत्तं पापुणी ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
समाधिभावनाधिकारे छअनुस्सतिनिद्देसो
नाम सत्तमो परिच्छेदो॥

●

अनुस्सतिकम्मट्ठाननिद्देसो

अट्ठमो परिच्छेदो

मरणस्सतिकथा

१ इदानि इतो[1] अनन्तराय मरणस्सतिया भावनानिद्देसो अनुप्पत्तो। तत्थ **मरणं** ति। एकभवपरियापन्नस्स जीवितिन्द्रियस्स उपच्छेदो। य पनेतं अरहन्तान वट्टदुक्खसमुच्छेदसङ्खात समुच्छेदमरणं[2], सङ्खारानं खणभङ्गसङ्खात खणिकमरणं, रुक्खो मतो लोह् मत ति आदीसु सम्मुतिमरण[3] च, न त इध अधिप्पेत।

२ य पि चेत अधिप्पेत, तं कालमरण अकालमरण ति दुविध होति। तत्थ **कालमरणं** पुञ्ञक्खयेन वा आयुक्खयेन वा उभयक्खयेन वा होति। **अकालमरणं** कम्मुपच्छेदककम्मवसेन।

३ तत्थ यं विज्जमानाय पि आयुसन्तानजनकपच्चयसम्पत्तिया केवल पटिसन्धिजनकस्स कम्मस्स विपक्कविपाकत्ता मरणं होति, इद **पुञ्ञक्खयेन मरणं** नाम। यं गतिकालाहारादिसम्पत्तिया अभावेन अज्जतनकालपुरिसानं विय वस्ससतमत्तपरिमाणस्स आयुनो खयवसेन मरणं होति, इद **आयुक्खयेन मरणं** नाम। यं पन दूसीमारकलाबुराजादीनं[4] विय त खण येव ठानाचावन-समत्थेन कम्मुना उपच्छिन्नसन्तानान, पुरिमकम्मवसेन वा सत्थाहरणादीहि उपक्कमेहि उपच्छिज्जमानसन्तानान मरण होति, इद **अकालमरणं** नाम। त सब्ब पि वुत्तप्पकारेन जीवितिन्द्रियुपच्छेदेन सङ्गहित। इति जीवितिन्द्रियुपच्छेदसङ्खातस्स मरणस्स सरण **मरणस्सति**।

४ त भावेतुकामेन रहोगतेन पटिसल्लीनेन "मरण भविस्सति, जीवितिन्द्रिय उपच्छिज्जिस्सती" ति वा, "मरणं मरण" ति वा योनिसो[5] मनसिकारो **पवत्तेतब्बो**।

अयोनिसो पवत्तयतो हि इट्ठजनमरणानुस्सरणे सोको उप्पज्जति विजातमातुया पियपुत्तमरणानुस्सरणे विय। अनिट्ठजनमरणानुस्सरणे पामोज्जं

---

१ **इतो** ति। देवतानुस्सतिया। २ **समुच्छेदमरण** ति। अरहतो सन्तानस्स सब्बसो उच्छेदभूतं मरण। ३. रुक्खादि अल्लतादिविगमन निस्साय मतवोहारो सम्मुतिमरण।

४. दूसीमारकथा म० निकाये मारतज्जनियसुत्ते दट्ठब्बा। कलाबुराजकथा च जातकट्ठकथायं खन्तिवादजातके दट्ठब्बा। ५. **योनिसो** ति। उपायेन।

उप्पज्जति, वेरीनं वेरिमरणानुस्सरणे विय। मज्झत्तजनमरणानुस्सरणे सवेगो न उप्पज्जति, मतकळेवरदस्सने छवडाहकस्स विय। अत्तनो मरणानुस्सरणे सन्तासो उप्पज्जति, उक्खित्तासिकं वधक दिस्वा भीरुकजातिकस्स विय।

तदेतं सब्ब पि सतिसंवेगञाणविरहतो होति। तस्मा तत्थ तत्थ हतमतसत्ते ओलोकेत्वा दिट्ठपुब्बसम्पत्तीन सत्तान मतानं मरण आवज्जेत्वा सति च सवेगं च योजेत्वा "मरण भविस्सती" ति आदिना नयेन मनसिकारो पवत्तेतब्बो। एव पवत्तेन्तो हि योनिसो पवत्तेति। उपायेन पवत्तेती ति अत्थो।

एव पवत्तयतो येव हि एकच्चस्स नीवरणानि विक्खम्भन्ति, मरणारम्मणा सति सण्ठाति, उपचारप्पत्तमेव कम्मट्ठान होति।

५. यस्स पन एत्तावता न होति, तेन वधकपच्चुपट्ठानतो[१], सम्पत्तिविपत्तितो[२], उपसंहरणतो[३], कायबहुसाधारणतो[४], आयुदुब्बलतो,[५], अनिमित्ततो[६], अद्धानपरिच्छेदतो[७], खणपरित्ततो[८] ति इमेहि अट्ठहाकारेहि मरणं अनुस्सरितब्ब।

तत्थ **वधकपच्चुपट्ठानतो** ति। वधकस्स विय पच्चुपट्ठानतो। यथा हि 'इमस्स सीसं छिन्दिस्सामी' ति असि गहेत्वा गीवाय चारयमानो वधको पच्चुपट्ठितो व होति, एव मरण पि पच्चुपट्ठितमेवा ति अनुस्सरितब्बं। कस्मा ? सह जातिया आगतत्तो, जीवितहरणतो च।

यथा हि अहिच्छत्तकमकुळ मत्थकेन पसु गहेत्वा व उग्गच्छति, एवं सत्ता जरामरणं गहेत्वा व निब्बत्तन्ति। तथा हि नेसं पटिसन्धिचित्तं उप्पादानन्तरमेव जरं पत्वा पब्बतसिखरतो पतितसिला विय भिज्जति सद्धिं सम्पयुत्तखन्धेहि। एवं खणिकमरणं ताव सह जातिया आगतं। जातस्स पन अवस्सं मरणतो इधाधिप्पेतं मरणं पि सह जातिया आगतं।

तस्मा एस सत्तो जातकालतो पट्ठाय यथा नाम उट्ठितो सुरियो अत्थाभिमुखो गच्छतेव, गतगतट्ठानतो ईसकं पि न निवत्तति। यथा वा नदी पब्बतेय्या

---

१. **वधकपच्चुपटठानतो** ति। घातकस्स विय पति पति उपट्ठानतो आसन्नभावतो।
२ **सम्पत्तिविपत्तितो** ति। आरोग्यादिसम्पत्तीनं विय जीवितसम्पत्तिया विपज्जनतो।
३ **उपसहरणतो** ति। परेस मरणं दस्सेत्वा अत्तनो मरणस्स उपनयनतो।
४. **कायबहुसाधारणतो** ति। सरीरस्स बहून साधारणभावतो।
५. **आयुदुब्बलतो** ति। जिवितस्स दुब्बलभावतो।
६. **अनिमित्ततो** ति। मरणस्स ववत्थितनिमित्ताभावतो।
७. **अद्धानपरिच्छेदतो** ति। कालस्स परिच्छिन्नभावतो।
८. **खणपरित्ततो** ति। जीवितक्खणस्स इत्तरभावतो।

सीघसोता हारहारिनी[1] सन्दते व वत्तते व, ईसकं पि न निवत्तति, एवं ईसकं पि अनिवत्तमानो मरणाभिमुखो व याति। तेन वुत्त—

"यमेकरत्तिं पठमं गब्भे वसति माणवो।
अब्भुट्ठितो व सो याति स गच्छं न निवत्तती" ति॥
(खु० ३ १–३५१)

एव गच्छतो चस्स गिम्हाभितत्तानं कुन्नदीनं खयो विय, पातो आपोरसानुगतबन्धनान दुमप्फलानं पतन विय, मुग्गराभिताळितानं मत्तिकभाजनानं भेदो विय, सुरियरस्मिसम्फुट्ठान उस्सावबिन्दूनं विद्धसन विय च मरणमेव आसन्न होति। तेनाह—

"अच्चयन्ति अहोरत्ता जीवितं उपरुज्झति।
आयु खीयत्ति मच्चान, कुन्नदीनं व ओदकं"॥ (स० १-१०८)

"फलानमिव पक्कानं पातो पपततो भयं।
एव जातान मच्चान निच्च मरणतो भय॥
यथा पि कुम्भकारस्स कतं मत्तिकभाजन।
खुद्दक च महान्त च य पक्कं यं च आमक।
सब्बं भेदनपरियन्तं एवं मच्चान जीवित॥ (खु० १-३६०)

"उस्सावो व तिणग्गम्हि सुरियस्सुग्गमनं पति।
एवमायु मनुस्सान मा म, अम्म, निवारया" ति॥
(खु० ३·१–२२८)

एवं उक्खित्तासिको वधको विय सह जातिया आगत पनेत मरणं गीवाय असिं चारयमानो सो वधको विय जीवित हरति येव, न अहरित्वा निवत्तति। तस्मा सह जातिया आगततो जीवितहरणतो च उक्खित्तासिको वधको विय मरण पि पच्चुपट्ठितमेवा ति एव वधकपच्चुपट्ठानतो मरण अनुस्सरितब्बं।

६ **सम्पत्तिविपत्तितो** ति। इध सम्पत्ति नाम तावदेव सोभति, याव नं विपत्ति नाभिभवति, न च सा सम्पत्ति नाम अत्थि, या विपत्ति अतिक्कम्म तिट्ठेय्य। तथा हि—

सकलं मेदिनिं भुत्वा दत्वा कोटिसतं सुखी।
अड्ढामलकमत्तस्स अन्ते इस्सरत गतो॥
तेनेव देहबन्धेन पुञ्ञम्हि खयमागते।
मरणाभिमुखो सो पि असोको सोकमागतो ति॥

---

१ हारहारिनी ति। पवाहे पतितस्स तिणपण्णादिकस्स अतिविय हरणसीला।

अपि च सब्बं आरोग्यं व्याधिपरियोमानं, सब्बं योब्बनं जरापरियोसान, सब्ब जीवितं मरणपरियोसानं, सब्बो येव लोकसन्निवासो जातिया अनुगतो, जराय अनुसटो, ब्याधिना अभिभतो, मरणेन अब्भाहतो। तेनाह—

"यथा पि सेला विपुला नभं आहच्च पब्बना।
समन्ता अनुपरियेय्यु निप्पोथेन्ता चतुद्दिसा॥
एव जरा च मच्चु च अधिवत्तन्ति पाणिने।
खत्तिये ब्राह्मणे वेस्से सुद्दे चण्डालपुक्कुसे॥
न किञ्चि परिवज्जेति सब्बमेवाभिमद्दति॥
न तत्थ हत्थीनं भूमि न रथान न पत्तिया।
न चा पि मन्तयुद्धेन सक्का जेतुं धनेन वा" ति॥ (सं० १-१०१)

एव जीवितसम्पत्तिया मरणविपत्तिपरियोसानतं ववत्थपेन्तेन सम्पत्तिविपत्तितो मरणं अनुस्सरितब्बं।

७ **उपसंहरणतो** ति। परेहि सद्धिं अत्तनो उपसहरणतो। तत्थ सत्तहाकारेहि उपसंहरणतो मरणं अनुस्सरितब्ब—यसमहत्ततो, पुञ्ञमहत्ततो, थाममहत्ततो, इद्धिमहत्ततो, पञ्ञामहत्ततो, पच्चेकबुद्धतो, सम्मासम्बुद्धतो ति।

कथं? इद मरण नाम महायसानं महापरिवारानं सम्पन्नधनवाहनानं महासम्मतमन्धातुमहासुदस्सनदळ्हनेमिनिमिप्पभुतीनं पि उपरि निरासङ्कमेव पतितं, किमङ्ग पन मय्ह उपरि न पतिस्सति।

महायसा राजवरा महासम्मतआदयो।
ते पि मच्चुवस पत्ता मादिसेसु कथा व का ति॥

एवं ताव यसमहत्ततो अनुस्सरितब्बं।

कथं पुञ्ञमहत्ततो?

जोतिको[1] जटिलो[1] उग्गो मेण्डको[1] अथ पुण्णको[1]।
एते चञ्ञे च ये लोके महापुञ्ञा ति विस्सुता।
सब्बे मरणमापन्ना मादिसेसु कथा व का ति॥

एवं पुञ्ञमहत्ततो अनुस्सरितब्बं।

कथ थाममहत्ततो?

वासुदेवो[2] बलदेवो भीमसेनो युधिट्ठिलो।
चाणुरो यो महामल्लो अन्तकस्स वसं गता॥
एवं थामबलूपेता इति लोकम्हि विस्सुता।
एते पि मरण याता मादिसेसु कथा व का ति॥

---

१. एतेसं इद्धियो उपरि द्वादसमे परिच्छेदे सयमेव वण्णयिस्सति आचरियो।

२. वासुदेवादीनं कथा जातकट्ठकथायं दट्ठब्बा।

एव थाममहत्ततो अनुस्सरितब्बं ।

कथं इद्धिमहत्ततो ?

पादङ्गुट्ठकमत्तेन वेजयन्तमकम्पयि ।
यो नामिद्धिमतं सेट्ठो दुतियो अग्गसावको ॥

सो पि मच्चुमुखं घोर मिगो सीहमुख विय ।
पविट्ठो सह इद्धीहि मादिसेसु कथा व का ति ॥

एव इद्धिमहत्ततो अनुस्सरितब्ब ।

कथ पञ्ञामहत्ततो ?

लोकनाथ ठपेत्वान ये चञ्ञे अत्थि पाणिनो ।
पञ्ञाय सारिपुत्तस्स कल नाग्घन्ति सोळसिं ॥
एव नाम महापञ्ञो पठमो अग्गसावको ।
मरणस्स वस पत्तो मादिसेसु कथा व का ति ॥

एवं पञ्ञामहत्ततो अनुस्सरितब्बं ।

कथं पच्चेकबुद्धतो ? ये पि ते अत्तनो ञाणविरियबलेन सब्बकिलेसमत्तुनिम्मथन कत्वा पच्चेकबोधिं पत्ता खग्गविसाणकप्पा सयम्भुनो, ते पि मरणतो न मुत्ता, कुतो पनाहं मुच्चिस्सामी ति ?

त त निमित्तमागम्म वीमसन्ता महेसयो ।
सयम्भुञ्ञाणतेजेन ये पत्ता आसवक्खयं ॥
एकचरियनिवासेन खग्गसिङ्गसमूपमा ।
ते पि नातिगता मच्चु मादिसेसु कथा व का ति ॥

एवं पच्चेकबुद्धतो अनुस्सरितब्बं ।

कथं सम्मासम्बुद्धतो ? यो पि सो भगवा असीतिअनुब्यञ्जनपटिमण्डितद्वत्तिसमहापुरिसलक्खणविचित्ररूपकायो सब्बाकारपरिसुद्धसीलक्खन्धादिगुणरतनसमिद्धधम्मकायो यसमहत्तपुञ्ञमहत्तथाममहत्तइद्धिमहत्तपञ्ञामहत्तानं पार गतो असमो असमसमो अप्पटिपुग्गलो अरहं सम्मासम्बुद्धो, सो पि सलिलवुट्ठिनिपातेन महाअग्गिक्खन्धो विय मरणवुट्ठिनिपातेन ठानसो वूपसन्तो ।

एवं महानुभावस्स यं नामेतं महेसिनो ।
न भयेन न लज्जाय मरणं वसमागतं ॥
निल्लज्ज वीतसारज्जं सब्बसत्ताभिमद्दनं ।
तयिदं मादिसं सत्तं कथं नाभिभविस्सती ति ॥

एवं सम्मासम्बुद्धतो अनुस्सरितब्ब ।

तस्सेवं यसमहत्ततादिसम्पन्नेहि परेहि सद्धिं मरणसामञ्ञताय अत्तानं उपसंहरित्वा 'तेसं विय सत्तविसेसानं मय्हं पि मरणं भविस्सती' ति अनुस्सरतो उपचारप्पत्तं कम्मट्ठानं होती ति। एवं उपसंहरणतो मरणं अनुस्सरितब्बं।

८. **कायबहुसाधारणतो** ति। अयं कायो बहुसाधारणो। असीतिया ताव किमिकुलानं साधारणो। तत्थ छविनिस्सिता पाणा छविं खादन्ति, चम्मनिस्सिता चम्मं खादन्ति, मंसनिस्सिता मंसं खादन्ति, न्हारुनिस्सिता न्हारुं खादन्ति, अट्ठिनिस्सिता अट्ठिं खादन्ति, मिञ्जनिस्सिता मिञ्जं खादन्ति। तत्थेव जायन्ति जीयन्ति मीयन्ति, उच्चारपस्सावं करोन्ति। कायो व नेसं सूतिघरं चेव गिलानसाला च सुसानं च वच्चकुटि च पस्सावदोणिका च। स्वायं तेसं पि किमिकुलानं पकोपेन मरणं निगच्छति येव। यथा च असीतिया किमिकुलानं, एवं अज्झत्तिकानं येव अनेकसतानं रोगानं बाहिरानं च अहिविच्छकादीनं मरणस्स पच्चयानं साधारणो।

यथा हि चतुमहापथे ठपिते लक्खम्हि सब्बदिसाहि आगता सरसत्तितोमरपासाणादयो निपतन्ति, एवं काये पि सब्बूपद्दवा निपतन्ति। स्वायं तेसं पि उपद्दवानं निपातेन मरणं निगच्छति येव। तेनाह भगवा—"इध, भिक्खवे, भिक्खु दिवसे निक्खन्ते रत्तिया पटिहिताय इति पटिसञ्चिक्खति—'बहुका खो पच्चया मरणस्स, अहि वा डसेय्य, विच्छिको वा मं डसेय्य, सतपदी वा मं डसेय्य, तेन मे अस्स कालङ्किरिया, सो ममस्स अन्तरायो, उपक्खलित्वा वा पपतेय्यं, भत्तं वा मे भुत्तं ब्यापज्जेय्य, पित्तं वा मे कुप्पेय्य, सेम्हं वा मे कुप्पेय्य, सत्थका वा मे वाता कुप्पेय्युं, तेन मे अस्स कालङ्किरिया, सो ममस्स अन्तरायो'" (अ० ३-२६) ति। एवं कायबहुसाधारणतो मरणं अनुस्सरितब्बं।

९. **आयुदुब्बलतो** ति। आयु नामेतं अबलं दुब्बलं। तथा हि सत्तानं जीवितं अस्सासपस्सासूपनिबद्धं चेव इरियापथूपनिबद्धं च सीतुण्हूपनिबद्धं च महाभूतूपनिबद्धं च आहारूपनिबद्धं च।

तदेतं अस्सासपस्सासानं समवुत्तितं लभमानमेव पवत्तति, बहि निक्खन्तनासिकवाते पन अन्तो अपविसन्ते, पविट्ठे वा अनिक्खमन्ते मतो नाम होति। चतुन्नं इरियापथानं पि समवुत्तितं लभमानमेव पवत्तति, अञ्ञतरञ्ञतरस्स पन अधिमत्तताय आयुसङ्खारा उपच्छिज्जन्ति। सीतुण्हानं पि समवुत्तितं लभमानमेव पवत्तति, अतिसीतेन पन अतिउण्हेन वा अभिभूतस्स विपज्जति। महाभूतानं पि समवुत्तितं लभमानमेव पवत्तति, पथवीधातुया पन आपोधातुआदीनं वा अञ्ञतरञ्ञतरस्स पकोपेन बलसम्पन्नो पि पुग्गलो पत्थद्धकायो वा अतिसारादिवसेन किलिन्नपूतिकायो वा महाडाहपरेतो वा सम्भिज्जमानसन्धिबन्धनो वा हुत्वा जीवितक्खयं पापुणाति। कबळीकाराहारं पि युत्तकाले

लभन्तस्सेव जीवितं पवत्तति, आहारं अलभमानस्स पन परिक्खयं गच्छती ति। एवं आयुदुब्बलतो मरणं अनुस्सरितब्बं।

१० **अनिमित्ततो** ति। अववत्थानतो, परिच्छेदाभावतो ति अत्थो। सत्तानं हि—

जीवितं ब्याधि कालो च देहनिक्खेपनं गति।
पञ्चेते जीवलोकस्मिं अनिमित्ता न नायरे[1]॥

तत्थ **जीवितं** ताव "एत्तकमेव जीवितब्ब, न इतो पर" ति एवं ववत्थानाभावतो अनिमित्तं। कललकाल पि हि सत्ता मरन्ति, अब्बुद-पेसि-घन-मासिक-द्वेमास-तेमास-चतुमास-दसमासकाले पि। कुच्छितो निक्खन्तसमये पि। ततो परं वस्ससतस्स अन्तो पि बहि पि मरन्ति येव। (१)

ब्याधि पि "इमिना व ब्याधिना सत्ता मरन्ति, न अञ्ञेना" ति एव ववत्थानाभावतो अनिमित्तो। चक्खुरोगेना पि हि सत्ता मरन्ति, सोतरोगादीनं अञ्ञतरेना पि। (२)

कालो पि "इमस्मिं येव काले मरितब्ब, न अञ्ञस्मिं" ति एवं ववत्थानाभावतो अनिमित्तो। पुब्बण्हे पि हि सत्ता मरन्ति, मज्झन्हिकादीनं अञ्ञतरस्मिं पि। (३)

देहनिक्खेपनं पि "इधेव मियमानान देहेन पतितब्ब, न अञ्ञत्रा" ति एव ववत्थानाभावतो अनिमित्तं। अन्तोगामे जातानं हि बहिगामे पि अत्तभावो पतति। बहिगामे जातानं पि अन्तोगामे। तथा थलजान वा जले, जलजान वा थले ति अनेकप्पकारतो वित्थारेतब्बं। (४)

गति पि "इतो चुतेन इध निब्बत्तितब्बं" ति एवं ववत्थानाभावतो अनिमित्ता। देवलोकतो हि चुता मनुस्सेसु पि निब्बत्तन्ति, मनुस्सलोकतो चुता देवलोकादीनं पि यत्थ कत्थचि निब्बत्तन्ती ति एव यन्तयुत्तगोणो[2] विय गतिपञ्चके लोको सम्परिवत्ततो ति एवं अनिमित्ततो मरणं अनुस्सरितब्ब। (५)

११. **अद्धानपरिच्छेदतो** ति। मनुस्सानं जीवितस्स नाम एतरहि परित्तो अद्धा, यो चिरं जीवति, सो वस्ससत, अप्पं वा भिय्यो। तेनाह भगवा—"अप्पमिदं, भिक्खवे, मनुस्सानं आयु, गमनीयो सम्परायो, कत्तब्ब कुसल, चरितब्बं

---

१. **न नायरे** ति। न आयन्ति।

२. **यन्तयुत्तगोणो विया** ति। यथा यन्ते युत्तगोणो यन्तं नातिवत्तति, एव लोको गतिपञ्चकं ति एत्तकेन उपमा।

ब्रह्मचरिय, नत्थि जातस्स अमरण। यो, भिक्खवे, चिर जीवति, सो वस्ससतं अप्पं वा भिय्यो ति।

"अप्पमायुमनुस्मानं हीळेय्य नं सुपोरिसो।
चरेय्यादित्तसीमो व नत्थि मच्चुस्स नागमो" ति॥ (स०१-१०८)

अपरं पि आह—"भूतपुब्बं, भिक्खवे, अरको नाम सत्था अहोसी" ति सब्बं पि सत्तहि उपमाहि अलङ्कत सुत्तं (अ० ३-२५८) वित्थारेतब्बं।

अपरं पि आह—"यो चायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं रत्तिन्दिव जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसिकरेय्य, बहुं वत मे कतं अस्सा' ति। यो चायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताह दिवसं जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसिकरेय्य बहु वत मे कत अस्सा' ति। यो चायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं तदन्तर जीवेय्य यदन्तरं एकं पिण्डपात भुञ्जामि, भगवतो सासन मनसिकरेय्यं, बहु वत मे कत अस्सा' ति। यो चायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—अहो वताह तदन्तरं जीवेय्यं, यदन्तरं चत्तारो पञ्च आलोपे सङ्खादित्वा अज्झोहरामि, भगवतो सासन मनसिकरेय्यं, बहुं वत मे कत अस्सा' ति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खव, भिक्खू पमत्ता विहरन्ति, दन्धं मरणस्सतिं भावेन्ति आसवान खयाय।

"यो च ख्वाय, भिक्खवे, भिक्खु एव मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताह तदन्तर जीवेय्य, यदन्तर एकं आलोप सङ्खादित्वा अज्झोहरामि, भगवतो सासनं मनसिकरेय्य, बहु वत मे कत अस्सा' ति। यो चायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताह तदन्तरं जीवेय्यं, यदन्तरं अस्ससित्वा वा पस्ससामि, पस्ससित्वा वा अस्ससामि, भगवतो सासनं मनसिकरेय्य, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, भिक्खू अप्पमत्ता विरहन्तो, तिक्खं मरणस्सतिं भावेन्ति आसवान खयाया" (अं० ३-२५) ति।

एव चतुपञ्चालोपसङ्खादनमत्त अविस्सासियो परित्तो जीवितस्स अद्धा ति एव अद्धानपरिच्छेदतो मरण अनुस्सरितब्बं।

१२ **खणपरित्ततो** ति। परमत्थतो हि अतिपरित्तो सत्तान जीवितक्खणो एकचित्तप्पवत्तिमत्तो येव। यथा नाम रथचक्क पवत्तमान पि एकेनेव नेमिप्पदेसेन पवत्तति, तिट्ठमान पि एकेनेव तिट्ठति, एवमेव एकचित्तक्खणिक सत्तानं जीवित। तस्मिं चित्ते निरुद्धमत्ते सत्तो निरुद्धो ति वुच्चति। यथाह—"अतीते चित्तक्खणे जीवित्थ, न जीवति, न जीविस्सति। अनागते चित्तक्खणे न जीवित्थ, न जीवति, जीविस्सति। पच्चुप्पन्ने चित्तक्खण न जीवित्थ, जीवति, न जीविस्सति।

जीवितं अत्तभावो च सुखदुक्खा च केवला।
एकचित्तसमायुत्ता लहु सो वत्तते खणो ॥
ये निरुद्धा मरन्तस्स तिट्ठमानस्स वा इध।
सब्बे पि सदिसा खन्धा गता अप्पटिसन्धिका ॥
अनिब्बत्तेन न जातो पच्चुपन्नेन जीवति।
चित्तभङ्गा मतो लोको पञ्ञत्ति परमत्थिया" ति ॥

(खु० ४ : १-९८)

एव खणपरित्ततो मरणं अनुस्सरितब्ब ।

१३. इति इमेस अट्ठन आकारान अञ्ञतरञ्ञतरेन अनुस्सरतो पि पुनप्पुन मनसिकारवसेन चित्त आसेवनं लभति, मरणारम्मणा सति सन्तिट्ठति, नीवरणानि विक्खम्भन्ति, झानङ्गानि पातुभवन्ति। सभावधम्मत्ता पन सवेजनीयत्ता च आरम्मणस्स अप्पन अप्पत्वा उपचारप्पत्तमेव झान होति। लोकुत्तरज्झानं पन दुतियचतुत्थानि च आरुप्पज्झानानि सभावधम्मे पि भावनाविसेसेन अप्पन पापुणन्ति। विसुद्धिभावनानुक्कमवसेन हि लोकुत्तर अप्पनं पापुणाति। आरम्मणातिक्कमभावनावसेन आरुप्प। अप्पनापत्तस्सेव हि झानस्स आरम्मणसमतिक्कमनमत्त तत्थ होति। इध पन तदुभय पि नत्थि, तस्मा उपचारप्पत्तमेव झान होति। तदेत मरणस्सतिबलेन उप्पन्नता मरणस्सतिच्चेव सङ्खं गच्छति।

इम च पन मरणस्सतिं अनुयुत्तो भिक्खु सततं अप्पमत्तो होति, सब्बभवेसु अनभिरतिसञ्ञ पटिलभति, जीवितनिकन्ति जहाति, पापगरही होति, असन्निधिबहुलो, परिक्खारेसु विगतमलमच्छेरो, अनिच्चसञ्ञा चस्स परिचय गच्छति, तदनुसारेनेव च दुक्खसञ्ञा अनत्तसञ्ञा च उपट्ठाति। यथा अभावितमरणा सत्ता सहसा वाळमिग-यक्ख-सप्प-चोर-वधकाभिभूता विय मरणसमये भय सन्तास सम्मोहमापज्जन्ति, एव अनापज्जित्वा अभयो असम्मूळ्हो काल करोति। सचे दिट्ठे व धम्मे अमतं नाराधेति, कायस्स भेदा सुगतिपरायनो होति।

तस्मा हवे अप्पमाद कयिराथ सुमेधसो।
एवं महानुभावाय मरणस्सतिया सदा पि ॥

इदं मरणस्सतियं वित्थारकथामुखं ॥

कायगतासतिकथा

१४. इदानि यं त अञ्ञत्र बुद्धुप्पादा अप्पवत्तपुब्बं सब्बतित्थियानं अविसयभूतं, तेसु तेसु सुत्तन्तेसु—"एकधम्मो, भिक्खवे, भावितो बहुलीकतो महतो

सवेगाय संवत्तति। महतो अत्थाय संवत्तति। महतो योगक्खेमाय सवत्तति। महतो सतिसम्पजञ्ञाय सवत्तति। ञाणदस्सनपटिलाभाय सवत्तति। दिट्ठ-धम्मसुखविहाराय सवत्तति। विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय सवत्तति। कतमो एकधम्मो? कायगता सति" (अ० १–४२)। "अमत ते, भिक्खवे, परि-भुञ्जन्ति, ये कायगतासतिं परिभुञ्जन्ति। अमतं ते, भिक्खवे, न परिभुञ्जन्ति, ये कायगतासतिं न परिभुञ्जति। अमत तेस, भिक्खवे, परिभुत्त ··अपरिभुत्त · परिहीन ··अपरिहीन · विरुद्ध अविरुद्धं, येस कायगतासति आरद्धा" (अ० १–४५) ति एव भगवता अनेकेहि आकारेहि पससित्वा "कथ भाविता, भिक्खवे, कायगता सति कथं बहुलीकता महप्फला होति महानिससा? इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा" (अ० ३–१५१) ति आदिना नयेन आनापानपब्बं, इरियापथपब्ब, चतुसम्पजञ्ञपब्ब, पटिक्कूलमनसिकारपब्ब, धातुमनसिकारपब्ब, नव सीवथिकपब्बानी ति इमेस चुद्दसन्न पब्बान वसेन कायगतासतिकम्मट्ठानं निद्दिट्ठ, तस्स भावनानिद्देसो अनुप्पत्तो।

तत्थ यस्मा इरियापथपब्बं, चतुसम्पजञ्ञपब्बं, धातुमनसिकारपब्बं ति इमानि तीणि विपस्सनावसेन वुत्तानि। नव सीवथिकपब्बानि विपस्सनाञाणेसु येव आदीनवानुपस्सनावसेन वुत्तानि। या पि चेत्थ उद्धुमातकादीसु समाधि-भावना इज्झेय्य, सा असुभनिद्देसे पकासिता येव। अनापानपब्ब पन पटिक्कूल-मनसिकारपब्ब च इमानेवेत्थ द्वे समाधिवसेन वुत्तानि। तेसु आनापानपब्ब आनापानस्सतिवसेन विसुं कम्मट्ठान येव।

य पनेतं "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु इममेव काय उद्ध पादतला अधो केसमत्थका तचपरियन्तं पूर नानप्पकारस्स असुचिनो पच्चवेक्खति—अत्थि इमस्मिं काये केसा लोमा · पे० ·· मुत्त" (म० ३–१५३) ति एवं मत्थलुङ्ग अट्ठिमिञ्जेन सङ्गहेत्वा पटिक्कूलमनसिकारवसेन देसितं द्वत्तिंसाकारकम्मट्ठान, इदमिध **कायगता सती** ति अधिप्पेत।

१५. तत्थायं पाळिवण्णनापुब्बङ्गमो भावनानिद्देसो।

इममेव कायं ति। इम चतुमहाभूतिक पूतिकायं। **उद्धं पादतला** ति। पादतलो उपरि। **अधो केसमत्थका** ति केसग्गतो हेट्ठा। **तचपरियन्तं** ति। तिरियं तचपरिच्छिन्नं। **पूरं नानप्पकारस्स असुचिनो पच्चवेक्खती** ति। नान-प्पकारकेसादिअसुचिभरितो अयं कायो ति पस्सति। कथं? अत्थि इमस्मिं काये केसा···पे० · ·मुत्तं ति।

तत्थ **अत्थी** ति। संविज्जन्ति। **इमस्मिं** ति। य्वायं उद्धं पादतला अधो केसमत्थका तचपरियन्तो पूरो नानप्पकारस्स असुचिनो ति वुच्चति, तस्मिं। **काये** ति। सरीरे। सरीरं हि असुचिसञ्चयतो कुच्छितानं केसादीनं चेव

चक्खुरोगादीनं च रोगसतानं आयभूततो कायो ति वुच्चति। **केसा लोमा** ति। एते केसादयो द्वत्तिंसाकारा। तत्थ 'अत्थि इमस्मिं काये केसा', अत्थि इमस्मिं काये लोमा' ति एव सम्बन्धो वेदितब्बो।

इमस्मिं हि पादतला पट्ठाय उपरि, केसमत्थका पट्ठाय हेट्ठा, तचतो पट्ठाय परितो ति एतके ब्याममत्ते कळेवरे सब्बाकारेन पि विचिनन्तो न कोचि किञ्चि मुत्त वा मणिं वा वेळुरियं वा अगरु वा कुङ्कुमं वा कप्पूर वा वासचुण्णादि वा अणुमत्त पि सुचिभाव पस्सति, अथ खो परमदुग्गन्धजेगुच्छं असिरिकदस्सनं नानप्पकारं केसलोमादिभेद असुचिं येव पस्सति। तेन वुत्त— 'अत्थि इमस्मिं काये केसा लोमा ... पे० मुत्त' ति।

अयमेत्थ पदसम्बन्धतो वण्णना।

१६. इम पन कम्मट्ठान भावेतुकामेन आदिकम्मिकेन कुलपुत्तेन वुत्तप्पकार कल्याणमित्त उपसङ्कमित्वा इद कम्मट्ठान गहेतब्बं। तेनापिस्स कम्मट्ठान कथेन्तेन सत्तधा उग्गहकोसल्ल, दसधा च मनसिकारकोसल्लं आचिक्खितब्ब।

तत्थ १ वचसा, २ मनसा, ३ वण्णतो, ४. सण्ठानतो, ५ दिसतो, ६. ओकासतो, ७ परिच्छेदतो ति एव **सत्तधा उग्गहकोसल्लं** आचिक्खितब्ब।

इमस्मिं हि पटिक्कूलमनसिकारकम्मट्ठाने यो पि तिपिटको होति, तेनापि मनसिकारकाले पठम **वाचाय सज्झायो** कातब्बो। एकच्चस्स हि सज्झाय करोन्तस्सेव कम्मट्ठानं पाकट होति। मलयवासो महादेवत्थेरस्स सन्तिके उग्गहित-कम्मट्ठानानं द्विन्न थेरानं विय। थेरो किर तेहि कम्मट्ठानं याचितो 'चत्तारो मासे इम येव सज्झायं करोथा' ति द्वत्तिंसाकारपाळि अदासि। ते किञ्चापि नेसं द्वे तयो निकाया पगुणा, पदक्खिणग्गाहिताय पन चत्तारो मासे द्वत्तिंसाकारं सज्झायन्ता व सोतापन्ना अहेसु। तस्मा कम्मट्ठान कथेन्तेन आचरियेन अन्ते-वासिको वत्तब्बो—"पठमं ताव वाचाय सज्झाय करोही" ति।

करोन्तेन च तचपञ्चकादीनि परिच्छिन्दित्वा अनुलोमपटिलोमवसेन सज्झायो कातब्बो। केसा लोमा नखा दन्ता तचो ति हि वत्वा पुन पटिलोमतो तचो दन्ता नखा लोमा केसा ति वत्तब्ब।

तदनन्तर वक्कपञ्चके मसं न्हारु अट्ठि अट्ठिमिञ्जं वक्कं ति वत्वा, पुन पटिलोमतो वक्कं अट्ठिमिञ्ज अट्ठि न्हारु मंस तचो दन्ता नखा लोमा केसा ति वत्तब्बं।

ततो पप्फासपञ्चके हदयं यकन किलोमक पिहक पप्फासं ति वत्वा पुन पटिलोमतो पप्फास पिहक किलोमक यकनं हदयं वक्कं अट्ठिमिञ्ज अट्ठि न्हारु मंसं तचो दन्ता नखा लोमा केसा ति वत्तब्ब।

ततो मत्थलुङ्गपञ्चके अन्तं अन्तगुणं उदरियं करीसं मत्थलुङ्ग ति वत्वा, पुन पटिलोमतो मत्थलुङ्गं करीम उदरिय अन्तगुण अन्तं पप्फास पिहकं किलामक यकनं वक्क अट्ठिमिञ्जं अट्ठि न्हारु मस तचो दन्ता नखा लोमा केसा ति वत्तब्बं।

ततो मेदछक्के पित्त सेम्हं पुब्बो लोहितं सेदो मेदो ति वत्वा, पुन पटिलोमतो मेदो सेदो लोहित पुब्बो सेम्ह पित्त मत्थलुङ्गं करीस उदरियं अन्तगुण अन्तं पप्फास पिहक किलोमक यकनं हदयं वक्क अट्ठिमिञ्ज अट्ठि न्हारु मंस तचो दन्ता नखा लोमा केसा ति वत्तब्ब।

ततो मुत्तछक्के अस्सु वसा खेळो सिङ्घाणिका लसिका मुत्तं ति वत्वा, पुन पटिलोमतो मुत्त लसिका सिङ्घाणिका खेळा वसा अस्सु मेदो सेदो लोहित पुब्बो सेम्ह पित्तं मत्थलुङ्ग करीस उदरिय अन्तगुण अन्त पप्फास पिहकं किलोमक यकन हदयं वक्क अट्ठिमिञ्ज अट्ठि न्हारु मस तचो दन्ता नखा लोमा केसा ति वत्तब्ब।

एव कालसत कालसहस्सं कालसतसहस्स पि वाचाय सज्झायो कातब्बो। **वचसा** सज्झायेन हि कम्मट्ठानतन्ति पगुणा होति, न इतो चितो च चित्तं विधावति। कोट्ठासा पाकटा होन्ति, हत्थसङ्खलिका[1] विय वतिपादपन्ति विय च खायन्ति। (१)

यथा पन वचसा, तथेव **मनसा पि सज्झायो** कातब्बो। वचसा सज्झायो हि मनसा सज्झायस्स पच्चयो होति। मनसा सज्झायो लक्खणपटिवेधस्स पच्चयो होति। (२)

वण्णतो ति। केसादीनं वण्णो ववत्थपेतब्बो। (३)

सण्ठानतो ति। तेसं येव सण्ठान ववत्थपेतब्बं। (४)

दिसतो ति। इमस्मिं हि सरीरे नाभितो उद्धं उपरिमदिसा, अधो हेट्ठिमदिसा, तस्मा 'अयं कोट्ठासो इमिस्सा नाम दिसाया' ति दिसा ववत्थपेतब्बा। (५)

ओकासतो ति। 'अयं कोट्ठासो इमस्मिं नाम ओकासे पतिट्ठितो' ति एवं तस्स तस्स ओकासो ववत्थपेतब्बो। (६)

परिच्छेदतो ति। सभागपरिच्छेदो, विसभागपरिच्छेदो ति द्वे परिच्छेदा। तत्थ अयं कोट्ठासो हेट्ठा च उपरि च तिरियं च इमिना नाम परिच्छिन्नो ति एवं सभागपरिच्छेदो वेदितब्बो। केसा न लोमा, लोमा पि न केसा ति एवं अमिस्सकतावसेन विसभागपरिच्छेदो वेदितब्बो। (७)

---

१ हत्थसङ्खलिका ति। अङ्गुलिपन्ति।

एवं सत्तधा उग्गहकोसल्लं आचिक्खन्तेन पन इद कम्मट्ठानं असुकस्मिं सुत्ते पटिक्कूलवसेन कथित, असुकस्मिं धातुवसेना ति ञत्वा आचिक्खितब्बं। इद हि महासतिपट्ठाने (दी० २–१९) पटिक्कूलवसेनेव कथित। महाहत्थिपदापम-महाराहुलोवाद-धातुविभङ्गेसु धातुवसेन कथित। कायगतासतिसुत्ते (म० ३–१५१) पन यस्स वण्णतो उपट्ठाति, तं सन्धाय चत्तारि झानानि विभत्तानि। तत्थ धातुवसेन कथित विपस्सनाकम्मट्ठान होति, पटिक्कूलवसेन कथित समथ-कम्मट्ठानं। तदेत इध समथकम्मट्ठानमेवा ति।

१७. एवं सत्तधा उग्गहकोसल्ल आचिक्खित्वा १. अनुपुब्बतो, २ नाति-सीघतो, ३ नातिसणिकतो, ४ विक्खेपपटिबाहनतो, ५ पण्णत्तिसमतिक्कमनतो, ६. अनुपुब्बमुञ्चनतो, ७ अप्पनातो, ८–१० तयो च सुत्तन्ता ति एव **दसधा मनसिकारकोसल्लं** आचिक्खितब्ब।

तत्थ **अनुपुब्बतो** ति। इद हि सज्झायकरणतो पट्ठाय अनुपटिपाटिया मनसिकातब्ब, न एकन्तरिकाय। एकन्तरिकाय हि मनसिकारोन्तो, यथा नाम अकुसलो पुरिसो द्वत्तिंसपद निस्सेणिं एकन्तरिकाय आरोहन्तो किलन्तकायो पतति, न आरोहन सम्पादेति; एवमेव भावनासम्पत्तिवसेन अधिगन्तब्बस्स अस्सादस्स अनधिगमा किलन्तचित्तो पतति, न भावन सम्पादेति। (१)

अनुपुब्बतो मनसिकरोन्तेना पि च **नातिसीघतो** मनसिकातब्ब। अतिसीघतो मनसिकरोतो हि यथा नाम तियोजनं मग्ग पटिपज्जित्वा ओक्कमनविस्सज्जन[1] असल्लक्खेत्वा सीघेन जवेन सत्तक्खत्तु पि गमनागमनं करोतो पुरिसस्स किञ्चापि अद्धानं परिक्खय गच्छति, अथ खो पुच्छित्वा व गन्तब्ब होति, एवमेव केवल कम्मट्ठान परियोसानं पापुणाति, अविभूत पन होति, न विसेस आवहति, तस्मा नातिसीघतो मनसिकातब्ब। (२)

यथा च नातिसीघतो, एव **नातिसणिकतो** पि। अतिसणिकतो मनसिकरोतो हि यथा नाम तदहेव तियोजनमग्ग गन्तुकामस्स पुरिसस्स अन्तरामग्गे रुक्ख-पब्बततळाकादीसु विलम्बमानस्स मग्गो परिक्खय न गच्छति, द्वीह-तीहेन परियोसापेतब्बो होति, एवमेव कम्मट्ठानं परियोसान न गच्छति, विससाधि-गमस्स पच्चयो न होति। (३)

विक्खेपपटिबाहनतो ति। कम्मट्ठानं विस्सज्जेत्वा बहिद्धा पुथुत्तारम्मणे चेतसो विक्खेपो पटिबाहितब्बो। अप्पटिबाहतो हि यथा नाम एकपदिकं पपातमग्ग पटिपन्नस्स पुरिसस्स अक्कमनपद असल्लक्खेत्वा इतो चितो च विलोकयतो

१. **ओक्कमनविसज्जनं** ति। क्व ? पटिपज्जितब्बविस्सज्जेतब्बे मग्गे।

पदवारो विरज्झति, ततो सतपोरिसे पपाते पतितब्बं होति; एवमेव बहिद्धा विक्खेपे सति कम्मट्ठानं परिहायति परिधंसति। तस्मा विक्खेपपटिबाहनतो मनसिकातब्ब। (४)

पण्णत्तिसमतिक्कमनतो ति। या अय केसा लोमा ति आदिका पण्णत्ति, तं अतिक्कमित्वा पटिक्कूल ति चित्त ठपेतब्बं। यथा हि उदकदुल्लभकाले मनुस्सा अरञ्ञे उदपानं दिस्वा तत्थ तालपण्णादिक किञ्चिदेव सञ्ञाणं बन्धित्वा तेन सञ्ञाणेन आगन्त्वा न्हायन्ति चेव पिबन्ति च। यदा पन नेस अभिण्हसञ्चारेन आगतागतपदं पाकट होति, तदा सञ्ञाणन किच्च न होति, इच्छितिच्छितक्खणे गन्त्वा न्हायन्ति चेव पिबन्ति च, एवमेव पुब्बभागे केसा लोमा ति पण्णत्तिवसेन मनसिकरोतो पटिक्कूलभावो पाकटो होति। अथ केसा लोमा ति पण्णत्ति समतिक्कमित्वा पटिक्कूलभावे येव चित्त ठपेतब्बं। (५)

अनुपुब्बमुञ्चनतो ति। यो यो कोट्ठासो न उपट्ठाति, तं तं मुञ्चन्तेन अनुपुब्बमुञ्चनतो मनसिकातब्बं। आदिकम्मिकस्स हि 'केसा' ति मनसिकरोतो मनसिकारो गन्त्वा 'मुत्त' ति इमं परियोसानकोट्ठासमेव आहच्च तिट्ठति। 'मुत्तं' ति च मनसिकरोतो मनसिकारो गन्त्वा 'केसा' ति इमं आदिकोट्ठासमेव आहच्च तिट्ठति। अथस्स मनसिकरोतो मनसिकरोतो केचि कोट्ठासा उपट्ठहन्ति, केचि न उपट्ठहन्ति। तेन ये ये उपट्ठहन्ति, तेसु तेसु ताव कम्मं कातब्ब, याव द्वीसु उपट्ठितेसु तेस पि एको सुट्ठुतरं उपट्ठहति। एवं उपट्ठितं पन तमेव पुनप्पुनं मनसिकरोन्तेन अप्पना उप्पादेतब्बा।

तत्रायं उपमा—यथा हि द्वत्तिसतालके तालवने वसन्त मक्कटं गहेतुकामो लुद्दो आदिम्हि ठिततालस्स पण्णं सरेन विज्झित्वा उक्कुट्ठिं करेय्य, अथ खो सो मक्कटो पटिपाटिया तस्मि तस्मि ताले पतित्वा परियन्ततालमेव गच्छेय, तत्थ पि गन्त्वा लुद्देन तथेव कते पुन तेनेव नयेन आदिताल आगच्छेय्य, सो एव पुनप्पुन पटिपाटियमानो उक्कुट्ठुक्कुट्ठिट्ठाने येव उट्ठहित्वा अनुक्कमेन एकस्मि ताले निपतित्वा तस्स वेमज्झे मकुलतालपण्णसूचि दळ्ह गहेत्वा विज्झियमानो पि न उट्ठहेय्य, एवसम्पदमिदं दट्ठब्ब।

तत्रिदं ओपम्मसंसन्दनं—यथा हि तालवने द्वत्तिस ताला, एव इमस्मि काये द्वत्तिसकोट्ठासा। मक्कटो विय चित्तं। लुद्दो विय योगावचरो। मक्कटस्स द्वत्तिसतालके तालवने निवासो विय योगिनो चित्तस्स द्वत्तिसकोट्ठासके काये आरम्मणवसेन अनुसञ्चरण। लुद्देन आदिम्हि ठिततालस्स पण्ण सरेन विज्झित्वा उक्कुट्ठिया कताय मक्कटस्स तस्मि तस्मि ताले पतित्वा परियन्ततालगमनं विय योगिनो 'केसा' ति मनसिकारे आरद्धे पटिपाटिया गन्त्वा परियोसानकोट्ठासे येव चित्तस्स सण्ठानं। पुन पच्चागमने पि एसेव नयो। पुनप्पुनं पटिपाटियमानस्स

मक्कटस्स उक्कुट्ठुक्कुट्ठिट्ठाने उट्ठानं विय पुनप्पुन मनसिकरोतो केसुचि केसुचि उपट्ठितेसु अनुपट्ठहन्ते विस्सज्जेत्वा उपट्ठितेसु परिकम्मकरण। अनुक्कमेन एकस्मिं ताले निपतित्वा तस्स मज्झे मकुळनालपण्णसूचिं दळ्हं गहेत्वा विज्झियमानस्स पि अनुट्ठान विय अवसाने द्वीसु उपट्ठितेसु यो सुट्ठुतरं उपट्ठाति, तमेव पुनप्पुन मनसिकरित्वा अप्पनाय उप्पादन।

अपरा पि उपमा—यथा नाम पिण्डपातिको भिक्खु द्वत्तिंसकुलं गामं उपनिस्साय वसन्तो पठमगेहे येव द्वे भिक्खा लभित्वा परतो एक विस्सज्जेय्य। पुन दिवसे तिस्सो लभित्वा परतो द्वे विस्सज्जेय्य। ततियदिवसे आदिम्हि येव पत्तपूर लभित्वा आसनसाल गन्त्वा परिभुञ्जेय्य। एवसम्पदमिद दट्ठब्बं।

द्वत्तिंसकुलगामो विय हि द्वत्तिंसाकारो। पिण्डपातिको विय योगावचरो। तस्स त गाम उपनिस्साय वासो विय योगिनो द्वत्तिंसाकारे परिकम्मकरण। पठमगेहे द्वे भिक्खा लभित्वा परतो एकिस्सा विस्सज्जन विय, दुतियदिवसे तिस्सो लभित्वा परतो द्विन्न विस्सज्जनं विय च मनसिकरोतो मनसिकरोतो अनुपट्ठहन्ते विस्सज्जेत्वा उपट्ठितेसु याव कोट्ठासद्वये परिकम्मकरण। ततियदिवसे आदिम्हि येव पत्तपूरं लभित्वा आसनसालाय निसीदित्वा परिभोगो विय द्वीसु यो सुट्ठुतर उपट्ठाति, तमेव पुनप्पुनं मनसिकरित्वा अप्पनाय उप्पादनं। (६)

अप्पनातो ति। अप्पनाकोट्ठासतो। केसादीसु एकेकस्मिं कोट्ठासे अप्पना होती ति वेदितब्बा ति अयमेवेत्थ अधिप्पायो। (७)

तयो च सुत्तन्ता ति। अधिचित्त[1], सीतिभावो[2], बोज्झङ्गकोसल्ल ति इमे तयो सुत्तन्ता विरियसमाधियोजनत्थ वेदितब्बा ति अयमेत्थ अधिप्पायो। तत्थ—

"अधिचित्तमनुयुत्तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तीणि निमित्तानि कालेन काल मनसिकातब्बानि। कालेन कालं समाधिनिमित्त मनसिकातब्बं। कालेन कालं पग्गहनिमित्तं मनसिकातब्बं। कालेन कालं उपेक्खानिमित्त मनसिकातब्बं। सचे, भिक्खवे, अधिचित्तमनुयुत्तो भिक्खु एकन्तं समाधिनिमित्त येव मनसिकरेय्य, ठानं तं चित्त कोसज्जाय सवत्तेय्य। सचे, भिक्खव, अधिचित्तमनुयुत्तो भिक्खु एकन्तं पग्गहनिमित्तं येव मनसिकरेय्य, ठानं तं चित्तं उद्धच्चाय संवत्तेय्य। सचे, भिक्खवे, अधिचित्तमनुयुत्तो भिक्खु एकन्तं उपेक्खानिमित्तं येव मनसिकरेय्य, ठानं त चित्तं न सम्मा समाधियेय्य आसवानं खयाय। यतो च खो, भिक्खवे, अधिचित्तमनुयुत्तो भिक्खु कालेन कालं समाधिनिमित्त पग्गहनिमित्त उपेक्खानिमित्त मनसिकरोति, तं होति चित्तं मुदु च कम्मञ्ञं च पभस्सरं च, न च पभङ्गु, सम्मा समाधियति आसवानं खयाय।

सेय्यथापि, भिक्खवे, सुवण्णकारो वा सुवण्णकारन्तेवासी वा उक्क बन्धति,

---

१. अधिचित्तं ति। समथविपस्सनाचित्त। २. सीतिभावो ति। निब्बानं।

उक्कामुखं आलिम्पेति, उक्कामुखं आलिम्पेत्वा सण्डासेन जातरूपं गहेत्वा उक्कामुखे पक्खिपित्वा कालेन कालं अभिधमति कालेन कालं उदकेन परिप्फोसेति, कालेन कालं अज्झुपेक्खति। सचे, भिक्खवे, सुवण्णकारो वा सुवण्णकारन्तेवासी वा तं जातरूपं एकन्तं अभिधमेय्य, ठानं तं जातरूपं डहेय्य। सचे, भिक्खवे, सुवण्णकारो वा सुवण्णकारन्तेवासी वा तं जातरूपं एकन्तं उदकेन परिप्फोसेय्य, ठानं तं जातरूपं निब्बायेय्य। सचे, भिक्खवे, सुवण्णकारो वा सुवण्णकारन्तेवासी वा तं जातरूपं एकन्तं अज्झुपेक्खेय्य, ठानं तं जातरूपं न सम्मापरिपाकं गच्छेय्य। यतो च खो, भिक्खवे, सुवण्णकारो वा सुवण्णकारन्तेवासी वा तं जातरूपं कालेन कालं अभिधमति, कालेन कालं उदकेन परिप्फोसेति, कालेन कालं अज्झुपेक्खति, तं होति जातरूपं मुदु च कम्मञ्ञं च पभस्सरं च, न च पभङ्गु, सम्मा उपेति कम्माय। यस्सा यस्सा च पिळन्धनविकतिया आकङ्खति—यदि पट्टिकाय यदि कुण्डलाय यदि गीवेय्याय यदि सुवण्णमालाय, तं चस्स अत्थं अनुभोति।

एवमेव खो, भिक्खवे, अधिचित्तमनुयुत्तेन पे०... समाधियति आसवानं खयाय। यस्स यस्स च अभिञ्ञा सच्छिकरणीयस्स धम्मस्स चित्तं अभिनिन्नामेति अभिञ्ञासच्छिकिरियाय, तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणाति, सति सति आयतने" (अ० १–१२७) ति। (८)

इदं सुत्तं **अधिचित्तं** ति वेदितब्बं।

"छहि भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो अनुत्तरं सीतिभावं सच्छिकातुं। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु यस्मिं समये चित्तं निग्गहेतब्बं, तस्मिं समये चित्तं निग्गण्हाति। यस्मिं समये चित्तं पग्गहेतब्बं, तस्मिं समये चित्तं पग्गण्हाति। यस्मिं समये चित्तं सम्पहंसितब्बं, तस्मिं समये चित्तं सम्पहंसेति। यस्मिं समये चित्तं अज्झुपेक्खितब्बं, तस्मिं समये चित्तं अज्झुपेक्खति। पणीताधिमुत्तिको च होति निब्बानाभिरतो। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो अनुत्तरं सीतिभावं सच्छिकातुं" (अ० ३–३७) ति। (९)

इदं सुत्तं **सीतिभावो** ति वेदितब्बं।

बोज्झङ्गकोसल्लं पन "एवमेव खो, भिक्खवे, यस्मिं समये लीनं चित्तं होति, अकालो तस्मिं समये पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाया" (अं० ३–३७) ति अप्पनाकोसल्लकथायं दस्सितमेव। (१०)

इति इदं सत्तविधं उग्गहकोसल्लं सुग्गहितं कत्वा इदं च दसविधं मनसिकारकोसल्लं सुट्ठु ववत्थपेत्वा तेन योगिना उभयकोसल्लवसेन कम्मट्ठानं साधुकं उग्गहेतब्बं।

सचे पनस्स आचरियेन सद्धिं एकविहारे येव फासु होति, एवं वित्थारेन अकथापेत्वा कम्मट्ठानं सुट्ठु ववत्थपेत्वा कम्मट्ठानं अनुयुञ्जन्तेन विसेसं लभित्वा उपरूपरि कथापेतब्बं। अञ्ञत्थ वसितुकामेन यथावुत्तेन विधिना वित्थारतो कथापेत्वा पुनप्पुनं परिवत्तेत्वा सब्बं गण्ठिट्ठानं छिन्दित्वा पथवीकसिणनिद्देसे वुत्तनयेनेव अननुरूपं सेनासनं पहाय अनुरूपे विहारे वसन्तेन खुद्दकपलिबोधुपच्छेदं कत्वा पटिक्कूलमनसिकारे परिकम्मं कातब्बं।

करोन्तेन पन केसेसु ताव निमित्तं गहेतब्बं। कथं? एकं वा द्वे वा केसे लुञ्चित्वा हत्थतले ठपेत्वा वण्णो ताव ववत्थपेतब्बो। छिन्नट्ठाने पि केसे ओलोकेतुं वट्टति। उदकपत्ते वा यागुपत्ते वा ओलोकेतुं पि वट्टति येव। काळककाले दिस्वा काळका ति मनसिकातब्बा, सेतकाले सेता ति। मिस्सककाले पन उस्सदवसेन मनसिकातब्बा होन्ति। यथा च केसेसु, एवं सकले पि तचपञ्चके दिस्वा व निमित्तं गहेतब्बं॥

कोट्ठासववत्थापनकथा

१८ एवं निमित्तं गहेत्वा सब्बकोट्ठासे वण्ण-सण्ठान-दिसोकास-परिच्छेदवसेन ववत्थपेत्वा वण्णसण्ठानगन्धआसयोकासवसेन पञ्चधा पटिक्कूलता ववत्थपेतब्बा।

तत्रायं सब्बकोट्ठासेसु अनुपुब्बकथा—

१९ **केसा** ताव पकति**वण्णेन** काळका अद्दारिट्ठकवण्णा[1]। **सण्ठानतो** दीघवट्टलिकातुलादण्डसण्ठाना। **दिसतो** उपरिमदिसाय जाता। **ओकासतो** उभासु पस्सेसु कण्णचूळिकाहि, पुरतो नलाटन्तेन, पच्छतो गलवाटकेन परिच्छिन्ना सीसकटाहवेठनं अल्लचम्मं केसानं ओकासो। **परिच्छेदतो** केसा सीसवेठनचम्मे वीहग्गमत्तं पविसित्वा पतिट्ठितेन हेट्ठा अत्तनो मूलतलेन, उपरि आकासेन, तिरियं अञ्ञमञ्ञेन परिच्छिन्ना, द्वे केसा एकतो नत्थी ति अयं सभागपरिच्छेदो। केसा न लोमा, लोमा न केसा ति एवं अवसेसएकतिंसकोट्ठासेहि अमिस्सीकता केसा नाम पाटियेक्को एककोट्ठासो ति अयं विसभागपरिच्छेदो। इदं केसानं वण्णादितो ववत्थापनं।

इदं पन नेसं वण्णादिवसेन पञ्चधा पटिक्कूलतो ववत्थापनं—केसा नामेते वण्णतो पि पटिक्कूला। सण्ठानतो पि गन्धतो पि आसयतो पि ओकासतो पि पटिक्कूला।

मनुञ्ञे पि हि यागुपत्ते वा भत्तपत्ते वा केसवण्णं किञ्चि दिस्वा 'केसमिस्सकमिदं हरथ नं' ति जिगुच्छन्ति, एवं केसा **वण्णतो** पटिक्कूला। रत्तिं भुञ्जन्ता

---

१. **अद्दवारिट्ठकवण्णा** ति। अभिनवारिट्ठफलवण्णा।

पि केससण्ठानं अक्कवाकं वा मकचिवाकं वा छुपित्वा पि तथेव जिगुच्छन्ति। एवं **सण्ठानतो** पटिक्कूला।

तेलमक्खनपुप्फधूपादिसङ्खारविरहितानं च केसानं गन्धो परमजेगुच्छो होति ततो जेगुच्छतरो अग्गिम्हि पक्खित्तानं। केसा हि वण्णसण्ठानतो अप्पटिक्कूला पि सियुं, गन्धेन पन पटिक्कूला येव। यथा हि दहरस्स कुमारस्स वच्चं वण्णतो हलिद्दिवण्णं, सण्ठानतो पि हलिद्दिपिण्डसण्ठानं, सङ्कारट्ठाने छड्डितं च उद्धुमातककाळसुनखसरीरं वण्णतो तालपक्कवण्णं, सण्ठानतो वट्टेत्वा विस्सट्ठमुदिङ्गसण्ठानं, दाठा पिस्स सुमनमकुलसदिसा ति उभयं पि वण्णसण्ठानतो सिया अप्पटिक्कूलं, गन्धेन पन पटिक्कूलमेव, एवं केसा पि सियुं वण्णसण्ठानतो अपटिक्कूला, **गन्धेन** पन पटिक्कूला येवा ति।

यथा पन असुचिट्ठाने गामनिस्सन्देन जातानि सूपेय्यपण्णानि नागरिकमनुस्सानं जेगुच्छानि होन्ति अपरिभोगानि, एवं केसा पि पुब्बलोहितमुत्तकरीसपित्तसम्हादिनिस्सन्देन जातत्ता जेगुच्छा ति। इदं नेसं **आसयतो** पाटिक्कुल्यं।

इमे च केसा नाम गूथरासिम्हि उट्ठितकण्णिकं विय एकतिंसकोट्ठासरासिम्हि जाता। ते सुसानसङ्कारट्ठानादीसु जातसाकं विय, परिक्खादिसु जातकमलकुवलयादिपुप्फं विय च असुचिट्ठाने जातत्ता परमजेगुच्छा ति। इदं नेसं **ओकासतो** पाटिक्कुल्यं। (१)

यथा च केसानं, एवं सब्बकोट्ठासानं वण्णसण्ठानगन्धासयोकासवसेन पञ्चधा पटिक्कूलता वेदितब्बा। वण्णसण्ठानदिसोकासपरिच्छेदवसेन पन सब्बे पि विसुं विसुं ववत्थपेतब्बा।

२०. तत्थ **लोमा** ताव पकति**वण्णतो** न केसा विय असम्भिन्नकाळका, काळपिङ्गला पन होन्ति। **सण्ठानतो** ओनतग्गा तालमूलसण्ठाना। **दिसतो** द्वीसु दिसासु जाता। **ओकासतो** ठपेत्वा केसानं पतिट्ठितोकासं च हत्थपादतलानि च येभुय्येन अवसेससरीरवेठनचम्मे जाता। **परिच्छेदतो** सरीरवेठनचम्मे लिखामत्तं पविसित्वा पतिट्ठितेन हेट्ठा अत्तनो मूलतलेन, उपरि आकासेन, तिरियं अञ्ञमञ्ञेन परिच्छिन्ना, द्वे लोमा एकतो नत्थि। अयं नेसं सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (२)

२१. **नखा** ति। वीसतिया नखपत्तानं नाम। ते सब्बे पि **वण्णतो** सेता। **सण्ठानतो** मच्छसकलिकसण्ठाना। **दिसतो** पादनखा हेट्ठिमदिसाय, हत्थनखा उपरिमदिसाया ति द्वीसु दिसासु जाता। **ओकासतो** अङ्गुलीनं अग्गपिट्ठेसु पतिट्ठिता। **परिच्छेदतो** द्वीसु दिसासु अङ्गुलिकोटिमंसेहि, अन्तो अङ्गुलिपिट्ठिमंसेन, बहि चेव अग्गे च आकासेन, तिरियं अञ्ञमञ्ञेन परिच्छिन्ना, द्वे नखा

एकतो नत्थि। अयं नेस सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (३)

२२. **दन्ता** ति। परिपुण्णदन्तस्स द्वत्तिंस दन्तट्ठिकानि। ते पि **वण्णतो** सेता। **सण्ठानतो** अनेकसण्ठाना। तेसं हि हेट्ठिमाय ताव दन्तपाळिया मज्झे चत्तारो दन्ता मत्तिकापिण्डे पटिपाटिया ठपितअलाबुबीजसण्ठाना। तेस उभोसु पस्सेसु एकेको एकमूलको एककोटिको मल्लिकमकुलसण्ठानो। ततो एकेको द्विमूलको द्विकोटिको यानकउपत्थम्भिनिसण्ठानो[1]। ततो द्वे द्वे तिमूला तिकोटिका। ततो द्वे द्वे चतुमूला चतुकोटिका ति। उपरिमपाळिया पि एसेव नयो। **दिसतो** उपरिमदिसाय जाता। **ओकासतो** द्वीसु हनुकट्ठिकेसु पतिट्ठिता। **परिच्छेदतो** हेट्ठा हनुकट्ठिके पतिट्ठितेन अत्तनो मूलतलेन, उपरि आकासेन, तिरिय अञ्ञमञ्ञेन परिच्छिन्ना, द्वे दन्ता एकतो नत्थि। अय नेस सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (४)

२३ **तचो** ति सकलसरीरं वेठेत्वा ठितचम्मं। तस्स उपरि काळसामपीतादिवण्णा छवि नाम, या सकलसरीरतो पि सङ्कड्ढियमाना बदरट्ठिमत्ता होति। तचो पन **वण्णतो** सेतो येव। सो चस्स सेतभावो अग्गिजालाभिघातपहरणप्पहारादीहि विद्धंसिताय छविया पाकटो होति। **सण्ठानतो** सरीरसण्ठानो व होति। अयमेत्थ सङ्खेपो।

वित्थारतो पन पादङ्गुलित्तचो कोसकारककोससण्ठानो। पिट्ठिपादत्तचो पुटबन्धउपाहनसण्ठानो। जङ्घत्तचो भत्तपुटकतालपण्णसण्ठानो। ऊरुत्तचो तण्डुलभरितदीघत्थविकसण्ठानो। आनिसदत्तचो उदकपूरितपटपरिस्सावनसण्ठानो। पिट्ठित्तचो फलकोनद्धचम्मसण्ठानो। कुच्छित्तचो वीणादोणिकोनद्धचम्मसण्ठानो। उरत्तचो येभुय्येन चतुरस्ससण्ठानो। उभयबाहुत्तचो तूणीरोनद्धचम्मसण्ठानो। पिट्ठिहत्थत्तचो खुरकोससण्ठानो, फणकत्थविकसण्ठानो वा। हत्थङ्गुलित्तचो कुञ्चिकाकोसकसण्ठानो। गीवत्तचो गलकञ्चुकसण्ठानो। मुखत्तचो छिद्दावछिद्दो कोटकुलावकसण्ठानो। सीसत्तचो पत्तत्थविकसण्ठानो ति।

तचपरिग्गण्हकेन च योगावचरेन उत्तरोट्ठतो पट्ठाय उपरिमुखं ञाणं पेसेत्वा पठम ताव मुख परियोनन्धित्वा ठितचम्म ववत्थपेतब्बं। ततो नलाटट्ठिचम्म। ततो थविकाय पक्खित्तपत्तस्स च थविकाय च अन्तरेन हत्थमिव सीसट्ठिकस्स च सीसचम्मस्स च अन्तरेन ञाण पेसेत्वा अट्ठिकेन सद्धि चम्मस्स एकाबद्धभाव वियोजेन्तेन सीसचम्म ववत्थपेतब्बं। ततो खन्धचम्म। ततो अनुलोमेन पटिलोमेन

---

१. यानकउपत्थम्भिनी ति। सकटस्स धुरट्ठाने उपत्थम्भकदण्डो।

च दक्खिणहत्थचम्मं। अथ तेनेव नयेन वामहत्थचम्मं। ततो पिट्ठिचम्मं तं ववत्थपेत्वा अनुलोमेन पटिलोमेन च दक्खिणपादचम्मं। अथ तेनेव नयेन वामपादचम्मं। ततो अनुक्कमेनेव वत्थि-उदर-हृदय-गीवचम्मानि ववत्थपेतब्बानि। अथ गीवचम्मानन्तरं हेट्ठिमहनुचम्मं ववत्थपेत्वा अधरोट्ठपरियोसानं पापेत्वा निट्ठपेतब्बं। एवं ओळारिकोळारिकं परिगण्हन्तस्स सुखुमं पि पाकटं होति। **दिसतो** द्वीसु दिसासु जातो। **ओकासतो** सकलसरीरं परियोनन्धित्वा ठितो। **परिच्छेदतो** हेट्ठा पतिट्ठिततलेन, उपरि आकासेन परिच्छिन्नो, अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (५)

२४. **मंसं** ति। नव मंसपेसिसतानि। तं सब्बं पि **वण्णतो** रत्तं किंसुकपुप्फसदिसं। **सण्ठानतो** जङ्घपिण्डिकमंसं तालपण्णपुटभत्तसण्ठानं। ऊरुमंसं निसदपोतसण्ठानं[1]। आनिसदमंसं उद्धनकोटिसण्ठानं। पिट्ठिमंसं तालगुळपटलसण्ठानं। पासुकद्वयमंसं कोट्ठलिकाय कुच्छियं तनुमत्तिकालेपसण्ठानं। थनमंसं वट्टेत्वा अवक्खित्तमत्तिकापिण्डसण्ठानं। बाहुद्वयमंसं द्विगुणं कत्वा ठपितनिच्चम्ममहामूसिकसण्ठानं। एवं ओळारिकोळारिकं परिगण्हन्तस्स सुखुमं पि पाकटं होति। **दिसतो** द्वीसु दिसासु जातं। **ओकासतो** साधिकानि तीणि अट्ठिसतानि अनुलिम्पित्वा ठितं। **परिच्छेदतो** हेट्ठा अट्ठिसङ्घाते पतिट्ठिततलेन, उपरि तचेन, तिरियं अञ्ञमञ्ञेन परिच्छिन्नं, अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (६)

२५. **न्हारू** ति। नव न्हारुसतानि। **वण्णतो** सब्बे पि न्हारू सेता। **सण्ठानतो** नानासण्ठाना। एतेसु हि गीवाय उपरिमभागतो पट्ठाय पञ्चमहान्हारू सरीरं विनन्धमाना पुरिमपस्सेन ओतिण्णा पञ्च पच्छिमपस्सेन, पञ्च दक्खिणपस्सेन, पञ्च वामपस्सेन, दक्खिणहत्थं विनन्धमाना पि हत्थस्स पुरिमपस्सेन पञ्च पच्छिमपस्सेन पञ्च। तथा वामहत्थं विनन्धमाना, दक्खिणपादं विनन्धमाना पि पादस्स पुरिमपस्सेन पञ्च, पच्छिमपस्सेन पञ्च। तथा वामपादं विनन्धमाना पी ति एवं सरीरधारका नाम सट्ठि महान्हारू कायं विनन्धमाना ओतिण्णा। ये **कण्डरा** ति पि वुच्चन्ति। ते सब्बे पि कन्दमकुलसण्ठाना। अञ्ञे पन तं तं पदेसं अज्झोत्थरित्वा ठिता। ततो सुखुमतरा सुत्तरज्जुकसण्ठाना। अञ्ञे ततो सुखुमतरा पूतिलतासण्ठाना, अञ्ञे ततो सुखुमतरा महावीणातन्तिसण्ठाना। अञ्ञे थूलसुत्तकसण्ठाना। हत्थपादपिट्ठीसु न्हारू सकुणपादसण्ठाना। सीसे न्हारू दारकानं सीसजालकसण्ठाना। पिट्ठियं न्हारू आतपे पसारितअल्लजालसण्ठाना। अवसेसा तं तं अङ्गपच्चङ्गानुगता न्हारू सरीरे पटिमुक्कजालकञ्चुक-

१. निसदपोतो सिलापुत्तको। धञ्ञादीनं परिमद्दनत्थं सिलाखण्डं तच्छेत्वा कतो।

सण्ठाना। **दिसतो** द्वीसु दिसासु जाता। **ओकासतो** सकलसरीरे अट्ठीनि आबन्धित्वा ठिता। **परिच्छेदतो** हेट्ठा तिण्णं अट्ठिसतान उपरि पतिट्ठिततलेहि, उपरि मंसचम्मानि आहच्च ठितप्पदेसेहि, तिरियं अञ्ञमञ्ञेन परिच्छिन्ना, अय नेसं सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (७)

२६. **अट्ठी** ति। ठपेत्वा द्वत्तिंस दन्तट्ठीनि, अवसेसानि चतुसट्ठि हत्थट्ठीनि, चतुसट्ठि पादट्ठीनि, चतुसट्ठि मंसनिस्सितानि मुदुअट्ठीनि, द्वे पण्हिकट्ठीनि, एकेकस्मि पादे द्वे द्वे गोप्फकट्ठानि, एक जण्णुकट्ठि, एक उरुट्ठि, द्वे कटिट्ठीनि, अट्ठारस पिट्ठिकण्टकट्ठीनि, चतुवीसति फासुकट्ठीनि, चुद्दस उरट्ठीनि, एक हृदयट्ठि, द्वे अक्खकट्ठीनि, द्वे कोट्ठट्ठानि, द्वे बाहट्ठीनि, द्वे द्वे अग्गबाहट्ठीनि, सत्त गीवट्ठीनि, द्वे हनुकट्ठानि, एक नासिकट्ठि, द्वे अक्खिट्ठीनि, द्वे कण्णट्ठीनि, एक नलाटट्ठि, एक मुद्धट्ठि, नव सीसकपालट्ठीनी ति एव तिमत्तानि अट्ठिसतानि, तानि सब्बानि पि **वण्णतो** सेतानि।

सण्ठानतो नानासण्ठानानि।

तत्थ हि अग्गपादङ्गुलिअट्ठीनि कतकबीजसण्ठानानि। तदनन्तरानि मज्झपब्बट्ठानि पनसट्ठिसण्ठानानि। मूलपब्बट्ठीनि पणवसण्ठनानि। पिट्ठिपादट्ठानि कोट्टितकन्दलकन्दरासिसण्ठानानि। पण्हिकट्ठि एकट्ठितालफलबीजसण्ठान।

गोप्फकट्ठीनि बद्धकीळागोलकसण्ठानानि, जङ्घट्ठीन गोप्फकट्ठिसु पतिट्ठितट्ठान अनपनीततचसिन्दिकरीलसण्ठानं। खुद्दकजङ्घट्ठिक धनुकदण्डसण्ठान। महन्त मिलातसप्पपिटठिसण्ठानं। जण्णुकट्ठि एकता परिक्खीणफेणकसण्ठान। तत्थ जङ्घट्ठितट्ठान अतिखिणग्गगोसिङ्गसण्ठान। ऊरुट्ठि दुत्तच्छितवासिफरसुदण्डसण्ठान। तस्स कटिट्ठिम्हि पतिट्ठितट्ठान कीळागालकसण्ठान। तेन कटिट्ठिनो पतिट्ठतट्ठान अग्गच्छिन्नमहापुन्नागफलसण्ठान।

कटिट्ठीनि द्वे पि एकबद्धानि हुत्वा कुम्भकारिकउद्धनसण्ठानानि। पाटियेक्क कम्मारकूटयोत्तसण्ठानानि। कोटिय ठित आनिसदट्ठि अधोमुख कत्वा गहितसप्पफणसण्ठान, सत्तट्ठट्ठानेसु छिद्दावछिद्दं। पिट्ठिकण्टकट्ठीनि अब्भन्तरतो उपरूपरि ठपितसीसपट्टवेठकसण्ठानानि, बाहिरतो वट्टनावळिसण्ठानानि। तेसं अन्तरन्तरा ककचन्दसदिसा द्वे तयो कण्टका होन्ति।

चतुवीसतिया पासुकट्ठीसु अपरिपुण्णानि अपरिपुण्णअसिसण्ठानानि। परिपुण्णानि परिपुण्णअसिसण्ठानानि। सब्बानि पि आदातकुक्कटस्स पसारितपक्खसण्ठानानि। चुद्दस उरट्ठानि जिण्णसन्दमानिकपञ्जरसण्ठानानि। हदयट्ठि दब्बिफणसण्ठान। अक्खकट्ठानि खुद्दकलोहवासिदण्डसण्ठानानि। कोट्ठट्ठानि एकतो परिक्खीणसीहळकुद्दालसण्ठानानि।

बाहुट्ठीनि आदासदण्डकसण्ठानानि। अग्गबाहुट्ठीनि यमकतालकन्दसण्ठानानि। मणिबन्धट्ठीनि एकतो अल्लियापेत्वा ठपितसीसकपट्टवेठकसण्ठानानि। पिट्ठिहत्थट्ठीनि कोट्टितकन्दलकन्दरासिसण्ठानानि। हत्थङ्गुलीसु मूलपब्बट्ठीनि पणवसण्ठानानि, मज्झपब्बट्ठीनि अपरिपुण्णपनसट्ठिसण्ठानानि, अग्गपब्बट्ठीनि कतकबीजसण्ठानानि।

सत्तगीवट्ठीनि दण्डेन विज्झित्वा पटिपाटिया ठपितवंसकळीरचक्कलकसण्ठानानि। हेट्ठिमहनुकट्ठि कम्मारानं अयोकूटयोत्तकसण्ठानं। उपरिमं अवलेखनसत्थकसण्ठानं[1]। अक्खिकूपनासकूपट्ठीनि अपनीतमिञ्जतरुणतालट्ठिसण्ठानानि। नलाटट्ठि अधोमुखट्ठपितसङ्खथालकपालसण्ठानं। कण्णचूळिकट्ठीनि न्हापितखुरकोससण्ठानानि। नलाटकण्णचूळिकानं उपरि पट्टबन्धनोकासे अट्ठिसङ्कुटितघटपुण्णपटलखण्डसण्ठानं। मुद्धनट्ठि मुखच्छिन्नवङ्कनाळिकेरसण्ठानं। सीसट्ठीनि सिब्बेत्वा ठपितजज्जरलाबुकटाहसण्ठानानि।

दिसतो द्वीसु दिसासु जातानि। ओकासतो अविसेसेन सकलसरीरे ठितानि। विसेसेन पनेत्थ सीसट्ठीनि गीवट्ठिसु पतिट्ठितानि। गीवट्ठीनि पिट्ठिकण्टकट्ठीसु, पिट्ठिकण्टकट्ठीनि कटिट्ठीसु, कटिट्ठीनि ऊरुट्ठिसु, ऊरुट्ठीनि जण्णुकट्ठीसु, जण्णुकट्ठीनि जङ्घट्ठीसु, जङ्घट्ठीनि गोप्फकट्ठीसु, गोप्फकट्ठीनि पिट्ठिपादट्ठीसु पतिट्ठितानि। **परिच्छेदतो** अन्तो अट्ठिमिञ्जेन, उपरितो मंसेन, अग्गे मूले च अञ्ञमञ्ञेन परिच्छिन्नानि। अयं नेसं सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (८)

२७ **अट्ठिमिञ्जं** ति। तेसं अट्ठीनं अब्भन्तरगतं मिञ्जं। तं **वण्णतो** सेतं। **सण्ठानतो** महन्तमहन्तानं अट्ठीनं अब्भन्तरगतं वेळुनाळियं पक्खित्तसेदितमहावेत्तग्गसण्ठानं। खुद्दानुखुद्दकानं अब्भन्तरगतं वेळुयट्ठिपब्बेसु पक्खित्तसेदिततनुवेत्तग्गसण्ठानं। **दिसतो** द्वीसु दिसासु जातं। **ओकासतो** अट्ठीनं अब्भन्तरे पतिट्ठितं। **परिच्छेदतो** अट्ठीनं अब्भन्तरतलेहि परिच्छिन्नं। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (९)

२८. **वक्कं** ति। एकबन्धना द्वे मंसपिण्डिका। तं **वण्णतो** मन्दरत्तं पालिभद्दकट्ठिवण्णं। **सण्ठानतो** दारकानं यमककीळागोळकसण्ठानं, एकवण्टपटिबद्धअम्बफलद्वयसण्ठानं वा। **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जातं। **ओकासतो** गलवाटका निक्खन्तेन एकमूलेन थोकं गन्त्वा द्विधा भिन्नेन थूलन्हारुना विनिबद्धं हुत्वा हदयमंसं परिक्खिपित्वा ठितं। **परिच्छेदतो** वक्कं वक्कभागेन परिच्छिन्नं। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (१०)

---

१. अवलेखनसत्थकं ति। उच्छु-तचावलेखनसत्थकं।

२९. **हदयं** ति हदयमसं। तं **वण्णतो** रत्तपदुमपत्तपिट्ठिवण्णं। **सण्ठानतो** बाहिरपत्तानि अपनेत्वा अधोमुख ठपितपदुममकुलसण्ठान। बहि मट्ठं, अन्तो कोसातकीफलस्स अब्भन्तरसदिस। पञ्ञवन्तान थोक विकसित, मन्दपञ्ञानं मकुलितमेव। अन्तो चस्स पुन्नागट्ठिपतिट्ठानमत्तो आवाटको होति, यत्थ अद्धपसतमत्तं लोहित सण्ठाति, य निस्साय मनोधातु च मनोविञ्ञाणधातु च वत्तन्ति।

त पनेत रागचरितस्स रत्तं होति, दोसचरितस्स काळक, मोहचरितस्स मसधोवनउदकसदिस, वितक्कचरितस्स कूलत्थयूसवण्ण, सद्धाचरितस्स कणिकारपुप्फवण्ण, पञ्ञाचरितस्स अच्छ विप्पसन्न अनाविल पण्डर परिसुद्ध निद्धोतजातमणि विय जुतिमन्त खायति। **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जातं। **ओकासतो** सरीरब्भन्तरे द्विन्न थनानं मज्झे पतिट्ठित। **परिच्छेदतो** हदय हदयभागेन परिच्छिन्नं। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (११)

३०. **यकनं** ति यमकमसपटलं। त **वण्णतो** रत्त पण्डुकधातुकं, नातिरत्तकुमुदस्स पत्तपिट्ठिवण्णं। **सण्ठानतो** मूले एकं अग्गे यमक कोविळारपत्तसण्ठानं। तं च दन्धानं एकमेव होति महन्त, पञ्ञवन्तान द्वे वा तीणि वा खुद्दकानि। **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जातं। **ओकासतो** द्विन्नं थनान अब्भन्तरे दक्खिणपस्सं निस्साय ठितं। **परिच्छेदतो** यकन यकनभागेन परिच्छिन्न। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (१२)

३१. **किलोमकं** ति। पटिच्छन्नापटिच्छन्नभेदतो दुविध परियोनहनमस। तं दुविधं पि **वण्णतो** सेतं दुकूलपिलोतिदवण्णं। **सण्ठानतो** अत्तनो ओकाससण्ठान। **दिसतो** पटिच्छन्नकिलोमकं उपरिमाय दिसाय। इतर द्वीसु दिसासु जात। **ओकासतो** पटिच्छन्नकिलोमक हदय च वक्क च पटिच्छादेत्वा, अपटिच्छन्नकिलोमक सकलसरीरे चम्मस्स हेट्ठतो मंसं परियोनन्धित्वा ठित। **परिच्छेदतो** हेट्ठा मंसेन, उपरि चम्मेन, तिरिय किलोमकभागेन परिच्छिन्न। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससादिसो येव। (१३)

३२. **पिहकं** ति। उदरजिव्हामसं। तं **वण्णतो** नील निग्गुण्डिपुप्फवण्णं। **सण्ठानतो** सत्तङ्गुलप्पमाणं अबन्धनं काळवच्छकजिव्हासण्ठानं। **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जातं। **ओकासतो** हदयस्स वामपस्से उदरपटलस्स मत्थकपस्सं निस्साय ठितं, यस्मि पहरणप्पहारेन बहिनिक्खन्ते सत्तान जीवितक्खयो होति। **परिच्छेदतो** पिहकभागेन परिच्छिन्न। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (१४)

३३ **पप्फासं** ति। द्वत्तिंसमंसखण्डप्पभेदं पप्फासमंसं। तं **वण्णतो** रत्तं नातिपक्कउदुम्बरफलवण्णं। **सण्ठानतो** विसमच्छिन्नबहलपूवखण्डसण्ठानं। अब्भन्तरे असितपीतानं अभावे उग्गतेन कम्मजतेजुस्मना अब्भाहतत्ता सङ्खादितपलालपिण्डमिव निरसं निरोजं। **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जातं। **ओकासतो** सरीरब्भन्तरे द्विन्नं थनानमन्तरे हदयं च यकनं च उपरि छादेत्वा ओलम्बन्तं ठितं। **परिच्छेदतो** पप्फासभागेन परिच्छिन्नं। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (१५)

३४. **अन्तं** ति। पुरिसस्स द्वत्तिंसहत्थं, इत्थिया अट्ठवीसतिहत्थं एकवीसतिया ठानेसु ओभग्गा अन्तवट्टि। तदेतं वण्णतो सेतं सक्खरसुधावण्णं। **सण्ठानतो** लोहितदोणियं आभुजित्वा ठपितसीसच्छिन्नसप्पसण्ठानं। **दिसतो** द्वीसु दिसासु जातं। **ओकासतो** उपरि गलवाटके हेट्ठा च करीसमग्गे विनिबन्धत्ता गलवाटककरीसमग्गपरियन्ते सरीरब्भन्तरे ठितं। **परिच्छेदतो** अन्तभागेन परिच्छिन्नं। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव।

३५ **अन्तगुणं** ति। अन्तभोगट्ठानेसु बन्धनं। तं **वण्णतो** सेतं दकसीतलिकमूलवण्णं। **सण्ठानतो** दकसीतलिकमूलसण्ठानमेव। **दिसतो** द्वीसु दिसासु जातं। **ओकासतो** कुद्दालफरसुकम्मादीनि करोन्तानं यन्ताकड्ढनकाले यन्तसुत्तकमिव यन्तफलकानि अन्तभोगे एकतो अगळन्ते आबन्धित्वा पादपुञ्छनरज्जुमण्डलकस्स अन्तरा तं संसिब्बित्वा ठितरज्जुका विय एकवीसतिया अन्तभोगानं अन्तरा ठितं। **परिच्छेदतो** अन्तगुणभागेन परिच्छिन्नं। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (१६)

३६ **उदरियं** ति। उदरे भवं असितपीतखायितसायितं। तं **वण्णतो** अज्झोहटाहारवण्णं। **सण्ठानतो** परिस्सावने सिथिलबद्धतण्डुलसण्ठानं। **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जातं। **ओकासतो** उदरे ठितं।

उदरं नाम उभतो निप्पीळियमानस्स अल्लसाटकस्स मज्झे सञ्जातफोटकसदिसं अन्तपटलं, बहि मट्ठं, अन्तो मंसकसम्बुपलिवेठनकिलिट्ठपावारकपुप्फकसदिसं, कुथितपनसतचस्स अब्भन्तरसदिसं ति पि वत्तुं वट्टति। यत्थ तक्कोटका गण्डुप्पादका तालहीरका सूचिमुखका पटतन्तुसुत्तका इच्चेवमादिद्वत्तिंसकुलप्पभेदा किमयो आकुलब्याकुला सण्डसण्डचारिनो हुत्वा निवसन्ति, ये पानभोजनादिम्हि अविज्जमाने उल्लङ्घित्वा विरवन्ता हदयमंसं अभिहनन्ति, पानभोजनादिअज्झोहरणवेलायं च उद्धमुखा हुत्वा पठमज्झोहटे द्वे तयो आलोपे तुरिततुरिता विलुम्पन्ति, यं तेसं किमीनं सूतिघरं वच्चकुटि गिलानसाला सुसानं च होति। यत्थ, सेय्यथापि नाम चण्डालगामद्वारे चन्दनिकाय निदाघसमये थूलफुसितके

देवे वस्सन्ते उदकेन वुय्हमानं मुत्तकरीसचम्मअट्ठिन्हारुखण्डखेळसिङ्घाणिकलोहितप्पभुति नानाकुणपजात निपतित्वा कद्दमोदकालुळित द्वीहतीहच्चयेन सञ्जातकिमिकुलं सूरियातपसन्तापवेगकुथित उपरि फेणपुप्फुळके मुञ्चन्तं अभिनीलवण्णं परमदुग्गन्धजेगुच्छ नेव उपगन्तु न दट्ठु अरहरूपतं आपज्जित्वा तिट्ठति, पगेव घायितुं वा सायितुं वा, एवमेव नानप्पकार पानभोजनादिदन्तमुसलसञ्चुण्णितं जिव्हाहत्थपरिवत्तितखेळलालापलिबुद्धं तङ्खणविगतवण्णगन्धरसादिसम्पद तन्तवायखलिसुवानवमथुसदिस निपतित्वा पित्तसेम्हवातपलिवेठित हुत्वा उदरग्गिसन्तापवेगकुथित किमिकुलाकुल उपरूपरि फेणपुप्फुळकानि मुञ्चन्तं परमकसम्बुदुग्गन्धजेगुच्छभाव आपज्जित्वा तिट्ठति, यं सुत्वा पि पानभोजनादीसु अमनुञ्ञता सण्ठाति, पगेव पञ्ञाचक्खुना अवलोकेत्वा। यत्थ च पतित पानभोजनादि पञ्चधा विवेक गच्छति—एक भागं पाणका खादन्ति, एक भागं उदरग्गि झापेति, एको भागो मुत्त होति, एको भागो करीस, एको भागो रसभाव आपज्जित्वा सोणितमंसादीनि उपब्रूहयति। **परिच्छेदतो** उदरपटलेन चेव उदरियभागेन च परिच्छिन्न, अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (१७)

३७ **करीसं** ति वच्चं। त **वण्णतो** येभुय्येन अज्झोहटाहारवण्णमेव होति। **सण्ठानतो** ओकाससण्ठान। **दिसतो** हेट्ठिमाय दिसाय जात। **ओकासतो** पक्कासये ठितं। (१८)

पक्कासयो नाम हेट्ठानाभिपिट्ठिकण्टकमूलान अन्तरे अन्तावसाने उब्बेधेन अट्ठङ्गुलमत्तो वेळुनाळिकसदिसो। यत्थ, सेय्यथापि नाम उपरि भूमिभागे पतितं वस्सोदकं ओगळित्वा हेट्ठा भूमिभाग पूरेत्वा तिट्ठति; एवमेव य किञ्चि आमासये पतितं पानभोजनादिक उदरग्गिना फेणुद्देहक पक्कं पक्कं निसदाय पिसितमिव सण्हभाव आपज्जित्वा अन्तबिलेन ओगळित्वा, ओमद्दित्वा वेलुपब्बे पक्खिपमानपण्डुमत्तिक्का विय सन्निचित हुत्वा तिट्ठति। **परिच्छेदतो** पक्कासय पटलेन चेव करीसभागेन च परिच्छिन्न। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभाग परिच्छेदो पन केससदिसो येव। (१९)

३८. **मत्थलुङ्गं** ति। सीसकटाहब्भन्तरे ठितमिञ्जरासि। तं **वण्णतो** सेत अहिच्छत्तकपिण्डवण्ण। दधिभाव असम्पत्तं दुट्ठखीरवण्ण ति पि वत्त वट्टति। **सण्ठानतो** ओकाससण्ठानं। **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जातं। **ओकासतो** सीसकटाहब्भन्तरे चत्तारो सिब्बिनिमग्गे निस्साय समोधानेत्वा ठपिता चत्तारो पिट्ठपिण्डा विय समाहित तिट्ठति। **परिच्छेदतो** सीसकटाहस्स अब्भन्तरतलेहि चेव मत्थलुङ्गभागेन च परिच्छिन्नं। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (२०)

३९ **पित्तं** ति। द्वे पित्तानि—बद्धपित्त च, अबद्धपित्त च। तत्थ बद्धपित्तं **वण्णतो** बहलमधुकतेलवण्ण। अबद्धपित्त मिलानआकुलिपुप्फवण्ण। **सण्ठानतो** उभय पि ओकाससण्ठान। **दिसतो** बद्धपित्त उपरिमाय दिसाय जात, इतर द्वीसु दिसासु जात। **ओकासतो** अबद्धपित्त ठपेत्वा केसलोमदन्तनखानं ममविनिमुत्तट्ठानं चेव थद्धसुक्खचम्म च, उदकमिव तेलबिन्दु अवसेसमरीरं ब्यापेत्वा ठित, यम्हि कुपिते अक्खीनि पीतकानि होन्ति, भमन्ति, गत्त कम्पति, कण्डूयति। बद्धपित्त हदयपप्फासान अन्तरे यकनमंस निस्साय पतिट्ठिते महाकोसातकोकोसकसदिसे पित्तकासके ठित, यम्हि कुपिते सत्ता उम्मत्तका होन्ति, विपल्लत्थचित्ता, हिरोतप्प छड्डेत्वा अकातब्ब करोन्ति, अभासितब्ब भासन्ति, अचिन्तितब्बं चिन्तेन्ति। **परिच्छेदतो** पित्तभागेन परिच्छिन्न। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (२१)

४० **सेम्हं** ति। सरीरब्भन्तरे एकपत्तपूरप्पमाणं सेम्हं। त **वण्णतो** सेतं नागबलापण्णरसवण्ण। **सण्ठानतो** आकाससण्ठानं। **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जातं। **ओकासतो** उदरपटले ठित। य पानभोजनादिअज्झोहरणकाले, सेय्यथापि नाम उदके सेवालपण्णकं कट्ठे वा कथले वा पतन्ते छिज्जित्वा द्विधा हुत्वा पुन अज्झोत्थरित्वा तिट्ठति, एवमेव पानभोजनादिम्हि निपतन्ते छिज्जित्वा द्विधा हुत्वा पुन अज्झोत्थरित्वा तिट्ठति। यम्हि च मन्दाभूते पक्कगण्डो विय पूतिकुक्कुटण्डमिव च उदर परमजेगुच्छ कुणपगन्ध होति, ततो उग्गतेन च गन्धेन उद्को पि मुख पि दुग्गन्धं पूतिकुणपसदिस होति। सो च पुरिसो 'अपेहि, दुग्गन्धं वायसी' ति वत्तब्बतं आपज्जति, य च वड्ढित्वा बहलत्तमापन्नं, पिधानफलकमिव वच्चकुटियं, उदरपटलस्स अब्भन्तरे येव कुणपगन्ध सन्निरुम्भित्वा तिट्ठति। **परिच्छेदतो** सेम्हभागेन परिच्छिन्नं। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छदो पन केससदिसो येव। (२२)

४१ **पुब्बो** ति। पूतिलोहितवसेन पवत्तपुब्ब। तं **वण्णतो** पण्डुपलासवण्णो। मतसरीरे पन पूतिबहलाचामवण्णो[१] होति। **सण्ठानतो** ओकाससण्ठानो। **दिसतो** द्वीसु दिसासु होति। **ओकासतो** पन पुब्बस्स ओकासो नाम निबद्धो नत्थि, यत्थ सो सन्निचित्तो तिट्ठेय्य। यत्र यत्र खाणुकण्टकपहरणग्गिजालादीहि अभिहते सरीरप्पदेसे लोहित सण्ठहित्वा पच्चति, गण्डपोळकादयो वा उप्पज्जन्ति, तत्र तत्र तिट्ठति। **परिच्छेदतो** पुब्बभागेन परिच्छिन्नो। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (२३)

---

१. आचामो ति। भत्तं पचित्वा अपनीतं उदकमण्डं।

४२. **लोहितं** ति । द्वे लोहितानि—सन्निचितलोहितं च, संसरणलोहितं च । तत्थ सन्निचितलोहितं **वण्णतो** निपक्कबहलला खारसवण्णं । संसरणलोहितं अच्छलाखारसवण्णं। **सण्ठानतो** उभयं पि ओकाससण्ठानं । **दिसतो** सन्निचितलोहितं उपरिमाय दिसाय जातं । इतरं द्वीसु दिसासु जातं । **ओकासतो** संसरणलोहितं, ठपेत्वा केसलोमदन्तनखानं मंसविनिमुत्तट्ठानं चेव थद्धसुक्खचम्मं च, धमनिजालानुसारेन सब्बं उपादिण्णसरीरं फरित्वा ठितं । सन्निचितलोहितं यकनट्ठानस्स हेट्ठाभागं पूरेत्वा एकपत्तपूरमत्तं हदयवक्कपप्फासानं उपरि थोकं थोकं पग्घरन्तं वक्कहदययकनपप्फासे तेमयमानं ठितं । तस्मिं हि वक्कहदयादीनि अतेमेन्ते सत्ता पिपासिता होन्ति । **परिच्छेदतो** लोहितभागेन परिच्छिन्नं । अयमस्स सभागपरिच्छेदो । विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव । (२४)

४३. **सेदो** ति । लोमकूपादीहि पग्घरणकआपोधातु । सो **वण्णतो** विप्पसन्नतिलतेलवण्णो । **सण्ठानतो** ओकाससण्ठानो । **दिसतो** द्वीसु दिसासु जातो । **ओकासतो** सेदस्स ओकासो नाम निबद्धो नत्थि, यत्थ सो लोहितं विय सदा तिट्ठेय्य । यदा पन अग्गिसन्ताप-सुरियसन्ताप-उतुविकारादीहि सरीरं सन्तपति, तदा उदकतो अब्बूळ्हमत्तविसमच्छिन्नभिसमुळालकुमुदनाळकलापो विय सब्बकेसलोमकूपविवरेहि पग्घरति । तस्मा तस्स सण्ठानं पि केसलोमकूपविवरानं वसेनेव वेदितब्बं । सेदं परिग्गण्हकेन च योगिना केसलोमकूपविवरे पूरेत्वा ठितवसेनेव सेदो मनसिकातब्बो । **परिच्छेदतो** सेदभागेन परिच्छिन्नो । अयमस्स सभागपरिच्छेदो । विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव । (२५)

४४ **मेदो** ति । थीनसिनेहो । सो **वण्णतो** फालितहलिद्दिवण्णो । **सण्ठानतो** थूलसरीरस्स ताव चम्ममंसन्तरे ठपितहलिद्दिवण्णदुकूलपिलोतिकसण्ठानो होति । किससरीरस्स जङ्घमंसं ऊरुमंसं पिट्ठिकण्टकनिस्सितं पिट्ठिमंसं उदरवट्टिमंसं ति एतानि निस्साय दिगुणतिगुणं कत्वा ठपितहलिद्दिवण्णदुकूलपिलोतिकसण्ठानो । **दिसतो** द्वीसु दिसासु जातो । **ओकासतो** थूलस्स सकलसरीरं फरित्वा किसस्स जंघमंसादीनि निस्साय ठितो । यं सिनेहसङ्खं गतं पि परमजेगुच्छत्ता नेव मुद्धनि तेलत्थाय, न नासतेलादीनं अत्थाय गण्हन्ति । **परिच्छेदतो** हेट्ठा मंसेन, उपरि चम्मेन, तिरियं मेदभागेन परिच्छिन्नो । अयमस्स सभागपरिच्छेदो । विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव । (२६)

४५. **अस्सु** ति । अक्खीहि पग्घरणकआपोधातु । तं **वण्णतो** विप्पसन्नतिलतेलवण्णं । **सण्ठानतो** ओकाससण्ठानं । **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जातं । **ओकासतो** अक्खिकूपकेसु ठितं । न चेतं पित्तकोसके पित्तमिव अक्खिकूपकेसु सदा सन्निचितं तिट्ठति । यदा पन सत्ता सोमनस्सजाता महाहसितं हसन्ति, दोमनस्सजाता रोदन्ति परिदेवन्ति, तथारूपं वा विसमाहारं आहारेन्ति, यदा च नेसं अक्खीनि

धूमरजपंसुकादीहि अभिहञ्ञन्ति, तदा एतेहि सोमनस्सदोमनस्सविसभागाहार-उतूहि समुट्ठहित्वा अक्खिकूपके पूरेत्वा तिट्ठति वा, पग्घरति वा। अस्सु-परिग्गण्हकेन च योगिना अक्खिकूपके पूरेत्वा ठितवसेनेव परिग्गण्हितब्ब। **परिच्छेदतो** अस्सुभागेन परिच्छिन्न। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभाग-परिच्छेदो पन केससदिसो येव। (२७)

४६ **वसा** ति। विलीनसिनेहो। सा **वण्णतो** नाळिकेरतेलवण्णा। आचामे आसित्ततेलवण्णा ति पि वत्तु वट्टति। **सण्ठानतो** न्हानकाले पसन्नउदकस्स उपरि परिब्भमन्तसिनेहबिन्दुविसटसण्ठाना। **दिसतो** द्वीसु दिसासु जाता। **ओकासतो** येभुय्येन हत्थतलहत्थपिट्ठिपादतलपादपिट्ठिनासापुटनलाटअंसकूटेसु ठिता। न चेसा एतेसु ओकासेसु सदा विलीना व हुत्वा तिट्ठति। यदा पन अग्गिसन्ताप-सुरियसन्ताप-उतुविसभाग-धातुविसभागेहि ते पदेसा उस्माजाता होन्ति, तदा तत्थ न्हानकाले पसन्नउदकूपरिसिनेहबिन्दुविसटो विय इतो चितो च सञ्चरति। **परिच्छेदतो** वसाभागेन परिच्छिन्ना। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभाग-परिच्छेदो पन केससदिसो येव। (२८)

४७ **खेळो** ति। अन्तोमुखे फेणमिस्सो आपोधातु। सो **वण्णतो** सेतो फेणवण्णो। **सण्ठानतो** ओकाससण्ठानो, फेणसण्ठानो ति पि वत्तु वट्टति। **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जातो। **ओकासतो** उभोहि कपोलपस्सेहि ओरुय्ह जिव्हाय ठितो। न चेस एत्थ सदा सन्निचितो हुत्वा तिट्ठति। यदा पन सत्ता तथारूप आहारं पस्सन्ति वा सरन्ति वा, उण्हतित्तकटुकलोणम्बिलान वा किञ्चि मुखे ठपेन्ति, यदा वा नेस हदय आगिलायति, किस्मिञ्चिदेव वा जिगुच्छा उप्पज्जति, तदा खेळो उप्पज्जित्वा उभोहि कपोलपस्सेहि ओरुय्ह जिव्हाय सण्ठाति। अग्गजिव्हाय चेस तनुको होति, मूलजिव्हाय बहलो। मुखे पक्खित्त च पुथुक वा तण्डुल वा अञ्ञ वा किञ्चि खादनीय नदीपुलिने खतकूपकसलिलं विय परिक्खय अगच्छन्तो व तेमेतु समत्था होति। **परिच्छेदतो** खेळभागेन परिच्छिन्नो। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (२९)

४८. **सिङ्घाणिका** ति। मत्थलुङ्गतो पग्घरणकअसुचि। सा **वण्णतो** तरुण-तालट्ठिमिञ्जावण्णा। **सण्ठानतो** ओकाससण्ठाना। **दिसतो** उपरिमाय दिसाय जाता। **ओकासतो** नासापुटे पूरेत्वा ठिता। न चेसा एत्थ सदा सन्निचिता हुत्वा तिट्ठति। अथ खो यथा नाम पुरिसो पदुमिनिपत्ते दधिं बन्धित्वा हेट्ठा कण्टकेन विज्झय्य, अथानेन छिद्देन दधिमुत्तं[1] गळित्वा बहि पतेय्य; एवमेव यदा सत्ता रोदन्ति, विसभागाहारउतुवसेन वा सञ्जातधातुखोभा होन्ति, तदा

---

१ दधिमुत्तं ति। दधिनो विस्सन्दनअच्छरसो।

अन्तो सीसतो पूतिसेम्हभाव आपन्न मत्थलुङ्गं गळित्वा तालुमत्थकविवरेन ओतरित्वा नासापुटे पूरेत्वा तिट्ठति वा पग्घरति वा। सिङ्घाणिकापरिग्गण्हकेन च योगिना नासापुटे पूरेत्वा ठितवसेनेव परिग्गण्हितब्बा। **परिच्छेदतो** सिङ्घाणिकाभागेन परिच्छिन्ना, अयमस्सा सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (३०)

४९. **लसिका** ति। सरीरसन्धीनं अब्भन्तरे पिच्छिलकुणपं। सा **वण्णतो** कणिकारनिय्यासवण्णा। **सण्ठानतो** ओकाससण्ठाना। **दिसतो** द्वीसु दिसासु जाता। **ओकासतो** अट्ठिसन्धीन अब्भञ्जनकिच्च साधयमाना असीतिसतसन्धीनं अब्भन्तरे ठिता। यस्स चेसा मन्दा होति, तस्स उट्ठहन्तस्स निसीदन्तस्स अभिक्कमन्तस्स पटिक्कमन्तस्स समिञ्जन्तस्स पसारेन्तस्स अट्ठिकानि कटकटायन्ति, अच्छरासद्द करोन्तो विय सञ्चरति। एकयोजनद्वियोजनमत्त अद्धान गतस्स वायोधातु कुप्पति, गत्तानि दुक्खन्ति। यस्स पन बहुका होति, तस्स उट्ठाननिसज्जादीसु न अट्ठानि कटकटायन्ति, दीघ पि अद्धान गतस्स न वायोधातु कुप्पति, न गत्तानि दुक्खन्ति। **परिच्छेदतो** लसिकाभागेन परिच्छिन्ना। अयमस्सा सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (३१)

५० **मुत्तं** ति। मुत्तरस। त **वण्णतो** मासखारोदकवण्णं। **सण्ठानतो** अधोमुखट्ठपित उदककुम्भअब्भन्तरगत उदकसण्ठान। **दिसतो** हेट्ठिमाय दिसाय जातं। **ओकासतो** वत्थिस्स अब्भन्तरे ठितं। वत्थि नाम वत्थिपुटो वुच्चति। यत्थ सेय्यथापि चन्दनिकाय[1] पक्खित्ते अमुखे रवणघटे[2] चन्दनिकारसो पविसति, न चस्स पविसनमग्गो पञ्ञायति, एवमेव सरीरतो मुत्त पविसति, न चस्स पविसनमग्गो पञ्ञायति, निक्खमनमग्गो पन पाकटो होति। यम्हि च मुत्तस्स भरिते 'पस्साव करोमा' ति सत्तानं आयूहनं होति। **परिच्छेदतो** वत्थिअब्भन्तरेन चेव मुत्तभागेन च परिच्छिन्न। अयमस्स सभागपरिच्छेदो। विसभागपरिच्छेदो पन केससदिसो येव। (३२)

५१. एव हि केसादिके कोट्ठासे वण्णसण्ठानदिसोकासपरिच्छेदवसेन ववत्थपेत्वा 'अनुपुब्बतो नातिसीघतो' ति आदिना नयेन वण्णसण्ठानगन्धासयोकासवसेन पञ्चधा पटिक्कूला पटिक्कूला ति मनसिकरोतो पण्णत्तिसमतिक्कमावसाने, सेय्यथापि चक्खुमतो पुरिसस्स द्वत्तिसवण्णानं कुसुमान एकसुत्तकगन्थित माल ओलोकेन्तस्स सब्बपुप्फानि अपुब्बापरियमिव पाकटानि होन्ति; एवमेव 'अत्थि इमस्मि काये केसा' ति इमं कायं ओलोकेन्तस्स सब्बे ते धम्मा अपुब्बापरिया व

---

१. उच्छिट्ठोदकगब्भमलादीनं छड्डनट्ठान **चन्दनिका**।

२. **रवणघटं** नाम पकतिया समुखमेव होति। यस्स पन आरग्गमत्त पि उदकस्स पविसनमुखं नत्थि, तं दस्सेतु—"अमुखे रवणघटे" ति वुत्त।

पाकटा होन्ति। तेनं वुत्तं मनसिकारकोसल्लकथाय—"आदिकम्मिकस्स हि 'केसा' ति मनसिकरोतो मनसिकारो गन्त्वा 'मुत्तं' ति इम परियोसानकोट्ठासमेव आहच्च तिट्ठती" ति।

५२. सचे पन बहिद्धा पि मनसिकार उपसंहरति, अथस्स एव सब्बकोट्ठामेसु पाकटीभूनेसु आहिण्डन्ता मनुस्सतिरच्छानादयो सत्ताकार विजहित्वा कोट्ठास-रासिवसेनेव उपट्ठहन्ति, तेहि च अज्झोहरियमान पानभोजनादि कोट्ठासरासिम्हि पक्खिपमानमिव उपट्ठाति।

५३ अथस्स अनुपुब्बमुञ्चनादिवसेन 'पटिक्कूला पटिक्कूला' ति पुनप्पुनं मनसिकरोतो अनुक्कमेन अप्पना उप्पज्जति। तत्थ केसादीनं वण्णसण्ठानदिसो-कासपरिच्छेदवसेन उपट्ठानं उग्गहनिमित्तं, सब्बाकारतो पटिक्कूलवसेन उपट्ठानं पटिभागनिमित्तं। त आसेवतो भावयतो वुत्तनयेन असुभकम्मट्ठानेसु विय पठमज्झानवसेनेव अप्पना उप्पज्जति। सा यस्स एको व कोट्ठासो पाकटो होति, एकस्मि वा कोट्ठासे अप्पनं पत्वा पुन अञ्ञस्मि योग न करोति, तस्स एका व उप्पज्जति।

५४ यस्स पन अनेके कोट्ठासा पाकटा होन्ति, एकस्मि वा झानं पत्वा पन अञ्ञस्मि पि योग करोति, तस्स **मल्लकत्थेरस्स** विय, कोट्ठासगमनाय पठमज्झानानि निब्बत्तन्ति। सो किरायस्मा दीघभाणक**अभयत्थेरं** हत्थे गहेत्वा "आवुसो अभय, इमं ताव पञ्ह उग्गण्हाही" ति वत्वा आह—"मल्लकत्थेरो द्वत्तिंसकोट्ठासेसु द्वत्तिंसाय पठमज्झानानं लाभी, सचे रत्ति एकं दिवा एक समापज्जति, अतिरेकद्धमासेन पुन सम्पज्जति। सचे पन देवसिक एक समापज्जति, अतिरेकमासेन पुन सम्पज्जति" ति।

एव पठमज्झानवसेन इज्झमानं पि चेत कम्मट्ठान वण्णसण्ठानादीसु सति-बलेन इज्झनतो **कायगतासती** ति वुच्चति।

५५ इम च कायगतासतिं अनुयुत्तो भिक्खु अरतिरतिसहो होति, न च नं अरति सहति, उप्पन्नं अरतिं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरति, भयभेरवसहो होति, न च नं भयभेरवं सहति, उप्पन्नं भयभेरवं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरति, खमो होति सीतस्स उण्हस्स· ·पे०· पाणहरान अधिवासकजातिको होति, केसादीन वण्णभेद निस्साय चतुन्नं झानानं लाभी होति, छ अभिञ्ञा पटिविज्झति।

तस्मा हवे अप्पमत्तो अनुयुञ्जेथ पण्डितो।
एवं अनेकानिसंसं इम कायगतासतिं ति॥

इदं कायगतासतियं वित्थारकथामुखं॥

आनापानस्सतिकथा

५६. इदानि यं तं भगवता "अयं पि खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि भावितो बहुलीकतो सन्तो चेव पणीतो च असेचनको च सुखो च विहारो, उप्पन्नुप्पन्ने च पापके अकुसले धम्मे ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेती" ति एवं पसंसित्वा "कथं भावितो च, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि, कथ बहुलीकतो सन्तो चेव पणीतो च असेचनको च सुखो च विहारो, उप्पन्नुप्पन्ने च पापके अकुसले धम्मे ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेति ? इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्क आभुजित्वा उजु काय पणिधाय परिमुख सति उपट्ठपेत्वा । सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति, दीघ वा अस्ससन्तो 'दीघ अस्ससामी' ति पजानाति, दीघ वा पस्ससन्तो 'पे०··· रस्स वा अस्ससन्तो पे०' 'रस्स वा पस्ससन्तो 'रस्सं पस्ससामी' ति पजानाति। सब्बकायपटिसवेदी अस्ससिस्सामी ति सिक्खति, सब्बकायपटिसवेदी पस्ससिस्सामी ति सिक्खति। पस्सम्भय कायसङ्खार अस्ससिस्सामी ति सिक्खति, पस्सम्भय कायसङ्खार पस्ससिस्सामी ति सिक्खति। पीतिपटिसंवेदी सुखपटिसवेदी चित्तसङ्खारपटिसवेदी 'पस्सम्भय चित्तसङ्खार चित्तपटिसवेदी ' अभिप्पमोदयं चित्त' 'समादह चित्त' विमोचय चित्त 'अनिच्चानुपस्सी' विरागानुपस्सी' निरोधानुपस्सी' 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी ति सिक्खति, पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी ति सिक्खती" (स० ४-२७३) ति एव सोळसवत्थुकं[1] आनापानस्सतिकम्मट्ठान निद्दिट्ठ । तस्स भावनानिद्देसो[2] अनुप्पत्तो।

सो पन यस्मा पाळिवण्णनानुसारेनेव वुच्चमानो सब्बाकारपरिपूरो होति, तस्मा अयमेत्थ पाळिवण्णनापुब्बङ्गमा निद्देसो—

५७. **कथं भावितो च भिक्खवे आनापानस्सतिसमाधी** ति । एत्थ ताव **कथं** ति आनापानस्सतिसमाधिभावन नानप्पकारतो वित्थारेतुकम्यता पुच्छा । भावितो च, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधी ति नानप्पकारतो वित्थारेतुकाम्यताय पुट्ठधम्मनिदस्सन । कथं बहुलीकता ' पे० ''वूपसमेती ति एत्था पि एसेव नयो ।

तत्थ **भावितो** ति उप्पादितो, वड्ढितो वा । **आनापानस्सतिसमाधी** ति । आनापानपरिग्गाहिकाय सतिया सद्धिं सम्पयुत्तो समाधि, आनापानसतिय वा समाधि आनापानस्सतिसमाधि । **बहुलीकतो** ति । पुनप्पुनं कतो ।

सन्तो चेव पणीतो चा ति । सन्तो चेव पणीतो चेव । उभयत्थ एवसद्देन नियमो वेदितब्बो ।

---

१. सोळसवत्थुकं ति । चतूसु अनुपस्सनासु चतुन्नं चतुक्कानं वसेन सोळसट्ठानं ।

२. निद्देसो ति । कम्मट्ठानस्स निस्सेसतो वित्थारो ।

किं वुत्तं होति ? अय हि यथा असुभकम्मट्ठानं केवल पटिवेधयसेन सन्तं च पणीत च, ओळारिकारम्मणत्ता पन पटिक्कूलारम्मणत्ता च आरम्मणवसेन नेव सन्त न पणीत न एव केनचि परियायेन असन्तो वा अप्पणीतो वा, अथ खो आरम्मणसन्तताय पि सन्ता वूपसन्तो निब्बुतो, पटिवेधसङ्खातअङ्गसन्तताय पि। आरम्मणपणीतताय पि पणीतो अतित्तिकरो, अङ्गपणोतताय पी ति। तेन वुत्तं—"सन्तो चेव पणीतो चा" ति।

असेचनको च सुखो च विहारो ति। एत्थ पन नास्स सेचन ति असेचनको, अनासित्तको अब्बाकिण्णा पाटियक्को[1] आवेणिको[2]। नत्थि एत्थ परिकम्मेन वा उपचारेन वा सन्तता, आदिसमन्नाहारतो पभुति अत्तनो सभावेनेव सन्तो च पणीतो चा ति अत्थो। केचि पन असचनको ति अनासित्तको ओजवन्तो सभावेनेव मधुरो ति वदन्ति। एवमय असेचनको च अप्पितप्पितक्खणे कायिकचेतसिकसुख-पटिलाभाय सवत्तनतो सुखो च विहारो ति वेदितब्बो।

उप्पन्नुपन्ने ति। अविक्खम्भिते अविक्खम्भिते। **पापके** ति लामके। **अकुसले धम्मे** ति। अकोसल्लसम्भूते धम्मे। **ठानसो अन्तरधापेती** ति। खणेनेव अन्तर-धापेति, विक्खम्भेति। **वूपसमेती** ति। सुट्ठु उपसमेति, निब्बेधभागियत्ता वा अनुपुब्बेन अरियमग्गबुद्धिप्पत्तो समुच्छिन्दति। पटिप्पस्सम्भेती ति वुत्त होति।

अय पनेत्थ सङ्खेपत्थो—भिक्खवे, केन पकारेन केनाकारेन केन विधिना भावितो अनापानस्सतिसमाधि, केन पकारेन बहुलीकतो सन्तो चेव····पे०···· वूपसमेती ति।

५८ इदानि तमत्थ[3] वित्थारेन्तो "इध भिक्खवे" ति आदिमाह। तत्थ **इध भिक्खवे भिक्खू** ति। भिक्खवे इमस्मि सासने भिक्खु। अयं हि एत्थ इधसद्दो सब्बप्पकारआनापानस्सतिसमाधिनिब्बत्तकस्स पुग्गलस्स सन्निस्सयभूतसासन-परिदीपनो, अञ्ञसासनस्स तथाभावपटिसेधनो च। वुत्त हेतं—"इधेव, भिक्खवे, समणो ·पे०····सुञ्ञा परप्पवादा समणेहि अञ्ञे" (म० १–९०) ति। तेन वुत्त—"इमस्मि सासने भिक्खू" ति।

अरञ्ञगतो वा पे० सुञ्ञागारगतो वा ति। इदमस्स आनापानस्सति-समाधिभावनानुरूपसेनासनपरिग्गहपरिदीपन। इमस्स हि भिक्खुनो दीघरत्तं रूपादीसु आरम्मणेसु अनुविसटं चित्तं अनापानस्सतिसमाधिआरम्मण अभिरूहितु न इच्छति, कूटगोणयुत्तरथो[4] विय उप्पथमेव धावति। तस्मा सेय्यथापि नाम

१. पाटियेक्को ति। विसुं येवेको। २. आवेणिको ति। असाधारणो।

३. **तमत्थं** ति। "तं कथ भावितो" ति आदिना पुच्छावसेन सङ्खेपतो वुत्तमत्थं।

४. दुद्दमो दमथं अनुपगतो गोणो **कूटगोणो**।

गोपो कूटधेनुया सब्बं खीर पिवित्वा वड्ढितं कूटवच्छं दमेतुकामो धेनुतो अपनेत्वा एकमन्ते महन्तं थम्मं निखणित्वा तत्थ योत्तेन बन्धेय्य, अथस्स सो वच्छो इतो च विप्फन्दित्वा पलायितु असक्कोन्तो तमेव थम्भ उपनिसीदेय्य वा उपनिपज्जेय्य वा; एवमेव इमिना पि भिक्खुना दीघरत्त रूपारम्मणादिरसपानवड्ढित दुट्ठचित्त दमेतुकामेन रूपादिआरम्मणतो अपनेत्वा अरञ्ञं 'पे० 'सुञ्ञागार वा पविसित्वा तत्थ अस्सासपस्सासथम्भे सतियोत्तेन बन्धितब्बं। एवमस्स त चित्त इतो चितो च विप्फन्दित्वा पि पुब्बे आचिण्णारम्मण अलभमान सतियोत्त छिन्दित्वा पलायितु असक्कोन्तं, तमेवारम्मण उपचारप्पनावसेन उपनिसीदति चेव उपनिपज्जति च।

तेनाहु पोराणा—

"यथा थम्मे निबन्धेय्य वच्छ दम्म नरो इध।
बन्धेय्येव सकं चित्त सतियारम्मणे दळ्ह" ति॥ (वि० ट्ठ० २–१२)

एवमस्सेत सेनासन भावनानुरूप होति। तेन वुत्त—"इदमस्स आनापानस्सतिसमाधिभावनानुरूपसेनासनपरिग्गहपरिदीपनं" ति।

अथ वा—यस्मा इदं कम्मट्ठानप्पभेदे मुद्धभूत सब्बञ्ञुबुद्धपच्चेकबुद्धबुद्धसावकान विसेसाधिगमदिट्ठधम्मसुखविहारपदट्ठान आनापानस्सतिकम्मट्ठान इत्थिपुरिसहत्थिअस्सादिसद्दसमाकुल गामन्तं अपरिच्चजित्वा न सुकर भावेतु, सद्दकण्टकत्ता झानस्स, अगामके पन अरञ्ञे सुकर योगावचरेन इद कम्मट्ठानं परिग्गहेत्वा आनापानचतुत्थज्झान निब्बत्तेत्वा तदेव पादकं कत्वा सङ्खारे सम्मसित्वा अग्गफल अरहत्त सम्पापुणितु, तस्मास्स अनुरूपसेनासन दस्सन्तो भगवा "अरञ्ञगतो वा" आदिमाह।

वत्थुविज्जाचरियो विय हि भगवा। सो यथा वत्थुविज्जाचरियो नगरभूमि पस्सित्वा सुट्ठु उपपरिक्खित्वा "एत्थ नगर मापेथा" ति उपदिसति, सोत्थिना च नगरे निट्ठिते राजकुलतो महासक्कारं लभति, एवमेव योगावचरस्स अनुरूपसेनासनं उपपरिक्खित्वा "एत्थ कम्मट्ठान अनुयुञ्जितब्ब" ति उपदिसति। ततो तत्थ कम्मट्ठानं अनुयुत्तेन योगिना कमन अरहत्ते पत्ते "सम्मासम्बुद्धो वत सो भगवा" ति महन्तं सक्कारं लभति।

अयं पन भिक्खु दीपिसदिसो ति वुच्चति। यथा हि महादीपिराजा अरञ्ञे तिणगहनं वा वनगहनं वा पब्बतगहनं वा निस्साय निलीयित्वा वनमहिंसगोकण्णसूकरादयो मिगे गण्हाति; एवमेव अयं अरञ्ञादीसु कम्मट्ठानं अनुयुञ्जन्तो भिक्खु यथाक्कमेन सोतापत्ति-सकदागामि-अनागामि-अरहत्तमग्गे चेव अरियफलं च गण्हाती ति वेदितब्बो।

तेनाहु पोराणा--

"यथा पि दीपिको नाम निलीयित्वा गण्हति मिगे।
तथेवाय बुद्धपुत्तो युत्तयोगो विपस्सको।
अरञ्ञ पविसित्वान गण्हाति फलमुत्तम" ति॥(मि० प० ३६३)

तेनस्स परक्कमजवयोग्गभूमिं अरञ्ञसेनासन दस्सेन्तो भगवा "अरञ्ञगतो वा" आदिमाह।

५९ तत्थ **अरञ्ञगतो** ति। "अरञ्ञ ति निक्खमित्वा बहि इन्दखीला सब्बमेत्त अरञ्ञं" (अभि० २-३०२) ति च "आरञ्ञक नाम सेनासनं पञ्चधनुसतिक पच्छिम" (वि० १-३७१) ति एवं वुत्तलक्खणेसु अरञ्ञेसु यं किञ्चि पविवेकसुखं अरञ्ञं गतो। **रुक्खमूलगतो** ति। रुक्खसमीपं गतो। **सुञ्ञागारगतो** ति। सुञ्ञ विवित्तोकास गतो। एत्थ च ठपेत्वा अरञ्ञ च रुक्खमूल च अवसेससत्तविधसेनासनगतो पि सुञ्ञागारगतो ति वत्तु वट्टति।

एवमस्स उतुत्तयानुकूल[1] धातुचरियानुकूलं च आनापानस्सतिभावनानुरूपं सेनासनं उपदिसित्वा अलीनानुद्धच्चपक्खिक सन्त इरियापथ उपदिसन्तो **निसीदती** ति आह। अथस्स निसज्जाय दळ्हभाव अस्सासपस्सासान पवत्तनसुखत आरम्मणपरिग्गहूपायं च दस्सेन्तो--**पल्लङ्कं आभुजित्वा** ति आदिमाह। तत्थ **पल्लङ्कं** ति। समन्ततो ऊरुबद्धासन। **आभुजित्वा** ति। बन्धित्वा। **उजुं कायं पणिधाया** ति। उपरिमसरीरं उजुक ठपेत्वा। अट्ठारस पिट्ठिकण्टके कोटिया कोटिं पटिपादेत्वा। एवं हि निसीदन्तस्स चम्ममसन्हारूनि न पणमन्ति। अथस्स या तेसं पणमनपच्चया खणे खणे वेदना उप्पज्जेयुं, ता न उप्पज्जन्ति। तासु अनुप्पज्जमानासु चित्त एकग्ग होति, कम्मट्ठान न परिपतति, वुद्धिं फातिं उपगच्छति। **परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा** ति। कम्मट्ठानाभिमुख सतिं ठपयित्वा। अथ वा परी ति परिग्गहट्ठो, मुख ति निय्यानट्ठो, सती ति उपट्ठानट्ठो। तेन वुच्चति "परिमुख सतिं" ति एव **पटिसम्भिदायं** (खु० ५-२०४) वुत्तनयेन पेत्थ अत्थो दट्ठब्बो। तत्राय सङ्खेपो--परिग्गहितनिय्यानसतिं कत्वा ति।

६०. सो **सतो व अस्ससति, सतो पस्ससती** ति। सो भिक्खु एव निसीदित्वा एव च सतिं उपट्ठपेत्वा त सतिं अविजहन्तो, सतो एव अस्ससति, सतो सतो पस्ससति। सतोकारी होती ति वुत्त होति। इदानि येहाकारेहि सतोकारी होति, ते दस्सेतु **दीघं वा अस्ससन्तो** ति आदिमाह। वुत्तं हेत **पटिसम्भिदाय**--"सो सतो व अस्ससति, सतो पस्ससती" ति। एतस्सेव **विभङ्गे**--

---

१ गिम्हकाले च अरञ्ञं अनुकूल, हेमन्ते रुक्खमूलं, वस्सकाले सुञ्ञागारं। सेम्हधातुकस्स सेम्हपकतिकस्स अरञ्ञं, पित्तधातुकस्स रुक्खमूल, वातधातुकस्स सुञ्ञागारं अनुकूल। मोहचरितस्स अरञ्ञं, दोसचरितस्स रुक्खमूलं, रागचरितस्स सुञ्ञागारं अनुकूलं।

"बत्तिसाय आकारेहि सतोकारी होति। दीघ अस्सासवसेन चित्तस्स एकग्गत अविक्खेप पजानतो सति उपट्ठिता होति। ताय सतिया तेन ञाणेन सतोकारी होति दीघं पस्सासवसेन 'पे० "पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्सासवसेन"[1]। पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्सासवसेन[1] चित्तस्स एकग्गतं अविक्खेपं पजानतो सति उपट्ठिता होति, ताय सतिया तेन ञाणेन सतोकारी होती" (खु० ५–२०४) ति।

तत्थ **दीघं वा अस्ससन्तो** ति। दीघं वा अस्सास पवत्तयन्तो। "अस्सासो ति बहि निक्खमनवातो, पस्सासो ति अन्तो पविसनवातो" ति **विनयट्ठकथायं** वुत्त। **सुत्तन्तट्ठकथासु** पन उप्पटिपाटिया आगत। तत्थ सब्बेसं पि गब्भसेय्यकान मातुकुच्छितो निक्खमनकाले पठमं अब्भन्तरवातो बहि निक्खमति, पच्छा बाहिरवातो सुखुमरज गहेत्वा अब्भन्तर पविसन्तो तालु आहच्च निब्बायति। एवं ताव अस्सासपस्सासा वेदितब्बा।

या पन तेस दीघरस्सता, सा अद्धानवसेन वेदितब्बा। यथा हि ओकास-द्धानं फरित्वा ठितं उदक वा वालिका वा "दीघं उदक दीघा वालिका, रस्सं उदक रस्सा वालिका" ति वुच्चति, एव चुण्णविचुण्णा पि अस्सासपस्सासा हत्थिसरीरे च अहिसरीरे च तेसं अत्तभावसङ्खात दीघं अद्धानं सणिक पूरेत्वा सणिकमेव निक्खमन्ति, तस्मा 'दीघा' ति वुच्चन्ति। सुनखससादीनं अत्तभाव-सङ्खात रस्सं अद्धान सीघं पूरेत्वा सीघमेव निक्खमन्ति, तस्मा 'रस्सा' ति वुच्चन्ति।

मनुस्सेसु पन केचि हत्थि-अहिआदयो विय कालद्धानवसेन दीघ अस्ससन्ति च पस्ससन्ति च। केचि सुनख-ससादयो विय रस्स। तस्मा तेस कालवसेन दीघमद्धान निक्खमन्ता च पविसन्ता च ते 'दीघा' इत्तरमद्धान निक्खमन्ता च पविसन्ता च "रस्सा" ति वेदितब्बा।

तत्राय भिक्खु नवहाकारेहि दीघ अस्ससन्तो पस्ससन्तो च 'दीघ अस्ससामि पस्ससामी' ति पजानाति। एव पजानतो चस्स एकेनाकारेन कायानु-पस्सनासतिपट्ठानभावना सम्पज्जती ति वेदितब्बा। यथाह **पटिसम्भदायं**—

'कथ दीघ अस्ससन्तो 'दीघ अस्ससामी' ति पजानाति? दीघ पस्ससन्तो 'दीघ पस्ससामी' ति पजानाति? दीघ अस्सासं अद्धानसङ्खाते अस्ससति, दीघ पस्सास अद्धानसङ्खाते पस्ससति। दीघं अस्सासपस्सास अद्धानसङ्खाते अस्ससति पि पस्ससति पि। दीघ अस्सासपस्सासं अद्धानसङ्खाते अस्ससतो पि पस्ससतो पि छन्दो उप्पज्जति। छन्दवसेन ततो सुखुमतरं दीघ अस्सास अद्धानसङ्खाते

---

१ विनयनयेन अन्तो उट्ठितससन **अस्सासो,** बहि उट्ठितससनं **पस्सासो**। सुत्तन्तनयेन पन बहि उट्ठहित्वा पि अन्तो ससनतो **अस्सासो**, अन्तो उट्ठहित्वा पि बहि ससनतो **पस्सासो**।

अस्ससति, छन्दवसेन ततो सुखुमतरं दीघं पस्सासं पे०… 'दीघं अस्सासपस्सासं अद्धानसङ्खाते अस्ससति पि पस्ससति पि। छन्दवसेन ततो सुखुमतरं दीघं अस्सासपस्सासं अद्धानसङ्खाते अस्ससतो पि पस्ससतो पि पामोज्जं उप्पज्जति। पामोज्जवसेन ततो सुखुमतरं दीघं अस्सासं अद्धानसङ्खाते अस्ससति। पामोज्जवसेन ततो सुखुमतरं दीघं पस्सासं पे० दीघं अस्सासपस्सासं अद्धानसङ्खाते अस्ससति पि पस्ससति। पामोज्जवसेन ततो सुखुमतरं दीघं अस्सासपस्सासं अद्धानसङ्खाते अस्ससतो पि पस्ससतो पि दीघं अस्सासपस्सासा चित्तं विवट्टति, उपेक्खा सण्ठाति। इमेहि नवहि आकारेहि दीघं अस्सासपस्सासा कायो। उपट्ठानं सति। अनुपस्सना ञाणं। कायो उपट्ठानं, नो सति। सति उपट्ठानं चेव सति च। ताय सतिया तेन ञाणेन तं कायं अनुपस्सति। तेन वुच्चति—काये कायानुपस्सना सतिपट्ठानभावना" (खु० ५-२०५) ति।

एस नयो रस्सपदे पि। अयं पन विसेसो—यथा एत्थ "दीघं अस्सासं अद्धानसङ्खाते" ति वुत्तं, एवमिध "रस्सं अस्सासं इत्तरसङ्खाते अस्ससतो" ति आगतं। तस्मा रस्सवसेन याव "तेन वुच्चति काये कायानुपस्सना सतिपट्ठानभावना" ति ताव योजेतब्बं।

एवमयं[1] अद्धानवसेन[2] इत्तरवसेन[3] च इमेहि आकारेहि[4] अस्सासपस्सासे पजानन्तो दीघं वा अस्ससन्तो दीघं अस्ससामी ति पजानाती… पे०… 'रस्सं वा पस्ससन्तो रस्सं पस्ससामी ति पजानाती ति वेदितब्बो। एवं पजानतो चस्स—

दीघो रस्सो च अस्सासो पस्सासो पि च तादिसो।
चत्तारो वण्णा[5] वत्तन्ति नासिकग्गे व[6] भिक्खुनो ति॥

(वि० ट्ठ० २-१६)

६१ **सब्बकायपटिसंवेदी अस्ससिस्सामि… पे०… पस्ससिस्सामीति सिक्खति।** सकलस्स अस्सासकायस्स आदिमज्झपरियोसानं विदितं करोन्तो पाकटं करोन्तो अस्ससिस्सामी ति सिक्खति। सकलस्स पस्सासकायस्स आदिमज्झपरियोसानं विदितं करोन्तो पाकटं करोन्तो पस्ससिस्सामी ति सिक्खति। एवं विदितं

---

१. **अयं** ति योगावचरो।
२. **अद्धानवसेना** ति। दीघकालवसेन।
३. **इत्तरवसेना** ति। परित्तकालवसेन।
४. **इमेहि आकारेही** ति। इमेहि नवहि आकारेहि।
५. **चत्तारो वण्णा** ति। चत्तारो आकारा। ते च दीघादयो एव।
६. **नासिकग्ग व भिक्खुनो** ति। गाथाबन्धसुखत्थं रस्सं कत्वा वुत्तं "**नासिकग्गे व**" इति। वा-सद्दो अनियमत्थो तेन उत्तरोट्ठं सङ्गण्हाति।

करोन्तो पाकटं करोन्तो ञाणसम्पयुत्तचित्तेन अस्ससति चेव पस्ससति च। तस्मा "अस्ससिस्सामि पस्ससिस्सामी" ति सिक्खती ति वुच्चति।

एकस्स हि भिक्खुनो चुण्णविचुण्णविसटे[1] अस्सासकाये पस्सासकाये वा आदि पाकटो होति, न मज्झपरियोसानं। सो आदिमेव परिग्गहेतुं सक्कोति, मज्झपरियोसाने किलमति। एकस्स मज्झं पाकटं होति, न आदिपरियोसानं। एकस्स परियोसानं पाकटं होति, न आदिमज्झं। सो परियोसानं येव परिग्गहेतुं सक्कोति, आदिमज्झे किलमति। एकस्स सब्बं पि पाकटं होति, सो सब्बं पि परिग्गहेतुं सक्कोति, न कत्थचि किलमति। तादिसेन भवितब्बं ति दस्सेन्तो आह—"सब्बकायपटिसंवेदी अस्ससिस्सामी ति पे० पस्ससिस्सामी ति सिक्खति" ति।

तत्थ **सिक्खती** ति। एवं घटति वायमति। यो वा तथाभूतस्स संवरो, अयमेत्थ अधिसीलसिक्खा। यो तथाभूतस्स समाधि, अयं अधिचित्तसिक्खा। या तथाभूतस्स पञ्ञा, अयं अधिपञ्ञासिक्खा ति इमा तिस्सो सिक्खायो तस्मिं आरम्मणे, ताय सतिया, तेन मनसिकारेन सिक्खति, आसेवति, भावेति, बहुलीकरोती ति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो।

तत्थ यस्मा पुरिमनये[2] केवलं अस्ससितब्बं पस्ससितब्बमेव, न च अञ्ञं किञ्चि कातब्बं। इतो पट्ठाय पन ञाणुप्पादनादीसु योगो करणीयो। तस्मा तत्थ अस्ससामी ति पजानाति, पस्ससामी ति पजानातिच्चेव वत्तमानकालवसेन पाळिं वत्वा, इतो पट्ठाय कत्तब्बस्स ञाणुप्पादनादिनो आकारस्स दस्सनत्थं **सब्बकायपटिसंवेदी अस्ससिस्सामी** ति आदिना नयेन अनागतवचनवसेन पाळि आरोपिता ति वेदितब्बा।

६२ **पस्सम्भयं कायसङ्खारं अस्ससिस्सामी ति पे० पस्ससिस्सामी ति सिक्खती** ति। ओळारिकं कायसङ्खारं[3] पस्सम्भेन्तो पटिप्पस्सम्भेन्तो निरोधेन्तो वूपसमन्तो अस्ससिस्सामि पस्ससिस्सामी ति सिक्खति।

तत्र एवं ओळारिकसुखुमता च पस्सद्धि च वेदितब्बा। इमस्स हि भिक्खुनो पुब्बे अपरिग्गहितकाले कायो च चित्तं च सदरथा होन्ति ओळारिका। कायचित्तानं ओळारिकत्ते अवूपसन्ते अस्सासपस्सासा पि ओळारिका होन्ति, बलवतरा हुत्वा पवत्तन्ति, नासिका नप्पहोति, मुखेन अस्ससन्तो पि पस्ससन्तो पि तिट्ठति।

---

१. **चुण्णविचुण्णविसटे** ति। अनेककलापताय चुण्णविचुण्णभावेन वितते।
२. **पुरिमनये** ति। पुरिमस्मिं भावनानये, पठमवत्थुद्वये ति अधिप्पायो।
३. **कायसङ्खारं** ति। अस्सासपस्सासं।

यदा पनस्स कायो पि चित्त पि परिग्गहिता होन्ति, तदा ते सन्ता होन्ति वूपसन्ता। तेसु वूपसन्तेसु अस्सासपस्सासा सुखुमा हुत्वा पवत्तन्ति, "अत्थि नु खो नत्थी" ति विचेतब्बताकारप्पत्ता होन्ति।

सेय्यथापि पुरिसस्स धावित्वा पब्बता वा आरोहित्वा महाभारं वा सीसतो ओरोपेत्वा ठितस्स ओळारिका अस्सासपस्सासा होन्ति, नासिका नप्पहोति, मुखेन अस्ससन्तो पि पस्ससन्तो पि तिट्ठति, यदा पनेस त परिस्सम विनोदेत्वा न्हत्वा च पिवित्वा च अल्लसाटक हदये कत्वा सीताय छायाय निपन्नो होति, अथस्स ते अस्सासपस्सासा सुखुमा होन्ति "अत्थि नु खो नत्था" ति विचेतब्बताकारप्पत्ता; एवमेव इमस्स भिक्खुनो पुब्बे अपरिग्गहितकाले कायो च पे० विचेतब्बताकारप्पत्ता होन्ति।

तं किस्स हेतु? यथा हिस्स पुब्बे अपरिग्गहितकाले "ओळारिकोळारिके कायसङ्खारे पस्सम्भेमी" ति आभोगसमन्नाहारमनसिकारपच्चवेक्खणा नत्थि, परिग्गहितकाले पन अत्थि। तेनस्स अपरिग्गहितकालतो परिग्गहितकाले कायसङ्खारो सुखुमो होति। तेनाहु पोराणा—

"सारद्धे काये चित्ते च अधिमत्त पवत्तति।
असारद्धम्हि कायम्हि सुखुमं सम्पवत्तती" ति॥ (वि० टु० २-१७)

परिग्गहे पि ओळारिको, पठमज्झानूपचारे सुखुमो। तस्मि पि ओळारिको, पठमज्झाने सुखुमो। पठमज्झाने च दुतियज्झानूपचारे च ओळारिको, दुतियज्झाने सुखुमो। दुतियज्झाने च ततियज्झानूपचारे च ओळारिको, ततियज्झाने सुखुमो। ततियज्झाने च चतुत्थज्झानूपचारे च ओळारिको, ततियज्झाने अतिसुखुमो अप्पवत्तिमेव पापुणाती ति इदं ताव **दीघभाणकसंयुत्तभाणकानं** मतं।

६३. **मज्झिमभाणका** पन पठमज्झाने ओळारिको, दुतियज्झानूपचारे सुखुमो ति एव हेट्ठिमहेट्ठिमज्झानतो उपरूपरिज्झानूपचारे पि सुखुमतरं इच्छन्ति। सब्बेसं येव पन मतेन अपरिग्गहितकाले पवत्तकायसङ्खारो परिग्गहितकाले पटिप्पस्सम्भति। परिग्गहितकाले पवत्तकायसङ्खारो पठमज्झानूपचारे पे०.... चतुत्थज्झानूपचारे पवत्तकायसङ्खारो चतुत्थज्झाने पटिप्पस्सम्भति। अय ताव समथे नयो।

६४. विपस्सनायं पन अपरिग्गहे पवत्तो कायसङ्खारो ओळारिको, महाभूतपरिग्गहे सुखुमो। सो पि ओळारिको, उपादारूपपरिग्गहे सुखुमो। सो पि ओळारिको, सकलरूपपरिग्गहे सुखुमो। सो पि ओळारिको, अरूपपरिग्गहे सुखुमो। सो पि ओळारिको, रूपारूपपरिग्गहे सुखुमो। सो पि ओळारिको, पच्चयपरिग्गहे सुखुमो। सो पि ओळारिको, सपच्चयनामरूपपरिग्गहे सुखुमो।

सो पि ओळारिको, लक्खणारम्मणिकविपस्सनाय सुखुमो। सो पि दुब्बलविपस्सनाय ओळारिको, बलवविपस्सनाय सुखुमो। तत्थ पुब्बे वुत्तनयेनेव[1] पुरिमस्स पुरिमस्स पच्छिमेन पटिप्पस्सद्धि वेदितब्बा। एवमेत्थ ओलारिकसुखुमता च पस्सद्धि च वेदितब्बा।

६५ **पटिसम्भिदाय** पनस्स सद्धिं चोदनासोधनाहि एवमत्थो वुत्तो—

"कथं पस्सम्भय कायसङ्खार अस्ससिस्सामि पे० पस्ससिस्सामी ति सिक्खति? कतमे कायसङ्खारा? दीघ अस्सासपस्सासा कायिका एते धम्मा कायपटिबद्धा कायसङ्खारा। ते कायसङ्खारे पस्सम्भेन्तो निरोधेन्तो वूपसमेन्तो सिक्खति पे० यथारूपेहि कायसङ्खारेहि कायस्स आनमना[2], विनमना[3], सन्नमना[4], पणमना[5], इञ्जना[6], फन्दना, चलना, कम्पना—पस्सम्भय कायसङ्खार अस्ससिस्सामी ति सिक्खति, पस्सम्भयं कायसङ्खार पस्ससिस्सामी ति सिक्खति। यथारूपेहि कायसङ्खारेहि कायस्स न आनमना, न विनमना, न सन्नमना, न पणमना, अनिञ्जना, अफन्दना, अचलना, अकम्पना—सन्त सुखुमं पस्सम्भय कायसङ्खार अस्ससिस्सामि पस्ससिस्सामी ति सिक्खति।

"इति किर 'पस्सम्भय कायसङ्खार अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पस्सम्भयं कायसङ्खार पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। एव सन्ते वातूपलद्धिया च पभावना न होति, अस्सासपस्सानं च पभावना न होति, आनापानस्सतिया च पभावना न होति, आनापानस्सतिसमाधिस्स च पभावना न होति, न च न त समापत्ति पण्डिता समापज्जन्ति पि वुट्ठहन्ति पि।

"इति किर 'पस्सम्भय कायसङ्खार अस्ससिस्सामि पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। एव सन्ते वातूपलद्धिया च पभावना होति, अस्सासपस्सासान च पभावना होति, आनापानस्सतिया च पभावना होति, आनापानस्सतिसमाधिस्स च पभावना होति, त च न समापत्ति पण्डिता समापज्जन्ति पि, वुट्ठहन्ति पि। यथा कथं विय?

"सेय्यथापि कंसे आकोटिते पठम ओळारिका सद्दा पवत्तन्ति, ओळारिकानं सद्दानं निमित्तं सुगहितत्ता सुमनसिकतत्ता सूपधारितत्ता सूपधारितत्ता निरुद्धे

---

१ **पुब्बे वुत्तनयेना** ति। 'अपरिग्गहितकाले' ति आदिना समथनये वुत्तेन नयेन।

२. **आनमना** ति। अभिमुखभावेन कायस्स नमना।

३ **विनमना** ति। विसुं विसु पस्सतो नमना।

४. **सन्नमना** ति। सब्बतो, सुट्ठु वा नमना।

५. **पणमना** ति। पच्छतो नमना।

६. **इञ्जनादीनि** आनमनादीनं वेवचनानि, अधिमत्तानि वा अभिमुखं चलनादीनि आनमनादयो, मन्दानि इञ्जनादयो।

पि ओळारिके सद्दे अथ पच्छा सुखुमका सद्दा पवत्तन्ति, सुखुमकानं सद्दानं निमित्तं सुग्गहितत्ता सुमनसिकतत्ता सूपधारितत्ता निरुद्धे पि सुखुमके सद्दे अथ पच्छा सुखुमसद्दनिमित्तारम्मणता पि चित्तं पवत्तति, एवमेव पठमं ओळारिका अस्सासपस्सासा पवत्तन्ति, ओळारिकानं अस्सासपस्सासानं निमित्तं सुग्गहितत्ता सुमनसिकतत्ता सूपधारितत्ता निरुद्धे पि ओळारिके अस्सासपस्सासे अथ पच्छा सुखुमका अस्सासपस्सासा पवत्तन्ति, सुखुमकानं अस्सासपस्सासानं निमित्तं सुग्गहितत्ता सुमनसिकतत्ता सूपधारितत्ता निरुद्धे पि सुखुमके अस्सासपस्सासे अथ पच्छा सुखुमअस्सासपस्सासनिमित्तारम्मणता पि चित्तं न विक्खेपं गच्छति। एवं सन्ते वातूपलद्धिया च पभावना होति, अस्सासपस्सासानं च पभावना होति, आनापानस्सतिया च पभावना होति, आनापानस्सतिसमाधिस्स च पभावना होति, तं च नं समापत्तिं पण्डिता समापज्जन्ति पि, वुट्ठहन्ति पि।

"पस्सम्भयं कायसङ्खारं अस्सासपस्सासा कायो, उपट्ठानं सति, अनुपस्सना ञाणं, कायो उपट्ठानं, नो सति। सति उपट्ठानं चेव सति च, ताय सतिया तेन ञाणेन तं कायं अनुपस्सति। तेन वुच्चति—काये कायानुपस्सना सतिपट्ठानभावना" (खु० ५-२१४) ति।

अयं तावेत्थ कायानुपस्सनावसेन वुत्तस्स पठमचतुक्कस्स अनुपुब्बपदवण्णना॥

६६ यस्मा पनेत्थ इदमेव चतुक्कं आदिकम्मिकस्स कम्मट्ठानवसेन वुत्तं। इतरानि पन तीणि चतुक्कानि एत्थ पत्तज्झानस्स वेदनाचित्तधम्मानुपस्सनावसेन वुत्तानि। तस्मा इदं कम्मट्ठानं भावेत्वा आनापानचतुत्थज्झानपदट्ठानाय विपस्सनाय सह पटिसम्भिदाहि अरहत्तं पापुणितुकामेन आदिकम्मिकेन कुलपुत्तेन पुब्बे वुत्तनयेनेव सीलपरिसोधनादीनि सब्बकिच्चानि कत्वा वुत्तप्पकारस्स आचरियस्स सन्तिके पञ्चसन्धिकं[1] कम्मट्ठानं उग्गहेतब्बं।

तत्रिमे पञ्च सन्धयो—उग्गहो, परिपुच्छा, उपट्ठानं, अप्पना, लक्खणं ति। तत्थ **उग्गहो** नाम कम्मट्ठानस्स उग्गण्हनं। **परिपुच्छा** नाम कम्मट्ठानस्स परिपुच्छना। **उपट्ठानं** नाम कम्मट्ठानस्स उपट्ठानं। **अप्पना** नाम कम्मट्ठानस्स अप्पना। **लक्खणं** नाम कम्मट्ठानस्स लक्खणं। "एवंलक्खणमिदं कम्मट्ठानं" ति कम्मट्ठानसभावूपधारणं ति वुत्तं होति।

६७. एवं पञ्चसन्धिकं कम्मट्ठानं उग्गण्हन्तो अत्तना पि न किलमति, आचरियं पि न विहेसेति। तस्मा थोकं उद्दिसापेत्वा बहुकालं सज्झायित्वा एवं पञ्चसन्धिकं कम्मट्ठानं उग्गहेत्वा आचरियस्स सन्तिके वा अञ्ञत्र वा पुब्बे वुत्तप्पकारे सेनासने वसन्तेन उपच्छिन्नखुद्दकपलिबोधेन कतभत्तकिच्चेन भत्त-

---

१. पञ्चसन्धिकं ति। पञ्चपब्बं, पञ्चभागं ति अत्थो।

सम्पदं पटिविनोदेत्वा सुखनिसिन्नेन रतनत्तयगुणानुस्सरणेन चित्तं सम्पहंसेत्वा आचरियुग्गहतो एकपदं पि असम्मुय्हन्तेन इदं आनापानस्सतिकम्मट्ठानं मनसिकातब्बं।

६८ तत्रायं मनसिकारविधि—

गणना अनुबन्धना फुसना ठपना सल्लक्खणा।
विवट्टना पारिसुद्धि तेसं च पटिपस्सना॥

तत्थ **गणना** ति। गणना येव। **अनुबन्धना** ति। अनुवहना[1]। **फुसना** ति। फुट्ठट्ठानं। **ठपना** ति। अप्पना। **सल्लक्खणा** ति। विपस्सना। **विवट्टना** ति। मग्गो। **पारिसुद्धि** ति। फलं। **तेसं च पटिपस्सना** ति। पच्चवेक्खणा।

(१) तत्थ इमिना आदिकम्मिकेन कुलपुत्तेन पठमं **गणनाय** इदं कम्मट्ठानं मनसि कातब्बं। गणन्तेन च पञ्चन्नं हेट्ठा न ठपेतब्बं। दसन्नं उपरि न नेतब्बं। अन्तरा खण्डं न दस्सेतब्बं। पञ्चन्नं हेट्ठा ठपेन्तस्स हि सम्बाधे ओकासे चित्तुप्पादो विफन्दति, सम्बाधे वजे सन्निरुद्धगोगणो विय। दसन्नं पि उपरि नेन्तस्स गणननिस्सितको चित्तुप्पादो होति। अन्तरा खण्डं दस्सेन्तस्स "सिखापत्तं नु खो मे कम्मट्ठानं, नो" ति चित्तं विकम्पति। तस्मा एते दोसे वज्जेत्वा गणेतब्बं।

गणेन्तेन च पठमं दन्धगणनाय धञ्ञमापकगणनाय गणेतब्बं। धञ्ञमापको हि नाळिं पूरेत्वा "एकं" ति वत्वा ओकिरति। पुन पूरेन्तो किञ्चि कचवरं दिस्वा तं छड्डेन्तो "एकं एकं" ति वदति। एस नयो द्वे द्वे ति आदीसु। एवमेव इमिना पि अस्सासपस्सासेसु यो उपट्ठाति, तं गहेत्वा "एकं एकं" ति आदिं कत्वा याव "दस दसा" ति पवत्तमानं पवत्तमानं उपलक्खेत्वा व गणेतब्बं। तस्सेवं गणयतो निक्खमन्ता च पविसन्ता च अस्सासपस्सासा पाकटा होन्ति।

अथानेन तं दन्धगणनं धञ्ञमापकगणनं पहाय सीघगणनाय गोपालकगणनाय गणेतब्बं। छेको हि गोपालको सक्खरायो उच्छङ्गेन गहेत्वा रज्जुदण्डहत्थो पातो व वजं गन्त्वा गावो पिट्ठियं पहरित्वा पलिघत्थम्भमत्थके निसिन्नो द्वारप्पत्तं द्वारप्पत्तं येव गाविं एका द्वे ति सक्खरं खिपित्वा खिपित्वा गणेति। तियामरत्तिं सम्बाधे ओकासे दुक्खवुत्थगोगणो निक्खमन्तो निक्खमन्तो अञ्ञमञ्ञं उपनिघसन्तो वेगेन वेगेन पुञ्जपुञ्जो हुत्वा निक्खमति। सो वेगेन, वेगेन "तीणि चत्तारि पञ्च दसा" ति गणेति येव।

एवं इमस्सा पि पुरिमनयेन गणयतो अस्सासपस्सासा पाकटा हुत्वा सीघं सीघं पुनप्पुनं सञ्चरन्ति। ततोनेन 'पुनप्पुनं सञ्चरन्ती' ति ञत्वा अन्तो च बहि

---

१ अनुवहना ति। अस्सासपस्सासानं अनुगमनवसेन सतिया निरन्तरं अनुपवत्तना।

च अगहेत्वा द्वारप्पत्त द्वारप्पत्तं येव गहेत्वा "एको द्वे तीणि चत्तारि पञ्च छ, एको द्वे तीणि चत्तारि पञ्च छ सत्त ···पे०··· अट्ठ · नव दसा" ति सीघ सीघं गणेतब्बमेव। गणनपटिबद्धे हि कम्मट्ठाने गणनबलेनेव चित्त एकग्ग होति, अरित्तुपत्थम्भनवसेन चण्डसाते नावाट्ठपनमिव।

तस्सेव सीघ सीघ गणयतो कम्मट्ठान निरन्तरं पवत्तं विय हुत्वा उपट्ठाति। अथ 'निरन्तरं पवत्तती' ति ञत्वा अन्तो च बहि च वात अपरिग्गहेत्वा पुरिमनयेनेव वेगेन वेगेन गणेतब्ब। अन्तो पविसनवातेन हि सद्धि चित्तं पवेसयतो अब्भन्तर वातब्भाहत मेदपूरितं विय होति। बहि निक्खमनवातेन सद्धि चित्त नीहरतो बहिद्धा पुथुत्तारम्मणे चित्त विक्खिपति। फुट्ठफुट्ठोकासे पन सतिं ठपेत्वा भावेन्तस्सेव भावना सम्पज्जति। तेन वुत्त—"अन्तो च बहि च वात अपरिग्गहेत्वा पुरिमनयेनेव वेगेन वेगेन गणेतब्बं" ति।

कीवचिर पनेतं गणेतब्बं ति? याव विना गणनाय अस्सासपस्सासारम्मणे सति सन्तिट्ठति। बहि विसटवितक्कविच्छेदं कत्वा अस्सासपस्सासारम्मणे सतिसण्ठापनत्थ येव हि गणना ति।

(२) एव गणनाय मनसिकत्वा **अनुबन्धनाय** मनसिकातब्बं। अनुबन्धना नाम गणन पटिसहरित्वा सतिया निरन्तर अस्सासपस्सासानं अनुगमन। त च खो न आदिमज्झपरियोसानानुगमनवसेन।

बहि निक्खमनवातस्स हि नाभि आदि, हदय मज्झ, नासिकाग्गं परियोसानं। अब्भन्तर पविसनवातस्स नासिकग्ग आदि, हदयं मज्झं, नाभि परियोसान। तं चस्स अनुगच्छतो विक्खेपगतं चित्तं सारद्धाय चेव होति इञ्जनाय च। यथाह—"अस्सासादिमज्झपरियासान सतिया अनुगच्छतो अज्झत्तं विक्खेपगतेन चित्तेन कायो पि चित्त पि सारद्धा च होन्ति इञ्जिता च फन्दिता च। पस्सासादिमज्झपरियोसान सतिया अनुगच्छतो बहिद्धा विक्खेपगतेन चित्तेन कायो पि चित्त पि सारद्धा च होन्ति इञ्जिता च फन्दिता चा" (खु० ५–१९३) ति। तस्मा अनुबन्धनाय मनसिकरोन्तेन आदिमज्झपरियोसानवसेन न मनसिकातब्बं। अपि च खो फुसनावसेन च ठपनावसेन च मनसिकातब्ब।

(३) गणनानुबन्धनावसेन विय हि **फुसनाठपनावसेन** विसुं मनसिकारो नत्थि। फुट्ठफुट्ठट्ठाने येव पन गणेन्तो गणनाय च फुसनाय च मनसिकरोति। तत्थेव गणन पटिसहरित्वा ते सतिया अनुबन्धन्तो, अप्पनावसेन च चित्तं ठपेन्तो, अनुबन्धनाय च फुसनाय च ठपनाय च मनसिकरोती ति वुच्चति। स्वायमत्थो **अट्ठकथासु** वुत्तपङ्गुळदोवारिकूपमाहि, **पटिसम्भिदायं** वुत्तककचूपमाय च वेदितब्बो।

तत्रायं **पङ्गुळोपमा**—सेय्यथापि पङ्गुळो[1] दोलाय कीळत मातापुत्तानं दोलं खिपित्वा तत्थेव दोलाथम्भमूले निसिन्नो कमेन आगच्छन्तस्स च गच्छन्तस्स च दोलाफलकस्स उभो कोटियो मज्झ च पस्सति, न च उभोकोटिमज्झान दस्सनत्थ ब्यावटो होति, एवमेवाय भिक्खु सतिवसेन उपनिबन्धनथम्भमूले ठत्वा अस्सासपस्सासदोल खिपित्वा तत्थेव निमित्ते सतिया निसीदन्तो कमेन आगच्छन्तान च गच्छन्तान च फुट्ठफुट्ठाने अस्सासपस्सासान आदिमज्झ-परियोसान सतिया अनुगच्छन्तो तत्थ च चित्त ठपेन्तो पस्सति, न च तेस दस्सनत्थ ब्यावटो होति। अय पङ्गुळोपमा।

अय पन **दोवारिकूपमा**—सेय्यथापि दोवारिको नगरस्स अन्तो च बहि च "को त्वं ? कुतो वा आगतो ? कुहिं वा गच्छसि ? किं वा ते हत्थे" ति न वीमसति। न हि तस्स ते भारा, द्वारप्पत्त द्वारप्पत्त येव पन वीमसति, एवमेव इमस्स भिक्खुनो अन्तोपविट्ठवाता च बहिनिक्खन्तवाता च न भारा होन्ति, द्वारप्पत्ता द्वारप्पत्ता येव भारा ति। अयं दोवारिकूपमा।

ककचूपमा पन आदितो पट्ठाय एव वेदितब्बा। वुत्तं हेत—

"निमित्त अस्सासपस्सासा अनारम्मणमेकचित्तस्स।
अजानतो च तयो धम्मे भावना नुपलब्भति॥
निमित्त अस्सासपस्सासा अनारम्मणमेकचित्तस्स।
जानता च तयो धम्मे भावना उपलब्भती" ति॥

(खु० ५-१९९)

"कथं इमे तयो धम्मा एकचित्तस्स आरम्मणा न होन्ति, न चिमे तयो धम्मा अविदिता होन्ति, न च विक्खेप गच्छति, पधानं च पञ्ञायति, पयोगं च साधेति, विसेसमधिगच्छति ? सेय्यथापि रुक्खो समे भूमिभागे निक्खित्तो, तमेनं पुरिसो ककचेन छिन्देय्य। रुक्खे फुट्ठककचदन्तान वसेन पुरिसस्स सति उपट्ठिता होति, न आगते वा गते वा ककचदन्ते मनसिकरोति, न आगता वा गता वा ककचदन्ता अविदिता होन्ति, पधान च पञ्ञायति, पयोग च साधेति, विसेसमधिगच्छति। यथा रुक्खो समे भूमिभागे निक्खित्तो, एव उपनिबन्धना-निमित्तं। यथा ककचदन्ता, एवं अस्सासपस्सासा। यथा रुक्खे फुट्ठककचदन्तान वसेन पुरिसस्स सति उपट्ठिता होति, न आगते वा गते वा ककचदन्ते मनसि करोति, न आगता वा गता वा ककचदन्ता अविदिता होन्ति, पधानं च पञ्ञायति, पयोगं च साधेति, विसेसमधिगच्छति, एवमेव भिक्खु नासिकग्गे वा मुख-निमित्ते वा सतिं उपट्ठपेत्वा निसिन्नो होति, न आगते वा गते वा अस्सासपस्सासे

---

१. पङ्गुळो ति। पीठसप्पी।

मनसि करोति, न आगता वा गता वा अस्सासपस्सासा अविदिता होन्ति, पधानं च पञ्ञायति, पयोगं च साधेति, विसेममधिगच्छति ।

पधान ति कतमं पधान ? आरद्धविरियस्स कायो पि चित्त पि कम्मनिय होति, इद पधान । कतमो पयोगो ? आरद्धविरियस्स उपक्किलेसा पहीयन्ति, वितक्का वूपसमन्ति, अय पयोगो । कतमो विसेसो ? आरद्धविरियस्स संयोजना पहीयन्ति, अनुसया ब्यन्तीहोन्ति, अय विसेसो । एव इमे तयो धम्मा एक-चितस्स आरम्मणा न होन्ति, न चिमे तयो धम्मा अविदिता होन्ति, न च चित्तं विक्खेप गच्छति, पधान च पञ्ञायति, पयोग च साधेति, विसेसमधिगच्छति ।

आनापानसति यस्स परिपुण्णा सुभाविता ।
अनुपुब्बं परिचिता यथा बुद्धेन देसिता ।
सो इम लोक पभासेति अब्भा मुत्तो व चन्दिमा" ति ॥ (खु० ५-२००)

अयं ककचूपमा । इध पनस्स आगतागतवसेन मनसिकारमत्तमेव पयोजनं ति वेदितब्बं ।

(४) इद कम्मट्ठान मनसिकरोतो कस्सचि च चिरेनेव निमित्तं च उप्पज्जति, अवसेसझानङ्गपटिमण्डिता अप्पनासङ्खाता **ठपना** च सम्पज्जति ।

कस्सचि पन गणनावसेनेव मनसिकारकालतो पभुति, अनुक्कमतो ओळारिक-अस्सासपस्सासनिरोधवसेन कायदरथे वूपसन्ते कायो पि चित्त पि लहुक होति, सरीर आकासे लङ्घनाकारप्पत्त विय होति, यथा सारद्धकायस्स मञ्चे वा पीठे वा निसीदतो मञ्चपीठ ओनमति, विकूजति, पच्चत्थरणं वलिं गण्हाति । असा-रद्धकायस्स पन निसीदतो नेव मञ्चपीठ ओनमति, न विकूजति, न पच्चत्थरणं वलिं गण्हाति, तूलपिचुपूरित विय मञ्चपीठ होति । कस्मा ? यस्मा असारद्धो कायो लहुको होति । एवमेव गणनावसेन मनसिकारकालतो पभुति अनुक्कमतो ओळारिकअस्सासपस्सासनिरोधवसेन कायदरथे वूपसन्ते कायो पि चित्तं पि लहुक होति, सरीर आकासे लङ्घनाकारप्पत्त विय होति ।

तस्स ओळारिके अस्सासपस्सासे निरुद्धे सुखुमस्सासपस्सासनिमित्तारम्मण चित्तं पवत्तति । तस्मि पि निरुद्धे अपरापर ततो सुखुमतर निमित्तारम्मणं पवत्तति येव ।

कथ ? यथा पुरिसो महतिया लोहसलाकाय कंसथाल आकोटेय्य, एकप्पहारेन महासद्दो उप्पज्जेय तस्स ओळारिकसद्दारम्मण चित्तं पवत्तेय्य । विरुद्धे ओळारिके सद्दे अथ पच्छा सुखुमसद्दनिमित्तारम्मण, तस्मि पि विरुद्धे अपरापरं ततो सुखुमतर सुखुमतर सद्दनिमित्तारम्मणं पवत्ततेव, एवं ति वेदितब्ब । वुत्त पि चेत्तं—"सेय्यथा पि कसे आकोटिते" (खु० ५–२१५) ति वित्थारो ।

यथा हि अञ्ञानि कम्मट्ठानानि उपरूपरि विभूतानि होन्ति, न तथा इदं। इदं पन उपरूपरि भावन्तस्स सुखुमत्त गच्छति, उपट्ठान पि न उपगच्छति। एव अनुपट्ठहन्ते पन तस्मिं तेन भिक्खुना उट्ठायासना चम्मखण्ड पप्फोटेत्वा न गन्तब्ब। किं कातब्ब? "आचरियं पुच्छिस्सामी" ति वा, "नट्ठ दानि मे कम्मट्ठानं" ति वा न वुट्ठातब्बं। इरियापथ विकोपेत्वा गच्छतो हि कम्मट्ठानं नवनवमेव होति। तस्मा यथा निसिन्नेनेव देसतो आहरितब्ब।

तत्राय आहरणूपायो—तेन हि भिक्खुना कम्मट्ठानस्स अनुपट्ठानभावं ञत्वा इति पटिसञ्चिक्खितब्ब—इमे अस्सासपस्सासा नाम कत्थ अत्थि, कत्थ नत्थि, कस्स वा अत्थि, कस्स वा नत्थी ति? अथेवं पटिसञ्चिक्खता इमे अन्तोमातुकुच्छिय नत्थि, उदके निमुग्गानं नत्थि, तथा असञ्ञीभूतानं, मतानं, चतुत्थज्झानसमापन्नान, रूपारूपभवसमङ्गीनं, निरोधसमापन्नानं ति ञत्वा एवं अत्तना व अत्ता पटिचोदेतब्बो—"ननु त्व, पण्डित, नेव मातुकुच्छिगतो, न उदके निमुग्गो, न असञ्ञीभूतो, न मतो, न चतुत्थज्झानसमापन्नो, न रूपारूपभव-समङ्गी, न निरोधसमापन्नो। अत्थि येव ते अस्सासपस्सासा, मन्दपञ्ञताय पन परिग्गहेतु न सक्कोसी" ति। अथानेन पकतिफुट्ठवसेन चित्त ठपेत्वा मनसिकारो पवत्तेतब्बो।

इमे हि दीघनासिकस्स नासापुटं घट्टेन्ता पवत्तन्ति। रस्सनासिकस्स उत्तरोट्ठ। तस्मानेन 'इम नाम ठान घट्टेन्ती' ति निमित्तं ठपेतब्ब। इममेव हि अत्थवसं पटिच्च वुत्त भगवता—"नाहं, भिक्खवे, मुट्ठसतिस्स असम्पजानस्स आनापानस्सतिभावनं वदामी" (म० ३-१४७) ति।

किञ्चापि हि यं किञ्चि कम्मट्ठानं सतस्स सम्पजानस्सेव सम्पज्जति। इतो अञ्ञं पन मनसिकरोन्तस्स पाकट होति। इदं पन आनापानस्सतिकम्मट्ठानं गरुकं गरुकभावन बुद्धपच्चेकबुद्धबुद्धपुत्तान महापुरिसान येव मनसिकारभूमिभूतं, न चेव इत्तरं, न इत्तरसत्तसमासेवित। यथा यथा मनसिकरीयति, तथा तथा सन्त चेव होति सुखुमं च। तस्मा एत्थ बलवता सति च पञ्ञा च इच्छितब्बा।

यथा हि मट्ठसाटकस्स तुन्नकरणकाले सूचि पि सुखुमा इच्छितब्बा। सूचिपासवेधनं पि ततो सुखुमतरं, एवमेव मट्ठसाटकसदिसस्स इमस्स कम्मट्ठानस्स भावनाकाले सूचिपटिभागा सति पि सूचिपासवेधनपटिभागा तसम्प-युत्ता पञ्ञा पि बलवती इच्छितब्बा। ताहि च पन सति-पञ्ञाहि समन्नागतेन भिक्खुना न ते अस्सासपस्सासा अञ्ञत्र पकतिफुट्ठोकासा परियेसितब्बा।

यथा पन कस्सको कसिं कमित्वा बलीवद्दे मुञ्चित्वा गोचरमुखे कत्वा छायाय निसिन्नो विस्समेय्य। अथस्स ते बलीवद्दा वेगेन अटविं पविसेय्युं। यो

होति छेको कस्सको, सो पुन ते गहेत्वा योजेतुकामो न तेसं अनुपदं गन्त्वा अटविं आहिण्डति, अथ खो रस्मिं च पतोदं च गहेत्वा उजुकमेव तेसं निपातनतित्थं गन्त्वा निसीदति वा निपज्जति वा। अथ ते गोणे दिवसभागं चरित्वा निपातनतित्थं ओतरित्वा न्हत्वा च पिवित्वा च पच्चुत्तरित्वा ठिते दिस्वा रस्मिया बन्धित्वा पतोदेन विज्झन्तो आनेत्वा योजेत्वा पुन कम्मं करोति; एवमेव तेन भिक्खुना न ते अस्सासपस्सासा अञ्ञत्र पकतिफुट्ठोकासा परियेसितब्बा। सतिरस्मिं पन पञ्ञापतोदं च गहेत्वा पकतिफुट्ठोकासे चित्तं ठपेत्वा मनसिकारो पवत्तेतब्बो। एवं हिस्स मनसिकरोतो न चिरस्सेव ते उपट्ठहन्ति, निपातनतित्थे विय गोणा। ततोनेन सतिरस्मिया बन्धित्वा तस्मिं येव ठाने योजेत्वा पञ्ञापतोदेन विज्झन्तेन पुनप्पुनं कम्मट्ठानं अनुयुञ्जितब्बं।

तस्सेवमनुयुञ्जतो न चिरस्सेव निमित्तं उपट्ठाति। तं पनेतं न सब्बेसं एकसदिसं होति। अपि च खो कस्सचि सुखसम्फस्सं उप्पादयमानो तूलपिचु[1] विय कप्पासपिचु विय वातधारा विय च उपट्ठातो ति एकच्चे आहु।

अयं पन **अट्ठकथासु** विनिच्छयो—इदं हि कस्सचि तारकरूपं विय मणिगुळिका विय मुत्तागुळिका विय च, कस्सचि खरसम्फस्सं हुत्वा कप्पासट्ठि विय दारुसारसूचि विय च, कस्सचि दीघपामङ्गसुत्तं विय कुसुमदामं विय धूमसिखा विय च, कस्सचि वित्थतं मक्कटसुत्तं विय वलाहकपटलं विय पदुमपुप्फं विय रथचक्कं विय चन्दमण्डलं विय सूरियमण्डलं विय च उपट्ठाति।

तं च पनेतं—यथा सम्बहुलेसु भिक्खूसु सुत्तन्तं सज्झायित्वा निसिन्नेसु एकेन भिक्खुना "तुम्हाकं कीदिसं हुत्वा इदं सुत्तं उपट्ठाती" ति वुत्ते एको "मय्हं महती पब्बतेय्या नदी विय हुत्वा उपट्ठाती" ति आह। अपरो "मय्हं एका वनराजि विय"। अञ्ञो "मय्हं एको सीतच्छायो साखासम्पन्नो फलभारभरितरुक्खो विया" ति। तेसं हि तं एकमेव सुत्तं सञ्ञानानताय नानतो उपट्ठाति। एवं एकमेव कम्मट्ठानं सञ्ञानानताय नानतो उपट्ठाति। सञ्ञजं हि एतं, सञ्ञानिदानं, सञ्ञापभवं। तस्मा सञ्ञानानताय नानतो उपट्ठाती ति वेदितब्बं।

एत्थ च अञ्ञमेव अस्सासारम्मणं चित्तं, अञ्ञं पस्सासारम्मणं, अञ्ञं निमित्तारम्मणं। यस्स हि इमे तयो धम्मा नत्थि, तस्स कम्मट्ठानं नेव अप्पनं, न उपचारं पापुणाति। यस्स पनिमे तयो धम्मा अत्थि, तस्सेव कम्मट्ठानं उपचारं च अप्पनं च पापुणाति। वुत्तं हेतं—

---

१. तूलपिचू ति। मुदु कप्पासजाति एव।

"निमित्त अस्सासपस्सासा अनारम्मणमेकचित्तस्स ।
अजानतो च तयो धम्मे भावना नुपलब्भति ॥
निमित्त अस्सासपस्सासा अनारम्मणमेकचित्तस्स ।
जानतो व तयो धम्मे भावना उपलब्भती" ति ॥ (खु० ५-१९९)

एव उपट्ठिते पन निमित्ते तेन भिक्खुना आचरियस्स सन्तिक गन्त्वा आरोचेतब्ब—"मय्ह, भन्ते, एवरूप नाम उपट्ठाती" ति । आचरियेन पन "एत निमित्त ति वा न वा निमित्त" ति न वत्तब्बं । "एव होति, आवुसो" ति वत्वा "पुनप्पुन मनसिकरोहो" ति वत्तब्बो । निमित्त ति हि वुत्त वोसानं आपज्जेय्य । न निमित्त ति वुत्ते निरासो विसीदेय्य । तस्मा तदुभय पि अवत्वा मनसिकारे येव नियोजेतब्बो ति । एवं ताव **दीघभाणका** ।

मज्झिमभाणका पनाहु—"निमित्तमिद, आवुसो, कम्मट्ठान पुनप्पुन मनसिकरोहि सप्पुरिसा ति वत्तब्बो" ति ।

अथानेन निमित्ते येव चित्त ठपेतब्ब । एवमस्साय इतो पभुति ठपनावसेन भावना होति । वुत्त हेत पोराणेहि—

"निमित्ते ठपय चित्त नानाकार विभावयं ।
धीरो अस्सासपस्सासे सकं चित्तं निबन्धती" ति ॥
(वि० टु० २-३०)

तस्सेवं निमित्तुपट्ठानतो पभुति नीवरणानि विक्खम्भितानेव होन्ति, किलेसा सन्निसिन्ना व, सति उपट्ठिता येव, चित्तं उपचारसमाधिना समाहितमेव ।

अथानेन तं निमित्तं नेव वण्णतो मनसिकातब्ब, न लक्खणतो पच्चवेक्खितब्बं । अपि च खो खत्तियमहेसिया चक्कवत्तिगब्भो विय कस्सकेन सालियवगब्भो विय च आवासादीनि सत्त असप्पायानि वज्जेत्वा तानेव सत्त सप्पायानि सेवन्तेन साधुकं रक्खितब्बं । अथ नं एव रक्खित्वा पुनप्पुनं मनसिकारवसेन वुड्ढि विरूळ्हि गमयित्वा दसविध अप्पनाकोसल्ल सम्पादेतब्ब, विरियसमता योजेतब्बा । तस्सेवं घटेन्तस्स पथवीकसिणे वुत्तानुक्कमेनेव तस्मिं निमित्ते चतुक्कपञ्चकज्झानानि निब्बत्तन्ति ।

(५–७) एवं निब्बत्तचतुक्कपञ्चकज्झानो पनेत्थ भिक्खु **सल्लक्खणाविवट्टनावसेन** कम्मट्ठान वड्ढेत्वा **पारिसुद्धि** पत्तुकामो तदेव झानं पञ्चहाकारेहि वसिप्पत्त पगुणं कत्वा नामरूप ववत्थपेत्वा विपस्सन पट्ठपेति ।

कथं ? सो हि समापत्तितो वुट्ठाय अस्सासपस्सासान समुदयो करजकायो च चित्त चा ति पस्सति । यथा हि कम्मारगग्गरिया धममानाय भस्तं च पुरिसस्स च तज्जं वायामं पटिच्च वातो सञ्चरति; एवमेव कायं च चित्त च

पटिच्च अस्सासपस्सासा ति । ततो अस्सासपस्सासे च काय च रूप ति, चित्तं च तंसम्पयुत्तधम्मे च अरूप ति ववत्थपेति । अयमेत्थ सङ्खेपो ।

एव नामरूप ववत्थपेत्वा तस्स पच्चय परियेसति । परियेसन्तो च नं दिस्वा तीसु पि अद्धासु नामरूपस्स पवत्ति आरब्भ कङ्खं वितरति । वितिण्ण-कङ्खो कलापसम्मसनवसेन तिलक्खणं आरोपेत्वा उदयब्बयानुपस्सनाय पुब्बभागे उप्पन्ने ओभासादयो[1] दस विपस्सनुपक्किलेसे पहाय उपक्किलेसविमुत्त पटिपदा-ञाण मग्गो ति ववत्थपेत्वा उदयं पहाय भङ्गानुपस्सन पत्वा निरन्तरं भङ्गा-नुपस्सनेन वयतो उपट्ठितेसु सब्बसङ्खारेसु निब्बिन्दन्तो विरज्जन्तो विमुच्चन्तो यथाक्कमेन चत्तारो अरियमग्गे पापुणित्वा अरहत्तफले पतिट्ठाय एकूनवीसति-भेदस्स पच्चवेक्खणाञाणस्स परियन्त पत्तो सदेवकस्स लोकस्स अग्गदक्खिणेय्यो होति ।

(८) एत्तावता चस्स गणन आदिं कत्वा **पटिपस्सना**परियोसाना आना-पानस्सतिसमाधिभावना समत्ता होती ति ।

अय सब्बाकारतो पठमचतुक्कवण्णना ।।

६९. इतरेसु पन तीसु चतुक्केसु यस्मा विसुं कम्मट्ठानभावनानयो नाम नत्थि । तस्मा अनुपदवण्णनानयेनेव तेसं एव अत्थो वेदितब्बो—

पीतिपटिसंवेदी ति । पीति पटिसविदित करोन्तो पाकटं करोन्तो **अस्स-सिस्सामि पस्ससिस्सामी ति सिक्खति ।** तत्थ द्वीहाकारेहि पीति पटिसविदिता होति—आरम्मणतो च, असम्मोहतो च ।

कथं आरम्मणतो पीति पटिसविदिता होति ? सप्पीतिके द्वे झाने समा-पज्जति । तस्स समापत्तिक्खणे झानपटिलाभेन आरम्मणतो पीति पटिसंविदिता होति, आरम्मणस्स पटिसविदितत्ता । कथं असम्मोहतो ? सप्पीतिके द्वे झाने समापज्जित्वा वुट्ठाय झानसम्पयुत्तं पीतिं खयतो वयतो सम्मसति तस्स विपस्सनाक्खणे लक्खणपटिवेधेन असम्मोहतो पीति पटिसंविदिता होति ।

वुत्तं हेत **पटिसम्भिदायं**—

"दीघ अस्सासवसेन चित्तस्स एकग्गत अविक्खेप पजानतो सति उपट्ठिता होति । ताय सतिया तेन ञाणेन सा पीति पटिसंविदिता होति । दीघ पस्सास-वसेन । रस्सं अस्सासवसेन । रस्सं पस्सासवसेन । सब्बकायपटिसवेदी अस्सास-पस्सासवसेन । पस्सम्भयं कायसङ्खार अस्सासपस्सासवसेन चित्तस्स एकग्गत अविक्खेप पजानतो सति उपट्ठिता होति । ताय सतिया तेन ञाणन सा पीति पटिसंविदिता होति । आवज्जतो सा पीति पटिसविदिता होति । जानतो,

---

१ ओभासो, ञाणं, पीति, पस्सद्धि, सुखं, अधिमोक्खो, पग्गहो, उपेक्खा, उपट्ठानं, निकन्ती ति इमे दस **ओभासादयो** ।

पस्सतो, पच्चवेक्खतो, चित्त अधिट्ठहतो, सद्धाय अधिमुच्चतो, विरिय पग्गण्हतो, सति उपट्ठापयतो, चित्तं समादहतो, पञ्ञाय पजानतो, अभिञ्ञेय्यं परिञ्ञयं पहातब्ब भावेतब्ब सच्छिकातब्बं सच्छिकरोतो सा पीति पटिसंविदिता होति। एवं सा पीति पटिसंविदिता होती" (खु० ५-२१६) ति।

एतेनेव नयेन अवसेसपदानि पि अत्थतो वेदितब्बानि। इदं पनेत्थ विसेसमत्त—तिण्णं झानानं वसेन सुखपटिसंविदिता, चतुन्न पि वसेन चित्तसङ्खार-पटिसंविदिता वेदितब्बा। चित्तसङ्खारो ति। वेदनादयो द्वे खन्धा।

सुखपटिसंवेदीपदे चेत्थ विपस्सनाभूमिदस्सनत्थ "सुख ति द्वे सुखानि, कायिकं च सुख चेतसिक चा" (खु० ५-२१८) ति **पटिसम्भिदायं** वुत्तं।

पस्सम्भयं चित्तसङ्खारं ति। ओळारिक ओळारिकं चित्तसङ्खारं पस्सम्भेन्तो। निरोधेन्तो ति अत्थो। सो वित्थारतो कायसङ्खारे वुत्तनयेनेव वेदितब्बो।

अपि चेत्थ पीतिपदे पीतिसीसेन वेदना वुत्ता, सुखपदे सरूपेनेव वेदना। द्वीसु चित्तसङ्खारपदेसु "सञ्ञा च वेदना च चेतसिका एते धम्मा चित्तपटिबद्धा चित्तसङ्खारा" (म० १-३७२) ति वचनतो 'सञ्ञासम्पयुत्ता' वेदना ति एव वेदनानुपस्सनानयेन इद चतुक्क भासितं ति वेदितब्ब।

७०. ततियचतुक्के पि चतुन्नं झानान वसेन चित्तपटिसंवेदिता वेदितब्बा। **अभिप्पमोदय चित्तं** ति। चित्त मोदेन्तो पमोदेन्तो हासेन्तो पहासेन्तो **अस्ससिस्सामि पस्ससिस्सामी ति सिक्खति**। तत्थ द्वीहाकारेहि अभिप्पमोदो होति, समाधिवसेन च विपस्सनावसेन च।

कथं समाधिवसेन? सप्पीतिके द्वे झाने समापज्जति। सो समापत्तिक्खणे सम्पयुत्तपीतिया चित्तं आमोदेति पमोदेति। कथं विपस्सनावसेन? सप्पीतिके द्वे झाने समापज्जित्वा वुट्ठाय झानसम्पयुत्त पीतिं खयतो वयतो सम्मसति, एवं विपस्सनक्खणे झानसम्पयुत पीतिं आरम्मणं कत्वा चित्तं आमोदेति पमोदेति। एवं पटिपन्नो अभिप्पमोदयं चित्त अस्ससिस्सामि पस्ससिस्सामी तिसिक्खती ति वुच्चति।

समादहं चित्तं ति। पठमज्झानादिवसेन आरम्मणे चित्तं सम आदहन्तो सम ठपेन्तो। तानि वा पन झानानि समापज्जित्वा वुट्ठाय झानसम्पयुत्तं चित्त खयतो वयतो सम्मसतो विपस्सनाक्खणे लक्खणपटिवेधेन उप्पज्जति खणिक-चित्तेकग्गता। एव उप्पन्नाय खणिकचित्तेकग्गताय वसेन पि आरम्मणे चित्तं समं आदहन्तो समं ठपेन्तो समादहं चित्तं अस्ससिस्सामी पस्ससिस्सामी ति सिक्खती ति वुच्चति।

विमोचयं चित्तं ति। पठमज्झानेन नीवरणेहि चित्तं मोचेन्तो विमोचेन्तो, दुतियेन वितक्कविचारेहि, ततियेन पीतिया, चतुत्थेन सुखदुक्खेहि चित्त मोचेन्तो

विमोचेन्तो। तानि वा पन झानानि समापज्जित्वा वुट्ठाय झानसम्पयुत्त चित्तं खयतो वयतो सम्मसति। सो विपस्सनाक्खणे अनिच्चानुपस्सनाय निच्चसञ्ञातो चित्त मोचेन्तो विमोचेन्तो, दुक्खानुपस्सनाय सुखसञ्ञातो, अनत्तानुपस्सनाय अत्तसञ्ञातो, निब्बिदानुपस्सनाय नन्दितो, विरागानुपस्सनाय रागतो, निरोधानुस्सनाय समुदयतो, पटिनिस्सग्गानुपस्सनाय आदानतो चित्त मोचेन्तो विमोचेन्तो अस्ससति चेव पस्ससति च। तेन वुच्चति—"विमोचय चित्तं अस्ससिस्सामि पस्ससिस्सामी ति सिक्खती" ति। एव चित्तानुपस्सनावसेन इद चतुक्क भासितं ति वेदितब्बं। (३)

७१. चतुचतुत्थक्के पन **अनिच्चानुपस्सी** ति एत्थ ताव अनिच्चं वेदितब्बं, अनिच्चता वेदितब्बा, अनिच्चानुपस्सना वेदितब्बा, अनिच्चानुपस्सी वेदितब्बो। तत्थ **अनिच्च** ति पञ्चक्खन्धा। कस्मा ? उप्पादवयञ्ञथत्तभावा। **अनिच्चता** ति। तेस येव उप्पादवयञ्ञथत्त, हुत्वा अभावो वा। निब्बत्तानं तेनेवाकारेन अठत्वा खणभङ्गेन[१] भेदो ति अत्थो। **अनिच्चानुपस्सना** ति। तस्सा अनिच्चताय वसेन रूपादीसु अनिच्च ति अनुपस्सना। **अनिच्चानुपस्सी** ति। ताय अनुपस्सनाय समन्नागतो। तस्मा एवम्भूतो अस्ससन्तो च पस्ससन्तो च इध "अनिच्चानुपस्सी अस्ससिस्सामि पस्ससिस्सामी ति सिक्खती" ति वेदितब्बो।

विरागानुपस्सी ति। एत्थ पन द्वे विरागा—खयविरागो[२] च अच्चन्तविरागो[३] च। तत्थ खयविरागो ति। सङ्खारानं खणभङ्गो। अच्चन्तविरागो ति। निब्बानं। विरागानुपस्सना ति। तदुभयदस्सनवसेन पवत्ता विपस्सना च मग्गो च। ताय दुविधाय पि अनुपस्सनाय समन्नागतो हुत्वा अस्ससन्तो पस्ससन्तो च "विरागानुपस्सी अस्ससिस्सामि पस्ससिस्सामी ति सिक्खती" ति वेदितब्बो।

निरोधानुपस्सी—पदे पि एसेव नयो।

पटिनिस्सग्गानुपस्सी ति। एत्था पि द्वे पटिनिस्सग्गा—परिच्चागपटिनिस्सग्गो[४] च पक्खन्दनपटिनिस्सग्गो[५] च। पटिनिस्सग्गो येव अनुपस्सना पटिनिस्सग्गानुप्पसना। विपस्सनामग्गानं एतमधिवचनं।

---

१. **खणभङ्गेना** ति। खणिकनिरोधेन।

२. **खयो** सङ्खारान विनासो, विग्ज्जनं तेसं येव विलुज्जन **विरागो**। खयो एव विरागो **खयविरागो**। खणिकनिरोधो। ३ अच्चन्तमेत्थ एतस्मि अधिगते सङ्खारा विरज्जन्ति निरुज्जन्ती ति **अच्चन्तविरागो**, निब्बान। ४ पटिनिस्सज्जनं पहातब्बस्स तदङ्गवसेन वा समुच्छेदवसन वा परिच्चजनं **परिच्चागपटिनिस्सग्गो**।

५. तथा सब्बूपधीनं पटिनिस्सग्गभूते विसङ्खारे अत्तनो निस्सज्जनं, तन्निन्नताय वा तदारम्मणताय वा तत्थ पक्खन्दन **पक्खन्दनपटिनिस्सग्गो**।

विपस्सना हि तदङ्गवसेन सद्धिं खन्धाभिसङ्खारेहि किलेसे परिच्चजति, सङ्खतदोसदस्सनेन च तब्बिपरीते निब्बाने तन्निन्नताय पक्खन्दती ति **परिच्चाग-पटिनिस्सग्गो** चेव **पक्खन्दनपटिनिस्सग्गो** ति च वुच्चति। **मग्गो** समुच्छेदवसेन सद्धिं खन्धाभिसङ्खारेहि किलेसे परिच्चजति, आरम्मणकरणेन च निब्बाने पक्खन्दती ति **परिच्चागपटिनिस्सग्गो** चेव **पक्खन्दनपटिनिस्सग्गो** ति च वुच्चति। उभयं पि पन पुरिमपुरिमञाणानं अनु अनुपस्सनतो **अनुपस्सना** ति वुच्चति। ताय दुविधाय पि पटिनिस्सग्गानुपस्सनाय समन्नागतो हुत्वा अस्स-सन्तो च पस्ससन्तो च पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामि पस्ससिस्सामी ति सिक्खतो ति वेदितब्बो।

इद चतुत्थचतुक्कं सुद्धविपस्सनावसेनेव वुत्त। पुरिमानि पन तीणि समथ-विपस्सनावसेन। एत्र चतुन्न चतुक्कान वसेन सोळसवत्थुकाय आनापानसतिया भावना वेदितब्बा।

एव सोळसवत्थुवसेन च पन अयं आनापानस्सति महप्फला होति महानिसंसा।

७२ तत्रस्स "अयं पि खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि भावितो बहुलीकतो सन्तो चेव पणीतो चा' ति आदिवचनतो सन्तभावादिवसेना पि महानिसमता वेदितब्बा, वितक्कुपच्छेदसमत्थताय पि। अय हि सन्तपणीत-असेचनकसुखविहारत्ता समाधिअन्तरायकरान वितक्कानं वसेन इतो चितो च चित्तस्स विधावन विच्छिन्दित्वा आनापानारम्मणाभिमुखमेव चित्त करोति। तेनेव वुत्त--"आनापानस्सति भावेतब्बा वितक्कुपच्छेदाया" (अ० ४-'१) ति।

विज्जाविमुत्तिपारिपूरिया मूलभावना पि चस्सा महानिसंसता वेदितब्बा। वुत्तं हेतं भगवता—"आनापानस्सति, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति, चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती" (म० ३-१४४) ति।

७३ अपि च चरिमकानं अस्सासपस्सासानं विदितभावकरणतो पिस्सा महानिसंसता वेदितब्बा। वुत्त हेतं भगवता—"एवं भाविताय खो, राहुल, आनापानस्सतिया एव बहुलीकताय ये पि च ते चरिमका अस्सासपस्सासा, ते पि विदिता व निरुज्झन्ति, नो अविदिता" (म०-२-१०६) ति।

७४. तत्थ निरोधवसेन तयो चरिमका—भवचरिमका, झानचरिमका, चुति-चरिमका ति। भवेसु हि कामभवे अस्सासपस्सासा पवत्तन्ति, रूपारूपभवेसु नप्पवत्तन्ति, तस्मा ते **भवचरिमका**। झानेसु पुरिमे झानत्तये पवत्तन्ति, चतुत्थे नप्पवत्तन्ति, तस्मा ते **झानचरिमका**। ये पन चुतिचित्तस्स पुरतो सोळसमेन

चित्तेन सद्धिं उप्पज्जित्वा चुतिचित्तेन सह निरुज्झन्ति, इमे **चुतिचरिमका** नाम। इमे इध "चरिमका" ति अधिप्पेता।

७५ इम किर कम्मट्ठानं अनुयुत्तस्स भिक्खुनो आनापानारम्मणस्स सुट्ठु परिग्गहितत्ता चुतिचित्तस्स पुरतो सोळसमस्स चित्तस्स उप्पादक्खणे उप्पादं आवज्जयतो उप्पादा पि नेस पाकटो होति। ठितिं आवज्जयतो ठिति पि नेस पाकटा होति। भङ्गं आवज्जयतो च भङ्गो नेस पाकटो होति।

इतो अञ्ञ कम्मट्ठानं भावेत्वा अरहत्त पत्तस्स भिक्खुनो हि आयुअन्तरं परिच्छिन्न वा होति अपरिच्छिन्न वा। इम पन सोळसवत्थुक आनापानस्सतिं भावेत्वा अरहत्त पत्तस्स आयुअन्तरं परिच्छिन्नमेव होति। सो "एत्तक दानि मे आयुसङ्खारा पवत्तिस्सन्ति, न इतो पर" ति ञत्वा अत्तनो धम्मताय येव सरीरपटिजग्गननिवासनपारुपनादीनि सब्बकिच्चानि कत्वा अक्खीनि निमीलेति कोटपब्बतविहारवासी **तिस्सत्थेरो** विय, महाकरञ्जियविहारवासी **महातिस्सत्थेरो** विय, देवपुत्तमहारट्ठे **पिण्डपातिकतिस्सत्थेरो** विय, चित्तलपब्बतविहारवासिनो द्वे भातियत्थेरा विय च।

७६. तत्रिद एकवत्थुपरिदीपनं—द्वेभातियत्थेरान किरेको पुण्णमुपोसथदिवसे पातिमोक्ख ओसारेत्वा भिक्खुसङ्घपरिवुतो अत्तनो वसनट्ठान गन्त्वा चङ्कमे ठितो चन्दालोकं ओलोकेत्वा अत्तनो आयुसङ्खारे उपधारेत्वा भिक्खुसङ्घआह— "तुम्हेहि कथ परिनिब्बायन्ता भिक्खू दिट्ठपुब्बा" ति? तत्र केचि आहसु— "अम्हेहि आसने निसिन्नका व परिनिब्बायन्ता दिट्ठपुब्बा" ति। केचि "अम्हेहि आकासे पल्लङ्क आभुजित्वा निसिन्नका" ति। थेरो आह—"अहं दानि वो चङ्कमन्तमेव परिनिब्बायमान दस्सेस्सामी" ति। ततो चङ्कमे लेखं कत्वा "अहं इतो चङ्कमकोटितो परकोटिं गन्त्वा निवत्तमानो इमं लेख पत्वा व परिनिब्बायिस्सामी" ति वत्वा चङ्कम ओरुय्ह परभाग गन्त्वा निवत्तमानो एकेन पादेन लेखं अक्कन्तक्खणे येव परिनिब्बायि।

तस्मा हवे अप्पमत्तो अनुयुञ्जेथ पण्डितो।
एव अनेकानिसस आनापानस्सतिं सदा ति॥

इदं आनापानस्सतिय वित्थारकथामुखं॥

उपसमानुस्सतिकथा

७७. आनापानस्सतिया अनन्तरं उद्दिट्ठ पन उपसमानुस्सतिं भावेतुकामेन रहोगतेन पटिसल्लीनेन—"यावता, भिक्खवे, धम्मा सङ्खता वा असङ्खता वा विरागो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायति, यदिदं मदनिम्मदनो पिपासविनयो

आलयसमुग्घातो वट्टुपच्छेदो तण्हक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं" (अं० २–३७) ति एव सब्बदुक्खूपसमसङ्खातस्स निब्बानस्स गुणा अनुस्सरितब्बा ।

तत्थ **यावता** ति यत्तका । **धम्मा** ति सभावा । **सङ्खता वा असङ्खता वा** ति सङ्गम्म समागम्म पच्चयेहि कता वा अकता वा । **विरागो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायती** ति । तेसं सङ्खतासङ्खतधम्मानं विरागो अग्गमक्खायति, सेट्ठो उत्तमो ति वुच्चति ।

तत्थ **विरागो** ति न रागाभावमत्तमेव, अथ खो यदिदं मदनिम्मदनो · पे० निब्बान ति यो सो मदनिम्मदनो ति आदीनि नामानि असङ्खतधम्मो लभति, सो विरागो ति पच्चेतब्बो । सो हि यस्मा त आगम्म सब्बे पि मानमदपुरिसमदादयो मदा निम्मदा अमदा होन्ति, विनस्सन्ति, तस्मा **मदनिम्मदनो** ति वुच्चति । यस्मा च तं आगम्म सब्बा पि कामपिपासा विनयं अब्भत्थ याति' तस्मा **पिपासविनयो** ति वुच्चति । यस्मा पन त आगम्म पञ्चकामगुणालया समुग्घात गच्छन्ति, तस्मा **आलयसमुग्घातो** ति वुच्चति । यस्मा च त आगम्म तेभूमकवट्ट उपच्छिज्जति, तस्मा **वट्टुपच्छेदो** ति वुच्चति । यस्मा पन त आगम्म सब्बसो तण्हा खय गच्छति विरज्जति निरुज्झति च, तस्मा **तण्हक्खयो विरागो निरोधो** ति वुच्चति । यस्मा पनेस चतस्सो योनियो[1] पञ्च गतियो[2] सत्त विञ्ञाणट्ठितियो[3] नव च सत्तावासे[4] अपरापरभावाय विननतो आबन्धनतो ससिब्बनतो वानं ति लद्धवोहाराय तण्हाय निक्खन्तो निस्सटो विसंयुत्तो, तस्मा **निब्बानं** ति वुच्चती ति ।

७८. एवमेतेस मदनिम्मदनतादीनं गुणानं वसेन निब्बानसङ्खातो उपसमो अनुस्सरितब्बो । ये वा पनञ्ञे पि भगवता—"असङ्खतं च वो भिक्खवे, देसिस्सामि सच्चं च० पार च० सुदुद्दसं च० अजरं च० धुव च० निप्पपञ्चं च० अमतं च० सिवं च० खेमं च० अब्भुतं च० अनीतिक च० अब्यापज्झ च० विसुद्धि च० दीप च० ताणं च० लेण च वो, भिक्खवे, देसिस्सामी" (स० ३–३१२–३२०) ति आदीसु सुत्तेसु उपसमगुणा वुत्ता, तेसं पि वसेन अनुस्सरितब्बो येव ।

तस्सेव मदनिम्मदनतादिगुणवसेन उपसमं अनुस्सरतो "नेव तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्त होति, न दोस ·न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति । उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्त होति **उपसमं** आरब्भा" ति बुद्धानुस्सतिआदीसु वुत्तनयेनेव विक्खम्भितनीवरणस्स एकक्खणे झानङ्गानि उप्पज्जन्ति । उपसम-

१. अण्डज-जलाबुज-ससेदज-ओपपातिकयोनियो ।

२. निरय-तिरच्छान-पेत्तिविसय-मनुस्स-देवगतयो ।

३. अ० नि० सत्तकनिपाते दट्ठब्बा ।　　४. अ० नि० नवकनिपाते दट्ठब्बा ।

गुणानं पन गम्भीरताय नानप्पकारगुणानुस्सरणाधिमुत्तताय वा अप्पनं अप्पत्वा उपचारप्पत्तमेव झानं होति। तदेतं उपसमगुणानुस्सरणवसेन उपमानुस्सतिं चेव सङ्खं गच्छति।

७८. छ अनुस्सतियो विय च अय पि अरियसावकस्सेव इज्झति। एव सन्ते पि उपसमगरुकेन पुथुज्जनेना पि मनसिकातब्बा। सुतवसेना पि हि उपसमे चित्तं पसीदति।

इमं च पन उपसमानुस्सतिं अनुयुत्तो भिक्खु सुखं सुपति, सुखं पटिबुज्झति, सन्तिन्द्रियो होति सन्तमानसो, हिरोत्तप्पसमन्नागतो पासादिको पणीताधिमुत्तिको सब्रह्मचारीनं गरु च भावनीयो च। उत्तरि अप्पटिविज्झन्तो पन सुगतिपरायनो होति।

तस्मा हवे अप्पमत्तो भावयेथ विचक्खणो।
एवं अनेकानिसंसं अरिये उपसमे सतिं ति॥

इदं उपसमानुस्सतियं वित्थारकथामुख॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
समाधिभावनाधिकारे अनुस्सतिकम्मट्ठाननिद्देसो नाम
अट्ठमो परिच्छेदो॥



ब्रह्मविहारनिद्देसो

नवमो परिच्छेदो

मेत्ताभावनाकथा

१ अनुस्सतिकम्मट्ठानानन्तरं उद्दिट्ठेसु[1] पन मेत्ता करुणा मुदिता उपेक्खा ति इमेसु चतूसु ब्रह्मविहारेसु मेत्त भावेतुकामेन ताव आदिकम्मिकेन योगावचरेन उपच्छिन्नपलिबोधेन गाहितकम्मट्ठानेन भत्तकिच्चं कत्वा भत्तसम्मद पटिविनोदेत्वा विवित्ते पदेसे सुपञ्ञत्ते आसने सुखनिसिन्नेन आदितो ताव दोसे आदीनवो खन्तिय च आनिसंसो पच्चवेक्खितब्बो।

२ कस्मा ? इमाय हि भावनाय दोसो पहातब्बो, खन्ति अधिगन्तब्बा। न च सक्का किञ्चि अदिट्ठादीनव पहातु अविदितानिसंसा वा अधिगन्तु। तस्मा "दुट्ठो खो, आवुसो, दोसेन अभिभूतो परियादिण्णचित्तो पाणं पि हनती" (अं० १–२००) ति आदीनं वसेन दोसे आदीनवो दट्ठब्बो।

३ "खन्ती परम तपो तितिक्खा[2] निब्बानं परमं वदन्ति बुद्धा" (खु० १–३५)
"खन्तिबल बलानीकं[3] तमहं ब्रूमि ब्राह्मण" (खु० १–५५)

"खन्त्या भिय्यो न विज्जती" (स० १–२२३) ति आदीनं वसेन खन्तियं आनिसंसो वेदितब्बो।

४. अथेवं दिट्ठादीनवतो दोसतो चित्त विवेचनत्थाय, विदितानिसंसाय च खन्तिया सयोजनत्थाय मेत्ताभावना आरभितब्बा। आरभन्तेन च आदितो व पुग्गलदोसा जानितब्बा—"इमेसु पुग्गलेसु मेत्ता पठमं न भावेतब्बा, इमेसु नेव भावेतब्बा" ति।

अय हि मेत्ता अप्पियपुग्गले, अतिप्पियसहायके, मज्झत्ते, वेरिपुग्गले ति इमेसु चतूसु पठम न भावेतब्बा। लिङ्गविसभागे[4] ओधिसो[5] न भावेतब्बा। कालकते न भावेतब्बा व। किङ्कारणा अप्पियादीसु पठम न भावेतब्बा ? अप्पियं हि पियट्ठाने ठपेन्तो किलमति। अतिप्पियसहायकं मज्झत्तट्ठाने ठपेन्तो किलमति,

---

१. उद्दिट्ठेसू ति। ततियपरिच्छेदे चत्तालीसकम्मट्ठानकथायं।

२ 'तितिक्खलक्खणा खन्ति उत्तमं तपो' त्यत्थो। ३. बलानीकं ति। सेनाबल।

४. लिङ्गविसभागं ति। इत्थिलिङ्गादिना लिङ्गेन विसदिसे। ५. ओधिसो ति। भागसो।

अप्पमत्तके पि चस्स दुक्खे उप्पन्ने आरोदनाकारप्पत्तो विय होति। मज्झत्त गरुट्ठाने च पियट्ठाने च ठपेन्तो किलमति। वेरिमनुस्सरतो कोधो उप्पज्जति, तस्मा अप्पियादोसु पठम न भावेतब्बा।

५. लिङ्गविसभागे पन तमेव आरब्भ ओधिसो भावेन्तस्स रागो उप्पज्जति। अञ्ञतरो किर अमच्चपुत्तो कुलूपकत्थेर पुच्छि—"भन्ते, कस्स मेत्ता भावेतब्बा ति"? थेरो "पियपुग्गले" ति आह। तस्स अत्तनो भरिया पिया होति, सो तस्सा मेत्त भावेन्तो सब्बरत्ति भित्तियुद्धमकासि[1]। तस्मा लिङ्गविसभागे ओधिसो न भावेतब्बा।

६. कालङ्कते पन भावेन्तो नेव अप्पन, न उपचारं पापुणाति। अञ्ञतरो किर दहरभिक्खु आचरिय आरब्भ मेत्त आरभि। तस्स मेत्ता नप्पवत्तति। सो महाथेरस्स सन्तिक गन्त्वा "भन्ते, पगुणा व मे मेत्ताझानसमापत्ति, न च नं समापज्जितु सक्कोमि, कि नु खो कारण" ति आह। थेरो "निमित्तं, आवुसो, गवेसाही" ति आह। सो गवेसन्तो आचरियस्स मतभाव ञत्वा अञ्ञ आरब्भ मेत्तायन्तो समापत्ति अप्पेसि। तस्मा कालङ्कते न भावेतब्बा व।

७ सब्बपठम पन "अहं सुखितो होमि निद्दुक्खो" ति वा, "अवेरो अब्यापज्झो अनीघो सुखो अत्तान परिहरामी" ति वा एव पुनप्पुन अत्तनि येव भावेतब्बा।

८ एवं सन्ते यं **विभङ्गे** वुत्तं—"कथ च भिक्खु मेत्तासहगतेन चेतसा एक दिस फरित्वा विहरति? सेय्यथापि नाम एक पुग्गल पियं मनाप दिस्वा मेत्तायेय्य, एवमेव सब्बे सत्ते मेत्ताय फरता" (अभि० २–३२७) ति।

यं च **पटिसम्भिदायं**—"कतमेहि पञ्चहाकारेहि अनोधिसोफरणा मेत्ता चेतोविमुत्ति भावेतब्बा? सब्बे सत्ता अवेरा होन्तु, अब्यापज्झा अनीघा सुखी अत्तान परिहरन्तु। सब्बे पाणा सब्बे भूता सब्बे पुग्गला सब्बे अत्तभाव-परियापन्ना अवेरा अब्यापज्झा अनीघा सुखी अत्तान परिहरन्तू" (खु० ५–३७९) ति आदि वुत्तं।

यं च **मेत्तसुत्ते**—

"सुखिना व खेमिनो होन्तु। सब्बे सत्ता भवन्तु सुखितत्ता" (खु० १-११-२९०) ति आदि वुत्त, त विरुज्झति। न हि तत्थ अत्तनि भावना वुत्ता ति चे? तं च न विरुज्झति।

---

१. **भित्तियुद्धमकासी** ति। सीलं अधिट्ठाय पिहितद्वारे गब्भे सयनपीठे निसीदित्वा मेत्त भावेन्तो मेत्तामुखेन उप्पन्नरागेन अन्धीकतो भरियाय सन्तिकं गन्तुकामो द्वारं असल्लक्खेत्वा भित्ति भिन्दित्वा पि निक्खमितुकामताय भित्ति पहरि।

कस्मा ? त हि अप्पनावसेन वुत्तं, इदं सक्खिभाववसेन। सचे पि हि वस्ससत वस्ससहस्स वा "अह सुखितो होमी" ति आदिना नयेन अत्तनि मेत्तं भावेति, नेवस्स अप्पना उप्पज्जति। "अह सुखितो होमी" ति भावयतो पन यथा अह सुखकामो दुक्खपटिक्कूलो जीवितुकामो अमरितुकामो च, एव अञ्ञे पि सत्ता ति अत्तान सक्खि कत्वा अञ्ञसत्तेसु हितसुखकामता उप्पज्जति।

९. भगवता पि—

"सब्बा दिसा अनुपरिगम्म चेतसा नेवज्झगा पियतरमत्तना क्वचि।

एवं पियो पुथु अत्ता परेस, तस्मा न हिंसे परमत्तकामो" (सं० १–७४) ति। वदता अयं नयो दस्सितो।

१०. तस्मा सक्खिभावत्थ पठम अत्तानं मेत्ताय फरित्वा तदनन्तरं सुखप्पवत्तनत्थं य्वायं पियो मनापो गरु भावनीयो आचरियो वा आचरियमत्तो वा उपज्झायो वा उपज्झायमत्तो वा, तस्स दानपियवचनादीनि पियमनापत्तकारणानि सीलसुतादीनि गरुभावनीयत्तकारणानि च अनुस्सरित्वा "एस सप्पुरिसो सुखी होतु निद्दुक्खो" ति आदिना नयेन मेत्ता भावतब्बा।

११ एवरूपे च पुग्गले काम अप्पना सम्पज्जति। इमिना पन भिक्खुना तावतकेनेव तुट्ठिं अनापज्जित्वा सीमासम्भेदं[1] कत्तुकामेन तदनन्तरं अतिप्पियसहायके, अतिप्पियसहायकतो मज्झत्ते, मज्झत्ततो वेरिपुग्गले मेत्ता भावेतब्बा। भावन्तेन च एकेकस्मिं कोट्ठासे मुदुं कम्मनिय चित्त कत्वा तदनन्तरे तदनन्तरे उपसहरितब्बं।

१२. यस्स पन वेरिपुग्गलो वा नत्थि, महापुरिसजातिकत्ता वा अनत्थं करोन्ते पि परे वेरिसञ्ञा व नुप्पजति, 'तेन मज्झत्ते मे मेत्ताचित्त कम्मनियं जात, इदानि न वेरिम्हि उपसहरामी' ति ब्यापारो व न कातब्बो। यस्स पन अत्थि, त सन्धाय वुत्त—"मज्झत्ततो वेरिपुग्गले मेत्ता भावेतब्बा" ति।

१३ सचे पनस्स वेरिम्हि चित्त उपसंहरतो तेन कतापराधानुस्सरणेन पटिघं उप्पज्जति, अथानेन पुरिमपुग्गलेसु यत्थ कत्थचि पुनप्पुनं मेत्तं समापज्जित्वा वुट्ठहित्वा पुनप्पुन तं पुग्गलं मेत्तायन्तेन पटिघं विनोदेतब्बं।

सचे एव पि वायमतो न निब्बाति, अथ—

ककचूपमओवादआदीनं अनुसारतो[2]।
पटिघस्स पहानाय घटितब्बं[3] पुनप्पुनं॥

---

१. सीमासम्भेद ति। मरियादापनयनं। अत्ता पियो मज्झत्तो वेरी ति विभागाकरण ति अत्थो। २. अनुसारतो ति। अनुगमनतो। पच्चवेक्खणतो ति अत्थो।

३. घटितब्बं ति। वायमितब्बं।

तं च खो इमिना आकारेन अत्तान ओवदन्तेनेव—"अरे कुज्झनपुरिस, ननु वुत्तं भगवता—'उभतो दण्डकेन चे पि, भिक्खवे, ककचेन चोरा ओचरका अङ्गमङ्गानि ओकन्तेय्यु, तत्रा पि यो मनो पदोसेय्य, न मे सो तेन सासनकरो' (म० १-१७२) ति च ?

"तस्सेव तेन पापियो यो कुद्ध पटिकुज्झति।
कुद्धं अप्पटिकुज्झन्तो सङ्गामं जेति दुज्जय ॥
उभिन्नमत्थं चरति अत्तनो च परस्स च।
पर सङ्कुपित ञत्वा यो सतो उपसम्मती" (स० १-१६३) ति च ?

"सत्तिमे, भिक्खवे, धम्मा सपत्तकन्ता[1] सपत्तकरणा कोधनं आगच्छन्ति इत्थिं वा पुरिस वा। कतमे सत्त ? इध, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स एव इच्छति—'अहो वताय दुब्बण्णो अस्सा' ति। तं किस्स हेतु ? न, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स वण्णवताय नन्दति। कोधनाय, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलो कोधाभिभूतो कोधपरेतो, किञ्चापि सो होति सुन्हातो सुविलित्तो कप्पितकसमस्सु ओदातवत्थवसनो, अथ खो सो दुब्बणो व होति कोधाभिभूतो। अय, भिक्खव, पठमो धम्मो सपत्तकन्तो सपत्तकरणो कोधन आगच्छति इत्थिं वा पुरिसं वा। पुन च पर, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स एव इच्छति—अहो वताय दुक्ख सयेय्या ति' पे० "न पचुरत्थो अस्सा ति 'पे०" 'न भोगवा अस्सा ति 'पे०' 'न यसवा अस्सा ति' 'पे०' "न मित्तवा अस्सा ति "'पे०' 'न कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्ग लोक उप्पजेय्या ति। तं किस्स हेतु ? न, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स सुगतिगमनेन नन्दति। कोधनायं, भिक्खव, पुरिसपुग्गलो कोधाभिभूतो कोधपरेतो कायेन दुच्चरितं चरति, वाचाय 'मनसा दुच्चरित्त चरति, सो कायेन वाचाय मनसा दुच्चरित्त चरित्वा कायस्स भेदा पर मरणा अपाय दुग्गतिं विनिपातं निरय उपपज्जत्ति कोधाभिभूतो" (अं० ३-२२५) ति च ?

"सेय्यथापि, भिक्खवे, छवालात उभतोपदित्त मज्झे गूथगतं नेव गामे कट्ठत्थ[2] फरति[2], न अरञ्ञ कट्ठत्थं फरति तथूपमाहं, भिक्खवे, इमं पुरिसपुग्गल वदामी" (अ० २-१००) ति च ?

सो दानि त्वं एवं कुज्झन्तो न चेव भगवतो सासनकरो भविस्ससि, पटिकुज्झन्तो च कुद्धपुरिसतो पि पापियो हुत्वा न दुज्जयं सङ्गामं जेस्ससि, सपत्तकरणे च धम्मे अत्तना करिस्ससि, छवालातूपमो च भविस्ससी" ति।

---

१. सपत्तकन्ता ति। पटिसत्तूहि इच्छिता।

२. कट्ठत्थं ति। दारुकिच्चं। नेव फरतीति। न साधेति।

१४. तस्सेव घटयतो वायमतो सचे त पटिघ वूपसम्मति, इच्चेतं कुसलं। नो चे वूपसम्मति, अथ यो यो धम्मो तस्स पुग्गलस्स वूपसन्तो होति परिसुद्धो, अनुस्सरियमाना पसाद आवहति, तं त अनुस्सरित्वा आघातो पटिविनोदेतब्बो।

१५ एकच्चस्स हि कायसमाचारो व उपसन्तो होति, उपसन्तभावो चस्स बहुं वत्तपटिपत्तिं करोन्तस्स सब्बजनेन ञायति। वचीसमाचारमनोसमाचारा पन अवूपसन्ता होन्ति। तस्स ते अचिन्तेत्वा कायसमाचारवूपसमो येव अनुस्सरितब्बो। (१)

एकच्चस्स वचीसमाचारो व उपसन्तो होति, उपसन्तभावो चस्स सब्बजनेन ञायति। सो हि पकतिया व पटिसन्थारकुसलो होति सखिलो सुखसम्भासो सम्मोदको उत्तानमुखो पुब्बभासी, मधुरेन सरेन धम्म ओसारेति, परिमण्डलेहि पदब्यञ्जनेहि धम्मकथं कथेति। कायसमाचार-मनोसमाचारा पन अवूपसन्ता होन्ति। तस्स ते अचिन्तेत्वा वचीसमाचारवूपसमो येव अनुस्सरितब्बो। (२)

एकच्चस्स मनोसमाचारो व उपसन्तो होति, उपसन्तभावो चस्स चेतिय-वन्दनादीसु सब्बजनस्स पाकटो होति। यो हि अवूपसन्तचित्तो होति, सो चेतिय वा बोधिं वा थेरे वा वन्दमानो न सक्कच्चं वन्दति, धम्मसवनमण्डपे विक्खित्त-चित्तो वा पचलायन्तो वा निसीदति। उपसन्तचित्तो पन ओकप्पेत्वा वन्दति, ओहितसोतो अट्ठिं कत्वा कायेन वा वाचाय वा चित्तप्पसाद करोन्तो धम्मं सुणाति। इति एकच्चस्स मनोसमाचारो व उपसन्तो होति, कायवचीसमाचारा अवूपसन्ता होन्ति, तस्स ते अचिन्तेत्वा मनोसमाचारवूपसमो येव अनुस्स-रितब्बो। (३)

एकच्चस्स पन इमेसु तीसु धम्मेसु एको पि अवूपसन्तो होति, तस्मिं पुग्गले "किञ्चापि एस इदानि मनुस्सलोके चरति, अथ खो कतिपाहस्स अच्चयेन अट्ठमहानिरयसोळसउस्सदनिरयपरिपूरको[1] भविस्सती" ति कारुञ्ञं उपट्ठ-पेतब्बं। कारुञ्ञ पि हि पटिच्च आघातो वूपसम्मति। (४)

एकच्चस्स तयो पिमे धम्मा वूपसन्ता होन्ति, तस्स यं यं इच्छति, तं त अनुस्सरितब्ब। तादिसे हि पुग्गले न दुक्करा होति मेत्ताभावना ति। (५)

इमस्स च अत्थस्स आविभावत्थं—"पञ्चिमे, आवुसो, आघातपटिविनया। यत्थ भिक्खुनो उप्पन्नो आघातो सब्बसो पटिविनोदेतब्बो" (अ० २–४३५) ति इदं **पञ्चकनिपाते आघातपटिविनयसुत्त** वित्थारेतब्ब।

---

१. तत्थ सञ्जीवादयो अट्ठ महानिरया। अवीचिमहानिरयस्स द्वारे द्वारे चत्तारो चत्तारो कत्वा कुक्कुळादयो सोळस उस्सदनिरया।

१६ सचे पनस्स एव पि वायमतो आघातो उप्पज्जति येव, अथानेन एवं अत्ता ओवदितब्बो—

अत्तनो विसये दुक्ख कत ते यदि वेरिना।
किं तस्साविसये दुक्ख सचित्ते कत्तुमिच्छसि॥
बहूपकार हित्वान ञातिवग्ग रुदम्मुखं।
महानत्थकरं कोध सपत्त न जहासि किं॥
यानि रक्खसि सीलानि तेसं मूलनिकन्तन।
कोध नामुपलाळेसि को तया सदिसो जळो॥
कतं अनरिय कम्म परेन इति कुज्झसि।
किं नु त्वं तादिस येव यो सयं कत्तुमिच्छसि॥
दोसेतुकामो[1] यदि त अमनाप परो करि।
दोसुप्पादेन तस्सेव किं पूरेसि मनोरथ॥
दुक्ख तस्स च नाम त्व कुद्धो काहसि वा न वा।
अत्तानं पनिदानव कोधदुक्खेन बाधसि॥
कोधन्धा अहितं मग्ग आरूळहा यदि वेरिनो।
कस्मा तुवं पि कुज्झन्तो तेस येवानुसिक्खसि॥
य दोस तव निस्साय सत्तुना अप्पिय कत।
तमेव दोस छिन्दस्सु, किमट्ठाने विहञ्ञसि॥
खणिकत्ता च धम्मानं येहि खन्धेहि ते कत।
अमनाप निरुद्धा ते, कस्स दानीध कुज्झसि॥
दुक्ख करोति यो यस्स तं विना कस्स सो करे।
सय पि दुक्खहेतु त्वमिति किं तस्स कुज्झसी ति॥

१७ सचे पनस्स एवं अत्तान ओवदतो पि पटिघ नेव वूपसम्मति, अथानेन अत्तनो च परस्स च कम्मस्सकता[2] पच्चवक्खितब्बा। तत्थ अत्तनो ताव एवं पच्चवेक्खितब्बा—"अम्भा, त्व तस्स कुद्धो किं करिस्ससि? ननु तवेव चेतं दोसनिदानं कम्म अनत्थाय सवत्तिस्सति! कम्मस्सको हि त्वं कम्मदायादो कम्मयोनि कम्मबन्धु कम्मपटिसरणो, य कम्म करिस्ससि तस्स दायादो भविस्ससि। इद च ते कम्मं नेव सम्मासम्बोधिं, न पच्चेकबोधिं, न सावकभूमिं, न ब्रह्मत्त-सक्कत्त-चक्कवत्ति-पदेसराजादिसम्पत्तीनं अञ्ञतरं सम्पत्तिं साधेतुं समत्थं, अथ खो सासनतो चावेत्वा विघासादादिभावस्स चेव नेरयिकादिदुक्ख-

१. **दोसेतुकामो** ति। कोध उप्पादेतुकामो।

२. कम्ममेव सकं सन्तकं धनं यस्सा ति कम्मस्सको, तस्स भावो कम्मस्सकता।

विसेसान च ते सवत्तनिकमिदं कम्म। सो त्वं इदं करोन्तो उभोहि हत्थेहि वीतच्चिके वा अङ्गारे, गूथं वा गहेत्वा पर पहरितुकामो पुरिसो विय अत्तानमेव पठम दहसि चेव दुग्गन्धं च करोसी" ति।

एवं अत्तनो कम्मस्सकतं पच्चवेक्खित्वा परस्स पि एवं पच्चवेक्खितब्बा—"एसो पि तव कुज्झित्वा किं करिस्सति? ननु एतस्सेवेतं अनत्थाय सवतिस्सति! कम्मस्सको हि अयमायस्मा कम्मदायादो··पे०·यं कम्म करिस्सति तस्स दायादो भविस्सति। इद चस्स कम्म नेव सम्मासम्बोधिं, न पच्चेकबोधिं, न सावकभूमिं, न ब्रह्म-मक्कत्त-चक्कवत्ति-पदेसराजादिसम्पत्तीनं अञ्ञतर सम्पत्ति साधेतुं समत्थं, अथ खो सासनतो चावेत्वा विघासादादिभावस्स चेव नेरयिकादि-दुक्खविसेसानं चस्स संवत्तनिकमिद कम्म। स्वायं इदं करोन्तो पटिवाते ठत्वा परं रजेन ओकिरितुकामो पुरिसो विय अत्तानं येव ओकिरिति। वुत्तं हेतं भगवता—

"यो अप्पदुट्ठस्स नरस्स दुस्सति सुद्धस्स पोसस्स अनङ्गणस्स।
तमेव बाल पच्चेति पाप सुखुमो रजो पटिवात व खित्तो" ति॥
(खु० १–२९)

१८. सचे पनस्स एव कम्मस्सकत पि पच्चवेक्खन्तो नेव वूपसम्मति, अथानेन सत्थु पुब्बचरियगुणा अनुस्सरितब्बा।

१९ तत्रायं पच्चवेक्खणानयो—अम्भो पब्बजित, ननु ते सत्था पुब्बे व सम्बोधा अनभिसम्बुद्धो बोधिसत्तो पि समानो चत्तारि असङ्ख्येय्यानि कप्पसत-सहस्सं च पारमियो पूरयमानो तत्थ तत्थ वधकेसु पि पच्चत्थिकेसु चित्तं नप्पदूसेसि!

सेय्यथीदं—**सीलवजातके** ताव अत्तनो देविया पदुट्ठेन पापअमच्चेन आनीतस्स पटिरञ्ञो तियोजनसतं रज्ज गण्हन्तस्स निसेधनत्थाय उट्ठितान अमच्चानं आवुधं पि छुपितुं न अदासि। पुन सद्धिं अमच्चसहस्सेन आमकसुसाने गलप्पमाण भूमिं खणित्वा निखञ्ञमानो चित्तप्पदासमत्त पि अकत्वा कुणपखाद-नत्थं आगतानं सिङ्गालानं पमुवियूहनं निस्साय पुरिसकार कत्वा पटिलद्धजीवितो यक्खानुभावेन अत्तनो सिरिगब्भ[1] ओरूय्ह सिरिसयने सयितं पच्चत्थिकं दिस्वा कोपं अकत्वा व अञ्ञमञ्ञ सपथं कत्वा तं मित्तट्ठाने ठपयित्वा आह—

"आसीसेथेव पुरिसो न निब्बिन्देय्य पण्डितो।
पस्सामि वोहमत्तानं यथा इच्छि तथा अहू"॥ (खु० ३: १–१४) ति।

---

१. सिरिगब्भं ति। वासागारं।

२० **खन्तिवादिजातके** दुम्मेधेन कासिरञ्ञा "किंवादी त्वं, समणा" ति पुट्ठो "खन्तिवादी नामाहं" ति वुत्ते सकण्टकाहि कसाहि ताळेत्वा हत्थपादेसु छिज्जमानेसु कोपमत्तं पि नाकासि।

२१ अनच्छरियं चेतं, यं महल्लको पब्बजूपगतो एवं करेय्य। **चूळधम्मपालजातके** पन उत्तानसेय्यको पि समानो—

"चन्दनरसानुलित्ता बाहा छिज्जन्ति धम्मपालस्स।
दायादस्स पथब्या पाणा मे, देव, रुज्झन्ती" ॥(खु० ३ : १-११७)

ति एवं विप्पलपमानाय मातुया पितरा महापतापेन नाम रञ्ञा वसकळीरेसु विय चतूसु हत्थपादेसु छेदापितेसु, तावता पि सन्तुट्ठिं अनापज्जित्वा 'सीसमस्स छिन्दथा' ति आणत्त, "अय दानि ते चित्तपरिग्गण्हनकालो। इदानि, अम्भो धम्मपाल, सीसच्छेदाणापके पितरि, सीसच्छेदके पुग्गिसे, परिदेवमानाय मातरि, अत्तनि चा ति इमेसु चतूसु समचित्तो होही" ति दळ्हसमादान अधिट्ठाय पदुट्ठाकारमत्त पि नाकासि।

२२ इदं चापि अनच्छरियमेव, य मनुस्सभूतो एवमकासि। तिरच्छानभूतो पि पन छद्दन्तो नाम वारणो हुत्वा विसपीतेन सल्लेन नाभिय विद्धो पि ताव अनत्थकारिम्हि लुद्दके चित्त नप्पदूसेसि।

यथाह—

"समप्पितो पुथुमल्लेन नागो; अदुट्ठचित्तो लुद्दक अज्झभासि।
किमत्थयं किस्स वा सम्म हेतु ममं वधी कस्स वायं पयोगो" ॥
(खु० ३ · १-३७५)

एवं वत्वा च "कासिरञ्ञो महेसिया तव दन्तानमत्थाय पेसितोम्हि, भदन्ते" ति वुत्ते तस्सा मनोरथं पूरेन्तो छब्बण्णरस्मिनिच्छरणसमुज्जलितचारुसोभे अत्तनो दन्ते छेत्वा अदासि।

२३. महाकपि हुत्वा अत्तना येव पब्बतपपाततो उद्धरितेन पुरिसेन—

"भक्खो अयं मनुस्सान यथेवञ्ञे वने मिगा।
यं नूनिमं वधित्वान छातो खादेय्य वानरं ॥
असितो व गमिस्सामि मंसमादाय सम्बल[1]।
कन्तारं नित्थरिस्सामि पाथेय्यं मे भविस्सती" ति ॥
(खु० ३ . १-३८३)

---

१. सम्बलं ति। मग्गाहारं।

एव चिन्तेत्वा सिल उक्खिपित्वा मत्थके सम्पदालिते अस्सुपुण्णेहि नेत्तेहि तं पुरिस उदिक्खमानो—

"मा[1] अय्योसि मे भदन्ते[1] त्व[2] नामेतादिस करि[2]।
त्वं खोसि नाम दीघावु ऊञ्ञ वारेतुमरहसी" ति ॥
(खु० ३ : १-३८४)

वत्वा तस्मिं पुरिसे चित्त अप्पदूसेत्वा अत्तनो च दुक्खं अचिन्तेत्वा तमेव पुरिसं खेमन्तभूमि सम्पापेसि।

२४. भूरिदत्तो नाम नागराजा हुत्वा उपोसथङ्गानि अधिट्ठाय वम्मिकमुद्धनि सयमानो कप्पुट्ठानग्गिसदिसेन ओसधेन सकलसरीरे सिञ्चियमानो पि पेळाय पक्खिपित्वा सकलजम्बुदीपे कीळापियमानो पि तस्मिं ब्राह्मणे मनोपदोसमत्तं पि न अकासि। यथाह—

"पेळाय पक्खिपन्ते पि मद्दन्ते पि च पाणिना।
अलम्पाने[3] न कुप्पामि सीलखण्डभया ममा" ति ॥ (खु० ७-४०१)

२५ चम्पेय्यो पि नागराजा हुत्वा अहितुण्डिकेन विहेठियमानो मनोपदोसमत्तं पि न उप्पादेसि।

"तदापि म धम्मचारि उपवुत्थउपोसथ।
अहितुण्डिको गहेत्वान राजद्वारम्हि कीळति ॥
यं सो वण्ण चिन्तयति नीलं पीत व लोहित।
तस्स चित्तानुवत्तन्तो होमि चिन्तिसन्निभो ॥
थलं करेय्यं उदकं उदक पि थलं करे।
यदिह तस्स कुप्पेय्यं खणेन छारिकं करे ॥
यदि चित्तवसी हेस्सं परिहायिस्सामि सीलतो।
सीलेन परिहीनस्स उत्तमत्थो न सिज्झती' ति ॥ (खु० ७-४०२)

२६ सङ्खपालनागराजा हुत्वा तिखिणाहि सत्तीहि अट्ठसु ठानेसु ओविज्झित्वा पहारमुखेहि सकण्टका लतायो पवेसेत्वा नासाय दळ्हं रज्जु पक्खिपित्वा सोळसहि भोजपुत्तेहि काजेनादाय वय्हमानो धरणीतले घंसियमानसरीरो महन्त दुक्खं

---

१. **मा अय्योसि मे भदन्ते** ति। एत्थ **मा** ति निपातमत्त, **मा** ति वा पटिक्खेपो, तेन उपरि तेन कातब्बं विप्पकारं पटिसेधेति। **अय्यो मे** ति अय्यिरको त्वं मम अतिथिभावतो। **भदन्ते** ति। पियसमुदाचारो।

२. **त्वं नामेतादिसं करी** ति। तं पि एवरूपं अकासि नाम।

३. **अलम्पाने** ति। एवंनामके अहितुण्डिके।

पच्चनुभोन्तो कुज्झित्वा ओलोकितमत्तेनेव सब्बे भोजपुत्ते भस्म कातु समत्थो पि समानो चक्खुं उम्मोलेत्वा पदुट्ठाकारमत्तं पि न अकासि । यथाह—

"चातुद्दसिं पञ्चदसिं चळार[1], उपोसथं निच्चमुपावसामि ।
अथागमु सोळसभोजपुत्ता रज्जु गहेत्वान दळ्ह च पासं ॥
भेत्वान नासं अतिकस्स रज्जु, नयिसु मं सम्परिगय्ह लुद्दा ।
एतादिसं दुक्खमहं तितिक्खं उपोसथ अप्पटिकोपयन्तो" ति ॥

(खु० ३.२-२४)

२७. न केवल च एतानेव, अञ्ञानि पि **मातुपोसकजातकादीसु** अनेकानि अच्छरियानि अकासि । तस्स ते इदानि सब्बञ्ञुत पत्तं सदेवके लोके केनचि अप्पटिसमखन्तिगुण तं भगवन्त सत्थार अपदिसता पटिघचित्त नाम उप्पादेतु अतिविय अयुक्तं अप्पटिरूप ति ।

२८ सचे पनस्स एवं सत्थु पुब्बचरितगुण पच्चवेक्खतो पि दीधरत्त किलेसान दासब्य उपगतस्स नेव त पाटघ वूपसम्मति, अथानेन अनमतग्गियानि पच्चवेक्खितब्बानि । तत्र हि वुत्त--"न सो, भिक्खवे, सत्तो सुलभरूपो, यो न माता भूतपुब्बो, यो न पिता भूतपुब्बो, यो न भाता, यो न भगिनी, यो न पुत्तो, यो न धोता भूतपुब्बो" (स० २-१५९) ति । तस्मा तस्मिं पुग्गले एवं चित्त उप्पादेतब्बं--"अयं किर मे अतीते माता हुत्वा दसमासे कुच्छिया परिहरित्वा मुत्तकरीसखेळसिङ्घाणिकादीनि हरिचन्दनं विय अजिगुच्छमानो अपनेत्वा उरे नच्चापेन्तो अङ्केन परिहरमानो पोसेसि, पिता हुत्वा अजपथसङ्कुपथादीनि गन्त्वा वाणिज्ज पयोजयमानो मय्ह अत्थाय जीवितं पि परिच्चजित्वा उभतोब्यूळ्हे सङ्गामे पविसित्वा नावाय महासमुद्दं पक्खन्दित्वा अञ्ञानि च दुक्करानि करित्वा "पुत्तके पोसेस्सामी" ति तेहि तेहि उपायेहि धनं सहरित्वा मं पोसेसि । भाता, भगिनी, पुत्तो, धीता च हुत्वा पि इदं चिदं च उपकारं अकासी ति तत्र मे नपटिरूपं मनं पदूसेतुं" ति ।

२९ सचे पन एवं पि चित्तं निब्बापेतुं न सक्कोति येव, अथानेन एवं मेत्तानिससा पच्चवेक्खितब्बा—"अम्भो पब्बजित, ननु वुत्तं भगवता—

'मेत्ताय खो, भिक्खवे, चेतोविमुत्तिया आसेविताय भाविताय बहुलीकताय यानीकताय वत्थुकताय अनुट्ठिताय परिचिताय सुसमारद्धाय एकादसानिसंसा पाटिकङ्खा । कतमे एकादस ? सुख सुपति, सुख पटिबुज्झति, न पापक सुपिनं

---

१. चळारा ति । च अळार इति परिच्छेदो । अळारो नाम कोचि कुटुम्बिको यो तं सङ्खपालनागराजान भोजपुत्तान हत्थतो मोचेसि ।

पस्मति, मनुस्सानं पियो होति, अमनुस्सानं पियो होति, देवता रक्खन्ति, नास्म अग्गि वा विस वा सत्थ वा कमति, तुवटं चित्तं समाधियति, मुखवण्णो पसीदति, असम्मूळ्हो काल करोति, उत्तरिं अप्पटिविज्झन्तो ब्रह्मलोकूपगो होती' (अं० ४–३८३) ति। सचे त्वं इदं चित्त न निब्बापेस्ससि, इमेहि आनिसंसेहि परिबाहिरो भविस्ससी" ति।

३०. एवं पि निब्बापेतुं असक्कोन्तेन पन धातुविनिब्भोगो कातब्बो। कथं? "अम्भो पब्बजित, त्व एतस्म कुज्झमानो कस्स कुज्झसि? किं केसान कुज्झसि, उदाहु लोमान, नखान ··पे० ·मुत्तस्स कुज्झसि। अथ वा पन केसादीसु पथवीधातुया कुज्झसि, आपोधातुया, तेजोधातुया, वायोधातुया कुज्झसि? ये वा पञ्चक्खन्धे, द्वादसायतनानि, अट्ठारस धातुयो उपादाय अयमायस्मा इत्थन्नामो ति वुच्चति, तेसु किं रूपक्खन्धस्स कुज्झसि, उदाहु वेदना० सञ्ञा० सङ्खार० विञ्ञाणक्खन्धस्स कुज्झसि? किं वा चक्खायतनस्स कुज्झसि, किं रूपायतनस्स कुज्झसि ·पे०· किं मनायतनस्स कुज्झसि, किं धम्मायतनस्स कुज्झसि? किं वा चक्खुधातुया कुज्झसि, किं रूपधातुया, किं चक्खुविञ्ञाणधातुया ·पे० किं मनोधातुया, किं धम्मधातुया, किं मनोविञ्ञाणधातुया" ति? एवं हि धातुविनिब्भोग करोतो आरग्गे सासपस्स विय आकासे चित्तकम्मस्स विय च कोधस्स पतिट्ठानट्ठानं न होति।

३१. धातुविनिब्भोगं पन कातु असक्कोन्तेन दानसंविभागो कातब्बो। अत्तनो सन्तक परस्स दातब्ब, परस्स सन्तकं अत्तना गहेतब्बं। सचे पन परो भिन्नाजीवो होति अपरिभोगारहपरिक्खारो, अत्तनो सन्तकमेव दातब्बं। तस्सेव करोतो एकन्तेनेव तस्मिं पुग्गले आघातो वूपसम्मति। इतरस्स च अतीतजातितो पट्ठाय अनुबन्धो पि कोधो तं खण येव वूपसम्मति। चित्तलपब्बतविहारे तिक्खत्तु वुट्ठापितसेनासनेन पिण्डपातिकत्थेरेन "अयं भन्ते, अट्ठकहापणग्घनको पत्तो मम मातरा उपासिकाय दिन्नो, धम्मियलाभो, महाउपासिकाय पुञ्ञलाभं करोथा" ति वत्वा दिन्न पत्त लद्धमहाथेरस्स विय। एव महानुभावं एतं दानं नाम। वुत्त पि चेत—

"अदन्तदमन दानं, दानं सब्बत्थसाधक।
दानेन पियवाचाय उन्नमन्ति[1] नमन्ति[2] चा' ति॥

३२ तस्सेवं वेरिपुग्गले वूपसन्तपटिघस्स यथा पियातिप्पियसहायकमज्झत्तेसु, एवं तस्मिं पि मेत्तावसेन चित्तं पवत्तति। अथानेन पुनप्पुनं मेत्तायन्तेन—अत्तनि,

---

१. दायका उन्नमन्ति। २. पटिग्गाहका नमन्ति।

पियपुग्गले, मज्झत्ते, वेरिपुग्गले ति चतूसु जनेसु समचित्ततं सीमासम्भेदो[1] कातब्बो।

तस्सिद लक्खण—सचे इमस्मिं पुग्गले पियमज्झत्तवेरीहि सद्धिं अत्तचतुत्थे एकस्मिं पदेसे निसिन्ने चोरा आगन्त्वा "भन्ते, एक भिक्खुं अम्हाक देथा" ति वत्वा ' किं कारणा'' ति वुत्त "त मारेत्वा गललोहित गहेत्वा बलिकरणत्थाया" ति वदेय्युं, तत्र चेसो भिक्खु "असुकं वा असुक वा गण्हन्तू" ति चिन्तेय्य, अकतो व होति सीमासम्भेदो। सचे पि "मं गण्हन्तु, मा इमे तयो" ति पि चिन्तेय्य, अकतो व होति सीमासम्भेदो। कस्मा ? यस्स यस्स हि गहणं इच्छति, तस्स तस्स अहितेसी होति, इतरेस येव हितेसी होति। यदा पन चतुन्नं जनानमन्तरे एक पि चोरान दातब्ब न पस्सति, अत्तनि च तेसु च तीसु जनेसु सममेव चित्तं पवत्तेति, कतो होति सीमासम्भेदो। तेनाहु पोराणा—

अत्तनि हितमज्झत्ते अहिते च चतुब्बिधे।
यदा पस्सति नानत्त हितचित्तो व पाणिनं॥
न निकामलाभी मेत्ताय कुसली ति पवुच्चति।
यदा चतस्सो सीमायो सम्भिन्ना होन्ति भिक्खुनो॥
सम फरति मेत्ताय सब्बलोक सदेवक।
महाविसेसो पुरिमेन यस्स सीमा न नायती" ति॥ (   )

३३ एव सीमासम्भेदसमकालमेव च इमिना भिक्खुना निमित्तं च उपचारं च लद्ध होति। सीमासम्भेदे पन कते तमेव निमित्त आसेवन्तो भावेन्तो बहुलीकरोन्तो अप्पकसिरनेव पथवीकसिणे वुत्तनयेनेव अप्पन पापुणाति। एत्तावतानेन अधिगत होति पञ्चङ्गविप्पहीनं पञ्चङ्गसमन्नागत तिविधकल्याण दसलक्खणसम्पन्न पठम झान मेत्तासहगतं। अधिगते च तस्मिं तदेव निमित्त आसेवन्तो भावेन्तो बहुलीकरोन्तो अनुपुब्बेन चतुक्कनयेन दुतियततियज्झानानि, पञ्चकनये दुतियततियचतुत्थज्झानानि च पापुणाति।

सो हि पठमज्झानादीन अञ्ञतरवसेन "मेत्तासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति। तथा दुतिय, तथा ततियं, तथा चतुत्थ। इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोक मेत्तासहगतन चेतसा विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्जेन फरित्वा वि हरति" (अभि० २-३२७)। पठमज्झानादिवसेन अप्पनापत्तचित्तस्सेव हि अय विकुब्बना सम्पज्जति।

३४. एत्थ च **मेत्तासहगतेना** ति। मेत्ताय समन्नागतेन। **चेतसा** ति। चित्तेन। **एकं दिसं** ति। एत एकिस्सा दिसाय पठमपरिग्गहितं सत्तं उपादाय एकदिसा-

१. सीमासम्भेदो ति। सा एव समचित्तता।

परियापन्नसत्तफरणवसेन वुत्त। **फरित्वा** ति। फुसित्वा, आरम्मण कत्वा। **विहरती** ति। ब्रह्मविहाराधिट्ठित इरियापथविहार पवत्तेति। **तथा दुतियं** ति। यथा पुरत्थिमादीसु दिसासु य किञ्चि एक दिस फरित्वा विहरति, तथेव तदनन्तर दुतिय ततिय चतुत्थं चा ति अत्थो।

इति उद्धं ति। एतेनेव नयेन उपरिम दिसं ति वुत्तं होति। **अधो तिरियं** ति। अधो दिसं पि तिरिय दिस पि एवमेव। तत्थ च **अधो** ति हेट्ठा। **तिरियं** ति। अनुदिसासु। एव सब्बदिसासु अस्समण्डले अस्समिव मेत्तासहगतं चित्तं सारेति पि, पच्चासारेति पी ति। एत्तावता एकमेक दिस परिग्गहेत्वा ओधिसो मेत्ताफरण दस्सित।

सब्बधी ति आदि पन अनोधिसो दस्सनत्थ वुत्त। तत्थ **सब्बधी** ति। सब्बत्थ। **सब्बत्तताया** ति। सब्बेसु हीनमज्झिमुक्कट्ठमित्तसपत्तमज्झत्तादिप्प-भेदेसु अत्तताय। "अय परसत्तो" ति विभाग अकत्वा अत्तसमताया ति वुत्त होति। अथ वा **सब्बत्तताया** ति। सब्बेन चित्तभागेन ईसक पि बहि अविक्खिप-मानो ति वुत्त होति। **सब्बावन्तं** ति। सब्बसत्तवन्त, सब्बसत्तयुत्त ति अत्थो। **लोकं** ति। सत्तलोक।

विपुलेना ति। एवमादि परियायदस्सनतो पनेत्थ पुन मेत्तासहगतेना ति वुत्त। यस्मा वा एत्थ ओधिसो फरणे विय पुन तथा-सद्दो इति-सद्दो वा न वुत्तो, तस्मा पुन मेत्तासहगतेन चेतसा ति वुत्त। निगमनवसेन[1] वा एत वुत्त— विपुलेना ति। एत्थ च फरणवसेन विपुलता दट्ठब्बा। भूमिवसेन पन एत **महग्गतं**। पगुणवसेन च अप्पमाणसत्तारम्मणवसेन च **अप्पमाणं**। ब्यापाद-पच्चत्थिकप्पहानेन **अवेरं**। दोमनस्सप्पहानतो **अब्यापज्झं**। निद्दुक्ख ति वुत्त होति। अय 'मेत्तासहगतेन चेतसा' ति आदिना नयेन वुत्ताय विकुब्बनाय अत्थो।

३५ यथा चाय अप्पनाप्पत्तचित्तस्सेव विकुब्बना सम्पज्जति, तथा य पि **पटिसम्भिदायं**—"पञ्चहाकारेहि अनोधिसोफरणा मेत्ता चेतोविमुत्ति, सत्तहा-कारेहि ओधिसोफरणा मेत्ता चेतोविमुत्ति, दसहाकारेहि दिसाफरणा मेत्ता चेतो-विमुत्ती" (खु० ५-३८०) ति वुत्तं, तं पि अप्पनाप्पत्तचित्तस्सेव सम्पज्जती ति वेदितब्ब।

तत्थ च "सब्बे सत्ता अवेरा अब्यापज्जा अनीघा सुखी अत्तान परिहरन्तु, सब्बे पाणा, सब्बे भूता, सब्बे पुग्गला, सब्बे अत्तभावपरियापन्ना अवेरा पे० ... परिहरन्तू" ति इमेहि पञ्चहाकारेहि अनोधिसो फरणा मेत्ता चेतोविमुत्ति वेदितब्बा।

---

१. वुत्तस्सेवत्थस्स पुन वचन निगमन। समापनवसेनेत्यत्थो।

"सब्बा इत्थियो अवेरा··· पे०··· अत्तानं परिहरन्तु, सब्बे पुरिसा, सब्बे अरिया, सब्बे अनरिया, सब्बे देवा, सब्बे मनुस्सा, सब्बे विनिपातिका अवेरा पे० परिहरन्तू" ति इमेहि सत्तहाकारेहि ओधिसोफरणा मेत्ता चेतोविमुत्ति वेदितब्बा।

"सब्बे पुरत्थिमाय दिसाय सत्ता अवेरा· पे० अत्तानं परिहरन्तु। सब्बे पच्छिमाय दिसाय, सब्बे उत्तराय दिसाय, सब्बे दक्खिणाय दिसाय, सब्बे पुरत्थिमाय अनुदिसाय, सब्बे पच्छिमाय अनुदिसाय, सब्बे उत्तराय अनुदिसाय, सब्बे दक्खिणाय अनुदिसाय, सब्बे हेट्ठिमाय दिसाय, सब्बे उपरिमाय दिसाय सत्ता अवेरा पे०· परिहरन्तु। सब्बे पुरित्थिमाय दिसाय पाणा, भूता, पुग्गला, अत्तभावपरियापन्ना अवेरा पे० परिहरन्तु। सब्बा पुरत्थिमाय दिसाय इत्थियो, सब्बे पुरिसा, अरिया, अनरिया, देवा, मनुस्सा, विनिपातिका अवेरा· पे० परिहरन्तु, सब्बा पच्छिमाय दिसाय, उत्तराय, दक्खिणाय, पुरत्थिमाय अनुदिसाय, पच्छिमाय, उत्तराय, दक्खिणाय अनुदिसाय, हेट्ठिमाय दिसाय, उपरिमाय दिसाय इत्थियो····पे०···विनिपातिका अवेरा अब्यापज्जा अनीघा सुखी अत्तानं परिहरन्तू" ति इमेहि दसहाकारेहि दिसाफरणा मेत्ता चेतोविमुत्ति वदितब्बा।

३६ तत्थ **सब्बे** ति। अनवसेसपरियादानमेत्त। **सत्ता** ति। रूपादीसु खन्धेसु छन्दरागेन सत्ता विसत्ता ति सत्ता। वुत्त हेतं भगवता—"रूपे खो, राध, यो छन्दो यो रागो या नन्दी या तण्हा, तत्र सत्तो, तत्र विसत्तो, तस्मा सत्तो ति वुच्चति। वेदनाय, सञ्ञाय, सङ्खारेसु विञ्ञाणे यो छन्दो यो रागा या नन्दी या तण्हा, तत्र सत्तो, तत्र विसत्तो, तस्मा सत्तो ति वुच्चती" (सं० २–४०३) ति।

रूळ्हिसद्दे न पन वीतरागेसु पि अयं वोहारो वत्तति येव, विलीवमये पि बीजनिविसेसे तालवण्टवोहारो विय। अक्खरचिन्तका पन अत्थ अविचारेत्वा, नाममत्तमेतं ति इच्छन्ति। ये पि अत्थं विचारेन्ति, ते सत्वयोगेन[1] सत्ता ति इच्छन्ति।

३७ पाणनताय **पाणा**, अस्सासपस्सासायत्तवुत्तिताया ति अत्थो। भूतत्ता **भूता**, सभूतत्ता अभिनिब्बत्तत्ता ति अत्थो। पु ति वुच्चति निरयो। तस्मि गलन्ती[2] ति **पुग्गला**। गच्छन्ती ति अत्थो। **अत्तभावो** वुच्चति सरीर, खन्धपञ्चक-मेव वा, त उपादाय पञ्ञत्तिमत्तसम्भवतो। तस्मि अत्तभावे परियापन्ना ति **अत्तभावपरियापन्ना**। परियापन्ना ति परिच्छिन्ना, अन्तोगधा ति अत्थो।

---

१. **सत्वयोगतो** ति मरम्मपाठो। एत्थ सत्व नाम बुद्धि विरियं तेजो वा, तेन योगतो सत्ता। यथा "नीलगुणयोगतो नीलो पटो" ति।

२ **गलन्ति**। चवन्ती ति अत्थो।

३८. यथा च सत्ता ति वचनं, एवं सेसानि पि रूळ्हिवसेन आरोपेत्वा सब्बानेतानि सब्बसत्तवेवचनानी ति वेदितब्बानि। कामं च अञ्ञानि पि सब्बे जन्तू सब्बे जीवा ति आदानि सब्बसत्तवेवचनानि अत्थि, पाकटवसेन पन इमानेव पञ्च गहेत्वा "पञ्चहाकारेहि अनोधिसोफरणा मेत्ता चेतोविमुत्ती" ति वुत्तं।

ये पन, सत्ता पाणा ति आदीन न केवल वचनमत्ततो व, अथ खो अत्थतो पि नानत्तमेव इच्छेय्युं, तेस अनोधिसोफरणा विरुज्झति, तस्मा तथा अत्थं अगहेत्वा इमेसु पञ्चसु आकारेसु अञ्ञतरवसेन अनोधिसो मेत्ता फरितब्बा।

३९ एत्थ च 'सब्बे सत्ता अवेरा होन्तू' ति अयमेका अप्पना। 'अब्यापज्झा होन्तू' ति अयमेका अप्पना। **अब्यापज्झा** ति। ब्यापादरहिता। 'अनीघा होन्तू' ति अयमेका अप्पना। **अनीघा** ति। निद्दुक्खा। 'सुखी अत्तान परिहरन्तू' ति अयमेका अप्पना। तस्सा इमेसु पि पदेसु य यं पाकट होति, तस्स तस्स वसेन मेत्ता फरितब्बा। इति पञ्चसु आकारेसु चतुन्न अप्पनान वसेन अनोधिसोफरणे वीसति अप्पना होन्ति।

ओधिसोफरणे पन सत्तसु आकारेसु चतुन्न वसेन अट्ठवीसति। एत्थ च, इत्थियो पुरिसा ति लिङ्गवसेन वुत्तं। अरिया अनरिया ति अरियपुथुज्जनवसेन। देवा मनुस्सा विनिपातिका ति उपपत्तिवसेन।

दिसाफरणे पन 'सब्बे पुरत्थिमाय दिसाय सत्ता' ति आदिना नयेन एकमेकिस्सा दिसाय वीसति वीसति कत्वा द्वेसतानि। 'सब्बा पुरत्थिमाय दिसाय इत्थियो' ति आदिना नयेन एकमेकिस्सा दिसाय अट्ठवीसति अट्ठवीसति कत्वा असीति द्वेसतानी ति चत्तारि सतानि असीति च अप्पना। इति सब्बानि पि **पटिसम्भिदायं** वुत्तानि अट्ठवीसाधिकानि पञ्च अप्पनासतानी ति।

इति एतासु अप्पनासु यस्स कस्सचि वसेन मेत्तं चेतोविमुत्तिं भावेत्वा अयं योगावचरो "सुख सुपती" ति आदिना नयेन वुत्ते एकादसानिसंसे पटिलभति।

४० तत्थ **सुखं सुपती** ति। यथा सेसा जना सम्परिवत्तमाना काकच्छमाना दुक्खं सुपन्ति, एव असुपित्वा सुखं सुपति। निद्द ओक्कन्तो पि समापत्तिं समापन्नो विय होति। (१)

सुखं पटिबुज्झती ति। तथा अञ्ञे नित्थुनन्ता विजम्भन्ता सम्परिवत्तन्ता दुक्ख पटिबुज्झन्ति, एवं अप्पटिबुज्झित्वा विकसमानमिव पदुमं सुखं निब्बिकारं पटिबुज्झति। (२)

न पापकं सुपिनं पस्सती ति। सुपिनं पस्सन्तो पि भद्दकमेव सुपिनं पस्सति, चेतियं वन्दन्तो विय पूजं करोन्तो विय धम्मं सुणन्त विय च होति। यथा पन अञ्ञे अत्तानं चोरेहि सम्परिवारितं विय वाळेहि उपद्दुतं विय पपाते पतन्तं विय च पस्सन्ति, एवं पापकं सुपिनं न पस्सति। (३)

मनुस्सानं पियो होती ति। उरे आमुत्तमुत्ताहारो विय सीसे पिळन्धमाना विय च मनुस्सानं पियो होति मनापो। (४)

अमनुस्सानं पियो होती ति। यथेव मनुस्सानं, एव अमनुस्सानं पियो होति, विसाखत्थेरो विय। सो किर पाटलिपुत्ते कुटुम्बियो अहोसि। सो तत्थेव वसमानो अस्सोसि—"तम्बपण्णिदीपो किर चेतियमालालङ्कतो कासावपज्जोतो इच्छितिच्छितट्ठाने येव एत्थ सक्का निसीदितु वा निपज्जितु वा, उतुसप्पायं सेनासनसप्पायं पुग्गलसप्पायं धम्मसवनसप्पाय ति सब्बमेत्थ सुलभ" ति।

सो अत्तनो भोगक्खन्धं पुत्तदारस्स निय्यादेत्वा दसन्ते[1] बद्धेन एककहापणेनेव घरा निक्खमित्वा समुद्दतीरे नावं उदिक्खमानो एकमास वसि। सो वोहार-कुसलताय इमस्मिं ठाने भण्डं किणित्वा असुकस्मिं विक्किणन्तो धम्मिकाय वणिजाय तेनेवन्तरमासेन सहस्सं अभिसंहरि। अनुपुब्बेन महाविहार आगन्त्वा पब्बज्ज याचि।

सो पब्बाजनत्थाय सीम नीतो तं सहस्सत्थविक ओवट्टिकन्तरेन भूमियं पातेसि। 'किमेतं' ति च वुत्ते "कहापणसहस्स, भन्ते" ति वत्वा "उपासक, पब्बजितकालतो पट्ठाय न सक्का विचारेतुं, इदानेवेत विचारेही" ति वुत्ते "विसाखस्स पब्बज्जट्ठानं आगता मा रित्तहत्था गमिसू" ति मुञ्चित्वा सीमामाळके विप्पकिरित्वा पब्बजित्वा उपसम्पन्नो।

सो पञ्चवस्सो हुत्वा द्वे मातिका पगुणा कत्वा पवारेत्वा अत्तनो सप्पायं कम्मट्ठानं गहेत्वा एकेकस्मिं विहारे चत्तारो मासे कत्वा समप्पवत्तावासं वसमानो चरि। एव चरमानो—

वनन्तरे ठितो थेरो विसाखो गज्जमानको।
अत्तनो गुणमेसन्तो इममत्थ अभासथ॥
"यावता उपसम्पन्नो यावता इध आगतो।
एत्थन्तरे खलितं नत्थि अहो लाभा ते, मारिसा" ति॥

सो चित्तलपब्बतविहारं गच्छन्तो द्वेधापथं पत्वा "अय नु खो मग्गो उदाहु अयं" ति चिन्तयन्तो अट्ठासि। अथस्स पब्बते अधिवत्था देवता हत्थ पसारेत्वा "एस मग्गो" ति वत्वा दस्सेसि।

सो चित्तलपब्बतविहारं गन्त्वा तत्थ चत्तारो मासे वसित्वा "पच्चूसे गमिस्सामी" ति चिन्तेत्वा निपज्जि। चङ्कमसीसे मणिलरुक्खे अधिवत्था देवता सोपानफलके निसीदित्वा परोदि। थेरो "को एसो" ति आह। "अहं, भन्ते,

---

१. दसा व अन्तो बसन्तो। वत्थस्स ओसानन्तो।

मणिलिया" ति। "किस्स रोदसी" ति? "तुम्हाकं गमनं पटिच्चा" ति। "मयि इध वसन्ते तुम्हाक को गुणो" ति? "तुम्हेसु, भन्ते, इध वसन्तेसु अमनुस्सा अञ्ञमञ्ञ मेत्त पटिलभन्ति, ते दानि तुम्हेसु गतेसु कलहं करिस्सन्ति दुट्ठुल्लं पि कथयिस्सन्ती" ति। थेरो "सचे मयि इध वसन्ते तुम्हाकं फासुविहारो होति, सुन्दरं" ति वत्वा अञ्ञे पि चत्तारो मासे तत्थेव वसित्वा पुन तथेव गमनचित्तं उप्पादेसि। देवता पि पुन तथेव परोदि। एतेनेव उपायेन थेरो तत्थेव वसित्वा तत्थेव परिनिब्बायी ति। एवं मेत्ताविहारी भिक्खु अमनुस्सानं पियो होति। (५)

देवता रक्खन्ती ति। पुत्तमिव मातापितरो देवता रक्खन्ति। (६)

नास्स अग्गि वा विसं वा सत्थं वा कमती ति। मेत्ताविहारिस्स काये उत्तराय उपासिकाय विय अग्गि वा, संयुत्तभाणकचूळसिवत्थेरस्सेव विसं वा, सङ्किच्चसामणेरस्सेव सत्थं वा न कमति, न पविसति। नास्स काय विकोपेती ति वुत्तं होति।

धेनुवत्थु पि चेत्थ कथयन्ति। एका किर धेनु वच्छकस्स खीरधारं मुञ्चमाना अट्ठासि। एको लुद्दको 'तं विज्झिस्सामी' ति हत्थेन सम्परिवत्तेत्वा दीघदण्डसत्तिं मुञ्चि। सा तस्सा सरीरं आहच्च तालपण्णं विय पवट्टमाना गता, नेव उपचारबलेन, न अप्पनाबलेन, केवलं वच्छके बलवपियचित्तताय। एवंमहानुभावा मेत्ता ति। (७)

तुवटं चित्तं समाधियती ति। मेत्ताविहारिनो खिप्पमेव चित्तं समाधियति, नत्थि तस्स दन्धायितत्त। (८)

मुखवण्णो विप्पसीदती ति। बन्धना पवुत्तं तालपक्कं विय चस्स विप्पसन्नवण्णं मुख होति। (९)

असम्मूळ्हो कालं करोती ति। मेत्ताविहारिनो सम्मोहमरण नाम नत्थि, असम्मूळ्हो व निद्दं ओक्कमन्तो विय कालं करोति। (१०)

उत्तरिं अप्पटिविज्झन्तो ति। मेत्तासमापत्तितो उत्तरिं अरहत्तं अधिगन्तुं असक्कोन्तो इतो चवित्वा सुत्तप्पबुद्धो विय ब्रह्मलोकं उपज्जती ति॥ (११)

अयं मेत्ताभावनाय वित्थारकथा॥

करुणाभावनाकथा

५१. करुणं[१] भावेतुकामेन पन निक्करुणताय आदीनवं करुणाय च आनिसंसं पच्चवेक्खित्वा करुणाभावना आरभितब्बा। तं च पन आरभन्तेन

१. करुणं ति। करुणाब्रह्मविहारं।

पठमं पियपुग्गलादीसु न आरभितब्बा। पियो हि पियट्ठाने येव तिट्ठति। अतिप्पियसहायको अतिपियसहायकट्ठाने येव, मज्झत्तो मज्झत्तट्ठाने येव, अप्पियो अप्पियट्ठाने येव, वेरी वेरिट्ठाने येव तिट्ठति। लिङ्गविसभाग-कालङ्कता अखेत्तमेव।

५२ कथं च भिक्खु करुणासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति? सेय्यथापि नाम एकं पुग्गल दुग्गत दुरुपेतं दिस्वा करुणायेय्य, एवमेव सब्बसत्ते करुणाय फरती" (अभि० २-३२८) ति **विभङ्गे** वुत्तत्ता सब्बपठमं ताव किञ्चिदेव करुणायितब्बरूपं परमकिच्छप्पत्तं दुग्गतं दुरुपेतं कपणपुरिसं छिन्नाहारं कपालं पुरतो ठपेत्वा अनाथसालाय निसिन्नं हत्थपादेहि पग्घरन्तकिमिगण अट्टस्सरं करोन्तं दिस्वा—"किच्छं वताय सत्तो आपन्नो, अप्पेव नाम इमम्हा दुक्खा मुच्चेय्या" ति करुणा पवत्तेतब्बा। त अलभन्तेन सुखितो पि पापकारी पुग्गलो वज्झेन उपमेत्वा करुणायितब्बो।

५३. कथं? सेय्यथापि सह भण्डेन गहितं चोरं "वधेथ नं" ति रञ्ञो आणाय राजपुरिसा बन्धित्वा चतुक्के चतुक्के पहारसतानि देन्ता आघातनं नेन्ति। तस्स मनुस्सा खादनीय पि भोजनीयं पि मालागन्धविलेपनतम्बूलानि पि देन्ति। किञ्चापि सो तानि खादन्तो चेव परिभुञ्जन्तो च सुखितो भोगसमप्पित्तो विय गच्छति, अथ खो तं नेव कोचि "सुखितो अयं महाभोगो" ति मञ्ञति। अञ्ञदत्थु "अयं वराको इदानि मरिस्सति, यं यदेव हि अय पद निक्खिपति, तेन तेन सन्तिके मरणस्स होती" ति तं जनो करुणायति। एवमेव करुणाकम्मट्ठानिकेन भिक्खुना सुखितो पि पुग्गलो एवं करुणायितब्बो—"अयं वराको किञ्चापि इदानि सुखितो सुसज्जितो भोगे परिभुञ्जति, अथ खो तीसु द्वारेसु एकेना पि कतस्स कल्याणकम्मस्स अभावा इदानि अपायेसु अनप्पकं दुक्खं दोमनस्स पटिसंवेदिस्सती" ति।

५४. एवं त पुग्गलं करुणायित्वा ततो परं एतेनेव उपायेन[1] पियपुग्गले, ततो मज्झत्ते, ततो वेरिम्ही—ति अनुक्कमेन करुणा पवत्तेतब्बा।

सचे पनस्स पुब्बे वुत्तनयेनेव (विसु० २४४) वेरिम्हि पटिघ उप्पज्जति, तं मेत्ताय वुत्तनयेनेव वूपसमेतब्बं। यो पि चेत्थ कतकुसलो होति, त पि ञातिरोगभोगब्यसनादीनं अञ्ञतरेन ब्यसनेन समन्नागतं दिस्वा वा सुत्वा वा तेसं अभावे पि वट्टदुक्खं अनतिक्कन्तत्ता "दुक्खितो व अयं" ति एव सब्बथा पि करुणायित्वा वुत्तनयेनेव—अत्तनि, पियपुग्गले, मज्झत्ते, वेरिम्ही ति चतुसु जनेसु सीमासम्भेदं

१. **एतेनेव उपायेना** ति। येन विधिना एतरहि यथावुत्ते परमकिच्छापन्ने आयतिं वा दुक्खभागिम्हि पुग्गले करुणायितुं करुणा उप्पादिता, एतेनेव नयेन।

कत्वा तं निमित्त आसेवन्तेन भावेन्तेन बहुलीकरोन्तेन मेत्तायं वुत्तनयेनेव[1] तिकचतुक्कज्झानवसेन अप्पना वड्ढेतब्बा।

अङ्गुत्तरट्ठकथायं पन "पठमं वेरिपुग्गलो करुणायितब्बो, तस्मिं चित्तं मुदुं कत्वा दुग्गतो, ततो पियपुग्गलो, ततो अत्ता" ति अयं कमो वुत्तो। सो "दुग्गतं दुरुपेत" ति पाळिया न समेति। तस्मा वुत्तनयेनेवेत्थ भावनं आरभित्वा सीमासम्भेदं कत्वा अप्पना वड्ढेतब्बा। ततो परं, पञ्चहाकारेहि अनोधिसो फरणा, सत्तहाकारेहि ओधितो फरणा, दसहाकारेहि दिसाफरणा ति अयं विकुब्बना, "सुखं सुपती" ति आदयो आनिसंसा च मेत्तायं वुत्तनयेनेव वेदितब्बा ति।

अयं करुणाभावनाय वित्थारकथा॥

मुदिताभावनाकथा

५५ मुदिताभावनं आरभन्तेनापि न पठमं पियपुग्गलादीसु आरभितब्बा। न हि पियो पियभावमत्तेनेव मुदिताय पदट्ठानं होति, पगेव मज्झत्तवेरिनो। लिङ्गविसभाग-कालङ्कता अखेत्तमेव।

५६. अतिप्पियसहायको पन सिया पदट्ठानं यो **अट्ठकथायं** सोण्डसहायो[2] ति वुत्तो। सो हि मुदितमुदितो व होति, पठमं हसित्वा पच्छा कथेति, तस्मा सो वा पठमं मुदिताय फरितब्बो, पियपुग्गल वा सुखितं सज्जितं मोदमान दिस्वा वा सुत्वा वा "मोदति वतायं सत्तो, अहो साधु अहो सुट्ठू" ति मुदिता उप्पादेतब्बा। इममेव हि अत्थवसं पटिच्च **विभङ्गे** वुत्तं—"कथं च भिक्खु मुदितासहगतेन चेतसा एक दिसं फरित्वा विहरति? सेय्यथापि नाम एकं पुग्गल पिय मनापं दिस्वा मुदितो अस्स, एवमेव सब्बे सत्ते मुदिताय फरती" (अभि० २–३३०) ति।

५७ सचे पिस्स सो सोण्डसहायो वा पियपुग्गलो वा अतीते सुखितो अहोसि, सम्पति पन दुग्गतो दुरुपेतो, अतीतमेव चस्स सुखितभावं अनुस्सरित्वा "एस अतीते एवं महाभोगो महापरिवारो निच्चप्पमुदितो अहोसी" ति तमेवस्स मुदिताकार गहेत्वा मुदिता उप्पादेतब्बा। "अनागते वा पन पुन तं सम्पत्तिं लभित्वा हत्थिक्खन्ध-अस्सपिट्ठि-सुवण्णसिविकादीहि विचरिस्सती" ति अनागतं पिस्स मुदिताकार गहेत्वा मुदिता उप्पादेतब्बा।

५८. एवं पियपुग्गले मुदितं उप्पादेत्वा, अथ मज्झत्ते, ततो वेरिम्ही ति अनुक्कमेन मुदिता पवत्तेतब्बा। सचे पनस्स पुब्बे वुत्तनयेनेव वेरिम्हि पटिघं उप्पज्जति, तं मेत्तायं वुत्तनयेनेव वूपसमेत्वा इमेसु च तीसु अत्तनि चा ति

---

१. मेत्ताभावनाकथायं पिट्ठे।वुत्तेन नयेन।

२. सोण्डसहायो ति। अतिप्पियसहायो, न तु सुरापानसहायो।

चतूसु समचित्तताय सीमसाम्भेदं कत्वा तं निमित्तं आसेवन्तेन भावेन्तेन बहुली-करोन्तेन मेत्तायं वुत्तनयेनेव तिकचतुक्कज्झानवसेन अप्पना वड्ढेतब्बा। ततो पर "पञ्चहाकारेहि अनोधिसो फरणा, सत्तहाकारेहि ओधिसो फरणा, दसहा-कारेहि दिसाफरणा" ति अयं विकुब्बना, "सुख सुपती" ति आदयो आनिसंसा च मेत्तायं वुत्तनयेनेव वेदितब्बा ति।

अयं मुदिताभावनाय वित्थारकथा॥

उपेक्खाभावनाकथा

५९ उपेक्खाभावन भावेतुकामेन पन मेत्तादीसु पटिलद्धतिकचतुक्कज्झानेन पगुणततियज्झाना वुट्ठाय "सुखिता होन्तू" ति आदिवसेन सत्ताकेलायनमन-सिकारयुत्तत्ता, पटिघानुनयसमीपचारित्ता, सोमनस्सयोगेन ओळारिकत्ता च पुरिमासु आदीनवं, सन्तसभावत्ता उपेक्खाय आनिसस च दिस्वा य्वास्स पकतिमज्झत्तो पुग्गलो, तं अज्झुपेक्खित्वा उपेक्खा उप्पादेतब्बा। ततो पियपुग्गलादीसु। वुत्तं हेतु—"कथं च भिक्खु उपेक्खासहगतेन चेतसा एकं दिस फरित्वा विहरति? सेय्यथापि नाम एक पुग्गल नेव मनाप न अमनाप दिस्वा उपेक्खको अस्स, एवमेव सब्बे सत्ते उपेक्खाय फरती" (अभि० २-३३१) ति।

६० तस्मा वुत्तनयेनेव मज्झत्तपुग्गले उपेक्ख उप्पादेत्वा अथ पियपुग्गले, ततो सोण्डसहायके, ततो वेरिम्ही ति एव इमेसु च तीसु अत्तनि चा ति सब्बत्थ मज्झत्तवसेन सीमासम्भेदं कत्वा तं निमित्त आसेवितब्ब भावेतब्ब बहुलीकातब्ब। तस्सेवं करोतो पथवीकसिणे वुत्तनयेनेव[1] चतुत्थज्झानं उप्पज्जति।

६१. किं पनेतं पथवीकसिणादीसु उप्पन्नततियज्झानस्सा पि उप्पज्जती ति? नुपज्जति। कस्मा? आरम्मणविसभागताय। मेत्तादिसु उप्पन्नततियज्झानस्सेव पन उप्पज्जति, आरम्मणसभागताया ति। ततो परा पन विकुब्बना च आनिसंस-पटिलाभो च मेत्तायं वुत्तनयेनेव वेदितब्बो ति।

अयं उपेक्खाभावनाय वित्थारकथा॥

पकिण्णककथा

ब्रह्मुत्तमेन कथिते इमे ब्रह्मविहारे इति विदित्वा।
भिय्यो एतेसु अयं पकिण्णककथा पि विञ्ञेय्या॥

६२. एतासु हि मेत्ता-करुणा-मुदिता-उपेक्खासु अत्थतो ताव—१. मेज्जती[2] ति मेत्ता। सिनिय्हती ति अत्थो। मित्ते भवा, मित्तस्स वा एसा पवत्ती ति

---

१. "अयं समापत्ति आसन्नपीतिपच्चत्थिका" ति आदिना पथवीकसिणे वुत्तनयेन।

२. मेज्जती ति। धम्मतो अञ्ञस्स कत्तुनिवत्तनत्थ धम्ममेव कत्तारं कत्वा निद्दिसति।

मेत्ता। २ परदुक्खे सति साधूनं हदयकम्पनं करोती ति **करुणा**। किणाति वा परदुक्खं, हिंसति विनासेती ति करुणा। किरियति वा दुक्खितेसु, फरणवसेन पसारियती ति करुणा। ३. मोदन्ति ताय तसमङ्गिनो, सय वा मोदति, मोदनमत्तमेव वा तं ति **मुदिता**। ४. 'अवेरा होन्तू' ति आदिब्यापारपहानेन मज्झत्तभावूपगमेन च उपेक्खती ति **उपेक्खा**।

६३. लक्खणादितो पनेत्थ हिताकारप्पवत्तिलक्खणा मेत्ता, हितूपसहाररसा, आघातविनयपच्चुपट्ठाना, सत्तान मनापभावदस्सनपदट्ठाना। ब्यापादूपसमो एतिस्सा सम्पत्ति सिनेहसम्भवो विपत्ति। (क)

दुक्खापनयनाकारप्पवत्तिलक्खणा करुणा, परदुक्खासहनरसा, अविहिंसापच्चुपट्ठाना, दुक्खाभिभूतान अनाथभावदस्सनपदट्ठाना। विहिंसूपसमो तस्सा सम्पत्ति, सोकसम्भवो विपत्ति। (ख)

पमोदलक्खणा मुदिता, अनिस्सायनरसा[1], अरतिविघातपच्चुपट्ठाना, सत्तान सम्पत्तिदस्सनपदट्ठाना। अरतिवूपसमो तस्सा सम्पत्ति, पहाससम्भवो विपत्ति। (ग)

सत्तेसु मज्झत्ताकारप्पवत्तिलक्खणा उपेक्खा, सत्तेसु समभावदस्सनरसा, पटिघानुनयवूपसमपच्चुपट्ठाना, 'कम्मस्सका सत्ता, ते कस्स रुचिया सुखिता वा भविसन्ति, दुक्खतो वा मुच्चिस्सन्ति, पत्तसम्पत्तितो वा न परिहायिस्सन्ती' ति एवं पवत्तकम्मस्सकतादस्सनपदट्ठाना। पटिघानुनयवूपसमो तस्सा सम्पत्ति, गेहसिताय अञ्ञाणुपेक्खाय सम्भवो विपत्ति। (घ)

६४. चतुन्न पि पनेतेसं ब्रह्मविहारानं विपस्सनासुखं चेव भवसम्पत्ति च साधारणप्पयोजन, ब्यापादादिपटिघातो आवेणिकं। ब्यापादपटिघातप्पयोजना हेत्थ मेत्ता, विहिंसाअरतिरागपटिघातप्पयोजना इतरा। वुत्त पि चेतं— "निस्सरणं हेतं, आवुसो, व्यापादस्स, यदिद मेत्ता चेतोविमुत्ति पे॰ निस्सरणं हेतं आवुसो, विहेसाय, यदिद करुणा चेतोविमुत्ति... पे॰ निस्सरण हेतं, आवुसो, अरतिया, यदिद मुदिता चेतोविमुत्ति ...निस्सरण हेतं, आवुसो, रागस्स, यदिदं उपेक्खा चेतोविमुत्ती" (दी॰ ३–१९१) ति।

६५ एकमेकस्स चेत्थ आसन्न-दूरवसेन द्वे द्वे पच्चत्थिका। मेत्ताब्रह्मविहारस्स हि—समीपचारो विय पुरिसस्स सपत्तो, गुणदस्सनसभागताय रागो आसन्नपच्चत्थिको। सो लहु ओतारं लभति। तस्मा ततो सुट्ठु मेत्ता रक्खितब्बा। पब्बतादिगहननिस्सितो विय पुरिसस्स सपत्तो, सभागविसभागताय व्यापादो

१. अनिस्सायनरसा ति। इस्सायनस्स उसूयनस्स पटिपक्खभावकिच्चा।

दूरपच्चत्थिको। तस्मा ततो निब्भयेन मेत्तायितब्बं। मेत्तायिस्सति, कोपं च करिस्सती ति अट्ठानमेतं।

करुणाब्रह्मविहारस्स—"चक्खुविञ्ञेय्यानं रूपानं इट्ठानं कन्तानं मनापान मनोरमान लोकामिसपटिसयुत्तान अप्पटिलाभं वा अप्पटिलाभतो समनुपस्सतो पुब्बे वा पटिलद्धपुब्बं अतीतं निरुद्ध विपरिणत समनुस्सरतो उप्पज्जति दोमनस्सं, यं एवरूपं दोमनस्सं, इद वुच्चति गेहसित दोमनस्स" (म० ३–२९८) ति आदिना नयेन आगतं गेहसित[1] दोमनस्स विपत्तिदस्सनसभागताय आसन्न-पच्चत्थिक। सभागविसभागताय विहिंसा दूरपच्चत्थिका। तस्मा ततो निब्भयेन करुणायितब्ब। करुण च नाम करिस्सति, पाणि-आदीहि च विहेठयिस्सती ति अट्ठानमेत।

मुदिताब्रह्मविहारस्स—"चक्खुविञ्ञेय्यान रूपान इट्ठानं ·पे०····लोकामिस-पटिसयुत्तानं पटिलाभ वा पटिलाभतो समनुपस्सतो पुब्बे वा पटिलद्धपुब्ब अतीत निरुद्धं विपरिणत समनुस्सरतो उप्पज्जति सोमनस्स, य एवरूप सोमनस्स, इद वुच्चति गेहसित सोमनस्सं" (म० ३–२९८) ति आदिना नयेन आगत गेहसितं सोमनस्सं सम्पत्तिदस्सनसभागताय आसन्नपच्चत्थिक। सभाग-विसभागताय अरति दूरपच्चित्थिका। तस्मा ततो निब्भयेन मुदिता भावेतब्बा। पमुदितो च नाम भविस्सति, पन्तसेनासनेसु च अधिकुसलधम्मेसु[2] वा उक्कण्ठि-स्सती ति अट्ठानमेतं।

उपेक्खाब्रह्मविहारस्स पन—"चक्खुना रूपं दिस्वा उप्पज्जति उपेक्खा बालस्स मूळ्हस्स पुथुज्जनस्स अनोधिजिनस्स अविपाकजिनस्स अनादीनव-दस्साविनो अस्सुतवतो पुथुज्जनस्स, या एवरूपा उपेक्खा, रूपं सा नातिवत्तति, तस्मा सा उपेक्खा गेहसिता ति वुच्चती" (म० ३-३००) ति आदिना नयेन आगता गेहसिता अञ्ञाणुपेक्खा दोसगुण-अविचारणवसेन सभागत्ता आसन्नपच्चत्थिका। सभागविसभागताय राग-पटिघा दूरपच्चत्थिका। तस्मा ततो निब्भयेन उपेक्खि तब्ब। उपेक्खिस्सति च नाम रज्जिस्सति च पटिहञ्ञिस्सति चा ति अट्ठानमेत।

९६ सब्बेसं पि च एतेसं कत्तुकामतावच्छन्दो आदि, नीवरणादिविक्खभनं मज्झं, अप्पना परियोसानं, पञ्ञत्तिधम्मवसेन एको व सत्तो अनेके वा सत्ता आरम्मणं, उपचारे वा अप्पनाय वा पत्ताय आरम्मणवड्ढन।

तत्रायं वड्ढनक्कमो—यथा हि कुसलो कस्सको कसितब्बट्ठानं परिच्छिन्दित्वा कसति, एवं पठममेव एकं आवासं परिच्छिन्दित्वा तत्थ सत्तेसु 'इमस्मि आवासे

---

१. गेहसितं ति। कामगुणनिस्सितं।

२. अधिकुसलधम्मेसू ति। समथविपस्सनाधम्मेसु।

सत्ता अवेरा होन्तू' ति आदिना नयेन मेत्ता भावेतब्बा। तत्थ चित्तं मुदु कम्मनियं कत्वा द्वे आवासा परिच्छिन्दितब्बा। ततो अनुक्कमेन तयो, चत्तारो, पञ्च, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, एका रच्छा, उपड्ढगामो, गामो, जनपदो, रज्ज, एका दिसा ति एवं याव एकं चक्कवाळ, ततो वा पन भिय्यो तत्थ तत्थ सत्तेसु मेत्ता भावेतब्बा। तथा करुणादयो ति—अयमेत्थ आरम्मणवड्ढनक्कमो।

६७ यथा पन कसिणान निस्सन्दो आरुप्पा, समाधिनिस्सन्दो नेवसञ्ञाना-सञ्ञायतनं, विपस्सनानिस्सन्दो फलसमापत्ति, समथविपस्सनानिस्सन्दो निरोध-समापत्ति; एवं पुरिमब्रह्मविहारत्तयनिस्सन्दो एत्थ उपेक्खाब्रह्मविहारो। यथा हि थम्भे अनुस्सापेत्वा तुलासङ्घाट अनारोपेत्वा न सक्का आकासे कूटगोपानसियो ठपेतुं, एवं पुरिमेसु ततियज्झान विना न सक्का चतुत्थ भावेतु ति॥

६८. एत्थ सिया—कस्मा पनेता मेत्ताकरुणामुदिताउपेक्खा ब्रह्मविहारा ति वुच्चन्ति? कस्मा च चतस्सो व? को च एतासं कमो? अभिधम्मे च कस्मा अप्पमञ्ञा ति वुत्ता ति?

वुच्चते—सेट्ठट्ठेन ताव निद्दोसभावेन चेत्थ ब्रह्मविहारता वेदितब्बा। सत्तेसु सम्मापटिपत्तिभावेन हि सेट्ठा एते विहारा। यथा च ब्रह्मानो निद्दोसचित्ता विहरन्ति, एव एतेहि सम्पयुत्ता योगिनो ब्रह्मसमा हुत्वा विहरन्ती ति सेट्ठट्ठेन निद्दोसभावेन च ब्रह्मविहारा ति वुच्चन्ति।

६९. कस्मा चतस्सो वा? ति आदि पञ्हस्स पन इदं विसज्जन—

विसुद्धिमग्गादिवसा चतस्सो हितादिआकारवसा पनासं।
कमो पवत्तन्ति च अप्पमाणे ता गोचरे येन तदप्पमञ्ञा॥

एतासु हि यस्मा मेत्ता व्यापादबहुलस्स, करुणा विहेसाबहुलस्स, मुदिता अरतिबहुलस्स, उपेक्खा रागबहुलस्स विसुद्धिमग्गो। यस्मा च हितूपसंहार-अहितापनयन-सम्पत्तिमोदन-अनाभोगवसेन चतुब्बिधो येव सत्तेसु मनसिकारो। यस्मा च यथा माता दहर-गिलान-योब्बनप्पत्त-सकिच्चपसुतेसु चतूसु पुत्तेसु दहरस्स अभिवुड्ढिकामा होति, गिलानस्स गेलञ्ञापनयनकामा, योब्बनप्पत्तस्स योब्बनसम्पत्तिया चिरट्ठितिकामा, सकिच्चपसुतस्स किस्मिचि परियाये[1] अब्यावटा[2] होति; तथा अप्पमञ्ञाविहारिकेना पि सब्बसत्तेसु मेत्तादिवसेन भावेतब्बं। तस्मा इतो विसुद्धिमग्गादिवसा चतस्सो व अप्पमञ्ञा।

७०. यस्मा पन चतस्सो पेता भावेतुकामेन पठमं हिताकारप्पवत्तिवसेन सत्तेसु पटिपज्जितब्बं, हिताकारप्पवत्तिलक्खणा च मेत्ता। ततो एवं पत्थित-

---

१. परियाये ति। वारे, तस्मिं तस्मिं किच्चवसेन परिवत्तनक्कमे ति अत्थो।

२. अब्यावटा ति। अनुस्सुका।

हितानं सत्तानं दुक्खाभिभव दिस्वा वा सुत्वा वा सम्भावेत्वा वा दुक्खापनयनाकारप्पवत्तिवसेन, दुक्खापनयनाकारप्पवत्तिलक्खणा च करुणा। अथेवं पत्थित-हितानं पत्थितदुक्खापगमान च नेस सम्पत्ति दिस्वा सम्पत्तिपमोदनवसेन पमोदनलक्खणा च मुदिता। ततो परं पन कत्तब्बाभावतो अज्झुपेक्खकत्त-सङ्खातेन मज्झत्ताकारेन पटिपज्जितब्बं, मज्झत्ताकारप्पवत्तिलक्खणा च उपेक्खा। तस्मा इत्तो हितादिआकारवसा पनास पठमं मेत्ता वुत्ता, अथ करुणा, मुदिता, उपेक्खा ति—अय कमो वेदितब्बो।

७१ यस्मा पन सब्बापेता अप्परमाणे गोचरे पवत्तन्ति। अप्पमाणा हि सत्ता एतासं गोचरभूता। एकसत्तस्सा पि च एत्तके पदेसे मेत्तादयो भावेतब्बा ति एव पमाण अगहेत्वा सकलफरणवसेनेव पवत्ता ति। तेन वुत्त—

"विसुद्धिमग्गादिवसा चतस्सो हितादिआकारवसा पनासं।
कमो पवत्तन्ति च अप्पमाणे ता गोचरे येन तदप्पमञ्ञा" ति॥

७२ एव अप्पमाणगोचरताय एकलक्खणासु चापि एतासु पुरिमा तिस्सो तिकचतुक्कज्झानिका व होन्ति। कस्मा ? सोमनस्साविप्पयोगतो। कस्मा पनासं सोमनस्सेन अविप्पयोगो ति ? दोमनस्ससमुट्ठितानं व्यापादादीन निस्सरणत्ता। पच्छिमा पन अवसेस-एकज्झानिका व। कस्मा ? उपेक्खावेदनासम्पयोगतो। न हि सत्तेसु मज्झत्ताकारप्पवत्ता ब्रह्मविहारुपेक्खा उपेक्खावेदन विना वत्तती ति।

७३ यो पनेवं वदेय्य—यस्मा भगवता अट्ठकनिपाते चतूसु पि अप्पमञ्ञासु अविसेसेन वुत्तं—"ततो त्व, भिक्खु, इम समाधिं सवितक्कं पि सविचारं भावेय्यासि, अवितक्कं पि विचारमत्तं भावेय्यासि, अवितक्क पि अविचारं भावेय्यासि, सप्पीतिक पि भावेय्यासि, निप्पीतिकं पि भावेय्यासि, सातसहगतं पि भावेय्यासि, उपेक्खासहगत पि भावेय्यासी" (अं० ३-३८९) ति, तस्मा चतस्सो पि अप्पमञ्ञा चतुक्कपञ्चकज्झानिका ति ? सो मा हेवं तिस्स वचनीयो।

एवं हि सति कायानुपस्सनादयो पि चतुक्कपञ्चकज्झानिका सियुं। वेदनादीसु च पठमज्झानं पि नत्थि, पगेव दुतियादीनि। तस्मा ब्यञ्जनच्छायामत्तं गहेत्वा मा भगवन्त अब्भाचिक्खि, गम्भीर हि बुद्धवचनं। त आचरिये पयिरु-पासित्वा अधिप्पायतो गहेतब्ब।

७४ अयं हि तत्र अधिप्पायो—"साधु, मे, भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन धम्म देसेतु, यमहं भगवतो धम्मं सुत्वा एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरेय्य" ति एवं आयाचितधम्मदेसन किर तं भिक्खु यस्मा सो पुब्बे पि धम्मं

सुत्वा तत्थेव वसति, न समणधम्मं कातु गच्छति, तस्मा नं भगवा—"एवमेव पनिधेकच्चे मोघपुरिसा ममञ्ञेव अज्झेसन्ति, धम्मे च भासिते ममञ्ञेव अनुबन्धितब्ब मञ्ञन्ती" ति अपसादेत्वा पुन यस्मा सो अरहत्तस्स उपनिस्सय-सम्पन्नो, तस्मा न ओवदन्तो आह—"तस्मातिह ते, भिक्खु, एव सिक्खितब्ब—'अज्झत्तं मे चित्त ठित भविस्सति सुसण्ठित, न चुप्पन्ना पापका अकुसला धम्मा चित्त परियादाय ठस्सन्ती' ति। एव हि ते, भिक्खु, सिक्खितब्बं" ति।

७५ इमिना पनस्स आवादेन नियकज्झत्तावसेन चित्तेकग्गतामत्तो मूलसमाधि वुत्तो।

ततो "एत्तकेनेव सन्तुट्ठिं अनापज्जित्वा एव सो एव समाधि वड्ढेतब्बो" ति दस्सेतु "यतो खो ते भिक्खु अज्झत्त चित्त ठित होति सुसण्ठित, न चुप्पन्ना पापका अकुसला धम्मा चित्त परियादाय तिट्ठन्ति, ततो ते भिक्खु एवं सिक्खितब्ब—'मेत्ता मे चेतोविमुत्ति भाविता भविस्सति बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा, ति। एव हि ते, भिक्खु, सिक्खितब्ब" ति एवमस्स मेत्तावसेन भावन वत्वा पुन "यतो खो ते, भिक्खु, अय समाधि एव भावितो होति बहुलीकतो, ततो त्व भिक्खु इम मूलसमाधिं सवितक्क पि सविचारं भावेय्यासि पे० उपेक्खासहगत पि भावेय्यासी" ति वुत्त।

तस्सत्थो—यदा ते, भिक्खु, अय मूलसमाधि एव मेत्तावसेन भावितो होति, तदा त्व तावतकेना पि तुट्ठिं अनापज्जित्वा व इमं मूलसमाधिं अञ्ञेसु पि आरम्मणेसु चतुक्कपञ्चकज्झानानि पापयमानो सवितक्क पि सविचार ति आदिना नयेन भावेय्यासी ति।

७६. एव वत्वा च पुन करुणादिअवसेसब्रह्मविहारपुब्बङ्गमं पिस्स अञ्ञेसु आरम्मणेसु चतुक्कपञ्चकज्झानवसेन भावन करेय्यासी ति दस्सेन्तो—"यतो खो ते, भिक्खु, अय समाधि एव भावितो होति बहुलीकतो, ततो ते, भिक्खु, एव सिक्खितब्ब-करुणा मे चेतोविमुत्ती" ति आदिमाह।

७७. एव मेत्तादिपुब्बङ्गम चतुक्कपञ्चकज्झानवसेन भावनं दस्सेत्वा पुन कायानुपस्सनादिपुब्बङ्गम दस्सेतु "यतो खो ते, भिक्खु, अयं समाधि एव भावितो होति बहुलीकतो, ततो ते भिक्खु एव सिक्खितब्ब काये—कायानुपस्सी विहरिस्सामी" ति आदिं वत्वा "यतो खो ते, भिक्खु, अय समाधि एव भावितो भविस्सति सुभावितो, ततो त्वं भिक्खु येन येनेव गग्घसि[1], फासुञ्ञेव गग्घसि, यत्थ यत्थेव ठस्ससि फासुञ्ञेव ठस्ससि, यत्थ यत्थेव निसीदिस्ससि फासुञ्ञेव

---

१. गग्घसी ति। गमिस्ससि।

निसीदिस्ससि, यत्थ यत्थेव सेय्यं कप्पेस्ससि, फासुञ्ञेव सेय्य कप्पेस्ससी" ति ति अरहत्तनिकूटेन देसनं समापेसि। तस्मा तिकचतुक्कज्झानिका व मेत्तादयो, उपेक्खा पन अवसेसएकज्झानिका वा ति वेदितब्बा। तथेव च **अभिधम्मे** (अभि० २-३३१) विभत्ता ति।

७८ एव तिकचतुज्झानवसेन चेव अवसेसएकज्झानवसेन च द्विधा ठितान पि एतासं सुभपरमादिवसेन अञ्ञमञ्ञं असदिसो आनुभावविसेसो वेदितब्बो। **हलिद्दवसनसुत्तस्मि** हि एता सुभपरमादिभावेन विसेसेत्वा वुत्ता। यथाह— "सुभपरमाह, भिक्खवे, मेत्तं, चेतोविमुत्ति वदामि · आकासानञ्चायतनपरमाह, भिक्खवे, करुण चेतोविमुत्ति वदामि · · विञ्ञाणञ्चायतनपरमाह, भिक्खवे, मुदित चेतोविमुत्ति वदामि ··आकिञ्चञ्ञायतनपरमाहं, भिक्खवे, उपेक्खं चेतोविमुत्ति वदामी" (स० ४-१०५) ति।

७९. कस्मा पनेता एवं वुत्ता ति? तस्स तस्स उपनिस्सयत्ता। मेत्ता-विहारिस्स हि सत्ता अप्पटिक्कूला होन्ति। अथस्स अप्पटिक्कूलपरिचया अप्पटिक्कूलेसु परिसुद्धवण्णेसु नीलादीसु चित्त उपसहरत्तो अप्पकसिरेनेव तत्थ चित्त पक्खन्दति। इति मेत्ता सुभविमोक्खस्स उपनिस्सयो होति, न ततो पर, तस्मा 'सुभपरमा' ति वुत्ता।

८० करुणाविहारिस्स दण्डाभिघातादिरूपनिमित्तं सत्तादुक्खं समनुपस्सन्तस्स करुणाय पवत्तिसम्भवतो रूपे आदीनवो परिविदित्तो होति। अथस्स परिविदित-रूपादीनवत्ता पथवीकसिणादीसु अञ्ञतरं उग्घाटेत्वा रूपनिस्सरणे आकासे चित्त उपसंहरत्तो अप्पकसिरेनेव तत्थ चित्त पक्खन्दति। इति करुणा आकासान-ञ्चायतनस्स उपनिस्सयो होति, न ततो पर, तस्मा 'आकासानञ्चायतन-परमा' ति वुत्ता।

८१. मुदिताविहारिस्स पन तेन तेन पामोज्जकारणेन उप्पन्नपामोज्जसत्तानं विञ्ञाण समनुपस्सन्तस्स मुदिताय पवत्तिसम्भवतो विञ्ञाणग्गहणपरिचित चित्त होति। अथस्स अनुक्कमाधिगतं आकासानञ्चायतनं अतिकम्म आकास-निमित्तगोचरे विञ्ञाणे चित्त उपसहरतो अप्पकसिरेनेव तत्थ चित्त पक्खदन्ती[1] ति मुदिता विञ्ञाणञ्चायतनस्स उपनियस्सयो होति, न ततो पर, तस्मा 'विञ्ञाणञ्चायतनपरमा' ति वुत्ता।

८२. उपेक्खाविहारिस्स पन "सत्ता सुखिता वा होन्तु, दुक्खतो वा विमुच्चन्तु सम्पत्तासुखतो वा मा विमुच्चन्तू" ति आभोगाभावतो सुखदुक्खादि-परमत्थगाहविमुखभावतो अविज्जमानग्गहणदुक्ख चित्तं होति। अथस्स परमत्थ-

१. **पक्खन्दती** ति। अनुपविसति, विमोक्खभावेन अप्पेति।

गाहतो विमुखभावपरिचित्तस्स परमत्थो अविज्जमानग्गहणदुक्खचित्तस्स च अनुक्कमाधिगत विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म सभावतो अविज्जमाने परमत्थभूतस्स विञ्ञाणस्स अभावे चित्त उपसंहरतो अप्पकसिरेनेव तत्थ चित्त पक्खन्दति । इति उपेक्खा आकिञ्चञ्ञायतनस्स उपनिस्सयो होति, न ततो परं, तस्मा 'आकिञ्चञ्ञायतनपरमा' ति वुत्ता ति ।

८३. एव सुभपरमादिवसेन एतास आनुभावं विदित्वा, पुन सब्बा पेता दानादीनं सब्बकल्याणधम्मानं परिपूरिका ति वेदितब्बा । सत्तेसु हि हितज्झासयताय सत्तान दुक्खासहनताय, पत्तसम्पत्तिविसेसान चिरट्ठितिकामताय, सब्बसत्तेसु च पक्खपाताभावेन समप्पवत्तचित्ता महासत्ता "इमस्स दातब्बं, इमस्स न दातब्ब" ति विभागं अकत्वा सब्बसत्तानं सुखनिदानं दान देन्ति । तेसं उपघातं परिवज्जयन्ता सीलं समादियन्ति । सीलपरिपूरणत्थ नेक्खम्मं भजन्ति । सत्तानं हिताहितेसु असम्मोहत्थाय पञ्ञ परियोदपेन्ति । सत्तान हितसुखत्थाय निच्चं विरियमारभन्ति । उत्तमविरियवसेन वीरभावं पत्ता पि च सत्तानं नानप्पकारक अपराध खमन्ति । "इद वो दस्साम, करिस्सामा" ति कतं पटिञ्ञ न विसंवादेन्ति । तेसं हितसुखाय अविचलाधिट्ठाना होन्ति । तेसु अविचलाय मेत्ताय पुब्बकारिनो होन्ति । उपेक्खाय पच्चुपकारं नासीसन्ती ति एव पारमियो पूरेत्वा याव दसबल-चतुवेसारज्ज-छअसाधारणञाण-अट्ठारसबुद्धधम्मप्पभेदे सब्बे पि कल्याणधम्मे परिपूरेन्ती ति एवं दानादिसब्बकल्याणधम्मपरिपूरिका एता व होन्ती ति ॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
समाधिभावनाधिकारे ब्रह्मविहारनिद्देसो नाम
नवमो परिच्छेदो ॥



आरुप्पनिद्देसो

दसमो परिच्छेदो

पठमारुप्प(आकासानञ्चायतन)कथा

१. ब्रह्मविहारानन्तर उद्दिट्ठेसु पन चतूसु आरुप्पेसु आकासानञ्चायतनं ताव भावेतुकामो "दिस्सन्ते खो पन रूपाधिकरण दण्डादान-सत्थादान-कलह-विग्गह-विवादा, नत्थि खो पनेत सब्बसो आरुप्पे ति। सो इति पटिसङ्खाय रूपानं येव निब्बिदाय विरागाय निरोधाय पटिपन्नो होती" (म० २-८८) ति वचनतो एतेसं दण्डादानादीनं चेव चक्खुसोतरोगादीनं च आबाधसहस्सानं वसेन करजरूपे[1] आदीनव दिस्वा तस्स समतिक्कमाय ठपेत्वा, परिच्छिन्ना-कासकसिणं, नवसु पथवीकसिणादीसु अञ्ञतरस्मि चतुत्थज्झान उप्पादेति।

२ तस्स किञ्चापि रूपावचरचतुत्थाज्झानवसेन करजरूप अतिक्कन्तं होति, अथ खो कसिणरूपं पि यस्मा तप्पटिभागमेव, तस्मा त पि समतिक्क-मितुकामो होति।

कथ ? यथा अहिभीरुको पुरिसो अरञ्ञे सप्पेन अनुबद्धो वेगेन पलायित्वा पलातट्ठाने लेखाचित्त तालपण्णं वा वल्लि वा रज्जुं वा फलिताय वा पन पथविया फालितन्तर[2] दिस्वा भायतेव उत्तसतेव, नेव नं दक्खितुकामो होति। यथा च अनत्थकारिना वेरिपुरिसेन सद्धि एकगामे वसमानो पुरिसो तेन वधबन्धगेहज्झापनादीहि उपद्दुतो अञ्ञ गामं वसनत्थाय गन्त्वा तत्रापि वेरिना समानरूपमद्दसमुदाचारं पुरिसं दिस्वा भायतेव उत्तसतेव, नेव नं दक्खितु-कामो होति।

३ तत्रिद ओपम्मससन्दनं—तेसं हि पुरिसानं अहिना वेरिना वा उपद्दुतकालो विय भिक्खुनो आरम्मणवसेन करजरूपसमङ्गिकालो। तेस वेगेन पलायन-अञ्ञगामगमनानि विय भिक्खुनो रूपावचरचतुत्थज्झानवसेन करजरूप-समतिक्कमनकालो। तेसं पलातट्ठाने च अञ्ञगामे च लेखाचित्ततालपण्णादीनि चेव वेरिसदिसं पुरिसं च दिस्वा भयसन्तासअदस्सनकामता विय भिक्खुनो कसिणरूप पि तप्पटिभागमेव इद ति सल्लक्खेत्वा त पि समतिक्कमितुकामता। सूकराभिहतसुनख-पिसाचभीरुकादिका पि चेत्थ उपमा वेदितब्बा।

---

१. करजरूपे ति। करं = कम्मं, तेन समुट्ठिते रूपे। कम्मजरूपेत्यत्थो।

२. फालितन्तरं ति। अञ्ञं विवरं। दिस्वा ति। दूरतो दिस्वा।

४ एवं सो[1] तस्मा चतुत्थज्झानस्स आरम्मणभूता कसिणरूपा निब्बिज्ज पक्कमितुकामो पञ्चहाकारेहि चिण्णवसी हुत्वा पगुणरूपावचरचतुत्थज्झानतो वुट्ठाय तस्मिं झाने—"इमं मया निब्बिण्ण रूपं आरम्मण करोती" ति च, "आसन्नसोमनस्स पच्चत्थिकं" ति च, "सन्तविमोक्खतो ओळारिकं" ति च आदीनवं पस्सति। अङ्गोळारिकता पनेत्थ नत्थि। यथेव हेत रूप दुवङ्गिकं, एव आरुप्पानि पी ति।

५. सो तत्थ एवं आदीनवं दिस्वा निकन्ति परियादाय आकासानञ्चायतनं सन्ततो अनन्ततो मनसिकरित्वा चक्कवाळपरियन्त वा यत्तकं इच्छति तत्तकं वा कसिणं पत्थरित्वा तेन फुट्ठोकासं "आकासो आकासो" ति वा, "अनन्तो आकासो" ति वा मनसिकरोन्तो उग्घाटेति। कसिण उग्घाटेन्तो हि नेव किलञ्ज विय सवेल्लेति, न कपालतो पूवं विय उद्धरति। केवलं पन तं नेव आवज्जेति, न मनसि करोति, न पच्चवेक्खति। अनावज्जेन्तो अमनसिकरोन्तो अप्पच्चवेक्खन्तो च, अञ्ञदत्थु तेन फुट्ठोकास "आकासो आकासो" ति मनसिकरोन्तो कसिण उग्घाटेति नाम।

कसिणं पि उग्घाटियमानं नेव उब्बट्टति न विवट्टति। केवलं इमस्स अमनसिकारं च "ओकासो आकासो" ति मनसिकारं च पटिच्च उग्घाटित नाम होति, कसिणुग्घाटिमाकासत्त पञ्ञायति। कसिणुग्घाटिमाकास ति वा कसिणफुट्ठोकासो ति वा कसिणविवित्ताकासं ति वा, सब्बमेतं एकमेव।

६. सो तं कसिणुग्घाटिमाकासनिमित्तं "आकासो आकासो" ति पुनप्पुनं आवज्जेति, तक्काहतं वितक्काहतं करोति। तस्सेवं पुनप्पुनं आवज्जयतो तक्काहतं वितक्काहतं करोतो नीवरणानि विक्खम्भन्ति, सति सन्तिट्ठति, उपचारेन चित्तं समाधियति। सो तं निमित्त पुनप्पुनं आसेवति, भावेति, बहुलीकरोति।

तस्सेव पुनप्पुनं आवज्जयतो मनसिकरोतो पथवीकसिणादीसु रूपावचरचित्तं विय आकासे आकासानञ्चायतनचित्तं अप्पेति। इधा पि हि पुरिमभागे तीणि चत्तारि वा जवनानि कामावचरानि उपेक्खावेदनासम्पयुत्तानेव होति, चतुत्थं पञ्चमं वा अरूपावचर। सेसं पथवीकसिणे वुत्तनयमेव[2]।

७. अयं पन विसेसो—एवं उप्पन्ने अरूपावचरचित्ते सो भिक्खु यथा नाम

---

१. सो ति। योगावचरो।

२. पथवीकसिणनिद्देसे पठमज्झानकथायं चतुत्थज्झानकथायं च।

यानप्पुतोळि-कुम्भिमुखादीनं[१] अञ्ञतरं नीलपिलोतिकाय वा पीतलोहितोदातादीनं वा अञ्ञतराय पिलोतिकाय बन्धित्वा पेक्खमानो पुरिसो वातवेगेन वा अञ्ञेन वा केनचि अपनीताय पिलोतिकाय आकासं येव पेक्खमानो तिट्ठेय्य, एवमेव पुब्बे कसिणमण्डलं झानचक्खुना पेक्खमानो विहरित्वा "आकासो आकासो" ति इमिना परिकम्ममनसिकारेन सहसा अपनीते तस्मि निमित्ते आकासं येव पेक्खमानो विहरति ।

एत्तावता **चेस "सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरती"** (अभि० २-२९५) ति वुच्चति ।

८. तत्थ **सब्बसो** ति । सब्बाकारेन, सब्बास वा अनवसेसान ति अत्थो । **रूपसञ्ञानं** ति । सञ्ञासीसेन वुत्तरूपावचरज्झानान चेव तदारम्मणानं च । रूपावचरज्झान पि रूपं ति वुच्चति "रूपी रूपानि पस्सती" (दी० २-५६) ति आदीसु । तस्स आरम्मण पि "बहिद्धा रूपानि पस्सति सुवण्णदुब्बण्णानी" (दी० २-८६) ति आदिसु । तस्मा इध रूपे सञ्ञा रूपसञ्ञा ति एव सञ्ञासीसेन वुत्तरूपावचरज्झानस्सेतं अधिवचन । रूप सञ्ञा अस्सा ति रूपसञ्ञ । रूपं अस्स नाम ति वुत्त होति । पथवीकसिणादिभेदस्स तदारम्मणस्स चेत अधिवचनं ति वेदितब्ब ।

समतिक्कमा ति । विरागा निरोधा च । किं वुत्त होति ? एतासं कुसलविपाककिरियवसेन पञ्चदसन्न झानसङ्खातानं रूपसञ्ञानं, एतेस च पथवीकसिणादिवसन नवन्नं आरम्मणसङ्खातानं रूपसञ्ञानं सब्बाकारेन अनवसेसानं वा विरागा च निरोधा च विरागहेतु चेव निरोधहेतु च आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति । न हि सक्का सब्बसो अनतिक्कन्तरूपसञ्ञेन एतं उपसम्पज्ज विहरितु ति ।

९. तत्थ यस्मा आरम्मणे अविरत्तस्स सञ्ञासमतिक्कमो न होति, समतिक्कन्तासु च सञ्ञासु आरम्मणं समतिक्कन्तमेव होति । तस्मा आरम्मणसमतिक्कम अवत्वा "तत्थ कतमा रूपसञ्ञा ? रूपावचरसमापत्ति समापन्नस्स वा उपपन्नस्स वा दिट्ठधम्मसुखविहारिस्स वा सञ्ञा सञ्जानना सञ्जानितत्तं, इमा वुच्चन्ति रूपसञ्ञायो । इमा रूपसञ्ञायो अतिक्कन्तो होति वीतिक्कन्तो समतिक्कन्तो, तेन वुच्चति सब्बसो रूपसञ्ञान समतिक्कमा" (अभि० २-३१४)

---

१. **यानप्पुतोळि-कुम्भिमुखादीनं** ति । ओगुण्ठनसिविकादियानानं मुख यानमुखं, पुतोळिया खुद्दकद्वारस्स मुखं पुतोळिमुखं, कुम्भिमुख ति पच्चेक मुख-सद्दो सम्बन्धितब्बो । पतोळिया रथिकाय मुखं पतोळिमुखं वा ।

ति एव **विभङ्गे** सञ्ञान येव समतिक्कमो वुत्तो। यस्मा पन आरम्मणसमतिक्कमेन पत्तब्बा एता समापत्तियो, न एकस्मि येव आरम्मणे पठमज्झानादीनि विय। तस्मा अय आरम्मणसमतिक्कमवसेना पि अत्थवण्णना कता ति वेदितब्बा।

१०. **पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा** ति। चक्खादीनं वत्थूनं रूपादीनं आरम्मणानं च पटिघातेन समुप्पन्ना सञ्ञा पटिघसञ्ञा। रूपसञ्ञादीनं एतं अधिवचन। यथाह—"तत्थ कतमा पटिघसञ्ञा ? रूपसञ्ञा सद्दसञ्ञा गन्धसञ्ञा रससञ्ञा फोट्ठब्बसञ्ञा, इमा वुच्चन्ति पटिघसञ्ञायो" (अभि० २–३१४) ति। तास कुसलविपाकान पञ्चन्न, अकुसलविपाकान पञ्चन्नं ति सब्बसो दसन्नं पि पटिघसञ्ञान अत्थङ्गमा पहाना असमुप्पादा। अप्पवत्तिं कत्वा ति वुत्त होति।

कामं चेता पठमज्झानादीनि समापन्नस्सा पि न सन्ति। न हि तस्मिं समये पञ्चद्वारवसेन चित्तं पवत्तति। एव सन्ते पि अञ्ञत्थ पहीनानं सुखदुक्खानं चतुत्थज्झाने विय, सक्कायदिट्ठादीनं ततियमग्गे विय च इमस्मिं झाने उस्साह-जननत्थं इमस्स झानस्स पसंसावसेन एतासं एत्थ वचनं वेदितब्बं।

११ अथ वा किञ्चापि ता रूपावचरं समापन्नस्सा पि न सन्ति, अथ खो न पहीनत्ता न सन्ति। न हि रूपविरागाय रूपावचरभावना संवत्तति, रूपायत्ता च एतासं[1] पवत्ति। अयं पन भावना रूपविरागाय संवत्तति। तस्मा ता एत्थ[2] पहीना ति वत्तु वट्टति। न केवलं च वत्तु, एकंसेनेव एवं धारेतुं पि वट्टति।

तासं हि इतो पुब्बे अप्पहीनत्ता येव पठम झानं समापन्नस्स "सद्दो कण्टको" (अं० ४–२०६) ति वुत्तो भगवता। इध च पहीनत्ता येव अरूपसमापत्तीनं आनेञ्जता (अभि० २–१७३) सन्तविमोक्खता (म० १–४५) च वुत्ता। **आळारो** च कालामो अरूपसमापन्नो पञ्चमत्तानि सकसतानि निस्साय अतिक्क-मन्तानि नेव अद्दस, न पन सद्दं अस्सोसी (दी० २–१०१) ति।

१२. **नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा** ति। नानत्ते वा गोचरे पवत्तानं सञ्ञानं, नानत्तानं वा सञ्ञानं। यस्मा हि एता "तत्थ कतमा नानत्तसञ्ञा ? असमा-पन्नस्स मनोधातुसमङ्गिस्स वा मनोविञ्ञाणधातुसमङ्गिस्स वा सञ्ञा सञ्जानना सञ्जानितत्तं, इमा वुच्चन्ति नानत्तसञ्ञायो" (अभि० २–३१४) ति एवं **विभङ्गे** विभजित्वा वुत्ता इध[3] अधिप्पेता असमापन्नस्स मनोधातुमनोविञ्ञाण-धातुसङ्गहिता सञ्ञा रूपसद्दादिभेदे नानत्ते नानासभावे गोचरे पवत्तन्ति, यस्मा चेता अट्ठ कामावचरकुसलसञ्ञा, द्वादस अकुलसञ्ञा, एकादस कामावचर-कुसलविपाकसञ्ञा, द्वे अकुसलविपाकसञ्ञा, एकादश कामावचरकिरियसञ्ञा

१. **एतासं** ति। पटिघसञ्ञानं। २. **एत्था** ति पठमारुप्पकथायं।

३. **इधा** ति। अरूपज्झाने।

ति एव चतुचत्तालीस पि सञ्ञा नानत्ता नानासभावा अञ्ञमञ्ञ असदिसा, तस्मा नानत्तसञ्ञा ति वुत्ता। तासं सब्बसो नानत्तसञ्ञान अमनसिकारा अनावज्जना असमन्नाहारा अपच्चवेक्खणा। यस्मा ता नावज्जेति, न मनसि करोति, न पच्चवेक्खति, तस्मा ति वुत्त होति।

यस्मा चेत्थ पुरिमा रूपसञ्ञा पटिघसञ्ञा च इमिना झानेन निब्बत्ते भवे पि न विज्जन्ति, पगेव तस्मि भवे इमं झानं उपसम्पज्ज विहरणकाले, तस्मा तासं समतिक्कमा अत्थङ्गमा ति द्वेधा पि अभावो येव वुत्तो। नानत्तसञ्ञासु पन यस्मा अट्ठ कामावचरकुसलसञ्ञा, नव किरियसञ्ञा, दसाकुसलसञ्ञा— ति इमा सत्तावीसतिसञ्ञा इमिना झानेन निब्बत्ते भवे विज्जन्ति, तस्मा तास अमनसिकारा ति वुत्तं ति वेदितब्ब। तत्रा पि हि इम झान उपसम्पज्ज विहरन्तो तास अमनसिकारा येव उपसम्पज्ज विहरति, ता पन मनसिकरोन्तो असमापन्नो होती ति।

१३. सङ्खेपतो चेत्थ "रूपसञ्ञानं समतिक्कमा" ति इमिना सब्बरूपावचर-धम्मानं पहान वुत्त। "पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा, नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा" ति इमिना सब्बेस कामावचरचित्तचेतसिकानं पहान च अमनसिकारो च वुत्तो ति वेदितब्बो।

१४. **अनन्तो आकासो** ति। एत्थ नास्स उप्पादन्तो वा वयन्तो वा पञ्ञायती ति अनन्तो। आकासो ति कसिणुग्घाटिमाकासो[1] वुच्चति। मनसिकारवसेना पि चेत्थ अनन्तता वेदितब्बा। तेनेव **विभङ्गे** वुत्त—"तस्मि आकासे चित्तं ठपेति, सण्ठपेति, अनन्त फरति, तेन वुच्चति अनन्तो आकासो' (अभि० २-३१५) ति।

आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरती ति। एत्थ पन नास्स अन्तो ति अनन्तं, आकासं अनन्तं आकासानन्तं, आकासानन्तमेव आकासानञ्चं। तं आकासानञ्चं अधिट्ठानट्ठेन आयतनमस्स ससम्पयुत्तधम्मस्स झानस्स देवानं देवायतनमिवा ति आकासानञ्चायतनं। **उपसम्पज्ज विहरती ति** आकासा-नञ्चायतनं पत्वा निप्फादेत्वा तदनुरूपेन इरियापथविहारेन विहरति॥

अयं आकासानञ्चायतनकम्मट्ठाने वित्थारकथा॥

दुतियारुप्प(विञ्ञाणञ्चायतन)कथा

१५. विञ्ञाणञ्चायतनं भावेतुकामेन पन पञ्चहाकारेहि आकासानञ्चाय-

---

१ अजटाकास-परिच्छिन्नाकासानं इध अनधिपेतत्ता **"आकासो ति कसिणुग्घाटिमा-कासो वुच्चती"** ति आह। कसिणं उग्घाटियति एतेना ति कसिणुग्घाटो, तदेव **कसिणुग्घाटिमं**।

तनसमापत्तियं चिण्णवसीभावेन[1] "आसन्नरूपावचरज्झानपच्चत्थिका अयं समापत्ति, नो च विञ्ञाणञ्चायतनमिव सन्ता" ति आकासानञ्चायतने आदीनवं दिस्वा तत्थ निकन्ति परियादाय विञ्ञाणञ्चायतनं सन्ततो मनसिकरित्वा तं आकासं फरित्वा पवत्तविञ्ञाणं "विञ्ञाणं विञ्ञाणं" ति पुनप्पुनं आवज्जितब्बं, मनसिकातब्बं, पच्चवेक्खितब्बं, तक्काहतं वितक्काहतं कातब्बं। "अनन्तं अनन्तं" ति पन न मनसिकातब्बं।

१६ तस्सेवं तस्मिं निमित्ते पुनप्पुनं चित्तं चारेन्तस्स नीवरणानि विक्खम्भन्ति, सति सन्तिट्ठति, उपचारेन चित्तं समाधियति। सो तं निमित्तं पुनप्पुनं आसेवति, भावेति, बहुलीकरोति। तस्सेवं करोतो आकासे आकासानञ्चायतनं विय आकासफुटे विञ्ञाणे विञ्ञाणञ्चायतनचित्तं अप्पेति। अप्पनानयो पनेत्थ वुत्तनयेनेव वेदितब्बो।

एत्तावता चेस "**सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म अनन्तं विञ्ञाणं ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरतो**" (अभि० २–३९५) ति वुच्चति।

१७ **तत्थ सब्बसो** ति इदं वुत्तनयमेव। **आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्मा** ति एत्थ पन पुब्बे वुत्तनयेनेव झानं पि आकासानञ्चायतनं, आरम्मणं पि। आरम्मणं पि हि पुरिमनयेनेव आकासानञ्चं च तं पठमस्स आरुप्पज्झानस्स आरम्मणत्ता देवानं देवायतनं विय अधिट्ठानट्ठेन आयतनं चा ति आकासानञ्चायतनं। तथा आकासानञ्चं च तं तस्स झानस्स सञ्जातिहेतुत्ता "कम्बोजा अस्सानं आयतनं" ति आदीनि विय सञ्जातिदेसट्ठेन आयतनं चा ति पि आकासानञ्चायतनं। एवमेतं, झानं च आरम्मणं चा ति उभयं पि अप्पवत्तिकरणेन च अमनसिकरणेन च समतिक्कमित्वा व यस्मा इदं विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहातब्बं, तस्मा उभयं पेतं एकज्झं कत्वा "आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्मा" ति इदं वुत्तं ति वेदितब्बं।

१८. **अनन्तं विञ्ञाणं** ति। तं येव 'अनन्तो आकासो' ति एवं फरित्वा पवत्तविञ्ञाणं। "अनन्तं विञ्ञाणं" ति एवं मनसिकरोन्तो ति वुत्तं होति। मनसिकारवसेन वा अनन्तं। सो हि तं आकासारम्मणं विञ्ञाणं अनवसेसतो मनसिकरोन्तो "अनन्तं" ति मनसिकरोति।

यं पन **विभङ्गे** वुत्तं—"अनन्तं विञ्ञाणं ति तं येव आकासं विञ्ञाणेन फुटं मनसिकरोति, अनन्तं फरति, तेन वुच्चति अनन्तं विञ्ञाणं" (अभि० २–३१५) ति। तत्थ 'विञ्ञाणेना' ति उपयोगत्थे करणवचनं वेदितब्बं। एवं हि **अट्ठकथा-**

---

१. चिण्णो चरितो पगुणीकतो आवज्जनादिलक्खणो वसीभावो एतेना ति चिण्णवसीभावो, तेन चिण्णवसीभावेन।

चरिया तस्स अत्थ वण्णयन्ति। अनन्तं फरति, तं येव आकासं फुटं विञ्ञाणं मनसिकरोती ति वुत्तं होति।

विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरती ति। एत्थ पन नास्स अन्तो ति अनन्त, अनन्तमेव आनञ्च, विञ्ञाण आनञ्च विञ्ञाणानञ्च ति अवत्वा विञ्ञाणञ्च ति वुत्त। अयं हेत्थ रूळ्हिसद्दो। त विञ्ञाणञ्चं अधिट्ठानट्ठेन आयतनमस्स ससम्पयुत्तधम्मस्स झानस्स देवान देवायतनमिवा ति विञ्ञाण-ञ्चायतनं। सेस पुरिमसदिसमेवा ति॥

अय विञ्ञाणञ्चायतनकम्मट्ठाने वित्थारकथा॥

ततियारुप्प(आकिञ्चञ्ञायतन)कथा

१९ आकिञ्चञ्ञायतन भावेतुकामेन पन पञ्चहाकारेहि विञ्ञाण-ञ्चायतनसमापत्तिय चिण्णवसीभावेन "आसन्नआकासानञ्चायतनपच्चत्थिका अय समापत्ति, नो च आकिञ्चञ्ञायतनमिव सन्ता" ति विञ्ञाणञ्चायतने आदानव दिस्वा तत्थ निकन्ति परियादाय आकिञ्चञ्ञायतन सन्ततो मनसि-करित्वा तस्सेव विञ्ञाणञ्चायतनारम्मणभूतस्स आकासानञ्चायतनविञ्ञाणस्स अभावो सुञ्ञता विवित्ताकारो मनसिकातब्बो।

कथं? त विञ्ञाण अमनसिकरित्वा "नत्थि नत्थी" ति वा, "सुञ्ञं सुञ्ञ" ति वा, "विवित्त विवित्त" ति वा पुनप्पुनं आवज्जितब्बं, मनसिकातब्बं, पच्चवेक्खितब्ब, तक्काहतं वितक्काहतं कातब्ब।

२०. तस्सेव तस्मिं निमित्ते चित्त चारेन्तस्स नीवरणानि विक्खम्भन्ति, सति सन्तिट्ठति, उपचारेन चित्त समाधियति। सो तं निमित्तं पुनप्पुनं आसेवति, भावेति, बहुलीकरोति। तस्सेवं करोतो आकासे फुटे महग्गतविञ्ञाणे विञ्ञाण चायतन विय तस्सेव आकासं फरित्वा पवत्तस्स महग्गतविञ्ञाणस्स सुञ्ञविवित्तनत्थिभावे आकिञ्चञ्ञायतनचित्तं अप्पेति। एत्था पि च अप्पनानयो वुत्तनयेनेव वेदितब्बो।

२१. अयं पन विसेसो—तस्मिं हि अप्पनाचित्ते उप्पन्ने सो भिक्खु यथा नाम पुरिसो मण्डलमालादीसु केनचिदेव करणीयेन सन्निपतित भिक्खुसङ्घं दिस्वा कत्थचि गन्त्वा सन्निपातकिच्चावसाने व उट्ठाय पक्कन्तेसु भिक्खूसु आगन्त्वा द्वारे ठत्वा पुन तं ठान ओलोकेन्तो सुञ्ञमेव पस्सति, विवित्तमेव पस्सति, नास्स एवं होति—"एत्तका नाम भिक्खू कालङ्कता वा दिसापक्कन्ता वा" ति, अथ खो सुञ्ञमिदं विवित्तं ति नत्थिभावमेव पस्सति; एवमेव पुब्बे आकासे पवत्तितविञ्ञाणं विञ्ञाणञ्चायतनज्झानचक्खुना पस्सन्तो विहरित्वा "नत्थि

नत्थी[1]" ति आदिना परिकम्ममनसिकारेन अन्तरहिते तस्मिं विञ्ञाणे तस्स अपगमसङ्खातं अभावमेव पस्सन्तो विहरति।

एत्तावता चेस "**सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म नत्थि किञ्ची ति आकिञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरती**" (अभि० २–३९५) ति वुच्चति।

२२. इधा पि **सब्बसो** ति। इदं वुत्तनयमेव। **विञ्ञाणञ्चायतनं** ति। एत्था पि च पुब्बे वुत्तनयेनेव झानं पि विञ्ञाणञ्चायतनं, आरम्मण पि। आरम्मणं पि हि पुरिमनयेनेव विञ्ञाणञ्चं च तं, दुतियस्स आरुप्पज्झानस्स आरम्मणत्ता देवानं देवायतनं विय अधिट्ठानट्ठेन आयतन चा ति विञ्ञाणञ्आयतनं। तथा विञ्ञाण च त तस्सेव झानस्स सञ्जातिहेतुत्ता "कम्बोजा अस्सान आयतन" ति आदीनि विय सञ्जातिदेसट्ठेन आयतनं चा ति पि विञ्ञाणञ्चायतनं। एवमेत झान च आरम्मण चा ति उभयं पि अप्पवत्तिकरणेन च अमनसिकरणेन च समतिक्कमित्वा व यस्मा इद आकिञ्चञ्ञातन उपसम्पज्ज विहातब्ब, तस्मा उभयं पेतं एकज्झ कत्वा "विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्मा" ति इद वुत्त ति वेदितब्ब।

नत्थि किञ्ची ति। नत्थि नत्थि, सुञ्ञ सुञ्ञ, विवित्त विवित्तं ति एव मनसिकरोन्तो ति वुत्त हाति। य पि **विभङ्गे** वुत्तं—"नत्थि किञ्ची ति तं येव विञ्ञाणं अभावेति विभावेति अन्तरधापेति, नत्थि किञ्ची ति पस्सति, तेन वुच्चति—नत्थि किञ्ची' ति, तं किञ्चापि खयतो सम्मसनं विय वुत्त, अथ ख्वस्स एवमेव अत्थो दट्ठब्बो। तं हि विञ्ञाणं अनावज्जेन्तो अमनसिकरोन्तो अपच्चवेक्खन्तो केवलमस्स नत्थिभावं सुञ्ञभावं विवित्तभावमेव मनसिकरोन्तो अभावेति विभावेति अन्तरधापेती ति वुच्चति, न अञ्ञथा ति।

आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरती ति। एत्थ पन नास्स किञ्चनं ति अकिञ्चनं। अन्तमसो भङ्गमत्त पि अस्स अवसिट्ठ नत्थी ति वुत्तं होति। अकिञ्चनस्स भावो आकिञ्चञ्ञं। आकासानञ्चायतनविञ्ञाणापगमस्सेत अधिवचनं। तं आकिञ्चञ्ञं अधिट्ठानट्ठेन आयतनमस्स झानस्स देवान देवायतनमिवा ति आकिञ्चञ्ञायतनं। सेस पुरिमसदिसमेवा ति॥

अयं आकिञ्चञ्ञायतनकम्मट्ठाने वित्थारकथा॥

चतुत्थारुप्प(नेवसञ्ञानासञ्ञायतन)कथा

२३. नेवसञ्ञासञ्ञायतन भावेतुकामेन पन पञ्चहाकारेहि आकिञ्चञ्ञायतनसमापत्तिय चिण्णवसोभावेन "आसन्नविञ्ञाणञ्चायतनपच्चत्थिका अय

१. नत्थि नत्थी ति। आमेडितवचनं भावनाकारदस्सनं।

समापत्ति, नो च नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं विय सन्ता" ति वा "सञ्ञा रोगो, सञ्ञा गण्डो, सञ्ञा सल्लं, एतं सन्तं, एत पणीत यदिद नेवसञ्ञानासञ्ञा" (म० ३-२३) ति वा एवं आकिञ्चञ्ञायतने आदीनव, उपरि आनिसंस च दिस्वा आकिञ्चञ्ञायतने निकन्ति परियादाय नेवसञ्ञानासञ्ञायतन सन्ततो मनसिकरित्वा सा व अभाव आरम्मण कत्वा पवत्तिता आकिञ्चञ्ञायतन-समापत्ति "सन्ता सन्ता" ति पुनप्पुन आवज्जितब्बा, मनसिकातब्बा, पच्चवेक्खितब्बा, तक्काहता वितक्काहता कातब्बा।

२३. तस्सेव तस्मिं निमित्ते पुनप्पुनं मानस चारेन्तस्स नीवरणानि विक्खम्भन्ति, सति सन्तिट्ठति, उपचारेन चित्त समाधियति। सो तं निमित्तं पुनप्पुनं आसेवति, भावेति, बहुलीकरोति। तस्सेवं करोतो विञ्ञाणापगमे आकिञ्चञ्ञायतनं विय आकिञ्चञ्ञायतनसमापत्तिसङ्खातेसु चतूसु खन्धेसु नेवसञ्ञानासञ्ञायतनचित्त अप्पेति। अप्पनानयो पनेत्थ वुत्तनयेनेव वेदितब्बो।

एत्तावता चेच **"सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरती"** (अभि० २-३९५) ति वुच्चति।

२५ इधा पि **सब्बसो** ति। इद वुत्तनयमेव। **आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्मा** ति। एत्था पि पुब्बे वुत्तनयेनेव झानं पि आकिञ्चञ्ञायतन, आरम्मण पि। आरम्मण पि हि पुरिमनयेनेव आकिञ्चञ्ञ च त, ततियस्स आरुप्पज्झानस्स आरम्मणत्ता देवान देवायतन विय अधिट्ठानट्ठेन आयतन चा ति आकिञ्चञ्ञायतन। तथा आकिञ्चञ्ञं च त, तस्सेव झानस्स सञ्जातिहेतुत्ता "कम्बोजा अस्सान आयतन" ति आदीनि विय सञ्जातिदेसट्ठेन आयतन चा ति पि आकिञ्चञ्ञायतनं। एवमेतं झानं च आरम्मण चा ति उभयं पि अप्पवत्तिकरणेन च अमनसिकरणेन च समतिक्कमित्वा व यस्मा इद नेवसञ्ञानासञ्ञायतन उपसम्पज्ज विहातब्ब, तस्मा उभयं पेतं एकज्झं कत्वा आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्मा ति इद वुत्त ति वेदितब्बं।

२६. **नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं** ति। एत्थ पन याय सञ्ञाय भावतो त नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं ति वुच्चति। यथा पटिपन्नस्स सा सञ्ञा होति, त ताव दस्सेतु **विभङ्गे**—"नेवसञ्ञीनासञ्ञी" ति उद्धरित्वा "तं येव आकिञ्चञ्ञायतनं सन्ततो मनसि करोति, सङ्खारावसेससमापत्तिं भावेति, तेन वुच्चति—नेवसञ्ञीनासञ्ञी" (अभि० २-३१६) ति वुत्तं। तत्थ **सन्ततो मनसि करोती** ति। "सन्ता वताय समापत्ति, यत्र हि नाम नत्थिभाव पि आरम्मणं करित्वा ठस्सती" ति एवं सन्तारम्मणताय तं सन्ता ति मनसि करोति।

सन्ततो चे मनसि करोति, कथं समतिक्कमो होती ति? असमापज्जितुकामताय। सो हि किञ्चापि तं सन्ततो मनसिकरोति, अथ ख्वस्स "अहमेत

आवज्जिस्सामि, समापज्जिस्सामि, अधिट्ठहिस्सामि, वुट्ठहिस्सामि, पच्चवेक्खिस्सामी" ति एस आभोगो समन्नाहारो मनसिकारो न होति। कस्मा ? आकिञ्चञ्ञायतनतो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनस्स सन्ततर-पणीततरताय।

२८. यथा हि राजा महच्च राजानुभावेन[1] हत्थिक्खन्धवरगतो नगरवीथियं विचरन्तो दन्तकारादयो सिप्पिके एकं वत्थं दळ्हं निवासेत्वा एकेन सीसं वेठेत्वा दन्तचुण्णादीहि समोकिण्णगत्ते अनेकानि दन्तविकतिआदीनि सिप्पानि करोन्ते दिस्वा "अहो वत रे छेका आचरिया ईदिसानि पि नाम सिप्पानि करिस्सन्ती" ति एव तेस छेकताय तुस्सति, न चस्स एवं होति—"अहो वताहं रज्ज पहाय एवरूपो सिप्पिको भवेय्यं" ति। त किस्स हेतु ? रज्जसिरिया महानिससताय। सो सिप्पिनो समतिक्कमित्वा व गच्छति। एवमेव एस किञ्चापि त समापत्ति सन्ततो मनसिकरोति, अथ ख्वस्स—"अहमेतं समापत्ति आवज्जिस्सामि, समापज्जिस्सामि, अधिट्ठहिस्सामि, वुट्ठहिस्सामि, पच्चवेक्खिस्सामी" ति नेव आभोगो समन्नाहारो मनसिकारो होति।

सो तं सन्ततो मनसिकरोन्तो पुब्बे वुत्तनयेन तं परमसुखुम अप्पनापत्त सञ्ञं पापुणाति, याय नेवसञ्ञीनासञ्ञा नाम होति, सङ्खारावसेससमापत्ति भावेतोति वुच्चति। **सङ्खारावसेससमापत्ति** ति। अच्चन्तसुखुमभावप्पत्तसङ्खार चतुत्थारुप्पसमापत्ति।

२९. इदानि य त एव अधिगताय सञ्ञाय वसेन **नेवसञ्ञानासञ्ञायतन** ति वच्चति, तं अत्थतो दस्सेतु—"नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं ति नेवसञ्ञानासञ्ञायतन समापन्नस्स वा उपपन्नस्स वा दिट्ठधम्मसुखविहारिस्स वा चित्तचेतसिका धम्मा" (अभि० २–३१६) ति वुत्त। तेसु इध समापन्नस्स चित्तचेतसिका धम्मा अधिप्पेता।

वचनत्थो पनेत्थ ओळारिकाय सञ्ञाय अभावतो सुखुमाय च भावतो नेवस्स ससम्पयुत्तधम्मस्स झानस्स सञ्ञा नासञ्ञा ति नेवसञ्ञानासञ्ञं। नेवसञ्ञानासञ्ञं च तं, मनायतनधम्मायतनपरियापन्नत्ता आयतन चा ति नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं।

अथवा यायमेत्थ सञ्ञा, सा पटुसञ्ञाकिच्च कातु असमत्थताय नेव सञ्ञा, सङ्खारावसेससुखुमभावेन विज्जमानत्ता नासञ्ञा ति नेवसञ्ञानासञ्ञा। नेवसञ्ञानासञ्ञा[2] च सा सेसधम्मानं अधिट्ठानट्ठेन आयतनं चा ति नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं।

१. महता च राजानुभावेना त्यत्थो।

२. **नेवसञ्ञा** ति एत्थ न-कारो अभावत्थो। **नासञ्ञं** ति एत्थ न-कारो अञ्ञत्थो, अ-कारो अभावत्थो व, असञ्ञं अनसञ्ञं चा ति अत्थो।

३०. न केवलं चेत्थ सञ्ञा व एदिसी, अथ खो वेदना पि नेववेदनानावेदना, चित्तं पि नेवचित्तंनाचित्त, फस्सो पि नेवफस्सोनाफस्सो। एस नयो सेससम्पयुत्त-धम्मेसु। सञ्ञासोसेन पनायं देसना कता ति वेदितब्बा।

पत्तमक्खनतेलप्पभूतीहि च उपमाहि एस अत्थो विभावेतब्बो—

सामणेरो किर तेलेन पत्तं मक्खेत्वा ठपेसि। त यागुपानकाले थेरो "पत्तमाहारा" ति आह। सो "पत्ते तेलमत्थि, भन्ते" ति आह। ततो "आहर, सामणेर, तेलं, नाळि पूरेस्सामी" ति वुत्ते "नत्थि, भन्ते, तेलं" ति आह। तत्थ यथा अन्तोवुत्थत्ता यागुया सद्धि अकप्पियट्ठेन "तेलमत्थी" ति होति, नाळि-पूरणादीनं वसेन "नत्थी" ति होति। एवं सा पि सञ्ञा पटुमञ्ञाकिच्च कातु असमत्थताय नेवसञ्ञा, सङ्खारावसेससुखुमभावेन विज्जमानत्ता नासञ्ञा होति।

३१ किं पनेत्थ सञ्ञाकिच्च ति? आरम्मणमञ्जानन चेव विपस्सनाग्र च विसयभाव उपगन्त्वा निब्बिदाजननं। दहनकिच्चमिव हि सुखोदके तेजोधातु सञ्जाननकिच्चं पेसा पटु कातु न सक्कोति। सेससमापत्तीसु सञ्ञा विय विपस्सनाय विसयभावं उपगन्त्वा निब्बिदाजनन पि कातु न सक्कोति।

अञ्ञेसु हि खन्धेसु अकताभिनिवेसो भिक्खु नेवसञ्ञानासञ्ञायतनक्खन्धे सम्मसित्वा निब्बिद पत्तु समत्थो नाम नत्थि, अपि च आयस्मा सारिपुत्तो। पकतिविपस्सको पन महापञ्ञो सारिपुत्तसदिसो व सक्कुणेय्य। सो पि—"एव किरिमे धम्मा अहुत्वा सम्भोन्ति, हुत्वा पटिवेन्ती" (म० ३-९१) ति एवं कलापसम्मसनवसेनेव, नो अनुपदधम्मविपस्सनावसेन। एवं सुखुमत्तं गता एसा समापत्ति।

३२ यथा च पत्तमक्खनतेलूपमाय, एवं मग्गुदकूपमाय पि अयमत्थो विभावे-तब्बो—

मग्गप्पटिपन्नस्स किर थेरस्स पुरतो गच्छन्तो सामणेरो थोकमुदकं दिस्वा—"उदकं, भन्ते, उपाहना ओमुञ्चथा" ति आह। ततो थेरेन "सचे उदकमत्थि आहार न्हानसाटिकं, न्हायिस्सामा" ति वुत्ते "नत्थि, भन्ते' ति आह। तत्थ यथा उपाहनतेमनमत्तट्ठेन "उदकं अत्थी" ति होति, न्हायनट्ठेन "नत्थी" ति होति; एवं पि सा पटुसञ्ञाकिच्च कातूं असमत्थताय नेवसञ्ञा, सङ्खारावसेससुखुमभावेन विज्जमानत्ता नासञ्ञा होति।

न केवलं च एताहेव, अञ्ञाहि पि अनुरूपाहि उपमाहि एस अत्थो विभावेतब्बो।

उपसम्पज्ज विहरती ति। इदं वुत्तनयमेवा ति॥

अयं नेवसञ्ञानासञ्ञायतनकम्मट्ठाने वित्थारकथा॥

पकिण्णककथा

३३. असदिसरूपो नाथो आरुप्प यं चतुब्बिधं आह।
तं इति[1] ञत्वा तस्मिं[2] पकिण्णककथा पि विञ्ञेय्या ॥

३४. आरुप्पसमापत्तियो हि—

आरम्मणातिक्कमतो चतस्सो पि भवन्तिमा।
अङ्गातिक्कममेतास न इच्छन्ति विभाविनो ॥

एतासु हि रूपनिमित्तातिक्कमतो पठमा, आकासातिक्कमतो दुतिया, आकासे पवत्तितविञ्ञाणातिक्कमतो ततिया, आकासे पवत्तितविञ्ञाणस्स अपगमातिक्कमतो चतुत्थी ति सब्बथा आरम्मणातिक्कमतो चतस्सो पि भवन्तिमा आरुप्पसमापत्तियो ति वेदितब्बा। अङ्गातिक्कम पन एतास न इच्छन्ति पण्डिता। न हि रूपावचरसमापत्तीसु विय एतासु अङ्गातिक्कमो अत्थि। सब्बासु पि हि एतासु—उपेक्खा, चित्तेकग्गता ति द्वे एव झानङ्गानि होन्ति।

३५. एवं सन्ते पि—

सुप्पणीततरा होन्ति पच्छिमा पच्छिमा इध।
उपमा तत्थ विञ्ञेय्या पासादतलसाटिका ॥

यथा हि चतुभूमिकस्स पासादस्स हेट्ठिमतले दिब्बनच्चगीतवादितसुरभिगन्धमालाभोजनसयनच्छादनादिवसेन पणीता पञ्चकामगुणा पच्चुपट्ठिता अस्सु। दुतिये ततो पणीततरा, ततिये ततो पणीततरा, चतुत्थे सब्बपणीततरा। तत्थ किञ्चापि तानि चत्तारि पि पासादतलानेव, नत्थि नेसं पासादतलभावेन विसेसो। पञ्चकामगुणसमिद्धविसेसेन पन हेट्ठिमतो हेट्ठिमतो उपरिम उपरिम पणीततरं होति। (१)

यथा च एकाय इत्थिया कन्तित-थूल-सण्ह-सण्हतर-सण्हतमसुत्तान चतुपलतिपल-द्विपल-एकपलसाटिका अस्सु, आयामेन च वित्थारेन च समप्पमाणा। तत्थ किञ्चापि ता साटिका चतस्सो पि आयामतो च वित्थारतो च समप्पमाणा, नत्थि तास पमाणतो विसेसो। सुखसम्फस्स-सुखुमभाव-महग्घभावेहि पन पुरिमाय पुरिमाय पच्छिमा पच्छिमा पणीततरा होन्ति। एवमेव किञ्चापि चतूसु एतासु उपेक्खा चित्तेकग्गता ति एतानि द्वे येव अङ्गानि होन्ति, अथ खो भावनाविसेसेन तेसं अङ्गानि पणीत-पणीततरभावेन सुप्पणीततरा होन्ति पच्छिमा पच्छिमा इधा ति वेदितब्बा। (२)

---

१. इती ति। एवं वुत्तप्पकारेन। २. तस्मिं ति आरुप्पे।

३६. एव अनुपुब्बेन पणीतपणीता चेता—

असुचिम्हि मण्डपे लग्गो एको त निस्सतो परो।
अञ्ञो बहि अनिस्साय तं तं निस्साय चापरो॥
ठितो चतूहि एतेहि पुरिसेहि यथाक्कम।
समानताय ञातब्बा चतस्सो पि विभाविना॥

तत्रायमत्थयोजना—असुचिम्हि किर देसे एको मण्डपो, अथेको पुरिसो आगन्त्वा त असुचिं जिगुच्छमानो त मण्डप हत्थेहि आलम्बित्वा तत्थ लग्गो लग्गितो विय अट्ठासि। अथापरो आगन्त्वा त मण्डपे लग्गं पुरिसं निस्सितो[1]। अथञ्ञो आगन्त्वा चिन्तेसि—"यो एस मण्डपलग्गो, यो च त निस्सितो, उभो पेते दुट्ठिता, धुवो नेस मण्डपपपाते पातो, हन्दाहं बहि येव तिट्ठामी" ति। सो तं निस्सितं अनिस्साय बहि येव अट्ठासि। अथापरो आगन्त्वा मण्डपलग्गस्स च तन्निस्सितस्स च अखेमभावं चिन्तेत्वा बहिट्ठितं च सुट्ठितो ति मन्त्वा तं निस्साय अट्ठासि।

तत्थ असुचिम्हि देसे मण्डपो विय कसिणुग्घाटिमाकासं दट्ठब्बं। असुचिजिगुच्छाय मण्डपलग्गो पुरिसो विय रूपनिमित्तजिगुच्छाय आकासारम्मण आकासानञ्चायतन। मण्डपलग्गं पुरिस निस्सितो विय आकासारम्मण आकासानञ्चायतनं आरब्भ पवत्त विञ्ञाणञ्चायतन। तेस द्विन्न पि अखेमभाव चिन्तेत्वा अनिस्साय त मण्डपलग्ग बहिट्ठितो विय आकासानञ्चायतन आरम्मण अकत्वा तदभावारम्मण आकिञ्चञ्ञायतन। मण्डपलग्गस्स तन्निस्सितस्स च अखेमतं चिन्तेत्वा बहिट्ठित च "सुट्ठितो" ति मन्त्वा तं निस्साय ठितो विय विञ्ञाणाभावसङ्खाते बहिपदेसे ठित आकिञ्चञ्ञायतन आरब्भ पवत्तं नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं दट्ठब्ब।

३७ एवं पवत्तमानं च—

आरम्मणं करोतेव अञ्ञाभावेन तं इदं।
दिट्ठदोस पि राजानं वुत्तिहेतु जनो यथा॥

"इदं हि नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं, आसन्नविञ्ञाणञ्चायतनपच्चत्थिका अयं समापत्ती" ति एव दिट्ठदोसं पि तं आकिञ्चञ्ञायतनं अञ्ञस्स आरम्मणस्स अभावा आरम्मण करोतेव। यथा किं? दिट्ठदोसं पि राजानं वुत्तिहेतु यथा जनो। यथा हि असंयतं फरुसकायवचीमनोसमाचारं किञ्चि सब्बदिसम्पतिं राजानं "फरुससमाचारो अयं" ति एवं दिट्ठदोस पि अञ्ञत्थ वुत्तिं[2] अलभमानो

---

१. निस्सितो ति। निस्साय ठितो। २. वुत्तिं ति। जीविकं।

जनो वुत्तिहेतु निस्साय वत्तति, एव दिट्ठदोसं पि तं आकिञ्चञ्ञायतनं अञ्ञं आरम्मणं अलभमानमिदं नेवसञ्ञानसञ्ञायतन आरम्मण करोतेव।

३८. एवं कुरुमानं च—

आरूळ्हो दीघनिस्सेणिं यथा निस्सेणिबाहुकं।
पब्बतग्गं च आरूळ्हो यथा पब्बतमत्थकं॥
यथा वा गिरिमारूळ्हो अत्तनो येव जण्णुकं।
ओलुब्भति, तथेवेत झानमोलुब्भ वत्तती ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
समाधिभावनाधिकारे आरुप्पनिद्देसो नाम
दसमो परिच्छेदो॥



समाधिनिद्देसो

एकादसमो परिच्छेदो

आहारेपटिक्कूलभावनाकथा

१ इदानि आरुप्पानन्तरं 'एका सञ्ञा' ति एवं उद्दिट्ठाय[1] आहारे पटिक्कूल-सञ्ञाय भावनानिद्देसो अनुप्पत्तो ।

तत्थ आहरती ति आहारो । सो चतुब्बिधो—कबळीकाराहारो, फस्साहारो, मनोसञ्चेतनाहारो, विञ्ञाणाहारो ति ।

२ को पनेत्थ किमाहरती ति ? **कबळीकाराहारो** ओजट्ठमकं रूप आहरति । **फस्साहारो** तिस्सो वदना आहरति । **मनोसञ्चेतनाहारो** तीसु भवेसु पटिसन्धि आहरति । **विञ्ञाणाहारो** पटिसन्धिक्खणे नामरूप आहरति ।

३ तेसु कबळीकाराहारे निकन्तिभय[2], फस्साहारे उपगमनभय, मनोसञ्चेतनाहारे उपपत्तिभय, विञ्ञाणाहारे पटिसन्धिभय । एव सप्पटिभयेसु च तेसु कबळीकाराहारो पुत्तमसूपमेन (सं० २–८३) दीपेतब्बो, फस्साहारो निच्चम्मगावूपमेन (स० २–८४), मनोसञ्चेतनाहारो अङ्गारकासूपमेन (स० २–८५), विञ्ञाणाहारो सत्तिसतूपमेना (स० २–८५) ति ।

४. इमेसु पन चतूसु आहारेसु असितपीतखायितसायितप्पभेदो कबळीकारो आहारो व इमस्मिं अत्थे आहारो ति अधिप्पेतो । तस्मिं आहारे पटिक्कूलाकारग्गहणवसेन उप्पन्ना सञ्ञा **आहारे पटिक्कूलसञ्ञा ।**

५. त आहारे पटिक्कूलसञ्ञं भावेतुकामेन कम्मट्ठानं उग्गहेत्वा उग्गहतो एकपद पि अविरज्झन्तेन रहोगतेन पटिसल्लीनेन असितपीतखायितसायितप्पभेदे कबळीकाराहारे दसहाकारेहि पटिक्कूलता पच्चवेक्खितब्बा । सेय्यथीद—१ गमनतो, २. परियेसनतो, ३. परिभोगतो, ४. आसयतो, ५. निधानतो, ६ अपरिपक्कतो, ७ परिपक्कतो, ८ फलतो, ९ निस्सन्दतो, १० सम्मक्खनतो ति ।

६ **तत्थ गमनतो** ति । एव महानुभावे नाम सासने पब्बजितेन सकलरत्तिं बुद्धवचनसज्झायं वा समणधम्म वा कत्वा कालस्सेव वुट्ठाय चेतियङ्गण-बोधियङ्गवत्त कत्वा पानीय परिभोजनीयं उपट्ठपेत्वा परिवण सम्मज्जित्वा सरीरं पटिजग्गित्वा आसनं आरुय्ह वीस-तिंसवारे कम्मट्ठान मनसिकरित्वा उट्ठाय

---

१. ततियपरिच्छेदे ति सेसो । २ **निकन्ति** = तण्हा, तं भय अनत्थावहतो ।

पत्तचीवरं गहेत्वा निज्जनसम्बाधानि[1] पविवेकसुखानि छायूदकसम्पन्नानि सुचीनि सीतलानि रमणीयभूमिभागानि तपोवननानि पहाय अरियं विवेकरतिं अनपेक्खित्वा सुसानाभिमुखेन सिङ्गालेन विय आहारत्थाय गामाभिमुखेन गन्तब्बं।

एवं गच्छता च मञ्चम्हा वा पीठम्हा वा ओतरणतो पट्ठाय पादरजघरगोलिकवच्चादिसम्परिकिण्णं पच्चत्थरणं अक्कमितब्बं होति। ततो अप्पेकदा मूसिकजतुकवच्चादीहि उपहतत्ता अन्तोगब्भतो पटिक्कूलतरं पमुखं दट्ठब्बं होति। ततो उलूक-पारावतादिवच्चसम्मक्खितत्ता उपरिमतलता पटिक्कूलतरं हेट्ठिमतलं। ततो कदाचि कदाचि वातेरितेहि पुराणतिणपण्णेहि गिलानसामणेरानं मुत्तकरीसखेळसिङ्घाणिकाहि वस्सकाले उदकचिक्खल्लादीहि च सङ्किलिट्ठत्ता हेट्ठिमतलतो पटिक्कूलतरं परिवेणं। परिवेणतो पटिक्कूलतरा विहाररच्छा दट्ठब्बा होति।

अनुपुब्बेन पन बोधिं च चेतियं च वन्दित्वा वितक्कमाळके[2] ठितेन मुत्तरासिसदिसं चेतियं मोरपिञ्छकलापमनोहरं बोधिं देवविमानसम्पत्तिसस्सिरीकं सेनासनं च अनपलोकेत्वा एवरूपं नाम रमणीयं पदेसं पिट्ठितो कत्वा आहारहेतु गन्तब्बं भविस्सती ति पक्कमित्वा गाममग्गं पटिपन्नेन खाणुकण्टकमग्गो पि उदकवेगभिन्नविसममग्गो पि दट्ठब्बो होति।

ततो गण्डं पटिच्छादेन्तेन विय निवासनं निवासेत्वा वणचोळकं बन्धन्तेन विय कायबन्धनं बन्धित्वा अट्ठिसङ्घातं पटिच्छादेन्तेन विय चीवरं पारुपित्वा भेसज्जकपालं नीहरन्तेन विय पत्तं नीहरित्वा गामद्वारसमीपं पापुणन्तेन हत्थिकुणप-अस्सकुणप-गोकुणप-महिंसकुणप-मनुस्सकुणप-अहिकुणप-कुक्कुरकुणपानि पि दट्ठब्बानि भवन्ति। न केवलं च दट्ठब्बानि, गन्धो पि नेसं घानं पटिहनमानो अधिवासेतब्बो होति। ततो गामद्वारे ठत्वा चण्डहत्थिअस्सादिपरिस्सयपरिवज्जनत्थं गामरच्छा ओलोकेतब्बा होन्ति।

इच्चेतं पच्चत्थरणादिअनेककुणपपरियोसानं पटिक्कूलं आहारहेतु अक्कमितब्बं च दट्ठब्बं च घायितब्बं च होति—अहो वत, भो, पटिक्कूलो आहारो ति। एवं गमनतो पटिक्कूलता पच्चवेक्खितब्बा। (१)

कथं **परियेसनतो**? एवं गमनपटिक्कूलं अधिवासेत्वा पि गामं पविट्ठेन सङ्घाटिपारुतेन कपणमनुस्सेन विय कपालहत्थेन घरपटिपाटिया गामवीथीसु चरितब्बं होति, यत्थ वस्सकाले अक्कन्तअक्कन्तट्ठाने याव पिण्डिकमंसा पि

१. निज्जनसम्बाधानी ति। जनसम्बाधरहितानि।

२. **वितक्कमाळके** ति। "कत्थ नु खो अज्ज भिक्खाय चरितब्बं" ति आदिना वितक्कनमाळके।

उदकचिक्खल्ले[1] पादा पविसन्ति, एकेन हत्थेन पत्तं गहेतब्बं होति, एकेन चीवरं उक्खिपितब्बं। गिम्हकाले वातवेगेन समुट्ठितेहि पंसुतिणरजेहि ओकिण्णसरीरेन चरितब्बं। तं तं गेहद्वारं पत्वा मच्छधोवन-मसधोवन-तण्डुलधोवन-खेळ-सिङ्घाणिक-सुनख-सूकरवच्चादीहि सम्मिस्सानि किमिकुलाकुलानि नीलमक्खिक-परिकिण्णानि ओळिगल्लानि[2] चेव चन्दनिकट्ठानानि[3] च दट्ठब्बानि होन्ति, अक्कमितब्बानि पि। यतो ता मक्खिका उट्ठहित्वा सङ्घाटिय पि पत्ते पि सीसे पि निलीयन्ति।

घरं पविट्ठस्सा पि केचि देन्ति, केचि न देन्ति। ददमाना पि एकच्चे हिय्यो पक्कभत्तं पि पुराणखज्जकं पि पूतिकुम्माससूपादीनि पि ददन्ति। अददमाना पि केचिदेव "अतिच्छथ, भन्ते" ति वदन्ति। केचि पन अपस्समाना विय तुण्ही होन्ति, केचि अञ्ञेन मुखं करोन्ति, केचि "गच्छ, रे मुण्डका" ति आदीहि फरुसवाचाहि समुदाचरन्ति। एवं कपणमनुस्सेन विय गामे पिण्डाय चरित्वा निक्खमितब्बं ति।

इच्चेतं गामप्पवेसनतो पट्ठाय याव निक्खमना उदकचिक्खल्लादिपटिक्कूलं आहारहेतु अक्कमितब्बं चेव दट्ठब्बं च अधिवासेतब्बं च होति—अहो वत, भो, पटिक्कूलो आहारो ति। एवं परियेसनतो पटिक्कूलता पच्चवेक्खितब्बा। (२)

कथं **परिभोगतो**? एवं परियिट्ठाहारेन पन बहिगामे फासुकट्ठाने सुखनिसिन्नेन याव तत्थ हत्थं न ओतारेति, ताव तथारूपं गरुट्ठानियं भिक्खुं वा लज्जिमनुस्सं वा दिस्वा निमन्तेतुं पि सक्का होति भुञ्जितुकामताय पनेत्थ हत्थे ओतारितमत्ते "गण्हथा" ति वदन्तेन लज्जितब्बं होति। हत्थं पन ओतारेत्वा मद्दन्तस्स पञ्चङ्गुलिअनुसारेन सेदो पग्घरमानो सुक्खथद्धभत्तं पि तेमेन्तो मुदुं करोति।

अथ तस्मिं परिमद्दनमत्तेना पि सम्भिन्नसोभे आलोपं कत्वा मुखे ठपिते हेट्ठिमदन्ता उदुक्खलकिच्चं साधेन्ति, उपरिमा मुसलकिच्चं, जिव्हा हत्थकिच्चं। तं तत्थ सुवानदोणियं सुवानपिण्डमिव दन्तमुसलेहि कोट्टेत्वा जिव्हाय सम्परिवत्तियमानं जिव्हग्गे तनुपसन्नखेळो मक्खेति, वेमज्झतो पट्ठाय बहलखेळो मक्खेति, दन्तकट्ठेन असम्पत्तट्ठाने दन्तगूथको मक्खेति।

सो एवं विचुण्णितमक्खितो तं खणं येव अन्तरहितवण्णगन्धसङ्खारविसेसो

---

१. उदकचिक्खल्ले ति। उदकमिस्से कद्दमे।

२. **ओळिगल्लानि**। उच्छिट्ठोदकगब्भमलादीनं सकद्दमानं सन्दनट्ठानानि, यानि जण्णुमत्त-असुचिभरितानि पि होन्ति।

३. **चन्दनिकानि** केवलानं उच्छिट्ठोदकगब्भमलादीनं सन्दनट्ठानानि।

सुवानदोणिय[1] ठितसुवानवमथु विय परमजेगुच्छभावं उपगच्छति। एवरूपो पि समानो चक्खुस्स आपाथमतीतत्ता अज्झोहरितब्बो होती ति एवं परिभोगतो पटिक्कूलता पच्चवेक्खितब्बा। (३)

कथं **आसयतो**? एवं परिभोग उपगतो च पनेस अन्तो पविसमानो यस्मा बुद्धपच्चेकबुद्धानं पि रञ्ञो पि चक्कवत्तिस्स पित्तसेम्हपुब्बलोहितासयेसु चतूसु अञ्ञतरो आसयो होति येव, मन्दपुञ्ञान पन चत्तारो पि आसवा होन्ति, तस्मा यस्स पित्तासयो अधिको होति तस्स बहलमधुकतेलमक्खितो विय परमजेगुच्छो होति, यस्स सेम्हासयो अधिको होति तस्स नागबलापण्णरसमक्खितो विय, यस्स पुब्बासयो अधिको होति तस्स पूतितक्कमक्खितो विय, यस्स लोहितासयो अधिको होति तस्स रजनमक्खितो विय परमजेगुच्छो होती ति। एव आसयतो पटिक्कूलता पच्चवेक्खितब्बा। (४)

कथ **निधानतो**? सो इमेसु चतूसु आसयेसु अञ्ञतरेन आसयेन मक्खितो अन्तोउदर पविसित्वा नेव सुवण्णभाजने न मणिरजतादिभाजनेसु निधानं गच्छति। सचे पन दसवस्सिकेन अज्झोहरियति, दस वस्सानि अधोतवच्चकूप-सदिसे ओकासे पतिट्ठहति। सचे वीस-तिंस-चत्तालीस-पञ्ञास-सट्ठि-सत्तति-असीत्ति-नवुति-वस्सिकेन, सचे वस्ससतिकेन अज्झोहरियति, वस्ससत अधोत-वच्चकूपसदिसे ओकासे पतिट्ठहती ति। एवं निधानतो पटिक्कूलता पच्च-वेक्खितब्बा। (५)

कथं **अपरिपक्कतो**? सो पनायमाहारो एवरूपे ओकासे निधानमुपगतो याव अपरिपक्को होति, ताव तस्मिं येव यथावुत्तप्पकारे परमन्धकारतिमिसे नानाकुणपगन्धवासितपवनविचरिते अतिदुग्गन्धजेगुच्छे पदेसे यथा नाम निदाघे अकालमेघेन अभिवुट्ठम्हि चण्डालगामद्वारआवाटे पतितानि तिणपण्णकिलञ्ज-खण्डअहिकुक्कुरमनुस्सकुणपादीनि सुरियातपेन सन्तत्तानि फेणबुब्बुळकाचितानि तिट्ठन्ति। एवमेव तदिवस पि हिय्यो पि ततो पुरिमे दिवसे पि अज्झोहटो सब्बो एकतो हुत्वा सेम्हपटलपरियोनद्धो कायग्गिसन्तापकुथितकुथनसञ्जातफेण-पुप्फुळकाचितो परमजेगुच्छभावं उपगन्त्वा तिट्ठती ति। एव अपरिपक्कतो पटिक्कूलता पच्चवेक्खितब्बा। (६)

कथ **परिपक्कतो**? सो तत्तकायग्गिना परिपक्को समानो न सुवण्णरजतादि-धातुयो विय सुवण्णरजतादिभावं उपगच्छति। फेणुबुब्बुळके पन मुञ्चन्तो सण्हकरणियं पिंसित्वा नाळिके पक्खित्तपण्डुमत्तिका विय करीसभावं उपगन्त्वा पक्कासय, मुत्तभावं उपगन्त्वा मुत्तवत्थिं च पूरेती ति। एवं परिपक्कतो पटिक्कूलता पच्चवेक्खितब्बा। (७)

---

१. **सुवानदोणिय** ति। सारमेय्यान भुञ्जनकअम्बणे।

कथं **फलतो**? सम्मा परिपच्चमानो च पनाय केसलोमनखदन्तादीनि नानाकुणपानि निप्फादेति असम्मा परिपच्चमानो दद्दु-कण्डु-कच्छु-कुट्ठ-किलास-सोस-कासातिसारप्पभुतीनि रोगसतानि, इदमस्स फल ति। एव फलतो पटिक्कूलता पच्चवेक्खितब्बा। (८)

कथ **निस्सन्दतो**? अज्झोहरियमानो चेस एकेन द्वारेन पविसित्वा निस्सन्दमानो "अक्खिम्हा अक्खिगूथको, कण्णम्हा कण्णगूथको" ति आदिना पकारेन अनेकेहि द्वारेहि निस्सन्दति। अज्झोहरणसमये चेस महापरिवारेना पि अज्झोहरियति। निस्सन्दनसमये पन उच्चारपस्सावादिभाव उपगतो एककेनेव नीहरीयति। पठमदिवसे च न परिभुञ्जन्तो हट्ठपहट्ठो पि होति उदग्गुदग्गो पीतिसोमनस्सजातो। दुतियदिवसे निस्सन्देन्तो पिहितनासिको होति विकुणित-मुखो जेगुच्छी मङ्कुभूतो। पठमदिवसे च न रत्तो गिद्धो गधितो मुच्छितो पि अज्झोहरित्वा दुतियदिवसे एकरत्तिवासेन विरत्तो अट्टीयमानो हरायमानो जिगुच्छमानो नीहरति। तेनाहु पोराणा—

"अन्नं पान खादनीयं भोजन च महारहं।
एकद्वारेन पविसित्वा नवद्वारेहि सन्दति॥
अन्न पान खादनीय भोजन च महारह।
भुञ्जति सपरिवारो, निक्खामेन्तो निलीयति॥
अन्न पान खादनीय भोजनं च महारहं।
भुञ्जति अभिनन्दन्तो, निक्खामेन्तो जिगुच्छति॥
अन्नं पानं खादनीयं भोजन च महारहं।
एकरत्तिपरिवासा सब्बं भवति पूतिकं" ति॥

एवं निस्सन्दन्तो पटिक्कूलता पच्चवेक्खितब्बा। (९)

कथं **सम्मक्खनतो**? परिभोगकाले पि चेस हत्थ-ओट्ठ-जिव्हा-तालूनि सम्मक्खेति। तानि तेन सम्मक्खितत्ता पटिक्कूलानि होन्ति, यानि धोतानि पि गन्धहरणत्थं पुनप्पुन धोवितब्बानि होन्ति। परिभुत्तो समानो यथा नाम ओदने पच्चमाने थुसकणकुण्डकादीनि उत्तरित्वा उक्खलिमुखवट्टिपिधानियो मक्खेन्ति; एवमेव सकलसरीरानुगतेन कायग्गिना फेणुद्देहकं पच्चित्वा उत्तरमानो दन्ते दन्तमलभावेन सम्मक्खेति। जिव्हातालुप्पभुतीनि खेळसेम्हादिभावेन, अक्खि-कण्णनासअधोमग्गादिके अक्खिगूथक-कण्णगूथक-सिङ्घाणिका-मुत्त-करिसादिभावेन सम्मक्खेति, येन सम्मक्खितानि इमानि द्वारानि दिवसे दिवसे धोवियमानानि पि नेव सुचीनि, न मनोरमानि होन्ति, तेसु एकच्च धोवित्वा हत्थो पुन उदकेन धोवितब्बो होति, एकच्चं धोवित्वा द्वत्तिक्खत्तुं गोमयेन पि मत्तिकाय पि गन्ध-

चुण्णेन पि धोवतो पटिक्कूलता न विगच्छती ति। एवं सम्मक्खनतो पटिक्कूलता पच्चवेक्खितब्बा। (१०)

७ तस्सेवं दसहाकारेहि पटिक्कूलत पच्चवेक्खतो तक्काहत वितक्काहत्त करोन्तस्स पटिक्कूलाकारवसेन कबळीकाराहारो पाकटो होति। सो त निमित्तं पुनप्पुन आसेवति, भावेति, बहुलीकरोति। तस्सेव करोतो नीवरणानि विक्खम्भन्ति। कबळीकाराहारस्स सभावधम्मताय गम्भीरत्ता अप्पनं अप्पत्तेन उपचारसमाधिना चित्त समाधियति। पटिक्कूलाकारग्गहणवसेन पनेत्थ सञ्ञा पाकटा होति। तस्मा इम कम्मट्ठान 'आहारे पटिक्कूलसञ्ञा' इच्चेव सङ्खं गच्छति।

८ इमं च पन आहारे पटिक्कूलसञ्ञं अनुयुत्तस्स भिक्खुनो रसतण्हाय चित्तं पतिलीयति, पतिकुटति, पतिवट्टति। सो कन्तारनित्थरणत्थिको विय पुत्तमसं, विगतमदो आहार आहारेति यावदेव दुक्खस्स नित्थरणत्थाय। अथस्स अप्पक-सिरेनेव कबळीकाराहारपरिञ्ञामुखेन पञ्चकामगुणिको रागो परिञ्ञ गच्छति। सो पञ्चकामगुणपरिञ्ञामुखेन रूपक्खन्ध परिजानाति। अपरिपक्कादिपटिक्कूल-भाववसेन चस्स कायगता सतिभावना पि पारिपूरिं गच्छति। असुभसञ्ञाय अनुलोमपटिपदं पटिपन्नो होति। इम पन पटिपत्तिं निस्साय दिट्ठेव धम्मे अमतपरियोसानतं अनभिसम्भुणन्तो सुगतिपरायनो होती ति॥

अयं आहारे पटिक्कूलसञ्ञाभावनाय वित्थारकथा॥

चतुधातुववत्थानभावनाकथा

९ इदानि आहारे पटिक्कूलसञ्ञानन्तरं एक ववत्थानं ति एव उद्दिट्ठस्स[1] चतुधातुववत्थानस्स भावनानिद्देसो अनुप्पत्तो। तत्थ ववत्थानं ति सभावूपलक्खण-वसेन सन्निट्ठान। चतुन्न धातून ववत्थान **चतुधातुववत्थानं**। धातुमनसिकारो, धातुकम्मट्ठान, चतुधातुववत्थान ति अत्थतो एकं। तयिद द्विधा आगतं— सङ्खेपतो च, वित्थारतो च। सङ्खेपतो **महासतिपट्ठाने** आगतं। वित्थारतो **महाहत्थिपदूपमे, राहुलोवादे, धातुविभङ्गे** च।

१०. तं हि—"सेय्यथापि, भिक्खवे, दक्खो गोघातको वा गोघातकन्तेवासी वा गावि वधित्वा चतुमहापथे बिलसो विभजित्वा निसिन्नो अस्स, एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु इममेव काय यथाठितं यथापणिहित धातुसो पच्चवक्खति— अत्थि इमस्मि काये पथवीधातु आपोधातु तेजोधातु वायोधातू" ति एवं तिक्ख-पञ्ञस्स धातुकम्मट्ठानिकस्स वसेन **महासतिपट्ठाने** (दी० २–२१९) सङ्खेपतो आगतं।

---

१ ततियपरिच्छेदे ति सेसो।

तस्सत्थो—यथा छेको गोघातको वा तस्सेव वा भत्तवेतनभतो अन्तेवासिको गाविं बधित्वा विनिविज्झित्वा चतस्सो दिसा गतान महापथान वेमज्झट्ठान-सङ्खाते चतुमहापथे कोट्ठास कत्वा निसिन्नो अस्स; एवमेव भिक्खु चतुन्नं इरियापथान येन केनचि आकारेन ठितत्ता यथाठित, यथाठितत्ता व यथापणिहितं काय 'अत्थि इमस्मिं काये पथवीधातु पे॰ वायोधातू' ति एव धातुसो पच्चवेक्खति।

किं वुत्त होति ? यथा गोघातकस्स गाविं पोसेन्तस्स पि आघातान आहरन्तस्स पि आहरित्वा तत्थ बन्धित्वा ठपेन्तस्स पि वधेन्तस्स पि वधितं मतं पस्सन्तस्स पि तावदेव गावी ति सञ्ञा न अन्तरधायति, याव नं पदालेत्वा बिलसो[1] न विभजति। विभजित्वा निसिन्नस्स पन गावीसञ्ञा अन्तरधायति, मंससञ्ञा पवत्तति। नास्स एव होति—"अहं गाविं विक्किणामि, इमे गाविं हरन्ती" ति। अथ ख्वस्स—"अहं मस विक्किणामि, इमे पि मंसं हरन्ति" च्चेव होति। एवमेव इमस्सापि भिक्खुनो पुब्बे बालपुथुज्जनकाले गिहिभूतस्स पि पब्बजितस्स पि तावदेव सत्ता ति वा पोसो ति वा पुग्गलो ति वा सञ्ञा न अन्तरधायति, याव इममेव काय यथाठित यथापणिहित घनविनिब्भोग कत्वा धातुसो न पच्चवेक्खति। धातुसो पच्चवक्खतो पन सत्तसञ्ञा अन्तरधायति, धातुवसेनेव चित्तं सन्तिट्ठति। तेनाह भगवा—"सेय्यथापि, भिक्खवे, दक्खो गोघातको वा····पे॰ निसिन्नो अस्स; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु पे॰· · वायोधातू" ति।

११ **महाहत्थिपदूमे** (म॰ १–२३५) पन—"कतमा चावुसो, अज्झत्तिका पथवीधातु ? यं अज्झत्तं पच्चत्त कक्खळं खरिगतं उपादिन्न। सेय्यथीदं—केसा लामा ··पे॰····उदरिय करीसं, य वा पनञ्ञ पि किञ्चि अज्झत्तं पच्चत्तं कक्खळ खरिगत उपादिन्नं—अय वुच्चतावुसो, अज्झत्तिका पथवीधातू" ति च,

"कतमा चावुसो, अज्झत्तिका आपोधातु ? य अज्झत्तं पच्चत्तं आपो आपोगतं उपादिन्न। सेय्यथीदं, पित्तं··पे॰···मुत्त, य वा पनञ्ञ पि किञ्चि अज्झत्तं पच्चत्तं आपो आपोगतं उपादिन्न—अय वुच्चतावुसो, अज्झत्तिका आपोधातू" ति च,

"कतमा चावुसो, अज्झत्तिका तेजोधातु ? यं अज्झत्तं पच्चत्तं तेजो तेजोगतं उपादिन्नं। सेय्यथीदं—येन च सन्तप्पति, येन च जीरीयति, येन च परिडय्हति, येन च असितपीतखायितसायितं सम्मा परिणामं गच्छति, यं वा पनञ्ञं पि किञ्चि अज्झत्तं पच्चत्तं तेजो तेजोगतं उपादिन्नं—अयं वुच्चतावुसो, अज्झत्तिका तेजोधातू" ति च,

---

१ बिलसो ति। बिलं बिलं कत्वा।

"कतमा चावुसो, अज्झत्तिका वायोधातु? यं अज्झत्तं पच्चत्तं वायो वायोगतं उपादिन्नं। सेय्यथीदं—उद्धङ्गमा वाता, अधोगमा वाता, कुच्छिसया वाता, कोट्ठासया वाता, अङ्गमङ्गानुसारिनो वाता, अस्सासो पस्सासो इति वा, यं वा पनञ्ञं पि किञ्चि अज्झत्तं पच्चत्तं वायो वायोगतं उपादिन्नं—अयं वुच्चतावुसो, अज्झत्तिका वायोधातू" ति च।

एवं नातितिक्खपञ्ञस्स धातुकम्मट्ठानिकस्स वसेन वित्थारतो आगतं। यथा चेत्थ एवं **राहुलोवाद** (म० २–१००)-**धातुविभङ्गेसु** (अभि० २–१०२) पि।

१२ तत्रायं अनुत्तानपदवण्णना—**अज्झत्तं पच्चत्तं** ति। इदं ताव उभयं पि नियकस्स अधिवचनं। नियकं नाम अत्तनि जातं। ससन्तानपरियापन्नं ति अत्थो। तयिदं यथा लोके इत्थीसु कथा अधित्थी ति वुच्चति, एवं अत्तनि पवत्तत्ता अज्झत्तं, अत्तानं पटिच्च पवत्तत्ता पच्चत्तं ति पि वुच्चति।

कक्खळं ति। थद्धं। **खरिगतं** ति। फरुसं। तत्थ पठमं लक्खणवचनं, दुतियं आकारवचनं। कक्खळलक्खणा हि पथवीधातु। सा फरुसाकारा होति, तस्मा खरिगतं ति वुत्ता। **उपादिन्नं** ति। दळ्हं आदिन्नं। अहं ममं ति एवं दळ्हं आदिन्नं, गहितं। परामट्ठं ति अत्थो।

सेय्यथीदं ति। निपातो। तस्स तं कतमं ति चे ति अत्थो। ततो तं दस्सेन्तो "**केसा लोमा**" ति आदिमाह। एत्थ च मत्थलुङ्गं पक्खिपित्वा वीसतिया आकारेहि पथवीधातु निद्दिट्ठा ति वेदितब्बा। **यं वा पनञ्ञं पि किञ्चो** ति। अवसेसेसु तीसु कोट्ठासेसु पथवीधातु सङ्गहिता।

विस्सन्दनभावेन तं तं ठानं अप्पो ति पप्पोती ति **आपो**। कम्मसमुट्ठानादिवसेन नानाविधेसु आपेसु गतं ति **आपोगतं**। किं तं? आपोधातुया आबन्धनलक्खणं।

तेजनवसेन **तेजो**। वुत्तनयेनेव तेजेसु गतं ति **तेजोगतं**। किं तं? उण्हत्तलक्खणं। **येन चा** ति। येन तेजोधातुगतेन कुपितेन अयं कायो **सन्तप्पति**। एकाहिकजरादिभावेन उसुमजातो होति। **येन च जीरियती** ति। येन अयं कायो जीरति, इन्द्रियवेकल्लतं बलपरिक्खयं वलिपलितादिभावं च पापुणाति। **येन च परिडय्हती** ति। येन कुपितेन अयं कायो डय्हति, सो च पुग्गलो "डय्हामि डय्हामी" ति कन्दन्तो सतधोतसप्पि-गोसीसचन्दनादिलेपं चेव तालवण्टवातं च पच्चासीसति। **येन च असितपीतखायितसायितं सम्मा परिणामं गच्छती** ति। येनेतं असितं वा ओदनादि, पीतं वा पानकादि, खायितं वा पिट्ठखज्जकादि, सायितं वा अम्बपक्कमधुफाणितादि सम्मा परिपाकं गच्छति। रसादिभावेन विवेकं गच्छती ति अत्थो। एत्थ च पुरिमा तयो तेजोधातुसमुट्ठाना, पच्छिमो कम्मसमुट्ठानो व।

वायनवसेन **वायो**। वुत्तनयेनेव वायेसु गत ति **वायोगतं**। किं त ? वित्थम्भनलक्खण। **उद्धङ्गमा वाता** ति। उग्गारहिक्कादिपवत्तका उद्ध आरोहणवाता। **अधोगमा वाता** ति। उच्चारपस्सावादिनोहरणका अधो ओरोहणवाता। **कुच्छिसया वाता** ति। अन्तान बहि वाता। **कोट्ठसया वाता** ति। अन्तान अन्तो वाता। **अङ्गमङ्गानुसारिनो वाता** ति। धमनिजालानुसारेन सकलसरीरे अङ्गमङ्गानि अनुसटा समिञ्जनपसारणादिनिब्बत्तका वाता। **अस्सासो** ति। अन्तो पविसननासिकवातो। **पस्सासो** ति। बहिनिक्खमननासिकवातो। एत्थ च पुरिमा पञ्च चतुसमुट्ठाना, अस्सासपस्सासा चित्तसमुट्ठाना व। सब्बत्थ **यं वा पनञ्ञं पि किञ्चो** ति। इमिना पदेन अवसेसकोट्ठासेसु आपोधातुआदयो सङ्गहिता।

इति वीसतिया आकारेहि पथवीधातु, द्वादसहि आपोधातु, चतूहि तेजोधातु, छहि वायोधातू ति द्वाचत्तालीसाय आकारेहि चतस्सो धातुयो वित्थारिता होन्ती ति।

अय तावेत्थ पाळिवण्णना॥

१३ भावनानये पनेत्थ तिक्खपञ्ञस्स भिक्खुनो 'केसा पथवीधातु, लोमा पथवीधातू' ति एव वित्थारतो धातुपरिग्गहो पपञ्चतो उपट्ठाति। 'यं थद्धलक्खण, अय पथवीधातु। य आबन्धनलक्खण, अय आपोधातु। यं परिपाचनलक्खणं, अयं तेजोधातु। य वित्थम्भनलक्खण, अय वायोधातू' ति एव मनसिकरोतो पनस्स कम्मट्ठान पाकट होति। नातितिक्खपञ्ञस्स पन एव मनसिकरोतो अन्धकार अविभूत होति। पुरिमनयेन वित्थारतो मनसिकरोन्तस्स पाकटं होति।

१४ कथ ? यथा द्वीसु भिक्खूसु बहुपेय्याल तन्ति सज्झायन्तेसु, तिक्खपञ्ञो भिक्खु सकिं वा द्विक्खत्तु वा पेय्यालमुखं वित्थारेत्वा ततो परं उभतो कोटिवसेनेव सज्झायं करोन्तो गच्छति। तत्र नातितिक्खपञ्ञो एवं वत्ता होति— "कि सज्झायो नाम एस ओट्ठपरियाहतत्त कातुं न देति, एवं सज्झाये करियमाने कदा तन्ति परियोसानं गमिस्सती" ति ? एवमेव तिक्खपञ्ञस्स केसादिवसेन वित्थारतो धातुपरिग्गहो पपञ्चतो उपट्ठाति। 'य थद्धलक्खण, अयं पथवीधातू' ति आदिना नयेन सङ्खेपतो मनसिकरोतो कम्मट्ठान पाकटं होति। इतरस्स तथा मनसिकरोतो अन्धकारं अविभूतं होति। केसादिवसेन वित्थारतो मनसिकरोन्तस्स पाकट होति।

१५. तस्मा इम कम्मट्ठानं भावेतुकामेन तिक्खपञ्ञेन ताव रहोगतेन पटिसल्लीनेन सकलं पि अत्तनो रूपकायं आवज्जेत्वा, यो इमस्मि काये थद्धभावो वा खरभावो वा—अयं पथवीधातु। यो आबन्धनभावो वा द्रवभावो वा—अयं आपोधातु। यो परिपाचनभावो वा उण्हभावो वा—अयं तेजोधातु। यो वित्थम्भनभावो वा समुदीरणभावो वा—अयं वायोधातू ति। एवं सङ्खित्तेन धातुयो

परिग्गहेत्वा पुनप्पुनं पथवीधातु आपोधातू ति धातुमत्ततो निस्सत्ततो निज्जीवतो आवज्जितब्बं, मनसिकातब्बं, पच्चवेक्खितब्ब ।

तस्सेवं वायममानस्स न चिरेनेव धातुप्पभेदावभासनपञ्ञापरिग्गहितो सभावधम्मारम्मणत्ता अप्पनं अप्पत्तो उपचारमत्तो समाधि उप्पज्जति ।

१६ अथ वा पन—ये इमे चतुन्नं महाभूतानं निस्सत्तभावदस्सनत्थ **धम्मसेनापतिना**—"अट्ठिं च पटिच्च न्हारु च पटिच्च मंसं च पटिच्च चम्म च पटिच्च आकासो परिवारितो रूपं त्वेव सङ्खं गच्छती" (म० १–२४०) ति चत्तारो कोट्ठासा वुत्ता, तेसु तं तं अन्तरानुसारिना ञाणहत्थेन विनिब्भुजित्वा, यो एतेसु थद्धभावो वा खरभावो वा अयं पथवीधातू ति पुरिमनयेनेव धातुयो परिग्गहेत्वा पुनप्पुनं 'पथवीधातु, आपोधातू' ति धातुमत्ततो निस्सत्ततो निज्जीवतो आवज्जितब्बं, मनसिकातब्ब, पच्चवेक्खितब्बं ।

तस्सेवं वायममानस्स न चिरेनेव धातुप्पभेदावभासनपञ्ञापरिग्गहितो सभावधम्मारम्मणत्ता अप्पन अप्पतो उपचारमत्ता समाधि उप्पज्जति ।

अयं सङ्खेपतो आगते चतुधातुववत्थाने भावनानयो ॥

१७ वित्थारतो आगते पन एवं वेदितब्बो—

इदं कम्मट्ठान भावेतुकामेन हि नातितिक्खपञ्ञेन योगिना आचरियसन्तिके द्वाचत्तालीसाय आकारेहि वित्थारतो उग्गण्हित्वा वुत्तप्पकारे सेनासने विहरन्तेन कतसब्बकिच्चेन रहोगतेन पटिसल्लीनेन १. ससम्भारसङ्खेपतो, २ ससम्भारविभत्तितो, ३ सलक्खणसङ्खेपतो, ४. सलक्खणविभत्तितो—एवं चतूहाकारेहि कम्मट्ठानं भावेतब्ब ।

१८ तत्थ कथं **ससम्भारसङ्खेपतो** भावेति ? इध भिक्खु वीसतिया कोट्ठासेसु 'थद्धाकारं पथवीधातू' ति ववत्थपेति । द्वादससु कोट्ठासेसु यूसगत उदकसङ्खात आबन्धनाकारं आपोधातू ति ववत्थपेति । चतूसु कोट्ठासेसु 'परिपाचनकतेजं तेजोधातू' ति ववत्थपेति । छसु कोट्ठासेसु 'वित्थम्भनाकारं वायोधातू ति ववत्थपेति । तस्सेवं ववत्थापयतो येव धातुयो पाकटा होन्ति । ता पुनप्पुनं आवज्जयतो मनसिकरोतो वुत्तनयेनेन उपचारसमाधि उप्पज्जति । (१)

१९. यस्स पन एवं भावयतो कम्मट्ठानं न इज्झति, तेन **ससम्भारविभत्तितो** भावेतब्बं । कथ ? तेन हि भिक्खुना यं तं कायगतासतिकम्मट्ठाननिद्देसे सत्तधा उग्गहकोसल्लं[1] दसधा मनसिकारकोसल्लं[2] च वुत्तं, द्वत्तिंसाकारे ताव त सब्बं अपरिहापेत्वा तचपञ्चकादीन अनुलोमपटिलोमतो वचसा सज्झायं आदिं कत्वा सब्बं तत्थ वुत्तविधानं कातब्बं । अयमेव हि विसेसो—तत्थ वण्णसण्ठान-

१. इमस्मिं येव गन्थे १९८ पिट्ठे दट्ठब्बं ।

२. एत पि एत्थेव २०० पिट्ठे दट्ठब्बं ।

दिसोकास-परिच्छेदवसेन केसादयो मनसिकरित्वा पि पटिक्कूलवसेन चित्तं ठपेतब्ब, इध धातुवसेन। तस्मा वण्णादिवसेन पञ्चधा केसादयो मनसिकरित्वा अवसाने एव मनसिकारो पवत्तेतब्बो—

इमे **केसा** नाम सीसकटाहपलिवेठनचम्मे जाता। तत्थ यथा वम्मिकमत्थके जातेसु कुण्ठतिणेसु न वम्मिकमत्थको जानाति—'मयि कुण्ठतिणानि जातानी' ति, नपि कुण्ठतिणानि जानन्ति—'मय वम्मिकमत्थके जातानी' ति, एवमेव न सीसकटाहपलिवेठनचम्म जानाति—'मयि केसा जाता' ति, नपि केसा जानन्ति—'मय सीसकटाहपलिवेठनचम्मे जाता' ति। अञ्ञमञ्ञ आभोगपच्चवेक्खण-रहिता एते धम्मा। इति केसा नाम इमस्मि सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

लोमा सरीरवेठनचम्मे जाता। तत्थ यथा सुञ्ञगामट्ठाने जातेसु दब्बतिण-केसु न सुञ्ञगामट्ठान जानाति—'मयि दब्बतिणकानि जातानी' ति, न पि दब्बतिणकानि जानन्ति—'मयं सुञ्ञगामट्ठाने जातानी' ति, एवमेव न सरीर-वेठनचम्मं जानाति—'मयि लोमा जाता' ति, न पि लोमा जानन्ति—'मयं सरीरवेठनचम्मे जाता' ति। अञ्ञमञ्ञ आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति लोमा नाम इमस्मि सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

नखा अङ्गुलीनं अग्गेसु जाता। तत्थ, यथा कुमारकेसु दण्डकेहि मधुयट्ठिके विज्झित्वा कीळन्तेसु न दण्डका जानन्ति—'अम्हेसु मधुकट्ठिका ठपिता' ति, न पि मधुकट्ठिका जानन्ति—'मय दण्डकेसु ठपिता' इति, एवमेव न अङ्गुलियो जानन्ति—'अम्हाक अग्गेसु नखा ठपिता' इति, न पि नखा जानन्ति—'मय अङ्गुलीन अग्गेसु जाता' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोग-पच्चवक्खणरहिता एते धम्मा। इति नखा नाम इमस्मि सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

दन्ता हनुकट्ठिकेसु जाता। तत्थ, यथा वड्ढकीहि पासाणउदुक्खलेसु केनचि-देव सिलेसजातेन बन्धित्वा ठपितथम्भेसु न उदुक्खला जानन्ति—'अम्हेसु थम्भा ठिता' ति, न पि थम्भा जानन्ति—'मय उदुक्खलेसु ठिता' ति; एवमेव न हनुकट्ठीनि जानन्ति—'अम्हेसु दन्ता जाता' ति, न पि दन्ता जानन्ति—'मय हनुकट्ठिसु' जाता' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति दन्ता नाम इमस्मि सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

तचो सकलसरीरं परियोनन्धित्वा ठितो। तत्थ, यथा अल्लगोचम्म-परियोनद्धाय महावीणाय न महावीणा जानाति—'अह अल्लगोचम्मेन परियो-

नद्धा' ति, नापि अल्लगोचम्मं जानाति—'मया महावीणा परियोनद्धा' ति, एवमेव न सरीरं जानाति—'अहं तचेन परियोनद्धं' ति, न पि तचो जानाति—'मया सरीरं परियोनद्धं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति तचो नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

मंसं अट्ठिसङ्घाटं अनुलिम्पित्वा ठितं। तत्थ यथा महामत्तिकलित्ताय भित्तिया न भित्ति जानाति—'अहं महामत्तिकाय लित्ता' ति, न पि महामत्तिका जानाति—'मया भित्ति लित्ता' ति, एवमेव न अट्ठिसङ्घाटो जानाति—'अहं नवपेसिसतप्पभेदेन मंसेन लित्तो' ति, न पि मंसं जानाति—'मया अट्ठिसङ्घाटो लित्तो' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति मंसं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

न्हारू सरीरब्भन्तरे अट्ठीनि आबन्धमाना ठिता। तत्थ यथा वल्लीहि विनद्धेसु कुट्टदारूसु न कुट्टदारूनि जानन्ति—'मयं वल्लीहि विनद्धानी' ति, न पि वल्लियो जानन्ति—'अम्हेहि कुट्टदारूनि विनद्धानी' ति, एवमेव न अट्ठीनि जानन्ति—'मयं न्हारूहि आबद्धानी' ति, न पि न्हारू जानन्ति—'अम्हेहि अट्ठीनि आबद्धानी' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति न्हारु नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धा पथवीधातू ति।

अट्ठीसु पण्हिकट्ठि गोप्फकट्ठिं उक्खिपित्वा ठितं। गोप्फकट्ठि जङ्घट्ठिं उक्खिपित्वा ठितं। जङ्घट्ठि ऊरुट्ठिं उक्खिपित्वा ठितं, ऊरुट्ठि कटिट्ठिं उक्खिपित्वा ठितं। कटिट्ठि पिट्ठिकण्टकं उक्खिपित्वा ठितं। पिट्ठिकण्टको गीवट्ठिं उक्खिपित्वा ठितो। गीवट्ठि सीसट्ठिं उक्खिपित्वा ठितं। सीसट्ठि गीवट्ठिके पतिट्ठितं। गीवट्ठि पिट्ठकण्टके पतिट्ठितं। पिट्ठिकण्टको कटिट्ठिम्हि पतिट्ठितो। कटिट्ठि ऊरुट्ठिके पतिट्ठितं। ऊरुट्ठि जङ्घट्ठिके पतिट्ठितं। जङ्घट्ठि गोप्फकट्ठिके पतिट्ठितं। गोप्फकट्ठि पण्हिकट्ठिके पतिट्ठितं।

तत्थ यथा इट्ठकदारुगोमयादिसञ्चयेसु न हेट्ठिमा हेट्ठिमा जानन्ति—'मयं उपरिमे उपरिमे उक्खिपित्वा ठिता' ति, न पि उपरिमा उपरिमा जानन्ति—'मयं हेट्ठिमेसु हेट्ठिमेसु पतिट्ठिता' ति; एवमेव न पण्हिकट्ठि जानाति—'अहं गोप्फकट्ठिं उक्खिपित्वा ठितं' ति। न गोप्फकट्ठि जानाति—'अहं जङ्घट्ठिं उक्खिपित्वा ठितं' ति। न जङ्घट्ठि जानाति—'अहं ऊरुट्ठिं उक्खिपित्वा ठितं' ति। न ऊरुट्ठि जानाति—'अहं कटिट्ठिं उक्खिपित्वा ठितं' ति। न कटिट्ठि जानाति—'अहं पिट्ठिकण्टकं उक्खिपित्वा ठितं' ति। न पिट्ठिकण्टको जानाति—'अहं

गीवट्ठिं उक्खिपित्वा ठितो' ति । न गीवट्ठि जानाति—'अहं सीसट्ठिं उक्खिपित्वा ठितं' ति । न सीसट्ठि जानाति—'अहं गीवट्ठिम्हि पतिट्ठितं' ति । न गीवट्ठि जानाति—'अहं पिट्ठिकण्टके पतिट्ठितं' ति । न पिट्ठिकण्टको जानाति—'अहं कटिट्ठिम्हि पतिट्ठितो' ति । न कटिट्ठि जानाति—'अहं ऊरुट्ठिम्हि पतिट्ठितं' ति । न ऊरुट्ठि जानाति—'अहं जङ्घट्ठिम्हि पतिट्ठितं' ति । न जङ्घट्ठि जानाति—'अहं गोप्फकट्ठिम्हि पतिट्ठितं' ति । न गोप्फकट्ठि जानाति—'अहं पण्हिकट्ठिम्हि पतिट्ठितं' ति । अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा । इति अट्ठि नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति ।

अट्ठिमिञ्जं तेसं तेसं अट्ठीनं अब्भन्तरे ठितं । तत्थ यथा वेळुपब्बादीनं अन्तो पक्खित्तसिन्नवेत्तग्गादीसु[1] न वेळुपब्बादीनि जानन्ति—'अम्हेसु वेत्तग्गादीनि पक्खित्तानी' ति, न पि वेत्तग्गादीनि जानन्ति—'मयं वेळुपब्बादीसु ठितानी' ति; एवमेव न अट्ठीनि जानन्ति—'अम्हाकं अन्तो मिञ्जं ठितं' ति, न पि मिञ्जं जानाति—'अहं अट्ठीनं अन्तो ठितं' ति । अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा । इति अट्ठिमिञ्जं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति ।

वक्कं गलवाटकतो निक्खन्तेन एकमूलेन थोकं गन्त्वा द्विधा भिन्नेन थूलन्हारुना विनिबद्धं हुत्वा हदयमंसं परिक्खिपित्वा ठितं । तत्थ यथा वण्टूपनिबद्धे अम्बफलद्वये न वण्टं जानाति—'मया अम्बफलद्वयं उपनिबद्धं' ति, न पि अम्बफलद्वयं जानाति—'अहं वण्टेन उपनिबद्धं' ति, एवमेव न थूलन्हारु जानाति—'मया वक्कं उपनिबद्धं' ति, न पि वक्कं जानाति—'अहं थूलन्हारुना उपनिबद्धं' ति । अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा । इति वक्कं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति ।

हदयं सरीरब्भन्तरे उरट्ठिपञ्जरमज्झं निस्साय ठितं । तत्थ यथा जिण्णसन्दमानिकपञ्जरं निस्साय ठपिताय मंसपेसिया न जिण्णसन्दमानिकपञ्जरब्भन्तरं जानाति—'मं निस्साय मंसपेसि ठपिता' ति, न पि मंसपेसि जानाति—'अहं जिण्णसन्दमानिकपञ्जरं निस्साय ठिता' ति; एवमेव न उरट्ठिपञ्जरब्भन्तरं जानाति—'मं निस्साय हदयं ठितं' ति, न पि हदयं जानाति—'अहं उरट्ठिपञ्जरं निस्साय ठितं' ति । अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा ।

१ **सिन्नवेत्तग्गादीसू** ति । सेदितवेत्तकळीरादीसु ।

इति हदयं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

यकनं अन्तोसरीरे द्विन्नं थनानमभन्तरे दक्खिणपस्सं निस्साय ठितं। तत्थ यथा उक्खलिकपालपस्सम्हि लग्गे यमकमंसपिण्डे[1] न उक्खलिकपालपस्सं जानाति—'मयि यमकमंसपिण्डो लग्गो' ति, न पि यमकमंसपिण्डो जानाति—'अहं उक्खलिकपालपस्से लग्गो' ति; एवमेव न थनानमब्भन्तरे दक्खिणपस्सं जानाति—'मं निस्साय यकनं ठितं' ति, न पि यकनं जानाति—'अहं थनानं अब्भन्तरे दक्खिणपस्सं निस्साय ठितं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति यकनं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

किलोमकेसु पटिच्छन्नकिलोमकं हदयं च वक्कं च परिवारेत्वा ठितं। अप्पटिच्छन्नकिलोमकं सकलसरीरे चम्मस्स हेट्ठतो मंसं परियोनन्धित्वा ठितं। तत्थ यथा पिलोतिकपलिवेठिते मंसे न मंसं जानाति—'अहं पिलोतिकाय पलिवेठितं' ति, न पि पिलोतिका जानाति—'मया मंसं पलिवेठितं' ति; एवमेव न वक्कहदयानि सकलसरीरे च मंसं जानाति—'अहं किलोमकेन पटिच्छन्नं' ति। न पि किलोमकं जानाति—'मया वक्कहदयानि सकलसरीरे च मंसं पटिच्छन्नं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति किलोमकं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

पिहकं हदयस्स वामपस्से उदरपटलस्स मत्थकपस्सं निस्साय ठितं। तत्थ यथा कोट्ठमत्थकपस्सं[2] निस्साय ठिताय गोमयपिण्डिया न कोट्ठमत्थकपस्सं जानाति—'गोमयपिण्डि मं निस्साय ठिता' ति, न पि गोमयपिण्डि जानाति—'अहं कोट्ठमत्थकपस्सं निस्साय ठिता' ति; एवमेव न उदरपटलस्स मत्थकपस्सं जानाति—'पिहकं मं निस्साय ठितं' ति, न पि पिहकं जानाति—'अहं उदरपटलस्स मत्थकपस्सं निस्साय ठितं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति पिहकं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

पप्फासं सरीरब्भन्तरे द्विन्नं थनानमन्तरे हदयं च यकनं च उपरि छादेत्वा ओलम्बन्तं ठितं। तत्थ यथा जिण्णकोट्ठब्भन्तरे लम्बमाने सकुणकुलावके न जिण्णकोट्ठब्भन्तरं जानाति—'मयि सकुणकुलावको लम्बमानो ठितो' ति, न पि सकुणकुलावको जानाति—'अहं जिण्णकोट्ठब्भन्तरे लम्बमानो ठितो' ति;

---

१ यमकमंसपिण्डे ति। मंसपिण्डयुगळे।

२. कोट्ठमत्थकपस्सं ति। कुसूलस्स अब्भन्तरे मत्थकपस्सं।

एवमेव न तं सरीरब्भन्तरं जानाति—'मयि पप्फास लम्बमानं ठित' ति, न पि पप्फासं जानाति—'अहं एवरूपे सरीरब्भन्तरे लम्बमान ठितं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति पप्फासं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

अन्तं गलवाटककरीसमग्गपरियन्ते सरीरब्भन्तरे ठितं। तत्थ यथा लोहितदोणिकाय ओभुञ्जित्वा ठपिते छिन्नसीसधम्मनिकळेवरे न लोहितदोणि जानाति—'मयि धम्मनिकळेवरं ठित' ति, न पि धम्मनिकळेवर जानाति—'अहं लोहितदोणिया ठित' ति, एवमेव न सरीरब्भन्तर जानाति—'मयि अन्तं ठित' ति, न पि अन्त जानाति—'अहं सरीरब्भन्तरे' ठित' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति अन्त नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

अन्तगुणं अन्तन्तरे एकवीसतिअन्तभोगे[1] बन्धित्वा ठित। तत्थ यथा पादपुञ्छनरज्जुमण्डलक सिब्बेत्वा ठितेसु रज्जुकेसु न पादपुञ्छनरज्जुमण्डलकं जानाति—'रज्जुका मं सिब्बित्वा ठिता' ति, न पि रज्जुका जानन्ति—'मयं पादपुञ्छनरज्जुमण्डलकं सिब्बित्वा ठिता' ति, एवमेव न अन्त जानाति—'अन्तगुण मं आबन्धित्वा ठित' ति, न पि अन्तगुणं जानाति—'अहं अन्तं आबन्धित्वा ठित' ति। अञ्ञमञ्ञ आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति अन्तगुण नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

उदरियं उदरे ठित असितपीतखायितसायित। तत्थ यथा सुवानदोणिय ठिते सुवानवमथुम्हि न सुवानदोणि जानाति—'मयि सुवानवमथु ठिता' ति, न पि सुवानवमथु जानाति—'अहं सुवानदोणिय ठितो' ति; एवमेव न उदर जानाति—'मयि उदरियं ठित' ति, न पि उदरिय जानाति—'अह उदरे ठित' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति उदरिय नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

करीसं पक्कासयसङ्खाते अट्ठङ्गुलवेळुपब्बसदिसे अन्तपरियोसाने ठित। तत्थ यथा वेळुपब्बे ओमद्दित्वा पक्खित्ताय सण्हपण्डुमत्तिकाय न वेळुपब्ब जानाति—'मयि पण्डुमत्तिका ठिता' ति, न पि पण्डुमत्तिका जानाति—'अह वेळुपब्बे ठिता' ति; एवमेव न पक्कासयो जानाति—'मयि करीसं ठित' ति, न पि करीसं जानाति—'अहं पक्कासये ठितं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति करीसं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

---

१. एकवीसतिअन्तभोगे ति। एकवीसतिया ठानेसु ओभग्गोभग्गे अन्तमण्डले।

मत्थलुङ्गं सीसकटाहब्भन्तरे ठितं। तत्थ यथा पुराणलाबुकटाहे पक्खित्ताय पिट्ठपिण्डिया न लाबुकटाहं जानाति—'मयि पिट्ठपिण्डि ठिता' ति, न पि पिट्ठपिण्डि जानाति—'अहं लाबुकटाहे ठिता' ति, एवमेव न सीसकटाहब्भन्तरं जानाति—'मयि मत्थलुङ्गं ठितं' ति, न पि मत्थलुङ्गं जानाति—'अहं सीसकटाहब्भन्तरे ठितं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति मत्थलुङ्गं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो थद्धो पथवीधातू ति।

पित्तेसु अबद्धपित्तं जीवितिन्द्रियपटिबद्धं सकलसरीरं ब्यापेत्वा ठितं। बद्धपित्तं पित्तकोसके ठितं। तत्थ यथा पूवं ब्यापेत्वा ठिते तेले न पूवं जानाति—'तेलं मं ब्यापेत्वा ठितं' ति, न पि तेलं जानाति—'अहं पूवं ब्यापेत्वा ठितं' ति; एवमेव न सरीरं जानाति—'अबद्धपित्तं मं ब्यापेत्वा ठितं' ति, न पि अबद्धपित्तं जानाति—'अहं सरीरं ब्यापेत्वा ठितं' ति। यथा वस्सोदकेन पुण्णे कोसातकीकोसके न कोसातकीकोसको जानाति—'मयि वस्सोदकं ठितं' ति, न पि वस्सोदकं जानाति—'अहं कोसातकीकोसके ठितं' ति, एवमेव न पित्तकोसको जानाति—'मयि बद्धपित्तं ठितं' ति, न पि बद्धपित्तं जानाति—'अहं पित्तकोसके ठितं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति पित्तं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो[1] आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

सेम्हं एकपत्तपूरणप्पमाणं उदरपटले ठितं। तत्थ यथा उपरि सञ्जातफेणपटलाय चन्दनिकाय[2] न चन्दनिका जानाति—'मयि फेणपटलं ठितं' ति, न पि फेणपटलं जानाति—'अहं चन्दनिकाय ठितं' ति; एवमेव न उदरपटलं जानाति—'मयि सेम्हं ठितं' ति, न पि सेम्हं जानाति—'अहं उदरपटले ठितं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति सेम्हं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

पुब्बो अनिबद्धोकासो यत्थ यत्थेव खाणुकण्टकप्पहरणअग्गिजालादीहि अभिहते सरीरप्पदेसे लोहितं सण्ठहित्वा पच्चति, गण्डपिळकादयो वा उप्पज्जन्ति, तत्थ तत्थ तिट्ठति। तत्थ यथा फरसुप्पहारादिवसेन पग्घरितनिय्यासे रुक्खे न रुक्खस्स पहारादिप्पदेसा जानन्ति—'अम्हेसु निय्यासो ठितो' ति, न पि निय्यासो जानाति—'अहं रुक्खस्स पहारादिप्पदेसेसु ठितो' ति; एवमेव न

१. **यूसभूतो** ति। रसभूतो।

२. उच्छिट्ठोदकगब्भमलादीनं छड्डनट्ठानं चन्दनिका, तस्सं **चन्दनिकायं**।

सरीरस्स खाणुकण्टकादीहि अभिहतप्पदेसा जानन्ति—'अम्हेसु पुब्बो ठितो' ति, न पि पुब्बो जानाति—'अहं तेसु पदेसेसु ठितो' ति। अञ्ञमञ्ञ आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति पुब्बो नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

लोहितेसु ससरणलोहित पित्तं विय सकलसरीर ब्यापेत्वा·ठितं। सन्निचितलोहित यकनट्ठानस्स हेट्ठाभाग पूरेत्वा एकपत्तपूरमत्त वक्कहदययकनपप्फासानि तेमेन्ता ठिता। तत्थ ससरणलोहिते अबद्धपित्तसदिसो व विनिच्छयो। इतर पन यथा जज्जरकपाले ओवट्ठे उदके हेट्ठा लेड्डुखण्डादीनि तेमियमाने न लेड्डुखण्डादीनि जानन्ति—'मय उदकेन तेमियमाना' ति, न पि उदकं जानाति—'अह लेड्डुखण्डादीनि तेमेमी' ति, एवमेव न यकनस्स हेट्ठाभागट्ठान वक्कादीनि वा जानन्ति—'मयि लोहित ठित, अम्हे वा तेमयमान ठित' ति, न पि लोहित जानाति—'अहं यकनस्स हेट्ठाभागं पूरेत्वा वक्कादीनि तेमयमान ठित' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति लोहित नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

सेदो अग्गिसन्तापादिकालेसु केसलोमकूपविवरानि पूरेत्वा तिट्ठति चेव पग्घरति च। तत्थ यथा उदका अब्बूळ्हमत्तेसु भिसमुळाल-कुमुदनाळकलापेसु न भिसादिकलापविवरानि जानन्ति—'अम्हेहि उदक पग्घरती' ति, न पि भिसादिकलापविवरेहि पग्घरन्तं उदक जानाति—'अह भिसादिकलापविवरेहि पग्घरामी' ति; एवमेव न केसलोमकूपविवरानि जानन्ति—'अम्हेहि सेदो पग्घरती' ति, नपि सेदो जानाति—'अहं केसलोमकूपविवरेहि पग्घरामी' ति। अञ्ञमञ्ञ आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति सेदो नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

मेदो थूलस्स सकलसरीरं फरित्वा किसस्स जङ्घमंसादीनि निस्साय ठितो पत्थिन्नसिनेहो। तत्थ यथा हलिद्दिपिलोतिकपटिच्छन्ने मंसपुञ्जे न मंसपुञ्जो जानाति—'म निस्साय हलिद्दिपिलोतिका ठिता' ति, न पि हलिद्दिपिलोतिका जानाति—'अह मसपुञ्जं निस्साय ठिता' ति; एवमेव न सकलसरीरे जङ्घादीसु वा ठित मस जानाति—'मं निस्साय मेदो ठितो' ति, न पि मेदो जानाति—'अहं सकलसरीरे जङ्घादीसु वा मंसं निस्साय ठितो' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति मेदो नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो पत्थिन्नयूसो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

अस्सु यदा सञ्जायति तदा अक्खिकूपके पूरेत्वा तिट्ठति वा पग्घरति वा। तत्थ यथा उदकपुण्णेसु तरुणतालट्ठिकूपकेसु न तरुणतालट्ठिकूपका जानन्ति—'अम्हेसु उदकं ठितं' ति, न पि तरुणतालट्ठिकूपकेसु ठितं उदकं जानाति—'अहं तरुणतालट्ठिकूपकेसु ठितं' ति; एवमेव न अक्खिकूपका जानन्ति—'अम्हेसु अस्सु ठितं' ति, न पि अस्सु जानाति—'अहं अक्खिकूपकेसु ठितं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति अस्सु नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

वसा अग्गिसन्तापादिकाले हत्थतल-हत्थपिट्ठि-पादतल-पादपिट्ठि-नासापुट-नलाट-असकूटेसु ठितविलीनस्नेहो। तत्थ यथा पक्खित्ततेले आचामे न आचामो जानाति—'मं तेलं अज्झोत्थरित्वा ठितं' ति, न पि तेलं जानाति—'अहं आचामं अज्झोत्थरित्वा ठितं' ति, एवमेव न हत्थतलादिप्पदेसो जानाति—'मं वसा अज्झोत्थरित्वा ठिता' ति, न पि वसा जानाति—'अहं हत्थतलादिप्पदेसं अज्झोत्थरित्वा ठिता' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति वसा नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

खेळो तथारूपे खेळुप्पत्तिपच्चये[१] सति उभोहि कपोलपस्सेहि ओरोहित्वा जिव्हातले तिट्ठति। तत्थ यथा अब्बोच्छिन्नउदकनिस्सन्दे नदीतीरकूपके न कूपतलं जानाति—'मयि उदकं सन्तिट्ठती' ति, न पि उदकं जानाति—'अहं कूपतले सन्तिट्ठामी' ति; एवमेव न जिव्हातलं जानाति—'मयि उभोहि कपोलपस्सेहि ओरोहित्वा खेळो ठितो' ति, न पि खेळो जानाति—'अहं उभोहि कपोलपस्सेहि ओरोहित्वा जिव्हातले ठितो' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति खेळो नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

सिङ्घाणिका यदा सञ्जायति, तदा नासापुटे पूरेत्वा तिट्ठति वा पग्घरति वा। तत्थ यथा पूतिदधिभरिताय सिप्पिकाय न सिप्पिका जानाति—'मयि पूतिदधि ठितं' ति, न पि पूतिदधि जानाति—'अहं सिप्पिकाय ठितं' ति; एवमेव न नासापुटा जानन्ति—'अम्हेसु सिङ्घाणिका ठिता' ति, न पि सिङ्घाणिका जानाति—'अहं नासापुटेसु ठिता' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति सिङ्घाणिका नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

---

१. खेळुप्पत्तिपच्चये। अम्बिलग्गमधुरग्गादिके।

लसिका अट्ठिकसन्धीनं अब्भञ्जनकिच्चं साधयमाना असीतिसतसन्धीसु ठिता। तत्थ यथा तेलब्भञ्जिते अक्खे न अक्खो जानाति—'मं तेलं अब्भञ्जित्वा ठितं' ति, न पि तेलं जानाति—'अहं अक्खं अब्भञ्जित्वा ठितं' ति; एवमेव न असीतिसतसन्धियो जानन्ति—'लसिका अम्हे अब्भञ्जित्वा ठिता' ति, न पि लसिका जानाति—'अहं असीतिसतसन्धियो अब्भञ्जित्वा ठिता' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति लसिका नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

मुत्तं वत्थिस्स अब्भन्तरे ठितं। तत्थ यथा चन्दनिकाय पक्खित्ते रवणघटे न रवणघटो जानाति—'मयि चन्दनिकारसो ठितो' ति, न पि चन्दनिकारसो जानाति—'अहं रवणघटे ठितो' ति; एवमेव न वत्थि जानाति—'मयि मुत्तं ठितं' ति, न पि मुत्तं जानाति—'अहं वत्थिम्हि ठितं' ति। अञ्ञमञ्ञं आभोगपच्चवेक्खणरहिता एते धम्मा। इति मुत्तं नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो यूसभूतो आबन्धनाकारो आपोधातू ति।

एवं केसादीसु मनसिकारं पवत्तेत्वा येन सन्तप्पति, अयं इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो परिपाचनाकारो तेजोधातू ति, येन जीरीयति, येन परिडय्हति, येन असितपीतखायितसायितं सम्मा परिणामं गच्छति, अयं इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो परिपाचनाकारो तेजोधातू ति एवं तेजोकोट्ठासेसु मनसिकारो पवत्तेतब्बो।

ततो उद्धङ्गमे वाते उद्धङ्गमवसेन परिग्गहेत्वा, अधोगमे अधोगमवसेन, कुच्छिसये कुच्छिसयवसेन, कोट्ठासये कोट्ठासयवसेन, अङ्गमङ्गानुसारिम्हि अङ्गमङ्गानुसारिवसेन, अस्सासपस्सासे अस्सासपस्सासवसेन परिग्गहेत्वा उद्धङ्गमा वाता नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो वित्थम्भनाकारो वायोधातू ति। अधोगमा वाता नाम, कुच्छिसया वाता नाम, कोट्ठासया वाता नाम, अङ्गमङ्गानुसारिनो वाता नाम इमस्मिं सरीरे पाटियेक्को कोट्ठासो अचेतनो अब्याकतो सुञ्ञो निस्सत्तो वित्थम्भनाकारो वायोधातू ति एवं वायोकोट्ठासेसु मनसिकारो पवत्तेतब्बो।

तस्सेवं पवत्तमनसिकारस्स धातुयो पाकटा होन्ति। ता पुनप्पुनं आवज्जतो मनसिकरोतो वुत्तनयेनेव उपचारसमाधि उप्पज्जति। (२)

२० यस्स पन एवं भावयतो कम्मट्ठानं न इज्झति, तेन **सलक्खणसङ्खेपतो** भावेतब्बं। कथं?

वीसतिया कोट्ठासेसु थद्धलक्खणं पथवीधातू ति ववत्थपेतब्बं। तत्थेव

आबन्धनलक्खणं आपोधातू ति, परिपाचनलक्खणं तेजोधातू, वित्थम्भनलक्खण वायोधातू ति।

द्वादससु कोट्ठासेसु आबन्धनलक्खणं आपोधातू ति ववत्थपेतब्बं। तत्थेव परिपाचनलक्खण तेजोधातू ति। वित्थम्भनलक्खणं वायोधातू ति। थद्धलक्खणं पथवीधातू ति।

चतूसू कोट्ठासेसु परिपाचनलक्खण तेजोधातू ति ववत्थपेतब्ब। तेन अविनिभुत्तं वित्थम्भनलक्खण वायोधातू ति। थद्धलक्खणं पथवीधातू ति। आबन्धनलक्खणं आपोधातू ति।

छसु कोट्ठासेसु वित्थम्भनलक्खणं वायोधातू ति ववत्थपेतब्बं। तत्थेव थद्धलक्खण पथवीधातू ति। आबन्धनलक्खणं आपोधातू ति। परिपाचनलक्खण तेजोधातू ति। तस्सेव ववत्थापयतो धातुयो पाकटा होन्ति। ता पुनप्पुनं आवज्जयतो मनसिकरोतो वुत्तनयेनेव उपचारसमाधि उप्पज्जति। (३)

२१ यस्स पन एव पि भावयतो कम्मट्ठानं न इज्झति, तेन **सलक्खण-विभत्तितो** भावेतब्बं। कथ? पुब्बे वुत्तनयेनेव केसादयो परिग्गहेत्वा केसम्हि थद्धलक्खण पथवीधातू ति ववत्थपेतब्ब। तत्थेव आबन्धनलक्खण आपोधातू ति। परिपाचनलक्खण तेजोधातू ति। वित्थम्भनलक्खण वायोधातू ति। एवं सब्ब-कोट्ठासेसु एकेकस्मिं कोट्ठासे चतस्सो चतस्सो धातुयो ववत्थपेतब्बा। तस्सेवं ववत्थापयतो धातुयो पाकटा होन्ति। ता पुनप्पुनं आवज्जयतो मनसिकरोतो वुत्तनयेनेव उपचारसमाधि उप्पज्जति॥ (४)

२२ अपि च खो पन १ वचनत्थतो, २. कलापतो, ३ चुण्णतो, ४ लक्खणा-दितो, ५ समुट्ठानतो, ६ नानत्तेकत्ततो, ७ विनिब्भोगाविनिब्भोगतो, ८ सभागविसभागतो, ९. अज्झत्तिकबाहिरविसेसतो, १०. सङ्गहतो, ११ पच्च-यतो, १२. असमन्नाहारतो, १३. पच्चयविभागतो ति इमेहि पि आकारेहि धातुयो मनसिकातब्बा।

२३ तत्थ **वचनत्थतो** मनसिकरोन्तेन पत्थटत्ता पथवी। अप्पोति आपियति अप्पायती ति वा आपो। तेजती ति तेजो। वायती ति वायो। अविसेसेन पन सलक्खणधारणतो दुक्खादानतो दुक्खाधानतो च धातू ति। एव विसेससामञ्ञ-वसेन वचनत्थतो मनसिकातब्बा। (१)

कलापतो ति। या अय केसा लोमा ति आदिना नयेन बीसतिया आकारेहि पथवीधातु, पित्त सेम्ह ति च आदिना नयेन द्वादसहाकारेहि आपोधातु निद्दिट्ठा, तत्थ यस्मा—

वण्णो गन्धो रसो ओजा चतस्सो चा पि धातुयो।
अट्ठधम्मसमोधना होति केसा ति सम्मुति।
तेसं येव विनिब्भोगा नत्थि केसा ति सम्मुति॥

तस्मा केसा पि अट्ठधम्मकलापमत्तमेव। तथा लोमादयो ति। यो पनेत्थ कम्मसमुट्ठानो कोट्ठासो, सो जीवितिन्द्रियेन च भावेन च सद्धिं दसधम्मकलापो पि होति। उस्सदवसेन पन पथवीधातु आपोधातू ति सङ्ख गतो। एव कलापतो मनसिकातब्बा। (२)

चुण्णतो ति। इमस्मि हि सरीरे मज्झिमेन पमाणेन परिग्गय्हमाना परमाणु-भेदसञ्चुण्णा सुखुमरजभूता पथवीधातु दोणमत्ता सिया। सा ततो उपड्ढप्प-माणाय आपोधातुया सङ्गहिता, तेजोधातुया अनुपालिता, वायोधातुया वित्थम्भिता न विकिरति, न विद्धसति, अविकिरियमाना अविद्धंसियमाना अनेकविध इत्थिपुरिसलिङ्गादिभावविकप्प उपगच्छति, अणु-थूल-दीघ-रस्स-थिर-कथिनादिभाव च पकासेति।

यूसगता आबन्धनाकारभूता पनेत्थ आपोधातु पथवीपतिट्ठिता तेजानु-पालिता वायोवित्थम्भिता न पग्घरति न परिस्सवति, अपग्घरमाना अपरिस्सव-माना पीणितपीणितभाव दस्सेति।

असितपीतादिपाचका चेत्थ उसुमाकारभूता उण्हत्तलक्खणा तेजोधातु पथवी-पतिट्ठिता आपोसङ्गहिता वायोवित्थम्भिता इमं काय परिपाचेति, वण्णसम्पत्ति चस्स आवहति, ताय च पन परिपाचितो अयं कायो न पूतिभाव दस्सेति।

अङ्गमङ्गानुसटा चेत्थ समुदीरणवित्थम्भनलक्खणा वायोधातु पथवीपति-ट्ठिता आपोसङ्गहिता तेजानुपालिता इम कायं वित्थम्भेति। ताय च पन वित्थम्भितो अय कायो न परिपतति, उजुकं सण्ठाति। अपराय वायोधातुया समब्भाहतो गमनट्ठाननिसज्जासयनइरियापथेसु विञ्ञत्तिं दस्सेति, समिञ्जेति, सम्पसारेति, हत्थपाद लाळेति। एवमेत इत्थिपुरिसादिभावेन बालजनवञ्चनं मायारूपसदिसं धातुयन्त पवत्तती ति। एव चुण्णतो मनसिकातब्बा। (३)

लक्खणादितो ति। पथवीधातु किंलक्खणा ? किंरसा ? किं पच्चुपट्ठाना ? ति एव चतस्सो पि धातुयो आवज्जेत्वा पथवीधातु कक्खळत्तलक्खणा, पतिट्ठान-रसा, सम्पटिच्छनपच्चुपट्ठाना। आपोधातु पग्घरणलक्खणा, ब्रूहनरसा, सङ्गह-पच्चुपट्ठाना। तेजोधातु उण्हत्तलक्खणा, परिपाचनरसा, मद्दवानुप्पदानपच्चु-पट्ठाना। वायोधातु वित्थम्भनलक्खणा, समुदीरणरसा, अभिनीहारपच्चपट्ठाना ति। एवं लक्खणादितो मनसिकातब्बा। (४)

समुट्ठानतो ति। ये इमे पथवीधातुआदीन वित्थारतो दस्सनवसेन केसादयो द्वाचत्तालीस कोट्ठासा दस्सिता, तेसु उदरिय करीसं पुब्बो मुत्तं—ति इमे चत्तारो कोट्ठासा उतुसमुट्ठाना व। अस्सु सेदो खेळो सिङ्घाणिका—ति इमे चत्तारो उतुचित्तसमुट्ठाना। असितादिपरिपाचको तेजो कम्मसमुट्ठानो व।

अस्सासपस्सासा चित्तसमुट्ठाना व। अवसेसा सब्बे पि चतुसमुट्ठाना ति। एव समुट्ठानतो मनसिकातब्बा। (५)

नानत्तेकत्ततो ति। सब्बासं पि धातून सलक्खणादितो नानत्तं। अञ्ञानेव हि पथवीधातुया लक्खणरसपच्चुपट्ठानानि, अञ्ञानि आपोधातुआदीन। एव लक्खणादिवसेन पन कम्मसमुट्ठानादिवसेन च नानत्तभूतान पि एतास रूप-महाभूत-धातु-धम्म-अनिच्चादिवसेन एकत्त होति।

सब्बा पि हि धातुयो रुप्पनलक्खण अनतीतत्ता रूपानि। महन्तपातुभावादीहि कारणेहि महाभतानि।

महन्तपातुभावादीही ति। एता हि धातुयो—महन्तपातुभावतो, महाभूत-सामञ्ञतो, महापग्हिारतो, महाविकारतो, महत्ता भूतत्ता चा ति इमेहि कारणे हिमहाभूतानी ति वुच्चन्ति।

तत्थ **महन्तपातुभावतो** ति। एतानि हि अनुपादिन्नसन्ताने पि उपादिन्न-सन्ताने पि महन्तानि पातुभूतानि। तेसं अनुपादिन्नसन्ताने—

दुवे सतसहस्सानि चत्तारि नहुतानि च।
एत्तक बहलत्तेन सङ्खाताय वसुन्धरा ति॥

आदिना नयेन महन्तपातुभावता **बुद्धानुस्सतिनिद्देसे** (विसु०—१६८) वुत्ता व।

उपादिन्नसन्ताने पि मच्छकच्छपदेवदानवादिसरीरवसेन महन्तानेव पातु-भूतानि। वुत्तं हेतं—"सन्ति, भिक्खवे, महासमुद्दे योजनसतिका पि अत्तभावा" (अं० ३–३१३) ति आदि। (क)

महाभूतसामञ्ञतो ति। एतानि हि यथा मायाकारो अमणिं येव उदकं मणिं कत्वा दस्सेति, असुवण्ण येव लेड्डुं सुवण्णं कत्वा दस्सेति। यथा च सयं नेव यक्खो न पक्खी समानो यक्खभावं पि पक्खिभाव पि दस्सेति; एवमेव सयं अनीलानेव हुत्वा नीलं उपादारूपं दस्सेन्ति, अपीतानि अलोहितानि अनोदातानेव हुत्वा ओदातं उपादारूप दस्सेन्ती ति मायाकारमहाभूतसामञ्ञतो महाभूतानि।

यथा च यक्खादीनि महाभूतानि यं गण्हन्ति, नेव नेसं तस्स अन्तो न बहि ठानं उपलब्भति, न च तं निस्साय न तिट्ठन्ति; एवमेव तानि पि नेव अञ्ञ-मञ्ञस्स अन्तो न बहि ठितानि हुत्वा उपलब्भन्ति, न च अञ्ञमञ्ञ निस्साय न तिट्ठन्ती ति अचिन्तेय्यट्ठानताय यक्खादिमहाभूतसामञ्ञतो पि महाभूतानि।

यथा च यक्खिनीसङ्खातानि मनापेहि वण्णसण्ठानविक्खेपेहि अत्तनो भयानक-भावं पटिच्छादेत्वा सत्ते वञ्चेन्ति, एवमेव एतानि पि इत्थिपुरिससरीरादीसु मनापेन छविवण्णेन मनापेन अत्तनो अङ्गपच्चङ्गसण्ठानेन मनापेन च हत्थङ्गुलि-पादङ्गुलिभमुकविक्खेपेन अत्तनो कक्खळतादिभेदं सरसलक्खणं पटिच्छादेत्वा

बालजनं वञ्चेन्ति, अत्तनो सभावं दट्ठु न देन्ती ति वञ्चकत्तेन यक्खिनी-महाभूतसामञ्ञतो पि महाभूतानि। (ख)

महापरिहारतो ति। महन्तेहि पच्चयेहि परिहरितब्बतो। एतानि हि दिवसे दिवसे उपनेतब्बत्ता महन्तेहि घासच्छादनादीहि भूतानि पवत्तानी ति महाभूतानि। महापरिहारानि वा भूतानी ति पि महाभूतानि। (ग)

महाविकारतो ति। एतानि हि अनुपादिन्नानि पि उपादिन्नानि पि महा-विकारानि होन्ति। तत्थ अनुपादिन्नान कप्पवुट्ठाने विकारमहत्तं पाकटं होति। उपादिन्नानं धातुक्खोभकाले। तथा हि—

भूमितो वुट्ठिता याव ब्रह्मलोका विधावति।
अच्चि अच्चिमतो लोके डय्हमानम्हि तेजसा॥
कोटिसतसहस्सेकं चक्कवाळं विलीयति।
कुपितेन यदा लोको सलिलेन विनस्सति॥
कोटिसतसहस्सेकं चक्कवाळं विकीरति।
वायोधातुप्पकोपेन यदा लोको विनस्सति॥
पत्थद्धो भवति कायो दट्ठो कट्ठमुखेन वा।
पथवीधातुप्पकोपेन होति कट्ठमुखे व सो॥
पूतिको भवति कायो दट्ठो पूतिमुखेन वा।
आपोधातुप्पकोपेन होति पूतिमुखे व सो॥
सन्तत्तो भवति कायो दट्ठो अग्गिमुखेन वा।
तेजोधातुप्पकोपेन होति अग्गिमुखे व सो॥
सञ्छिन्नो भवति कायो दट्ठो सत्थमुखेन वा।
वायोधातुप्पकोपेन होति सत्थमुखे व सो॥

इति महाविकारानि भूतानी ति महाभूतानि। (घ)

महत्ता भूतत्ता चा ति। एतानि हि महन्तानि महता वायामेन परिग्गहे-तब्बत्ता भूतानि विज्जमानत्ता ति महत्ता भूतत्ता च महाभूतानि। एव सब्बा पेता धातुयो महन्तपातुभावादीहि कारणेहि महाभूतानि। (ङ)

सलक्खणधारणतो पन दुक्खादानतो च दुक्खाधानतो च सब्बा पि धातु-लक्खणं अनतीतत्ता **धातुयो**। सलक्खणधारणेन च अत्तनो खणानुरूपधारणेन च **धम्मा**। खयट्ठेन **अनिच्चा**। भयट्ठेन **दुक्खा**। असारकट्ठेन **अनत्ता**। इति सब्बासं पि रूप-महाभूत-धातु-धम्म-अनिच्चादिवसेन एकत्तं ति एवं नानत्ते-कत्ततो मनसिकातब्बा। (६)

विनिब्भोगाविनिब्भोगतो ति। सहुप्पन्ना व एता एकेकस्मि सब्बपरियन्तिमे

सुद्धट्ठकादिकलापे पि पदेसेन अविनिब्भुत्ता, लक्खणेन पन विनिब्भुत्ता ति एव विनिब्भोगाविनिब्भोगतो मनसिकातब्बा। (७)

सभागविसभागतो ति। एव अविनिब्भुत्तासु चापि एतासु पुरिमा द्वे गरुकत्ता सभागा। तथा पच्छिमा लहुकत्ता। पुरिमा पन पच्छिमाहि, पच्छिमा च पुरिमाहि विसभागा ति एव सभागविसभागतो मनसिकातब्बा। (८)

अज्झत्तिकबाहिरविसेसतो ति। अज्झत्तिका धातुयो विञ्ञाणवत्थुविञ्ञत्ति-इन्द्रियानं निस्सया होन्ति, सइरियापथा चतुसमुट्ठाना। बाहिरा वुत्तविपरीत-प्पकारा ति एव अज्झत्तिकबाहिरविसेसतो मनसिकातब्बा। (९)

सङ्गहतो ति। कम्मसमुट्ठाना पथवीधातु कम्मसमुट्ठानाहि इतराहि एक-सङ्गहा होति समुट्ठाननानत्ताभावतो, तथा चित्तादिसमुट्ठाना चित्तादिसमुट्ठा-नाही ति एवं सङ्गहतो मनसिकातब्बा। (१०)

पच्चयतो ति। पथवीधातु आपोसङ्गहिता तेजोअनुपालिता वायोवित्थम्भिता तिण्ण महाभूतानं पतिट्ठा हुत्वा पच्चयो होति। आपोधातु पथवीपतिट्ठिता तेजोअनुपालिता वायोवित्थम्भिता तिण्णं महाभूतान आबन्धन हुत्वा पच्चयो होति। तेजोधातु पथवीपतिट्ठिता आपोसङ्गहिता वायोवित्थम्भिता तिण्णं महाभूतानं परिपाचनं हुत्वा पच्चयो होति। वायोधातु पथवीपतिट्ठिता आपोसङ्गहिता तेजोपरिपाचिता तिण्ण महाभूतान वित्थम्भनं हुत्वा पच्चयो होती ति एवं पच्चयतो मनसिकातब्बा। (११)

असमन्नाहारतो ति। पथवीधातु चेत्थ "अह पथवीधातू" ति वा, 'तिण्णं महाभूतान पतिट्ठा हुत्वा पच्चयो होमी' ति वा न जानाति, इतरानि पि तीणि "अम्हाक पथवीधातु पतिट्ठा हुत्वा पच्चयो होती" ति न जानन्ति। एस नयो सब्बत्था ति एवं असमन्नाहारतो मनसिकातब्बा। (१२)

पच्चयविभागतो ति। धातून हि कम्म, चित्तं, आहारो, उतू ति चत्तारो पच्चया। तत्थ कम्मसमुट्ठानानं कम्ममेव पच्चयो होति, न चित्तादयो। चित्तादिसमुट्ठानानं पि चित्तादयो व पच्चया होन्ति, न इतरे। कम्मसमुट्ठा-नानं च कम्मं जनकपच्चयो होति, सेसानं परियायतो उपनिस्सयपच्चयो होति। चित्तसमुट्ठानानं चित्तं जनकपच्चयो होति, सेसानं पच्छाजातपच्चयो अत्थि-पच्चयो अविगतपच्चयो च। आहारसमुट्ठानान आहारो जनकपच्चयो होति, सेसानं आहारपच्चयो अत्थिपच्चयो अविगतपच्चयो च। उतुसमुट्ठानानं उतु जनकपच्चयो होति, सेसानं अत्थिपच्चयो अविगतपच्चयो च। कम्मसमुट्ठानं महाभूतं कम्मसमुट्ठानानं पि महाभूतानं पच्चयो होति, चित्तादिसमुट्ठानानं पि। तथा चित्तसमुट्ठानं, आहारसमुट्ठानं। उतुसमुट्ठानं महाभूत उतुसमुट्ठानान पि महाभूतानं पच्चयो होति, कम्मादिसमुट्ठानानं पि।

तत्थ कम्ममसमुट्ठाना पथवीधातु कम्मसमुट्ठानानं इतरासं सहजातअञ्ञ-मञ्ञ-निस्सय-अत्थि-अविगतवसेन चेव पतिट्ठावसेन च पच्चयो होति, न जनक-वसेन। इतरेसं तिसन्ततिमहाभूतानं निस्सय-अत्थि-अविगतवसेन पच्चयो होति, न पतिट्ठावसेन। आपोधातु चेत्थ इतरासं तिण्णं सहजातादिवसेन चेव आबन्धनवसेन च पच्चयो होति, न जनकवसेन। इतरेसं तिसन्ततिकानं निस्सय-अत्थि-अविगतपच्चयवसेनेव, न आबन्धनवसेन न जनकवसेन। तेजोधातु पेत्थ इतरासं तिण्णं सहजातादिवसेन चेव परिपाचनवसेन च पच्चयो होति, न जनकवसेन। इतरेसं तिसन्ततिकानं निस्सय-अत्थि-अविगतपच्चयवसेनेव, न परिपाचनवसेन न जनकवसेन। वायोधातु पेत्थ इतरासं तिण्णं सहजातादिवसेन चेव वित्थम्भनवसेन च पच्चयो होति, न जनकवसेन। इतरेसं तिसन्ततिकानं निस्सय-अत्थि-अविगतपच्चयवसेनेव, न वित्थम्भनवसेन न जनकवसेन। चित्त-आहार-उतुसमुट्ठान-पथवीधातुआदीसु पि एसेव नयो। (१३)

२३. एवं सहजातादिपच्चयवसप्पवत्तासु च पनेतासु धातूसु—

एकं पटिच्च तिस्सो चतुधा तिस्सो पटिच्च एका च।
द्वे धातुयो पटिच्च द्वे छद्धा सम्पवत्तन्ति॥

पथवीआदीसु हि एकेकं पटिच्च इतरा तिस्सो तिस्सो ति एवं एकं पटिच्च तिस्सो चतुधा सम्पवत्तन्ति। तथा पथवीधातुआदीसु एकेका इतरा तिस्सो पटिच्चा ति एवं तिस्सो पटिच्च एका चतुधा सम्पवत्तति। पुरिमा पन द्वे पटिच्च पच्छिमा, पच्छिमा च द्वे पटिच्च पुरिमा, पठम-ततिया पटिच्च दुतियचतुत्था, दुतियचतुत्था पटिच्च पठमततिया, पठमचतुत्था पटिच्च दुतिय-ततिया, दुतियततिया पटिच्च पठमचतुत्था ति एवं द्वे धातुयो पटिच्च द्वे छधा सम्पवत्तन्ति।

२४. तासु पथवीधातु अभिक्कम्म-पटिक्कम्मादिकाले उप्पीळनस्स पच्चयो होति, सा व आपोधातुया अनुगता पतिट्ठापनस्स। पथवीधातुया पन अनुगता आपोधातु अवक्खेपनस्स। वायोधातुया अनुगता तेजोधातु उद्धरणस्स। तेजो-धातुया अनुगता वायोधातु अतिहरणवीतिहरणानं पच्चयो होती ति एवं पच्चयविभागतो मनसिकातब्बा।

२५. एवं वचनत्थादिवसेन मनसि करोन्तस्सा पि हि एकेकेन मुखेन धातुयो पाकटा होन्ति। ता पुनप्पुनं आवज्जयतो मनसिकरोतो वुत्तनयेनेव उपचार-समाधि उप्पज्जति। स्वायं चतुन्नं धातूनं ववत्थापकस्स ञाणस्सानुभावेन उप्पज्जनतो चतुधातुववत्थानं त्वेव सङ्ख्यं गच्छति।

२६. इदं च पन चतुधातुववत्थानमनुयुत्तो भिक्खु सुञ्ञतं अवगाहति,

सत्तसञ्ञ समुग्घातेति। सो सत्तससञ्ञाय समूहतत्ता वाळमिगयक्खरक्खसादि-विकप्प अनावज्जमानो भयभेरवसहो होति, अरतिरतिसहो, न इट्ठानिट्ठेसु उग्घातनिग्घात पापुणाति। महापञ्ञो च पन होति, अमतपरियोसानो वा सुगतिपरायनो वा ति॥

एव महानुभावं योगिवरसहस्सकीळित एत।
चतुधातुववत्थान निच्च सेवेथ मेधावी ति॥

अयं चतुधातुववत्थानस्स भावनानिद्देसो॥

२७. एत्तावता च यं समाधिस्स वित्थारं भावनानय च दस्सेतु "को समाधि, केनट्ठेन समाधी" ति आदिना नयेन पञ्हाकम्म कतं, तत्थ "कथ भावेतब्बो" ति इमस्स पदस्स सब्बप्पकारतो अत्थवण्णना समत्ता होति।

दुविधो येव हयं इध अधिप्पेतो—उपचारसमाधि चेव, अप्पनासमाधि च। तत्थ दससु कम्मट्ठानेसु अप्पनापुब्बभागचित्तेसु च एकग्गता **उपचारसमाधि**, अवसेसकम्मट्ठानेसु चित्तेकग्गता **अप्पनासमाधि**। सो दुविधो पि तेस कम्मट्ठानानं भावितत्ता भावितो होति। तेन वुत्त[1]—"कथ भावेतब्बो ति इमस्स पदस्स सब्बप्पकारतो अत्थवण्णना समत्ता" ति।

समाधिआनिसंसकथा

२८. य पन वुत्त "**समाधिभावनाय को आनिसंसो**" ति, तत्थ दिट्ठधम्म-सुखविहारादिपञ्चविधो समाधिभावनाय आनिससो। तथा हि ये अरहन्तो खीणासवा समापज्जित्वा एकग्गचित्ता 'सुख दिवस विहरिस्सामा' ति समाधि भावेन्ति, तेसं अप्पनासमाधिभावना **दिट्ठधम्मसुखविहारानिसंसा** होति। तेनाह भगवा—"न खो पनेते, चुन्द, अरियस्स विनये सल्लेखा वुच्चन्ति। दिट्ठधम्म-सुखविहारा एते अरियस्स विनये वुच्चन्ती" (म० १–५४) ति।

२९. सेक्खपुथुज्जनानं समापत्तितो वुट्ठाय 'समाहितेन चित्तेन विपस्सि-स्सामा' ति भावयत विपस्सनाय पदट्ठानत्ता अप्पनासमाधिभावना पि सम्बाधे ओकासाधिगमनयेन उपचारसमाधिभावना पि **विपस्सनानिसंसा** होति। तेनाह भगवा—"समाधि, भिक्खवे, भावेथ। समाहितो, भिक्खवे, भिक्खु यथाभूत पजानाती (सं० २–२५२)" ति।

३० ये पन अट्ठ समापत्तियो निब्बत्तेत्वा अभिञ्ञापादकं झानं समा-पज्जित्वा समापत्तितो वुट्ठाय 'एको पि हुत्वा बहुधा होती'ति वुत्तनया अभिञ्ञा-पदट्ठानत्ता अप्पनासमाधिभावना **अभिञ्ञानिसंसा** होति। तेनाह भगवा—"सो

---

१. मया ति सेसो।

यस्स यस्स अभिञ्ञासच्छिकरणीयस्स धम्मस्स चित्त अभिनिन्नामेति अभिञ्ञासच्छिकिरियाय, तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणाति सति सति आयतने" (म० ३-१५९) ति।

३१. ये अपरिहीनज्झाना 'ब्रह्मलोके निब्बत्तिस्सामा' ति ब्रह्मलोकूपपत्तिं पत्थेन्ता अपत्थयमाना वा पि पुथुज्जना समाधितो न परिहायन्ति, तेसं भवविसेसावहत्ता अप्पनासमाधिभावना **भवविसेसानिसंसा** होति। तेनाह भगवा—"पठमं झान परित्तं भावेत्वा कत्थ उपपज्जन्ती" (अभि० २-५०६) ति आदि।

३२ उपचारसमाधिना पि पन कामावचरसुगतिभवविसेस आवहति येव।

ये पन अरिया अट्ठ समापत्तियो निब्बत्तेत्वा निरोधसमापत्तिं समापज्जित्वा सत्त दिवसानि अचित्ता हुत्वा "दिट्ठे व धम्मे निरोध निब्बानं पत्वा सुख विहरिस्सामा" ति समाधिं भावेन्ति, तेसं अप्पनासमाधिभावना **निरोधानिसंसा** होति। तेनाह—"सोळसहि ञाणचरियाहि नवहि समाधिचरियाहि वसीभावता पञ्ञा निरोधसमापत्तिया ञाण" (खु० ५-४) ति।

एवमयं दिट्ठधम्मसुखविहारादि पञ्चविधो समाधिभावनाय आनिसंसो।

"तस्मा नेकानिसंसम्हि किलेसमलसोधने।
समाधिभावनायोगे नप्पमज्जेय्य पण्डितो" ति॥

एत्तावता च "सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो" ति इमिस्मा गाथाय सीलसमाधिपञ्ञामुखेन देसिते विसुद्धिमग्गे **समाधि** पि परिदीपितो होति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
समाधिनिद्देसो नाम एकादसमो परिच्छेदो॥



पठमो सीलनिद्देसो। दुतियो धुतङ्गनिद्देसो। ततियो कम्मट्ठानगहणनिद्देसो। चतुत्थो पथवीकसिणनिद्देसो। पञ्चमो सेसकसिणनिद्देसो। छट्ठो असुभनिद्देसो। सत्तमो छअनुस्सतिनिद्देसो। अट्ठमो सेसानुस्सतिनिद्देसो। नवमो ब्रह्मविहार-निद्देसो। दसमो आरुप्पनिद्देसो। समाधि(पटिक्कूलसञ्ञा-धातुववत्थानद्वय)-निद्देसो एकादसमो।

ये धम्मा हेतुप्पभवा हेतु तेस तथागतो आह।
तेस च यो निरोधो एववादी महासमणो ॥

सब्बपापस्स अकरण कुसलस्स उपसम्पदा।
सचित्तपरियोदपनं एतं बुद्धान सासनं ॥

इद्धिविधनिद्देसो

द्वादसमो परिच्छेदो

अभिञ्ञाकथा

१. इदानि यासं लोकिकाभिञ्ञानं वसेन अय समाधिभावना "अभिञ्ञानिसंसा" ति वुत्ता, ता अभिञ्ञा सम्पादेतुं यस्मा पथवीकसिणादीसु अधिगतचतुत्थज्झानेन योगिना योगो कातब्बो—एवं हिस्स सा समाधिभावना अधिगतानिसंसा चेव भविस्सति थिरतरा च, सो अधिगतानिसंसाय थिरतराय समाधिभावनाय समन्नागतो सुखेनेव पञ्ञाभावानं सम्पादेस्सति—तस्मा[1] अभिञ्ञाकथं ताव आरभिस्साम।

भगवता हि अधिगतचतुत्थज्झानसमाधीन कुलपुत्तान समाधिभावनानिससदस्सनत्थं चेव उत्तरुत्तरिपणीतपणीतधम्मदेसनत्थ च "**सो एवं समाहिते चित्ते परिसुद्धे परियोदाते अनङ्गणे विगतूपक्किलेसे मुदुभूते कम्मनिये ठिते आनेञ्जप्पत्ते इद्धिविधाय चित्तं अभिनीहरति अभिनिन्नामेति। सो अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होती**" (दी० १–६८) ति आदिना नयेन १. इद्धिविध, २. दिब्बसोतधातुञाणं, ३ चेतोपरियञाणं, ४ पुब्बेनिवासानुस्सतिञाणं, ५. सत्तान चुतूपपाते ञाणं ति पञ्च लोकिकाभिञ्ञा वुत्ता।

चित्तस्स चुद्दस परिदमनाकारा

२. तत्थ 'एको पि हुत्वा बहुधा होती' ति आदिकं इद्धिविकुब्बनं कातुकामेन आदिकम्मिकेन योगिना ओदातकसिणपरियन्तेसु अट्ठसु कसिणेसु अट्ठ अट्ठ समापत्तियो निब्बत्तेत्वा—१ कसिणानुलोमतो, २. कसिणपटिलोमतो, ३. कसिणानुलोमपटिलोमतो, ४. झानानुलोमतो, ५. झानपटिलोमतो, ६. झानानुलोमपटिलोमतो, ७. झानुक्कन्तिकतो, ८ कसिणुक्कन्तिकतो, ९. झानकसिणुक्कन्तिकतो, १० अङ्गसङ्कन्तितो, ११. आरम्मणसङ्कन्तितो, १२. अङ्गारम्मणसङ्कन्तितो, १३. अङ्गववत्थापनतो, १४. आरम्मणववत्थापनतो—ति इमेहि चुद्दसहि आकारेहि चित्तं परिदमेतब्बं।

---

१. **तस्मा** ति। यस्मा समाधिभावनाय आनिसंसलाभो थिरतरता, सुखेनेव च पञ्ञाभावना इज्झति, तस्मा पञ्ञाभावनाय ओकासे सम्पत्ते पि, अभिञ्ञाकथं ताव आरभिस्सामा ति अधिप्पायो।

३. कतम पनेत्थ कसिणानुलोम पे० कतम आरम्मणववत्थापनं ति ?

इध भिक्खु पथवीकसिणे झानं समापज्जति, ततो आपोकसिणे ति एवं पटिपाटिया अट्ठसु कसिणसु सत्तक्खत्तु पि सहस्सक्खत्तु पि समापज्जति, इद **कसिणानुलोमं** नाम। ओदातकसिणतो पन पट्ठाय तथेव पटिलोमक्कमेन समापज्जन **कसिणपटिलोमं** नाम। पथवीकसिणतो पट्ठाय याव ओदातकसिण, ओदातकसिणतो पि पट्ठाय याव पथवीकसिण ति एव अनुलोमपटिलोमवसेन पुनप्पुन समापज्जन **कसिणानुलोमपटिलोमं** नाम। (१–३)

पठमज्झानतो पन पट्ठाय पटिपाटिया याव नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं ताव पुनप्पुन समापज्जनं **झानानुलोमं** नाम। नेवसञ्ञानासञ्ञायतनतो पट्ठाय याव पठमज्झान ताव पुनप्पुन समापज्जनं **झानपटिलोमं** नाम। पठमज्झानतो पट्ठाय याव नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं, नेवसञ्ञानासञ्ञायतनतो पट्ठाय च याव पठमज्झानं ति एव अनुलोमपटिलोमवसेन पुनप्पुनं समापज्जनं **झानानुलोमपटिलोमं** नाम। (४–६)

पथवीकसिणे पन पठम झानं समापज्जित्वा तत्थेव ततिय समापज्जति, ततो तदेव उग्घाटेत्वा आकासानञ्चायतनं, ततो आकिञ्चञ्ञायतनं ति एवं कसिणं अनुक्कमित्वा झानस्सेव एकन्तरिकभावेन उक्कमनं **झानुक्कन्तिकं** नाम। एवं आपोकसिणादिमूलिका पि योजना कातब्बा। पथवीकसिणे पठमं झानं समापज्जित्वा पुन तदेव तेजोकसिणे, ततो नीलकसिणे, ततो लोहितकसिणे ति इमिना नयेन झानं अनुक्कमित्वा **कसिणस्सेव** एकन्तरिकभावेन उक्कमनं **कसिणुक्कन्तिकं** नाम। पथवीकसिणे पठम झानं समापज्जित्वा ततो तेजोकसिणे ततियं, नीलकसिण उग्घाटेत्वा आकासानञ्चायतनं, लोहितकसिणतो आकिञ्चञ्ञायतनं ति इमिना नयेन झानस्स चेव कसिणस्स च उक्कमनं **झानकसिणुक्कन्तिकं** नाम। (७–९)

पथवीकसिणे पन पठम झान समापज्जित्वा तत्थेव इतरेसं पि समापज्जनं **अङ्गसङ्कन्तिकं** नाम। पथवीकसिणे पठमं झान समापज्जित्वा तदेव आपोकसिणे··· पे०· तदेव ओदातकसिणे ति एवं सब्बकसिणेसु एकस्सेव झानस्स समापज्जनं **आरम्मणसङ्कन्तिकं** नाम। पथवीकसिणे पठम झानं समापज्जित्वा आपोकसिणे दुतियं, तेजोकसिणे ततियं, वायोकसिणे चतुत्थं, नीलकसिणं उग्घाटेत्वा आकासानञ्चायतनं, पीतकसिणतो विञ्ञाणञ्चायतनं, लोहितकसिणतो आकिञ्चञ्ञायतनं, ओदातकसिणतो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं ति एवं एकन्तरिकवसेन अङ्गानं च आरम्मणानं च सङ्कमनं **अङ्गारम्मणसङ्कन्तिकं** नाम। (१०–१२)

पठम झान पन पञ्चङ्गिकं ति ववत्थपेत्वा दुतिय तिवङ्गिकं, ततियं दुवङ्गिकं, तथा चतुत्थ आकासानञ्चायतन "पे०" नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं ति एव झानङ्गमत्तस्सेव ववत्थापन **अङ्गववत्थापनं** नाम। तथा इदं पथवीकसिण ति ववत्थपेत्वा इद आपोकसिणं पे०....इदं ओदातकसिण ति एवं आरम्मणमत्तस्सेव ववत्थापनं **आरम्मणववत्थापनं** नाम। अङ्गारम्मणववत्थापनं पि एके इच्छन्ति। **अट्ठकथासु** पन अनागतत्ता अद्धा त भावनामुख न होति। (१३-१४)

४. इमेहि पन चुद्दसहि आकारेहि चित्तं अपरिदमेत्वा पुब्बे अभावितभावनो आदिकम्मिको योगावचरो इद्धिविकुब्बनं सम्पादेस्सती ति नेत ठानं विज्जति। आदिकम्मिकस्स हि कसिणपरिकम्मं पि भारो, सतेसु सहस्सेसु वा एको व सक्कोति। कतकसिणपरिकम्मस्स निमित्तुप्पादन भारो, सतेसु सहस्सेसु वा एको व सक्कोति। उप्पन्ने निमित्ते तं वड्ढेत्वा अप्पनाधिगमो भारो, सतेसु सहस्सेसु वा एको व सक्कोति। अधिगतप्पनस्स चुद्दसहाकारेहि चित्तपरिदमनं भारो, सतेसु सहस्सेसु वा एको व सक्कोति। चुद्दसहाकारेहि परिदमितचित्तस्सा पि इद्धिविकुब्बना नाम भारो, सतेसु सहस्सेसु वा एको व सक्कोति। विकुब्बनप्पत्तस्सा पि खिप्पनिसन्तिभावो[1] नाम भारो, सतेसु सहस्सेसु वा एको व खिप्पनिसन्ति होति।

थेरम्बत्थले[2] **महारोहणगुत्तत्थेरस्स** गिलानुपट्ठान आगतेसु तिंसमत्तेसु इद्धिमन्तसहस्सेसु उपसम्पदाय अट्ठवस्सिको **रक्खितत्थेरो** विय। तस्सानुभावो पथवीकसिणनिद्देसे वुत्तो येव। त पनस्सानुभाव दिस्वा थेरो आह—"आवुसो, सचे रक्खितो नाभविस्स सब्बे गरहप्पत्ता अस्साम—'नागराजानं रक्खितु नासक्खिसू' ति। तस्मा अत्तना गहेत्वा विचरितब्ब आवुधं नाम मलं सोधेत्वा व गहेत्वा विचरितु वट्टती ति। ते थेरस्स ओवादे ठत्वा तिंससहस्सा पि भिक्खू खिप्पनिसन्तिनो अहेसु।

खिप्पनिसन्तिया पि च सति परस्स पतिट्ठाभावो भारो, सतेसु सहस्सेसु वा एको व होति। गिरिभण्डवाहनपूजाय मारेन अङ्गारवस्से पवत्तिते आकासे पथविं मापेत्वा अङ्गारवस्सं परित्तायको थेरो विय।

५ बलवपुब्बयोगानं पन बुद्ध-पच्चेकबुद्ध-अग्गसावकादीनं विना पि इमिना वुत्तप्पकारेन भावनानुक्कमेन अरहत्तपटिलाभेनेव इदं च इद्धिविकुब्बनं अञ्ञे च पटिसम्भिदादिभेदा गुणा इज्झन्ति।

---

१. खिप्पं निसन्ति = निसामनं झानचक्खुना पथवीकसिणादिझानारम्मणस्स दस्सन एतस्सा ति खिप्पनिसन्ति, सीघतरं झान समापज्जिता, तस्स भावो **खिप्पनिसन्तिभावो**।

२. अम्बतरुनिचितं महामहिन्दत्थेरादीहि सीहलदीपे ओतिण्णट्ठान **थेरम्बत्थलं**।

तस्मा यथा पिळन्धनविकतिं कत्तुकामो सुवण्णकारो अग्गिधमनादीहि सुवण्णं मुदुं कम्मञ्ञं कत्वा व करोति, यथा च भाजनविकतिं कत्तुकामो कुम्भकारो मत्तिकं सुपरिमद्दितं मुदुं कत्वा करोति, एवमेव आदिकम्मिकेन इमेहि चुद्दसहाकारेहि चित्तं परिदमेत्वा छन्दसीस-चित्तसीस-विरियसीस-वीमंसा-सीससमापज्जनवसेन चेव आवज्जनादिवसीभाववसेन च मुदुं कम्मञ्ञं कत्वा इद्धिविधाय योगो करणीयो। पुब्बहेतुसम्पन्नेन पन कसिणेसु चतुत्थज्झानमत्ते चिण्णवसिना पि कातु वट्टति। यथा पनेत्थ यागो कातब्बो, त विधिं दस्सेन्तो भगवा "सो एवं समाहिते चित्ते" ति आदिमाह।

६. तत्रायं पाळिनयानुसारेनेव विनिच्छयकथा। तत्थ **सो** ति। सो अधिगत-चतुत्थज्झानो योगी। **एवं** ति। चतुत्थज्झानक्कमनिदस्सनमेत। इमिना पठमज्झानाधिगमादिना कमेन चतुत्थज्झानं पटिलभित्वा ति वुत्त होति। **समाहिते** ति। इमिना चतुत्थज्झानसमाधिना समाहिते। **चित्ते** ति। रूपावचरचित्ते।

परिसुद्धे ति आदीसु पन उपेक्खासतिपारिसुद्धिभावेन **परिसुद्धे**। परिसुद्धत्ता येव **परियोदाते**। पभस्सरे ति वुत्त होति। सुखादीन पच्चयान घातेन विहत-रागादिअङ्गणत्ता **अनङ्गणे**। अनङ्गत्ता येव **विगतूपक्किलेसे**। अङ्गणेन हि त चित्तं उपक्किलिस्सति। सुभावितत्ता **मुदुभूते**। वसीभावप्पत्ते ति वुत्तं होति। वसे वत्तमानं हि चित्तं मुदु ति वुच्चति। मुदुत्ता येव च **कम्मनिये**। कम्मक्खमे, कम्मयोग्गे ति वुत्तं होति।

मुदुं हि चित्तं कम्मनिय होति, सुधन्तमिव सुवण्णं। त च उभय पि सुभावितत्ता येवा ति। यथाह—"नाहं, भिक्खवे, अञ्ञ एकधम्मं पि समनु-पस्सामि, यं एवं भावित बहुलीकत मुदु च होति कम्मनिय च, यथयिद, भिक्खवे, चित्तं" (अ० १–६) ति।

एतेसु परिसुद्धभावादीसु ठितत्ता **ठिते**। ठितत्ता एव **आनेञ्जप्पत्ते**, अचले निरिञ्जने ति वुत्त होति। मुदुकम्मञ्ञभावेन वा अत्तनो वसे ठितत्ता **ठिते**। सद्धादीहि परिग्गहितत्ता **आनेञ्जप्पत्ते**। सद्धापरिग्गहित हि चित्त अस्सद्धियेन न इञ्जति, विरियपरिग्गहित कोसज्जेन न इञ्जति, सतिपरिग्गहितं पमादेन न इञ्जति, समाधिपरिग्गहित उद्धच्चेन न इञ्जति, पञ्ञापरिग्गहितं अविज्जाय न इञ्जति, ओभासगत किलेसन्धकारेन न इञ्जति। इमेहि छहि धम्मेहि परिग्गहितं आनेञ्जप्पत्तं होति।

एव अट्ठङ्गसमन्नागतं चित्तं अभिनीहारक्खम होति अभिञ्ञासच्छिकरणीयानं धम्मानं अभिञ्ञासच्छिकिरियाय।

७. अपरो नयो—चतुत्थज्झानसमाधिना **समाहिते**। नीवरणदूरीभावेन

परिसुद्धे। वितक्कादिसमतिक्कमेन **परियोदाते**। झानपटिलाभपच्चयान पापकानं इच्छावचरानं अभावेन **अनङ्गणे**। अभिज्झादीनं चित्तस्स उपक्किलेसान विगमेन **विगतूपक्किलेसे**। उभयं पि चेतं **अनङ्गणसुत्त-वत्थसुत्तानु**सारेन (म० १–३३, ४९) वेदितब्बं। वसिप्पत्तिया **मुदुभूते**। इद्धिपादभावूपगमेन **कम्मनिये**। भावना-पारिपूरिया पणीतभावूपगमेन **ठिते आनेञ्जप्पत्ते**। यथा आनेञ्जप्पत्त होति, एवं ठिते ति अत्थो। एवं पि अट्ठङ्गसमन्नागत चित्त अभिनीहारक्खमं होति अभिञ्ञासच्छिकरणीयानं धम्मानं अभिञ्ञासच्छिकिरियाय पादकं पदट्ठानभूत ति।

दसइद्धिकथा

८ **इद्धिविधाय चित्तं अभिनीहरति अभिनिन्नामेती** ति। एत्थ इज्झनट्ठेन इद्धि। निप्फत्तिअत्थेन पटिलाभट्ठेन चा ति वुत्त होति। य हि निप्फज्जति पटिलब्भति च, तं इज्झती ति वुच्चति। यथाह—"काम कामयमानस्स तस्स चेतं समिज्झती" (खु० १–३८८) ति। तथा "नेक्खम्मं इज्झती ति इद्धि, पटिहरती ति पाटिहारिय। अरहत्तमग्गो इज्झती ति इद्धि, पटिहरती ति पाटिहारिय" (खु० ५–४९४) ति।

९. अपरो नयो—इज्झनट्ठेन इद्धि। उपायसम्पदायेत अधिवचन। उपाय-सम्पदा हि इज्झति अधिप्पेतफलप्पसवनतो। यथाह—"अय खो चित्तो गहपति सीलवा कल्याणधम्मो, सचे पणिदहिस्सति—'अनागतमद्धानं राजा अस्स चक्कवत्ती' ति, तस्स खो अय इज्झिस्सति सीलवतो चेतोपणिधि विसुद्धत्ता" (सं० ३–२६९) ति।

१० अपरो नयो—एताय सत्ता इज्झन्ती ति इद्धि। इज्झन्ती ति इद्धा वुद्धा उक्कंसगता होन्तो ति वुत्तं होति। सा दसविधा। यथाह—"कति इद्धियो ति? दस इद्धियो"। पुन च परं आह—"कतमा दस इद्धियो? अधिट्ठाना इद्धि, विकुब्बना इद्धि, मनोमया इद्धि, ञाणविप्फारा इद्धि, समाधिविप्फारा इद्धि, अरिया इद्धि, कम्मविपाकजा इद्धि, पुञ्ञवतो इद्धि, विज्जामया इद्धि, तत्थ तत्थ सम्मापयोगपच्चया इज्झनट्ठेन इद्धी" (खु० ५–४६७) ति।

तत्थ "पकतिया एको बहुकं आवज्जति, सतं वा सहस्सं वा सतसहस्सं वा आवज्जित्वा ञाणेन अधिट्ठाति, बहुको होमी" (खु० ५–४७०) ति एवं विभजित्वा दस्सिता इद्धि अधिट्ठानवसेन निप्फन्नत्ता **अधिट्ठाना इद्धि** नाम। (१)

"सो पकतिवण्णं विजहित्वा कुमारकवण्ण वा दस्सेति नागवण्णं वा···पे०··· विविधं पि सेनाब्यूहं दस्सेती" (खु० ५–४७२) ति एवं आगता इद्धि पकति-वण्णविजहनविकारवसेन पवत्तता **विकुब्बना इद्धि** नाम। (२)

"इध भिक्खु इमम्हा काया अञ्ञ कायं अभिनिम्मिनाति रूपि मनोमयं" (खु० ५–४७३) ति इमिना नयेन आगता इद्धि सरीरब्भन्तरे अञ्ञस्सेव मनोमयस्स सरीरस्स निप्फत्तिवसेन पवत्तत्ता **मनोमया इद्धि** नाम। (३)

ञाणुप्पत्तितो पन पुब्बे[1] वा पच्छा[2] वा तङ्खणे[3] वा ञाणानुभावनिब्बत्तो विसेसो **ञाणविप्फारा इद्धि** नाम। वुत्त हेत—"अनिच्चानुपस्सनाय निच्च-सञ्ञाय पहानट्ठो इज्झती ति ञाणविप्फारा इद्धि "पे० "अरहत्तमग्गेन सब्ब-किलेसान पहानट्ठो इज्झती ति ञाणविप्फारा इद्धि। आयस्मतो बक्कुलस्स ञाणविप्फारा इद्धि। आयस्मतो सङ्किच्चस्स ञाणविप्फारा इद्धि। आयस्मतो भूतपालस्स ञाणविप्फारा इद्धी" (खु० ५–४७४) ति। ·

तत्थ आयस्मा **बक्कुलो** दहरो व मङ्गलदिवसे नदिया नहापियमानो धातिया पमादेन सोते पतितो। तमेनं मच्छो गिलित्वा बाराणसीतित्थं अगमासि। तत्र तं मच्छबन्धो गहेत्वा सेट्ठिभरियाय विक्किणि। सा मच्छे सिनेहं उपादेत्वा 'अहमेव नं पचिस्सामी' ति फालेन्ती मच्छकुच्छिय सुवण्णबिम्ब विय दारकं दिस्वा 'पुत्तो मे लद्धो' ति सोमनस्सजाता अहोसि। इति मच्छकुच्छिय अरोगभावो आयस्मतो बाक्कुलस्स पच्छिमभविकस्स तेन अत्तभावेन पटिल-भितब्बअरहत्तमग्गञाणानुभावेन निब्बत्तत्ता ञाणविप्फारा इद्धि नाम। वत्थु पन वित्थारेन कथेतब्बं। (क)

सङ्किच्चत्थेरस्स पन गब्भगतस्सेव माता कालमकासि। तस्सा चितक आरोपेत्वा सूलेहि विज्झित्वा झापियमानाय दारको सूलकोटिया अक्खिकूटे पहार लभित्वा सद्दमकासि। ततो 'दारको जीवती' ति ओतारेत्वा कुच्छि फालेत्वा दारक अय्यिकाय अदंसु। सो ताय पटिजग्गितो बुद्धिमन्वाय पब्बजित्वा सह पटिसम्भिदाहि अरहत्तं पापुणि। इति वुत्तनयेनेव दारुचितकाय अरोगभावो आयस्मतो सङ्किच्चस्स ञाणविप्फारा इद्धि नाम। (ख)

भूतपालदारकस्स पन पिता राजगहे दलिद्दमनुस्सो। सो दारूनं अत्थाय सकटेन अटविं गन्त्वा दारुभारं कत्वा सायं नगरद्वारसमीपं पत्तो। अथस्स गोणा युगं ओस्सज्जित्वा नगरं पविसिसु। सो सकटमूले पुत्तक निसीदापेत्वा गोणानं अनुपदं गच्छन्तो नगरमेव पाविसि। तस्स अनिक्खन्तस्सेव द्वारं पिहितं। दारकस्स वाळयक्खानुचरिते पि बहिनगरे तियामरत्तिं अरोगभावो वुत्तनयेनेव ञाणविप्फारा इद्धि नाम। वत्थु पन वित्थारेतब्बं। (ग) (४)

१ **ञाणुप्पत्तितो पुब्बे वा** ति। अरहत्तमग्गञाणुपत्तितो पुब्बे वा विपस्सनाक्खणे, ततो पि वा पुब्बे अन्तिमभविकस्स पटिसन्धिग्गहणतो पट्ठाय।

२. **पच्छा वा**। याव खन्धपरिनिब्बाना।

३. **तङ्खणे वा**। मग्गुप्पत्तिसमये।

समाधितो पुब्बे वा पच्छा वा तङ्खणे वा समथानुभावनिब्बतो विसेसो **समाधिविप्फारा इद्धि**। वुत्तं हेतं—"पठमज्झानेन नीवरणानं पहानट्ठो इज्झती ति समाधिविप्फारा इद्धि पे० नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्तिया आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञाय पहानट्ठो इज्झती ति समाधिविप्फारा इद्धि। आयस्मतो सारिपुत्तस्स समाधिविप्फारा इद्धि। आयस्मतो सञ्जीवस्स, आयस्मतो खाणुकोण्डञ्ञस्स, उत्तराय उपासिकाय, सामावतिया उपासिकाय समाधिविप्फारा इद्धी" (खु० ५–४७४) ति।

तत्थ यदा आयस्मतो **सारिपुत्तस्स महामोग्गल्लानत्थेरेन** सद्धिं कपोतकन्दरायं[१] विहरतो जुण्हाय रत्तिया नवोरोपितेहि केसेहि[१] अज्झोकासे निसिन्नस्स एको दुट्ठयक्खो सहायकेन यक्खेन वारियमानो पि सीसे पहारं अदासि। यस्स मेघस्स विय गज्जतो सद्दो अहोसि। तथा थेरो तस्स पहरणसमये समापत्तिं अप्पेसि। अथस्स तेन पहारेन न कोचि आबाधो आहोसि। अय तस्सायस्मतो ममाधिविप्फारा इद्धि। वत्थु पन **उदाने** (खु० १–१०८) आगतमेव। (क)

सञ्जीवत्थेर पन निरोधसमापन्न कालङ्कतो ति सल्लक्खत्वा गोपालकादयो तिणकट्ठगोमयानि सङ्कड्ढेत्वा अग्गिं अदसु। थेरस्स चीवरे अंसुमत्तं पि न झायित्थ। अयमस्स अनुपुब्बसमापत्तिवसेन पवत्तसमथानुभावनिब्बत्तत्ता समाधिविप्फारा इद्धि। वत्थु पन **सुत्ते** (म० १–४०७) आगतमेव। (ख)

खाणुकोण्डञ्ञत्थेरो पन पकतिया व समापत्तिबहुलो। सो अञ्ञतरस्मिं अरञ्ञे रत्तिं समापत्तिं अप्पेत्वा निसीदि। पञ्चसता चोरा भण्डक थेनेत्वा गच्छन्ता "इदानि अम्हाक अनुपथ आगच्छन्ता नत्थी" ति विस्समितुकामा भण्डकं ओरोपयमाना "खाणुको अयं" ति मञ्ञमाना थेरस्सेव उपरि सब्बभण्डकानि ठपेसु। तेस विस्समित्वा गच्छन्तानं पठम ठपितभण्डकस्स गहणकाले कालपरिच्छदवसेन थेरो वुट्ठासि। ते थेरस्स चलनाकारं दिस्वा भीता विरविंसु। थेरो—"मा भायित्थ, उपासका, भिक्खु अहं" ति आह। आगन्त्वा वन्दित्वा थेरगतेन पसादेन पब्बजित्वा सह पटिसम्भिदाहि अरहत्त पापुणिंसु। अयमेत्थ पञ्चहि भण्डकसतेहि अज्झोत्थटस्स थेरस्स आबाधाभावो समाधिविप्फारा इद्धि। (ग)

उत्तरा पन उपासिका पुण्णकसेट्ठिस्स धीता। तस्सा सिरिमा नाम गणिका इस्सापकता तत्ततेलकटाहं सीसे आसिञ्चि। उत्तरा तङ्खणं येव मेत्तं समापज्जि। तेलं पोक्खरपत्ततो उदकबिन्दु विय विवट्टमानं अगमासि। अयमस्सा समाधिविप्फारा इद्धि। वत्थु पन वित्थारेतब्बं। (घ)

१. **कपोतकन्दरायं** ति। एवंनामके अरञ्ञविहारे।

१. **नवोरोपितेही केसेहि** ति। इत्थम्भूतलक्खणे करणवचन।

सामावती नाम उदेनस्स रञ्ञो अग्गमहेसी। मागण्डियब्राह्मणो अत्तनो धीताय अग्गमहेसिट्ठानं अत्थयमानो तस्सा वीणाय आसीविसं पक्खिपापेत्वा राजान आह—"महाराज, सामावती त मारेतुकामा वीणाय आसीविसं गहेत्वा परिहरती" ति। राजा तं दिस्वा कुपितो—"सामावतिं वधिस्सामी" ति धनुं आरोपेत्वा विसपीतं खुरप्पं सन्नय्हि। सामावती सपरिवारा राजान मेत्ताय फरि। राजा नेव सरं खिपितुं न आरोपेतु सक्कोन्तो वेधमानो अट्ठासि। ततो नं देवी आह—"कि, महाराज, किलमसी" ति? "आम किलमामी" ति। "तेन हि धनुं ओरोपेही" ति। सरो रञ्ञो पादमूले येव पति। ततो नं देवी "महाराज, अप्पदुट्ठस्स न पदुस्सितब्ब" ति ओवदि। इति रञ्ञो सरं मुञ्चितुं अविसहनभावो सामावतिया उपासिकाय समाधिविप्फारा इद्धी ति। (ङ) (५)

पटिक्कूलादीसु पटिक्कूलसञ्ञिविहारादिका पन **अरिया इद्धि** नाम। यथाह—"कतमा अरिया इद्धि? इध भिक्खु सचे आकङ्खति 'पटिक्कूले अपटिक्कूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अपटिक्कूलसञ्ञी तत्थ विहरति···पे०···उपेक्खको तत्थ विहरति सतो सम्पजानो" (खु० ५-४७५) ति। अयं हि चेतोवसिप्पत्तान अरियानं येव सम्भवतो अरिया इद्धी ति वुच्चति।

एताय हि समन्नागतो खीणासवो भिक्खु पटिक्कूले अनिट्ठे वत्थुस्मिं मेत्ताफरणं वा धातुमनसिकारं वा करोन्तो अपटिक्कूलसञ्ञी विहरति। अपटिक्कूले इट्ठे वत्थुस्मिं असुभफरणं वा अनिच्चं ति मनसिकारं वा करोन्तो पटिक्कूलसञ्ञी विहरति। तथा पटिक्कूलापटिक्कूलेसु तदेव मेत्ताफरणं वा धातुमनसिकार वा करोन्तो अपटिक्कूलसञ्ञी विहरति। अपटिक्कूलपटिक्कूलेसु च तदेव असुभफरणं वा अनिच्च ति मनसिकार वा करोन्तो पटिक्कूलसञ्ञी विहरति। "चक्खुना रूपं दिस्वा नेव सुमनो होती" ति आदिना नयेन वुत्तं पन छळङ्गुपेक्खं पवत्तयमानो पटिक्कूले च अपटिक्कूले च तदुभयं अभिनिवज्जित्वा उपेक्खको विहरति सतो सम्पजानो।

पटिसम्भिदायं हि "कथं पटिक्कूले अपटिक्कूलसञ्ञी विहरति? अनिट्ठस्मिं वत्थुस्मिं मेत्ताय वा फरति धातुसो वा उपसंहरतो" (खु० ५-४७५) ति आदिना नयेन अयमेव अत्थो विभत्तो। अयं चेतोवसिप्पत्तानं अरियानं येव सम्भवतो अरिया इद्धी ति वुच्चति। (६)

पक्खीआदीनं पन वेहासगमनादिका **कम्मविपाकजा** इद्धि नाम। यथाह—"कतमा कम्मविपाकजा इद्धि? सब्बेसं पक्खीनं सब्बेसं देवानं एकच्चानं मनुस्सानं एकच्चानं च विनिपातिकानं अयं कम्मविपाकजा इद्धी" (खु० ५-३७६) ति। एत्थ हि सब्बेसं पक्खीनं झानं वा विपस्सनं वा विना येव आकासेन गमनं। तथा सब्बेसं देवानं पठमकप्पिकानं च एकच्चानं मनुस्सानं। तथा पियङ्करमाता

यक्खिनी, उत्तरमाता, फुस्समित्ता, धम्मगुत्ता ति एवमादीनं एकच्चानं विनिपातिकानं आकासेन गमनं कम्मविपाकजा इद्धी ति। (७)

चक्कवत्तिआदीन वेहासगमनादिका पन **पुञ्ञवतो इद्धि** नाम। यथाह—"कतमा पुञ्ञवतो इद्धि ? राजा चक्कवत्ती वेहास गच्छति सद्धिं चतुरङ्गिनिया सेनाय अन्तमसो अस्सबन्ध-गोबन्धपुरिसे उपादाय। जोतिकस्स गहपतिस्स पुञ्ञवतो इद्धि। जटिलकस्स गहपतिस्स पुञ्ञवतो इद्धि। घोसितस्स गहपतिस्स पुञ्ञवतो इद्धि। मेण्डकस्स गहपतिस्स पुञ्ञवतो इद्धि। पञ्चन्न महापुञ्ञान पुञ्ञवतो इद्धी" (खु० ५-३७६) ति। सङ्खेपतो पन परिपाक गते पुञ्ञसम्भारे इज्झनकविसेसो पुञ्ञवतो इद्धि।

एत्थ च **जोतिकस्स** गहपतिस्स पथविं भिन्दित्वा मणिपासादो उट्ठहि, चतुसट्ठि च कप्परुक्खा ति अयमस्स पुञ्ञवतो इद्धि। **जटिलकस्स** असीतिहत्थो सुवण्णपब्बतो निब्बत्ति। **घोसितस्स** सत्तसु ठानेसु मारणत्थाय उपक्कमे कते पि अरोगभागो पुञ्ञवतो इद्धि। **मेण्डकस्स** एकसीतमत्ते पदेसे सत्तरतनमयानं मेण्डकान पातुभावो पुञ्ञवतो इद्धि।

पञ्च महापुञ्ञा नाम—मेण्डकसेट्ठी, तस्स भरिया चन्दपदुमसिरि, पुत्तो धनञ्जयसेट्ठी, सुणिसा सुमनदेवी, दासो पुण्णो नामा ति। तेसु सेट्ठिस्स सीसं न्हातस्स आकास उल्लोकनकाले अड्ढतेळसकोट्ठसहस्सानि आकासतो रत्तसालीनं पूरेन्ति। भरियाय नाळिकोदनमत्त पि गहेत्वा सकलजम्बुदीपवासिके परिविसमानाय भत्त न खीयति। पुत्तस्स सहस्सत्थविकं गहेत्वा सकलजम्बुदीपवासिकानं पि देन्तस्स कहापणा न खीयन्ति। सुणिसाय एकं वीहितुम्बं गहेत्वा सकलजम्बुदीपवासिकान पि भाजयमानाय धञ्ञं न खीयति। दासस्स एकेन नङ्गलेन कसतो इतो सत्त इतो सत्ता ति चुद्दस मग्गा होन्ति। अयं नेसं पुञ्ञवतो इद्धि। (८)

विज्जाधरादीनं वेहासगमनादिका पन **विज्जामया इद्धि**। यथाह—"कतमा विज्जामया इद्धि ? विज्जाधरा विज्जं परिजपित्वा वेहासं गच्छन्ति, आकासे अन्तलिक्खे हत्थिं पि दस्सेन्ति····पे०····विविधं पि सेनाब्यूहं दस्सेन्ती" (खु० ५-३७६) ति। (९)

तेन तेन पन सम्मापयोगेन तस्स तस्स कम्मस्स इज्झनं तत्थ तत्थ सम्मापयोगपच्चया **इज्झनट्ठेन इद्धि**। यथाह—"नेक्खम्मेन कामच्छन्दस्स पहानट्ठो इज्झती ति तत्थ तत्थ सम्मापयोगपच्चया इज्झनट्ठेन इद्धि····पे० ···अरहत्तमग्गेन सब्बकिलेसानं पहानट्ठो इज्झती ति तत्थ तत्थ सम्मापयोगपच्चया इज्झनट्ठेन इद्धी" (खु० ५-४७७) ति। एत्थ च पटिपत्तिसङ्खातस्सेव सम्मापयोगस्स दीपनवसेन पुरिमपाळिसदिसा व पाळि आगता। **अट्ठकथायं** पन—"सकटब्यूहादि-

करणवसेन य किञ्चि सिप्पकम्म, यं किञ्चि वेज्जकम्म, तिण्णं वेदान उग्गहणं, तिण्ण पिटकान उग्गहण, अन्तमसो कसन-वपनादीनि उपादाय त त कम्मं कत्वा निब्बत्तविसेसो, तत्थ तत्थ सम्मापयोगपच्चया इज्झनट्ठेन इद्धी" ति आगता। (१०)

इति इमासु दससु इद्धीसु 'इद्धिविधाया' ति इमस्मि पदे अधिट्ठाना इद्धि येव आगता। इमस्मि पनत्थे विकुब्बना मनोमया इद्धियो पि इच्छितब्बा एव।

९ **इद्धिविधाया** ति। इद्धिकोट्ठासाय इद्धिविकप्पाय वा। **चित्तं अभिनीहरति अभिनिन्नामेती** ति। सो भिक्खु वुत्तप्पकारवसेन तस्मि चित्ते अभिञ्ञापादके इद्धिविधाधिगमत्थाय परिकम्मचित्त **अभिनीहरति**। कसिणारम्मतो अपनेत्वा इद्धिविधाभिमुख पेसेति। **अभिनिन्नामेती** ति। अधिगन्तब्बइद्धिपोण इद्धिपब्भार करोति।

सो ति। सो एव कतचित्ताभिनीहारो भिक्खु। **अनेकविहितं** ति। अनेकविध नानप्पकारक। **इद्धिविधं** ति। इद्धिकोट्ठास। **पच्चनुभोती** ति। पच्चनुभवति। फुसति, सच्छिकरोति, पापुणाती ति अत्थो।

१०. इदानिस्स अनेकविहितभाव दस्सेन्तो—"एको **पि** हुत्वा" ति आदिमाह। तत्थ **एको पि हुत्वा** ति। इद्धिकरणतो पुब्बे पकतिया एको पि हुत्वा। **बहुधा होती** ति। बहूनं सन्तिके चङ्कमितुकामो वा सज्झाय वा कत्तुकामो पञ्ह वा **पुच्छितुकामो** हुत्वा सतं पि सहस्स पि होति।

कथ पनायमेवं होति ? इद्धिया चतस्सो भूमियो, चत्तारो पादा, अट्ठ पदानि, सोळस च मूलानि सम्पादेत्वा ञाणेन अधिट्ठहन्तो।

तत्थ **चतस्सो भूमियो** ति। चत्तारि झानानि वेदितब्बानि। वुत्तं हेत **धम्मसेनापतिना**—"इद्धिया कतमा चतस्सो भूमियो ? विवेकजभूमि पठम झान, पीतिसुखभूमि दुतियं झानं, उपेक्खासुखभूमि ततिय झान, अदुक्खमसुखभूमि चतुत्थं झान। इद्धिया इमा चतस्सो भूमियो इद्धिलाभाय इद्धिपटिलाभाय इद्धिविकुब्बानाय इद्धिविसविताय इद्धिवसिताय इद्धिवेसारज्जाय संवत्तन्ती" (खु० ५-४६७) ति। एत्थ च पुरिमानि तीणि झानानि यस्मा पीतिफरणेन च सुखफरणेन च सुखसञ्ञ च लहुसञ्ञं च ओक्कमित्वा लहुमुदुकम्मञ्ञकायो हुत्वा इद्धि पापुणाति, तस्मा इमिना परियायेन इद्धिलाभाय संवत्तनतो सम्भारभूमियो ति वेदितब्बानि। चतुत्थज्झान पन इद्धिलाभाय पकतिभूमि येव। (१)

चत्तारो पादा ति। चत्तारो इद्धिपादा वेदितब्बा। वुत्त हेतं—"इद्धिया कतमे चत्तारो पादा ? इध भिक्खु छन्दसमाधिपधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरिय... पे०... चित्त... वीमंसासमाधिपधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं

भावेति। इद्धिया इमे चत्तारो पादा इद्धिलाभाय ·पे०·· इद्धिवेसारज्जाय सवत्तन्ती" (खु० ५–४६८) ति।

एत्थ च छन्दहेतुको छन्दाधिको वा समाधि **छन्दसमाधि**। कत्तुकम्यताछन्दं अधिपतिं करित्वा पटिलद्धसमाधिस्सेत अधिवचनं। पधानभूता सङ्खारा **पधान-सङ्खारा**। चतुकिच्चसाधकस्स सम्मप्पधानविरियस्सेतं अधिवचनं। **समन्नागतं** ति। छन्दसमाधिना च पधानसङ्खारेहि च उपेत।

इद्धिपादं ति। निप्फत्तिपरियायेन वा इज्झनट्ठेन, इज्झन्ति एताय सत्ता इद्धा वुद्धा उक्कसगता होन्ती ति इमिना वा परियायेन इद्धी ति सङ्ख गतानं अभिञ्ञाचित्तमम्पयुत्तान छन्दसमाधिपधानसङ्खारानं अधिट्ठानट्ठेन पादभूतं सेसचित्त-चेतसिकरासिं ति अत्थो। वुत्त हेतं—"इद्धिपादो ति तथाभूतस्स वेदनाक्खन्धो पे० विञ्ञाणक्खन्धो" (अभि० २–२६५) ति।

अथ वा–पज्जते अनेना ति पादो। पापुणीयती ति अत्थो। इद्धिया पादो **इद्धिपादो**। छन्दादीनमेत अधिवचनं। यथाह—"छन्दं चे, भिक्खवे, भिक्खु निस्साय लभति समाधिं, लभति चित्तस्सेकग्गतं, अयं वुच्चति छन्दसमाधि। सो अनुप्पन्नान पापकान पे० ·पदहति, इमे वुच्चन्ति पधानसङ्खारा। इति अय च छन्दो अय च छन्दसमाधि इमे च पधानसङ्खारा—अय वुच्चति, भिक्खवे, छन्दसमाधिपधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो" (सं० ४–२२९) ति। एवं सेसिद्धिपादेसु पि अत्थो वेदितब्बो। (२)

अट्ठ पदानी ति। छन्दादीनि अट्ठ वेदितब्बानि। वुत्त हेतं—"इद्धिया कतमानि अट्ठ पदानि? छन्द चे भिक्खु निस्साय लभति समाधिं, लभति चित्तस्सेकग्गतं, छन्दो न समाधि, समाधि न छन्दो, अञ्ञो छन्दो अञ्ञो समाधि। विरियं चे भिक्खु· चित्त चे भिक्खु वीमंसं चे भिक्खु निस्साय लभति समाधिं, लभति चित्तस्सेकग्गत, वीमसा न समाधि, समाधि न वीमंसा अञ्ञा वीमसा अञ्ञो समाधि। इद्धिया इमानि अट्ठ पदानि इद्धिलाभाय पे०· इद्धिवेसारज्जाय सवत्तन्ती" (खु० ५–४६८)। एत्थ हि इद्धिं उप्पादेतुकामताछन्दो समाधिना एकतो नियुत्तो व इद्धिलाभाय सवत्तति। तथा विरियादयो। तस्मा इमानि अट्ठ पदानि वुत्तानी ति वेदितब्बानि। (३)

सोळस मूलानी ति। सोळस ह आकारेहि अनेञ्जता चित्तस्स वेदितब्बा। वुत्तं हेतं—"इद्धिया कात मूलानि? सोळस मूलानि। १. अनोनतं चित्तं कोसज्जे न इञ्जती ति आनेञ्जं। २ अनुन्नतं चित्तं उद्धच्चे न इञ्जती ति आनेञ्जं। ३ अनभिनतं चित्तं रागे न इञ्जती ति आनेञ्जं। ४. अनपनत चित्त ब्यापादे न इञ्जती ति आनेञ्जं। ५ अनिस्सितं चित्तं दिट्ठिया न इञ्जती ति आनेञ्जं।

६. अप्पटिबद्धं चित्त छन्दरागे न इञ्जती ति आनेञ्जं। ७ विप्पमुत्त चित्त कामरागे न इञ्जती ति आनेञ्ज। ८ विसयुत्त चित्त किलेसे न इञ्जती ति आनेञ्ज। ९. विमरियादीकतं चित्त किलेसमरियादे न इञ्जती ति आनेञ्जं। १०. एकत्तगत चित्त नानत्तकिलेसे न इञ्जती ति आनेञ्ज। ११ सद्धाय परिग्गहित चित्त अस्सद्धिये न इञ्जती ति आनेञ्जं। १२. विरियेन परिग्गहित चित्तं कोसज्जे न इञ्जती ति आनेञ्ज। १३. सतिया परिग्गहित चित्तं पमादे न इञ्जती ति आनेञ्ज। १४ समाधिना परिग्गहितं चित्त उद्धच्चे न इञ्जती ति आनेञ्जं। १५. पञ्ञाय परिग्गहितं चित्तं अविज्जाय न इञ्जती ति आनेञ्जं। १६. ओभासगतं चित्त अविज्जन्धकारे न इञ्जती ति आनेञ्ज। इद्धिया इमानि सोळस मूलानि इद्धिलाभाय पे० इद्धिवेसारज्जाय सवत्तन्ती" (खु० ५-४६८) ति।

काम च एस अत्थो "एवं समाहिते चित्ते" ति आदिना पि सिद्धो येव, पठमज्झानादीन पन इद्धिया भूमि-पाद-पद-मूलभावदस्सनत्थं पुन वुत्तो। पुरिमो च **सुत्तेसु** आगतनयो, अय **पटिसम्भिदायं**। इति उभयत्थ असम्मोहत्थ पि पुन वुत्तो (४)

ञाणेन अधिट्ठहन्तो ति। स्वायमेते इद्धिया भूमि-पाद-पद-मूलभूते धम्मे सम्पादेत्वा अभिञ्ञापादकं झानं समापज्जित्वा वुट्ठाय सचे सतं इच्छति, 'सत होमि सतं होमी' ति परिकम्म कत्वा पुन अभिञ्ञापादकं झान समापज्जित्वा वुट्ठाय अधिट्ठाति, अधिट्ठानचित्तेन सहेव सत होति। सहस्सादीसु पि एसेव नयो। सचे एव न इज्झति, पुन परिकम्मं कत्वा दुतियं पि समापज्जित्वा वुट्ठाय अधिट्ठातब्बं। **संयुत्तट्ठकथायं** हि एकवार द्वेवारं समापज्जितु वट्टती ति वुत्तं।

तत्थ पादकज्झानचित्त निमित्तारम्मण, परिकम्मचित्तानि सतारम्मणानि वा सहस्सारम्मणानि वा। तानि च खो वण्णवसेन, नो पण्णत्तिवसेन। अधिट्ठानचित्तं पि तथेव सतारम्मण वा सहस्सारम्मण वा। त पुब्बे वुत्तं अप्पनाचित्तमिव गोत्रभुअनन्तर एकमेव उप्पज्जति रूपावचरचतुत्थज्झानिकं। (५)

बहुभावपाटिहारियं

११. यं पि **पटिसम्भिदायं** वुत्तं—"पकतिया एको बहुकं आवज्जति सतं वा सहस्स वा सतसहस्स वा, आवज्जित्वा ञाणेन अधिट्ठाति—"बहुको होमी" ति, बहुको होति, यथा आयस्मा चूळपन्थको" (खु० ५-४७०) ति। तत्रा पि 'आवज्जती' ति परिकम्मवसेनेव वुत्तं। "आवज्जित्वा ञाणेन अधिट्ठाती" ति अभिञ्ञाञाणवसेन वुत्तं। तस्मा बहुकं आवज्जति, ततो तेसं पि परिकम्मचित्तानं अवसाने समापज्जति, समापत्तितो वुट्ठहित्वा पुन 'बहुको होमी' ति

आवज्जित्वा ततो पर पवत्तानं तिण्ण चतुन्न वा पुब्बभागचित्तान अनन्तरा उप्पन्नेन सन्निट्ठापनवसेन अधिट्ठान ति लद्धनामेन एकेनेव अभिञ्ञाञणेन अधिट्ठाती ति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो ।

१२ यं पन वुत्तं—**यथा आयस्मा चूळपन्थको** ति । त बहुधाभावस्स कायसक्खिदस्सनत्थ वुत्तं । त पन वत्थुना दीपेतब्ब । ते किर द्वे भातरो पन्थे जातत्ता पन्थका ति नामं लभिंसु । तेसं जेट्ठो महापन्थको । सो पब्बजित्वा सह पटिसम्भिदाहि अरहत्त पापुणि । अरहा हुत्वा चूळपन्थक पब्बाजेत्वा—

"पदुमं यथा कोकनद सुगन्धं पातो सिया फुल्लमवीतगन्ध ।
अङ्गीरस पस्स विरोचमानं तपन्तमादिच्चमिवन्तलिक्खे ॥"

(अ० २–४७९)

ति इमं गाथ अदासि । सो तं चतूहि मासेहि पगुणं कातु नासक्खि । अथ नं थेरो "अभब्बो त्वं सासने" ति विहारतो नीहरि ।

तस्मि च काले थेरो भत्तुद्देसको होति । जीवको थेर उपसङ्कमित्वा 'स्वे, भन्ते, भगवता सद्धि पञ्च भिक्खुसतानि गहेत्वा अम्हाक गेहे भिक्खं गहत्था' ति आह । थेरो पि 'ठपेत्वा चूळपन्थक सेसानं अधिवासेमी' ति अधिवासेसि ।

चूळपन्थको द्वारकोट्ठके ठत्वा रोदति । भगवा दिब्बचक्खुना दिस्वा तं उपसङ्कमित्वा "कस्मा रोदसी ?" ति आह । सो त पवत्ति आचिक्खि ।

भगवा "न सज्झायं कातुं असक्कोन्तो मम सासने अभब्बो नाम होति, मा सोचि, भिक्खू" ति तं बाहाय गहेत्वा विहार पविसित्वा इद्धिया पिलोतिक-खण्डं अभिनिम्मिनित्वा अदासि—"हन्द भिक्खु, इमं परिमज्जन्तो 'रजोहरणं रजोहरणं' ति पुनप्पुन सज्झाय करोही" ति । तस्स तथा करोतो त काळवण्णं अहोसि । सो "परिसुद्धं वत्थं, नत्थेत्थ दोसो, अत्तभावस्स पनायं दोसो" ति सञ्ञं पटिलभित्वा पञ्चसु खन्धेसु ञाण आतारेत्वा विपस्सन वड्ढेत्वा अनुलोमगोत्र-भुसमीपं पापेसि । अथस्स भगवा ओभासगाथा अभासि—

"रागो रजो न च पन रेणु वुच्चति रागस्सेतं अधिवचन रजो ति ।
एतं रजं विप्पजहित्वा पण्डिता विहरन्ति ते विगतरजस्स सासने ॥
सोको रजो न च पन रेणु वुच्चति दोसस्सेतं अधिवचन रजो ति ।
एत रजं विप्पजहित्वा पण्डिता विहरन्ति ते विगतरजस्स सासने ॥
मोहो रजो न च पन रेणु वुच्चति मोहस्सेतं अधिवचन रजो ति ।
एतं रजं विप्पजहित्वा पण्डिता विहरन्ति ते विगतरजस्स सासने" ॥

(खु० ४: १–४४४)

ति तस्स गाथापरियोसाने चतुपटिसम्भिदाछळभिञ्ञापरिवारा नव लोकुत्तर-धम्मा हत्थगता व अहेसुं ।

सत्था दुतियदिवसे जीवकस्स गेहं अगमासि सद्धिं भिक्खुसङ्घेन। अथ दक्खिणोदकावसाने यागुया दिय्यमानाय हत्थेन पत्तं पिदहि। जीवको "किं, भन्ते" ति पुच्छि। "विहारे एको भिक्खु अत्थी" ति। सो पुरिसं पेसेसि—"गच्छ, अय्यं गहेत्वा सीघं एही" ति। विहारतो निक्खन्ते पन भगवति,

"सहस्सक्खत्तुमत्तानं निम्मिनित्वान पन्थको।
निसादम्बवने रम्मे याव कालप्पवेदना" ति॥ (खु० २-३२३)

अथ सो पुरिसो गन्त्वा कासावेहि एकपज्जोतं आरामं दिस्वा आगन्त्वा "भिक्खूहि भरितो, भन्ते, आरामो, नाहं जानामि कतमो सो अय्यो" ति आह। ततो नं भगवा आह—"गच्छ यं पठमं पस्ससि, तं चीवरकण्णे गहेत्वा 'सत्था तं आमन्तेती' ति वत्वा आनेही" ति। सो तं गन्त्वा थेरस्सेव चीवरकण्णे अग्गहेसि। तावदेव सब्बे पि निम्मिता अन्तरधायिंसु। थेरो "गच्छ त्वं" ति तं उय्योजेत्वा मुखधोवनादिसरीरकिच्चं निट्ठपेत्वा पठमतरं गन्त्वा पत्तासने निसीदि। इदं सन्धाय वुत्तं—"**यथा आयस्मा चूळपन्थको**" ति।

१३. तत्र ये ते बहू निम्मिता ते अनियमेत्वा निम्मितत्ता इद्धिमता सदिसा व होन्ति। ठान-निसज्जादीसु वा भासित-तुण्हीभावादीसु वा यं यं इद्धिमा करोति, तं तदेव करोन्ति। सचे पन नानावण्णे कातुकामो होति, केचि पठमवये, केचि मज्झिमवये, केचि पच्छिमवये, तथा दीघकेसे, उपड्ढमुण्डे, मुण्डे, मिस्सकेसे, उपड्ढरत्तचीवरे, पण्डुकचीवरे, पदभाण-धम्मकथासरभञ्ञ-पञ्हपुच्छन-पञ्ह-विस्सज्जन-रजनपचन-चीवरसिब्बन-धोवनादीनि करोन्ते अपरे पि वा नानप्पकारके कातुकामो होति, तेन पादकज्झानतो वुट्ठाय "एत्तका भिक्खू पठमवया होन्तू" ति आदिना नयेन परिकम्मं कत्वा पुन समापज्जित्वा वुट्ठाय अधिट्ठातब्बं। अधिट्ठानचित्तेन सद्धिं इच्छितिच्छितप्पकारा येव होन्ती ति।

एस नयो **बहुधा पि हुत्वा एको होती** ति आदिसु।

१४ अयं पन विसेसो—इमिना भिक्खुना एवं बहुभावं निम्मिनित्वा पुन "एको व हुत्वा चङ्कमिस्सामि, सज्झायं करिस्सामि, पञ्हं पुच्छिस्सामी" ति चिन्तेत्वा वा, "अयं विहारो अप्पभिक्खुको, सचे केचि आगमिस्सन्ति, 'कुतो इमे एत्तका एकसदिसा भिक्खू, अद्धा थेरस्स एस आनुभावो' ति मं जानिस्सन्ती" ति अप्पिच्छताय वा अन्तरा व "एको होमी" ति इच्छन्तेन पादकज्झानं समापज्जित्वा वुट्ठाय "एको होमी" ति परिकम्मं कत्वा पुन समापज्जित्वा वुट्ठाय "एको होमी" ति अधिट्ठातब्बं। अधिट्ठानचित्तेन सद्धिं येव एको होति। एवं अकरोन्तो पन यथापरिच्छिन्नकालवसेन सयमेव एको होति।

आविभावपाटिहारिय

१५ **आविभावं तिरोभावं** ति। एत्थ आविभाव करोति तिरोभावं करोती ति अयमत्थो। इममेव हि सन्धाय **पटिसम्भिदाय** वुत्त—"आविभावं ति केनचि अनावट होति अप्पटिच्छन्न विवट पाकट। तिरोभाव ति केनचि आवट होति पटिच्छन्न पिहित पटिकुज्जित" (खु० ५-४७०) ति। तत्राय इद्धिमा आविभाव कातुकामो अन्धकार वा आलोकं करोति, पटिच्छन्न वा विवटं, अनापाथ वा आपाथ करोति।

कथ ? अय हि यथा पटिच्छन्नो पि दूरे ठितो पि वा दिस्सति, एव अत्तान वा पर वा कातुकामो पादकज्झानतो वुट्ठाय 'इद अन्धकारट्ठान आलोकजातं होतू' ति वा, 'इद परिच्छन्न विवटं होतू' ति वा 'इद अनापाथ आपाथ होतू' ति वा आवज्जित्वा परिकम्म कत्वा वुत्तनयेनेव अधिट्ठाति, सह अधिट्ठाना यथाधिट्ठितमेव होति, परे दूरे ठिता पि पस्मन्ति, सय पि पस्मितुकामो पस्सति।

१६. एतं पन पाटिहारिय केन कतपुब्ब ति ? भगवता। चूळसुभद्दाय निमन्तितो विस्सकम्मुना निम्मितेहि पञ्चहि कूटागारसतेहि सावत्थितो सत्त-योजनब्भन्तर साकेत गच्छन्तो, यथा साकेतनगरवासिनो सावत्थिवासिके सावत्थिवासिनो साकतवासिके पस्सन्ति, एव अधिट्ठासि, नगरमज्झे च ओतरित्वा पथविं द्विधा भिन्दित्वा याव अवीचि आकास च द्विधा वियूहित्वा याव ब्रह्मलोक दस्सेसि। (१)

देवारोहणनापि च अयमत्थो विभावेतब्बो।

भगवा किर यमकपाटिहारिय कत्वा चतुरासीतिपाणसहस्सानि बन्धना मोचेत्वा, 'अतीता बुद्धा यमकपाटिहारियावसाने कुहि गता ?' ति आवज्जित्वा 'तावतिसभवन गता' ति अद्दस। अथेकेन पादेन पथवीतल अक्कमित्वा दुतिय युगन्धरपब्बते पतिट्ठापेत्वा पुन पुरिमपाद उद्धरित्वा सिनेरुमत्थक अक्कमित्वा तत्थ पण्डुकम्बलसिलातले वस्स उपगन्त्वा सन्निपतितान दससहस्सचक्कवाळ-देवतान आदितो पट्ठाय अभिधम्मकथ आरभि। भिक्खाचारवेलाय निम्मित-बुद्ध मापेसि। सो धम्म देसेति। (२)

भगवा नागलतादन्तकट्ठ खादित्वा अनोतत्तदहे मुखं धोवित्वा उत्तरकुरूसु पिण्डपातं गहेत्वा अनोतत्तदहे परिभुञ्जति। सारिपुत्तत्थेरो तत्थ गन्त्वा भगवन्तं वन्दति। भगवा 'अज्ज एत्तक धम्म देसेसिं' ति थेरस्स नय देति। एवं तयो मासे अब्बोच्छिन्न अभिधम्मकथ कथेसि। त सुत्वा असीतिकोटिदेवतानं धम्मा-भिसमयो अहोसि। (३)

यमकपाटिहारे सन्निपतिता पि द्वादसयोजना परिसा 'भगवन्तं पस्सित्वा व गमिस्सामा' ति खन्धावारं बन्धित्वा अट्ठासि। त चूळअनाथपिण्डिकसेट्ठी येव

सब्बपच्चयेहि उपट्ठासि। मनुस्सा 'कुहिं भगवा ?' ति जाननत्थाय अनुरुद्धत्थेरं याचिंसु। थेरो आलोकं वड्ढेत्वा अद्दस दिब्बेन चक्खुना तत्थ वस्सूपगतं भगवन्तं दिस्वा आरोचेसि।

ते भगवतो वन्दनत्थाय महामोग्गलानत्थेरं याचिंसु। थेरो परिसमज्झे येव महापथविय निम्मुज्जित्वा सिनेरुपब्बतं निब्बिज्झित्वा तथागतपादमूले भगवतो पादे वन्दमानो व उम्मुज्जित्वा भगवन्तं एतदवोच—"जम्बुदीपवासिनो, भन्ते, 'भगवतो पादे वन्दित्वा पस्सित्वा व गमिस्सामा' ति वदन्ती" ति। भगवा आह—"कुहिं पन ते, मोग्गलान, जेट्ठभाता धम्मसेनापती" ति ? "सङ्कस्सनगरे, भन्ते" ति। "मोग्गल्लान, मं दट्ठुकामा स्वे सङ्कस्सनगरं आगच्छन्तु, अहं स्वे महापवारणपुण्णमासि-उपोसथदिवसे सङ्कस्सनगरे ओतरिस्सामी" ति।

"साधु, भन्ते" ति थेरो दसबलं वन्दित्वा आगतमग्गेनेव ओरुय्ह मनुस्सानं सन्तिकं सम्पापुणि। गमनागमनकाले च यथा न मनुस्सा पस्सन्ति, एवं अधिट्ठासि। इदं तावेत्थ महामोग्गल्लानत्थेरो आविभावपाटिहारियं अकासि। सो 'एवं आगतो' तं पवत्तिं आरोचेत्वा, "दूरं ति सञ्ञं अकत्वा कत्तपातरासा व निक्खमथा" ति आह। (४)

भगवा सक्कस्स देवरञ्ञो आरोचेति—"महाराज, स्वे मनुस्सलोकं गच्छामी" ति। देवराजा विस्सकम्मं आणापेसि—"तात, स्वे भगवा मनुस्सलोकं गन्तुकामो, तिस्सो सोपानपन्तियो मापेहि—एकं कनकमयं, एकं रजतमयं, एकं मणिमयं" ति। सो तथा अकासि।

भगवा दुतियदिवसे सिनेरुमुद्धनि ठत्वा पुरत्थिमलोकधातुं ओलोकेसि, अनेकानि चक्कवाळसहस्सानि विवटानि हुत्वा एकङ्गणं विय पकासिंसु। यथा च पुरत्थिमेन, एवं पच्छिमेन पि उत्तरेन पि दक्खिणेन पि सब्बं विवटमद्दस। हेट्ठा पि याव अवीचि, उपरि याव अकनिट्ठभवनं, ताव अद्दस्स। तं दिवसं किर लोकविवरणं[1] नाम अहोसि। मनुस्सा पि देवे पस्सन्ति, देवा पि मनुस्से। तत्थ नेव मनुस्सा उद्धं उल्लोकेन्ति, न देवा अधो ओलोकेन्ति, सब्बे सम्मुखा व अञ्ञमञ्ञं पस्सन्ति।

भगवा मज्झे मणिमयेन सोपानेन ओतरति, छकामावचरदेवा वामपस्से कनकमयेन, सुद्धावासा च महाब्रह्मा च दक्खिणपस्से रजतमयेन। देवराजा पत्तचीवरं अग्गहेसि, महाब्रह्मा तियोजनिकं सेतच्छत्तं, सुयामो बालवीजनिं, पञ्चसिखो गन्धब्बपुत्तो तिगावुतमत्तं वेळुवपण्डुवीणं गहेत्वा तथागतस्स पूजं

१. अनेकसतसहस्ससङ्ख्स्स ओकासलोकस्स तन्निवासिसत्तलोकस्स च विवटभावकरणं पाटिहारियं **लोकविवरणं** नाम।

करोन्तो ओतरति। त दिवसं भगवन्तं दिस्वा बुद्धभावाय पिह अनुप्पादेत्वा ठितसत्तो नाम नत्थि। इदमेत्थ भगवा आविभावपाटिहारिय अकासि। (४)

अपि च—तम्बपण्णिदीपे तळङ्गरवासी धम्मदिन्नत्थेरो पि तिस्समहाविहारे चेतियङ्गणम्हि निसीदित्वा "तीहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अपण्णकपटिपदं पटिपन्नो होती" (अं० १–१०४) ति **अपण्णकसुत्तं** कथेन्तो हेट्ठामुख वीजनिं अकासि याव अवीचितो एकङ्गण अहोसि, ततो उपरिमुखं अकासि याव ब्रह्मलोका एकङ्गण अहोसि। थेरो निरयभयेन तज्जेत्वा सग्गसुखेन च पलोभेत्वा धम्म देसेसि। केचि सोतापन्ना अहेसु, केचि सकदागामी, अनागामी, अरहन्तो ति। (५)

१७ तिरोभाव कातुकामो पन आलोकं वा अन्धकार करोति, अपटिच्छन्नं वा पटिच्छन्न, आपाथं वा अनापाथं करोति। कथ ? अय हि यथा अपटिछन्नो पि समीपे ठितो पि वा न दिस्सति, एव अत्तानं वा पर वा कत्तुकामो पादकज्झानतो वुटठाय 'इदं आलोकट्ठानं अन्धकार होतू' ति वा, 'इदं अपटिच्छन्न पटिच्छन्नं होतू' ति वा, 'इदं आपाथं अनापाथ होतू' ति वा आवज्जित्वा परिकम्म कत्वा वुत्तनयेनेव अधिटठाति, सह अधिट्ठानचित्तेन यथाधिट्ठितमेव होति, परे समीपे ठिता पि न पस्सन्ति, सय पि अपस्सितुकामो न पस्सति।

१८ एव पन पाटिहारियं केन कतपुब्ब ति ? भगवता। भगवा हि यस कुलपुत्त समीपे निसिन्न येव, यथा पिता न पस्सति, एवमकासि। तथा वीसयोजनसत महाकप्पिनस्स पच्चुग्गमन कत्वा त अनागामिफले, अमच्चसहस्सं चस्स सोतापत्तिफले पतिट्ठपेत्वा तस्स अनुमग्गं आगता सहस्सित्थिपरिवारा अनोजादेवी आगन्त्वा समीपे निसिन्ना पि यथा सपरिस राजानं न पस्सति तथा कत्वा, 'अपि, भन्ते, राजान पस्सथा' ति ? वुत्ते 'किं पन ते राजान गवेसितु वर, उदाहु अत्तान' ति ? 'अत्तान भन्ते' ति वत्वा निसिन्नाय तस्सा तथा धम्म देसेसि, यथा इत्थिसहस्सेन सा सद्धि पत्तिफले पतिट्ठासि, अमच्चा अनागामिफले, राजा अरहत्ते ति। (१)

अपि च, तम्बिपण्णिदीपं आगतदिवसे यथा अत्तना सद्धिं आगते अवसेसे राजा न पस्सति, एव करोन्तेन महिन्दत्थेरेनापि इद कतमेव। (२)

१९. अपि च—सब्बं पि पाकटपाटिहारिय आविभाव नाम, अपाकटपाटिहारिय तिरोभावं नाम। तत्थ **पाकटपाटिहारिये** इद्धि पि पञ्ञायति, इद्धिमा पि। त यमकपाटिहारियेन दीपेतब्ब। तत्र हि "इध तथागतो यमकपाटिहारिय करोति असाधारणं सावकेहि, उपरिमकायतो अग्गिक्खन्धो पवत्तति, हेट्ठिमकायतो उदकधारा पवत्तती (खु० ५–१३८) ति एवं उभयं पञ्ञायित्थ। **अपाकटपाटिहारिये** इद्धि येव पञ्ञायति, न इद्धिमा। तं **महकसुत्तेन** (सं० ३–२५८)

ब्रह्मनिकन्तनिकसुत्तेन (म० १–३९९) च दीपेतब्ब। तत्र हि आयस्मतो च महकस्स, भगवतो च इद्धि येव पञ्ञायित्थ, न इद्धिमा।

यथाह—"एकमन्त निसिन्तो खो चित्तो गहपति आयस्मन्त महक एतदवोच—'साधु मे, भन्ते, अय्यो महको उत्तरिमनुस्सधम्मा इद्धिपाटिहारिय दस्सेतू' ति। 'तेन हि त्व, गहपति, आळिन्दे उत्तरामङ्ग पञ्ञापेत्वा तिणकलाप ओकासेही' ति। 'एव भन्ते' ति खो चित्तो गहपति आयस्मतो महकस्स पटिस्सुत्वा आळिन्दे उत्तराङ्ग पञ्ञापेत्वा तिणकलाप ओकासेसि। अथ खो आयस्मा महको विहारं पविसित्वा तथारूप इद्धाभिसङ्खार अभिसङ्खासि, यथा ताळच्छिग्गळेन च अग्गळन्तरिकाय च अच्चि निक्खमित्वा तिणानि झापेसि उत्तरासङ्ग न झापेसि" (स० ३–२५८)। (१)

यथा चाह—"अथ ख्वाह, भिक्खवे, तथारूप इद्धाभिसङ्खार अभिसङ्खसिं, एत्तावता ब्रह्मा च ब्रह्मपरिसा च ब्रह्मपारिसज्जा च सद्द च मे सोस्सन्ति, न च म दक्खिस्सन्ती" ति अन्तरहितो इमं गाथ अभासि—

भवे वाहं भय दिस्वा भव च विभवेसिन।
भवं नाभिवदि किञ्चि, नन्दि च न उपादियिं" ति॥ (२)
(म० १–४०३)

तिरोकुड्डगमनादिकं पाटिहारियं

२० **तिरोकुड्डं तिरोपाकारं तिरोपब्बत असज्जमानो गच्छति, सेय्यथापि आकासे** ति। एत्थ 'तिरोकुड्ड' ति। परकुड्ड। कुड्डस्स परभाग ति वुत्तं होति। एस नयो इतरेसु। 'कुड्डो' ति च गेहभित्तिया एव अधिवचन। 'पाकारो' ति। गेह-विहार-गामादीन परिक्खेपाकारो। 'पब्बतो' ति। पसुपब्बतो वा, पासाणपब्बतो वा। 'असज्जमानो' ति। अलग्गमानो। 'सेय्यथापि आकासे' ति। आकासे विय।

एवं गन्तुकामेन पन आकासकसिण समापज्जित्वा वुट्ठाय कुड्ड वा पाकार वा सिनेरुचक्कवाळसु पि अञ्ञतर पब्बत वा आवज्जित्वा कतपरिकम्मेन, 'आकासो होतू' ति अधिट्ठातब्बो, आकासो येव होति। अधो ओतरितुकामस्स, उद्ध वा आरोहितुकामस्स सुसिरो होति, विनिविज्झित्वा गन्तुकामस्स छिद्दो। सो तत्थ असज्जमानो गच्छति।

२१ **तिपिटकचूळाभयत्थेरो** पनेत्थाह—"आकासकसिणसमापज्जन, आवुसो, किमत्थियं ? किं हत्थि-अस्सादीनि अभिनिम्मिनितुकामो हत्थि-अस्सादिकसिणानि समापज्जति ? ननु यत्थ कत्थचि कसिणे परिकम्म कत्वा अट्ठ समापत्तिवसीभावो येव पमाणं, यं यं इच्छति तं तदेव होती" ति ? भिक्खू आहंसु—"पाळिया, भन्ते, आकासकसिणं येव आगतं, तस्मा अवस्समेतं वत्तब्बमेत" ति।

तत्रायं पालि—"पकतिया आकासकसिणसमापत्तिया लाभी होति, तिरोकुड्ड तिरोपाकारं तिरोपब्बतं आवज्जति, आवज्जित्वा ञाणेन अधिट्ठाति—'आकासो होतू' ति, आकासो होति, तिरोकुड्ड तिरोपाकारं तिरोपब्बत असज्जमानो गच्छति। यथा पकतिया मनुस्सा अनिद्धिमन्तो केनचि अनावटे अपरिक्खते असज्जमाना गच्छन्ति; एवमेव सो इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो तिरोकुड्ड तिरोपाकार तिरोपब्बत असज्जमानो गच्छति, सेय्यथापि आकासे" (खु० ५–४७०) ति।

२२ सचे पनस्स भिक्खुनो अधिट्ठहित्वा गच्छन्तस्स अन्तरा पब्बतो वा रुक्खो वा उट्ठेति, किं पुन समापज्जित्वा अधिट्ठातब्ब ति? दोसो नत्थि। पुन समापज्जित्वा अधिट्ठान हि उपज्झायस्स सन्तिके निस्सयगहणसदिसं होति। इमिना च पन भिक्खुना 'आकासो होतू' ति अधिट्ठत्ता आकासो होति येव। पुरिमाधिट्ठानबलेनेव चस्म अन्तरा अञ्ञो पब्बतो वा रुक्खो वा उतुमयो उट्ठहिस्सती ति अट्ठानमेवेत। अञ्ञेन इद्धिमता निम्मिते पन पठमनिम्मानं बलवं होति। इतरेन तस्स उद्धं वा अधो वा गन्तब्बं।

२३. **पथविया पि उमुज्जनिमुज्जं** ति। एत्थ उम्मुज्ज ति उट्ठान वुच्चति, निमुज्ज ति संसीदन। उम्मुज्ज च निमुज्ज च उम्मुज्जनिमुज्ज। एव कातुकामेन आपोकसिण समापज्जित्वा उट्ठाय 'एत्तके ठाने उदक होतू' ति परिच्छिन्दित्वा परिकम्मं कत्वा वुत्तनयेनेव अधिट्ठातब्ब। सह अधिट्ठानेन यथा परिच्छिन्ने ठाने पथवी उदकमेव होति। सो तत्थ उम्मुज्जनिमुज्ज करोति। तत्राय पाळि—

"पकतिया आपोकसिणसमापत्तिया लाभी होति। पथविं आवज्जति। आवज्जित्वा ञाणेन अधिट्ठाति—'उदक होतू' ति, उदक होति। सो पथविया उम्मुज्जनिमुज्ज करोति। यथा मनुस्सा पकतिया अनिद्धिमन्तो उदके उम्मुज्जनिमुज्ज करोन्ति, एवमेव सो इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो पथविया उम्मुज्जनिमुज्जं करोति, सेय्यथा पि उदके" (खु० ५–४७०) ति।

न केवल च उम्मुज्जनिमुज्जमेव, न्हान-पान-मुखधोवन-भण्डकधोवनादीसु य य इच्छति, त त करोति। न केवल च उदकमेव, सप्पितेलमधुफाणितादीसु पि य य इच्छति, त त 'इदञ्चिद च एत्तक होतू' ति आवज्जित्वा परिकम्म कत्वा अधिट्ठहन्तस्स यथाधिट्ठितमेव होति। उद्धरित्वा भाजनगत करोन्तस्स सप्पि सप्पिमेव होति। तेलादीनि तेलादीनि येव। उदकं उदकमेव। सो तत्थ तेमितुकामो व तेमेति, न तेमितुकामो न तेमेति। तस्सेव च सा पथवी उदकं होति, सेसजनस्स पथवी येव। तत्थ मनुस्सा पत्तिका पि गच्छन्ति, यानादीहि पि गच्छन्ति, कसिकम्मादीनि पि करोन्ति येव। सचे पनाय तेस पि 'उदकं होतू'

ति इच्छति, होति येव। परिच्छिन्नकाल पन अतिक्कमित्वा य पकतिया घट-तळाकादीसु उदकं, त ठपेत्वा अवसेस परिच्छिन्नट्ठान पथवी येव होति।

२४ **उदके पि अभिज्जमाने** ति। एत्थ य उदक अक्कमित्वा संसीदति, त भिज्जमान ति वुच्चति। विपरीत **अभिज्जमानं**। एवं गन्तुकामेन पन पथवीकसिणं समापज्जित्वा वुट्ठाय 'एत्तके ठाने उदक पठवी होतू' ति परिच्छिन्दित्वा परिकम्म कत्वा वुत्तनयेनेव अधिट्ठातब्बं। सह अधिट्ठानेन यथा परिच्छिन्नट्ठाने उदक पथवी येव होति। सो तत्थ गच्छति। तत्राय **पाळि**—

"पकतिया पथवीकसिणसमापत्तिया लाभी होति। उदक आवज्जति। आवज्जित्वा ञाणेन अधिट्ठाति 'पथवी होतू' ति, पथवी होति। सो अभिज्जमाने उदके गच्छति। यथा मनुस्सा पकतिया अनिद्धिमन्तो अभिज्जमानाय पथविया गच्छन्ति, एवमेव सो इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो अभिज्जमाने उदके गच्छति, सेय्यथापि पथवियं" (खु ५–४७१) ति।

न केवल च गच्छति, य यं इरियापथं इच्छति, त त करोति। न केवल च पथविमेव करोति, मणिसुवण्णपब्बतरुक्खादीसु पि य य इच्छति, त तं वुत्तनयेनेव आवज्जित्वा अधिट्ठाति यथाधिट्ठितमेव होति। तस्सेव च तं उदक पथवी होति, सेसजनस्स उदकमेव। मच्छकच्छपा च उदककाकादयो च यथारुचि विचरन्ति। सचे पनायं अञ्ञेस पि मनुस्सान त पथविं कातु इच्छति, करोति येव। परिच्छिन्नकालातिक्कमे पन उदकमेव होति।

आकासगमनादिकं पाटिहारियं

२५. **पल्लङ्केन कमती** ति। पल्लङ्केन गच्छति। **पक्खीसकुणो** ति। पक्खेहि युत्तसकुणो। एव कातुकामेन पन पथवीकसिण समापज्जित्वा वुट्ठाय सचे निसिन्नो गन्तु इच्छति, पल्लङ्कप्पमाण ठान परिच्छिन्दित्वा परिकम्म कत्वा वुत्तनयेनेव अधिट्ठातब्बं। सचे निपन्नो गन्तुकामो होति मञ्चप्पमाण, सचे पदसा गन्तुकामो होति मग्गप्पमाण ति। एवं यथानुरूप ठानं परिच्छिन्दित्वा वुत्तनयेनेव 'पथवी होतू' ति अधिट्ठातब्बं, सह अधिट्ठानेन पथवी येव होति। तत्राय **पाळि**—

"आकासे पि पल्लङ्केन कमति, सेय्यथापि पक्खीसकुणो ति, पकतिया पथवीकसिणसमापत्तिया लाभी होति, आकासं आवज्जति, आवज्जित्वा ञाणेन अधिट्ठाति 'पथवी होतू' ति, पथवी होति। सो आकासे अन्तलिक्खे चङ्कमति पि तिट्ठति पि निसीदति पि सेय्यं पि कप्पेति। यथा मनुस्सा पकतिया अनिद्धिमन्तो पथवियं चङ्कमन्ति पि....पे०....सेय्यं पि कप्पेन्ति; एवमेव सो

इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो आकासे अन्तलिक्खे चङ्कमति पि ...पे० · सेय्यं पि कप्पेती" (खु० ५–४७१) ति।

२६ आकासे गन्तुकामेन च भिक्खुना दिब्बचक्खुलाभिना पि भवितब्बं। कस्मा ? अन्तरे उतुसमुट्ठाना वा पब्बतरुक्खादयो होन्ति, नागसुपण्णादयो वा उसूयन्ता मापेन्ति, तेस दस्सनत्थं। ते पन दिस्वा किं कातब्ब ति ? पादकज्झानं समापज्जित्वा वुट्ठाय 'आकासो होतू' ति परिकम्म कत्वा अधिट्ठातब्ब।

२७ थेरो[1] पनाह—"समापत्तिसमापज्जन आवुसो, किमत्थिय ? ननु समाहितमेवस्स चित्त ? तेन य य ठान 'आकासो होतू' ति अधिट्ठाति, आकासो येव होती" ति। किञ्चापि एवमाह, अथ खो तिरोकुड्डपाटिहारिये वुत्तनयेनेव पटिपज्जतब्ब।

२८. अपि च ओकासे ओरोहणत्थ पि इमिना दिब्बचक्खुलाभिना भवितब्ब। अय हि सचे अनोकासे न्हानतित्थे वा गामद्वारे वा आरोहति, महाजनस्स पाकटो होति। तस्मा दिब्बचक्खुना पस्सित्वा अनोकास वज्जेत्वा ओकासे ओतरती ति।

२९ "इमे पि चन्दिमसुरिये एव महिद्धिके एव महानुभावे पाणिना परामसति परिमज्जती" (दी० १–६९) ति एत्थ चन्दिमसुरियान द्वाचत्तालीसयोजनसहस्सस्सउपरि चरणेन महिद्धिकता, तीसु दीपेसु एकक्खणे आलोककरणेन महानुभावता वेदितब्बा। एव उपरिचरणआलोककरणेहि वा **महिद्धिके** तेनेव महिद्धिकतेन **महानुभावे। परामसती** ति। परिग्गण्हति, एकदेसे वा छुपति। **परिमज्जती** ति। समन्ततो आदासतल विय परिमज्जति।

अयं पनस्स इद्धि अभिञ्ञापादकज्झानवसेनेव इज्झति, नत्थेत्थ कसिणसमापत्तिनियमो। वुत्त हेत **पटिसम्भिदायं**—

"इमे चन्दिमसुरिये ··पे० · परिमज्जती ति। इध सो इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो चन्दिमसुरिये आवज्जति, आवज्जित्वा ञाणेन अधिट्ठाति हत्थपासे होतू ति, हत्थपासे होति। सो निसिन्नको वा निपन्नको वा चन्दिमसुरिये पाणिना आमसति परामसति परिमज्जति। यथा मनुस्सा पकतिया अनिद्धिमन्तो किञ्चदेव रूपगत हत्थपासे आमसन्ति परामसन्ति परिमज्जन्ति, एवमेव सो इद्धिमा········पे०····परिमज्जती" (खु० ५–४७१) ति।

स्वायं यदि इच्छति गन्त्वा परामसितुं, गन्त्वा परामसति। यदि पन इधेव निसिन्नको वा निपन्नको वा परामसितुकामो होति, हत्थपासे होतू ति अधिट्ठाति, अधिट्ठानबलेन वण्टा मुत्ततालफलं विय आगन्त्वा हत्थपासे ठिते वा परामसति,

---

१ थेरो ति। पुब्बे वुत्तो **तिपिटकचूळाभयत्थेरो**।

हत्थ वा वड्ढेत्वा। वड्ढेन्तस्स पन किं उपादिण्णक वड्ढति, अनुपादिण्णक ति ? उपादिण्णक निस्साय अनुपादिण्णक वड्ढति।

३०. तत्थ **तिपिटकचूळनाग**त्थेरो आह—कि पनावुसो, उपादिण्णक खुद्दकं पि महन्त न होति ? ननु यदा भिक्खु तालच्छिद्दादीहि निक्खमति, तदा उपादिण्णक खुद्दकं होति। यदा महन्त अत्तभाव करोति, तदा महन्त होति **महामोग्गलान**त्थेरस्स विया ति ?

नन्दोपनन्दनागदमनपाटिहारियकथा

३१. एकस्मि किर समये अनाथपिण्डिको गहपति भगवतो धम्मदेसन सुत्वा "स्वे, भन्ते, पञ्चहि भिक्खुसतेहि सद्धि अम्हाकं गेहे भिक्ख गण्हथा" ति निमन्तेत्वा पक्कामि। भगवा अधिवासेत्वा तं दिवसावसेस रत्तिभाग च वीतिनामेत्वा पच्चूससमये दसमहस्सिलोकधातुं ओलोकेसि। अथस्स नन्दोपनन्दो नाम नागराजा ञाणमुखे आपाथ आगच्छि।

भगवा 'अय नागराजा मय्ह ञाणमुखे आपाथ आगच्छि, अत्थि नु खो अस्स उपनिस्सयो" ति आवज्जेन्तो "अय मिच्छादिट्ठिको तीसु रतनेसु अप्पसन्नो" ति दिस्वा "को नु खो इम मिच्छादिट्ठितो विवेचेय्या" ति आवज्जेन्तो **महामोग्गल्लान**त्थेर अद्दस।

३२ ततो पभाताय रत्तिया सरीरपटिजग्गन कत्वा आयस्मन्त आनन्द आमन्तेसि—"आनन्द, पञ्चन्नं भिक्खुसतानं आरोचेहि—तथागतो देवचारिकं गच्छती" ति।

त दिवस च नन्दोपनन्दस्स आपानभूमि[1] सज्जयिसु। सो दिब्बरतनपल्लङ्के दिब्बेन सेतच्छत्तेन धारियमानेन तिविधनाटकेहि चेव नागपरिसाय च परिवुतो दिब्बभाजनेसु उपट्ठापितं अन्नपानविधिं ओलोकयमानो निसिन्नो होति। अथ भगवा यथा नागराजा पस्सति, तथा कत्वा तस्स वितानमत्थकेनेव पञ्चहि भिक्खुसतेहि सद्धि तावतिंसदेवलोकाभिमुखो पायासि।

३३. तेन खो पन समयेन नन्दोपनन्दस्स नागराजस्स एवरूपं पापक दिट्ठिगतं उप्पन्नं होति—इमे हि नाम मुण्डका समणका अम्हाक उपरूपरिभवनेन देवानं तावतिंसानं भवनं पविसन्ति पि निक्खमन्ति पि, न दानि इतो पट्ठाय इमेस अम्हाक मत्थके पादपंसुं ओकिरन्तानं गन्तुं दस्सामी" ति। उट्ठाय सिनेरुपाद गन्त्वा तं अत्तभाव विजहित्वा सत्तक्खत्तुं भोगेहि परिक्खिपित्वा उपरि फणं कत्वा तावतिंसभवनं अवकुज्जेन फणेन गहेत्वा अदस्सनं गमेसि।

३४ अथ खो आयस्मा रट्ठपालो भगवन्तं एतदवोच—"पुब्बे, भन्ते, इमस्मि

१. **आपानभूमि** ति। यत्थ सो निसिन्नो भोजनकिच्चं करोति, तं परिवेसनट्ठानं।

पदेसे ठितो सिनेरुं पस्सामि, सिनेरुपरिभण्डं पस्सामि, तावतिंसं पस्सामि वेजयन्तं पस्सामि, वेजयन्तस्स पासादस्स उपरि धजं पस्सामि। को नु खो, भन्ते, हेतु, को पच्चयो, य एतरहि नेव सिनेरुं पस्सामि ···पे० ·· न वेजयन्तस्स पासादस्स उपरि धजं पस्सामी" ति ? "अयं, रट्ठपाल, नन्दोपनन्दो नाम नागराजा तुम्हाकं कुपितो सिनेरुं सत्तक्खत्तुं भोगेहि परिक्खिपित्वा उपरि फणेन पटिच्छादेत्वा अन्धकारं कत्वा ठितो" ति। "दमेमि नं, भन्ते" ति। न भगवा अनुजानि। अथ खो आयस्मा **भद्दियो**, आस्मा **राहुलो** ति अनुक्कमेन सब्बे पि भिक्खू उट्ठहिंसु। न भगवा अनुजानि।

३५ अवसाने **महामोग्गलानत्थेरो**—"अहं, भन्ते, दमेमि नं" ति आह। "दमेहि, मोग्गल्लाना" ति भगवा अनुजानि। थेरो अत्तभावं विजहित्वा महन्तं नागराजवण्णं अभिनिम्मिनित्वा नन्दोपनन्दं चुद्दसक्खत्तुं भोगेहि परिक्खिपित्वा तस्स फणमत्थके अत्तनो फणं ठपेत्वा सिनेरुना सद्धिं अभिनिप्पीळेसि। नागराजा पधूमायि। थेरो पि "न तुय्हं येव सरीरे धूमो अत्थि, मय्हं पि अत्थी" ति पधूमायि। नागराजस्स धूमो थेरं न बाधति, थेरस्स पन धूमो नागराजानं बाधति। ततो नागराजा पज्जलि। थेरो पि "न तुय्हं येव सरीरे अग्गि अत्थि, मय्हं पि अत्थी" ति पज्जलि। नागराजस्स तेजो थेरं न बाधति, थेरस्स पन तेजो नागराजानं बाधति।

नागराजा "अयं मं सिनेरुना अभिनिप्पीळेत्वा धूमायति चेव पज्जलति चा" ति चिन्तेत्वा "भो, त्वं कोसी" ति पटिपुच्छि। "अहं खो, नन्द, मोग्गलानो" ति। "भन्ते, अत्तनो भिक्खुभावेन तिट्ठाही" ति।

३६. थेरो तं अत्तभावं विजहित्वा तस्स दक्खिणकण्णसोतेन पविसित्वा वामकण्णसोतेन निक्खमि, वामकण्णसोतेन पविसित्वा दक्खिणकण्णसोतेन निक्खमि, तथा दक्खिणनासासोतेन पविसित्वा वामनासासोतेन निक्खमि, वामनासासोतेन पविसित्वा दक्षिणनासासोतेन निक्खमि। ततो नागराजा मुखं विवरि। थेरो मुखेन पविसित्वा अन्तो कुच्छियं पाचीनेन च पच्छिमेन च चङ्कमति।

भगवा "मोग्गल्लान, मनसिकरोहि महिद्धिको एस नागो" ति आह। थेरो "मय्हं खो, भन्ते, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा। तिट्ठतु, भन्ते, नन्दोपनन्दो, अहं नन्दोपनन्दसदिसानं नागराजानं सतं पि सहस्सं पि दमेय्यं" ति आह।

३७ नागराजा चिन्तेसि—"पविसन्तो ताव मे न दिट्ठो, निक्खमनकाले दानि नं दाठन्तरे पक्खिपित्वा सङ्खादिस्सामी" ति चिन्तेत्वा "निक्खम, भन्ते, मा मं अन्तोकुच्छियं अपरापरं चङ्कमन्तो बाधयित्था" ति आह। थेरो निक्ख-

मित्वा बहि अट्ठासि। नागराजा "अयं सो" ति दिस्वा नासावातं विस्सज्जि। थेरो चतुत्थं झानं समापज्जि। लोमकूपं पि स वातो चालेतुं नासक्खि। 'अवसेसा भिक्खू किर आदितो पट्ठाय सब्बपाटिहारियानि कातुं सक्कुणेय्युं, इमं पन ठानं पत्वा एवं खिप्पनिसन्तिनो हुत्वा समापज्जितुं न सक्खिस्सन्ती' ति तेसं भगवा नागराजदमनं नानुजानि।

३८. नागराजा "अहं इमस्स समणस्स नासावातेन लोमकूपं पि चालेतुं नासक्खि, महिद्धिको समणो" ति चिन्तेसि। थेरो अत्तभावं विजहित्वा सुपण्णरूपं अभिनिम्मिनित्वा सुपण्णवातं दस्सेन्तो नागराजानं अनुबन्धि। नागराजा तं अत्तभावं विजहित्वा माणवकवण्णं अभिनिम्मित्वा "भन्ते, तुम्हाकं सरणं गच्छामी" ति वदन्तो थेरस्स पादे वन्दि। थेरो "सत्था, नन्द आगतो, एहि गमिस्सामा" ति नागराजानं दमयित्वा निब्बिसं कत्वा गहेत्वा भगवतो सन्तिकं अगमासि।

नागराजा भगवन्तं वन्दित्वा "भन्ते, तुम्हाकं सरणं गच्छामी" ति आह। भगवा "सुखी होहि, नागराजा" ति वत्वा भिक्खुसङ्घपरिवुतो अनाथपिण्डिकस्स निवेसनं अगमासि।

३९. अनाथपिण्डिको—"किं, भन्ते, अतिदिवा आगतत्था" ति आह। "मोग्गल्लानस्स च नन्दोपनन्दस्स च सङ्गामो अहोसी" ति। "कस्स, भन्ते, जयो, कस्स पराजयो" ति? "मोग्गल्लानस्स जयो, नन्दस्स पराजयो" ति। अनाथपिण्डिको "अधिवासेतु मे, भन्ते, भगवा सत्ताहं एकपटिपाटिया[1] भत्तं, सत्ताहं थेरस्स सक्कारं करिस्सामी" ति वत्वा सत्ताहं बुद्धपमुखानं पञ्चन्नं भिक्खुसतानं महासक्कारं अकासि।

इति इमं इमस्मिं नन्दोपनन्ददमने कतं महन्तं अत्तभावं सन्धायेतं वुत्तं—"यदा महन्तं अत्तभावं करोति, तदा महन्तं होति महामोग्गल्लानत्थेरस्स विया" ति। एवं वुत्ते पि भिक्खू उपादिण्णकं निस्साय अनुपादिण्णकमेव वट्टती ति आहंसु। अयमेव चेत्थ युत्ति।

४० सो एवं कत्वा न केवलं चन्दिमसुरिये परामसति। सचे इच्छति पादकथलिकं कत्वा पादे ठपेति, पीठं कत्वा निसीदति, मञ्चं कत्वा निपज्जति, अपस्सेनफलकं कत्वा अपस्सयति। यथा च एको, एवं अपरो पि। अनेकेसु पि हि भिक्खुसतसहस्सेसु एवं करोन्तेसु तेसं च एकमेकस्स तथेव इज्झति। चन्दिमसुरियानं च गमनं पि आलोककरणं पि तथेव होति। यथा हि पातिसहस्सेसु उदकपूरेसु सब्बपातीसु च चन्दमण्डलानि दिस्सन्ति। पाकतिकमेव चन्दस्स गमनं आलोककरणं च होति। तथूपममेतं पाटिहारियं।

---

१. एकपटिपाटिया ति। एकाय पटिपाटिया, निरन्तरं ति अत्थो।

ब्रह्मलोकगमनादिकं पाटिहारियं

४१. याव **ब्रह्मलोका पी** ति। ब्रह्मलोक पि परिच्छेद कत्वा। **कायेन वसं वत्तेती** ति। तत्थ ब्रह्मलोके कायेन अत्तनो वसं वत्तेति। तस्सत्थो पाळि अनुगन्त्वा वेदितब्बो। अयं हेत्थ पाळि[1]—

"याव ब्रह्मलोका पि कायेन वस वत्तेती ति। सचे सो इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो ब्रह्मलोक गन्तुकामो होति, दूरे पि सन्तिके अधिट्ठाति—सन्तिके होतू ति, सन्तिके होति। सन्तिके पि दूरे अधिट्ठाति—दूरे होतू ति, दूरे होति। बहुक पि थोकं अधिट्ठाति—थोक होतू ति, थोक होति। थोक पि बहुक अधिट्ठाति—बहुक होतू ति, बहुक होति। दिब्बेन चक्खुना तस्स ब्रह्मुनो रूपं पस्सति। दिब्बाय सोतधातुया तस्स ब्रह्मुनो सद्दं सुणाति। चेतोपरियञाणेन तस्स ब्रह्मुनो चित्त पजानाति। सचे सो इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो दिस्समानेन कायेन ब्रह्मलोकं गन्तुकामो होति, कायवसेन चित्त परिणामेति, कायवसेन चित्तं अधिट्ठाति। कायवसेन चित्तं परिणामेत्वा कायवसेन चित्तं अधिट्ठहित्वा सुखसञ्ञ च लहुसञ्ञ च ओक्कमित्वा दिस्समानेन कायेन ब्रह्मलोकं गच्छति। सचे सो इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो अदिस्समानेन कायेन ब्रह्मलोकं गन्तुकामो होति, चित्तवसेन कायं परिणामेति, चित्तवसेन काय अधिट्ठाति। चित्तवसेन कायं परिणामेत्वा, चित्तवसेन काय अधिट्ठहित्वा सुखसञ्ञ च लहुसञ्ञ च ओक्कमित्वा अदिस्समानेन कायेन ब्रह्मलोकं गच्छति। सो तस्स ब्रह्मुनो पुरतो रूपं अभिनिम्मिनाति मनोमयं सब्बङ्गपच्चङ्गि अहीनिन्द्रिय। सचे सो इद्धिमा चङ्कमति, निम्मितो पि तत्थ चङ्कमति। सचे सो इद्धिमा तिट्ठति · निसीदति····सेय्य कप्पेति, निम्मितो पि तत्थ सेय्य कप्पेति। सचे सो इद्धिमा धूमायति····पज्जलति ···धम्मं भासति · पञ्ह पुच्छति पञ्ह पुट्ठो विस्सज्जति, निम्मितो पि तत्थ पञ्हं पुट्ठो विस्सज्जेति। सचे सो इद्धिमा तेन ब्रह्मुना सद्धि सन्तिट्ठति, सल्लपति, साकच्छं समापज्जति, निम्मितो पि तत्थ तेन ब्रह्मुना सिद्धि सन्तिट्ठति, सल्लपति, साकच्छं समापज्जति। यं यदेव हि सो इद्धिमा करोति, तं तदेव निम्मितो करोती" (खु० ५-४७२) ति।

तत्थ **दूरे पि सन्तिकें अधिट्ठाती** ति। पादकज्झानतो वुट्ठाय दूरे देवलोकं वा ब्रह्मलोकं वा आवज्जति —सन्तिके होतू ति। आवज्जित्वा परिकम्मं कत्वा पुन समापज्जित्वा ञाणेन अधिट्ठाति—सन्तिके होतू ति, सन्तिके होति। एस नयो सेसपदेसु पि।

---

१. पाळि ति। पटिसम्भिदामग्गपालि।

४२ तत्थ को दूर गहेत्वा सन्तिकं अकासी ति ? भगवा । भगवा हि यमक-पाटिहारियावसाने देवलोक गच्छन्तो युगन्धरं च सिनेरु च सन्तिके कत्वा पथवीतलतो एकं पादं युगन्धरे पतिट्ठपेत्वा दुतियं सिनेरुमत्थके ठपेसि । (१)

अञ्ञो को अकासि ? महामोग्गल्लानत्थेरो । थेरो हि सावत्थितो भत्त-किच्चं कत्वा निक्खन्त द्वादसयोजनिक परिस तिसयोजनं सङ्कस्सनगरमग्ग सङ्खिपित्वा त खण येव सम्पापेसि । (२)

अपि च—तम्बपण्णिदीपे **चूळसमुद्दत्थेरो** पि अकासि । दुब्भिक्खसमये किर थेरस्स सन्तिकं पातो व सत्त भिक्खुसतानि आगमसु । थेरो "महा भिक्खुसङ्घो, कुहिं भिक्खाचारो भविस्सती" ति चिन्तेन्तो सकलतम्बपण्णिदीपे अदिस्वा "परतीरे पाटलिपुत्ते भविस्सती" ति दिस्वा भिक्खू पत्तचीवरं गाहापेत्वा "एथावुसो, भिक्खाचार गमिस्सामा" ति पथविं सङ्खिपित्वा पाटलिपुत्त गतो । भिक्खू "कतरं, भन्ते, इम नगरं" ति पुच्छिसु । "पाटलिपुत्त, आवुसो" ति । "पाटलिपुत्तं नाम दूरे, भन्ते" ति ? "आवुसो, महल्लकत्थेरा नाम दूरे पि गहेत्वा सन्तिके करोन्ती" ति । "महासमुद्दो कुहिं, भन्ते" ति ? "ननु, आवुसो, अन्तरा एक नीलमातिक[1] अतिक्कमित्वा आगतत्था" ति ? "आम भन्ते, महासमुद्दो पन महन्तो" ति । "आवुसो, महल्लकत्थेरा नाम महन्त पि खुद्दक करोन्ती" ति । (३)

यथा चाय, एवं **तिस्सदत्तत्थेरो** पि सायन्हसमये न्हायित्वा कतुत्तरासङ्गो "महाबोधिं वन्दिस्सामी" ति चित्ते उप्पन्ने सन्तिके अकासि[2] । (४)

सन्तिकं पन गहेत्वा को दूरमकासी ति ? भगवा । भगवा हि अत्तनो च अङ्गुलिमालस्स च अन्तरं सन्तिकं पि दूरमकासी ति ।

४३. अथ को बहुकं थोक अकासी ति ? महाकस्सपत्थेरो । राजगहे किर नक्खत्तदिवसे[3] पञ्चसता कुमारियो चन्दपूवे[4] गहेत्वा नक्खत्तकीळनत्थाय गच्छन्तियो भगवन्त दिस्वा किञ्चि नादंसु । पच्छतो आगच्छन्तं पन थेरं दिस्वा "अम्हाकं थेरो एति, पूवं दस्सामा' ति सब्बा पूवे गहेत्वा थेर उपसङ्कमिसु । थेरो पत्तं नीहरित्वा सब्बं एकपत्तपूरमत्तमकासि । भगवा थेरं आगमयमानो पुरतो निसीदि । थेरो आहरित्वा भगवतो अदासि ।

४४ **इल्लीससेट्ठिवत्थुस्मि** पन महामोग्गल्लानत्थेरो थोकं बहुकमकासि,

---

१. **नीलमातिक** ति । नीलवण्णोदकमातिकं ।

२ **सन्तिके आकासी** ति । तथा चित्तुप्पत्तिसमनन्तरमेव पथविं, समुद्दं च संखिपित्वा महाबोधिसन्तिके अकासि ।

३. **नक्खत्तदिवसे** ति । महदिवसे । ४ **चन्दपूवे** ति । चन्दसदिसे चण्दमण्डलाकारे पूवे ।

काकवलियवत्थुस्मि च भगवा। महाकस्सपत्थेरो किर सत्ताहं समापत्तिया वीतिनामेत्वा दलिद्दसङ्गहं करोन्तो काकवलियस्स नाम दुग्गतमनुस्सस्स घरद्वारे अट्ठासि। तस्स जाया थेरं दिस्वा पतिनो पक्कं अलोणम्बिलयागुं पत्ते आकिरि। थेरो तं गहेत्वा भगवतो हत्थे ठपेसि। भगवा महाभिक्खुसङ्घस्स पहोनकं कत्वा अधिट्ठासि। एकपत्तेन आभता सब्बेसं पहोसि। काकवलियो पि सत्तमे दिवसे सेट्ठिट्ठानं अलत्था ति।

४४. न केवलं च थोकस्स बहुकरणं, मधुरं अमधुरं, अमधुरं मधुरं ति आदीसु पि यं यं इच्छति, सब्बं इद्धिमतो इज्झति। तथा हि महाअनुळत्थेरो नाम सम्बहुले भिक्खू पिण्डाय चरित्वा सुक्खभत्तमेव लभित्वा गङ्गातीरे[1] निसीदित्वा परिभुञ्जमाने दिस्वा गङ्गाय उदकं सप्पिमण्डं ति अधिट्ठहित्वा सामणेरानं सञ्ञं अदासि। ते थालकेहि आहरित्वा भिक्खुसङ्घस्स अदंसु। सब्बे मधुरेन सप्पिमण्डेन भुञ्जिंसू ति।

४५. **दिब्बेन चक्खुना** ति। इधेव ठितो आलोकं वड्ढेत्वा **तस्स ब्रह्मुनो रूपं पस्सति**। इधेव च ठितो तस्स भासतो **सद्दं सुणाति, चित्तं पजानाति**। **कायवसेन चित्तं परिणामेती** ति। करजकायस्स[2] वसेन चित्तं परिणामेति, पादकज्झानचित्तं गहेत्वा काये आरोपेति। कायानुगतिकं करोति दन्धगमनं। कायगमनं हि दन्धं होति। **सुखसञ्ञं च लहुसञ्ञं च ओक्कमती** ति पादकज्झानारम्मणेन इद्धिचित्तेन सहजातं सुखसञ्ञं च लहुसञ्ञं च ओक्कमति, पविसति, फस्सेति, सम्पापुणाति। सुखसञ्ञा नाम उपेक्खासम्पयुत्तसञ्ञा। उपेक्खा हि सन्तं सुखं ति वुत्ता। सा येव च सञ्ञा नीवरणेहि चेव वितक्कादीहि पच्चनीकेहि च विमुत्तत्ता लहुसञ्ञा ति वेदितब्बा। तं ओक्कन्तस्स पनस्स करजकायो पि तूलपिचु विय सल्लहुको होति। सो एवं वातुक्खित्ततूलपिचुना विय सल्लहुकेन दिस्समानेन कायेन ब्रह्मलोकं गच्छति। एवं गच्छन्तो च सचे इच्छति, पथवीकसिणवसेन आकासे मग्गं निम्मिनित्वा पदसा गच्छति। सचे इच्छति, वायोकसिणवसेन वायुं अधिट्ठहित्वा तूलपिचु विय वायुना गच्छति। अपि च गन्तुकामता एव एत्थ पमाणं। सति हि गन्तुकामताय एवं कतचित्ताधिट्ठानो अधिट्ठानवेगुक्खित्तो व सो इस्सासखित्तसरो विय दिस्समानो गच्छति।

४६. **चित्तवसेन कायं परिणामेती** ति। कायं गहेत्वा चित्ते आरोपेति। चित्तानुगतिकं करोति सीघगमनं। चित्तगमनं हि सीघं होति। **सुखसञ्ञं च लहुसञ्ञं च ओक्कमती** ति। रूपकायारम्मणेन इद्धिचित्तेन सहजातं सुखसञ्ञं

१. **गङ्गातीरे** ति। तम्बपण्णिदीपे गङ्गानदिया तीरे।

२. **करजकायस्सा** ति। चातुमहाभूतिकरूपकायस्स।

च लहुसञ्ञं च ओक्कमती ति। सेसं वुत्तनयेनेव वेदितब्ब। इद पन चित्तगमनमेव होति।

एवं अदिस्समानेन कायेन गच्छन्तो पनाय किं तस्स अधिट्ठानचित्तस्स उप्पादक्खणे गच्छति, उदाहु ठितिक्खणे, भङ्गक्खणे वा? ति वुत्ते तीसु पि खणेसु गच्छती ति थेरो[1] आह। किं पन सो सयं गच्छति निमित्तं पेसेती ति? यथारुचि करोति। इध पनस्स सयं गमनमेव आगत।

४७ **मनोमयं** ति। अधिट्ठानमनेन निम्मितत्ता मनोमय। **अहीनिन्द्रियं** ति। इद चक्खुसोतादीनं सण्ठानवसेन वुत्तं। निम्मितरूपे पन पसादो नाम नत्थि। **सचे इद्धिमा चङ्कमति निम्मितो पि तत्थ चङ्कमती** ति आदि। सब्ब सावकनिम्मितं सन्धाय वुत्तं। बुद्धनिम्मितो पन यं यं भगवा करोति, त तं पि करोति। भगवतो रुचिवसेन अञ्ञं पि करोती ति।

१ अधिट्ठाना इद्धि

४८ एत्थ च यं सो इद्धिमा इधेव ठितो दिब्बेन चक्खुना रूप पस्सति, दिब्बाय सोतधातुया सद्दं सुणाति, चेतोपरियञाणेन चित्त पजानाति, न एत्तावता कायेन वसं वत्तेति। यं पि सो इधेव ठितो तेन ब्रह्मुना सद्धिं सन्तिट्ठति सल्लपति साकच्छं समापज्जति, एत्तावता पि न कायेन वसं वत्तेति। य पिस्स दूरे पि सन्तिके अधिट्ठाती ति आदिकं अधिट्ठानं, एत्तावता पि न कायेन वस वत्तेति। यं पि सो दिस्समानेन वा अदिस्समानेन वा कायेन ब्रह्मलोक गच्छति, एत्तावता पि न कायेन वसं वत्तेति। य च खो 'सो तस्स ब्रह्मुनो पुरतो रूपं अभिनिम्मिनाती' ति आदिना नयेन वुत्तविधान आपज्जति, एत्तावता कायेन वसं वत्तेति नाम। सेस पनेत्थ कायेन वस वत्तनाय पुब्बभागदस्सनत्थ वुत्त ति। अयं ताव **अधिट्ठाना इद्धि**।

२. विकुब्बना इद्धि

४९. **विकुब्बनाय** पन मनोमयाय च इदं नानाकरणं। विकुब्बनं ताव करोन्तेन "सो पकतिवण्णं विजहित्वा कुमारकवण्णं वा दस्सेति, नागवण्णं वा दस्सेति, सुपण्णवण्णं वा दस्सेति, असुरवण्णं वा दस्सेति, इन्दवण्णं वा दस्सेति, देववण्णं वा दस्सेति, ब्रह्मवण्णं वा दस्सेति, समुद्दवण्णं वा दस्सेति, पब्बतवण्णं वा दस्सेति, सीहवण्ण वा दस्सति, ब्यग्घवण्णं वा दस्सेति, दोपिवण्ण वा दस्सेति, हत्थि पि दस्सेति, अस्स पि दस्सेति, रथ पि दस्सेति, पत्ति पि दस्सेति, विविध पि सेनाब्यूहं दस्सेती" (खु० ५-४७३) ति एव वुत्तेसु कुमारकवण्णादीसु यं य आकङ्खति, तं तं अधिट्ठातब्ब।

---

१. थेरो ति। अट्ठकथाचरियानं अन्तरे एको थेरो।

अधिट्ठहन्तेन च पथवीकसिणादीसु अञ्ञतरारम्मणतो अभिञ्ञापादकज्झानतो वुट्ठाय अत्तनो कुमारकवण्णो आवज्जितब्बो। आवज्जित्वा परिकम्मावसाने पुन समापज्जित्वा वुट्ठाय' एवरूपो नाम कुमारको होमी' ति अधिट्ठातब्बं। सह अधिट्ठानचित्तेन कुमारको होति, देवदत्तो विय। एस नयो सब्बत्थ। 'हत्थि पि दस्सती' ति आदि पनेत्थ बहिद्धा पि हत्थिआदिदस्सनवसेन वुत्त। तत्थ 'हत्थी होमी' ति अनधिट्ठहित्वा 'हत्थी होतू' ति अधिट्ठातब्बं। अस्सादीसु पि एसेव नयो ति। अय **विकुब्बना इद्धि**।

३. मनोमया इद्धि

५२ मनोमय कातुकामो पन पादकज्झानतो वुट्ठाय कायं ताव आवज्जित्वा वुत्तनयेनेव, 'सुसिरो होतू' ति अधिट्ठाति, सुसिरो होति। अथस्स अब्भन्तरे अञ्ञं कायं आवज्जित्वा परिकम्मं कत्वा वुत्तनयेनेव अधिट्ठाति—'तस्स अब्भन्तरे अञ्ञो कायो होतू' ति। सो त मुञ्जम्हा ईसिकं विय, कोसिया असिं विय, करण्डाय अहिं विय च अब्बाहति[1]। तेन वुत्त—"इध भिक्खु इमम्हा काया अञ्ञं काय अभिनिम्मिनाति रूपिं मनोमय सब्बङ्गपच्चङ्गिं अहीनिन्द्रिय। सेय्यथापि पुरिसो मुञ्जम्हा ईसिकं पबाहेय्य, तस्स एवमस्स—अय मुञ्जो अयं ईसिका, अञ्ञो मुञ्जो अञ्ञा ईसिका, मुञ्जम्हा त्वेव ईसिका पवाळ्हा" (खु० ५–३७३) ति आदि। एत्थ च यथा ईसिकादयो मुञ्जादीहि सदिसा होन्ति, एव मनोमयरूपं इद्धिमता सदिसमेव होती ति दस्सनत्थ एता उपमा वुत्ता ति। अयं **मनोमया इद्धि**।

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
इद्धिविधनिद्देसो नाम द्वादसमो परिच्छेदो।



1. अब्बाहती ति। उद्धरति।

अभिञ्ञानिद्देसो

तेरसमो परिच्छेदो

दिब्बसोतधातुकथा

१. इदानी दिब्बसोतधातुया निद्देसक्कमो अनुप्पत्तो। एत्थ ततो परासु च तीसु अभिञ्ञासु "**सो एवं समाहिते चित्ते**" (दी० १–६९) ति आदीनं अत्थो वुत्तनयेनेव वेदितब्बो। सब्बत्थ पन विसेसमत्तमेव वण्णयिस्साम।

तत्र **दिब्बाय सोतधातुया** ति। एत्थ दिब्बसदिसत्ता दिब्बा। देवानं हि सुचरितकम्मनिब्बत्ता पित्तसेम्हरुहिरादीहि अपलिबुद्धा उपक्किलेसविमुत्तताय दूरे पि आरम्मणं सम्पटिच्छनसमत्था दिब्बापसादसोतधातु होति। अयं चापि इमस्स भिक्खुनो विरियभावनाबलनिब्बत्ता ञाणसोतधातु तादिसा येवा ति दिब्बसदिसत्ता दिब्बा। अपि च दिब्बविहारवसेन पटिलद्धत्ता अत्तना च दिब्बविहारसन्निस्सितत्ता पि दिब्बा। सवनट्ठेन निज्जीवट्ठेन च सोतधातु। सोतधातुकिच्चकरणेन च सोतधातु विया ति पि सोतधातु। ताय दिब्बाय सोतधातुया।

२. **विसुद्धाया** ति। परिसुद्धाय, निरुपक्किलेसाय। **अतिक्कन्तमानुसिकाया** ति मनुस्सूपचारं अतिक्कमित्वा सद्दसवनेन मानुसिक मससोतधातु अतिक्कन्ताय, वीतिवत्तित्वा ठिताय।

उभो सद्दे सुणाती ति। द्वे सद्दे सुणाति। कतमे द्वे? दिब्बे च, मानुसे च। देवानं च मनुस्सानं च सद्दे ति वुत्तं होति। एतेन पदेसपरियादान वेदितब्बं। **ये दूरे सन्तिके चा** ति। ये सद्दा दूरे परचक्कवाळे पि, ये च सन्तिके अन्तमसो सदेहसन्निस्सितपाणकसद्दा पि, ते सुणाती ति वुत्तं होति। एतेन निप्पदेसपरियादानं वेदितब्बं।

३ कथ पनायं उप्पादेतब्बा ति? तेन भिक्खुना अभिञ्ञा पादकज्झानं समापज्जित्वा वुट्ठाय परिकम्मसमाधिचित्तेन पठमतर पकतिसोतपथे दूरे ओळारिको अरञ्ञे सीहादीन सद्दो आवज्जितब्बो। विहारे गण्डिसद्दो, भेरिसद्दो, सङ्खसद्दो, सामणेरदहरभिक्खूनं सब्बत्थामेन सज्झायन्तानं सज्झायनसद्दो, पकतिकथ कथेन्तानं "किं भन्ते, किं आवुसो" ति आदिसद्दो, सकुणसद्दो, वातसद्दो, पदसद्दो, पक्कुथितउदकस्स चिच्चिटायनसद्दो, आतपे सुस्समानतालपण्णसद्दो, कुन्थकिपिल्लिकादिसद्दो ति एवं सब्बोळारिकतो पभुति यथाक्कमेन सुखुमसद्दा आवज्जितब्बा।

तेन पुरत्थिमाय दिसाय सद्दानं सद्दनिमित्तं मनसिकातब्ब। पच्छिमाय, उत्तराय, दक्खिणाय, हेट्ठिमाय, उपरिमाय दिसाय, पुरत्थिमाय अनुदिसाय, पच्छिमाय, उत्तराय, दक्खिणाय अंनुदिसाय सद्दान सद्दनिमित्त मनसिकातब्बं। ओळारिकानं पि सुखुमान पि सद्दान सद्दनिमित्त मनसिकातब्ब। तस्स ते सद्दा पाकतिकचित्तस्सा पि पाकटा होन्ति। परिकम्मसमाधिचित्तस्स पन अतिविय पाकटा।

४ तस्सेवं सद्दनिमित्त मनसिकरोतो, इदानि दिब्बसोतधातु उप्पज्जिस्सती ति तेसु सद्देसु अञ्ञतर आरम्मण कत्वा मनोद्वारावज्जन उप्पज्जति। तस्मि निरुद्धे चत्तारि पञ्च वा जवनानि जवन्ति, येस पुरिमानि तीणि चत्तारि वा परिकम्मउपचारानुलोमगोत्रभुनामकानि कामावचरानि, चतुत्थ पञ्चम वा अप्पनाचित्त रूपावचर चतुत्थज्झानिक।

तत्थ य तेन अप्पनाचित्तेन सद्धि उप्पन्नं ञाणं, अय दिब्बसोतधातू ति वेदितब्बा। ततो पर तस्मि सोते पतितो होति। त थामजात करोन्तेन "एत्थन्तरे सद्द सुणामी" ति एकङ्गुलमत्तं परिच्छिन्दित्वा वड्ढेतब्ब। ततो द्वङ्गुल - चतुरङ्गुल - अट्ठङ्गुल-विदत्थि-रतन - अन्तोगब्भ-पमुख-पासाद-परिवेण-सङ्घाराम-गोचरगाम-जनपदादिवसेन याव चक्कवाळं, ततो वा भिय्यो पि परिच्छिन्दित्वा परिच्छिन्दित्वा वड्ढेतब्बं। एव अधिगताभिञ्ञो एस पादकज्झानारम्मणेन फुट्ठोकासब्भन्तरगते पि सद्दे पुन पादकज्झानं असमापज्जित्वा पि अभिञ्ञाञाणेन सुणाति येव। एव सुणन्तो च सचे पि याव ब्रह्मलोका सङ्ख-भेरिपणवादिसद्देहि एककोलाहल होति, पाटियेक्कं ववत्थपेतुकामताय सति 'अयं सङ्खसद्दो', 'अयं भेरिसद्दो' ति ववत्थपेतुं सक्कोति येवा ति॥

दिब्बसोतधातुकथा निट्ठिता॥

चेतोपरियञाणकथा

५ चेतोपरियञाणकथाय—**चेतापरियञाणाया** ति। एत्थ परियाती ति परियं। परिच्छिन्दतो ति अत्थो। चेतसो परियं चेतोपरियं। चत्तोपरिय च तं ञाणं चा ति चतोपरियञाणं। तदत्थाया ति वुत्त होति। **परसत्तानं** ति। अत्तान ठपेत्वा सेससत्तान। **परपुग्गलानं** ति। इदं पि इमिना एकत्थमेव। वेनेय्यवसेन पन देसनाविलासेन च व्यञ्जननानत्तं कतं। **चेतसा चेतो** ति। अत्तनो चित्तेन तेसं चित्तं। **परिच्च पजानाती** ति। परिच्छिन्दित्वा सरागादिवसेन नानप्पकारतो जानाति।

६. कथं पनेतं ञाण उप्पादेतब्बं ति? एतं हि दिब्बचक्खुवसेन इज्झति। तं एतस्स परिकम्मं। तस्मा तेन भिक्खुना आलोक वड्ढेत्वा दिब्बेन चक्खुना

परस्स हृदयरूपं निस्साय वत्तमानस्स लोहितस्स वण्णं पस्सित्वा चित्तं परियेसितब्बं। यदा हि सोमनस्सचित्तं वत्तति, तदा रत्तं निग्रोधपक्कसदिसं होति। यदा दोमनस्सचित्तं वत्तति, तदा काळकं जम्बुपक्कसदिसं। यदा उपेक्खाचित्तं वत्तति, तदा पसन्नतिलतेलसदिसं।

तस्मा तेन 'इदं रूपं सोमनस्सिन्द्रियसमुट्ठानं', 'इदं दोमनस्सिन्द्रियसमुट्ठानं', 'इदं उपेक्खिन्द्रियसमुट्ठानं' ति परस्स हृदयलोहितवण्णं पस्सित्वा चित्तं परियेसन्तेन चेतोपरियञाणं थामगतं कातब्बं।

एवं थामगते हि तस्मिं अनुक्कमेन सब्बं पि कामावचरचित्तं रूपावचरारूपावचरचित्तं च पजानाति, चित्ता चित्तमेव सङ्कमन्तो विना पि हृदयरूपदस्सनेन। वुत्तं पि चेतं **अट्ठकथायं**—"आरुप्पे परस्स चित्तं जानितुकामो कस्स हृदयरूपं पस्सति, कस्सिन्द्रियविकारं ओलोकेती ति? न कस्सचि। इद्धिमतो विसयो एस यदिदं यत्थ कत्थचि चित्तं आवज्जन्तो सोळसप्पभेदं चित्तं जानाति। अकताभिनिवेसस्स पन वसेन अयं कथा" ति।

७ **सरागं वा चित्तं** ति आदीसु पन अट्ठविधं लोभसहगतं चित्तं **सरागं चित्तं** ति वेदितब्बं। अवसेसं चतुभूमकं कुसलाब्याकतं चित्तं **वीतरागं**। द्वे दोमनस्सचित्तानि, द्वे विचिकिच्छुद्धच्चचित्तानी ति इमानि पन चत्तारि चित्तानि इमस्मिं दुके सङ्गहं न गच्छन्ति। केचि पन थेरा तानि पि सङ्गण्हन्ति। दुविधं पन दोमनस्सचित्तं **सदोसं चित्तं** नाम। सब्बं पि चतुभूमकं कुसलाब्याकतं **वीतदोसं**। सेसानि दसाकुसलचित्तानि इमस्मिं दुके सङ्गहं न गच्छन्ति। केचि पन थेरा तानि पि सङ्गण्हन्ति।

८ **समोहं वीतमोहं** ति। एत्थ पन पाटिपुग्गलिकनयेन[1] विचिकिच्छुद्धच्चसहगतद्वयमेव **समोहं**। मोहस्स पन सब्बाकुसलेसु सम्भवतो द्वादसविधं पि अकुसलचित्तं समोहं चित्तं ति वेदितब्बं। अवसेसं **वीतमोहं**।

थीनमिद्धानुगतं पन **सङ्खित्तं**, उद्धच्चानुगतं **विक्खित्तं**। रूपावचरारूपावचरं **महग्गतं**, अवसेसं **अमहग्गतं**। सब्बं पि तेभूमकं **सउत्तरं**, लोकुत्तरं **अनुत्तरं**। उपचारप्पत्तं अप्पनाप्पत्तं च **समाहितं**, उभयमप्पत्तं **असमाहितं**। तदङ्ग-विक्खम्भन-समुच्छेद-पटिप्पस्सद्धि-निस्सरण-विमुत्तिप्पत्तं **विमुत्तं**। पञ्चविधं पि एतं विमुत्तिमप्पत्तं **अविमुत्तं** ति वेदितब्बं। इति चेतोपरियञाणलाभी भिक्खु सब्बप्पकारं पि इदं सरागं वा चित्तं पे०... अविमुत्तं वा चित्तं अविमुत्तं चित्तं ति पजानाती ति॥

चेतोपरियञाणकथा निट्ठिता॥

---

१. पाटिपुग्गलिकनयेना ति। आवेणिकनयेन।

पुब्बेनिवासानुस्सतिञाणकथा

९ पुब्बेनिवासानुस्मतिञाणकथाय-**पुब्बेनिवासानुस्सतिञाणाया** (दी० १-७१) ति। पुब्बेनिवासानुस्सतिम्हि यं ञाण, तदत्थाय। पुब्बेनिवासो ति। पुब्बे अतीतजातीसु निवुत्थक्खन्धा। **निबुत्था** ति। अज्झावुत्था, अनुभूता, अत्तनो सन्ताने उप्पज्जित्वा निरुद्धा। निवुत्थधम्मा वा। **निबुत्था** ति। गोचरनिवासेन निवुत्था, अत्तनो विञ्ञाणेन विञ्ञाता परिच्छिन्ना। परविञ्ञाणविञ्ञाता पि वा छिन्नवटुमकानुस्सरणादीसु, ते बुद्धान येव लब्भन्ति। **पुब्बेनिवासानुस्सती** ति। याय सतिया पुब्बेनिवास अनुस्सरति, सा पुब्बेनिवासानुस्सति। **ञाणं** ति। ताय सतिया सम्पयुत्तञाणं। एवमिमस्स पुब्बेनिवासानुस्सतिञाणस्स अत्थाय पुब्बेनिवासानुस्सतिञाणाय। एतस्स ञाणस्स अधिगमाय, पत्तिया ति वुत्त होति।

१०. **अनेकविहितं** ति। अनेकविधं, अनेकेहि वा पकारेहि पवत्तित। **संवण्णितं** ति अत्थो। **पुब्बेनिवासं** ति। समनन्तरातीतं भवं आदिं कत्वा तत्थ निवुत्थसन्तान। **अनुस्सरती** ति। खन्धपटिपाटिवसेन चुतिपटिसन्धिवसेन वा अनुगन्त्वा अनुगन्त्वा सरति। इमं हि पुब्बेनिवास छ जना अनुस्सरन्ति— तित्थिया, पकतिसावका, महासावका, अग्गसावका, पच्चेकबुद्धा, बुद्धा ति।

११ तत्थ **तित्थिया** चत्तालीसं येव कप्पे अनुस्सरन्ति, न ततो पर। कस्मा? दुब्बलपञ्ञत्ता। तेसं हि नामरूपपरिच्छेदविरहितत्ता दुब्बला पञ्ञा होति। **पकतिसावका** कप्पसतं पि कप्पसहस्स पि अनुस्सरन्ति येव, बलवपञ्ञत्ता। **असीति महासावका** सतसहस्सकप्पे अनुस्सरन्ति। **द्वे अग्गसावका** एकं असङ्ख्येय्यं सतसहस्सं च। **पच्चेकबुद्धा** द्वे असङ्ख्येय्यानि सतसहस्सं च। एत्तको हि एतेस अभिनीहारो। **बुद्धानं** पन परिच्छेदो नाम नत्थि।

१२ तित्थिया च खन्धपटिपाटिमेव सरन्ति, पटिपाटि मुञ्चित्वा चुतिपटिसन्धिवसेन सरितु न सक्कोन्ति। तेसं हि अन्धान विय इच्छितपदेसोक्कमनं नत्थि। यथा पन अन्धा यट्ठिं अमुञ्चित्वा व गच्छन्ति, एवं ते खन्धानं पटिपाटिं अमुञ्चित्वा व सरन्ति। पकतिसावका खन्धपटिपाटिया पि अनुस्सरन्ति, चुतिपटिसन्धिवसेन पि सङ्कमन्ति। तथा असीति महासावका। द्विन्नं पन अग्गसावकान खन्धपटिपाटिकिच्चं नत्थि। एकस्स अत्तभावस्स चुतिं दिस्वा पटिसन्धिं पस्सन्ति, पुन अपरस्स चुतिं दिस्वा पटिसन्धिं ति एवं चुतिपटिसन्धिवसेनेव सङ्कमन्ता गच्छन्ति। तथा पच्चेकबुद्धा।

१३. बुद्धानं पन नेव खन्धपटिपाटिकिच्चं, न चुतिपटिसन्धिवसेन सङ्कमनकिच्च अत्थि। तेसं हि अनेकासु कप्पकोटीसु हेट्ठा वा उपरि वा यं यं ठानं

इच्छति, तं तं पाकटमेव होति। तस्मा अनेका पि कप्पकोटियो पेय्यालपाळिं विय सङ्खिपित्वा यं यं इच्छन्ति, तत्र तत्रेव ओक्कमन्ता सीहोक्कन्तवसेन गच्छन्ति। एवं गच्छन्तानं च नेस ञाणं यथा नाम कतवालवेधपरिचयस्स सरभङ्गसदिसस्स धनुग्गहस्स खित्तो सरो अन्तरा रुक्खलतादीसु असज्जमानो लक्खे येव पतति, न सज्जति न विरज्झति, एवं अन्तरन्तरासु जातीसु न सज्जति न विरज्झति, असज्जमान अविरज्झमानं इच्छितिच्छितट्ठानं येव गण्हाति।

१४ इमेसु च पन पुब्बेनिवासं अनुस्सरणसत्तेसु तित्थियान पुब्बेनिवासदस्सनं खज्जुपनकप्पभासदिसं[1] हुत्वा उपट्ठाति। पकतिसावकान दीपप्पभासदिस, महासावकान उक्कापभासदिस, अग्गसावकान ओसधितारकप्पभासदिस, पच्चेकबुद्धान चन्दप्पभासदिसं, बुद्धान रस्मिसहस्सपतिमण्डितसरदसुरियमण्डल-सदिस हुत्वा उपट्ठाति।

१५ तित्थियानं च पुब्बेनिवासानुस्सरण अन्धान यट्ठिकोटिगमनं[2] विय होति। पकतिसावकानं दण्डकसेतुगमनं[3] विय। महासावकानं जङ्घसेतुगमनं[4] विय। अग्गसावकान सकटसेतुगमन[5] विय। पच्चेकबुद्धान महाजङ्घमग्गगमन[6] विय। बुद्धानं महासकटमग्गगमनं[7] विय।

इमस्मि पन अधिकारे[8] सावकानं पुब्बेनिवासानुस्सरण अधिप्पेतं। तेन वुत्त—"**अनुस्सरती** ति खन्धपटिपाटिवसेन चुतिपटिसन्धिवसेन वा अनुगन्त्वा अनुगन्त्वा सरती" ति। (३४५ पिट्ठे)

१६. तस्मा एव अनुस्सरितुकामेन आदिकम्मिकेन भिक्खुना पच्छाभत्त पिण्डपातपटिक्कन्तेन रहोगतेन पटिसल्लीनेन पटिपाटिया चत्तारि झानानि समापज्जित्वा अभिञ्ञापादकचतुत्थज्झानतो वुट्ठाय सब्बपच्छिमा निसज्जा

---

१. खज्जुपनकप्पभासदिसं ति। खज्जोतोभाससमं।
२. **यट्ठिकोटिगमनं विय**। खन्धपटिपाटिया अमुञ्चनतो।
३. कुन्नदीनं अतिक्कमनाय एकेनेव रुक्खदण्डेन कतसङ्कमो **दण्डकसेतु**।
४. चतूहि, पञ्चहि वा जनेहि गन्तुं सक्कुणेय्यो फलके अत्थरित्वा आणियो कोट्टेत्वा कतसङ्कमो **जङ्घसेतु**। जङ्घसत्थस्स गमनयोग्गो सङ्कमो जङ्घसेतु जङ्घमग्गो विय।
५. सकटस्स गमनयोग्गो सङ्कमो **सकटसेतु** सकटमग्गो विय।
६. महता जङ्घसत्थेन गन्तब्बमग्गो **महाजङ्घमग्गो**।
७. बहूहि वीसाय वा तिंसाय वा सकटेहि एकज्झं गन्तब्बमग्गो **महासकटमग्गो**।
८. **इमस्मि पन अधिकारे** ति। "चित्तं पञ्ञं च भावयं" (सं० १–२४) ति चित्तसीसेन सावकस्स निद्दिट्ठसमाधिभावनाधिकारे।

आवज्जितब्बा। ततो आसनपञ्ञापनं, सेनासनप्पवेसनं, पत्तचीवरपटिसामनं, भोजनकालो, गामतो आगमनकालो, गामे पिण्डाय चरितकालो, गाम पिण्डाय पविट्ठकालो, विहारतो निक्खमनकालो, चेतियङ्गण-बोधियङ्गणवन्दनकालो, पत्तधोवनकालो, पत्तपटिग्गहणकालो, पत्तपटिग्गहणतो याव मुखधोवना कतकिच्चं, पच्चूसकाले कतकिच्च, पच्छिमयामे कतकिच्च, पठमयामे कतकिच्चं ति एव पटिलोमक्कमेन सकल रत्तिन्दिवं कतकिच्च आवज्जितब्ब। एत्तक पन पकतिचित्तस्सापि पाकट होति। परिकम्मसमाधिचित्तस्स पन अतिपाकटमेव।

१७. सचे पनेत्थ किञ्चि न पाकट होति, पुन पादकज्झान समापज्जित्वा वुट्ठाय आवज्जितब्ब। एत्तकेन दीपे जलिते विय पाकट होति। एव पटिलोमक्कमेनेव दुतियदिवसे पि, ततिय-चतुत्थ-पञ्चमदिवसे पि, दसाहे पि, अड्ढमासे पि, मासे पि, याव सवच्छरा पि कतकिच्च आवज्जितब्बं।

एतेनेव उपायेन दस्स वस्सानि, वीसति वस्सानी ति, याव इमस्मि भवे अत्तनो पटिसन्धि, ताव आवज्जन्तेन पुरिमभवे चुतिक्खणे पवत्तितनामरूपं आवज्जितब्ब। पहोति हि पण्डितो भिक्खु पठमवारेनेव पटिसन्धि उग्घाटेत्वा चुतिक्खणे नामरूप आरम्मण कातु।

१८ यस्मा पन पुरिमभवे नामरूप असेस निरुद्ध अञ्ञ उप्पन्न, तस्मा त ठान आहुन्दरिक[1] अन्धतममिव[2] होति दुद्दसं दुप्पञ्ञेन। तेनापि "न सक्कोमह पटिसन्धि उग्घाटेत्वा चुतिक्खणे पवत्तितनामरूप आरम्मण कातु" ति धुरनिक्खेपो न कातब्बो। तदेव पन पादकज्झान पुनप्पुन समापज्जितब्ब। ततो च वुट्ठाय वुट्ठाय त ठान आवज्जितब्ब।

१९ एव करोन्तो हि, सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो कूटागारकण्णिकत्थाय महारुक्ख छिन्दन्तो साखापलासछेदनमत्तेनेव फरसुधाराय विपन्नाय महारुक्ख छिन्दितु असक्कोन्तो पि धुरनिक्खेप अकत्वा व कम्मारसालं गन्त्वा तिखिण फरसु कारापेत्वा पुन आगन्त्वा छिन्देय्य, पुन विपन्नाय च पुन पि तथेव कारेत्वा छिन्दय्य, सो एव छिन्दन्तो छिन्नस्स छिन्नस्स पुन छेतब्बाभावतो अच्छिन्नस्स च छेदनतो न चिरस्सेव महारुक्ख पातेय्य; एवमेवं पादकज्झाना वुट्ठाय पुब्बे आवज्जितं अनावज्जित्वा पटिसन्धिमेव आवज्जन्तो न चिरस्सेव पटिसन्धि उग्घाटेत्वा चुतिक्खणे पवत्तितनामरूप आरम्मणं करेय्या ति।

कट्ठफालक-केसोहारकादीहि पि अयमत्थो दीपेतब्बो।

---

१ आहुन्दरिक ति। अही च उन्दूरा च अञ्ञमञ्ञं पस्सितुं न सक्कोन्ति, तादिसं।

२. अन्धतम ति। गाळ्हान्धकारतिमिसा।

२० तत्थ पच्छिमनिसज्जतो पभुति याव पटिसन्धितो आरम्मणं कत्वा पवत्तं ञाण पुब्बेनिवासञाण नाम न होति। त पन परिकम्मसमाधिञाणं नाम होति। अतीतंसञाणं ति पि एके वदन्ति। त रूपावचर सन्धाय न युज्जति। यदा पनस्स भिक्खुनो पटिसन्धि अतिक्कम्म चुतिक्खणे पवत्तितनामरूपं आरम्मण कत्वा मनोद्वारावज्जन उपज्जति, तस्मि च निरुद्धे तदेवारम्मणं कत्वा चत्तारि पञ्च वा जवनानि जवन्ति। येसं पुब्बे वुत्तनयेनेव पुरिमानि परिकम्मादि-नामकानि कामावचरानि होन्ति, पच्छिमं रूपावचरं चतुत्थज्झानिकं अप्पना-चित्तं, तदास्स यं तेन चित्तेन सह ञाण उप्पज्जति, इद **पुब्बेनिवासानुस्सति-ञाणं** नाम। तेन ञाणेन सम्पयुत्ताय सतिया "अनेकविहित पुब्बेनिवास अनुस्सरति। सेय्यथीदं—एक पि जातिं, द्वे पि जातियो पे० इति साकार सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवास अनुस्सरती" (दी० १–७१) ति।

२१. तत्थ **एकं पि जातिं** ति। एक पि पटिसन्धिमूल चुतिपरियोसान एकभवपरियापन्नं खन्धसन्तानं। एस नयो **द्वे पि जातियो** ति आदीसु पि। **अनेके पि संवट्टकप्पे** ति आदीसु पन परिहायमानो कप्पो संवट्टकप्पो, वड्ढमानो विवट्टकप्पो ति वेदितब्बो।

तत्थ संवट्टेन संवट्टट्ठायी गहितो होति, तम्मूलकत्ता। विवट्टेन च विवट्ट-ट्ठायी। एवं हि सति यानि तानि "चत्तारीमानि, भिक्खवे, कप्पस्स असङ्-ख्येय्यानि। कतमानि चत्तारि? संवट्टो, संवट्टट्ठायी, विवट्टो, विवट्टट्ठायी" (अ० २–१५०) ति वुत्तानि, तानि परिग्गहितानि होन्ति।

तत्थ तयो सवट्टा—आपोसवट्टो, तेजोसंवट्टो, वायोसवट्टो ति। तिस्सो सवट्टसीमा[1]—आभस्सरा, सुभकिण्हा, वेहप्फला ति।

यदा कप्पो तेजेन संवट्टति, आभस्सरतो हेट्ठा अग्गिना डय्हति। यदा आपेन सवट्टति, सुभकिण्हतो हेट्ठा उदकेन विलीयति। यदा वायुना संवट्टति, वेहप्फलतो हेट्ठा वातेन विद्धसति। वित्थारतो पन सदा पि एकं बुद्धक्खेत्तं विनस्सति।

२२ **बुद्धखेत्तं** नाम तिविधं होति—जातिखेत्त, आणाखेत्त, विसयखेत्तं च। तत्थ (१) जातिखेत्तं दससहस्सचक्रवाळपरियन्त होति। य तथागतस्स पटिसन्धि-ग्गहणादीसु कम्पति। (२) आणाखेत्तं कोटिसतसहस्सचक्कवाळपरियन्तं, यत्थ रतनसुत्तं (खु० १–६), खन्धपरित्तं (अं० २–७६), धजग्गपरित्तं (सं० १–२२०), आटानाटियपरित्तं (दी० ३–१५०), मोरपरित्तं (खु० ३ . १–३६) ति इमेसं परित्तानं आनुभावो वत्तति। (३) विसयखेत्तं अनन्तमपरिमाण। यं "यावता

१. **संवट्टसीमा** ति। संवट्टमरियादा।

वा पन आकङ्खेय्या" (अ० १–२२१) ति वुत्तं । यत्थ यं य तथागतो आकङ्खति, त तं जानाति । एवमेतेसु तीसु बुद्धखेत्तेसु एकं आणाखेत्तं विनस्सति । तस्मिं पन विनस्सन्ते जातिखेत्तं पि विनट्ठमेव होति । विनस्सन्तं च एकतो व विनस्सति, सण्ठहन्त पि एकतो व सण्ठहति ।

तस्सेव विनासो च सण्ठहनं च वेदितब्बं—

२३ यस्मिं हि समये कप्पो अग्गिना नस्सति, आदितो व कप्पविनासकमहामेघो वुट्ठहित्वा कोटिसतसहस्सचक्कवाळे एक महावस्स वस्सति । मनुस्सा तुट्ठहट्ठा सब्बबीजानि नीहरित्वा वपन्ति । सस्सेसु पन गोखायितकमत्तेसु जातेसु गद्रभरव रवन्तो एकबिन्दुं पि न वस्सति । तदा पच्छिन्न पच्छिन्नमेव वस्स होति । इद सन्धाय हि भगवता—"होति खो सो, भिक्खवे, समयो य बहूनि वस्सानि बहूनि वस्ससतानि बहूनि वस्ससहस्सानि बहूनि वस्ससतसहस्सानि देवो न वस्सती" (अ० ३–२३०) ति वुत्त । वस्सूपजीविनो सत्ता कालं कत्वा ब्रह्मलोके निब्बत्तन्ति, पुप्फफलूपजीविनियो च देवता । एवं दीघे अद्धाने वीतिवत्ते तत्थ तत्थ उदक परिक्खयं गच्छति । अथानुपुब्बेन मच्छकच्छपा पि काल कत्वा ब्रह्मलोके निब्बत्तन्ति, नेरयिकसत्ता पि । तत्थ नेरयिका सत्तमसुरियपातुभावे विनस्सन्ती ति एके ।

२४ झानं विना नत्थि ब्रह्मलोके निब्बत्ति, एतेसं च केचि दुब्भिक्खपीळिता, केचि अभब्बा झानाधिगमाय, ते कथ तत्थ निब्बत्तन्ती ति ? देवलोके पाटिलद्धज्झानवसेन । तदा हि "वस्तसतसहस्सस्सच्चयेन कप्पुट्ठानं भविस्सती" ति लोकब्यूहा[1] नाम कामावचरदेवा मुत्तसिरा विकिण्णकेसा रुदम्मुखा अस्सूनि हत्थेहि पुञ्छमाना रत्तवत्थनिवत्था अतिविय विरूपवेसधारिनो हुत्वा मनुस्सपथे विचरन्ता एवं आरोचेन्ति—"मारिसा,[2] इतो वस्ससतसहस्सस्स अच्चयेन कप्पवुट्ठान भविस्सति, अय लोको विनस्सिस्सति, महासमुद्दो पि उस्सुस्सिस्सति, अय च महापथवी सिनेरु च पब्बतराजा उड्य्हिस्सन्ति विनस्सिस्सन्ति । याव ब्रह्मलोका लोकविनासो भविस्सति । मेत्तं, मारिसा, भावेथ, करुण · · मुदितं ·· उपेक्ख, मारिसा, भावेथ, मातरं उपट्ठहथ, पितरं उपट्ठहथ, कुले जेट्ठापचायिनो होथा" ति ।

२५ तेस वचनं सुत्वा येभुय्येन मनुस्सा च भुम्मदेवता च संवेगजाता अञ्ञमञ्ञं मुदुचित्ता हुत्वा मेत्तादीनि पुञ्ञानि करित्वा देवलोके निब्बत्तन्ति । तत्थ दिब्बसुधाभोजन भुञ्जित्वा वायोकसिणे परिकम्मं कत्वा झान पटिलभन्ति । तदञ्ञे पन अपरापरियवेदनीयेन कम्मेन देवलोके निब्बत्तन्ति । अपरापरिय-

१. लोकं ब्यूहेन्ति सम्पिण्डेन्ती ति लोकब्यूहा । २. मारिसा ति । देवानं पियसमुदाचारो ।

वेदनीयकम्मरहितो हि संसारे संसरमनो सत्तो नाम नत्थि। ते पि तत्थ तथेव झानं पटिलभन्ति। एवं देवलोके पटिलद्धज्झानवसेन सब्बे ब्रह्मलोके निब्बत्तन्ती ति।

२६ वस्सूपच्छेदतो पन उद्धं दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन दुतियो सुरियो पातुभवति। वुत्तं पि चेतं भगवता—"होति खो सो, भिक्खवे, समयो" ति (अ० ३–२३०) **सत्तसुरियं**[1] वित्थारेतब्बं। पातुभूते च पन तस्मि नेव रत्तिपरिच्छेदो, न दिवापरिच्छेदो पञ्ञायति। एको सुरियो उट्ठति, एको अत्थं गच्छति, अविच्छिन्नसुरियसन्तापो व लोको होति। यथा च पकतिसुरिये सुरियदेवपुत्तो होति, एवं कप्पविनासकसुरिये नत्थि। तत्थ पकतिसुरिये वत्तमाने आकासे वलाहका पि धूमसिखा पि चरन्ति। कप्पविनासकसुरिये वत्तमाने विगतधूमवलाहकं आदासमण्डलं विय निम्मलं नभं होति, ठपेत्वा पञ्च महानदियो[2] सेसकुन्नदीआदीसु उदकं सुस्सति।

ततो पि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन ततियो सुरियो पातुभवति, यस्स पातुभावा महानदियो पि सुस्सन्ति।

ततो पि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन चतुत्थो सुरियो पातुभवति, यस्स पातुभावा हिमवति महानदीनं पभवा—सीहपपातो, हंसपातनो, कण्णमुण्डको, अनोत्तदहो, छद्दन्तदहो, कुणालदहो ति इमे **सत्त महासरा** सुस्सन्ति।

ततो पि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन पञ्चमो सुरियो पातुभवति, यस्स पातुभावा अनुपुब्बेन महासमुद्दे अङ्गुलिपब्बतेमनमत्तं पि उदकं न सण्ठाति।

ततो पि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन छट्ठो सुरियो पातुभवति, यस्स पातुभावा सकलचक्कवाळं एकधूमं होति, परियादिण्णसिनेहं[3] धूमेन। यथा चिदं, एवं कोटिसतसहस्सचक्कवाळानि पि।

२७ ततो पि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन सत्तमो सुरियो पातुभवति, यस्स पातुभावा सकलचक्कवाळं एकजालं होति सद्धिं कोटिसतसहस्सचक्कवाळेहि। योजनसतिकादिभेदानि सिनेरुकूटानि पि पलुज्जित्वा आकासे येव अन्तरधायन्ति। सा अग्गिजाला उट्ठहित्वा चातुमहाराजिके गण्हाति। तत्थ कनकविमान-रतनविमान-मणिविमानानि झापेत्वा तावतिंसभवनं गण्हाति। एतेनेव उपायेन याव पठमज्झानभूमिं गण्हाति। तत्थ तयो पि ब्रह्मलोके झापेत्वा

---

१ **सत्तसुरियं** ति। सत्तसुरियपातुभावसुत्तं।

२. गङ्गा, यमुना, सरभू, अचिरवती, मही ति इमा **पञ्च महानदियो**।

३. **परियादिण्णसिनेहं** ति। परिक्खीणसिनेहं।

आभस्सरे आहच्च तिट्ठति। सा याव अणुमत्त पि सङ्खारगतं अत्थि, ताव न निब्बायति। सब्बसङ्खारपरिक्खया पन सप्पितेलझापनग्गिसिखा विय छारिक पि अनवसेसेत्वा निब्बायति। हेट्ठाआकासेन सह उपरि आकासो एको होति महन्धकारो।

२८ अथ दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन महामेघो उट्ठहित्वा पठम सुखुमं सुखुम वस्सति। अनुपुब्बेन कुमुदनाळ-यट्ठि-मुसल-तालक्खन्धादिप्पमाणाहि धाराहि वस्सन्तो कोटिसतसहस्सचक्कवाळेसु सब्ब दड्ढट्ठान पूरेत्वा अन्तरधायति। तं उदक हेट्ठा च तिरियं च वातो समट्ठहित्वा घनं करोति परिवटुमं[1] पदुनिमिपत्ते उदकबिन्दुसदिस। कथ ताव महन्तं उदकरासिं घनं करोति ति चे? विवरसम्पदानतो। तं हिस्स तम्हि तम्हि विवरं देति।

त एवं वातेन सम्पिण्डियमानं घनं करियमानं परिक्खयमानं अनुपुब्बेन हेट्ठा ओतरति। ओतिण्णे ओतिण्णे उदके ब्रह्मलोकट्ठाने ब्रह्मलोका, उपरि-चतुकामावचरदेवलोकट्ठाने च देवलोका पातुभवन्ति।

२९ पुरिमपथविट्ठान ओतिण्णे पन बलववाता उपज्जन्ति। ते त पिहित-द्वारे धम्मकरणे ठितउदकमिव निरुस्सास कत्वा रुम्भन्ति। मधुरोदकं परिक्खयं गच्छमानं उपरि रसपथवि समुट्ठापेति। सा वण्णसम्पन्ना चेव होति गन्धरस-सम्पन्ना च निरुदकपायासस्स उपरि पटल विय।

३०. तदा च आभस्सरब्रह्मलोके पठमतराभिनिब्बत्ता सत्ता आयुक्खया वा पुञ्ञक्खया वा ततो चवित्वा इधूपपज्जन्ति। ते होन्ति सयम्पभा अन्तलिक्खचरा। ते **अग्गञ्ञसुत्ते** (दी० ३–६६) वुत्तनयेन तं रसपथविं सायित्वा तण्हाभिभूता आलुप्पकारक[2] परिभुञ्जितुं उपक्कमन्ति। अथ नेस सयम्पभा अन्तरधायति, अन्धकारो होति। ते अन्धकार दिस्वा भायन्ति।

३१ ततो नेसं भयं नासेत्वा सूरभावं जनयन्तं परिपुण्णपण्णासयोजनं सुरियमण्डल पातुभवति। ते त दिस्वा "आलोकं पटिलभिम्हा" ति हट्ठतुट्ठा हुत्वा "अम्हाक भीतानं भयं नासेत्वा सूरभाव जनयन्तो उट्ठितो, तस्मा सुरियो होतू" ति सुरियो त्वेवस्स नामं करोन्ति। अथ सुरिये दिवस आलोकं कत्वा अत्थङ्गते, "यं पि आलोकं लभिम्हा, सो पि नो नट्ठो" ति पुन भीता होन्ति। तेसं एवं होति "साधु वतस्स सचे अञ्ञ आलोकं लभेय्यामा" ति।

तेसं चित्तं ञत्वा विय एकूनपण्णासयोजनं चन्दमण्डलं पातुभवति। ते तं

---

१. **परिवटुमं** ति। वट्टभावेन परिच्छिन्नं।

२ **आलुप्पकारकं** ति। आलोपं कत्वा कत्वा ति वदन्ति। आलुप्पनं = विलोपं कत्वा ति अत्थो।

दिस्वा भिय्योसो मत्ताय हट्ठतुट्ठा हुत्वा "अम्हाकं छन्दं ञत्वा विय उट्ठितो, तस्मा चन्दो होतू" ति चन्दो त्वेवस्स नामं करोन्ति।

एवं चन्दिमसुरियेसु पातुभूतेसु नक्खत्तानि तारकरूपानि पातुभवन्ति। ततो पभुति रत्तिन्दिवा पञ्ञायन्ति, अनुक्कमेन मासद्धमासउतुसंवच्छरा।

चन्दिमसुरियान पन पातुभूतदिवसे येव सिनेरु-चक्कवाळ-हिमवन्तपब्बता पातुभवन्ति। ते च खो अपुब्बं अचरिमं फग्गुणपुण्णमदिवसे येव पातुभवन्ति। कथं? यथा नाम कङ्गुभत्ते पच्चमाने एकप्पहारेनेव पुप्पुळकानि उट्ठहन्ति। एके पदेसा थूपथूपा होन्ति, निन्ननिन्नट्ठाने समुद्दा, समसमट्ठाने दीपा ति।

३२. अथ तेसं सत्तान रसपथविं परिभुञ्जन्तानं कमेन एकच्चे वण्णवन्तो, एकच्चे दुब्बण्णा होन्ति। तत्थ वण्णवन्तो दुब्बण्णे अतिमञ्ञन्ति। तेसं अतिमानपच्चया सा पि रसपथवी अन्तरधायति, भूमिपप्पटको पातुभवति। अथ नेसं तेनेव नयेन सो पि अन्तरधायति, पदालता[1] पातुभवति। तेनेव नयेन सा पि अन्तरधायति। अकट्ठपाको सालि पातुभवति, अकणो अथुसो सुद्धो सुगन्धो तण्डुलप्फलो।

३३ ततो नेसं भाजनानि उप्पज्जन्ति। ते सालिं भाजने ठपेत्वा पासाणपिट्ठिया ठपेन्ति। सयमेव जालसिखा उट्ठहित्वा तं पचति। सो होति ओदनो सुमनजातिपुप्फसदिसो, न तस्स सूपेन वा ब्यञ्जनेन वा करणीय अत्थि। यं यं रसं भुञ्जितुकामा होन्ति, त तं रसो व होति।

तेसं त ओळारिकं आहारं आहरयतं ततो पभुति मुत्तकरीसं सञ्जायति। अथ नेसं तस्स निक्खमनत्थाय वणमुखानि पभिज्जन्ति, पुरिसस्स पुरिसभावो इत्थिया पि इत्थिभावो पातुभवति।

३४ तत्र सुद इत्थी पुरिसं, पुरिसो च इत्थिं अतिवेलं उपनिज्झायति। तेसं अतिवेल उपनिज्झायनपच्चया कामपरिळाहो उप्पज्जति। ततो मेथुनधम्मं पटिसेवन्ति।

ते असद्धम्मपटिसेवनपच्चया विञ्ञूहि गरहियमाना विहेठियमाना तस्स असद्धम्मस्स पटिच्छादनहेतु अगारानि करोन्ति। ते अगार अज्झावसमाना अनुक्कमेन अञ्ञतरस्स अलसजातिकस्स सत्तस्स दिट्ठानुगतिं आपज्जन्ता सन्निधिं करोन्ति। ततो पभुति कणो पि थुसो पि तण्डुल परियोनन्धति, लायितट्ठानं पि न पटिविरूहति।

३५. ते सन्निपतित्वा अनुत्थुनन्ति[2]—"पापका वत, भो, धम्मा सत्तेसु

---

१. **पदालता** ति। एवंनामिका लताजाति। बदालता ति पि पाठो।

२. **अनुत्थुनन्ती** ति। अनुसोचन्ति।

पातुभूता, मयं हि पुब्बे मनोमया अहुम्हा" (दी० ३-७१) ति **आगञ्ञसुत्ते** वुत्तनयेन वित्थारेतब्बं।

ततो मरियाद ठपेन्ति। अथ अञ्ञतरो सत्तो अञ्ञस्स भाग आदिन्नं आदियति। तं द्विक्खत्तुं परिभासेत्वा ततियवारे पाणिलेड्डुदण्डेहि पहरन्ति। ते एव अदिन्नादानगरहमुसावाददण्डादानेसु उप्पन्नेसु सन्निपतित्वा चिन्तयन्ति— "यं नून मयं एकं सत्तं सम्मन्नेय्याम, यो नो सम्मा खीयितब्बं खीयेय्य, गरहितब्ब गरहेय्य, पब्बाजेतब्बं पब्बाजेय्य, मयं पनस्स सालीनं भाग अनुप्पदस्सामा" (दी० ३-८२) ति।

एवं कतमन्निट्ठानेसु पन सत्तेसु इमस्मि ताव कप्पे अयमेव भगवा बोधिसत्तभूतो तेन समयेन तेसु सत्तेसु अभिरूपतरो च दस्सनीयतरो च महेसक्खतरो च बुद्धिसम्पन्नो पटिबलो निग्गहपग्गह कातु। ते तं उपसङ्कमित्वा याचित्वा सम्मन्निसु। सो तेन महाजनेन सम्मतो ति **महासम्मतो**, खेत्तान अधिपती ति **खत्तियो**, धम्मेन समेन परे रञ्जेती ति **राजा** ति तीहि नामेहि पञ्ञायित्थ। य हि लोके अच्छरियट्ठानं, बोधिसत्तो व तत्थ आदिपुरिसो ति। एव बोधिसत्त आदिं कत्वा खत्तियमण्डले सण्ठिते अनुपुब्बेन ब्राह्मणादयो पि वण्णा सण्ठहिंसु।

३६. तत्थ कप्पविनासकमहामेघतो याव जालुपच्छेदो, इदमेकमसङ्ख्येय्यं **संवट्टो** ति वुच्चति। कप्पविनासकजालुपच्छेदतो याव कोटिसतसहस्सचक्कवाळपरिपूरको सम्पत्तिमहामेघो, इदं दुतियमसङ्ख्येय्यं **संवट्टट्ठायी** ति वुच्चति। सम्पत्तिमहामेघतो याव चन्दिमसुरियपातुभावो, इदं ततियमसङ्ख्येय्य **विवट्टो** ति वुच्चति। चन्दिमसुरियपातुभावतो याव पुन कप्पविनासकमहामेघो, इदं चतुत्थमसङ्ख्येय्यं **विवट्टट्ठायी** ति वुच्चति। इमानि चत्तारि असङ्ख्येय्यानि एको महाकप्पो होति। एव ताव अग्गिना विनासो च सण्ठहनं च वेदितब्बं। (१)

३७. यस्मि पन समये कप्पो उदकेन नस्सति, आदितो व कप्पविनासकमहामेघो उट्ठहित्वा ति पुब्बे वुत्तनयेनेव वित्थारेतब्बं।

अय पन विसेसो—यथा तत्थ दुतियसुरियो, एवमिध कप्पविनासको खारुदकमहामेघो वुट्ठाति। सो आदितो सुखुमं सुखुमं वस्सन्तो अनुक्कमेन महाधाराहि कोटिसतसहस्सचक्कवाळानं पूरेन्तो वस्सति। खारुदकेन फुट्ठफुट्ठा पथवीपब्बतादयो विलीयन्ति, उदक समन्ततो वातेहि धारियति। पथवितो याव दुतियज्झानभूमिं उदक गण्हाति। तत्थ तयो पि ब्रह्मलोके विलीयापेत्वा सुभकिण्हे आहच्च तिट्ठति। त याव अणुमत्तं पि सङ्खारगत अत्थि, ताव न वूपसम्मति। उदकानुगतं पन सब्बसङ्खारगतं अभिभवित्वा सहसा वूपसम्मति, अन्तरधानं गच्छति। हेट्ठाआकासेन सह उपरिआकासो एको होति महन्धकारो

ति सब्बं वुत्तसदिसं। केवलं पनिध आभस्सरब्रह्मलोक आदिं कत्वा लोको पातुभवति। सुभकिण्हतो च चवित्वा आभस्सरट्ठानादीसु सत्ता निब्बत्तन्ति।

३८. तत्थ कप्पविनासकमहामेघतो याव कप्पविनासकुदकूपच्छेदो, इदमेक असङ्ख्येय्य। उदकूपच्छेदतो याव सम्पत्तिमहामेघो, इदं दुतियं असङ्ख्येय्यं। सम्पत्तिमहामेघतो पे० इमानि चत्तारि असङ्ख्येय्यानि एको महाकप्पो होति। एव उदकेन विनासो च सण्ठहनं च वेदितब्बं। (२)

३९. यस्मि समये कप्पो वातेन विनस्सति, आदितो व कप्पविनासकमहामेघो उट्ठहित्वा ति पुब्बे वुत्तनयेनेव वित्थारेतब्बं।

अय पन विसेसो—यथा तत्थ दुतियसुरियो, एवमिध कप्पविनासनत्थ वातो समुट्ठाति। सो पठम थूलरज उट्ठापेति। ततो सण्हरजं, सुखुमवालिकं, थूलवालिक, सक्खरपासाणादयो ति याव कूटागारमत्ते पासाणे विसमट्ठाने ठितमहारुक्खे च उट्ठापेति। ते पथवितो नभमुग्गता न च पुन पतन्ति, तत्थेव चुण्णविचुण्णा हुत्वा अभावं गच्छन्ति।

४०. अथानुक्कमेन हेट्ठा महापथविया वातो समुट्ठहित्वा पथविं परिवत्तेत्वा उद्ध मूल कत्वा आकासे खिपति। योजनसतप्पमाणा पि पथविप्पदेसा द्वियोजन-तियोजन-चतुयोजन-पञ्चयोजनसतप्पमाणा पि भिज्जित्वा वातवेगेन खित्ता आकासे येव चुण्णविचुण्णा हुत्वा अभाव गच्छन्ति। चक्कवाळपब्बत पि सिनेरुपब्बत पि वातो उक्खिपित्वा आकासे खिपति। ते अञ्ञमञ्ञं अभिहन्त्वा[1] चुण्णविचुण्णा हुत्वा विनस्सन्ति। एतेनेव उपायेन भुम्मट्ठकविमानानि च आकासट्ठकविमानानि च विनासेन्तो छ कामावचरदेवलोके विनासेत्वा कोटिसतसहस्सचक्कवाळानि विनासेति। तत्थ चक्कवाळा चक्कवाळेहि हिमवन्ता हिमवन्तेहि सिनेरू सिनेरूहि अञ्ञमञ्ञ समागन्त्वा[2] चुण्णविचुण्णा हुत्वा विनस्सन्ति।

पथवितो याव ततियज्झानभूमिं वातो गण्हाति। तत्थ तयो ब्रह्मलोके विनासेत्वा वेहप्फलं आहच्च तिट्ठति। एवं सब्बसङ्खारगतं विनासेत्वा सयं पि विनस्सति। हेट्ठाआकासेन सह उपरिआकासो एको होति महन्धकारो ति सब्बं वुत्तसदिसं। इध पन सुभकिण्हब्रह्मलोकं आदिं कत्वा लोको पातुभवति। वेहप्फलतो च चवित्वा सुभकिण्हट्ठानादीसु सत्ता निब्बत्तन्ति।

तत्थ कप्पविनासकमहामेघतो याव कप्पविनासकवातूपच्छेदो, इदमेक असङ्ख्येय्यं। वातूपच्छेदतो याव सम्पत्तिमहामेघो, इदं दुतियं असङ्ख्येय्य पे०... इमानि चत्तारि असङ्ख्येय्यानि एको महाकप्पो होति। एव वातेन विनासो च सण्ठहनं च वेदितब्बं। (३)

---

१. अभिहन्त्वा ति। घट्टेत्वा। २ समागन्त्वा ति। घट्टेत्वा।

४१ किं कारणा एवं लोको विनस्सति ? अकुसलमूलकारणा। अकुसलमूलेसु हि उस्सन्नेसु एव लोको विनस्सति। सो च खो रागे उस्सन्नतरे अग्गिना विनस्सति। दोसे उस्सन्नतरे उदकेन विनस्सति। केचि पन दोसे उस्सन्नतरे अग्गिना, रागे उस्सन्नतरे उदकेना ति वदन्ति। मोहे उस्सन्नतरे वातेन विनस्सति।

एवं विनस्सन्तो पि च निरन्तरमेव सत्तवारे अग्गिना विनस्सति, अट्ठमे वारे उदकेन, पुन सत्त वारे अग्गिना, अट्ठमे वारे उदकेना ति एवं अट्ठमे अट्ठमे वारे विनस्सन्तो सत्तक्खत्तुं उदकेन विनस्सित्वा पुन सत्तवारे अग्गिना नस्सति। एतावता तेसट्ठि कप्पा अतीता होन्ति। एत्थन्तरे उदकेन नस्सनवारं सम्पत्त पि पटिबाहित्वा लद्धोकासो वातो परिपुण्णचतुसट्ठिकप्पायुके सुभकिण्हे विद्धंसेन्तो लोकं विनासेति।

४२ पुब्बेनिवासं अनुस्सरन्तो पि च कप्पानुस्सरणो भिक्खु एतेसु कप्पेसु अनेके पि संवट्टकप्पे, अनेके पि विवट्टकप्पे, अनेके पि संवट्टविवट्टकप्पे अनुस्सरति।

कथं ? "अमुत्रासिं" (दी० १–७२) ति आदिना नयेन।

तत्थ **अमुत्रासिं** ति। अमुम्हि संवट्टकप्पे अहं अमुम्हि भवे वा योनिया वा गतिया वा विञ्ञाणट्ठितिया वा सत्तावासे वा सत्तनिकाये वा आसिं।

एवंनामो ति। तिस्सो वा, फुस्सो वा। **एवंगोत्तो** ति कच्चानो वा कस्सपो, वा। इदमस्स अतीतभवे अत्तनो नामगोत्तानुस्सरणवसेन वुत्तं। सचे पन तस्मिं काले अत्तनो वण्णसम्पत्तिं वा लूखपणीतजीविकभावं वा सुखदुक्खबहुलतं वा अप्पायुकदीघायुकभावं वा अनुस्सरितुकामो होति, तं पि अनुस्सरति येव। तेनाह—"एवंवण्णो पे० एवमायुपरियन्तो" ति।

४३ तत्थ **एवंवण्णो** ति। ओदातो वा, सामो वा। **एवमाहारो** ति। सालिमंसोदनाहारो वा, पवत्तफलभोजनो वा। **एवं सुखदुक्खपटिसंवेदी** ति। अनेकप्पकारेन कायिकचेतसिकानं सामिसनिरामिसादिप्पभेदानं वा सुखदुक्खानं पटिसंवेदी। **एवमायुपरियन्तो** ति। एवं वस्ससतपरिमाणायुपरियन्तो वा चतुरासीतिकप्पसहस्सायुपरियन्तो वा।

सो ततो चुतो अमुत्र उदपादिं ति। सो अहं ततो भवतो योनितो गतितो विञ्ञाणट्ठितितो सत्तावासतो सत्तनिकायतो वा चुतो पुन अमुकस्मिं नाम भवे योनिया गतिया विञ्ञाणट्ठितिया सत्तावासे सत्तनिकाये वा उदपादिं। **तत्रापासिं** ति। अथ तत्रापि भवे योनिया गतिया विञ्ञाणट्ठितिया सत्तावासे सत्तनिकाये वा पुन अहोसिं। **एवंनामो** ति आदि। वुत्तनयमेव।

४४. अपि च—यस्मा, 'अमुत्रासिं' ति इदं अनुपुब्बेन आरोहन्तस्स यावदिच्छकं अनुस्सरणं, 'सो ततो चुतो' ति पटिनिब्बत्तन्तस्स पच्चवेक्खणं, तस्मा

'इधूपपन्नो' ति इमिस्सा इधूपपत्तिया अनन्तरमेवस्स उपपत्तिट्ठानं सन्धाय, **अमुत्र उदपादिं** ति इदं वुत्तं ति वेदितब्बं। 'तत्रापासिं' ति एवमादि पनस्स तत्र इमिस्सा उपपत्तिया अनन्तरे उपपत्तिट्ठाने नामगोत्तादीनं अनुस्सरणदस्सनत्थं वुत्तं। **सो ततो चुतो इधूपपन्नो** ति। स्वाहं ततो अनन्तरूपपत्तिट्ठानतो चुतो इध असुकस्मिं नाम खत्तियकुले वा ब्राह्मणकुले वा निब्बत्तो ति।

इती ति। एवं। **साकारं सउद्देसं** ति। नामगोत्तवसेन सउद्देसं। वण्णादिवसेन साकारं। नामगोत्तेन हि सत्तो—'तिस्सो', 'कस्सपो' ति उद्दिसियति। वण्णादीहि—सामो, ओदातो ति नानत्ततो पञ्ञायति। तस्मा नामगोत्तं उद्देसो, इतरे आकारा। **अनेकविहितं पुब्बेनिवासमनुस्सरती** ति। इदं उत्तानत्थमेवा ति॥

पुब्बेनिवासानुस्सतिञाणकथा॥

चुतूपपातञाणकथा

४५. सत्तानं चुतूपपातञाणकथाय—**चुतूपपातञाणाय** (दी० १–७०) ति। चुतिया च उपपाते च ञाणाय। येन ञाणेन सत्तानं चुति च उपपातो च ञायति, तदत्थं। दिब्बचक्खुञाणत्थ ति वुत्तं होति। **चित्तं अभिनीहरति अभिनिन्नामेती** ति। परिकम्मचित्तं अभिनीहरति चेव अभिनिन्नामेति च। **सो** ति। सो कतचित्ताभिनीहारो भिक्खु।

दिब्बेना ति आदीसु पन—दिब्बसदिसत्ता दिब्बं। देवतानं हि सुचरितकम्मनिब्बत्तं पित्तसेम्हरुहिरादीहि अपलिबुद्धं उपक्किलेसविमुत्तताय दूरे पि आरम्मणपटिच्छनसमत्थं दिब्बं पसादचक्खु होति। इदं चापि विरियभावनाबलनिब्बत्तं ञाणचक्खु तादिसमेवा ति दिब्बसदिसत्ता दिब्बं। दिब्बविहारवसेन पटिलद्धत्ता अत्तना च दिब्बविहारसन्निस्सितत्ता पि दिब्बं। आलोकपरिग्गहेन महाजुतिकत्ता पि दिब्बं। तिरोकुड्डादिरूपदस्सनेन महागतिकत्ता पि दिब्बं। तं सब्बं सद्दसत्थानुसारेन दिब्बं।

४६. दस्सनट्ठेन चक्खु, चक्खुकिच्चकरणेन च चक्खुमिवा ति पि चक्खु। चुतूपपातदस्सनेन दिट्ठिविसुद्धिहेतुत्ता विसुद्धं।

यो हि चुतिमत्तमेव पस्सति, न उपपातं सो उच्छेददिट्ठिं गण्हाति। यो उपपातमत्तमेव पस्सति न चुतिं, सो नवसत्तपातुभावदिट्ठिं गण्हाति। यो पन तदुभयं पस्सति, सो यस्मा दुविधं पि तं दिट्ठिगतं अतिवत्तति, तस्मास्स तं दस्सनं दिट्ठिविसुद्धिहेतु होति। उभयं पि चेतं बुद्धपुत्ता पस्सन्ति। तेन वुत्तं—चुतूपपातदस्सनेन दिट्ठिविसुद्धिहेतुत्ता विसुद्धं ति।

४७. मनुस्सूपचारं अतिक्कमित्वा रूपदस्सनेन अतिक्कन्तमानुसकं। मानुसकं वा मंसचक्खुं अतिक्कन्तत्ता अतिक्कन्तमानुसकं ति वेदितब्बं। तेन **दिब्बेन**

चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन । सत्ते पस्सती ति मनुस्सा मसचक्खुना विय सत्ते ओलोकेति ।

४८ **चवमाने उप्पज्जमाने** ति । एत्थ, चुतिक्खणे उपपत्तिक्खणे वा दिब्ब-चक्खुना दट्ठु न सक्का, ये पन आसन्नचुतिका इदानि चविस्सन्ति ते चवमाना, ये च गहितपटिसन्धिका सम्पत्तिनिब्बत्ता व ते उप्पज्जमाना ति अधिप्पेता । ते एवरूपे चवमाने उप्पज्जमाने च पस्सतीति दस्सेति ।

४९. **हीने** ति । मोहनिस्सन्दयुत्तत्ता हीनानं जातिकुलभोगादीन वसेन हीळिते ओहीळिते उञ्ञाते अवञ्ञाते । **पणीते** ति । अमोहनिस्सन्दयुत्तत्ता तब्बिपरीते । **सुवण्णे** ति । अदोसनिस्सन्दयुत्तत्ता इट्ठकन्तमनापवण्णयुते । **दुब्बण्णे** ति । दोसनिस्सन्दयुत्तत्ता अनिट्ठाकन्तअमनापवण्णयुत्ते । अनभिरूपे, विरूपे ति पि अत्थो । **सुगते** ति । सुगतिगते । अलोभनिस्सन्दयुत्तत्ता वा अड्ढे महद्धने । **दुग्गते** ति । दुग्गतिगते । लोभनिस्सन्दयुत्तत्ता वा दलिद्दे अप्पन्नपाने ।

५०. **यथाकम्मूपगे** ति । यं यं कम्मं उपचित्तं तेन तेन उपगते । तत्थ पुरिमेहि चवमाने ति आदीहि दिब्बचक्खुकिच्चं वुत्तं, इमिना पन पदेन यथा कम्मूपगञाणकिच्चं ।

तस्स च ञाणस्स अयमुत्पत्तिक्कमो—इध भिक्खु हेट्ठा निरयाभिमुखं आलोकं वड्ढेत्वा नेरयिके सत्ते पस्सति महादुक्खमनुभवमाने । त दस्सन दिब्ब-चक्खुकिच्चमेव । सो एव मनसि करोति—'किं नु खो कम्म कत्वा इमे सत्ता एत दुक्खं अनुभवन्ती' ति ? अथस्स 'इद नाम कत्वा ति तक्कम्मारम्मण ञाणं उप्पज्जति । तथा उपरि देवलोकाभिमुख आलोकं वड्ढेत्वा नन्दनवन-मिस्सकवन-फारुसकवनादिसु सत्ते पस्सति महासम्पत्तिं अनुभवमाने । तं पि दस्सन दिब्ब-चक्खुकिच्चमेव । सो एव मनसिकरोति—'किं नु भो कम्मं कत्वा इमे सत्ता एत सम्पत्तिं अनुभवन्ती ति ? अथस्स, इदं नाम कत्वा ति तक्कम्मारम्मण ञाण उप्पज्जति । इद यथाकम्मूपगञाणं नाम ।

इमस्स विसु परिकम्मं नाम नत्थि । यथा चिमस्स, एवं अनागतसञाण-स्सापि । दिब्बचक्खुपादकानेव हि इमानि दिब्बचक्खुना सहेव इज्झन्ति ।

५१. **कायदुच्चरितेना** ति आदिसु—दुट्ठु चरितं, दुट्ठं वा चरित किलेस-पूतिकत्ता ति दुच्चरितं । कायेन दुच्चरितं, कायतो वा उप्पन्न दुच्चरितं ति कायदुच्चरितं । इतरेसु पि एसेव नयो । **समन्नागतत्ता** ति । समङ्गीभूता ।

अरियानं उपवादका ति । **बुद्ध-पच्चेकबुद्ध-सावकान** अरियानं अन्तमसो गिहिसोतापन्नानं पि अनत्थकामा हुत्वा अन्तिमवत्थुना वा गुणपरिधंसनेव वा उपवादका । अक्कोसका, गरहका ति वुत्तं होति ।

तत्थ, 'नत्थि इमेसं समणधम्मो, अस्समणा एते' ति वदन्तो अन्तिमवत्थुना उपवदति। 'नत्थि इमेस झान वा विमोक्खो वा मग्गो वा फल वा' ति आदीनि वदन्तो गुणपरिधसनवसेन उपवदती ति वेदितब्बो। सो च जानं वा उपवदेय्य अजानं वा, उभयथा पि अरियूपवादो व होति। भारिय कम्मं आनन्तरियसदिसं सग्गावरण च मग्गावरणं च, सतेकिच्छ पन होति।

तस्स आविभावत्थ इद वत्थु वेदितब्ब—

५२. अञ्ञतरस्मि किर गामे एको थेरो च दहरभिक्खु च पिण्डाय चरन्ति। ते पठमघरे येव उलुङ्कमत्त[1] उण्हयागु लभिसु। थेरस्स च कुच्छिवातो रुज्जति। सो चिन्तेसि—'अय यागु मय्ह सप्पाया, याव न सीतला होति, ताव नं पिबामी' ति मनुस्सेहि उम्मारत्थाय आहटे दारुखण्डे निसीदित्वा पिवि। इतरो तं जिगुच्छन्तो 'अतिखुदाभिभूतो महल्लको अम्हाकं लज्जितब्बक अकासी' ति आह। थेरो गामे चरित्वा विहार गन्त्वा दहरभिक्खु आह—"अत्थि ते, आवुसो, इमस्मि सासने पतिट्ठा" ति? "आम, भन्ते, सोतापन्नो अह" ति। "तेन हावुसो, उपरिमग्गत्थाय मा वायाम अकासि, खीणासवो तया उपवदितो" ति। सो तं खमापेसि। तेनस्स तं कम्म पाकतिक अहोसि।

तस्मा यो अञ्ञो पि अरिय उपवदति, तेन गन्त्वा सचे अत्तना वुड्ढतरो होति, उक्कुटिक निसीदित्वा "अह आयस्मन्त इद चिदं च अवच, त मे खमाहो" ति खमापेतब्बो। सचे नवकतरो होति, वन्दित्वा उक्कुटिकं निसीदित्वा अञ्जलिं पग्गहेत्वा "अहं, भन्ते, तुम्हे इद चिद च अवच, तं मे खमथा" ति खमापेतब्बो। सचे दिसापक्कन्तो होति, सय वा गन्त्वा सद्धिविहारिकादिके वा पेसत्वा खमापेतब्बो।

सचे च नापि गन्तु, न पेसेतु सक्का होति, ये तस्मि विहारे भिक्खू वसन्ति, तेसं सन्तिक गन्त्वा—सचे नवकतरा होन्ति उक्कुटिक निसीदित्वा, सचे वुड्ढतरा, वुड्ढे वुत्तनयेनेव पटिपज्जित्वा, "अहं, भन्ते, असुकं नाम आयस्मन्त इद चिदं च अवच, खमतु मे सो आयस्मा" ति वत्वा खमापेतब्ब। सम्मुखा अखमन्ते पि एतदेव कत्तब्ब।

सचे एकचारिकभिक्खु होति, नेवस्स वसनट्ठान, न गतट्ठान पञ्ञायति, एकस्स पण्डितस्स भिक्खुनो सन्तिकं गन्त्वा 'अहं, भन्ते, असुकं नाम आयस्मन्तं इदं चिदं च अवच, तं मे अनुस्सरतो विप्पटिसारो होति, किं करोमी" ति वत्तब्बं। सो वक्खति—"तुम्हे मा चिन्तयित्थ, थेरो तुम्हाक खमति, चित्तं

१. उळुङ्कमत्तं ति। महाकटच्छुमत्तं।

वूपसमेथा" ति। तेना पि अरियस्स गतदिसाभिमुखेन अञ्जलिं पग्गहेत्वा "खमतू" ति वत्तब्बं।

सचे सो परिनिब्बुतो होति, परिनिब्बुतमञ्चट्ठानं[1] गन्त्वा यावसिवथिक गन्त्वा पि खमापेतब्बं। एवं कते नेव सग्गावरणं न मग्गावरणं होति, पाकतिकमेव होती ति।

५३ **मिच्छादिट्ठिका** ति। विपरीतदस्सना। **मिच्छादिट्ठिकम्मसमादाना** ति। मिच्छादिट्ठिवसेन समादिन्ननानाविधकम्मा, ये च मिच्छादिट्ठिमूलकेसु कायकम्मादीसु अञ्ञे पि समादपेन्ति। एत्थ च वचीदुच्चरितग्गहणेनेव अरियूपवादे मनोदुच्चरितग्गहणेन च मिच्छादिट्ठिया सङ्गहिताय पि इमेस द्विन्नं पुन वचनं महासावज्जभावदस्सनत्थ ति वेदितब्बं।

महासावज्जो हि अरियूपवादो, आनन्तरियसदिसत्ता। वुत्त पि चेत्त—"सेय्यथापि, सारिपुत्त, भिक्खु सीलसम्पन्नो समाधिसम्पन्नो पञ्ञासम्पन्नो दिट्ठे व धम्मे अञ्ञ आराधेय्य, एव सम्पदमिद, सारिपुत्त, वदामि, त वाच अप्पहाय तं चित्तं अप्पहाय, तं दिट्ठिं अप्पटिनिस्सज्जित्वा यथाभत निक्खित्तो, एव निरये" (म० १-१०१) ति। मिच्छादिट्ठितो च महासावज्जतर नाम अञ्ञं नत्थि। यथाह—"नाह, भिक्खवे, अञ्ञ एकधम्म पि समनुपस्सामि य एवं महासावज्ज, यथयिद, भिक्खवे, मिच्छादिट्ठि। मिच्छादिट्ठिपरमानि, भिक्खवे, वज्जानी" (अं० १-३४) ति।

५४. **कायस्स भेदा** ति। उपादिण्णक्खन्धपरिच्चागा। **परं मरणा** ति। तदनन्तर अभिनिब्बत्तिक्खन्धग्गहणे। अथ वा—**कायस्स भेदा** ति। जीवितिन्द्रियस्स उपच्छेदा। परं मरणा ति। चुतिचित्ततो उद्धं।

अपायं ति एवमादि सब्बं निरयवेवचनमेव।

५५. निरयो हि सग्गमोक्खहेतुभूता पुञ्ञसम्मता अया अपेतत्ता, सुखानं वा आयस्स अभावा **अपायो**। दुक्खस्स गति पटिसरणं ति दुग्गति, दोसबहुलताय वा दुट्ठेन कम्मुना निब्बत्ता गती ति **दुग्गति**। विवसा निपतन्ति एत्थ दुक्कटकारिनो ति विनिपातो। विनस्सन्ता वा एत्थ पतन्ति सम्भिज्जमानङ्गपच्चङ्गा ति पि **विनिपातो**। नत्थि एत्थ अस्सादसञ्ञितो अयो ति **निरयो**।

५६ अथ वा—**अपायग्गहणेन** तिरच्छानयोनिं दीपेति। तिरच्छानयोनि हि अपायो सुगतितो अपेतत्ता, न दुग्गति; महेसक्खानं नागराजादीनं सम्भवतो। **दुग्गतिग्गहणेन** पेत्तिविसयं। सो हि अपायो चेव दुग्गति च, सुगतितो अपेतत्ता दुक्खस्स च गतिभूतत्ता। न तु विनिपातो असुरसदिसं अविनिपतितत्ता। **विनि-**

---

१ **परिनिब्बुतमञ्चट्ठानं** ति। पूजाकरणट्ठानं सन्धायाह।

पातग्गहणेन असुरकायं। सो हि यथावुत्तेन अत्थेन अपायो चेव दुग्गति च सब्बसमुस्सयेहि च विनिपतितत्ता विनिपातो ति वुच्चति। **निरयग्ग**हणेन अवीचिआदिअनेकप्पकार निरयमेवा ति। **उपपन्ना** ति। उपगता। तत्थ अभिनिब्बत्ता ति अधिप्पायो। वुत्तविपरियायेन सुक्कपक्खो वेदितब्बो।

अयं पन विसेसो—तत्थ सुगतिग्गहणेन मनुस्सगत्ति पि सङ्गय्हति। सग्गग्गहणेन देवगतियेव। तत्थ सुन्दरा गती ति **सुगति**। रूपादीहि विसयेहि सुट्ठु अग्गो ति **सग्गो**। सो सब्बो पि लुज्जनपलुज्जनट्ठेन **लोको** ति अय वचनत्थो।

इति दिब्बेन चक्खुना ति। आदि सब्ब निगमनवचनं। एवं दिब्बेन चक्खुना" पे०...."पस्सती ति अयमेत्थ सङ्खेपत्थो।

५७. एव पस्सितुकामेन पन आदिकम्मिकेन कुलपुत्तेन कसिणारम्मणं अभिञ्ञापादकज्झान सब्बाकारेन अभिनीहारक्खम कत्वा "तेजोकसिणं, ओदातकसिणं, आलोककसिण" ति इमेसु तीसु कसिणेसु अञ्ञतर आसन्न कातब्बं, उपचारज्झानगोचरं कत्वा वड्ढेत्वा ठपेतब्ब। न तत्थ अप्पना उप्पादेतब्बा ति अधिप्पायो। सचे हि उप्पादेति, पादकज्झाननिस्सय होति, न परिकम्मनिस्सय। इमेसु च पन तीसु आलोककसिण येव सेट्ठतर। तस्मा त वा इतरेस वा अञ्ञतर कसिणनिद्दस वुत्तनयेन उप्पादेत्वा उपचारभूमिय येव ठत्वा वड्ढेतब्ब। वड्ढनानयो पि चस्स तत्थ वुत्तनयेनेव वेदितब्बो।

५८. वड्ढितट्ठानस्स अन्ता येव रूपगत पस्सितब्ब। रूपगतं पस्सतो पनस्स परिकम्मस्स वारो अतिक्कमति। ततो आलोको अन्तरधायति। तस्मिं अन्तरहिते रूपगतं पि न दिस्सति। अथानेन पुनप्पुन पादकज्झानमेव पविसित्वा ततो वुट्ठाय आलोको फरितब्बो। एव अनुक्कमेन आलोको थामगतो होती ति 'एत्थ आलोको होतू' ति यत्तक ठान परिच्छिन्दति, तत्थ आलोको तिट्ठति येव। दिवस पि निसादित्वा पस्सतो रूपदस्सन होति।

रत्तिं तिणुक्काय मग्गपटिपन्नो चेत्थ पुरिसो ओपम्मं।

५९. एको किर रत्तिं तिणुक्काय मग्ग पटिपज्जि। तस्स सा तिणुक्का विज्झायि। अथस्स समविसमानि न पञ्ञायिंसु। सो त तिणुक्क भूमियं घसित्वा तिणुक्का पुन उज्जालेसि। सा पज्जलित्वा पुरिमालोकतो महन्ततरं आलोकमकासि। एव पुनप्पुन विज्झातं उज्जालयतो कमेन सुरियो उट्ठासि। सुरिये उट्ठिते 'उक्काय कम्मं नत्थी' ति तं छड्डेत्वा दिवसं पि अगमासि।

तत्थ उक्कालोको विय परिकम्मकाले कसिणालोको। उक्काय विज्झाताय समविसमानं अदस्सनं विय रूपगतं पस्सतो परिकम्मस्स वारातिक्कमेन आलोके अन्तरहिते रूपगतानं अदस्सनं। उक्काय घंसन विय पुनप्पुनं पवेसनं। उक्काय पुरिमालोकतो महन्ततरालोककरण विय पुन परिकम्मं करोतो बलवतरालोक-

फरणं। सुरियुट्ठानं विय थामगतालोकस्स यथापरिच्छेदेन ठानं। तिणुक्कं छड्डेत्वा दिवस पि गमनं विय परित्तालोकं छड्डेत्वा थामगतेनालोकेन दिवसं पि रूपदस्सन।

६०. तत्थ यदा तस्स भिक्खुनो मंसचक्खुस्स अनापाथगतं अन्तोकुच्छिगतं हदयवत्थुनिस्सितं हेट्ठापथवीतलनिस्सितं तिरोकुट्टपब्बतपाकारगतं परचक्कवाळगतं ति इदं रूप ञाणचक्खुस्स आपाथं गच्छति, मंसचक्खुना दिस्समानं विय होति, तदा दिब्बचक्खु उप्पन्नं होती ति वेदितब्ब। तदेव चेत्थ रूपदस्सनसमत्थं, न पुब्बभागचित्तानि।

६१. तं पनेतं पुथुज्जनस्स परिबन्धो होति। कस्मा? सो हि यस्मा यत्थ यत्थ आलोको होतू ति अधिट्ठाति, तं तं पथवीसमुद्दपब्बते विनिविज्झित्वा पि एकालोक होति। अथस्स तत्थ भयानकानि यक्खरक्खसादिरूपानि पस्सतो भयं उप्पज्जति। येन चित्तविक्खेप पत्वा झानविब्भन्तको होति, तस्मा रूपदस्सने अप्पमत्तेन भवितब्बं।

६२. तत्रायं दिब्बचक्खुनो उप्पत्तिक्कमो—वुत्तप्पकारमेतं रूपारम्मण कत्वा मनोद्वारावज्जने उप्पज्जित्वा निरुद्धे तदेव रूपं आरम्मण कत्वा चत्तारि पञ्च वा जवनानि उपज्जन्ती ति सब्बं पुग्मिनयेनेव वेदितब्बं। इधा पि पुब्बभागचित्तानि सवितक्कसविचारानि कामावचरानि, परियोसाने अत्थसाधकचित्तं चतुथज्झानिकं रूपावचरं। तेन सहजातं ञाण **सत्तानं चुतूपपाते ञाणं** ति पि **दिब्बचक्खुञाणं** ति पि वुच्चती ति।

चुतूपपातञाणकथा निट्ठिता।

पकिण्णककथा

६३. इति पञ्चक्खन्धविदू पञ्च अभिञ्ञा अवोच या नाथो।
ता ञत्वा तासु अयं पकिण्णककथा पि विञ्ञेय्या॥

एतासु हि यदेतं चुतूपपातञाणसङ्खातं दिब्बचक्खु, तस्स अनागतंसञाणं च यथाकम्मूपगञाणं चा ति द्वे पि परिभण्डञाणानि होन्ति। इति इमानि च द्वे इद्धिविधादीनि च पञ्चा ति सत्त अभिञ्ञाञाणानि इधागतानि। इदानि तेसं आरम्मणविभागे असम्मोहत्थं—

आरम्मणत्तिका वुत्ता ये चत्तारो महेसिना।
सत्तन्नमपि ञाणानं पवत्तिं तेसु दीपये॥

तत्रायं दीपना—चत्तारो हि आरम्मणत्तिका महेसिना वुत्ता। कतमे चत्तारो? परित्तारम्मणत्तिको, मग्गारम्मणत्तिको, अतीतारम्मणत्तिको, अज्झत्तारम्मणत्तिको (दी० १–७१, ७२) ति।

६४. तत्थ इद्धिविधञाणं परित्त-महग्गत-अतीत-अनागत-पच्चुप्पन्न-अज्झत्त-बहिद्धारम्मणवसेन सत्तसु आरम्मणेसु पवत्तति। कथं? त हि यदा काय चित्तसन्निस्सित कत्वा अदिस्समानेन कायेन गन्तुकामो चित्तवसेन कायं परिणामेति, महग्गतचित्ते समोदहति समारोपेति, तदा उपयोगलद्धं आरम्मणं होती ति कत्वा रूपकायारम्मणतो **परित्तारम्मणं** होति। (१)

यदा चित्तं कायसन्निस्सितं कत्वा दिस्समानेन कायेन गन्तुकामो कायवसेन चित्तं परिणामेति, पादकज्झानचित्तं रूपकाये समोदहति समारोपेति, तदा उपयोगलद्ध आरम्मणं होती ति कत्वा महग्गतचित्तारम्मणतो **महग्गतारम्मणं** होति। (२)

यस्मा पन तदेव चित्त अतीतं निरुद्धमारम्मण करोति, तस्मा **अतीतारम्मणं** होति। (३)

महाधातुनिधाने महाकस्सपत्थेरादीन विय अनागत अधिट्ठहन्तानं **अनागतारम्मणं** होति। **महाकस्सपत्थेरो** किर महाधातुनिधानं करोन्तो "अनागते अट्ठारसवस्साधिकानि द्वे वस्ससतानि इमे गन्धा मा सुस्सिसु, पुप्फानि मा मिलायिंसु, दीपा मा निब्बायिंसू" ति अधिट्ठहि। सब्ब तथेव अहोसि। **अस्सगुत्तत्थेरो** वत्तनियसेनासने भिक्खुसङ्घं सुक्खभत्तं भुञ्जमानं दिस्वा उदकसोण्डि दिवसे दिवसे पुरेभत्ते दधिरस होतू ति अधिट्ठासि। पुरेभत्ते गहित दधिरसं होति। पच्छाभत्ते पाकतिकउदकमेव। (४)

कायं पन चित्तसन्निस्सितं कत्वा अदिस्समानेन कायेन गमनकाले **पच्चुप्पन्नारम्मणं** होति। (५)

कायवसेन चित्त, चित्तवसेन वा कायं परिणामनकाले अत्तनो कुमारकवण्णादीनिम्मानकाले च सकायचित्तान आरम्मणकरणतो **अज्झत्तारम्मणं** होति। (६)

बहिद्धा हत्थिअस्सादिदस्सनकाले पन **बहिद्धारम्मणं** ति। (७)

एव ताव इद्धिविधञाणस्स सत्तसु आरम्मणेसु पवत्ति वेदितब्बा।

६५. **दिब्बसोतधातुञाणं** परित्त-पच्चुप्पन्न-अज्झत्त-बहिद्धारम्मणवसेन चतूसु आरम्मणेसु पवत्तति। कथं? तं हि यस्मा सद्दं आरम्मण करोति सद्दो च परित्तो, तस्मा परित्तारम्मणं होति। विज्जमानं येव पन सद्दं आरम्मणं कत्वा पवत्तनतो पच्चुप्पन्नारम्मण होति। त अत्तनो कुच्छिसद्दसवनकाले अज्झत्तारम्मण। परेस सद्दसवनकाले बहिद्धारम्मण ति एव दिब्बसोतधातुञाणस्स चतूसु आरम्मणेसु पवत्ति वेदितब्बा।

६६. **चेतोपरियञाणं** परित्त-महग्गत-अप्पमाण-मग्ग-अतीतानागत-पच्चुप्पन्न-बहिद्धारम्मणवसेन अट्ठसु आरम्मणेसु पवत्तति। कथं? तं हि परेस कामावचरचित्तजाननकाले परित्तारम्मणं होति। रूपावचरअरूपावचरचित्तजाननकाले

महग्गतारम्मण होति। मग्गफलजाननकाले अप्पमाणारम्मण होति। एत्थ च पुथुज्जनो सोतापन्नस्स चित्त न जानाति। सोतापन्नो वा सकदागामिस्सा ति एव याव अरहतो नेतब्बं। अरहा पन सब्बेसं चित्त जानाति। अञ्ञो पि उपरिमो हेट्ठिमस्सा ति अय विसेसो वेदितब्बो। मग्गचित्तारम्मणकाले मग्गारम्मणं होति। यदा पन अतीते सत्तादिवसब्भन्तरे च अनागते सत्तादिवसब्भन्तरे च परेस चित्तं जानाति, तदा अतीतारम्मण अनागतारम्मणं च होति।

६७ कथं पच्चुप्पन्नारम्मण होति? पच्चुप्पन्नं नाम तिविध—खणपच्चुप्पन्न, सन्ततिपच्चुप्पन्नं, अद्धापच्चुप्पन्न च। तत्थ उप्पादट्ठितिभङ्गप्पत्तं **खणपच्चुप्पन्नं**। (१)

एकद्वेसन्ततिवारपरियापन्न **सन्ततिपच्चुप्पन्नं**।

तत्थ अन्धकारे निसीदित्वा आलोकट्ठान गतस्स न ताव आरम्मणं पाकटं होति, याव पन त पाकट होति, एत्थन्तरे एकद्वे सन्ततिवारा[1] वेदितब्बा। आलोकट्ठाने विचरित्वा ओवरकं पविट्ठस्सापि न ताव सहसा रूपं पाकटं होति, याव पन त पाकटं होति, एत्थन्तरे एकद्वे सन्ततिवारा वेदितब्बा। दूरे ठत्वा पन रजकानं हत्थविकारं गण्डिभेरीआदिआकोटनाविकारं च दिस्वा पि न ताव सद्द सुणाति, याव पन तं सुणाति, एतस्मि पि अन्तरे एकद्वे सन्ततिवारा वेदितब्बा। एवं ताव **मज्झिमभाणका**।

६८ **संयुत्तभाणका** पन—रूपसन्तति, अरूपसन्तती ति द्वे सन्ततियो वत्वा उदक अक्कमित्वा गतस्स याव तीरे अक्कन्तउदकलेखा न विप्पसीदति, अद्धानतो आगतस्स याव काये उसुमभावो न वूपसम्मति, आतपा आगन्त्वा गब्भं पविट्ठस्स याव अन्धकारभावो न विगच्छति, अन्तोगब्भे कम्मट्ठानं मनसिकरित्वा दिवा वातपानं विवरित्वा ओलोकेन्तस्स याव अक्खीनं फन्दनभावो न वूपसम्मति, अयं **रूपसन्तति** नाम। द्वे तयो जवनवारा **अरूपसन्तति** नामा ति वत्वा तदुभय पि सन्ततिपच्चुप्पन्नं नामा ति वदन्ति। (२)

६९. एकभवपरिच्छिन्नं पन **अद्धापच्चुप्पन्नं** नाम। यं सन्धाय **भद्देकरत्तसुत्ते**—'यो चावुसो, मनो ये धम्मा उभयमेतं पच्चुप्पन्न। तस्मि चे पच्चुप्पन्ने छन्दरागप्पटिबद्धं होति विञ्ञाणं। छन्दरागप्पटिबद्धत्ता विञ्ञाणस्स तदभिनन्दति। तदभिनन्दन्तो पच्चुप्पन्नेसु धम्मेसु संहीरती" (म० ३-२७३) ति वुत्त। (३)

सन्ततिपच्चुप्पन्न चेत्थ **अट्ठकथासु** आगतं, अद्धापच्चुप्पन्न **सुत्ते**।

७० तत्थ केचि खणपच्चुप्पन्नं चित्त चेतोपरियञाणस्स आरम्मण होती ति

---

१. **सन्ततिवारा** ति। रूपसन्ततिवारा।

वदन्ति । किं कारणा ? यस्मा इद्धिमतो च परस्स च एकक्खणे चित्तं उप्पज्जती ति । इद च नेसं ओपम्म—यथा आकासे खित्तो पुप्फमुट्ठिम्हि अवस्सं एकं पुप्फं एकस्स वण्टेन वण्ट पटिविज्झति, एव 'परस्स चित्त जानिस्सामी' ति रासिवसन महाजनस्स चित्ते आवज्जिते अवस्सं एकस्स चित्तं एकेन चित्तेन उप्पादक्खणे वा ठितिक्खणे वा भङ्गक्खणे वा पटिविज्झती ति ।

तं पन वस्ससतं पि वस्ससहस्सं पि आवज्जन्तो येन च चित्तेन आवज्जति, येन च जानाति, तेस द्विन्नं सह ठानाभावतो आवज्जनजवनान च अनिट्ठेठाने नानारम्मणभावप्पत्तिदोसतो अयुत्तं ति अट्ठकथासु पटिक्खित्तं ।

७१ सन्ततिपच्चुप्पन्नं पन अद्धापच्चुप्पन्नं च आरम्मणं होती ति वेदितब्बं । तत्थ यं वत्तमानजवनवीथितो अतीतानागतवसेन द्वित्तिजवनवीथिपरिमाणे काले परस्स चित्तं, तं सब्बं पि सन्ततिपच्चुप्पनं नाम "अद्धापच्चुप्पन्ना पन जवनवारेन दीपेतब्बं" ति **संयुत्तट्ठकथायं** वुत्तं । तं सुट्ठु वुत्त ।

७२. तत्राय दीपना—इद्धिमा परस्स चित्तं जानितुकामो आवज्जति । आवज्जनं खणपच्चुप्पन्नं आरम्मणं कत्वा तेनेव सह निरुज्झति । ततो चत्तारि पञ्च वा जवनानि । येसं पच्छिमं इद्धिचित्त, सेसानि कामावचरानि । तेसं सब्बेस पि तदेव निरुद्धं चित्तं आरम्मण होति, न च तानि नानारम्मणानि होन्ति, अद्धावसेन पच्चुप्पन्नारम्मणत्ता । एकारम्मणत्ते पि च इद्धिचित्तमेव परस्स चित्तं जानाति, न इतरानि । यथा चक्खुविञ्ञाणमेव रूपं पस्सति, न इतरानी ति ।

इति इद सन्ततिपच्चुप्पन्नस्स चेव अद्धापच्चुप्पन्नस्स च वसेन पच्चुप्पन्नारम्मणं होति । यस्मा वा सन्ततिपच्चुपन्नं पि अद्धापच्चुप्पन्ने येव पतति, तस्मा अद्धापच्चुप्पनवसेनेवेतं पच्चुप्पन्नारम्मण ति वेदितब्बं । परस्स चित्तारम्मणता येव पन बहिद्धारम्मण होती ति एव चेतोपरियञाणस्स अट्ठसु आरम्मणसु पवत्ति वेदितब्बा ।

७३. **पुब्बेनिवासञाणं** परित्त-महग्गत-अप्पमाण-मग्ग-अतीत-अज्झत्त-बहिद्धानवत्तब्बारम्मणवसेन अट्ठसु आरम्मणेसु पवत्तति । कथ ? तं हि कामावचरक्खन्धानुस्सरणकाले परित्तारम्मणं होति । रूपावचरारूपावचरक्खन्धानुस्सरणकाले महग्गतारम्मणं । अतीते अत्तना परेहि वा भावितमग्ग सच्छिकतफलं च अनुस्सरणकाले अप्पमाणारम्मणं । भावितमग्गमेव अनुस्सरणकाले मग्गारम्मणं । नियमतो पनेतं अतीतारम्मणमेव ।

तत्थ किञ्चापि चेतोपरियञाणयथाकम्मूपगञाणानि पि अतीतारम्मणानि होन्ति, अथ खो तेसं चेतोपरियञाणस्स सत्तदिवसब्भन्तरातीतं चित्तमेव आरम्मणं । तं हि अञ्ञं खन्धं वा खन्धपटिबद्धं वा न जानाति, मग्गसम्पयुत्त-

चित्तारम्मणता पन परियायतो मग्गारम्मण ति वुत्तं। यथाकम्मूपगञाणस्स च अतीतचेतनामत्तमेव आरम्मणं। पुब्बेनिवासञाणस्स पन अतीता खन्धा खन्धपटिबद्धं च किञ्चि अनारम्मणं नाम नत्थि। तं हि अतीतक्खन्ध-खन्ध-पटिबद्धेसु धम्मेसु सब्बञ्ञुतञाणगतिकं होती ति अयं विसेसो वेदितब्बो। अयमेत्थ **अट्ठकथा**नयो।

यस्मा पन "कुसला खन्धा इद्धिविधञाणस्स चेतोपरियञाणस्स पुब्बेनिवासानुस्सतिञाणस्स यथाकम्मूपगञाणस्स अनागतसञाणस्स आरम्मणपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १-१२४) ति **पट्ठाने** वुत्त। तस्मा चत्तारो पि खन्धा चेतोपरियञाणयथाकम्मूपगञाणानं आरम्मणा होन्ति। तत्रा पि यथाकम्मूपगञाणस्स कुसलाकुसला एवा ति।

अत्तानो खन्धानुस्सरणकाले पनेत अज्झत्तारम्मणं। परस्स खन्धानुस्सणकाले बहिद्धारम्मण। "अतोते विपस्सी भगवा अहोसि, तस्स माता बन्धुमती, पिता बन्धुमा" (दो० २-७) ति आदिना नयेन नामगोत्तपथवीनिमित्तादिअनुस्सरण-काले नवत्तब्बारम्मणं होति। नामगोत्त ति चेत्थ खन्धूपनिबन्धो सम्मुतिसिद्धो ब्यञ्जनत्थो दट्ठब्बो, न ब्यञ्जनं। ब्यञ्जन हि सद्दायतनसङ्गहितत्ता परित्तं होति। यथाह—"निरुत्तिपटिसम्भिदा परित्तारम्मणा" (अभि० २-३६३) ति। अयमेत्थ अम्हाकं खन्ति। एव पुब्बेनिवासञाणस्स अट्ठसु आरम्मणेसु पवत्ति वेदितब्बा।

७४ **दिब्बचक्खुञाणं** परित्त-पच्चुप्पन्न-अज्झत्त-बहिद्धारम्मणवसेन चतूसु आरम्मणेसु पवत्तति। कथं ? तं हि यस्मा रूपं आरम्मण करोति, रूपं च परित्तं, तस्मा परित्तारम्मण होति। विज्जमाने येव च रूपे पवत्तत्ता पच्चुप्पन्ना-रम्मणं। अत्तानो कुच्छिगतादिरूपदस्सनकाले अज्झत्तारम्मणं। परस्स रूप-दस्सनकाले बहिद्धारम्मणं ति एव दिब्बचक्खुञाणस्स चतूसू आरम्मणेसु पवत्ति वेदितब्बा।

७५ **अनागतंसञाणं** परित्त-महग्गत-अप्पमाण-मग्ग-अनागत-अज्झत्त-बहिद्धा-नवत्तब्बारम्मणवसेन अट्ठसु आरम्मणेसु पवत्तति। कथं ? त हि "अयं अनागते कामावचरे निब्बत्तिस्सती" ति जाननकाले परित्तारम्मणं होति। "रूपावचरे अरूपावचरे वा निब्बत्तिस्सती" ति जाननकाले महग्गतारम्मणं। "मग्गं भावे-स्सति, फलं सच्छिकरिस्सती" ति जाननकाले अप्पमाणारम्मणं। "मग्गं भावे-स्सति"च्चेव जाननकाले मग्गारम्मणं। नियमतो पन त अनागतारम्मणमेव।

तत्थ किञ्चापि चेतोपरियञाणं पि अनागतारम्मणं होति, अथ खो तस्स सत्तदिवसब्भन्तरानागतं चित्तमेव आरम्मणं। त हि अञ्ञं खन्धं वा खन्धपटि-

बद्धं वा न जानाति। अनागतंसञाणस्स पुब्बेनिवासञाणे वुत्तनयेन अनागते अनारम्मणं नाम नत्थि।

"अहं अमुत्र निब्बत्तिस्सामी" ति जाननकाले अज्झत्तारम्मणं। "असुको अमुत्र निब्बत्तिस्सती" ति जाननकाले बहिद्धारम्मणं। "अनागते मेत्तेय्यो भगवा उप्पज्जिस्सति, सुब्रह्मा नामस्स ब्राह्मणो पिता भविस्सति, ब्रह्मवती नाम ब्राह्मणी माता" (दी० ३-६०) ति आदिना पन नयेन नामगोत्तजाननकाले पुब्बेनिवासञाणे वुत्तनयेनेव नवत्तब्बारम्मणं होती ति एवमनागतंसञाणस्स अट्ठसु आरम्मणेसु पवत्ति वेदितब्बा।

७६ **यथाकम्मूपगञाणं** परित्त-महग्गत-अतीत-अज्झत्त-बहिद्धारम्मणवसेन पञ्चसु आरम्मणेसु पवत्तति। कथ? तं हि कामावचरकम्मजाननकाले परित्तारम्मणं होति। रूपावचरारूपावचरकम्मजाननकाले महग्गतारम्मणं। अतीतमेव जानाती ति अतीतारम्मणं। अत्तनो कम्मं जाननकाले अज्झत्तारम्मणं। परस्स कम्मं जाननकाले बहिद्धारम्मणं होति। एवं यथाकम्मूपगञाणस्स पञ्चसु आरम्मणेसु पवत्ति वेदितब्बा।

यं चेत्थ अज्झत्तारम्मणं चेव बहिद्धारम्मणं चा ति वुत्तं, तं कालेन अज्झत्तं कालेन बहिद्धा जाननकाले अज्झत्तबहिद्धारम्मणं पि होति येवा ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
अभिञ्ञानिद्देसो नाम तेरसमो परिच्छेदो॥



खन्धनिद्देसो

चुद्दसमो परिच्छेदो

पञ्ञाकथा

१. इदानि यस्मा एवं अभिञ्ञावसेन अधिगतानिसंसाय थिरतराय समाधिभावनाय समन्नागतेन भिक्खुना **"सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो, चित्तं पञ्ञं च भावयं"** ति एत्थ चित्तसीसेन निद्दिट्ठो **समाधि** सब्बाकारेन[1] भावितो होति। तदनन्तरा पन पञ्ञा भावेतब्बा, सा च अतिसङ्खेपदेसितत्ता विञ्ञातुं पि ताव न सुकरा, पगेव भावेतुं, तस्मा तस्सा वित्थारं भावनानयं च दस्सेतुं इदं पञ्हाकम्मं होति—

का पञ्ञा ? केनट्ठेन पञ्ञा ? कानस्सा लक्खणरसपच्चुपट्ठानपदट्ठानानि ? कतिविधा पञ्ञा ? कथं भावेतब्बा ? पञ्ञाभावनाय को आनिसंसो ति ?

२. तत्रिदं विस्सज्जनं।

का पञ्ञा ति ? पञ्ञा बहुविधा नानप्पकारा। त सब्बं विभावयितुं आरब्भमानं विस्सज्जनं अधिप्पेतं चेव अत्थं न साधेय्य, उत्तरि च विक्खेपाय संवत्तेय्य; तस्मा इध अधिप्पेतमेव सन्धाय वदाम—कुसलचित्तसम्पयुत्तं विपस्सनाञाणं **पञ्ञा**।

३ **केनट्ठेन पञ्ञा** ति ? पजाननट्ठेन पञ्ञा। किमिदं **पजाननं** नाम ? सञ्जाननविजाननाकारविसिट्ठं नानप्पकारतो जाननं। सञ्ञाविञ्ञाणपञ्ञानं हि समाने पि जाननभावे, सञ्ञा "नीलं, पीतकं" ति आरम्मणसञ्जाननमत्तमेव होति। "अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति लक्खणपटिवेधं पापेतुं न सक्कोति। विञ्ञाण "नीलं पीतकं" ति आरम्मणं च जानाति, लक्खणपटिवेधं च पापेति, उस्सक्कित्वा पन मग्गपातुभाव पापेतु न सक्कोति। पञ्ञा वुत्तनयवसेन आरम्मणं च जानाति, लक्खणपटिवेधं च पापेति, उस्सक्कित्वा[2] मग्गपातुभावं च पापेति।

४. यथा हि हेरञ्ञिकफलके ठपित कहापणरासि एको अजातबुद्धिदारको,

---

१ **सब्बाकारेना** ति। उपचाराकारो, अप्पनाकारो, वसीभावाकारो, वितक्कादिसमतिक्कमाकारो, रूपादीहि विरज्जनाकारो, चुद्दसधा चितस्स परिदमनाकारो, पञ्चविञ्ञआनिससाधिगमाकारो ति एवमादिना सब्बेन भावनाकारेन।

२. **उस्सक्कित्वा** ति। पुरतो गन्त्वा।

एको गामिकपुरिसो, एको हेरञ्ञिको ति तीसु जनेसु पस्समानेसु अजातबुद्धि-दारको कहापणानं चित्तविचित्तं दीघचतुरस्सपरिमण्डलभावमत्तमेव जानाति, "इदं मनुस्सानं उपभोगपरिभोग रतनसम्मतं" ति न जानाति। गामिकपुरिसो चित्तविचित्तादिभावं जानाति, "इदं मनुस्सानं उपभोगपरिभोगं रतनसम्मतं" ति च, "अयं छेको[1], अयं कूटो[2], अय अद्धसारो[3]" ति इमं पन विभाग न जानाति। हेरञ्ञिको सब्बे पि ते पकारे जानाति, जानन्तो च कहापणं ओलोकेत्वा पि जानाति, आकोटितस्स सद्दं सुत्वा पि, गन्ध घायित्वा पि, रस सायित्वा पि, हत्थेन धारयित्वा पि, असुकस्मिं नाम गामे वा निगमे वा नगरे वा पब्बते वा नदीतीरे वा कतो ति पि, असुकाचरियेन कतो ति पि जानाति, एवसम्पदमिद वेदितब्ब।

५ सञ्ञा हि अजातबुद्धिनो दारकस्स कहापणदस्सनं विय होति, नीलादिवसेन आरम्मणस्स उपट्ठानाकारमत्तगहणतो। विञ्ञाण गामिकस्स पुरिसस्स कहापणदस्सनमिव होति, नीलादिवसेन आरम्मणाकारगहणतो, उद्ध पि च लक्खणपटिवेधसम्पापनतो। पञ्ञा हेरञ्ञिकस्स कहापणदस्सनमिव होति, नीलादिवसेन आरम्मणाकार गहेत्वा लक्खणपटिवेधं च पापेत्वा ततो उद्ध पि मग्गपातुभावपापनतो। तस्मा यदेत सञ्जाननविजाननाकारविसिट्ठ नानप्पकारतो जानन। इद पजानन ति वेदितब्बं। इदं सन्धाय हि एतं वुत्त— "पजाननट्ठेन पञ्ञा" ति।

६. सा पनेसा यत्थ सञ्ञा-विञ्ञाणानि, न तत्थ एकंसेन होति। यदा पन होति, तदा अविनिब्भूत्ता तेहि धम्मेहि—"अयं सञ्ञा, इदं विञ्ञाणं, अयं पञ्ञा" ति विनिब्भुजित्वा अलब्भनेय्यनानत्ता सुखुमा दुद्दसा। तेनाह आयस्मा **नागसेनो**—"दुक्करं, महाराज, भगवता कतं" ति। "किं, भन्ते नागसेन, भगवता दुक्करं कतं ति? "दुक्कर, महाराज, भगवता कत, यं अरूपीन चित्तचेतसिकानं धम्मानं एकारम्मणे पवत्तमानान ववत्थान अक्खातं—अयं फस्सो, अयं वेदना, अयं सञ्ञा, अयं चेतना, इदं चित्त" (मि० प० ९४) ति।

७ **कानस्सा लक्खणरसपच्चुपट्ठानपदट्ठानानी** ति? एत्थ पन धम्मसभावपटिवेधलक्खणा पञ्ञा, धम्मान सभावपटिच्छादकमोहन्धकारविद्धसनरसा, असम्मोहपच्चुपट्ठाना। "समाहितो यथाभूतं जानाति पस्सती" (अ० ४-१०१) ति वचनतो पन समाधि तस्सा पदट्ठानं।

---

१. **छेको** ति। महासारो। २. **कूटो** ति। कहापणपतिरूपको तम्बकंसादिमयो।
३. **अद्धसारो** ति। उपड्ढग्घनको।

पञ्ञापभेदकथा

८. **कतिविधा पञ्ञा** ति? धम्मसभावपटिवेधलक्खणेन ताव एकविधा। लोकियलोकुत्तरवसेन दुविधा। तथा सासवानासवादिवसेन, नामरूपववत्थापनवसेन, सोमनस्सुपेक्खासहगतवसेन, दस्सनभावनाभूमिवसेन च। तिविधा चिन्तासुत-भावनामयवसेन[1]। तथा परित्त-महग्गत-अप्पमाणारम्मणवसेन, आयापाय-उपायकोसल्लवसेन, अज्झत्ताभिनिवेसादिवसेन च। चतुब्बिधा चतूसु सच्चेसु ञाणवसेन चतुपटिसम्भिदावसेन चा ति।

९. तत्थ **एकविधकोट्ठासो** उत्तानत्थो येव।

१०. **दुविधकोट्ठासे** लोकियमग्गसम्पयुत्ता[2] **लोकिया**, लोकुत्तरमग्गसम्पयुत्ता[3] **लोकुत्तरा** ति। एवं लोकियलोकुत्तरवसेन दुविधा।

दुतियदुके—आसवानं आरम्मणभूता **सासवा**। तेसं अनारम्मणं **अनासवा**। अत्थतो पनेसा लोकिय-लोकुत्तरा व होति। आसवसम्पयुत्ता सासवा। आसवविप्पयुत्ता अनासवा ति आदीसु पि एसेव नयो। एवं सासवानासवादिवसेन दुविधा।

ततियदुके—या विपस्सनं आरभितुकामस्स चतुन्नं अरूपक्खन्धान ववत्थापने पञ्ञा, अय **नामववत्थापनपञ्ञा**। या रूपक्खन्धस्स ववत्थापने पञ्ञा, अयं **रूपववत्थापनपञ्ञा** ति। एवं नाम-रूपववत्थापनवसेन दुविधा।

चतुत्थदुके—द्वीसु कामावचरकुसलचित्तेसु सोळससु च पञ्चकनयेन चतुक्कज्झानिकेसु मग्गचित्तेसु पञ्ञा **सोमनस्ससहगता**। द्वीसु कामावचरकुसलचित्तेसु चतूसु च पञ्चमज्झानिकेसु मग्गचित्तेसु पञ्ञा **उपेक्खासहगता** ति। एव सोमनस्सुपेक्खासहगतवसेन दुविधा।

पञ्चमदुके—पठममग्गपञ्ञा **दस्सनभूमि**। अवसेसमग्गत्तयपञ्ञा **भावनाभूमी** ति। एवं दस्सनभावनाभूमिवसेन दुविधा।

११ **तिकेसु पठमत्तिके**—परतो अस्सुत्वा पटिलद्धपञ्ञा अत्तनो चिन्तावसेन निप्फन्नता **चिन्तामया**। परतो सुत्वा पटिलद्धपञ्ञा सुतवसेन निप्फन्नत्ता **सुतमया**। यथा तथा वा भावनावसेन निप्फन्नत्ता अप्पनाप्पत्ता पञ्ञा **भावनामया**। वुत्तं हेतं—

"तत्थ कतमा चिन्तामया पञ्ञा? योगविहितेसु वा कम्मायतनेसु योगविहितेसु वा सिप्पायतनेसु योगविहितेसु वा विज्जाट्ठानेसु, कम्मस्सकतं वा

१. सुतादिनिरपेक्खाय चिन्ताय निब्बत्ता **चिन्तामया**। एवं **सुतमया भावनामया** च। मयसद्दो पच्चेकं सम्बन्धितब्बो। २. सम्मासङ्कप्पादिकुसलमग्गेहि सम्पयुत्ता।
३. सोतापत्तिआदिलोकुत्तरमग्गेहि सम्पयुत्ता।

सच्चानुलोमिक[1] वा, रूपं अनिच्चं ति वा, वेदना 'पे०' "सञ्ञा "सङ्खारा "विञ्ञाण अनिच्चं ति वा, यं एवरूपि अनुलोमिकं खन्ति दिट्ठि रुचि मुतिं पेक्खं धम्मनिज्झानखन्ति[2] परतो अस्सुत्वा पटिलभति, अयं वुच्चति—चिन्तामया पञ्ञा "पे०" सुत्वा पटिलभति, अयं वुच्चति—सुतमया पञ्ञा। सब्बा पि समापन्नस्स पञ्ञा भावनामया पञ्ञा" (अभि० २–३८५) ति।

एवं चिन्तासुतभावनामयवसेन तिविधा।

दुतियत्तिके—कामावचरधम्मे आरब्भ पवत्ता पञ्ञा **परित्तारम्मणा**। रूपावचरारूपावचरे आरब्भ पवत्ता **महग्गतारम्मणा**। सा लोकियविपस्सना। निब्बानं आरब्भ पवत्ता **अप्पमाणारम्मणा**। सा लोकुत्तरविपस्सना ति। एव परित्त-महग्गताप्पमाणारम्मणवसेन तिविधा।

ततियत्तिके—**आयो** नाम बुद्धि। सा दुविधा—अनत्थहानितो, अत्थुप्पत्तितो च। तत्थ कोसल्लं **आयकोसल्लं**। यथाह—

"तत्थ कतमं आयकोसल्लं? इमे धम्मे मनसिकरोतो अनुप्पन्ना चेव अकुसला धम्मा न उप्पज्जन्ति, उप्पन्ना च अकुसला धम्मा पहीयन्ति, इमे वा पनिमे धम्मे मनसिकरोतो अनुप्पन्ना चेव कुसला धम्मा उप्पज्जन्ति, उप्पन्ना च कुसला धम्मा भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तन्ति, या तत्थ पञ्ञा पजानना"पे० "अमोहो धम्मविचयो सम्मादिट्ठि, इदं वुच्चति आयकोसल्ल" (अभि० २–३८६) ति।

अपायो ति पन अवुद्धि। सा पि दुविधा—अत्थहानितो च, अनत्थुप्पत्तितो च। तत्थ कोसल्लं **अपायकोसल्लं**। यथाह—"तत्थ कतमं अपायकोसल्लं? इमे धम्मे मनसिकरोतो अनुप्पन्ना चेव कुसला धम्मा न उप्पज्जन्ती" (अभि० २–३८६) ति आदि।

सब्बत्थ पन तेसं तेसं धम्मानं उपायेसु निप्फत्तिकारणेसु तङ्खणप्पवत्तं ठानुप्पत्तिकं कोसल्लं **उपायकोसल्लं** नाम। यथाह—"सब्बा पि तत्रुपाया पञ्ञा उपायकोसल्ल" (अभि० २–३८६) ति। एवं आयापाय-उपायकोसल्ल-वसेन तिविधा।

चतुत्थत्तिके—अत्तनो खन्धे गहेत्वा आरद्धा विपस्सना पञ्ञा **अज्झत्ताभिनिवेसा**। परस्स खन्धे बाहिरं वा अनिन्द्रियबद्धरूपं गहेत्वा आरद्धा **बहिद्धाभिनिवेसा**। उभयं गहेत्वा आरद्धा **अज्झत्तबहिद्धाभिनिवेसा** ति। एव अज्झत्ताभिनिवेसादिवसेन तिविधा।

---

१. **सच्चानुलोमिकं** ति। विपस्सनाञाण।

२. ते च कम्मायतनादयो धम्मा एताय निज्झायमाना निज्झानं खमन्ती ति **धम्मनिज्झानखन्ति**।

१२ **चतुक्केसु पठमचतुक्के**—दुक्खसच्चं आरब्भ पवत्तं ञाणं **दुक्खे ञाणं**। दुक्खसमुदय आरब्भ पवत्तं ञाणं **दुक्खसमुदये ञाणं**। दुक्खनिरोध आरब्भ पवत्त ञाणं **दुक्खनिरोधे ञाणं**। दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं आरब्भ पवत्त ञाणं **दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय** ञाणं ति। एवं चतूसु सच्चेसु ञाण-वसेन चतुब्बिधा।

दुतियचतुक्के—चतस्सो पटिसम्भिदा नाम अत्थादीसु पभेदगतानि चत्तारि ञाणानि। वुत्तं हेत—"अत्थे ञाणं अत्थपटिसम्भिदा। धम्मे ञाण धम्मपटि-सम्भिदा। तत्रधम्मनिरुत्ताभिलापे ञाणं निरुत्तिपटिसम्भिदा। ञाणेसु ञाण पटिभानपटिसम्भिदा" (अभि० २–३५०) ति।

तत्थ **अत्थो** ति सङ्खेपतो हेतुफलस्सेत अधिवचन। हेतुफल हि यस्मा हेतु-अनुसारेन अरियति अधिगमियति सम्पापुणियत्ति, तस्मा अत्थो ति वुच्चति। पभेदत्तो पन यं किञ्चि पच्चयसम्भूतं, निब्बानं, भासितत्थो, विपाको, किरिया ति—इमे पञ्च धम्मा अत्थो ति वेदितब्बा। त अत्थ पच्चवेक्खन्तस्स तस्मिं अत्थे पभेदगतं ञाणं **अत्थपटिसम्भिदा**। (१)

धम्मो ति पि सङ्खेपतो पच्चयस्सेत अधिवचन। पच्चयो हि यस्मा तं त दहति पवत्तेति वा, सम्पापुणितुं वा देति, तस्मा धम्मो ति वुच्चति। पभेदतो पन यो कोचि फलनिब्बत्तको हेतु, अरियमग्गो, भासितं, कुसल, अकुसल ति—इमे पञ्च धम्मा धम्मो ति वेदितब्बा। तं धम्मं पच्चवेक्खन्तस्स तस्मिं धम्मे पभेदगत ञाण **धम्मपटिसम्भिदा**। अयमेव हि अत्थो **अभिधम्मे**—

"दुक्खे ञाण अत्थपटिसम्भिदा। दुक्खसमुदये ञाण धम्मपटिसम्भिदा। हेतुम्हि ञाण धम्मपटिसम्भिदा। हेतुफले ञाण अत्थपटिसम्भिदा। ये धम्मा जाता भूता सञ्जाता निब्बत्ता अभिनिब्बत्ता पातुभूता, इमेसु धम्मेसु ञाणं अत्थपटिसम्भिदा। यम्हा धम्मा ते धम्मा जाता भूता सञ्जाता निब्बत्ता अभिनिब्बत्ता पातुभूता, तेसु धम्मेसु ञाण धम्मपटिसम्भिदा। जरामरणे ञाणं अत्थपटिसम्भिदा। जरामरणसमुदये ञाणं धम्मपटिसम्भिदा···पे०···सङ्खार-निरोधे ञाणं अत्थपटिसम्भिदा। सङ्खारनिरोधगामिनिया पटिपदाय ञाणं धम्मपटिसम्भिदा। इध भिक्खु धम्मं जानाति, सुत्तं, गेय्यं···पे०···वेदल्लं, अय वुच्चति—धम्मपटिसम्भिदा। सो तस्स तस्सेव भासितस्स अत्थं जानाति—'अयं इमस्स भासितस्स अत्थो', 'अयं इमस्स भासितस्स अत्थो' ति। अयं वुच्चति—अत्थपटिसम्भिदा। कतमे धम्मा कुसला? यस्मिं समये कामावचरं कुसलं चित्तं उप्पन्नं होति···पे०···इमे धम्मा कुसला। इमेसु धम्मेसु ञाणं धम्मपटिसम्भिदा। तेसं विपाके ञाणं अत्थपटिसम्भिदा" (अभि० २–३५०) ति **आदिना नयेन विभजित्वा दस्सितो**। (२)

तत्रधम्मनिरुत्ताभिलापे ञाणं ति। तस्मिं अत्थे च धम्मे च या सभावनिरुत्ति[1] अब्यभिचारी वोहारो, तदभिलापेतस्स भासने उदीरणे, तं भासितं लपितं उदीरितं सुत्वा व 'अयं सभावनिरुत्ति, अय न सभावनिरुत्ती' ति एव तस्सा धम्मनिरुत्तिसञ्ञिताय सभावनिरुत्तिया = मागधिकाय सब्बसत्तानं मूलभासाय पभेदगतं ञाणं **निरुत्तिपटिसम्भिदा**। निरुत्तिपटिसम्भिदाप्पत्तो हि 'फस्सो वेदना' ति एवमादिवचन सुत्वा व 'अयं सभावनिरुत्ती' ति जानाति, 'फस्सा वेदनो' ति एवमादिकं पन 'अयं न सभावनिरुत्ती' ति। (३)

ञाणेसु ञाणं ति। सब्बत्थ ञाणमारम्मणं कत्वा पच्चवेक्खन्तस्स ञाणारम्मण ञाणं, यथावुत्तेसु वा तेसु ञाणेसु सगोचरकिच्चादिवसेन वित्थारतो ञाणं **पटिभानपटिसम्भिदा** ति अत्थो। (४)

१३ **चतस्सो** पि चेता पटिसम्भिदा द्वीसु ठानेसु पभेदं गच्छन्ति—सेक्खभूमियं च, असेक्खभूमिय च।

तत्थ अग्गसावकानं महासावकानं च **असेक्खभूमियं** पभेदगता। आनन्दत्थेरचित्तगहपति-धम्मिकउपासक-उपालिगहपति-खुज्जुत्तराउपासिकादीनं **सेक्खभूमियं**।

एवं द्वीसु भूमिसु पभेदं गच्छन्तियो पि चेता—अधिगमेन, परियत्तिया, सवनेन, परिपुच्छाय, पुब्बयोगेन चा ति इमेहि पञ्चहाकारेहि विसदा होन्ति।

१४. तत्थ **अधिगमो** नाम अरहत्तप्पत्ति। **परियत्ति** नाम बुद्धवचनस्स परियापुणनं। **सवनं** नाम सक्कच्चं अट्ठिं कत्वा सद्धम्मसवनं। **परिपुच्छा** नाम पाळिअट्ठकथादीसु गण्ठिपद-अत्थपदविनिच्छयकथा[2]। **पुब्बयोगो** नाम पुब्बबुद्धान सासने गतपच्चागतिकभावेन याव अनुलोमं गोत्रभुसमीपं[3] ताव विपस्सनानुयोगो।

१५. अपरे आहु—

"पुब्बयोगो बाहुसच्चं देसभासा च आगमो।
परिपुच्छा अधिगमो गरुसन्निस्सयो तथा।
मित्तसम्पत्ति चेवा ति पटिसम्भिदपच्चया" ति।

तत्थ **पुब्बयोगो** वुत्तनयो व। **बाहुसच्चं** नाम तेसु तेसु सत्थेसु च सिप्पाय-

---

१. **सभावनिरुत्ती** ति। अविपरीतनिरुत्ती ति **अत्थो**। सा पनायं सभावनिरुत्ति मागधभासा।

२. यस्स हि पदस्स अत्थो दुविञ्ञेय्यो, तं **गण्ठिपदं**, यस्स अधिप्पायो दुविञ्ञेय्यो, तं **अत्थपदं**।

३. **याव अनुलोमंगोत्रभुसमीपं** ति सङ्खारुपेक्खाञाणमाह। तं हि तेसं समीपप्पवत्तं।

तनेसु च कुसलता। **देसभासा** नाम एकसतवोहारकुसलता। विसेसेन पन मागधिके कोसल्ल। **आगमो** नाम अन्तमसो ओपम्मवग्गमत्तस्स[1] पि बुद्धवचनस्स परियापुणन। **परिपुच्छा** नाम एकगाथाय पि अत्थविनिच्छयपुच्छन **अधिगमो** नाम सोतापन्नता वा पे० अरहत्तं वा। **गरुसन्निस्सयो** नाम सुतपटिभान-बहुलान गरूनं सन्तिके वासो। **मित्तसम्पत्ति** नाम तथारूपान येव मित्तानं पटिलाभो ति।

१६ तत्थ बुद्धा च पच्चेकबुद्धा च पुब्बयोग चेव अधिगम च निस्साय पटिसम्भिदा पापुणन्ति। सावका सब्बानि पि एतानि कारणानि। पटिसम्भिदा-प्पत्तिया च पाटियेक्को कम्मट्ठानभावनानुयोगो नाम नत्थि। सेक्खानं पन सेक्खफलविमोक्खन्तिका, असेक्खान असेक्खफलविमोक्खन्तिका व पटिसम्भि-दाप्पत्ति होति। तथागतान हि दसबलानि विय अरियानं अरियफलेनेव पटि-सम्भिदा इज्झन्ती ति। इमा पटिसम्भिदा सन्धाय वुत्त—चतुपटिसम्भिदावसेन चतुब्बिधा ति।

पञ्ञाभूमि-मूल-सरीरववत्थानं

१७. **कथं भावेतब्बा** ति। एत्थ पन यस्मा इमाय पञ्ञाय खन्धायतन-धातु-इन्द्रियसच्च-पटिच्चसमुप्पादादिभेदा धम्मा **भूमि**। सीलविसुद्धि चेव, चित्तविसुद्धि चा ति इमा द्वे विसुद्धियो **मूलं**। दिट्ठिविसुद्धि, कङ्खावितरणविसुद्धि, मग्गा-मग्गञाणदस्सनविसुद्धि, पटिपदाञाणदस्सनविसुद्धि, ञाणदस्सनविसुद्धी ति इमा पञ्च विसुद्धियो **सरीरं**। तस्मा तेसु भूमिभूतेसु धम्मेसु उग्गहपरिपुच्छावसेन ञाणपरिचय कत्वा मूलभूता द्वे विसुद्धियो सम्पादेत्वा सरीरभूता पञ्च विसुद्धियो सम्पादेन्तेन भावेतब्बा। अयमेत्थ सङ्खेपो।

१८ अय पन वित्थारो—यं ताव वुत्त "खन्धायतनधातुन्द्रियसच्चपटिच्च-समुप्पादादिभेदा धम्मा भूमी"ति, एत्थ **खन्धा** ति पञ्च खन्धा—१. रूपक्खन्धो, २ वेदनाक्खन्धो, ३. सञ्ञाक्खन्धो, ४ सङ्खारक्खन्धो, ५. विञ्ञाण-क्खन्धो ति।

रूपक्खन्धकथा

१९. तत्थ यं किञ्चि सीतादीहि रुप्पनलक्खणं धम्मजातं, सब्बं तं एकतो कत्वा रूपक्खन्धो ति वेदितब्बं।

२०. तदेतं रुप्पनलक्खणेन एकविधं पि भूतोपादायभेदतो दुविधं।

तत्थ **भूतरूपं** चतुब्बिधं—पथवीधातु, आपोधातु, तेजोधातु, वायोधातू ति।

---

१. धम्मपदे यमकवग्गो व **ओपम्मवग्गो** ति केचि वदन्ति। मूलपण्णासे (म० १–२५६) यमकवग्गो **ओपम्मवग्गो** एवा ति अपरे।

तासं लक्खणरसपच्चुपट्ठानानि चतुधातुववत्थाने[1] वुत्तानि। पदट्ठानतो पन ता सब्बा पि अवसेसधातुत्तयपदट्ठाना।

२१. **उपादायरूपं** चतुवीसतिविधं—चक्खु, सोतं, घान, जिव्हा, कायो, रूपं, सद्दो, गन्धो, रसो, इत्थिन्द्रियं, पुरिसिन्द्रिय, जीवितिन्द्रियं, हदयवत्थु, कायविञ्ञत्ति, वचीविञ्ञत्ति, आकासधातु, रूपस्स लहुता, रूपस्स मुदुता, रूपस्स कम्मञ्ञता, रूपस्स उपचयो, रूपस्स सन्तति, रूपस्स जरता, रूपस्स अनिच्चता, कबळीकारो आहारो ति।

तत्थ रूपाभिघातारहभूतप्पसादलक्खणं, दट्ठुकामतानिदानकम्मसमुट्ठान-भूतप्पसादलक्खणं वा **चक्खु**, रूपेसु आविञ्छनरसं, चक्खुविञ्ञाणस्स आधार-भावपच्चुपट्ठान, दट्ठुकामतानिदानकम्मजभूतपदट्ठान। (१)

सद्दाभिघातारहभूतप्पसादलक्खणं, सोतुकामतानिदानकम्मसमुट्ठानभूतप्प-सादलक्खणं वा **सोतं**, सद्देसु आविञ्छनरसं, सोतविञ्ञाणस्स आधारभावपच्चु-पट्ठान, सोतुकामदानिदानकम्मजभूतपदट्ठान। (२)

गन्धाभिघातारहभूतप्पसादलक्खण, घायितुकामतानिदानकम्मसमुट्ठानभूतप्प-सादलक्खण वा **घानं**, गन्धेसु आविञ्छनरसं, घानविञ्ञाणस्स आधारभावपच्चु-पट्ठानं, घायितुकामतानिदानकम्मजभूतपदट्ठानं। (३)

रसाभिघातारहभूतप्पसादलक्खणा, सायितुकामतानिदानकम्मसमुट्ठान-भूतप्पसादलक्खणा वा **जिव्हा**, रसेसु आविञ्छन्नरसा, जिव्हाविञ्ञाणस्स आधारभावपच्चुपट्ठाना, सायितुकामतानिदानकम्मजभूतपदट्ठाना। (४)

फोट्ठब्बाभिघातारहभूतप्पसादलक्खणो, फुसितुकामतानिदानकम्मसमु-ट्ठानभूतप्पसादलक्खणो वा **कायो**, फोट्ठब्बेसु आविञ्छन्नरसो, कायविञ्ञा-णस्स आधारभावपच्चुपट्ठानो, फुसितुकामतानिदानकम्मजभूतपदट्ठानो। (५)

२२ केचि पन "तेजाधिकानं भूतानं पसादा चक्खु, वायुपथवीआपाधिकानं भूतानं पसादा सोतघानजिव्हा, कायो सब्बेस पी" ति वदन्ति[2]। अपरे तेजाधि-कानं पसादो चक्खु, विवर-वायु-आप-पथवाधिकान सोतघानजिव्हाकाया"ति वदन्ति। ते वत्तब्बा—"सुत्त आहरथा"ति ? अद्धा सुत्तमेव न दक्खिस्सन्ति।

केचि पनेत्थ—"तेजादीनं गुणेहि रूपादीहि अनुगय्हभावतो" ति कारणं दस्सेन्ति। ते वत्तब्बा—"को पनेवमाह—रूपादयो तेजादीनं गुणा ति ? अवि-निब्भोगवुत्तीसु हि भूतेसु—'अयं इमस्स गुणो, अय इमस्स गुणो' ति न लब्भा वत्तुं" ति।

---

१. समाधिनिद्देसे एकादसमे परिच्छेदे त्यत्थो।

२. महासघिकेसु एकच्चे थेरा, वसुधम्मादयो ति सेसो।

अथापि वदेय्युं[1]—"यथा तेसु तेसु सम्भारेसु तस्स तस्स भूतस्स अधिकताय पथवीआदीनं सन्धारणादीनि किच्चानि इच्छथ, एवं तेजादिअधिकेसु सम्भारेसु रूपादीनं अधिकभावदस्सनतो इच्छितब्बमेतं रूपादयो तेसं गुणा" ति। ते वत्तब्बा—"इच्छेय्याम यदि आपाधिकस्स आसवस्स गन्धतो पथवीअधिके कप्पासे गन्धो अधिकतरो सिया, तेजाधिकस्स च उण्होदकस्स वण्णतो सीतूदकस्स वण्णो परिहायेथ"।

यस्मा पनेत उभयं पि नत्थि, तस्मा पहायेतं एतेस निस्सयभूतानं विसेसकप्पनं, "यथा अविसेसे पि एककलापे भूतानं रूपरसादयो अञ्ञमञ्ञं विसदिसा होन्ति, एवं चक्खुपसादादयो अविज्जमाने पि अञ्ञस्मि विससेकारणे" ति गहेतब्बमेतं।

किं पन तं यं अञ्ञमञ्ञस्स असाधारणं? कम्ममेव नेस विसेसकारणं। तस्मा कम्मविसेसतो एतेसं विसेसो, न भूतविसेसतो। भूतविसेसे हि सति पसादो व न उप्पज्जति। समानानं हि पसादो, न विसमानानं ति **पोराणा**।

एवं कम्मविसेसतो विसेसवन्तेसु च एतेसु चक्खुसोतानि **असम्पत्तविसयगाहकानि**, अत्तनो निस्सयं अनल्लीननिस्सये एव विसये विञ्ञाणहेतुत्ता। घानजिव्हाकाया **सम्पत्तविसयगाहका**, निस्सयवसेन चेव सयं च अत्तनो निस्सयं अल्लीने येव विसये विञ्ञाणहेतुत्ता।

चक्खु चेत्थ यदेत लोके नीलपखुमसमाकिण्णंकण्हसुक्कमण्डलविचित्तं नीलुप्पलदलसन्निभं चक्खू ति वुच्चति। तस्स ससम्भारचक्खुनो सेतमण्डलपरिक्खित्तस्स कण्हमण्डलस्स मज्झे अभिमुखे ठितानं सरीरसण्ठानुप्पत्तिपदेसे, सत्तसु पिचुपटलेसु आसित्ततेलं पिचुपटलानि विय, सत्त अक्खिपटलानि ब्यापेत्वा, धारण-न्हापन-मण्डन-बीजनकिच्चाहि चतूहि धातीहि खत्तियकुमारो विय, सन्धारण-बन्धन-परिपाचन-समुदीरणकिच्चाहि चतूहि धातूहि कतूपकार उतुचित्ताहारेहि उपत्थम्भियमानं आयुना अनुपालियमानं, वण्णगन्धरसादीहि परिवुत पमाणतो ऊकासिरमत्तं चक्खुविञ्ञाणादीनं यथारह वत्थुद्वारभावं साधयमानं तिट्ठति।

वुत्तं चेतं **धम्मसेनापतिना**—

"येन चक्खुपसादेन रूपानि मनुपस्सति।
परित्तं सुखुमं एत ऊकासिरसमूपमं" ति॥

---

१. "रूपादिविसेसगुणेहि तेजआकासपथवीआपवायूहि चक्खादीनि कतानी" ति वदन्तस्स **कणादस्स** वाद उद्धरित्वा त निग्गहेतुं "**अथा पि वदेय्युं**" ति आदि वुत्तं ति दट्ठब्बं।

ससम्भारसोतबिलस्स अन्तो तनुतम्बलोमाचिते अङ्गुलवेधकसण्ठाने पदेसे **सोतं**, वुत्तप्पकाराहि धातूहि कतूपकारं उतुचित्ताहारेहि उपत्थम्भियमान आयुना अनुपालियमान वण्णादीहि परिवुत सोतविञ्ञाणादीन यथारह वत्थुद्वारभाव साधयमान तिट्ठति।

ससम्भारघानबिलस्स अन्तो अजपदसण्ठाने[1] पदेसे **घानं** यथावुत्तप्पकारुपकारुपत्थम्भनानुपालनपरिवार घानविञ्ञाणादीनं यथारहं वत्थुद्वारभावं साधयमानं तिट्ठति।

ससम्भारजिव्हामज्झस्स उपरि उप्पलदलग्गसण्ठाने पदेसे **जिव्हा** यथावुत्तप्पकारुपकारुपत्थम्भनानुपालनपरिवारा जिव्हाविञ्ञाणादीन यथारहं वत्थुद्वारभावं साधयमाना तिट्ठति।

यावता पन इमस्मिं काये उपादिण्णरूप नाम अत्थि, सब्बत्थ **कायो** कप्पासपटले स्नेहो विय वुत्तप्पकारुपकारुपत्थम्भनानुपालनपरिवारो व हुत्वा कायविञ्ञाणादीन यथारह वत्थुद्वारभावं साधयमानो तिट्ठति।

वम्मिकउदकाकासगामसीवथिकसङ्खातसगोचरनिन्ना विय च अहि-सुंसुमार-पक्खी-कुक्कुर-सिङ्गाला रूपादिसगोचरनिन्ना व एते चक्खादयो ति दट्ठब्बा॥

ततो परेसु पन रूपादीसु—चक्खुपटिहननलक्खणं **रूपं**, चक्खुविञ्ञाणस्स विसयभावरस, तस्सेव गोचरपच्चुपट्ठान, चतुमहाभूतपदट्ठानं। यथा चेतं तथा सब्बानि पि उपादारूपानि। यत्थ पन विसेसो अत्थि, तत्थ वक्खाम। तयिदं नीलं, पीतकं ति आदिवसेन अनेकविधं। (६)

सोतपटिहननलक्खणो **सद्दो**, सोतविञ्ञाणस्स विसयभावरसो, तस्सेव गोचरपच्चुपट्ठानो, भेरिसद्दो मुदिङ्गसद्दो ति आदिना नयेन अनेकविधो। (७)

घानपटिहननलक्खणो **गन्धो**, घानविञ्ञाणस्स विसयभावरसो, तस्सेव गोचरपच्चुपट्ठानो, मूलगन्धो सारगन्धो ति आदिना नयेन अनेकविधो। (८)

जिव्हापटिहननलक्खणो **रसो**, जिव्हाविञ्ञाणस्स विसयभावरसो, तस्सेव गोचरपच्चुपट्ठानो, मूलरसो खन्धरसो ति आदिना नयेन अनेकविधो। (९)

इत्थिभावलक्खणं **इत्थिन्द्रियं**, इत्थी ति पकासनरसं, इत्थिलिङ्गनिमित्तकुत्ताकप्पानं कारणभावपच्चुपट्ठान। (१०)

पुरिसभावलक्खणं **पुरिसिन्द्रियं**, पुरिसो ति पकासनरस, पुरिसलिङ्गनिमित्तकुत्ताकप्पानं कारणभावपच्चुपट्ठानं। तदुभयं पि कायप्पसादो विय सकलसरीरं ब्यापकमेव, न च कायपसादेन ठितोकासे ठितं ति वा अट्ठितोकासे ठितं ति वा ति वत्तब्बतं आपज्जति, रूपरसादयो विय अञ्ञमञ्ञ सङ्करो नत्थि। (११)

---

१. अजपदसण्ठाने ति। अजपदसदिसे।

सहजरूपानुपालनलक्खणं **जीवितिन्द्रियं**, तेसं पवत्तनरसं, तेसं येव ठपनपच्चुपट्ठानं, यापयितब्बभूतपदट्ठान। सन्ते पि च अनुपालनलक्खणादिम्हि विधाने अत्थिक्खणे येव त सहजरूपानि अनुपालेति, उदक विय उप्पलादीनि। यथासक पच्चयुप्पन्ने पि च धम्मे पालेति, धाती विय कुमार। सयं पवत्तितधम्मसम्बन्धेनेव च पवत्तति, नियामको विय। न भङ्गतो उद्धं पवत्तति, अत्तनो च पवत्तयितब्बानं च अभावा। न भङ्गक्खणे ठपेति, सय भिज्जमानत्ता। खीयमानो विय वट्टिस्नेहो दोपसिखं। न च अनुपालन-पवत्तन-ट्ठपनानुभावविरहितं, यथावुत्तक्खणे तस्स तस्स साधनतो ति दट्ठब्ब। (१२)

मनोधातु-मनोविञ्ञाणधातून निस्सयलक्खण **हदयवत्थु**, तास येव धातून आधारणरस, उब्बहनपच्चुपट्ठान, हदयस्स अन्तो कायगतासतिकथाय वुत्तप्पकार लोहित निस्साय सन्धारणादिकिच्चे भूतेहि कतूपकार उतुचित्ताहारेहि उपत्थम्भियमान आयुना अनुपालियमान मनोधातुमनोविञ्ञाणधातून चेव तसम्पयुत्तधम्मानं च वत्थुभाव साधयमान तिट्ठति। (१३)

अभिक्कमादिपवत्तकचित्तसमुट्ठानवायोधातुया सहजरूपकायथम्भन-सन्धारण-चलनस्स पच्चयो आकारविकारो **कायविञ्ञत्ति**, अधिप्पायपकासनरसा, कायविप्फन्दनहेतुभावपच्चुपट्ठाना, चित्तसमुट्ठानवायोधातुपदट्ठाना। सा पनेसा कायविप्फन्दनेन अधिप्पायविञ्ञापनहेतुत्ता सयं च तेन कायविप्फन्दनसङ्खातेन कायेन विञ्ञेय्यत्ता कायविञ्ञत्ती ति वुच्चति। ताय च पन चलितेहि चित्तजरूपेहि अभिसम्बन्धानं उतुजादीन पि चलनतो अभिक्कमादयो पवत्तन्ती ति वेदितब्बा। (१४)

वचीभेदपवत्तकचित्तसमुट्ठानपथवीधातुया उपादिण्णघट्टनस्स पच्चयो आकारविकारो **वचीविञ्ञत्ति**, अधिप्पायप्पकासनरसा, वचीघोसहेतुभावपच्चुपट्ठाना, चित्तसमुट्ठानपथवीधातुपदट्ठाना। सा पनेसा वचीघोसेन अधिप्पायविञ्ञापनहेतुत्ता सय च ताय वचीघोससङ्खाताय वाचाय विञ्ञेयत्ता वचीविञ्ञत्ती ति वुच्चति। यथा हि अरञ्ञे उस्सापेत्वा बद्धं गोसीसादिउदकनिमित्तं दिस्वा 'उदकमेत्थ अत्थी' ति विञ्ञायति, एवं कायविप्फन्दनं चेव वचीघोसं च गहेत्वा कायवचीविञ्ञत्तियो पि विञ्ञायन्ति (१५)

रूपपरिच्छेदलक्खणा **आकासधातु**, रूपपरियन्तप्पकासनरसा, रूपमरियादापच्चुपट्ठाना, असम्फुट्ठभावच्छिद्दविवरभावपच्चुपट्ठाना वा, परिच्छिन्नरूपपदट्ठाना। याय परिच्छिन्नेसु रूपेसु 'इदमितो उद्धमधो तिरिय' ति च होति। (१६)

अदन्धतालक्खणा **रूपस्स लहुता**, रूपानं गरुभावविनोदनरसा, लहुपरिवत्तिता पच्चुपट्ठाना, लहुरूपपदट्ठाना। (१७)

अथद्धतालक्खणा **रूपस्स मुदुता**, रूपानं थद्धभावविनोदनरसा, सब्बकिरियासु अविरोधितापच्चुपट्ठाना, मुदुरूपपदट्ठाना। (१८)

सरीरकिरियानुकूलकम्मञ्ञभावलक्खणा **रूपस्स कम्मञ्ञता**, अकम्मञ्ञताविनोदनरसा, अदुब्बलभावपच्चुपट्ठाना, कम्मञ्ञरूपपदट्ठाना। (१९)

एता पन तिस्सो न अञ्ञमञ्ञं विजहन्ति, एवं सन्ते पि यो अरोगिनो विय रूपानं लहुभावो अदन्धता लहुपरिवत्तिप्पकारो रूपदन्धत्ताकरधातुक्खोभपटिपक्खपच्चयसमुट्ठानो, सो रूपविकारो **रूपस्स लहुता**। यो पन सुपरिमद्दितचम्मस्सेव रूपानं मुदुभावो, सब्बकिरियाविसेसेसु वसवत्तनभावमद्दवप्पकारो रूपत्थद्धत्ताकरधातुक्खोभपटिपक्खपच्चयसमुट्ठानो, सो रूपविकारो **रूपस्स मुदुता**। यो पन सुधन्तसुवण्णस्सेव रूपानं कम्मञ्ञभावो सरीरकिरियानुकूलभावप्पकारो सरीरकिरियानं अननुकूलकरधातुक्खोभपटिपक्खपच्चयसमुट्ठानो, सो रूपविकारो **रूपस्स कम्मञ्ञता** ति। एवमेतासं विसेसो वेदितब्बो।

आचयलक्खणो **रूपस्स उपचयो**, पुब्बन्ततो रूपानं उम्मुज्जापनरसो, निय्यातनपच्चुपट्ठानो, परिपुण्णभावपच्चुपट्ठानो वा, उपचितरूपपदट्ठानो। (२०)

पवत्तिलक्खणा **रूपस्स सन्तति**, अनुप्पबन्धनरसा, अनुपच्छेदपच्चुपट्ठाना, अनुप्पबन्धकरूपपदट्ठाना। (२१)

उभयं पेतं जातिरूपस्सेवाधिवचनं। आकारनानत्ततो पन वेनेय्यवसेन च— "उपचयो सन्तती" (अभि० १-१७६) ति उद्देसदेसना कता। यस्मा पनेत्थ अत्थतो नानत्तं नत्थि, तस्मा इमेस पदानं निद्देसे—"यो आयतनानं आचयो, सो रूपस्स उपचयो। यो रूपस्स उपचयो, सा रूपस्स सन्तती" (अभि० १-१७४) ति वुत्तं।

अट्ठकथायं पि—"आचयो नाम निब्बत्ति, उपचयो नाम वड्ढि, सन्तति नाम पवत्ती" ति वत्वा "नदीतीरे खतकूपकम्हि उदकुग्गमनकालो विय आचयो निब्बत्ति, परिपुण्णकालो विय उपचयो वड्ढि, अज्झोत्थरित्वा गमनकालो विय सन्तति पवत्ती" ति उपमा कता। उपमावसाने च "एवं किं कथितं होति? आयतनेन आचयो कथितो, आचयेन आयतनं कथितं" ति वुत्त। तस्मा या रूपानं पठमाभिनिब्बत्ति, सा आचयो। या तेसं उपरि अञ्ञेसं पि निब्बत्तमानानं निब्बत्ति, सा वड्ढिआकारेन उपट्ठानतो उपचयो। या तेसं पि उपरि पुनप्पुनं अञ्ञेसं निब्बत्तमानानं निब्बत्ति, सा अनुपबन्धाकारेन उपट्ठानतो सन्तती ति पवुच्चतो ति वेदितब्बा।

रूपपरिपाकलक्खणा **जरता**, उपनयनरसा, सभावानपगमे पि नवभावापगमपच्चुपट्ठाना वीहिपुराणभावो विय, परिपच्चमानरूपपदट्ठाना। खण्डिच्चादिभावेन दन्तादीसु विकारदस्सनतो इदं पाकटजर सन्धाय वुत्त। अरूपधम्मान

पन पटिच्छन्नजरा नाम होति । तस्सा एस विकारो नत्थि, या च पथवी उदकपब्बतचन्दिमसुरियादीसु अवीचिजरा नाम । (२२)

परिभेदलक्खणा **रूपस्स अनिच्चता**, संसीदनरसा, खयवयपच्चुपट्ठाना, परिभिज्जमानरूपपदट्ठाना । (२३)

ओजालक्खणो **कबळीकारो आहारो**, रूपाहरणरसो, उपत्थम्भनपच्चुपट्ठानो, कबळं कत्वा आहरितब्बवत्थुपदट्ठानो । याय ओजाय सत्ता यापेन्ति, तस्सा एतं अधिवचनं । (२४)

इमानि ताव पाळियं आगतरूपानेव । **अट्ठकथायं** पन बलरूपं, सम्भवरूप, जातिरूप, रोगरूप, एकच्चानं[1] मतेन मिद्धरूपं ति एव अञ्ञानि पि रूपानि आहरित्वा—"अद्धा मुनीसो[2] सम्बुद्धो, नत्थि नीवरणा तवा" (खु० १–३५२) ति आदीनि वत्वा मिद्धरूपं ताव नत्थि येवा ति पटिक्खित्तं । इतरेसु रोगरूपं जरताअनिच्चताग्गहणेन गहितमेव, जातिरूप उपचयसन्ततिग्गहणेन, सम्भवरूपं आपोधातुग्गहणेन, बलरूपं वायोधातुग्गहणेन गहितमेव, तस्मा तेसु एकं पि विसु नत्थी ति सन्निट्ठान कतं । इति इद चतुवीसतिविधं उपादारूपं पुब्बे वुत्तं चतुब्बिधं भूतरूपं च ति अट्ठवीसतिविधं रूपं होति अनूनमनधिकं ॥

२३. तं सब्बं पि "न हेतु, अहेतुकं हेतुविप्पयुतं, सप्पच्चय, लोकियं सासवमेवा" (अभि० १–१४७) ति आदिना नयेन एकविधं ।

२४ अज्झत्तिकं बाहिरं, ओळारिकं सुखुमं, दूरे सन्तिके, निप्फन्नं अनिप्फन्नं, पसादरूपं नपसादरूप, इन्द्रिय अनिन्द्रिय, उपादिण्णं अनुपादिण्ण ति आदिवसेन दुविधं ।

तत्थ चक्खादिपञ्चविधं अत्तभावं अधिकिच्च पवत्तत्ता **अज्झत्तिकं**, सेसं ततो बाहिरत्ता **बाहिरं** । चक्खादीनि नव, आपोधातुवज्जिता तिस्सो धातुयो चा ति द्वादसविसं घट्टनवसेन गहेतब्बतो **ओळारिकं**, सेसं ततो विपरीतत्ता **सुखुमं** । य सुखुमं तदेव दुप्पटिविज्झसभावत्ता **दूरे**, इतरं सुप्पटिविज्झसभावत्ता **सन्तिके** । चतस्सो धातुयो, चक्खादीनि तेरस, कबळीकाराहारो चा ति अट्ठारसविधं रूपं परिच्छेदविकारलक्खणभावं अतिक्कमित्वा सभावेनेव परिग्गहेतब्बतो **निप्फन्नं**, सेसं तब्बिपरीतताय **अनिप्फन्नं** । चक्खादि पञ्चविध रूपादीनं गहणपच्चयभावेन आदासतलं विय विप्पसन्नत्ता **पसादरूपं**, इतर ततो विपरीतत्ता **नपसादरूपं** । पसादरूपमेव इत्थिन्द्रियादित्तयेन सद्धिं अधिपतियट्ठेन **इन्द्रियं**, सेसं ततो विपरीतत्ता **अनिन्द्रियं** । यं कम्मजं ति परतो वक्खाम, तं कम्मेन उपादिण्णत्ता **उपादिण्णं** । सेसं ततो विपरीतत्ता **अनुपादिण्णं** ।

---

१ **एकच्चान** ति अभयगिरिवासीनं ।　　२. मुनीसी ति सब्बत्थ मुद्दितो पाठो ।

२५. पुन सब्बमेव रूपं सनिदस्सनकम्मजादीनं तिकान वसेन तिविध होति। तत्थ ओळारिके रूप सनिदस्सनसप्पटिघं, सेस अनिदस्सनसप्पटिघ। सब्ब पि सुखुमं अनिदस्सनअप्पटिघं। एव ताव सनिदस्सनत्तिकवसेन तिविध।

कम्मजादित्तिकवसेन पन—कम्मतो जात कम्मज, तदञ्ञपच्चयजातं अकम्मजं, नकुतोचिजातं नेव कम्मजं नाकम्मज। चित्ततो जातं चित्तजं, तदञ्ञपच्चयजात अचित्तजं, नकुतोचिजातं नेव चित्तजं, नाचित्तज। आहारतो जातं आहारजं, तदञ्ञपच्चयजातं अनाहारज नकुतोचिजात नेव आहारजं न अनाहारजं। उतुतो जातं उतुज, तदञ्ञपच्चयजातं अनुतुज, नकुतोचिजातं नेव उतुजं न अनुतुज ति। एवं कम्मजादित्तिकवसेन तिविध।

२६. पुन दिट्ठादिरूपरूपादिवत्थादिचतुक्कवसेन चतुब्बिध। तत्थ रूपायतनं दिट्ठं नाम दस्सनविसयत्ता, सद्दायतनं सुत नाम सवनविसयत्ता, गन्धरसफोट्ठब्बत्तयं मुत नाम सम्पत्तगाहकइन्द्रियविसयत्ता, सेस विञ्ञातं नाम विञ्ञाणस्सेव विसयत्ता ति। एवं ताव दिट्ठादिचतुक्कवसेन चतुब्बिधं।

निप्फन्नरूप पनेत्थ **रूपरूपं** नाम, आकासधातु **परिच्छेदरूपं** नाम, कायविञ्ञत्तिआदिकम्मञ्ञतापरियन्तं **विकाररूपं** नाम, जातिजराभङ्ग **लक्खणरूपं** नामा ति। एव रूपरूपादिचतुक्कवसेन चतुब्बिध।

यं पनेत्थ हृदयरूपं नाम, त **वत्थु** न द्वारं। विञ्ञत्तद्वय **द्वारं** न वत्थु। पसादरूप **वत्थु** चेव **द्वारं च**, सेस **नेव वत्थु न द्वारं** ति एवं वत्थादिचतुक्कवसेन चतुब्बिधं।

२७. पुन एकजं, द्विजं, तिजं, चतुजं, नकुतोचिजातं इमेसं वसेन पञ्चविधं। तत्थ कम्मजमेव चित्तजमेव च एकजं नाम। तेसु सद्धि हृदयवत्थुना इन्द्रियरूपं **कम्मजमेव**, विञ्ञत्तिद्वय **चित्तजमेव**। यं पन चित्ततो च उतुतो च जात त **द्विजं** नाम, तं सद्दायतनमेव। य उतुचित्ताहारेहि जातं तं **तिजं** नाम, तं पन लहुतादित्तयमेव। य चतूहि पि कम्मादीहि जातं तं **चतुजं** नाम, त लक्खणरूपवज्जं अवसेसं होति।

लक्खणरूपं पन **नकुतोचिजातं**। कस्मा? न हि उप्पादस्स उप्पादो अत्थि। उप्पन्नस्स च परिपाकभेदमत्तं इतरद्वयं। "रूपायतनं, सद्दायतन, गन्धायतन, रसायतनं, फोट्ठब्बायतनं, आकासधातु, आपोधातु, रूपस्स लहुता, रूपस्स मुदुता, रूपस्स कम्मञ्ञता, रूपस्स उपचयो, रूपस्स सन्तति, कबळीकारो आहारो—इमे धम्मा चित्तसमुट्ठाना" (अभि० १-३६५) ति आदीसु जातिया कुतोचिजातत्तं अनुञ्ञातं, त रूपजनकपच्चयानं किच्चानुभावक्खणे दिट्ठत्ता ति वेदितब्बं॥

इदं ताव रूपक्खन्धे वित्थारकथामुखं॥

विञ्ञाणक्खन्धकथा

२८. इतरेसु पन यंकिञ्चि वेदयितलक्खण सब्बं तं एकतो कत्वा वेदनाक्खन्धो, यंकिञ्चि सञ्जाननलक्खणं सब्बं त एकतो कत्वा सञ्ञाक्खन्धो, यंकिञ्चि अभिसङ्खरणलक्खणं सब्बं तं एकतो कत्वा सङ्खारक्खन्धो, यंकिञ्चि विजाननलक्खण सब्बं तं एकतो कत्वा विञ्ञाणक्खन्धो वेदितब्बो। तत्थ यस्मा विञ्ञाणक्खन्धे विञ्ञाते इतरे सुविञ्ञेय्या होन्ति, तस्मा विञ्ञाणक्खन्धं आदिं कत्वा वण्णनं करिस्साम।

"यंकिञ्चि विजाननलक्खणं, सब्बं तं एकतो कत्वा विञ्ञाणक्खन्धो वेदितब्बो" ति हि (३७३ पिट्ठे) वुत्तं। किं च विजाननलक्खण विञ्ञाणं? यथाह—"विजानाति विजानाती ति खो, आवुसो, तस्मा विञ्ञाणं ति वुच्चती" (म० १-३६१) ति। विञ्ञाण, चित्त मनो ति अत्थतो एकं। तदेतं विजाननलक्खणेन सभावतो एकविधं पि जातिवसेन तिविध—कुसलं, अकुसल अब्याकतं च।

२९. तत्थ कुसल भूमिभेदतो चतुब्बिधं—कामावचरं, रूपावचरं, अरूपावचरं, लोकुत्तरं च।

तत्थ **कामावचरं** सोमनस्सुपेक्खा-ञाण-सङ्खारभेदतो अट्ठविधं। सेय्यथीदं—सोमनस्ससहगतं ञाणसम्पयुत्त असङ्खारं ससङ्खारं च, तथा ञाणविप्पयुत्तं। उपेक्खासहगत ञाणसम्पयुत्त असङ्खारं ससङ्खारं च, तथा ञाणविप्पयुत्तं।

१. यदा हि देय्यधम्मपटिग्गाहकादिसम्पत्तिं अञ्ञं वा सोमनस्सहेतुं आगम्म हट्ठपहट्ठो "अत्थि दिन्नं" (म० १-३५३) ति आदिनयप्पवत्तं सम्मादिट्ठिं पुरक्खत्वा असंसीदन्तो अनुस्साहितो परेहि दानादीनि पुञ्ञानि करोति, तदास्स चित्तं सोमनस्ससहगतं ञाणसम्पयुत्तं असङ्खार होति। २. यदा पन वुत्तनयेन हट्ठतुट्ठो सम्मादिट्ठिं पुरक्खत्वा अमुत्तचागतादिवसेन संसीदमानो वा परेहि वा उस्साहितो करोति, तदास्स तदेव चित्तं ससङ्खार होति। इमस्मिं हि अत्थे 'सङ्खारो' ति एतं अत्तनो वा परेसं वा वसेन पवत्तस्स पुब्बपयोगस्साधिवचनं। ३. यदा पन ञातिजनस्स पटिपत्तिदस्सनेन जातपरिचया बालदारका भिक्खू दिस्वा सोमनस्सजाता सहसा किञ्चिदेव हत्थगतं ददन्ति वा वन्दन्ति वा, तदा ततियं चित्तं उप्पज्जति। ४. यदा पन "देथ वन्दथा" ति ञातीहि उस्साहिता एव पटिपज्जन्ति, तदा चतुत्थं चित्त उप्पज्जति। ५-८. यदा पन देय्यधम्मपटिग्गाहकादीनं असम्पत्तिं अञ्ञेसं वा सोमनस्सहेतूनं अभावं आगम्म चतूसु पि विकप्पेसु सोमनस्सरहिता होन्ति, तदा सेसानि चत्तारि उपेक्खासहगतानि उप्पज्जन्ती ति। एवं सोमनस्सुपेक्खा-ञाण-सङ्खारभेदतो अट्ठविधं कामावचरकुसलं वेदितब्बं। (१)

विञ्ञाणं लोकियविपाकादिभावतो एकविध। सहेतुकाहेतुकादितो दुविध। भवत्तयपरियापन्नतो वेदनत्तयसम्पयोगतो अहेतुकद्विहेतुकतिहेतुकतो च तिविध। योनि-गतिवसेन चतुब्बिधं पञ्चविध च।

नामरूप विञ्ञाणसन्निस्सयतो कम्पच्चयतो च एकविध। सारम्मणा-नारम्मणतो दुविध। अतीतादितो तिविधं। योनि-गतिवसेन चतुब्बिधं पञ्चविध च।

सळायतन सञ्जातिसमोसरणट्ठानतो। भूतप्पसादविञ्ञाणादितो दुविधं। सम्पत्तासम्पत्तनोभयगोचरतो तिविध। योनि-गतिपरियापन्नतो चतुब्बिधं पञ्च-विध चा ति। इमिना नयेन फस्सादीन पि एकविधादिभावो वेदितब्बो ति।

एवमेत्थ एकविधादितो पि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो ॥ (४)

२३ **अङ्गानं च ववत्थाना** ति। सोकादयो चेत्थ भवचक्कस्स अविच्छेद-दस्सनत्थ वुत्ता। जरामरणब्भाहतस्स हि बालस्स ते सम्भवन्ति। यथाह— "अस्सुतवा, भिक्खवे, पुथुज्जनो सारीरिकाय दुक्खाय वेदनाय फुट्ठो समानो सोचति किलमति परिदेवति उरत्ताळि कन्दति सम्मोहमापज्जती" (स० २–११४) ति। याव च तेस पवत्ति, ताव अविज्जाया ति पुन पि 'अविज्जापच्चया सङ्खारा' ति सम्बन्धमेव होति भवचक्क। तस्मा तेस जरामरणेनेव एकसङ्खेप कत्वा कत्वा द्वादसेव पटिच्चसमुप्पादङ्गानी ति वेदितब्बानि।

एवमेत्थ अङ्गान ववत्थानतो पि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो ॥ (५)

अयं तावेत्थ सङ्खेपकथा ॥

अविज्जापच्चयासङ्खारपदकथा

२४ अयं पन वित्थारनयो—**अविज्जा** ति सुत्तन्तपरियायेन दुक्खादीसु चतूसु ठानेसु अञ्ञाण, अभिधम्मपरियायेन पुब्बन्तादीहि सद्धि अट्ठसु। वुत्त हेतं—"तत्थ कतमा अविज्जा ? दुक्खे अञ्ञाण पे०··· दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अञ्ञाण, पुब्बन्ते अञ्ञाणं, अपरन्ते ···इदप्पच्चयतापटिच्चसमुप्पन्नेसु धम्मेसु अञ्ञाणं" (अभि० १–२४७) ति।

तत्थ किं चापि ठपेत्वा लोकुत्तरं सच्चद्वय सेसट्ठानेसु आरम्मणवसेन पि अविज्जा उप्पज्जति, एवं सन्ते पि पटिच्छादनवसेनेव इध अधिप्पेता। सा हि उप्पन्ना दुक्खसच्चं पटिच्छादेत्वा तिट्ठति, याथावसरसलक्खण पटिविज्झितु न देति, तथा समुदयं, निरोधं, मग्गं, पुब्बन्तसङ्खातं अतीत खन्धपञ्चक, अपरन्तसङ्खातं अनागतं खन्धपञ्चकं, पुब्बन्तापरन्तसङ्खातं तदुभयं, इदप्पचयता-पटिच्चसमुप्पन्नधम्मसङ्खातं इदप्पच्चयत चेव पटिच्चसमुप्पन्नधम्मे च पटिच्छा-देत्वा तिट्ठति। "अयं अविज्जा, इमे सङ्खारा" ति एवं याथावसरसलक्खणमेत्थ

कामावचरं दुविधं—कुसलविपाकं, अकुसलविपाक च। कुसलविपाकं पि दुविधं—अहेतुकं, सहेतुक च।

तत्थ अलोभादिविपाकहेतुविरहित **अहेतुकं**। त चक्खुविञ्ञाण, सोत ˙ घान ˙˙जिव्हा कायविञ्ञाणं, सम्पटिच्छनकिच्चा मनोधातु, सन्तीरणादिकिच्चा द्वे मनोविञ्ञाणधातुयो चा ति अट्ठविध।

३२. तत्थ चक्खुसन्निस्सितरूपविजाननलक्खणं चक्खुविञ्ञाण, रूपमत्तारम्मणरस[1], रूपाभिमुखभावपच्चुपट्ठानं, रूपारम्मणाय किरियमनोधातुया अपगमपदट्ठानं। सोतादिसन्निस्सितसद्दादिविजाननलक्खणानि सोत-घान-जिव्हा-कायविञ्ञाणानि, सद्दादिमत्तारम्मणरसानि, सद्दादिअभिमुखभावपच्चुपट्ठानानि, सद्दारम्मणादीनं किरियमनोधातूनं अपगमपदट्ठानानि।

चक्खुविञ्ञाणादीन अनन्तरं रूपादिविजाननलक्खणा **मनोधातु**, रूपादिसम्पटिच्छनरसा, तथाभावपच्चुपट्ठाना, चक्खुविञ्ञाणादिअपगमपदट्ठाना।

अहेतुकविपाका सळारम्मणविजाननलक्खणा दुविधा पि सन्तीरणादिकिच्चा **मनोविञ्ञाणधातु**, सन्तीरणादिरसा, तथाभावपच्चुपट्ठाना, हृदयवत्थुपदट्ठाना।

सोमनस्सुपेक्खायोगतो पन द्विपञ्चट्ठानभेदतो च तस्सा भेदो। एतासु हि एका एकन्तमिट्ठारम्मणे पवत्तिसब्भावतो सोमनस्ससम्पयुत्ता हुत्वा सन्तीरण-तदारम्मणवसेन पञ्चद्वारे चेव जवनावसाने च पवत्तनतो द्विट्ठाना होति। एका इट्ठमज्झत्तारम्मणे पवत्तिसब्भावतो उपेक्खासम्पयुत्ता हुत्वा सन्तीरण-तदारम्मण-पटिसन्धि-भवङ्ग-चुतिवसेन पवत्तनतो पञ्चट्ठाना होति।

अट्ठविधं पि चेतं अहेतुविपाकविञ्ञाणं नियतानियतारम्मणत्ता दुविधं। उपेक्खासुखसोमनस्सभेदतो तिविधं। विञ्ञाणपञ्चक हेत्थ नियतारम्मणं यथाक्कम रूपादीसु येव पवत्तितो, सेसं अनियतारम्मणं। तत्र हि मनोधातु पञ्चसु पि रूपादीसु पवत्तति, मनोविञ्ञाणधातुद्वयं छसू ति। कायविञ्ञाणं पनेत्थ सुखयुत्तं, द्विट्ठाना मनोविञ्ञाणधातु सोमनस्सयुत्ता, सेसं उपेक्खायुत्तं ति। एवं ताव **कुसलविपाकाहेतुकं** अट्ठविधं वेदितब्ब। (१)

३३. अलोभादिविपाकहेतुसम्पयुत्तं पन **सहेतुकं**। तं कामावचरकुसलं विय सोमनस्सादिभेदतो अट्ठविधं। यथा पन कुसलं दानादिवसेन छसु आरम्मणेसु पवत्तति, न इदं तथा। इदं हि पटिसन्धिभवङ्गचुतितदारम्मणवसेन परित्तधम्मपरियापन्नेसु येव छसु आरम्मणेसु पवत्तति। सङ्खारासङ्खारभावो पनेत्थ आगमनादिवसेन वेदितब्बो। सम्पयुत्तधम्मानं च विसेसे असति पि आदासतला-

१. **रूपमत्तारम्मणरसं** ति। रूपायतनमत्तस्सेव आरम्मणकरणरसं।

दीसु मुखनिमित्तं विय निरुस्साहं विपाकं, मुखं विय सउस्साहं कुसलं ति वेदितब्बं। (२)

३४. केवलं हि अकुसलविपाक अहेतुकमेव। तं चक्खुविञ्ञाणं, सोत-घान-जिव्हा···कायविञ्ञाण, सम्पटिच्छनकिच्चा मनोधातु, सन्तीरणादिकिच्चा पञ्चट्ठाना मनोविञ्ञाणधातू ति सत्तविध। त लक्खणादितो कुसलाहेतुकविपाके वुत्तनयेनेव वेदितब्ब।

३५ केवलं हि कुसलविपाकानि इट्ठइट्ठमज्झत्तारम्मणानि, इमानि अनिट्ठ-अनिट्ठमज्झत्तारम्मणानि। तानि च उपेक्खा-सुख-सोमनस्सभेदतो तिविधानि, इमानि दुक्ख-उपेक्खावसेन दुविधानि। एत्थ हि कायविञ्ञाण दुक्खसहगतमेव, सेसानि उपेक्खासहगतानि। सा च तेसु उपेक्खा हीना, दुक्ख विय नातितिखिणा। इतरेसु उपेक्खा पणीता, सुख विय नातितिखिणा। इति इमेसं सत्तन्न अकुसल-विपाकानं पुरिमानं च सोळसन्नं कुसलविपाकान वसेन **कामावचरं** विपाक-विञ्ञाणं तेवीसतिविधं। (क)

३६. **रूपावचरं** पन कुसलं विय पञ्चविध। कुसलं पन समापत्तिवसेन जवनवीथियं पवत्तति, इदं उपपत्तिय पटिसन्धिभवङ्गचुतिवसेन। (ख)

३७. यथा च रूपावचरं, एवं **अरूपावचरं** पि कुसलं विय चतुब्बिधं। पवत्तिभेदो पिस्स रूपावचरे वुत्तनयो एव। (ग)

३८. **लोकुत्तरविपाकं** चतुमग्गयुत्तचित्तफलत्ता चतुब्बिधं। त मग्गवीथिवसेन चेव समापत्तिवसेन च द्विधा पवत्तति। एव सब्ब पि चतूसु भूमीसु छत्तिंसविध विपाकविञ्ञाणं होति। (घ) (१)

३९. **किरियं** पन भूमिभेदतो तिविधं—कामावचरं, रूपावचरं, अरूपावचरं च। तत्थ कामावचरं दुविधं—अहेतुक, सहेतुक च। तत्थ अलोभादिकिरिय-हेतुविरहितं अहेतुकं। तं मनोधातुमनोविञ्ञाणधातुभेदतो दुविधं।

तत्थ चक्खुविञ्ञाणादिपुरेचररूपादिविजाननलक्खणा मनोधातु, आवज्जन-रसा, रूपादिअभिमुखभावपच्चुपट्ठाना, भवङ्गविच्छेदपदट्ठाना। सा उपेक्खायुत्ता व होति।

मनोविञ्ञाणधातु पन दुविधा—साधारणा[1], असाधारणा[2] च। तत्थ साधारणा उपेक्खासहगताहेतुककिरिया सळारम्मणविजाननलक्खणा, किच्च-वसेन पञ्चद्वारमनोद्वारेसु वोट्ठपनावज्जनरसा, तथाभावपच्चुपट्ठाना, अहेतुक-विपाकमनोविञ्ञाणधातु-भवङ्गानं अञ्ञतरापगमपदट्ठना।

१. **साधारणा** ति। सेक्खासेक्खपुथुज्जनानं साधारणा।

२. **असाधारणा** ति। असेक्खानं येव आवेणिका।

असाधारणा सोमनस्ससहगताहेतुककिरिया सळारम्मणविजाननलक्खणा, किच्चवसेन अरहत अनुळारेसु वत्थुसु हसितुप्पादनरसा, तथा भावपच्चुपट्ठाना, एकन्ततो हृदयवत्थुपदट्ठाना ति। इति कामावचरकिरिय अहेतुकं तिविध।

सहेतुक पन सोमनस्सादिभेदतो कुसलं विय अट्ठविध। केवलं हि कुसल सेक्खपुथुज्जनान उप्पज्जति, इदं अरहतं येवा ति अयमेत्थ विसेसो। एव ताव कामावचर एकादसविध। रूपावचर पन अरूपावचर च कुसलं विय पञ्च-विध चतुब्बिध च होति। अरहतं उप्पत्तिवसेनेव चस्स कुसलतो विसेसो वेदितब्बो ति। एव सब्ब पि तीसु भूमीसु वीसतिविध किरियविञ्ञाण होति। (ख)

इति एकवीसति कुसलानि, द्वादस अकुसलानि, छत्तिंस विपाकानि, वीसति किरियानी ति सब्बानि पि एकूननवुतिविञ्ञाणानि होन्ति। यानि पटिसन्धि-भवङ्ग वज्जन-दस्सन-सवन-घायन-सायन-फुसन-सम्पटिच्छन-सन्तीरण-वोट्ठपन-जवन-तदारम्मण-चुतिवसेन चुद्दसहि आकारेहि पवत्तन्ति।

कथ? यदा हि अट्ठन्न कामावचरकुसलान आनुभावेन देवमनुस्सेसु सत्ता निब्बत्तन्ति, तदा नेस मरणकाले पच्चुपट्ठितं कम्म-कम्मनिमित्त-गतिनिमित्तानं अञ्ञतर आरम्मण कत्वा अट्ठ सहेतुककामावचरविपाकानि, मनुस्सेसु पण्डकादिभाव आपज्जमानान दुब्बलद्विहेतुककुसलविपाका उपेक्खासहगताहेतुक-विपाकमनोविञ्ञाणधातु चा ति **पटिसन्धिवसेन** नव विपाकचित्तानि पवत्तन्ति।

यदा रूपावचरारूपावचरकुसलानुभावेन रूपारूपभवेसु निब्बत्तन्ति, तदा नेसं मरणकाले पच्चुपट्ठितं कम्मनिमित्तमेव आरम्मण कत्वा नव रूपारूपावचर-विपाकानि **पटिसन्धिवसेन** पवत्तन्ति।

यदा पन अकुसलानुभावेन अपाये निब्बत्तन्ति, तदा नेसं मरणकाले पच्चु-पट्ठितं कम्म-कम्मनिमित्त-गतिनिमित्तान अञ्ञतरं आरम्मण कत्वा एका अकुसलविपाकाहेतुमनोविञ्ञाणधातु पटिसन्धिवसेन पवत्तती ति। एव तावेत्थ एकूनवीसतिया विपाकविञ्ञाणान **पटिसन्धिवसेन** पवत्ति वेदितब्बा। (१)

पटिसन्धिविञ्ञाणे पन निरुद्धे, त त पटिसन्धिविञ्ञाणमनुबन्धमान तस्स तस्सेव कम्मस्स विपाकभूत तस्मिं येव आरम्मणे तादिसमेव भवङ्गविञ्ञाणं नाम पवत्तति। पुन पि तादिस ति एवं असति सन्तानविनिवत्तके अञ्ञस्मिं चित्तुप्पादे नदीसोत विय सुपिनं अपस्सतो निद्दोक्कमनकालादीसु अपरिम ण-सङ्ख्य पि पवत्तति येवा ति। एव तेसं येव विञ्ञाणानं **भवङ्गवसेना पि** पवत्ति वेदितब्बा।

एवं पवत्ते पन भवङ्गसन्ताने यदा सत्तानं इन्द्रियानि आरम्मणगहणक्ख-मानि होन्ति, तदा चक्खुस्सापाथगते रूपे रूपं पटिच्च चक्खुपसादस्स घट्टना

होति, ततो घट्टानानुभावेन भवङ्गचलनं होति। अथ निरुद्धे भवङ्गे तदेव रूपं आरम्मणं कत्वा भवङ्ग विच्छिन्दमाना विय आवज्जनकिच्च साधयमाना किरियमनोधातु उप्पज्जति। सोतद्वारादीसु पि एसेव नयो। (२)

मनोद्वारे पन छब्बिधे पि आरम्मणे आपाथगते भवङ्गचलनानन्तर भवङ्गं विच्छिन्दमाना विय आवज्जनकिच्च साधयमाना अहेतुककिरियमनोविञ्ञाणधातु उप्पज्जति उपेक्खासहगता ति। एव द्विन्न किरियविञ्ञाणानं **आवज्जनवसेन** पवत्ति वेदितब्बा। (३)

आवज्जनानन्तर[1] पन चक्खुद्वारे ताव दस्सनकिच्चं साधयमान चक्खुपसादवत्थुकं चक्खुविञ्ञाणं, सोतद्वारादीसु सवनादिकिच्च साधयमानानि सोतघानजिव्हाकायविञ्ञाणानि पवत्तन्ति। तानि इट्ठइट्ठमज्झत्तेसु विसयेसु कुसलविपाकानि, अनिट्ठअनिट्ठमज्झत्तेसु विसयेसु अकुसलविपाकानी ति। एवं दसन्नं विपाकविञ्ञाणानं **दस्सन-सवन-घायन-सायन-फुसनवसेन** पवत्ति वेदितब्बा। (४–८)

"चक्खुविञ्ञाणधातुया उप्पज्जित्वा निरुद्धसमनन्तरा उप्पज्जति चित्तं मनो मानसं तज्जा मनोधातू" (अभि० २–११०) ति आदिवचनतो पन चक्खुविञ्ञाणादीनं अनन्तरा तेसं येव विसयं सम्पटिच्छमाना कुसलविपाकानन्तर कुसलविपाका, अकुसलविपाकानन्तरं अकुसलविपाका मनोधातु उप्पज्जति। एवं द्विन्नं विपाकविञ्ञाणानं **सम्पटिच्छनवसेन** पवत्ति वेदितब्बा। (९)

'मनोधातुया पि उप्पज्जित्वा निरुद्धसमनन्तरा उप्पज्जति चित्त मनो मानस तज्जा मनोविञ्ञाणधातू" (अभि० २–११२) ति वचनतो पन मनोधातुया सम्पटिच्छितमेव विसय सन्तीरयमाना अकुसलविपाकमनोधातुया अनन्तरा अकुसलविपाका, कुसलविपाकाय अनन्तरा इट्ठारम्मणे सोमनस्ससहगता, इट्ठमज्झत्ते उपेक्खा सहगता उप्पज्जति विपाकाहेतुकमनोविञ्ञाणधातू ति। एव तिण्ण विपाकाविञ्ञाणान **सन्तीरणवसेन** पवत्ति वेदितब्बा। (१०)

सन्तीरणानन्तर पन तमेव विसय ववत्थपयमाना उप्पज्जति किरियाहेतुकमनोविञ्ञाणधातु उपेक्खासहगता ति। एवं एकस्सेव किरियविञ्ञाणस्स **वोट्ठपनवसेन** पवत्ति वेदितब्बा। (११)

वोट्ठपनानन्तर पन सचे महन्तं होति रूपादिआरम्मणं, अथ यथाववत्थापिते विसये अट्ठन्न वा कामावचरकुसलानं, द्वादसन्न वा अकुसलानं, नवन्न वा अवसेसकामावचरकिरियानं अञ्ञतरवसेन छ सत्त वा जवनानि जवन्ति। एसो ताव पञ्चद्वारे नयो। मनोद्वारे पन मनोद्वारावज्जनानन्तर तानि येव। गोत्र-

1 **आवज्जनानन्तरं** ति। पञ्चद्वारावज्जनानन्तरं।

भुनो उद्ध रूपावचरतो पञ्च कुसलानि, पञ्च किरियानि, अरूपावचरतो चत्तारि कुसलानि, चत्तारि किरियानि, लोकुत्तरतो चत्तारि मग्गचित्तानि, चत्तारि फलचित्तानी ति इमेसु य य लद्धपच्चय होति त त जवती ति। एवं पञ्चपञ्ञासाय कुसलाकुसलकिरियविपाकविञ्ञाणानं **जवनवसेन** पवत्ति वेदितब्बा। (१२)

जवनावसाने पन सचे पञ्चद्वारे अतिमहन्तं[1], मनोद्वारे च विभूतमारम्मणं होति, अथ कामावचरसत्तान कामावचरजवनावसाने इट्ठारम्मणादीनं पुरिम-कम्मजवनचित्तादीन च वसेन यो यो पच्चयो लद्धो होति, तस्स तस्स वसेन अट्ठसु सहेतुककामावचरविपाकेसु तीसु विपाकहेतुकमनोविञ्ञाणधातूसु च अञ्ञतर, पटिसोतगत नाव अनुबन्धमान किञ्चि अन्तर उदकमिव, भवङ्गस्सा-रम्मणतो अञ्ञस्मि आरम्मणे जवित जवनमनुबधन्त द्विक्खत्तु सकिं वा विपाक-विञ्ञाणं उप्पज्जति। तदेत जवनावसाने भवङ्गस्स आरम्मणे पवत्तनारह समान तस्स जवनस्स आरम्मण आरम्मणं कत्वा पवत्तत्ता तदारम्मणं ति वुच्चति। एव एकादसन्न विपाकविञ्ञाणानं **तदारम्मणवसेन** पवत्ति वेदितब्बा। (१३)

तदारम्मणावसाने पन पुन भवङ्गमेव पवत्तति। भवङ्गे विच्छिन्ने पुन आवज्जनादीनि ति एवं लद्धपच्चय चित्तसन्तानं भवङ्गानन्तरं आवज्जन, आवज्जनानन्तर दस्सनादीनी ति चित्तनियमवसेनेव पुनप्पुन ताव पवत्तति, याव एकस्मि भवे भवङ्गस्स परिक्खयो। एकस्मि हि भवे यं सब्बपच्छिम भवङ्गचित्तं, त ततो चवनत्ता चुती ति वुच्चति। तस्मा त पि एकूनवीसति-विधमेव होति। एव एकूनवीसतिया विपाकविञ्ञाणान **चुतिवसेन** पवत्ति वेदितब्बा। (१४)

४२ चुतितो पन पुन पटिसन्धि, पटिसन्धितो पुन भवङ्ग ति एवं भव-गति-ठिति-निवासेसु[2] ससरमानान सत्तानं अविच्छिन्नं चित्तसन्तानं पवत्तति येव। यो पनेत्थ अरहत्तं पापुणाति, तस्स चुतिचित्ते निरुद्धमेव होती ति॥

इदं विञ्ञाणक्खन्धे वित्थारकथामुख॥

वेदनाक्खन्धकथा

४३. इदानि यं वुत्त—"यं किञ्चि वेदयितलक्खण सब्बं तं एकतो कत्वा वेदनाक्खन्धो वेदितब्बो" ति, एत्थापि वेदयितलक्खणं नाम वेदना व। यथाह—

---

१. **अतिमहन्तं** ति। सोळसचित्तक्खणायुक।

२. **भवगतिठितिनिवासेसू** ति। तीसु भवेसु, पञ्चसु गतीसु, सत्तसु विञ्ञाणट्ठितीसु, नवसु सत्तावेसु च।

"वेदयति वेदयती ति खो, आवुसो, तस्मा वेदना ति वुच्चती" (म० १–३६१) ति।

४४ सा पन वेदयितलक्खणेन सभावतो एकविधा पि जातिवसेन तिविधा होति—कुसला, अकुसला, अब्याकता चा ति। तत्थ कामावचरं सोमनस्सुपेक्खाञाणसङ्खारभेदतो अट्ठविधं ति आदिना नयेन वुत्तेन कुसलेन विञ्ञाणेन सम्पयुत्ता कुसला, अकुसलेन सम्पयुत्ता अकुसला, अब्याकतेन सम्पयुत्ता अब्याकता ति वेदितब्बा।

४५. सा सभावभेदतो पञ्चविधा होति—सुखं, दुक्खं, सोमनस्सं, दोमनस्सं, उपेक्खा ति। तत्थ कुसलविपाकेन कायविञ्ञाणेन सम्पयुत्तं सुखं, अकुसलविपाकेन दुक्खं। कामावचरतो चतूहि कुसलेहि, चतूहि सहेतुकविपाकेहि, एकेन अहेतुकविपाकेन, चतूहि सहेतुककिरियेहि एकेन अहेतुककिरियेन, चतूहि अकुसलेहि, रूपावचरतो ठपेत्वा पञ्चमज्झानविञ्ञाणं चतूहि कुसलेहि, चतूहि विपाकेहि, चतूहि किरियेहि; लोकुत्तरं पन यस्मा अझानिकं नाम नत्थि, तस्मा अट्ठ लोकुत्तरानि पञ्चन्नं झानानं वसेन चत्तालीस होन्ति। तेसु ठपेत्वा अट्ठ पञ्चमज्झानिकानि सेसेहि द्वत्तिसाय कुसलविपाकेही ति एवं सोमनस्सं द्वासट्ठिया विञ्ञाणेहि सम्पयुत्तं। दोमनस्सं द्वीहि अकुसलेहि। उपेक्खा अवसेसपञ्चपञ्ञासाय विञ्ञाणेहि सम्पयुत्ता।

४६ तत्थ इट्ठफोट्ठब्बानुभवनलक्खणं **सुखं**, सम्पयुत्तानं उपब्रूहनरसं, कायिकअस्सादपच्चुपट्ठानं, कायिन्द्रियपदट्ठानं। अनिट्ठफोट्ठब्बानुभवनलक्खणं **दुक्खं**, सम्पयुत्तानं मिलापनरसं, कायिकाबाधपच्चुपट्ठानं, कायिन्द्रियपदट्ठानं। इट्ठारम्मणानुभवनलक्खणं **सोमनस्सं**, यथा तथा वा इट्ठाकारसम्भोगरसं, चेतसिकअस्सादपच्चुपट्ठानं, पस्सद्धिपदट्ठानं। अनिट्ठारम्मणानुभवनलक्खणं **दोमनस्सं**, यथा तथा वा अनिट्ठाकारसम्भोगरसं, चेतसिकाबाधपच्चुपट्ठानं, एकन्तेनेव हदयवत्थुपदट्ठानं। मज्झत्तवेदयितलक्खणा **उपेक्खा**, सम्पयुत्तानं नातिउपब्रूहनमिलापनरसा, सन्तभावपच्चुपट्ठाना, निप्पीतिकचित्तपदट्ठाना ति॥

इदं वेदनाक्खन्धे वित्थारकथामुखं॥

सञ्ञाक्खन्धकथा

४७ इदानि यं वुत्तं—"यं किञ्चि सञ्जाननलक्खणं सब्बं तं एकतो कत्वा सञ्ञाक्खन्धो वेदितब्बो" ति, एत्थापि सञ्जाननलक्खणं नाम सञ्ञा व। यथाह—"सञ्जानाति सञ्जानाती ति खो, आवुसो, तस्मा सञ्ञा ति वुच्चती" (म० १–३६१) ति।

४८. सा पनेसा सञ्जाननलक्खणेन सभावतो एकविधा पि जातिवसेन

तिविधा व होति—कुसला, अकुसला, अब्याकता च। तत्थ कुसलविञ्ञाणसम्पयुत्ता कुसला, अकुसलसम्पयुत्ता अकुसला, अब्याकतसम्पयुत्ता अब्याकता। न हि त विञ्ञाणं अत्थि य सञ्ञाय विप्पयुत्तं। तस्मा यत्तको विञ्ञाणस्स भेदो, तत्तको सञ्ञाया ति।

४९ सा पनेसा एवं विञ्ञाणेन समप्पभेदा पि लक्खणादितो सब्बा व सञ्जाननलक्खणा, 'तदेवेत' ति पुन सञ्जाननपच्चयनिमित्तकरणरसा, दारुआदीसु तच्छकादयो विय, यथागहितनिमित्तवसेन अभिनिवेसकरणपच्चुपट्ठाना हत्थिदस्सकअन्धा विय (खु० १–१४४) यथाउपट्ठितविसयपदट्ठाना तिणपुरिसकेसु मिगपोतकान पुरिसा ति उप्पन्नसञ्ञा विया ति॥

इदं सञ्ञाक्खन्धे वित्थारकथामुखं।

सङ्खारक्खन्धकथा

५० यं पन वुत्त—"य किञ्चि अभिसङ्खारणलक्खण सब्बं तं एकतो कत्वा सङ्खारक्खन्धो वेदितब्बो" ति, एत्थ अभिसङ्खरणलक्खण नाम रासिकरणलक्खण। किं पन त ति? सङ्खारा येव। यथाह—"सङ्खतमभिसङ्खरोन्ती ति खो, भिक्खवे, तस्मा सङ्खारा ति वुच्चन्ती" (स० २–३१२) ति।

ते अभिसङ्खरणलक्खणा, आयूहनरसा, विप्फारपच्चुपट्ठाना, सेसक्खन्धत्तयपदट्ठाना।

५१. एव लक्खणादितो एकविधा पि च जातिवसेन तिविधा—कुसला, अकुसला, अब्याकता ति। तेसु कुसलविञ्ञाणसम्पयुत्ता कुसला, अकुसलसम्पयुत्ता अकुसला, अब्याकतसम्पयुत्ता अब्याकता।

१. कुसला सङ्खारा

तत्थ कामावचरपठमकुसलविञ्ञाणसम्पयुत्ता ताव नियता सरूपेन आगता सत्तवीसति, येवापनका चत्तारो, अनियता पञ्चा ति छत्तिस। तत्थ फस्सो, चेतना, वितक्को, विचारो, पीति, विरिय, जीवितं, समाधि, सद्धा, सति, हिरी, ओत्तप्प, अलोभो, अदोसो, अमोहो, कायपस्सद्धि, चित्तपस्सद्धि, कायलहुता, चित्तलहुता, कायमुदुता, चित्तमुदुता, कायकम्मञ्ञता, चित्तकम्मञ्ञता, कायपागुञ्ञता, चित्तपागुञ्ञता, कायुजुकता, चित्तुजुकता ति इमे **सरूपेन आगता सत्तवीसति** (अभि० १–१८)। छन्दो, अधिमोक्खो, मनसिकारो, तत्रमज्झत्तता ति इमे **येवापनका** (अभि० ट्ठ० १–१०८) चत्तारो। करुणा, मुदिता, कायदुच्चरितविरति, वचीदुच्चरितविरति, मिच्छाजीवविरतो ति इमे **अनियता पञ्च** (अभि० ट्ठ० १०८)। एते हि कदाचि उप्पज्जन्ति, उप्पज्जमाना पि च न एकतो उप्पज्जन्ति।

५२. तत्थ फुसतो ति **फस्सो**। स्वाय फुसनलक्खणो, सङ्घट्टनरसो, सन्निपातपच्चुपट्ठानो, आपाथगतविसयपदट्ठानो। अय हि अरूपधम्मो पि समानो आरम्मणे फुसनाकारेनेव पवत्तति, एकदेसेन च अनल्लियमानो पि रूप विय चक्खु, सद्दो विय च सोत, चित्त आरम्मण च सङ्घट्टेति, तिकसन्निपातसङ्खातस्स अत्तनो कारणस्स वसेन पवेदितत्ता सन्निपातपच्चुपट्ठानो, तज्जासमन्नाहारेन चेव इन्द्रियेन च परिक्खते विसये अनन्तरायेनेव उप्पज्जनतो आपाथगतविसयपदट्ठानो ति वुच्चति। वेदनाधिट्ठानभावतो पन निच्चम्मगावी विय (सं० २-८५) दट्ठब्बो। (१)

चेतयती ति **चेतना**। अभिसन्दहती ति अत्थो। सा चेतनाभावलक्खणा, आयूहनरसा, संविदहनपच्चुपट्ठाना, सकिच्चपरकिच्चसाधिका जेट्ठसिस्समहावड्ढकीआदयो विय। अच्चायिककम्मानुस्सरणादीसु च पनायं सम्पयुत्तानं उस्साहनभावेन पवत्तमाना पाकटा होति। (२)

वितक्क-विचार-पीतीसु य वत्तब्ब सिया, तं सब्ब पथवीकसिणनिद्देसे पठमज्झानवण्णनायं वुत्तमेव। (३-५)

वीरभावो **विरियं**। त उस्सहनलक्खणं, सहजातान उपत्थम्भनरसं असंसीदनभावपच्चुपट्ठानं, "संविग्गो योनिसो पदहती" (अ० २-१२१) ति वचनतो संवेगपदट्ठान, विरियारम्भवत्थुपदट्ठान वा, सम्मा आरद्ध सब्बसम्पत्तान मूलं होती ति दट्ठब्ब। (६)

जीवन्ति तेन, सयं वा जीवति, जीवनमत्तमेव वा तं ति **जीवितं**। लक्खणादीनि पनस्स रूपजीविते (विसु० १४-३८१) वुत्तनयेनेव वेदितब्बानि। तं हि रूपधम्मान जीवित, इद अरूपधम्मान ति इदमेवेत्थ नानाकरण। (७)

आरम्मणे चित्तं सम आधियति, सम्मा वा आधियति, समाधानमत्तमेव वा एतं चित्तस्सा ति **समाधि**। सा अविसारलक्खणो अविक्खेपलक्खणो वा, सहजातानं सम्पिण्डनरसो न्हानियचुण्णान उदक विय, उपसमपच्चुपट्ठानो, विसेसतो सुखपदट्ठानो, निवाते दीपच्चीन ठिति विय चेतसो ठिती ति दट्ठब्बो। (८)

९३. सद्दहन्ति एताय, सय वा सद्दहति, सद्दहनमत्तमेव वा एसा ति **सद्धा**। सा सद्दहनलक्खणा ओकप्पनलक्खणा वा, पसादनरसा उदकप्पसादकमणि विय, पक्खन्दनरसा वा ओघुत्तरणो (दी० ३-१७७) विय, अकालुस्सियपच्चुपट्ठाना, अधिमुत्तिपच्चुपट्ठाना वा सद्धेय्यवत्थुपदट्ठाना, सद्धम्मसवनादिसोतापत्तियङ्गपदट्ठाना वा, हत्थवित्तबीजानि (स० १-२१६) विय दट्ब्बा। (९)

९८. सरन्ति ताय, सयं वा सरति, सरणमत्तमेव वा एसा ति **सति**। सा अपिलापनलक्खणा, असम्मोसरसा, आरक्खपच्चुपट्ठाना, विसयाभिमुखभाव-

पच्चुपट्ठाना वा, थिरसञ्ञापदट्ठाना, कायादिसतिपट्ठानपदट्ठाना वा। आरम्मणे दळ्हं पतिट्ठितत्ता पन एसिका विय, चक्खुद्वारादिरक्खणतो दोवारिको विय च दट्ठब्बा। (१०)

कायदुच्चरितादीहि हिरियती ति **हिरी**। लज्जायेतं अधिवचनं। (११)

तेहि येव ओत्तप्पती ति **ओत्तप्पं**। पापतो उब्बेगस्सेतं अधिवचनं। तत्थ पापतो जिगुच्छनलक्खणा हिरी, उत्तासलक्खणं ओत्तप्पं, लज्जाकारेन पापानं अकरणरसा हिरी, उत्तासाकारेन ओत्तप्पं। वुत्तप्पकारेनेव च पापतो सङ्कोचन-पच्चुपट्ठाना एता, अत्तगारव-परगारवपदट्ठाना। अत्तानं गरुं कत्वा हिरिया पापं जहाति कुलवधू विय, परं गरुं कत्वा ओत्तप्पेन पापं जहाति वेसिया विय। इमे च पन द्वे धम्मा लोकपालका (अ० १-४९) ति दट्ठब्बा। (१२)

न लुब्भन्ति एतेन, सयं वा लुब्भति, अलुब्भनमत्तमेव वा तं ति **अलोभो**। अदोसामोहेसु पि एसेव नयो। तेसु अलोभो आरम्मणे चित्तस्स अगेधलक्खणो अलग्गभावलक्खणो वा कमलदले जलबिन्दु विय, अपरिग्गहरसो मुत्तभिक्खु विय, अनल्लीनभावपच्चुपट्ठानो असुचिम्हि पतितपुरिसो विय। (१३)

अदोसो अचण्डिक्कलक्खणो अविरोधलक्खणो वा अनुकूलमित्तो विय, आघातविनयरसो, परिळाहविनयरसो वा चन्दनं विय, सोम्मभावपच्चुपट्ठानो पुण्णचन्दो विय। (१४)

अमोहो यथासभावपटिवेधलक्खणो, अक्खलितपटिवेधलक्खणो वा कुसलि-स्सासमखित्तउसुपटिवेधो विय, विसयोभासनरसो पदीपो विय, असम्मोहपच्चु-पट्ठानो अरञ्ञगतसुदेसको विय। तयो पि चेते सब्बकुसलानं मूलभूता ति दट्ठब्बा। (१५)

कायस्स पस्सम्भनं **कायपस्सद्धि**। चित्तस्स पस्सम्भनं **चित्तपस्सद्धि**। कायो ति चेत्थ वेदनादयो तयो खन्धा। उभो पि पनेता एकतो कत्वा कायचित्तदरथवूप-समलक्खणा कायचित्तपस्सद्धियो, कायचित्तदरथनिमद्दनरसा, कायचित्तानं अपरिप्फन्दसीतिभावपच्चुपट्ठाना, कायचित्तपदट्ठाना। कायचित्तानं अवूप-समकरउद्धच्चादिकिलेसपटिपक्खभूता ति दट्ठब्बा। (१६-१७)

कायस्स लहुभावो **कायलहुता**। चित्तस्स लहुभावो **चित्तलहुता**। ता काय-चित्तगरुभाववूपसमलक्खणा, कायचित्तगरुभावनिमद्दनरसा, कायचित्तानं अदन्ध-तापच्चुपट्ठाना, कायचित्तपदट्ठाना। कायचित्तानं गरुभावकरथीनमिद्धादि-किलेसपटिपक्खभूता ति दट्ठब्बा। (१८-१९)

कायस्स मुदुभावो **कायमुदुता**। चित्तस्स मुदुभावो **चित्तमुदुता**। ता काय-चित्तत्थम्भवूपसमलक्खणा, कायचित्तथद्धभावनिमद्दनरसा, अप्पटिघातपच्चु-

पट्ठाना, कायचित्तपदट्ठाना। कायचित्तानं थद्धभावकरदिट्ठमानादिकिलेस-पटिपक्खभूता ति दट्ठब्बा। (२०–२१)

कायस्स कम्मञ्ञभावो **कायकम्मञ्ञता**। चित्तस्स कम्मञ्ञभावो **चित्त-कम्मञ्ञता**। ता कायचित्ताकम्मञ्ञभाववूपसमलक्खणा, कायचित्ताकम्मञ्ञ-भावनिमद्दनरसा, कायचित्तानं आरम्मणकरणसम्पत्तिपच्चुपट्ठाना, कायचित्त-पदट्ठाना। कायचित्तानं अकम्मञ्ञभावकरावसेसनीवरणादिपटिपक्खभूता, पसादनीयवत्थूसु पसादवहा, हितकिरियासु विनियोगक्खमभावावहा सुवण्ण-विसुद्धि विया ति दट्ठब्बा। (२२–२३)

कायस्स पागुञ्ञभावो **कायपागुञ्ञता**। चित्तस्स पागुञ्ञभावो **चित्त-पागुञ्ञता**। ता कायचित्तानं अगेलञ्ञभावलक्खणा, कायचित्तगेलञ्ञनिमद्दनरसा, निरादीनवपच्चुपट्ठाना, कायचित्तपदट्ठाना। कायचित्तानं गेलञ्ञकरअसद्धि-यादिपटिपक्खभूता ति दट्ठब्बा। (२४–२५)

कायस्स उजुकभावो **कायुजुकता**। चित्तस्स उजुकभावो **चित्तुजुकता**। ता कायचित्तअज्जवलक्खणा, कायचित्तकुटिलभावनिमद्दनरसा, अजिम्हितापच्चु-पट्ठाना, कायचित्तपदट्ठाना। कायचित्तानं कुटिलभावकरमायासाठेय्यादिपटि-पक्खभूता ति दट्ठब्बा। (२६–२७)

५३. **छन्दो** ति कत्तुकामतायेतं अधिवचनं। तस्मा कत्तुकामतालक्खणो छन्दो आरम्मणपरियेसनरसो, आरम्मणेन अत्थिकतापच्चुपट्ठानो, तदेवस्स पदट्ठानं। आरम्मणग्गहणे अयं चेतसो हत्थप्पसारणं विय दट्ठब्बो। (१)

अधिमुच्चनं **अधिमोक्खो**। सो सन्निट्ठानलक्खणो, असंसप्पनरसो, निच्छय-पच्चुपट्ठानो, सन्निट्ठेय्यधम्मपदट्ठानो, आरम्मणे निच्चलभावेन इन्दखीलो विय दट्ठब्बो। (२)

किरिया कारो, मनम्हि कारो **मनसिकारो**। पुरिममनतो विसदिसमनं करोती ति पि मनसिकारो। स्वायं आरम्मणपटिपादको, वीथिपटिपादको, जवनपटिपादको ति तिप्पकारो।

तत्थ **आरम्मणपटिपादको** मनम्हि कारो ति मनसिकारो। सो सारण-लक्खणो, सम्पयुत्तानं आरम्मणे संयोजनरसो, आरम्मणाभिमुखभावपच्चुपट्ठानो, आरम्मणपदट्ठानो। सङ्खारक्खन्धपरियापन्नो, आरम्मणपटिपादकत्तेन सम्प-युत्तानं सारथि विय दट्ठब्बो। **वीथिपटिपादको** ति पन पञ्चद्वारावज्जनस्सेतं अधिवचनं। **जवनपटिपादको** ति। मनोद्वारावज्जनस्सेतं अधिवचनं। न ते इध अधिप्पेता (३)

तेसु धम्मेसु मज्झत्तता **तत्रमज्झत्तता**। सा चित्तचेतसिकानं समवाहित-लक्खणा, ऊनाधिकतानिवारणरसा, पक्खपातुपच्छेदनरसा वा, मज्झत्तभाव-

पच्चुपट्ठाना, चित्तचेतसिकानं अज्झुपेक्खनभावेन समप्पवत्तानं आजानीयानं अज्झुपेक्खकसारथि विय दट्ठब्बा। (४)

५४. **करुणा मुदिता च ब्रह्मविहारनिद्देसे**[1] वुत्तनयेनेव वेदितब्बा। केवलं हि ता अप्पनाप्पत्ता रूपावचरा, इमा कामावचरा ति अयमेव विसेसो।

केचि पन मेत्तुपेक्खायो पि अनियतेसु इच्छन्ति। तं न गहेतब्बं। अत्थतो हि अदोसो येव मेत्ता, तत्रमज्झत्तुपेक्खा येव उपेक्खा ति। (१-२)

कायदुच्चरिततो विरति **कायदुच्चरितविरति**। एस नयो सेसासु पि। लक्खणादितो पनेता तिस्सो पि कायदुच्चरितादिवत्थूनं अवीतिक्कमलक्खणा, अमद्दनलक्खणा ति वुत्तं होति, कायदुच्चरितादिवत्थुतो सङ्कोचनरसा, अकिरियपच्चुपट्ठाना, सद्धाहिरोत्तप्पअप्पिच्छतादिगुणपदट्ठाना, पापकिरियतो चित्तस्स विमुखभावभूता ति दट्ठब्बा। (३-५)

५५ इति इमे छत्तिंस सङ्खारा पठमेन कामावचरकुसलविञ्ञाणेन सम्पयोगं गच्छन्ती ति वेदितब्बा। यथा च पठमेन, एवं दुतियेनापि। ससङ्खारभावमत्तमेव हेत्थ विसेसो। ततियेन पन ठपेत्वा अमोहं अवसेसा वेदितब्बा। तथा चतुत्थेन। ससङ्खारभावमत्तमेव हेत्थ विसेसो। पठमे वुत्तेसु पन ठपेत्वा पीतिं अवसेसा पञ्चमेन सम्पयोगं गच्छन्ति। यथा च पञ्चमेन, एवं छट्ठेना पि। ससङ्खारभावमत्तमेव हेत्थ विसेसो। सत्तमेन च पन ठपेत्वा अमोहं अवसेसा वेदितब्बा। तथा अट्ठमेन। ससङ्खारभावमत्तमेव हेत्थ विसेसो।

पठमे वुत्तेसु ठपेत्वा विरतित्तय सेसा रूपावचरकुसलेसु पठमेन सम्पयोगं गच्छन्ति। दुतियेन ततो वितक्कवज्जा। ततियेन ततो विचारवज्जा। चतुत्थेन ततो पीतिवज्जा। पञ्चमेन ततो अनियतेसु करुणामुदितावज्जा। ते एव चतूसु आरुप्पकुसलेसु। अरूपावचरभावो येव हि एत्थ विसेसो।

लोकुत्तरेसु पठमज्झानिके ताव मग्गविञ्ञाणे पठमरूपावचरविञ्ञाणे वुत्तनयेन, दुतियज्झानिकादिभेदे दुतियरूपावचरविञ्ञाणादीसु वुत्तनयेनेव वेदितब्बा। करुणामुदितानं पन अभावो, नियतविरतिता, लोकुत्तरता चा ति अयमेत्थ विसेसो। एवं ताव कुसला येव सङ्खारा वेदितब्बा॥

२. अकुसला सङ्खारा

५६. **अकुसलेसु—लोभमूले** पठमाकुसलसम्पयुत्ता ताव नियता सरूपेन आगता तेरस, येवापनका चत्तारो ति सत्तरस। तत्थ फस्सो, चेतना, वितक्को, विचारो, पीति, विरियं, जीवितं, समाधि, अहिरिकं, अनोत्तप्पं, लोभो, मोहो, मिच्छा-

---

१. विसुद्धिमग्गस्स नवमे परिच्छेदे त्वत्थो।

दिट्ठी ति इमे **सरूपेन आगता** तेरस। छन्दो, अधिमोक्खो, उद्धच्चं, मनसिकारो ति इमे **येवापनका** चत्तारो।

तत्थ न हिरियती ति अहिरिको, अहिरिकस्स भावो **अहिरिकं**। न ओतप्पती ति **अनोत्तप्पं**। तेसु अहिरिक कायदुच्चरितादीहि अजिगुच्छनलक्खणं, अलज्जालक्खणं वा। अनोत्तप्पं तेहेव असारज्जलक्खण, अनुत्तासलक्खण वा, अयमेत्थ सङ्खेपो। वित्थारो पन हिरोत्तप्पान वुत्तपटिपक्खवसेन (विसु०–३९१) वेदितब्बो।

लुब्भन्ति तेन, सयं वा लुब्भति, लुब्भनमत्तमेव वा त ति **लोभो**। मुय्हन्ति तेन, सय वा मुय्हति, मुय्हनमत्तमेव वा त ति **मोहो**।

तेसु **लोभो** आरम्मणग्गहणलक्खणो मक्कटालेपो विय, अभिसङ्गरसो तत्तकपाले खित्तमसपेसि विय। अपरिच्चागपच्चुपट्ठानो तेलञ्जनरागो विय। संयोजनियधम्मेसु अस्सादस्सनपदट्ठानो। तण्हानदीभावेन वड्ढमानो, सीघसोता नदी इव महासमुद्द अपायमेव गहेत्वा गच्छती ति दट्ठब्बो।

मोहो चित्तस्स अन्धभावलक्खणो अञ्ञाणलक्खणो वा, असम्पटिवेधरसो, आरम्मणसभावच्छादनरसो वा, असम्मापटिपत्तिपच्चुपट्ठानो, अन्धकारपच्चुपट्ठानो वा, अयोनिसोमनसिकारपदट्ठानो, सब्बाकुसलान मूलं ति दट्ठब्बो।

मिच्छा पस्सन्ति ताय, सय वा मिच्छा पस्सति, मिच्छादस्सनमत्तं वा एसा ति **मिच्छादिट्ठि**। सा अयोनिसो अभिनिवेसलक्खणा, परामासरसा, मिच्छाभिनिवेसपच्चुपट्ठाना, अरियानं अदस्सनकामतादिपदट्ठाना, परम वज्जं ति दट्ठब्बा। (१–१३)

उद्धतभावो **उद्धच्चं**। तं अवूपसमलक्खणं वाताभिघातचलजलं विय, अनवट्ठानरसं वाताभिघातचलधजपटाका विय, भन्तत्तपच्चुपट्ठानं पासाणाभिघातसमुद्धतभस्मं विय, चेतसो अवूपसमे अयोनिसोमनसिकारपदट्ठानं, चित्तविक्खेपो ति दट्ठब्ब।

सेसा कुसले वुत्तनयेनेव वेदितब्बा। अकुसलभावो येव हि अकुसलभावेन च लामकत्त[1] एतेस तेहि विसेसो। (१४–१७)

५७. इति इमे सत्तरस सङ्खारा पठमेन अकुसलविञ्ञाणेन सम्पयोग गच्छन्ती ति वेदितब्बा। यथा च पठमेन, एवं दुतियेना पि। ससङ्खारता पनेत्थ थीनमिद्धस्स च अनियतता विसेसो।

तत्थ थिननता **थीनं**, मिद्धनता **मिद्धं**। अनुस्साहसंहननता असत्तिविघातो चा ति अत्थो। थीनं च मिद्धं च **थीनमिद्धं**। तत्थ थीन अनुस्साहलक्खण,

---

१. अकुसलधम्मान एकन्तनिहीनताय **अकुसलभावेन च लामकत्तं** ति वुत्तं।

विरियविनोदरसं, ससीदनपच्चुपट्ठान। मिद्धं अकम्मञ्ञतालक्खण, ओनहनरस, लीनतापच्चुपट्ठान, पचलायिकानिद्दापच्चुपट्ठान वा। उभय पि अरतिविजम्भिकादीसु अयोनिसोमनसिकारपदट्ठान।

ततियेन पठमे वुत्तेसु ठपेत्वा मिच्छादिट्ठि अवसेसा वेदितब्बा। **मानो** पनेत्थ अनियतो होति, अय विसेसो। सो उण्णतिलक्खणो, सम्पग्गहरसो, केतुकम्यतापच्चुपट्ठानो, दिट्ठिविप्पयुत्तलोभपदट्ठानो, उम्मादो विय दट्ठब्बो।

चतुत्थेन दुतिये वुत्तेसु ठपेत्वा मिच्छादिट्ठिं अवसेसा वेदितब्बा। एत्था पि च मानो अनियतेसु होति येव। पठमे वुत्तेसु पन ठपेत्वा पीतिं अवसेसा पञ्चमेन सम्पयोग गच्छन्ति। यथा च पञ्चमेन, एव छट्ठेनापि। ससङ्खारता पनेत्थ थीनमिद्धस्स च अनियतभावो विसेसो। सत्तमेन पञ्चमे वुत्तेसु ठपेत्वा दिट्ठि अवसेसा वेदितब्बा। मानो पनेत्थ अनियतो होति। अट्ठमेन छट्ठे वुत्तेसु ठपेत्वा दिट्ठिं अवसेसा वेदितब्बा। एत्थापि च मानो अनियतेसु होति येवा ति।

५८. **दोसमूलेसु** पन—द्वीसु पठमसम्पयुत्ता ताव नियता सरूपेन आगता एकादस। येवापनका चत्तारो। अनियता तयो ति अट्ठारस। तत्थ फस्सो, चेतना, वितक्को, विचारो, विरिय, जीवित्तं, समाधि, अहिरिकं, अनोत्तप्पं, दोसो, मोहो ति इमे **सरूपेन आगता** एकादस। छन्दो, अधिमोक्खो, उद्धच्च, मनसिकारो ति इमे **येवापनका** चत्तारो। इस्सा, मच्छरिय, कुक्कुच्च ति इमे **अनियता** तयो (अभि० १–१०१)।

तत्थ दुस्सन्ति तेन, सयं वा दुस्सति, दुस्सनमत्तमेव वा त ति **दोसो**। सो चण्डिक्कलक्खणो पहटासीविसो विय, विसप्पनरसो विसनिपातो विय, अत्तनो निस्सयदहनरसो वा दावग्गि विय, दूसनपच्चुपट्ठानो लद्धोकासो विय सपत्तो, आघातवत्थुपदट्ठानो, विससंसट्ठपूतिमुत्तं विय दट्ठब्बो।

इस्सायना **इस्सा**। सा परसम्पत्तीनं उसूयनलक्खणा। तत्थेव अनभिरतिरसा, ततो विमुखभावपच्चुपट्ठाना, परसम्पत्तिपदट्ठाना, सयोजनं ति दट्ठब्बा।

मच्छरभावो **मच्छरियं**। त लद्धानं वा लभितब्बान वा अत्तनो सम्पत्तीनं निगूहनलक्खणं, तासं येव परेहि साधारणभावअक्खमनरस, सङ्कोचनपच्चुपट्ठान, कटुकञ्चुकतापच्चुपट्ठान वा, अत्तसम्पत्तिपदट्ठानं चेतसो विरूपभावो ति दट्ठब्ब।

कुच्छितं कतं कुकतं[1], तस्स भावो **कुक्कुच्चं**। तं पच्छानुतापलक्खण, कताकतानुसोचनरस, विप्पटिसारपच्चुपट्ठान, कताकतपदट्ठान, दासब्यमिव दट्ठब्ब। सेवा वुत्तप्पकारा येवा ति।

---

१. **कुकतं** ति। एत्थ अकतं पि कुकतमेव।

इति इमे अट्ठारस सङ्खारा पठमेन दोसमूलेन सम्पयोग गच्छन्ती ति वेदितब्बा। यथा च पठमेन, एवं दुतियेनापि। ससङ्खारता पन अनियतेसु च थीनमिद्धसम्भवो व विसेसो।

५९ **मोहमूलेसु** द्वीसु—विचिकिच्छासम्पयुत्तेन ताव फस्सो, चेतना, वितक्को, विचारो, विरिय, जीवित्त, चित्तट्ठिति, अहिरिक, अनोत्तप्प, मोहो, विचिकिच्छा ति **सरूपेन आगता** एकादस। उद्धच्च, मनसिकारो ति **येवापनका** द्वे चा ति तेरस।

तत्थ **चित्तट्ठिती** ति पवत्तिट्ठितिमत्तो दुब्बलो समाधि। विगता चिकिच्छा ति **विचिकिच्छा**। सा संसयलक्खणा, कम्पनरसा, अनिच्छयपच्चुपट्ठाना, अनेकंसगाहपच्चुपट्ठाना वा, विचिकिच्छायं अयोनिसोमनसिकारपदट्ठाना, पटिपत्ति-अन्तरायकरा ति दट्ठब्बा। सेसा वुत्तप्पकारा येव।

उद्धच्चसम्पयुत्तन विचिकिच्छासम्पयुत्ते वुत्तेसु ठपेत्वा विचिकिच्छं सेसा द्वादस। विचिकिच्छाय अभावेन पनेत्थ अधिमोक्खो उप्पज्जति, तेन सद्धि तेरसेव। अधिमोक्खसब्भावतो च बलवतरो समाधि होति। य चेत्थ उद्धच्च त सरूपेनेव आगत। अधिमोक्खमनसिकारा येवापनकवसेना ति एव अकुसल-सङ्खारा वेदितब्बा।

३. अब्याकता सङ्खारा

६०. **अब्याकतेसु**—विपाकाब्याकता ताव अहेतुक-सहेतुकभेदतो दुविधा। तेसु अहेतुकविपाकविञ्ञाणसम्पयुत्ता अहेतुका। तत्थ कुसलाकुसलविपाकचक्खु-विञ्ञाणसम्पयुत्ता ताव फस्सो, चेतना, जीवितं, चित्तट्ठिती ति **सरूपेन आगता** चत्तारो, **येवापनको** मनसिकारो येवा ति पञ्च। सोत-घान-जिव्हा-कायविञ्ञाण-सम्पयुत्ता पि एते येव।

उभयविपाकमनोधातुया एते चेव वितक्कविचाराधिमोक्खा चा ति अट्ठ। तथा तिविधाय पि अहेतुकमनोविञ्ञाणधातुया। या पनेत्थ सोमनस्ससहगता, ताय सद्धि पीति अधिका होती ति वेदितब्बा।

सहेतुकविपाकविञ्ञाणसम्पयुत्ता पन सहेतुका। तेसु अट्ठकामावचरविपाक-सम्पयुत्ता ताव अट्ठहि कामावचरकुसलेहि सम्पयुत्तसङ्खारसदिसा येव। या पन ता अनियतेसु करुणा मुदिता, ता सत्तारम्मणत्ता विपाकेसु न सन्ति। एकन्त-परित्तारम्मणा हि कामावचरविपाका। न केवल च करुणामुदिता, विरतियो पि विपाकेसु न सन्ति। "पञ्च सिक्खापदा कुसला येवा" (अभि० १–१०६) ति हि वुत्तं।

रूपावचरारूपावचर-लोकुत्तर-विपाक-विञ्ञाणसम्पयुत्ता पन तेसं कुसल-विञ्ञाणसम्पयुत्तसङ्खारेहि सदिसा येव।

६१ किरियाब्याकता पि अहेतुक-महेतुकभेदतो दुविधा। तेसु अहेतुककिरिय-विञ्ञाणसम्पयुत्ता अहेतुका। ते च कुसलविपाकमनोधातु-अहेतुकमनोविञ्ञाण-धातुद्वययुत्तेहि समाना। मनोविञ्ञाणधातुद्वये पन विरिय अधिक। विरिय-सब्भावतो च बलप्पत्तो समाधि होति। अयमेत्थ विसेसो।

सहेतुककिरियविञ्ञाणसम्पयुत्ता पन सहेतुका। तेसु अट्ठकामावचर-किरियविञ्ञाणसम्पयुत्ता ताव ठपेत्वा विरतियो अट्ठहि कामावचरकुसलेहि सम्पयुत्तसङ्खारदिसा। रूपावचरारूपावचरकिरियसम्पयुत्ता पन सब्बाकारेन पि तेस कुसलविञ्ञाणसम्पयत्तसदिसा येवा ति। एव अब्याकता पि सङ्खारा वेदितब्बा ति ॥

इद सङ्खारक्खन्धे वित्थारकथामुख ॥

अतीतादिविभागकथा

इद ताव अभिधम्मे पदभाजनीयनयेन[1] खन्धेसु वित्थारकथामुख।

६२ भगवता पन—"य किञ्चि रूप अतीतानागतपच्चुप्पन्न अज्झत्त वा बहिद्धा वा ओळारिक वा सुखुम वा हीन वा पणीत वा य दूरे सन्तिके वा, तदेकज्झ अभिसयूहित्वा अभिसङ्खिपित्वा अय वुच्चति रूपक्खन्धो। या काचि वेदना, या काचि सञ्ञा, ये केचि सङ्खारा, यं किञ्चि विञ्ञाण अतीता-नागतपच्चुप्पन्न पे० अभिसङ्खिपित्वा अय वुच्चति विञ्ञाणक्खन्धो" (अभि० २–१४) ति। एव खन्धा वित्थारिता।

तत्थ **यं किञ्चि** ति अनवसेसपरियादान। **रूपं** ति अतिप्पसङ्गनियमनं। एव पदद्वयेना पि रूपस्स अनेसपरिग्गहो कतो होति। अथस्स अतीतादिना विभाग आरभति। त हि किञ्चि अतीत, किञ्चि अनागतादिभेद ति। एस नयो वेदनादासु।

६३ तत्थ रूप ताव अद्धा-सन्तति-समय-खणवसेन चतुधा अतीत नाम होति। तथा अनागतपच्चुप्पन्न।

तत्थ **अद्धावसेन** ताव एकस्स एकस्मि भवे पटसन्धितो पुब्बे अतीतं, चुतितो उद्धं अनागत, उभिन्नमन्तरे पच्चुपन्नं। (१)

सन्ततिवसेन सभागएकउतुसमुट्ठानं एकाहारसमुट्ठानं च पुब्बापरियवसेनं वत्तमान पि पच्चुप्पन्न, ततो पुब्बे बिसभागउतुआहारसमुट्ठानं अतीतं, पच्छा अनागतं। चित्तज एकवोथि-एकजवन-एकसमापत्तिसमुट्ठान पच्चुप्पन्न, ततो पुब्बे अतोत, पच्छा अनागत। कम्मसमुट्ठानस्स पाटियेक्क सन्ततिवसेन अतीता-

1 अभिधम्मन ेगधं पि सुत्तन्तभाजनीयं सुत्तन्तनयो एव, एकन्तअभिधम्मनयो पन अभि-धम्मभाजनीयं ति आह—"**अभिधम्मे पदभाजनीयनयेना**" ति।

दिभेदो नत्थि। तेसं येव पन उतुआहारचित्तसमुट्ठानान उपत्थम्भकवसेन तस्स अतीतादिभावो वेदितब्बो। (२)

समयवसेन एकमुहुत्त-पुब्बण्ह-सायन्ह-रत्तिन्दिवादीसु समयेसु सन्तानवसेन पवत्तमानं ततसमयं पच्चुप्पन्नं नाम, ततो पुब्बे अतोत, पच्छा अनागत। (३)

खणवसेन उप्पादादिखणत्तयपरियापन्नं पच्चुप्पन्नं, ततो पुब्बे अनागतं, पच्छा अतीत। (४)

अपि च अतिक्कन्तहेतुपच्चयकिच्चमतीतं, निट्ठितहेतुकिच्चमनिट्ठित-पच्चयकिच्च पच्चुप्पनं, उभयकिच्चमसम्पत्तं अनागतं। सकिच्चक्खणे व पच्चु-प्पन्न, ततो पुब्बे अनागत, पच्छा अतीतं। एत्थ च खणादिकथा वा निप्प-रियाया। सेसा सपरियाया।

६४ अज्झत्तबहिद्धा भेदो वुत्तनयो एव। अपि च —इध नियकज्झत्त पि अज्झत्त, परपुग्गलिकं पि च बहिद्धा ति वेदितब्ब। ओळारिकसुखुमभदो वुत्तनयो व।

६५ हीनपणीतभेदो दुविधो—परियायतो, निप्परियायतो च। तत्थ अकनि-ट्ठान रूपतो सुदस्सीन रूप **हीनं**, तदेव सुदस्सान रूपतो **पणीतं**। एवं याव नरकसत्तान रूप, ताव परियायतो हीनपणोतता वेदितब्बा। निप्परियायतो पन यत्थ अकुसलविपाक उप्पज्जति, तं हीन। यत्थ कुसलविपाक, त पणीत।

दूरे सन्तिके ति इद पि वुत्तनयमेव। अपि च—ओकासतो पेत्थ उपादायु-पादाय दूरसन्तिकता वेदितब्बा।

६६ **तदेकज्झं अभिसयूहित्वा**[1] **अभिसङ्खिपित्वा**[2] ति। तं अतीतादीहि पदेहि विसुं विसु निद्दिट्ठं रूपं सब्बं रुप्पनलक्खणसङ्खाते एकविधभावे पञ्ञाय रासिं कत्वा **रूपक्खन्धो** ति वुच्चती ति अयमेत्थ अत्थो।

एतेन सब्ब पि रूप रुप्पनलक्खणे रासिभावूपगमेन रूपक्खन्धो ति दस्सितं होति। न हि रूपतो अञ्ञो रूपक्खन्धो नाम अत्थि।

६७ यथा च रूपं, एव वेदनादयो पि वेदयितलक्खणादीसु रासिभावूप-गमनेन। न हि वेदनादीहि अञ्ञ वेदनाक्खन्धादयो नाम अत्थि।

अतीतादिविभागे पनेत्थ सन्ततिवसेन खणादिवसेन च वेदनाय अतीता-नागतपच्चुप्पन्नभावो वेदितब्बो। तत्थ **सन्ततिवसेन** एकवीथि-एकजवन-एक-समापत्तिपरियापन्ना एकवीथिविसयसमायोगप्पवत्ता च पच्चुप्पन्ना, ततो पुब्बे अतोता, पच्छा अनागता। **खणादिवसेन** खणत्तयपरियापन्ना पुब्बन्तापरन्त-

---

१. **अभिसंयूहित्वा** ति। समूहं कत्वा। २ **अभिसङ्खिपित्वा** ति। सङ्खेप कत्वा।

मज्झत्तगता सकिच्चं च कुरुमाना वेदना पच्चुप्पन्ना, ततो पुब्बे अतीता, पच्छा अनागता। अज्झत्तबहिद्धाभेदो नियकज्झत्तवसेन वेदितब्बो।

६८ ओळारिकसुखुमभेदो—"अकुसला वेदना ओळारिका, कुसलाब्याकता वेदना सुखुमा" (अभि० २–६) ति आदिना नयेन **विभङ्गे** वुत्तेन जाति-सभाव-पुग्गल-लोकिय-लोकुत्तरवसेन वेदितब्बो।

जातिवसेन ताव अकुसला वेदना सावज्जकिरियाहेतुतो किलेससन्तापभावतो च अवूपसन्तवुत्ती ति कुसलवेदनाय ओळारिका, सब्यापारतो[1] सउस्साहतो[2] सविपाकतो किलेससन्तापभावतो सावज्जतो च विपाकाब्याकताय ओळारिका, सविपाकतो किलेससन्तापभावतो सब्याबज्झतो[3] सावज्जतो च किरियाब्याकताय ओळारिका। कुसलाब्याकता पन वुत्तविपरियायतो अकुसलाय सुखुमा। द्वे पि कुसलाकुसलवेदना सब्यापारतो सउस्साहतो सविपाकतो च यथायोगं दुविधाय पि अब्याकताय ओळारिका। वुत्तविपरियायेन दुविधा पि अब्याकता ताहि सुखुमा। एव ताव जातिवसेन ओलारिकसुखुमता वेदितब्बा। (१)

सभाववसेन पन दुक्खा वेदना निरस्सादतो सविप्फारतो खोभकरणतो उब्बेजनीयतो अभिभवनतो च इतराहि द्वीहि ओळारिका। इतरा पन द्वे सातततो सन्ततो पणीततो मनापतो मज्झत्ततो च यथायोगं दुक्खाय सुखुमा। उभो पन सुखदुक्खा सविप्फारतो खोभकरणतो पाकटतो च अदुक्खमसुखाय ओळारिका। सा वुत्तविपरियायेन तदुभयतो सुखुमा। एव सभाववसेन ओळारिकसुखुमता वेदितब्बा। (२)

पुग्गलवसेन पन असमापन्नस्स वेदना नानारम्मणे विक्खित्तभावतो समापन्नस्स वेदनाय ओळारिका, विपरियायेन इतरा सुखुमा। एव पुग्गलवसेन ओळारिकसुखुमता वेदितब्बा। (३)

लोकियलोकुत्तरवसेन पन सासवा वेदना लोकिया। सा आसवुप्पत्तिहेतुतो ओघनियतो योगनियतो गन्थनियतो नीवरणियतो उपादानियतो सकिलेसिकतो पुथुज्जनसाधारणतो च अनासवाय ओळारिका। सा विपरियायेन सासवाय सुखुमा। एव लोकिय-लोकुरवसेन ओलारिकसुखुमता वेदितब्बा। (४)

६९ तत्थ जातिआदिवसेन सम्भेदो परिहरितब्बो। अकुसलविपाककाय-विञ्ञाणसम्पयुत्ता हि वेदना जातिवसेन अब्याकतत्ता सुखुमा पि समाना सभावादिवसेन ओळारिका होति। वुत्तं हेतं—"अब्याकता वेदना सुखमा। दुक्खा वेदना ओळारिका। समापन्नस्स वेदना सुखुमा। असमापन्नस्स वेदना

---

१. **सब्यापारतो** ति सईहतो। २. **सउस्साहतो** ति। ससत्तितो।

३. **सब्याबज्झतो** ति। किलेसदुक्खेन सदुक्खतो।

ओळारिका। सासवा वेदना ओळारिका। अनासवा वेदना सुखुमा" (अभि० २-७) ति। यथा च दुक्खा वेदना, एव सुखादयो पि जातिवसेन ओळारिका सभावादिवसेन सुखुमा होन्ति। तस्मा यथा जातिआदिवसेन सम्भेदो न होति, तथा वेदनान ओळारिकसुखुमता वेदितब्बा। सेय्यथीद—अब्याकता जातिवसेन कुसलाकुसलाहि सुखुमा। तत्थ कतमा अब्याकता ? किं दुक्खा ? किं सुखा ? कि समापन्नस्स ? कि असमापन्नस्स ? किं सासवा ? कि अनासवा ? ति एव सभावादिभेदो न परामसितब्बो। एस नयो सब्बत्थ।

७० अपि च "तं त वा पन वेदन उपादायुपादाय वेदना ओळारिका सुखुमा दट्ठब्बा" ति वचनतो अकुसलादोसु पि लोभसहगताय दोससहगता वदना अग्गि विय अत्तनो निस्सयदहनतो ओळारिका, लोभसहगता सुखुमा। दोससहगता पि नियता ओळारिका, अनियता सुखुमा। नियता पि कप्पट्ठितिका ओळारिका, इतरा सुखुमा। कप्पट्ठितिकासु पि असङ्खारिका ओळारिका, इतरा सुखुमा। लोभसहगता पन दिट्ठिसम्पयुत्ता ओळारिका, इतरा सुखुमा। सा पि नियता कप्पट्ठितिका असङ्खारिका ओळारिका, इतरा सुखुमा। अविसेसेन च अकुसला बहुविपाका ओळारिका, अप्पविपाका सुखुमा। कुसला पन अप्पविपाका ओळारिका, बहुविपाका सुखुमा।

७१. अपि च कामावचरकुसला ओळारिका, रूपावचरा सुखुमा ततो अरूपावचरा, ततो लोकुत्तरा। कामावचरा दानमया ओळारिका, सीलमया सुखुमा, ततो भावनामया। भावनामया पि दुहेतुका ओळारिका, तिहेतुका सुखुमा, तिहेतुका पि ससङ्खारिका ओळारिका, असङ्खारिका सुखुमा। रूपावचरा च पठमज्झानिका ओळारिका ·पे० पञ्चमज्झानिका सुखुमा व। अरूपावचरा च आकासानञ्चायतनसम्पयुत्ता ओळारिका ··पे० नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसम्पयुत्ता सुखुमा व। लोकुत्तरा च सोतापत्तिमग्गसम्पयुत्ता ओळारिका ·पे०····अरहत्तमग्गसम्पयुत्ता सुखुमा व। एस नयो ततभूमिविपाककिरियवेदनासु च दुक्खादिअसमापन्नादिसासवादिवसेन वुत्तावेदनासु च।

ओकासवसेन चा पि निरये दुक्खा ओळारिका। तिरच्छानयोनियं सुखुमा पे० ·परनिम्मितवसवत्तीसु सुखुमा व। यथा च दुक्खा, एव सुखा पि सब्बत्थ यथानुरूपं योजेतब्बा। वत्थुवसेन चापि हीनवत्थुका या काचि वेदना ओळारिका, पणीतवत्थुका सुखुमा। हीनपणीतभेदे या ओळारिका सा हीना, या च सुखुमा सा पणीता ति दट्ठब्बा।

७२ दूरपदं पन "अकुसला वेदना कुसलाब्याकताहि वेदनाहि दूरे"। (अभि० २-७) सन्तिकपद "अकुसला वेदना अकुसलाय वेदनाय सन्तिके" (अभि० २-७) ति आदिना नयेन **बिभङ्गे** विभत्तं। तस्मा अकुसला वेदना विस-

भागतो असंसट्ठतो असरिक्खतो च कुसलाब्याकताहि दूरे, तथा कुसलाब्याकता अकुसलाय। एस नयो सब्बवारेसु। अकुसला पन वेदना सभागतो च सरिक्खतो च अकुसलाय सन्तिके ति।

इद वेदनाक्खन्धस्स अतीतादिविभागे वित्थारकथामुखं ॥

तंतवेदनासम्पयुत्तानं पन सञ्ञादीन पि एवमेव वेदितब्बं ॥

कमादिविनिच्छयकथा

७३ एव विदित्वा च पुन एतेस्वेव—

खन्धेसु ञाणभेदत्थं कमतोथ विसेसतो।
अनूनाधिकतो चेव उपमातो तथेव च॥
दट्ठब्बतो द्विधा एवं पस्सन्तस्सत्थसिद्धिनो।
विनिच्छयनयो सम्मा विञ्ञातब्बो विभाविना[1] ॥

तत्थ **कमतो** ति। इध उप्पत्तिक्कमो, पहानक्कमो, पटिपत्तिक्कमो, भूमिक्कमो, देसनाक्कमो ति बहुविधो कमो। तत्थ "पठमं कललं होति, कलला होति अब्बुद" (स० १–२०७) ति एवमादि उप्पत्तिक्कमो। "दस्सनेन पहातब्बा धम्मा, भावनाय पहातब्बा धम्मा" (अभि० १–४) ति एवमादि पहानक्कमो। "सील-विसुद्धि, चित्तविसुद्धी" (म० १–१९८) ति एवमादि पटिपत्तिक्कमो। "कामावचरा, रूपावचरा" (अभि० १–२२९) ति एवमादि भूमिक्कमो। "चत्तारो सतिपट्ठाना, चत्तारो सम्मप्पधाना" (दी० ३–७९) ति वा, "दानकथं, सीलकथ" (दी० १–९५) ति वा एवमादि देसनाक्कमो।

तेसु इध उप्पत्तिक्कमो ताव न युज्जति, कललादीनं विय खन्धान पुब्बापरियववत्थानेन अनुप्पत्तितो। न पहानक्कमो, कुसलाब्याकतानं अप्पहातब्बतो। न पटिपत्तिक्कमो, अकुसलानं अप्पटिपज्जनीयतो। न भूमिक्कमो, वेदनादीनं चतुभूमिपरियापन्नत्ता। देसनाक्कमो पन युज्जति।

अभेदेन हि पञ्चसु खन्धेसु अत्तगाहपतितं वेनेय्यजनं समूहघनविनिब्भोगदस्सनेन अत्तगाहतो मोचेतुकामो भगवा हितकामो तस्स जनस्स सुखगहणत्थं चक्खुआदीनं पि विसयभूत ओळारिकं पठमं रूपक्खन्धं देसेसि। ततो इट्ठानिट्ठरूपसवेदनिकं वेदन। "य वेदयति तं सञ्जानाती" ति एव वेदनाविसयस्स आकारगाहिक सञ्ञ, सञ्ञावसेन अभिसङ्खारके सङ्खारे, तेसं वेदनादीनं निस्सयं अधिपतिभूत च नेसं विञ्ञाणं ति। एवं ताव कमतो विनिच्छयनयो विञ्ञातब्बो। (१)

---

१. **विभाविना** ति। पञ्ञवता।

विसेसतो ति। खन्धानं च उपादानक्खन्धान च विसेसतो। को पन नेस विसेसो ? खन्धा ताव अविसेसतो वुत्ता उपादानक्खन्धा सासव-उपादानिय-भावेन विसेसेत्वा। यथाह—

"पञ्च चेव वो, भिक्खवे, खन्धे देसिस्सामि, पञ्चुपादानक्खन्धे च, त सुणाथ। कतमे च, भिक्खवे, पञ्चक्खन्धा ? य किञ्चि, भिक्खवे, रूपं अतीता-नागतपच्चुप्पन्न पे० ·सन्तिके वा, अयं वुच्चति रूपक्खन्धो। या काचि वेदना पे० य किञ्चि विञ्ञाण पे० ··सन्तिके वा, अय वुच्चति, भिक्खवे, विञ्ञाणक्खन्धो। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, पञ्चक्खन्धा। कतमे च, भिक्खवे, पञ्चुपादनक्खन्धा ? य किञ्चि, भिक्खवे, रूप··पे० सन्तिके वा सासव उपा-दानिय, अय वुच्चति, भिक्खवे, रूपुपादनक्खन्धो। या काचि वेदना·· पे० यं किञ्चि विञ्ञाण ··पे०··सन्तिके वा सासवं उपादानिय, अय वुच्चति, भिक्खवे, विञ्ञाणुपादानक्खन्धो। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, पञ्चुपादनक्खन्धा" (स० २–२७८) ति।

एत्थ च यथा वेदनादयो अनासवा पि अत्थि, न एव रूप। यस्मा पनस्स रासट्ठेन खन्धभावो युज्जति, तस्मा खन्धेसु वुत्त। यस्मा रासट्ठेन च सासवट्ठेन च उपादानक्खन्धभावो युज्जति, तस्मा उपादानक्खन्धेसु वुत्त। वेदनादयो पन अनासवा व खन्धेसु वुत्ता। सासवा उपादानक्खन्धेसु। उपादानक्खन्धा ति चेत्थ **उपादानगोचरा** खन्धा उपादानक्खन्धा ति एवमत्थो दट्ठब्बो। इध पन सब्बे पेते एकज्झ कत्वा खन्धा ति अधिप्पेता। (२)

अनूनाधिकतो ति। कस्मा पन भगवता पञ्चेव खन्धा वुत्ता अनूना अनधिका ति ? सब्बसङ्खतसभागेकसङ्गहतो, अत्तत्तनियगाहवत्थुस्स एतपरमतो, अञ्ञेसं च तदवरोधतो।

अनेकप्पभेदेसु हि सङ्खतधम्मेसु सभागवसेन सङ्गय्हमानेसु रूप पि रूप-सभागेकसङ्गहवसेन एको खन्धो होति। वेदनासभागेकसङ्गहवसेन एको खन्धो होति। एस नयो सञ्ञादीसु। तस्मा सब्बसङ्खतसभागेकसङ्गहतो पञ्चेव वुत्ता।

एतपरम चेत अत्तत्तनियगाहवत्थु यदिदं रूपादयो पञ्च। वुत्तं हेतं— 'रूपे खो, भिक्खवे, सति रूपं उपादाय रूप अभिनिविस्स एवं दिट्ठि उप्पज्जति— "एतं मम, एसोहमस्मि, एसो मे अत्ता" ति। वेदनाय, सञ्ञाय, सङ्खारेसु, विञ्ञाणे सति विञ्ञाण उपादाय विञ्ञाणं अभिनिविस्स एवं दिट्ठि उप्पज्जति— "एतं मम, एसोहमस्मि, एसो मे अत्ता" ति। तस्मा अत्तत्तनियगाहवत्थुस्स एतपरमतो पि पञ्चेव वुत्ता।

ये पि चञ्ञे सीलादयो पञ्च धम्मक्खन्धा वुत्ता, ते पि सङ्खारक्खन्धे परियापन्नत्ता एत्थेव अवरोध गच्छन्ति। तस्मा अञ्ञेसं तदवरोधतो पि पञ्चेव वुत्ता ति एव अनूनाधिकतो विनिच्छयनयो विञ्ञातब्बो ति। (३)

उपमातो ति। एत्थ हि गिलानसालूपमो रूपुपादनक्खन्धो, गिलानूपमस्स विञ्ञाणुपादानक्खन्धस्स वत्थुद्वारारम्मणवसेन निवासट्ठानतो। गेलञ्ञूपमो वेदनुपादानक्खन्धो, आबाधकत्ता। गेलञ्ञसमुट्ठानूपमो सञ्ञुपादानक्खन्धो, कामसञ्ञादिवसेन रागादिसम्पयुत्तवेदनासम्भवा। असप्पायसेवनूपमो सङ्खारुपादानक्खन्धो, वेदनागेलञ्ञस्स निदानत्ता। "वेदन वेदनत्ताय अभिसङ्खरोन्ती" (स० २–३१३) ति हि वुत्तं। तथा "अकुमलस्स कम्मस्स कतत्ता उपचिनत्ता विपाक कायविञ्ञाणं उप्पन्नं होति दुक्खसहगत" (अभि० १–१३९) ति गिलानूपमो विञ्ञाणुपादानक्खन्धो, वेदनागेलञ्ञेन अपरिमुत्तता।

अपि च चारक-कारण-अपराध-कारणकारक-अपराधिकूपमा एते भाजन-भोजन-ब्यञ्जन-परिवेसक-भुञ्जकूपमा[1] चा ति। एव उपमातो विनिच्छयनयो विञ्ञातब्बो। (४)

दट्ठब्बतो द्विधा ति। सङ्खेपतो, वित्थारतो चा ति। एवं द्विधा दट्ठब्बतो पेत्थ विनिच्छयनया विञ्ञातब्बो।

सङ्खेपतो हि पञ्चुपादानक्खन्धा आसीविसूपमे (स० ३–१५६) वुत्तनयेन उक्खित्तासिकपच्चत्थिकतो, भारसुत्तवसेन (सं० २–२६१) भारतो, खज्जनायपरियायवसेन खादकतो, यमकसुत्तवसेन (सं० २–३१२) अनिच्चदुक्खानत्तसङ्खतवधकतो दट्ठब्बा।

वित्थारतो पनेत्थ फेणपिण्डो विय रूपं दट्ठब्बं, परिमद्दनासहनतो। उदकबुब्बुळ विय वेदना, मुहुत्तरमणीयतो। मरीचिका विय सञ्ञा, विप्पलम्भनतो। कदलिक्खन्धो विय सङ्खारा, असारकतो। माया विय विञ्ञाण, वञ्चकतो (स० २–३६०)। विसेसतो च सुळारं पि अज्झत्तिकं रूप असुभं ति दट्ठब्ब। वेदना तीहि दुक्खताहि अविनिमुत्ततो दुक्खा ति। सञ्ञासङ्खारा अविधेय्यतो अनत्ता ति। विञ्ञाण उदयब्बधम्मतो अनिच्च ति दट्ठब्बं। (५)

---

१ कारणट्ठानताय, भोजनाधारताय च **चारकूपमं, भाजनूपमं च** रूपं। सुभसञ्ञादिवसेन वेदनाकारणस्स हेतुभावतो, वेदनाभोजनस्स छादापनतो च **अपराधूपमा, ब्यञ्जनूपमा** च सञ्ञा। वेदनाहेतुतो **कारणकारकूपमो, परिवेसकूपमो** च सङ्खारक्खन्धो। भत्तकारो एव येभुय्येन परिविसती ति **परिवेसकग्गहण**। वेदनाय अनुग्गहेतब्बतो च **अपराधिकूपमं भुञ्जकूपमं च** विञ्ञाण वुत्तं।

एवं पस्सन्तस्सत्थसिद्धितो ति। एव च सङ्खेपवित्थारवसेन द्विधा पस्सतो या अत्थसिद्धि होति, ततो पि विनिच्छयनयो विञ्ञातब्बो। सेय्यथीद— सङ्खेपतो ताव पञ्चुपादानक्खन्धे उक्खित्तासिकपच्चत्थिकादिभावेन पस्सन्तो खन्धेहि न विहञ्ञति। वित्थारतो पन रूपादीनि फेणपिण्डादिसदिसभावेन पस्सन्तो न असारेसु सारदस्सी होति।

विसेसतो च अज्झत्तिकरूप असुभतो पस्सन्तो कबळीकाराहारं परिजानाति, असुभे सुभं ति विपल्लास पजहति, कामोघं उत्तरति, कामयोगेन विसयुज्जति, कामासवेन अनासवो होति, अभिज्झाकायगन्थं भिन्दति, कामुपादानं न उपादियति।

वेदनं दुक्खतो पस्सन्तो फस्साहारं परिजानाति, दुक्खे सुखं ति विपल्लास पजहति, भवोघं उत्तरति, भवयोगेन विसंयुज्जति, भवासवेन अनासवो होति, ब्यापादकायगन्थ भिन्दति, सीलब्बतुपादान न उपादियति।

सञ्ञं सङ्खारे च अनत्ततो पस्सन्तो मनोसञ्चेतनाहार परिजानाति, अनत्तनि अत्ता ति विपल्लासं पजहति, दिट्ठोघ उत्तरति, दिट्ठियोगेन विसं-युज्जति, दिट्ठासवेन अनासवो होति, इदंसच्चाभिनिवेसकायगन्थं भिन्दति, अत्तवादुपादानं न उपादियति।

विञ्ञाणं अनिच्चतो पस्सन्तो विञ्ञाणाहारं परिजानाति, अनिच्चे निच्च ति विपल्लासं पजहति, अविज्जोघं उत्तरति, अविज्जायोगेन विसयुज्जति, अविज्जासवेन अनासवो होति, सीलब्बतपरामासकायगन्थं भिन्दति, दिट्ठु-पादान न उपादियति॥ (६)

एव महानिससं बधकादिवसेन दस्सनं यस्मा।
तस्मा खन्धे धीरो वधकादिवसेन पस्सेय्या ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
पञ्ञाभावनाधिकारे खन्धनिद्देसो नाम
चुद्दसमो परिच्छेदो॥



आयतनधातुनिद्देसो

पन्नरसमो परिच्छेदो

आयतनवित्थारकथा

१. **आयतनानी** ति। द्वादसायतनानि—चक्खायतनं, रूपायतनं, सोतायतनं, सद्दायतनं, घानायतनं, गन्धायतनं, जिव्हायतनं, रसायतनं, कायायतनं, फोट्ठब्बायतनं, मनायतनं, धम्मायतनं ति। तत्थ—

अत्थ-लक्खण-तावत्व-कम-सङ्खेप-वित्थारा।
तथा दट्ठब्बतो चेव विञ्ञातब्बो विनिच्छयो॥

तत्थ विसेसतो ताव—चक्खती ति **चक्खु**। रूपं अस्सादेति विभावेति चाति अत्थो। रूपयती ति **रूपं**। वण्णविकारं आपज्जमानं हदयङ्गतभावं पकासेती ति अत्थो। सुणाती ति **सोतं**। सप्पती ति **सद्दो**। उदाहरियती ति अत्थो। घायती ति **घानं**। गन्धयती ति **गन्धो**। अत्तनो वत्थुं सूचयती ति अत्थो। जीवितं अव्हयती ति **जिव्हा**। रसन्ति तं सत्ता ति **रसो**। अस्सादेन्ती ति अत्थो। कुच्छितानं सासवधम्मानं आयो ति **कायो**। आयो ति उप्पत्तिदेसो। फुसियती ति **फोट्ठब्बं**। मुनाती ति **मनो**। अत्तनो लक्खणं धारेन्ती ति **धम्मा**।

२. अविसेसतो पन—आयतनतो, आयानं तननतो, आयतस्स च नयनतो **आयतनं** ति वेदितब्बं। चक्खुरूपादीसु हि तंतंद्वारारम्मणा चित्तचेतसिका धम्मा सेन सेन अनुभवनादिना किच्चेन आयतन्ति। उट्ठहन्ति घटन्ति वायमन्ती ति वुत्तं होति। ते च पन आयभूते धम्मे एतानि तनोन्ति वित्थारेन्ती ति वुत्तं होति। इदं च अनमतग्गे संसारे पवत्तं अतीव आयतं संसारदुक्खं याव न निवत्तति ताव नयन्तेव। पवत्तयन्ती ति वुत्तं होति। इति सब्बे पि धम्मा आयतनतो, आयानं तननतो, आयतस्स च नयनतो आयतनं आयतनं ति वुच्चति।

३. अपि च निवासट्ठानट्ठेन, आकरट्ठेन, समोसरणट्ठानट्ठेन, सञ्जातिदेसट्ठेन, कारणट्ठेन च **आयतनं** वेदितब्बं। तथा हि—१. लोके "इस्सरायतनं, वासुदेवायतनं" ति आदीसु निवासट्ठानं आयतनं ति वुच्चति। २. "सुवण्णायतनं रजतायतनं" ति आदीसु आकरो। ३. सासने पन "मनोरमे आयतने सेवन्ति नं विहङ्गमा" (अं० २-३०८) ति आदीसु समोसरणट्ठानं।

४ "दक्खिणापथो गुन्न आयतन" ति आदीसु सञ्जातिदेसो। ५. "तत्र तत्रेव सक्खिभब्बत[1] पापुणाति सति सति [2]आयतने" (अ० १-२३६) ति आदीसु कारण।

चक्खुआदीसु चा पि ते ते चित्तचेतसिका धम्मा निवसन्ति तदायत्तवुत्तिताया ति चक्खादयो च नेसं निवासट्ठानं। चक्खादीसु च ते आकिण्णा तन्निस्सितत्ता तदारम्मणत्ता चा ति चक्खादयो नेस आकरो। चक्खादयो च नेसं समोसरणट्ठानं, तत्थ तत्थ वत्थुद्वारारम्मणवसेन समोसरणतो। चक्खादयो च नेस सञ्जातिदेसो, तन्निस्सयारम्मणभावेन तत्थेव उप्पत्तितो। चक्खादयो च नेसं कारणं, तेसं अभावे अभावतो ति। इति निवासट्ठानट्ठेन आकरट्ठेन समासरणट्ठानट्ठन सञ्जातिदेसट्ठेन कारणट्ठेन चा ति इमेहि पि कारणेहि एते धम्मा आयतनं आयतन ति वुच्चन्ति।

तस्मा यथावुत्तेन अत्थेन चक्खु च त आयतन चा ति **चक्खायतनं**··· पे०··· धम्मा च ते आयतन चा ति **धम्मायतनं** ति। एव तावेत्थ **अत्थतो** विञ्ञातब्बो विनिच्छयो।

४. **लक्खणा** ति। चक्खादीन लक्खणतो पेत्थ विञ्ञातब्बो निनिच्छयो। तानि च पन तेस लक्खणानि **खन्धनिद्देसे**[3] वुत्तनयेनेव वेदितब्बानि।

तावत्वतो ति। तावभावतो। इद वुत्त होति—चक्खादयो पि हि धम्मा एव, एव सति धम्मायतनमिच्चेव अवत्वा कस्मा द्वादसायतनानी ति वुत्तानी ति चे? छविञ्ञाणकायुप्पत्तिद्वारारम्मणववत्थानतो। इध छन्न विञ्ञाणकायान द्वारभावेन आरम्मणभावेन च ववत्थानतो अयमेतेस भेदो होती ति द्वादस वुत्तानि।

चक्खुविञ्ञाणवीथिपरियापन्नस्स हि विञ्ञाणकायस्स चक्खायतनमेव उप्पत्तिद्वार, रूपायतनमेव चारम्मण। तथा इतरानि इतरेस। छट्ठस्स पन भवङ्गमनसङ्खातो मनायतनेकदेसो व उप्पत्तिद्वार, असाधारणमेव च धम्मायतनं आरम्मण ति। इति छन्नं विञ्ञाणकायान उप्पत्तिद्वारारम्मणववत्थानतो द्वादस वुत्तानी ति एवमेत्थ तावत्वता विञ्ञातब्बो विनिच्छयो।

५ **कमतो** ति। इधा पि पुब्बे वुत्तसु[4] उप्पत्तिक्कमादीसु देसनाक्कमो व युज्जति। अज्झत्तिकेसु हि आयतनेसु सनिदस्सनसप्पटिघविसयत्ता चक्खायतनं पाकट ति पठमं देसित। तता अनिदस्सनसप्पटिघविसयानि सोतायतनादीनि।

---

१ सक्खिभब्बतं ति। पच्चक्खभावं। २. सति सति आयतने ति। सति सति कारणे।

३. खन्धनिद्देसे ति। रूपाभिघातारहभूतप्पसादलक्खण चक्खुप्पटिहननलक्खण रूपं चा ति खन्धनिद्देसे वुत्तनयेन।

४ खन्धनिद्देसे वुत्तेसु उप्पत्तिक्कमादिसू त्यत्थो।

अथ वा—दस्सनानुत्तरियसवनानुत्तरियहेतुभावेन बहूपकारत्ता अज्झत्तिकेसु चक्खायतन-सोतायतनानि पठम देसितानि, ततो घानायतनादीनि तीणि। पञ्चन्न पि गोचरविसयत्ता अन्ते मनायतन। चक्खायतनादीनं पन गोचरत्ता तस्स तस्स अन्तरन्तरानि बाहिरेसु रूपायतनादीनि।

अपि च विञ्ञाणुप्पत्तिकारणववत्थानतो पि अयमेतेस कमो वेदितब्बो। वुत्तं हेत—"चक्खु च पटिच्च रूपे च उप्पज्जति चक्खुविञ्ञाण'' पे०'' 'मनं च पटिच्च धम्मे च उपज्जति मनोविञ्ञाणं" (म० ३–३८१) ति। एव कमतो पेत्थ विञ्ञातब्बो विनिच्छयो।

६ **सङ्खेपवित्थारा** ति। सङ्खेपतो हि—मनायतनस्स चेव धम्मायतनेकदेसस्स च नामेन तदवसेसानं च आयतनान रूपेन सङ्गहितत्ता द्वादसापि आयतनानि नामरूपमत्तमेव होन्ति।

वित्थारतो पन—अज्झत्तिकेसु ताव चक्खायतन जातिवसेन चक्खुप्पसादमत्तमेव, पच्चय-गति-निकाय-पुग्गलभेदतो पन अनन्तप्पभेद। तथा सोतायतनादीनि चत्तारि। मनायतनं कुसलाकुसल-विपाक-किरिय-विञ्ञाणभेदेन एकूननवुतिप्पभेद, एकवीसुत्तरसतप्पभेदं च। वत्थुपटिपदादिभेदतो पन अनन्तप्पभेदं। रूप-सद्द-गन्ध-रसायतनानि विसभागपच्चयादिभेदतो अनन्तप्पभेदानि। फोट्ठब्बायतन पथवीधातु-तेजोधातु-वायोधातुवसेन तिप्पभेदं। पच्चयादिभेदतो अनेकप्पभेदं। धम्मायतन वेदना-सञ्ञा-सङ्खारक्खन्ध-सुखुमरूप-निब्बानानं सभावनानत्तभेदतो अनेकप्पभेद ति। एव सङ्खेपवित्थारा विञ्ञातब्बो विनिच्छयो।

७ **दट्ठब्बतो** ति। एत्थ पन सब्बानेव सङ्खतानि आयतनानि अनागमनतो अनिग्गमनतो च दट्ठब्बानि। न हि तानि पुब्बे उदया कुतोचि आगच्छन्ति, न पि उद्ध वया कुहिञ्चि गच्छन्ति, अथ खो पुब्बे उदया अप्पटिलद्धसभावानि, उद्ध वया परिभिन्नसभावानि, पुब्बन्तापरन्तवेमज्झे पच्चयायत्तवुत्तिताय अवसानि पवत्तन्ति। तस्मा अनागमनतो अनिग्गमनतो च दट्ठब्बानि। तथा निरीहकतो अब्यापारतो च। न हि चक्खुरूपादीन एव होति—"अहो वत अम्हाक सामग्गिय विञ्ञाण नाम उप्पज्जेय्या" ति, न च तानि विञ्ञाणुप्पादनत्थं द्वारभावेन वत्थुभावेन आरम्मणभावेन वा ईहन्ति, न ब्यापारमापज्जन्ति; अथ खो धम्मता वेसा, यं चक्खुरूपादिसामग्गियं चक्खुविञ्ञाणादीनि सम्भवन्ती ति। तस्मा निरीहकतो अब्यापारतो च दट्ठब्बानि।

अपि च, अज्झत्तिकानि सुञ्ञगामो विय दट्ठब्बानि, धुवसुभसुखत्तभावविरहितत्ता। बाहिरानि गामघातकचोरा विय, अज्झत्तिकानं अभिघातकत्ता। वुत्त हेतं—"चक्खु, भिक्खवे, हञ्ञति मनापामनापेहि रूपेही" (स० ३–१५८)

ति वित्थारो। अपि च अज्झत्तिकानि छ पाणका विय (स० ३–१७८) दट्ठब्बानि, बाहिरानि तेसं गोचरा विया ति। एवमेत्थ दट्ठब्बतो विञ्ञातब्बो विनिच्छयो।

इदं ताव आयतनान वित्थारकथामुख ॥

धातुवित्थारकथा

८ तदनन्तरा पन **धातुयो** ति। अट्ठारस धातुयो—चक्खुधातु, रूपधातु, चक्खुविञ्ञाणधातु, सोतधातु, सद्दधातु, सोतविञ्ञाणधातु, घानधातु गन्धधातु, घानविञ्ञाणधातु, जिव्हाधातु, रसधातु, जिव्हाविञ्ञाणधातु, कायधातु, फोट्ठ-धातु, कायविञ्ञाणधातु, मनोधातु, धम्मधातु, मनोविञ्ञाणधातू ति। तत्थ—

अत्थतो लक्खणादीहि कम-तावत्व-सङ्खतो।
पच्चया अथ दट्ठब्बा वेदितब्बो विनिच्छयो॥

तत्थ **अत्थतो** ति। चक्खती ति चक्खु, रूपयती ति रूपं, चक्खुस्स विञ्ञाणं चक्खुविञ्ञाण ति एवमादिना ताव नयेन चक्खादीन विसेसत्थतो वेदितब्बो विनिच्छयो। अविसेसेन पन विदहति, धीयते, विधान, विधीयते एताय, एत्थ वा धीयती ति धातु।

लोकिया हि धातुयो कारणभावेन ववत्थिता हुत्वा सुवण्णरजतादिधातुयो विय सुवण्णरजतादिं अनेकप्पकारं संसारदुक्ख विदहन्ति। भारहारेहि च भारो विय, सत्तेहि धीयन्ते, धारियन्ती ति अत्थो। दुक्खविधानमत्तमेव चेसा, अवसवत्तनतो। एताहि च कारणभूताहि ससारदुक्ख सत्तेहि अनुविधीयति। तथा विहित च तं एतास्वेव धीयति, ठपियती ति अत्थो। इति चक्खादीसु एकेको धम्मो यथासम्भवं विदहति, धीयती ति आदिना अत्थवसेन धातू ति वुच्चति।

९ अपि च यथा तित्थियानं अत्ता नाम सभावतो नत्थि, न एवमेता। एता पन अत्तनो सभाव धारेन्ता ति धातुयो। यथा लोके विचित्ता हरिताल-मनोसिलादयो सेलावयवा धातुयो ति वुच्चन्ति, एवमेता पि धातुयो विय धातुयो। विचित्ता हेते ञाणञेय्यावयवा ति। यथा वा सरीरसङ्खातस्स समुदायस्स अवयवभूतेसु रसमोणितादीसु अञ्ञमञ्ञविसभागलक्खणपरिच्छिन्नेसु धातुसमञ्ञा, एवमेतेसु पि पञ्चक्खन्धसङ्खातस्स अत्तभावस्स अवयवेसु धातु-समञ्ञा वेदितब्बा। अञ्ञमञ्ञविसभागलक्खणपरिच्छिन्ना हेते चक्खादयो ति।

अपि च धातू ति निज्जीवमत्तस्सेवेत अधिवचन। तथा हि भगवा "छधातुरो"[1]

---

१. छ धातुयो एतस्सा ति **छधातुरो**। यो लोके पुरिसो ति धम्मसमुदायो वुच्चति, सो छधातुरो छन्नं पथवीआदीनं निज्जीवमत्तान सभावान समुदायमत्तो॥ न एत्थ जीवो वा पुरिसो वा अत्थी ति अत्थो।

अयं, भिक्खु, पुरिसो" (म० २–३२३) ति आदीसु जीवसञ्ञासमूहननत्थं धातुदेसन अकासी ति। तस्मा यथावुत्तेन अत्थेन चक्खु च तं धातु च चक्खु-धातु पे० "मनोविञ्ञाण च त धातु च मनोविञ्ञाणधातू ति। एवं तावेत्थ अत्थतो वेदितब्बो विनिच्छयो।

१०. **लक्खणादितो** ति। चक्खादीन लक्खणादितो पेत्थ वेदितब्बो विनिच्छयो। तानि च पन नेस लक्खणादीनि **खन्धनिद्देसे** वुत्तनयेनेव[1] वेदि-तब्बानि।

कमतो ति। इधापि पुब्बे[2] वुत्तेसु उप्पत्तिक्कमादीसु देसनाक्कमो व युज्जति। सो च पनाय हेतुफलानुपुब्बववत्थानवसेन वुत्तो। चक्खुधातु, रूपधातू ति इदं हि द्वय हेतु; चक्खुविञ्ञाणधातू ति फलं। एव सब्बत्थ।

११ **तावत्वतो** ति। तावभावतो। इदं वुत्तं होति—तेसु तेसु हि सुत्ताभि-धम्मप्पदेसेसु "आभाधातु, सुभा धातु, आकासानञ्चायतनधातु, विञ्ञाण-ञ्चायतनधातु, आकिञ्चञ्ञायतनधातु, नेवसञ्ञानासञ्ञायतनधातु, सञ्ञा-वेदयितनिरोधधातु" (स० २–१२७), "कामधातु, ब्यापादधातु, विहिंसाधातु, नेक्खम्मधातु, अब्यापादधातु, अविहिंसाधातु" (दी० ३–१७०), "सुखधातु, दुक्खधातु, सोमनस्सधातु, दोमनस्सधातु, उपेक्खाधातु, अविज्जाधातु" (म० ३–१२६), "आरम्भधातु निक्कमधातु, परक्कमधातु" (स० ४–६३), "हीन-धातु, मज्झिमधातु, पणीतधातु" (दी० ३–१७०), "पथवीधातु, आपोधातु, तेजोधातु, वायोधातु, आकासधातु, विञ्ञाणधातु" (अभि० २–१०२), "सङ्खत-धातु, असङ्खतधातु" (म० ३–१२६), "अनेकधातुनानाधातु लोको" (दी० २–२११) ति एवमादयो अञ्ञा पि धातुयो दिस्सन्ति। एव सति सब्बास वसेन परिच्छेद अकत्वा कस्मा अट्ठारसा ति अयमेव परिच्छेदो कतो ति चे? सभावतो विज्जमानानं सब्बधातूनं तदन्तोगधत्ता।

रूपधातु येव हि आभाधातु। सुभधातु पन रूपादिपटिबद्धा। कस्मा? सुभनिमत्तत्ता। सुभनिमित्तं हि सुभधातु, त च रूपादिविनिमुत्तं न विज्जति। कुसलविपाकारम्मणा वा रूपादयो एव सुभधातू ति रूपादिमत्तमेवेसा। आका-सानञ्चायतनधातुआदीसु चित्तं मनोविञ्ञाणधातु येव, सेसा धम्मधातु। सञ्ञावेदयितनिरोधधातु पन सभावतो नत्थि। धातुद्वयनिरोधमत्तमेव हि सा।

कामधातु धम्मधातुमत्तं वा होति। यथाह—"तत्थ कतमा कामधातु? कामपटिसंयुत्तो तक्को वितक्को मिच्छासङ्कप्पो" (अभि० २–१०७) ति। अट्ठारसा पि वा धातुयो। यथाह—"हेट्ठतो अवीचिनिरय परियन्तं करित्वा

---

[1] पुब्बं खन्धनिद्देसे वुत्तानि लक्खणादीनीत्यत्थो। [2]. पुब्बे ति। खन्धनिद्देसे।

उपरितो परनिम्मितवसवत्ती देवे अन्तोकरित्वा य एतस्मि अन्तरे एत्थावचरा एत्थ परियापन्ना खन्ध-धातु-आयतना रूपा वेदना सञ्ञा सङ्खारा विञ्ञाण— अयं वुच्चति कामधातू" ति।

नेक्खम्मधातु धम्मधातु एव, "सब्बे पि कुसला धम्मा नेक्खम्मधातू" (अभि० २-१०८) ति वचनतो मनोविञ्ञाणधातु पि होति येव। ब्यापाद-विहिंसा-अब्यापाद-अविहिंसा - सुख-दुक्ख - सोमनस्स - दोमनस्सुपेक्खा - अविज्जा-आरम्भ-निक्कम-परक्कमधातुयो धम्मधातु येव।

हीन-मज्झिम-पणीतधातुयो अट्ठारसधातुमत्तमेव। हीना हि चक्खादयो हीना धातु, मज्झिमपणीता मज्झिमा चेव पणीता च। निप्परियायेन पन अकुसला धम्मधातु-मनोविञ्ञाणधातुयो हीनधातु। लोकिया कुसलाब्याकता उभो पि चक्खुधातुआदयो च मज्झिमधातु। लोकुत्तरा पन धम्मधातु-मनोविञ्ञाणधातुयो पणीतधातु।

पथवी-तेजो-वायोधातुयो फोट्ठब्बधातु येव, आपोधातु आकासधातु च धम्म-धातु येव। विञ्ञाणधातु चक्खुविञ्ञाणादिसत्तविञ्ञाणधातुसङ्खेपो येव।

सत्तरस धातुयो धम्मधातु एकदेसो च सङ्खतधातु। असङ्खता पन धातु धम्मधातुएकदेसो व। अनेकधातुनानाधातु लोको पन अट्ठारस धातुप्पभेदमत्त-मेवा ति। इति सभावतो विज्जमानान सब्बधातून तदन्तोगधत्ता अट्ठारसेव वुत्ता ति।

१२ अपि च विजाननसभावे विञ्ञाणे जीवसञ्ञीनं सञ्ञासमूहननत्थ पि अट्ठारसेव वुत्ता। सन्ति हि सत्ता विजाननसभावे विञ्ञाणे जीवसञ्ञिनो। तेस चक्खु-सोत-घान-जिव्हा-काय-मनोधातु-मनोविञ्ञाणधातुभेदेन तस्स अनेकत चक्खुरूपादिपच्चयायत्तवुत्तिताय अनिच्चतं च पकासेत्वा दीघरत्तानुसयित जीवसञ्ञ समूहनितुकामेन भगवता अट्ठारस धातुयो पकासिता।

किञ्च भिय्यो तथावेनेय्यज्झासयवसेन च। ये च इमाय अनतिसङ्खेप-वित्थाराय देसनाय वेनेय्यसत्ता, तदज्झासयवसेन च अट्ठारसेव पकासिता।

सङ्खेपवित्थरनयेन तथा तथा हि, धम्म पकासयति एस यथा यथास्स।
सद्धम्मतेजविहत विलयं खणेन, वेनेय्यसत्तहदयेसु तमो पयाती ति॥

एवमेत्थ तावत्वतो वेदितब्बो विनिच्छयो।

१३ **सङ्खतो**[1] ति। चक्खुधातु ताव जातितो[2] एको धम्मो त्वेव सङ्ख गच्छति चक्खुप्पसादवसेन, तथा सोतघानजिव्हाकायरूपसद्दगन्धरसधातुयो सोतप्पसादा-

---

१. **सङ्खतो** ति। गणनतो।　　२ **जातितो** ति। चक्खुसभावतो।

दिवसेन। फोट्ठब्बधातु पन पथवीतेजोवायोवसेन तयो धम्मा ति सङ्खं गच्छति। चक्खुविञ्ञाणधातु कुसलाकुसलविपाकवसेन द्वे धम्मा ति सङ्खं गच्छति। तथा सोतघानजिव्हाकायविञ्ञाणधातुयो। मनोधातु पन पञ्चद्वारावज्जनकुसलाकुसलविपाकसम्पटिच्छनवसेन तयो धम्मा ति सङ्खं गच्छति। धम्मधातु तिण्णं अरूपक्खन्धान सोळसन्न सुखुमरूपान असङ्खताय च धातुया वसेन वीसति धम्मा ति सङ्खं गच्छति। मनोविञ्ञाणधातु सेसकुसलाकुसलाब्याकतविञ्ञाणवसेन छसत्तति धम्मा ति सङ्खं गच्छति। एवमेत्थ सङ्खतो पि वेदितब्बो विनिच्छयो।

१४ **पच्चया** ति। एत्थ च चक्खुधातु ताव चक्खुविञ्ञाणधातुया विप्पयुत्त-पुरेजात-अत्थि-अविगत-निस्सयिन्द्रियपच्चयानं वसेन छहि पच्चयेहि पच्चयो होति। रूपधातु पुरेजात-अत्थि-अविगतारम्मणपच्चयान वसेन चतूहि पच्चयेहि पच्चयो होति। एवं सोतविञ्ञाणधातुआदीनं सोतधातु-सद्दधातुआदयो।

पञ्चन्न पन नेस आवज्जनमनोधातु अनन्तरसमनन्तरनत्थिविगतानन्तरूपनिस्सयवसेन पञ्चहि पच्चयेहि पच्चयो होति, ता च पञ्च पि सम्पटिच्छनमनोधातुया। तथा सम्पटिच्छनमनोधातु सन्तीरणमनोविञ्ञाणधातुया, सा च वोट्ठपनमनोविञ्ञाणधातुया, वोट्ठपनमनोविञ्ञाणधातु च जवनमनोविञ्ञाणधातुया। जवनमनोविञ्ञाणधातु पन अनन्तराय जवनमनोविञ्ञाणधातुया, तेहि चेव पञ्चहि आसेवनचच्चयेन चा ति छहि पच्चयेहि पच्चयो होति। एस ताव पञ्चद्वारे नयो।

मनोद्वारे पन भवङ्गमनोविञ्ञाणधातु आवज्जनमनोविञ्ञाणधातुया। आवज्जनमनोविञ्ञाणधातु च जवनमनोविञ्ञाणधातुया पुरिमेहि पञ्चहि पच्चयेहि पच्चयो होति।

धम्मधातु पन सत्तन्न पि विञ्ञाणधातून सहजात-अञ्ञमञ्ञ-निस्सय-सम्पयुत्त-अत्थि-अविगतादीहि बहुधा पच्चयो होति। चक्खुधातुआदयो पन एकच्चा च धम्मधातु एकच्चाय मनोविञ्ञाणधातुया आरम्मणपच्चयादीहि पि पच्चया होन्ति। चक्खुविञ्ञाणधातुआदीनं च न केवलं चक्खुरूपादयो व पच्चया होन्ति, अथ खो आलोकादयो पि। तेनाहु **पुब्बाचरिया**—

"चक्खुरूपालोकमनसिकारे पटिच्च उप्पज्जति चक्खुविञ्ञाणं। सोतसद्दविवरमनसिकारे पटिच्च उप्पज्जति सोतविञ्ञाणं। घानगन्धवायुमनसिकारे पटिच्च उप्पज्जति घानविञ्ञाणं। जिव्हारसआपमनसिकारे पटिच्च उप्पज्जति जिव्हाविञ्ञाणं। कायफोट्ठब्बपथवीमनसिकारे पटिच्च उप्पज्जति कायविञ्ञाण। भवङ्गमनधम्ममनसिकारे पटिच्च उप्पज्जति मनोविञ्ञाण" ति।

अयमेत्थ सङ्खेपो। वित्थारतो पन पच्चयप्पभेदो पटिच्चसमुप्पादनिद्देसे[1] आविभविस्सती ति। एवमेत्थ पच्चयतो पि वेदितब्बो विनिच्छयो।

१५. **दट्ठब्बा** ति। दट्ठब्बतो पेत्थ विनिच्छयो वेदितब्बो ति अत्थो। सब्बा एव हि सङ्खतधातुयो पुब्बन्तापरन्तविवित्ततो धुवसुभसुखत्तभावसुञ्ञतो पच्चयायत्तवुत्तितो च दट्ठब्बा।

विसेसतो पनेत्थ—भेरितल विय चक्खुधातु दट्ठब्बा, दण्डो विय रूपधातु, सद्दो विय चक्खुविञ्ञाणधातु। तथा अदासतलं विय चक्खुधातु, मुखं विय रूपधातु, मुखनिमित्त विय चक्खुविञ्ञाणधातु। अथ वा—उच्छुतिला विय चक्खुधातु, यन्तचक्कयट्ठि विय रूपधातु, उच्छुरसतेलानि विय चक्खुविञ्ञाणधातु। तथा अधरारणी विय चक्खुधातु, उत्तरारणी विय रूपधातु, अग्गि विय चक्खुविञ्ञाणधातु। एस नयो सोतधातुआदीसु।

मनोधातु पन यथासम्भवतो चक्खुविञ्ञाणधातुआदीन पुरेचरानुचरा विय दट्ठब्बा।

धम्मधातुया वेदनाक्खन्धो सल्लमिव सूलमिव च दट्ठब्बो। सञ्ञासङ्खारक्खन्धा वेदनासल्लसूलयोगा आतुरा विय, पुथुज्जनान वा सञ्ञा आसादुक्खजननतो रित्तमुट्ठि विय। अयथाभुच्चनिमित्तगाहकतो वनमिगो विय। सङ्खारा पटिसन्धिय पक्खिपनतो अङ्गारकासुयं खिपनकपुरिसा विय। जातिदुक्खानुबन्धतो राजपुरिसानुबन्धचोरा विय। सब्बानत्थावहस्स खन्धसन्तानस्स हेतुतो विसरुक्खबीजानि विय। रूप नानाविधुपद्दवनिमित्ततो उरचक्क[2] विय दट्ठब्बं। असङ्खता पन धातु अमततो सन्ततो खेमतो च दट्ठब्बा। कस्मा? सब्बानत्थावहस्स पटिपक्खभूतत्ता।

मनोविञ्ञाणधातु आरम्मणेसु ववत्थानाभावतो[3] अरञ्ञमक्कटो विय,

---

१. सत्तरसमे पञ्ञाभूमिनिद्देसे त्यत्थो।

२. उरचक्कं ति। भममानं चक्कं। एत्थ 'खुरचक्कं' ति मरम्मपाठो, सो न गहेतब्बो। 'उर गमने' ति हि वेदिको धातु। उरति गच्छतीति उर, उरं च तं चक्क चा ति उरचक्कं। **अभिधानप्पदीपिकायं** पि वुत्तं—"रथङ्गे लक्खणे धम्मोरचक्केस्विरियापथे" ति।

३. **ववत्थानाभावो** ति। "इदमेव इमस्स आरम्मण" ति नियमाभावो। तेन यथा अरञ्ञमक्कटो केनचि अनिवारितो गहित एकं रुक्खसाखं मुञ्चित्वा अञ्ञं गण्हाति, तं पि मुञ्चित्वा अञ्ञ ति कत्थचि अनवट्ठितो परिब्भमति; एव गहितं एकं आरम्मणं मुञ्चित्वा अञ्ञं, तं पि मुञ्चित्वा अञ्ञं ति अनवट्ठितता, आरम्मणं अग्गहेत्वा पवत्तितुं असमत्थता च मक्कटसमानता ति दस्सेति।

दुद्दमनतो अस्सखळुङ्को[1] विय, यत्थकामनिपातितो[2] वेहासक्खित्तदण्डो विय, लोभदोसादिनानप्पकारकिलेसवेसयोगतो रङ्गनटो[3] विय दट्ठब्बा ति।

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
पञ्ञाभावनाधिकारे आयतननधातुनिद्देसो नाम
पन्नरसमो परिच्छेदो ॥



१. अट्ठिवेधविद्धो पि उप्पथं अनुगच्छन्तो दुट्ठस्सो **अस्सखळुङ्को**।

२ **यत्थकामनिपातितो** ति। यत्थ कत्थचि इच्छितारम्मणे निपातभावतो।

३. नानावेसधारी **रङ्गनटो**।

इन्द्रियसच्चनिद्देसो

सोळसमो परिच्छेदो

इन्द्रियवित्थारकथा

१ धातून अनन्तर उद्दिट्ठानि पन इन्द्रियानी ति बावीसतिन्द्रियानि—चक्खुन्द्रिय, सोतिन्द्रियं, घानिन्द्रिय, जिव्हिन्द्रिय, कायिन्द्रिय, मनिन्द्रिय, इत्थिन्द्रिय, पुरिसिन्द्रिय, जीवितिन्द्रिय, सुखिन्द्रियं, दुक्खिन्द्रिय, सोमनस्सिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रिय, सद्धिन्द्रियं, विरियिन्द्रियं, सतिन्द्रिय, समाधिन्द्रिय, पञ्ञिन्द्रिय, अनञ्ञातञ्ञस्सामीतिन्द्रिय, अञ्ञिन्द्रिय, अञ्ञाताविन्द्रिय ति। तत्थ—

अत्थतो लक्खणादीहि कमतो च विजानिया।
भेदाभेदा तथा किच्चा भूमितो च विनिच्छय ॥

२ तत्थ चक्खादीनं ताव चक्खती ति चक्खू ति आदिना नयेन अत्थो पकासितो। पच्छिमेसु पन तीसु पठम पुब्बभागे अनञ्ञातं अमतं पदं चतुसच्चधम्म वा जानिस्सामी ति एव पटिपन्नस्स उप्पज्जनतो इन्द्रियट्ठसम्भवतो च अनञ्ञातञ्ञस्सामीतिन्द्रिय ति वुत्त। दुतिय अजाननतो इन्द्रियट्ठसम्भवतो च अञ्ञिन्द्रिय। ततिय अञ्ञाताविनो चतूसु सच्चेसु निट्ठितञाणकिच्चस्स खीणासवस्स उप्पज्जनतो, इन्द्रियट्ठसम्भवतो च अञ्ञाताविन्द्रिय।

को पन नेसं **इन्द्रियट्ठो** नामा ति? इन्दलिङ्गट्ठो इन्द्रियट्ठो। इन्ददेसितट्ठो इन्द्रियट्ठो। इन्ददिट्ठट्ठो इन्द्रियट्ठो। इन्दसिट्ठट्ठो इन्द्रियट्ठो। इन्दजुट्ठट्ठो इन्द्रियट्ठो। सो सब्बो पि इध यथायोगं युज्जति।[1]

भगवा हि सम्मासम्बुद्धो परमिस्सरियभावतो इन्दो। कुसलाकुसल च कम्म, कम्मेसु कस्सचि इस्सरियाभावतो। तेनेवेत्थ कम्मसञ्जनितानि ताव इन्द्रियानि कुसलाकुसल कम्म उल्लिङ्गेन्ति। तेन च सिट्ठानी ति इन्दलिङ्गट्ठेन इन्दसिट्ठट्ठेन च इन्द्रियानि। सब्बानेव पनेतानि भगवता यथाभूततो पकासितानि अभिसम्बुद्धानि चा ति इन्ददेसितट्ठेन इन्ददिट्ठट्ठेन च इन्द्रियानि। तेनेव

---

१ एत्थ "इन्द्रियमिन्द्रलिङ्गमिन्द्रदृष्टमिन्द्रसृष्टमिन्द्रजुष्टमिन्द्रदत्तमिति वा" (पा० सू० ५ २.९३) ति पाणिनिसुत्त पि परिसीलनीयं।

भगवता मुनिन्देन कानिचि गोचरासेवनाय, कानिचि भावनासेवनाय सेवितानी ति इन्दजुट्ठट्ठेना पि इन्द्रियानि।

अपि च, आधिपच्चसङ्खातेन इस्सरियट्ठेना पि एतानि इन्द्रियानि चक्खुविञ्ञाणादिप्पवत्तियं हि चक्खादीन सिद्ध आधिपच्च, तस्मि तिक्खे तिक्खत्ता मन्दे च मन्दत्ता ति। अय तावेत्थ अत्थतो विनिच्छयो।

३ **लक्खणादीही** ति। लक्खणरसपच्चुपट्ठानपदट्ठानेहि पि चक्खादीनं विनिच्छयं विजानिया ति अत्थो। तानि च नेसं लक्खणादीनि **खन्धनिद्देसे** वुत्तानेव। पञ्ञिन्द्रियादीनि हि चत्तारि अत्थतो अमोहो येव। सेसानि तत्थ सरूपेनेव आगतानि।

४ **कमतो** ति। अयं पि देसनाक्कमो व। तत्थ अज्झत्तधम्मे परिञ्ञाय अरियभूमिपटिलाभो होती ति अत्तभावपरियापन्नानि चक्खुन्द्रियादीनि पठम देसितानि। सो पन अत्तभावोय धम्म उपादाय 'इत्थी' ति वा 'पुरिसो' ति वा सङ्खं गच्छति, अय सो ति निदस्सनत्थ ततो इत्थिन्द्रिय पुरिसिन्द्रिय च। सो दुविधो पि जीवितिन्द्रियपटिबद्धवुत्ती ति ञापनत्थ ततो जीवितिन्द्रियं। याव तस्स पवत्ति, ताव एतेसं वेदयितान अनिवत्ति। य च किञ्चि वेदयित, सब्ब त दुक्खं ति ञापनत्थं ततो सुखिन्द्रियादीनि। त निरोधत्थ पन एते धम्मा भावतब्बा ति पटिपत्तिदस्सनत्थं ततो सद्धादीनि। इमाय पटिपत्तिया एस धम्मो पठमं अत्तनि पातुभवती ति पटिपत्तिया अमोघभावदस्सनत्थं ततो अनञ्ञातञ्ञस्सामीतिन्द्रिय। तस्सेव फलत्ता ततो अनन्तर भावेतब्बतो च ततो अञ्ञिन्द्रियं। ततो परं भावनाय इमस्स अधिगमो, अधिगते च पन इमस्मि 'नत्थि किञ्चि उत्तरि करणीयं' ति ञापनत्थ अन्ते परमस्सासभूतं अञ्ञाताविन्द्रिय देसित ति अयमेत्थ कमो।

५. **भेदाभेदा** ति। जीवितिन्द्रियस्सेव भेदो। तं हि रूपजीवितिन्द्रियं, अरूपजीवितिन्द्रिय ति दुविध होति। सेसान अभेदो ति। एवमेत्थ भदाभदतो विनिच्छय विजानिया।

६ **किच्चा** ति। किमिन्द्रियानं किच्चं ति चे। चक्खुन्द्रियस्स ताव "चक्खायतनं चक्खुविञ्ञाणधातुया तसम्पयुत्तकानं च धम्मानं पच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ · १–९) ति वचनतो य तं इन्द्रियपच्चयभावेन साधेतब्बं अत्तनो तिक्खमन्दादिभावेन चक्खुविञ्ञाणादिधम्मान तिक्खमन्दादिसङ्खातं अत्ताकारानुवत्तापन, इदं किच्च। एव सोतघानजिव्हाकायान। मनिन्द्रियस्स पन सहजातधम्मानं अत्तनो वसवत्तापनं। जीवितिन्द्रियस्स सहजातधम्मानुपालनं। इत्थिन्द्रिय-पुरिसिन्द्रियान इत्थि-पुरिसलिङ्गनिमित्तकुत्ताकप्पाकारानुविधानं।

सुख-दुक्ख-सोमनस्स-दोमनस्सिन्द्रियानं सहजातधम्मे अभिभवित्वा यथासकं ओळारिकाकारानुपापन। उपेक्खिन्द्रियस्स सन्त-पणीत-मज्झत्ताकारानुपापनं। सद्धादीनं पटिपक्खाभिभवनं सम्पयुत्तधम्मान च पसन्नाकारादिभावसम्पापनं। अनञ्ञातञ्ञस्सामीतिन्द्रियस्स सयोजनत्तयप्पहानं चेव सम्पयुत्तान च तप्पहानाभिमुखभावकरण। अञ्ञिन्द्रिस्स कामरागब्यापादादिननुकरणप्पहान चेव सहजातानं च अत्तनो वसानुवत्तापन। अञ्ञाताविन्द्रियस्स सब्बकिच्चेसु उस्सुकप्पहानं चेव अमताभिमुखभावपच्चयता च सम्पयुत्तानं ति। एवमेत्थ किच्चतो विनिच्छयं विजानिया।

७. **भूमितो** ति। चक्खुसोतघानजिव्हाकायइत्थिपुरिससुखदुक्खदोमनस्सिन्द्रियानि चेत्थ कामावचरानेव। मनिन्द्रियजीवितिन्द्रियउपेक्खिन्द्रियानि सद्धाविरियसतिसमाधिपञ्ञिन्द्रियानि च चतुभमिपरियापन्नानि। सोमनस्सिन्द्रियं कामावचर-रूपावचर-लोकुत्तरवसेन भूमित्तयपरियापन्नं। अवसाने तीणि लोकुत्तरानेवा ति। एवमेत्थ भूमितो पि विनिच्छयं विजानिया। एवं हि विजानन्तो—

संवेगबहुलो भिक्खु ठितो इन्द्रियसवरे।
इन्द्रियानि परिञ्ञाय दुक्खस्सन्तं करिस्सती ति॥

इदं इन्द्रियान वित्थारकथामुखं॥

सच्चवित्थारकथा

८ तदनन्तरानि पन **सच्चानी** ति[1]। चत्तारि अरियसच्चानि—दुक्खं अरियसच्चं, दुक्खसमुदयो अरियसच्च, दुक्खनिरोधो अरियसच्चं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं ति। तत्थ—

विभागतो निब्बचन-लक्खणादिप्पभेदतो।
अत्थत्थुद्धारतो चेव अनूनाधिकतो तथा॥
कमतो जातिआदीनं निच्छया ञाणकिच्चतो।
अन्तोगधान पभेदा उपमातो चतुक्कतो॥
सुञ्ञतेकविधादीहि सभागविसभागतो।
विनिच्छयो वेदितब्बो विञ्ञुना सासनक्कमे॥

९. तत्थ **विभागतो** ति। दुखादीनं हि चत्तारो अत्था विभत्ता तथा अवितथा अनञ्ञथा, ये दुक्खादीनि अभिसमेन्तेहि अभिसमेतब्बा। यथाह—"दुक्खस्स पीळनट्ठो सङ्खतट्ठो सन्तापट्ठो विपरिणामट्ठो, इमे चत्तारो दुक्खस्स दुक्खट्ठा तथा

---

१ खन्धनिद्देसे उद्दिट्ठानी ति सेसो।

अवितथा अनञ्ञथा। समुदयस्स आयूहनट्ठो निदानट्ठो संयोगट्ठो पलिबोधट्ठो। निरोधस्स निस्सरणट्ठो विवेकट्ठो असङ्खतट्ठो अमतट्ठो। मग्गस्स निय्यानट्ठो हेतुट्ठो दस्सनट्ठो अधिपतेय्यट्ठो। इमे चत्तारो मग्गस्स मग्गट्ठा तथा अवितथा अनञ्ञथा" (खु० ५–३५१) ति। तथा "दुक्खस्स पीळनट्ठो सङ्खतट्ठो सन्तापट्ठो विपरिणामट्ठो अभिसमयट्ठो" (खु० ५–३५५) ति एवमादि। इति एवं विभत्तानं चतुन्नं चतुन्न अत्थान वसेन दुक्खादीनि वेदितब्बानी ति।

अयं तावेत्थ विभागतो विनिच्छयो।

१० **निब्बचनलक्खणादिप्पभेदतो** ति। एत्थ पन **निब्बचनतो** ताव इध **दु**-इति अयं सद्दो कुच्छिते दिस्सति। कुच्छित हि पुत्त दुप्पुत्तो ति वदन्ति। **ख**-सद्दो पन तुच्छे। तुच्छ हि आकास खं ति वुच्चति। इद च पठमसच्चं कुच्छितं अनेकउपद्दवाधिट्ठानतो। तुच्छ बालजनपरिकप्पितधुवसुभसुखत्तभाव-विरहिततो। तस्मा कुच्छितत्ता तुच्छत्ता च **दुक्खं** ति वुच्चति। (१)

सं-इति च अय सद्दो "समागमो समेत" (दी० २–२२९; अभि० २–१२८) ति आदीसु सयोग दीपेति। **उ**-इति अय "उप्पन्न उदित" (अभि० १–१८; वि० ३–६९) ति आदीसु उप्पत्तिं। **अय**-सद्दो कारण दीपेति। इदं चापि दुतियसच्चं अवसेसपच्चयसमायोगे सति दुक्खस्सुप्पत्तिकारणं। इति दुक्खस्स सयोगे उप्पत्तिकारणत्ता **दुक्खसमुदयं** ति वुच्चति।(२)

ततियसच्चं पन यस्मा **नि**-सद्दो अभाव, **रोध**-सद्दो च चारकं दीपेति, तस्मा अभावो एत्थ संसारचारकसङ्खातस्स दुक्खरोधस्स सब्बगतिसुञ्ञत्ता, समधिगते वा तस्मि ससारचारकसङ्खातस्स दुक्खरोधस्स अभावो होति, तप्पटि-पक्खत्ता ति पि **दुक्खनिरोधं** ति वुच्चति। दुक्खस्स वा अनुप्पादनिरोधपच्चयत्ता दुक्खनिरोधं ति। (३)

चतुत्थसच्च पन यस्मा एतं दुक्खनिरोधं गच्छति आरम्मणवसेन तदभिमुख-भूतत्ता, पटिपदा च होति दुक्खनिरोधप्पत्तिया, तस्मा **दुक्खनिरोधगामिनी-पटिपदा** ति वुच्चति। (४)

११. यस्मा पनेतानि बुद्धादयो अरिया पटिविज्जन्ति, तस्मा **अरियसच्चानी** ति वुच्चन्ति। यथाह—"चत्तारिमानि, भिक्खवे, अरियसच्चानि। कतमानि पे० इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि अरियसच्चानि" (सं० ४–३७३) अरिया इमानि पटिविज्झन्ति, तस्मा अरियसच्चानी ति वुच्चन्ती ति।

अपि च, अरियस्स सच्चानी ति पि अरियसच्चानि। **यथाह—"सदेवके, भिक्खवे, लोके पे० मनुस्साय तथागतो अरियो, तस्मा अरियसच्चानी ति वुच्चन्ती"** (सं० ४–३७३) ति।

अथवा एतेसं अभिसम्बुद्धत्ता अरियभावसिद्धितो पि अरियसच्चानि। यथाह—"इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूत अभिसम्बुद्धत्ता तथागतो अरहं सम्मासम्बुद्धो अरियो ति वुच्चती" (स०४–३७१) ति।

अपि च खो पन अरियानि सच्चानी ति पि अरियसच्चानि। अरियानी ति तथानि अवितथानि अविसवादकानी ति अत्थो। यथाह—"इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि अरियसच्चानि तथानि अवितथानि अनञ्ञथानि, तस्मा अरियसच्चानी ति वुच्चन्ती" (स० ४–३७३) ति।

एवमेत्थ निब्बचनतो विनिच्छयो वेदितब्बो।

१२. कथ **लक्खणादिप्पभेदतो**? एत्थ हि बाधनलक्खण **दुक्खसच्चं**, सन्तापनरस, पवत्तिपच्चुपट्ठान। पभवलक्खण **समुदयसच्चं**, अनुपच्छेदकरणरसं, पलिबोधपच्चुपट्ठान। सन्तिलक्खण **निरोधसच्चं**, अच्चुतिरसं, अनिमित्तपच्चुपट्ठानं। निय्यानलक्खण **मग्गसच्चं**, किलेसप्पहानकरणरस, वुट्ठानपच्चुपट्ठान। अपि च पवत्ति-पवत्तन-निवत्ति-निवत्तनलक्खणानि पटिपाटिया। तथा सङ्खत-तण्हा-असङ्खत-दस्सनलक्खणानि चा ति।

एवमेत्थ लक्खणादिप्पभेदतो विनिच्छयो वेदितब्बो।

१३ **अत्थत्थुद्धारतो** चेवा ति। एत्थ पन **अत्थतो** ताव को सच्चट्ठो ति चे? यो पञ्ञाचक्खुना उपपरिक्खमानानं माया व विपरीतो, मरीचि व विसवादको, तित्थियान अत्ता व अनुपलब्भसभावो च न होति, अथ खो बाधनप्पभवसन्ति-निय्यानप्पकारेन तच्छाविपरीतभूतभावेन अरियञाणस्स गोचरो होति येव। एस अग्गिलक्खणं[1] विय, लोकपकति[2] विय च तच्छाविपरीतभूतभावो सच्चट्ठो ति वेदितब्बो। यथाह—"इद दुक्खं ति, भिक्खवे, तथमेतं अवितथमेत अनञ्ञथमेतं" (स० ४–३६९) ति वित्थारो।

१४ अपि च—

नाबाधकं यतो दुक्ख, दुक्खा अञ्ञ न बाधक।
बाधकत्तनियामेन ततो सच्चमिद मत॥
तं विना नाञ्ञतो दुक्ख, न होति न च त ततो।
दुक्खहेतुनियामेन इति सच्च विसत्तिका॥
नाञ्ञा निब्बानतो सन्ति, सन्त न च न तं यतो।
सन्तभावनियामेन ततो सच्चमिद मतं॥

---

१ **अग्गिलक्खणं** ति। उण्हत्तं।

२ एकच्चानं तिरच्छानानं तिरियं दीघता, मनुस्सादीनं उद्धं दीघता, वुड्ढिनिट्ठं पत्तानं पुन अवड्ढन ति एवमादिका **लोकपकती** ति।

मग्गा अञ्ञं न निय्यानं, अनिय्यानो न चापि सो।
तच्छनिय्यानभावत्ता इति सो सच्चसम्मतो॥
इति तच्छाविपल्लासभूतभावं चतुस्वपि।
दुक्खादिस्वविसेसेन सच्चट्ठं आहु पण्डिता ति॥

एव अत्थतो विनिच्छयो वेदितब्बो।

१५ कथं **अत्थुद्धारतो**? इधाय सच्च-सद्दो अनेकेसु अत्थेसु दिस्सति। सेय्यथीद—"सच्च भणे न कुज्झेय्या" (खु० १–३८) ति आदीसु वाचासच्चे। सच्चे ठिता समणब्राह्मणा चा" (खु० ३ . २–१४७) ति आदीसु विरतिसच्चे। "कस्मा नु सच्चानि वदन्ति नाना पवादियासे कुसलावदाना" (खु० १–४०६) ति आदीसु दिट्ठिसच्चे। "एक हि सच्च न दुतीय" (खु० १–४०६) ति आदीसु परमत्थसच्चे निब्बाने चेव मग्गे च। "चतुन्नं अरियसच्चान कति कुसला" (अभि० २–१४३) ति आदीसु अरियसच्चे। स्वायमिधापि अरियसच्चे वत्तती ति। एवमेत्थ अत्थुद्धारतो पि विनिच्छयो वेदितब्बो।

१६ **अनूनाधिकतो** ति। कस्मा पन चत्तारेव अरियसच्चानि वुत्तानि अनूनानि अनधिकानी ति चे? अञ्ञस्सासम्भवतो अञ्ञतरस्स च अपनेय्याभावतो। न हि एतेहि अञ्ञ अधिक वा, एतेसं वा एकं पि अपनेतब्ब सम्भोति। यथाह—"इध, भिक्खवे, आगच्छेय्य समणो वा ब्राह्मणो वा 'नेतं दुक्खं अरियसच्च, अञ्ञं दुक्खं अरियसच्च। अहमेतं दुक्खं अरियसच्चं ठपेत्वा अञ्ञ दुक्ख अरियसच्च पञ्ञपेस्सामी' ति नेतं ठान विज्जती" ति (   ) आदि। यथा चाह—"यो हि कोचि, भिक्खु, समणो वा ब्राह्मणो वा एवं वदेय्य—'नेत दुक्ख पठम अरियसच्च य समणेन गोतमेन देसित, अहमेतं दुक्ख पठम अरियसच्च पच्चक्खाय अञ्ञं दुक्ख पठम अरियसच्च पञ्ञपेस्सामी' ति नेतं ठान विज्जती" (स० ४–३६७) ति आदि।

अपि च, पवत्तिमाचिक्खन्तो भगवा सहेतुक आचिक्खि, निवत्तिं च सउपायं। इति पवत्तिनिवत्तितदुभयहेतून एतपरमतो चत्तारेव वुत्तानि। तथा परिञ्ञय्य-पहातब्ब-सच्छिकातब्ब-भावेतब्बानं, तण्हावत्थु-तण्हा-तण्हानिरोध-तण्हानिरोधुपायानं, आलय-आलयारामता-आलयसमुग्घात-आलयसमुग्घातुपायानं च वसेना पि चत्तारेव वुत्तानी ति। एवमेत्थ अनूनाधिकतो विनिच्छयो वेदितब्बो।

१७ **कमतो** ति। अय पि देसनाक्कमो व। एत्थ च ओळारिकत्ता सब्ब-सत्तसाधारणत्ता च सुविञ्ञेय्यं ति दुक्खसच्चं पठमं वुत्तं। तस्सेव हेतुदस्सनत्थ तदनन्तरं समुदयसच्चं। हेतुनिरोधा फलनिरोधो ति ञापनत्थं ततो निरोधसच्चं। तदधिगमुपायदस्सनत्थं अन्ते मग्गसच्चं।

भवसुखस्सादगधितानं वा सत्तानं सवेगजननत्थ पठम दुक्खमाह। त नेव अकत आगच्छति, न इस्सरनिम्मानादितो होति, इतो पन होती ति ञापनत्थ तदनन्तर समुदयं। ततो सहेतुकेन दुक्खेन अभिभूतत्ता सविग्गमानसान दुक्खनिस्सरणगवेसीनं निस्सरणदस्सनेन अस्सासजननत्थ निरोध। ततो निरोधाधिगमत्थ निरोधसम्पापक मग्गं ति। एवमेत्थ कमतो विनिच्छयो वेदितब्बो।

१८ **जातिआदीनं निच्छया** ति। ये ते अरियसच्चानि निद्दिसन्तेन भगवता—"जाति पि दुक्खा, जरा पि दुक्खा, मरण पि दुक्ख, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासा पि दुक्खा, अप्पियेहि सम्पयोगो दुक्खो, पियेहि विप्पयोगो दुक्खो, य पिच्छं न लभति तं पि दुक्ख, सङ्खित्तेन पञ्चुपादानक्खन्धा दुक्खा" (अभि० २–१२६) ति दुक्खनिद्देसे द्वादस धम्मा, "यायं तण्हा पोनोब्भविका नन्दीरागसहगता तत्र तत्राभिनन्दिनी। सेय्यथीद—कामतण्हा, भवतण्हा विभवतण्हा" (अभि० २–१२९) ति समुदयनिद्देसे तिविधा तण्हा, "यो तस्सा येव तण्हाय असेसविरागनिरोधो चागो पटिनिस्सग्गो मुत्ति अनालयो" (अभि० २–१३१) ति एवं निरोधनिद्देसे अत्थतो एकमेव निब्बानं, "कतम दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो। सेय्यथीद—सम्मादिट्ठि··· पे०··· सम्मासमाधी" (अभि० २–१३३) ति एव मग्गनिद्देसे अट्ठधम्मा ति। इति चतुन्न सच्चानं निद्देसे जातिआदयो धम्मा वुत्ता, तेसं जातिआदीनं निच्छया पि एत्थ विनिच्छयो वेदितब्बो।

दुक्खनिद्देसकथा

जातिनिद्देसो

१९. **सेय्यथीदं**—अयं हि **जाति**-सद्दो अनेकत्थो। तथा हेस "एक पि जातिं द्वे पि जातियो" (दी० १–७१) ति एत्थ भवे आगतो। "अत्थि, विसाखे, निगण्ठा नाम समणजाती" (अ० १–१९०) ति एत्थ निकाये। "जाति द्वीहि खन्धेहि सङ्गहिता" (अभि० ३–१८) ति एत्थ सङ्खतलक्खणे[1]। "य मातुकुच्छिस्मि पठमं चित्त उप्पन्नं, पठमं विञ्ञाण पातुभूतं, तदुपादाय सा वस्स जाती" (वि० ३–९७) ति एत्थ पटिसन्धियं। "सम्पतिजातो, आनन्द, बोधिसत्तो" (म० ३–१८७) ति एत्थ पसूतियं। "अक्खित्तो अनुपकुट्ठो जातिवादेना" (दी० १–१११) ति एत्थ कुले। "यतोहं, भगिनि, अरियाय जातिया जातो" (म० २–३४९) ति एत्थ अरियसीले।

२०. **स्वायमिध गब्भसेय्यकान**[2] पटिसन्धितो पट्ठाय याव मातुकुच्छिम्हा

१. **सङ्खतलक्खणे** ति। यत्थ कत्थचि उप्पादे। २. सयन्ति एत्था ति सेय्या, मातुकुच्छिसङ्खातो गब्भो सेय्या एतेसं ति **गब्भसेय्यका** = अण्डजा, जलाबुजा च।

निक्खमनं, ताव पवत्तेसु खन्धेसु, इतरेसं[1] पटिसन्धिखन्धेस्वेवा ति दट्ठब्बो। अय पि च परियायकथा व। निप्परियायतो पन तत्थ तत्थ निब्बत्तमानानं सत्तानं ये ये खन्धा पातुभवन्ति, तेस तेसं पठमपातुभावो जाति नाम।

सा पनेसा तत्थ तथ भवे पठमाभिनिब्बत्तिलक्खणा, निय्यातनरसा, अतीत-भवतो इध उम्मुज्जनपच्चुपट्ठाना, दुक्खविचित्ततापच्चुपट्ठाना वा।

२ कस्मा पनेसा दुक्खा ति चे ? अनेकेस दुक्खानं वत्थुभावतो। अनेकानि हि दुक्खानि। सेय्यथीद–दुक्खदुक्ख, विपरिणामदुक्ख, सङ्खारदुक्ख, पटिच्छन्न-दुक्ख, अप्पटिच्छन्नदुक्ख, परियायदुक्ख, निप्परियायदुक्ख ति।

तत्थ कायिकचेतसिका दुक्खा वेदना सभावतो च नामतो च दुक्खत्ता **दुक्ख-दुक्खं** ति वुच्चति। (१)

सुखा वेदना विपरिणामेन दुक्खुप्पत्तिहेतुतो **विपरिणामदुक्खं**। (२)

उपेक्खावेदना चेव अवसेसा च तेभूमका सङ्खारा उदयब्बयपटिपीळितत्ता **सङ्खारदुक्खं**। (३)

कण्णसूल-दन्तसूल-रागजपरिळाह-दोसजपरिळाहादिकायिकचेतसिको आबाधो पुच्छित्वा जानितब्बतो उपक्कमस्स च अपाकटभावतो **पटिच्छन्नदुक्खं** नाम। अपाकटदुक्खं ति पि वुच्चति। (४)

द्वत्तिंसकम्मकरणादिसमुट्ठानो आबाधो अपुच्छित्वा व जानितब्बत्तो उपक्कमस्स च पाकटभावतो **अप्पटिच्छन्नदुक्खं** नाम। पाकटदुक्ख ति पि वुच्चति। (५)

ठपेत्वा दुक्खदुक्खं सेस दुक्खसच्च**विभङ्गे** (अभि० २–१२६) आगतं जाति आदि सब्ब पि तस्स तस्स दुक्खस्स वत्थुभावतो **परियायदुक्खं**। (६)

दुक्खदुक्ख पन **निप्परियायदुक्खं** ति वुच्चति। (७)

तत्राय जाति य त **बाल-पण्डितसुत्ता**दीसु (म० ३–२३३) भगवता पि उपमावसेन पकासितं आपायिक दुक्ख, य च सुगतिय पि मनुस्सलोके गब्भोक्कन्तिमूलकादिभेद दुक्खं उप्पज्जति, तस्स वत्थुभावतो दुक्खा।

२२ तत्रिद गब्भोक्कन्तिमूलकादिभेद दुक्खं—अय हि सत्तो मातुकुच्छिम्हि निब्बत्तमानो न उप्पल-पदुम-पुण्डरीकादीसु निब्बत्तति, अथ खो हेट्ठा आमासयस्स उपरि पक्कासयस्स उदरपटलपिट्ठिकण्टकान वेमज्झे परमसम्बाधे तिब्बन्धकारे नानाकुणपगन्धपरिभावितपरमदुग्गन्धपवनविचरिते अधिमत्तजेगुच्छे कुच्छिपदेसे

१ **इतरेसं** ति ससेदजानं, ओपपातिकानं च।

पूतिमच्छपूतिकुम्मासचन्दनिकादीसु किमि विय निब्बत्तति। सो तत्थ निब्बत्तो दस मासे मातुकुच्छिसम्भवेन उस्मना पुटपाकं विय पच्चमानो पिट्ठपिण्डि विय सेदियमानो समिञ्जनपसारणादिरहितो अधिमत्त दुक्खमनुभोती ति। इदं ताव **गब्भोक्कन्तिमूलकं** दुक्खं। (१)

य पन सो मातु सहसा उपक्खलन-गमन-निसीदन-वुट्ठान-परिवत्तनादीसु सुराधुत्तहत्थगतो एळको विय, अहितुण्डिकहत्थगतो सप्पपोतको विय च आकड्ढन-परिकड्ढन-ओधूनन-निद्धुननादिना उपक्कमेन अधिमत्त दुक्खमनुभवति, यं च मातु सीतूदकपानकाले सीतनरकूपपन्नो विय, उण्हयागुभत्तादिअज्झोहरकाले अङ्गारवुट्ठिसम्परिकिण्णो विय, लोणम्बिलादिअज्झोहरणकाले खारापतच्छिकादिकम्मकरणपत्तो विय तिब्ब दुक्खमनुभोति। इद **गब्भपरिहरणमूलकं** दुक्खं। (२)

य पनस्स मूळहगब्भाय मातुया मित्तामच्चसुहज्जादीहि पि अदस्सनारहे दुक्खुप्पत्तिट्ठाने छेदनफालनादीहि दुक्ख उप्पज्जति, **इदं गब्भविपत्तिमूलकं** दुक्ख। (३)

य विजायमानाय मातुया कम्मजेहि वातेहि परिवत्तेत्वा नरकपात विय अतिभयानकं पटिपातियमानस्स परमसम्बाधेन योनिमुखेन ताळच्छग्गळेन विय निकड्ढियमानस्स महानागस्स, नरकसत्तस्स विय च सङ्घातपब्बतेहि विचुण्णियमानस्स दुक्ख उप्पज्जति, इदं **विजायनमूलकं** दुक्ख। (४)

यं पन जातस्स तरुणवणसदिससुखुमालसरीरस्स हत्थगहण-नहापन-धोवन-चोळपरिमज्जनादिकाले सूचिमुखखुरधाराहि विज्झनफालनसदिसं दुक्ख उप्पज्जति, इद मातुकुच्छितो **बहिनिक्खमनमूलकं** दुक्खं। (५)

य ततो पर पवत्तिय अत्तना व अत्तानं वधेन्तस्स, अचेलकवतादिवसेन आतापन-परितापनानुयोगमनुयुत्तस्स[1] कोधवसेन अभुञ्जन्तस्स उब्बन्धन्तस्स च दुक्खं उप्पज्जति, इद **अत्तूपक्कममूलकं** दुक्ख। (६)

यं पन परतो वधबन्धनादीनि अनुभवन्तस्स उप्पज्जति, इद **परूपक्कममूलकं** दुक्ख ति। (७)

इति इमस्स सब्बस्सा पि दुक्खस्स अयं जाति वत्थुमेव होति। तेनेत वुच्चति—

२३ जायेथ नो चे नरकेसु सत्तो तत्थग्गिदाहादिकमप्पसय्हं।
लभेथ दुक्खं नु कुहिं पतिट्ठं इच्चाह दुक्खा ति मुनीध जातिं॥

---

१. खुप्पिपासाहि आतपावट्ठानादिना च **आतापनं**। पञ्चग्गितापनादिना **परितापनं**।

दुक्ख तिरच्छेसु कसापतोददण्डाभिघातादिभवं अनेक।
य तं कथं तत्थ भवेय्य जाति विना तहिं जाति ततो पि दुक्खा ॥
पेतेसु दुक्खं पन खुप्पिपासावातातपादिप्पभवं विचित्त।
यस्मा अजातस्स न तत्थ अत्थि तस्मा पि दुक्ख मुनि जातिमाह ॥
तिब्बन्धकारे च असय्हसीते लोकन्तरे यं असुरेसु दुक्ख।
न त भवे तत्थ न चस्स जाति यतो अय जाति ततो पि दुक्खा ॥

यञ्चा पि गूथनरके विय मातुगब्भे सत्तो वस चिरमथो बहि निक्खम च।
पप्पोति दुक्खमतिघोरमिद पि नत्थि जाति विना इति पि जाति अय हि दुक्खा ॥
किं भासितेन बहुना ननु य कुहिञ्चि अत्थीध किञ्चिदपि दुक्खमिदं कदाचि।
नेवत्थि जातिविरहेन यतो महेसि दुक्खा ति सब्बपठम इममाह जाति ति ॥

अयं ताव जातियं विनिच्छयो ॥

जरानिद्देसो

२४ **जरा पि दुक्खा** ति। एत्थ दुविधा जरा—सङ्खतलक्खण च[1], खण्डिच्चादिसम्मतो[2] सन्ततिय एकभवपरियापन्नखन्धपुराणभावो च। सा[3] इध अधिप्पेता। सा पनेसा जरा खन्धपरिपाकलक्खणा, मरणूपनयनरसा, योब्बनविनासपच्चुपट्ठाना, दुक्खा सङ्खारदुक्खभावतो चेव दुक्खवत्थुतो च।

य हि अङ्गपच्चङ्गसिथिलीभाव-इन्द्रियविकार-विरूपता-योब्बनविनास-बलूपघात-सतिमतिविप्पवास-परपरिभवादिअनेकपच्चयं कायिक-चेतसिकदुक्खं उप्पज्जति, जरा तस्स वत्थु। तेनेतं वुच्चति—

२५ "अङ्गान सिथिलीभावा इन्द्रियानं विकारतो।
योब्बनस्स विनासेन बलस्स उपघाततो ॥
विप्पवासा सतादीन पुत्तदारेहि पत्तनो।
अपसादनीयतो चेव भिय्यो बालत्तपत्तिया ॥
पप्पोति दुक्खं य मच्चो कायिक मानस तथा।
सब्बमेतं जराहेतु यस्मा तस्मा जरा दुखा" ति ॥

अय जराय विनिच्छयो ॥

---

१. **सङ्खतलक्खणं** ति। ठितस्स अञ्ञथत्तं (स० २–२७०) वुत्तं खणिकजरं सन्धायाह।
२. **खण्डिच्चादिसम्मतो** ति। खण्डिच्चपालिच्चवलित्तचतादिना समञ्ञतो।
३ **सा** ति। खन्धपुराणभावसञ्ञि पाकटजरा।

मरणनिद्देसो

२६ **मरणं पि दुक्खं** ति। एत्थापि दुविध मरण—सङ्खतलक्खण च, यं सन्धाय वुत्तं—"द्वीहि खन्धेहि सङ्गहित" (अभि० ३–१८) ति, एकभवपरियापन्नजीवितिन्द्रियप्पबन्धविच्छेदो च, य सन्धाय वुत्तं—"निच्चं मरणतो भयं" (खु० १–३६०) ति। तं इध अधिप्पेतं। जातिपच्चया मरण, उपक्कममरणं, सरसमरण, आयुक्खमरणं, पुञ्ञक्खयमरण ति पि तस्सेव नाम।

तयिद चुतिलक्खण, वियोगरस, गतिविप्पवासपच्चुपट्ठान। दुक्खस्स पन वत्थुभावतो दुक्ख ति वेदितब्बं। तेनेतं वुच्चति—

२७ "पापस्स पापकम्मादि-निमित्तमनुपस्सतो।
भद्दस्सापसहन्तस्स वियोगं पियवत्थुक॥
मीयमानस्स य दुक्ख मानस अविसेसतो।
सब्बेस च पि य सन्धि-बन्धनच्छेदनादिक॥
वितुज्जमानमम्मानं होति दुक्ख सरीरज।
असय्हमप्पतिकारं दुक्खस्सेतास्सद यतो।
मरण वत्थु, तेनेत दुक्खमिच्चेव भासितं"ति॥

अयं मरणे विनिच्छयो॥

सोकादिनिद्देसो

२८, सोकादीसु **सोको** नाम ञातिब्यसनादीहि फुट्ठस्स चित्तसन्तापो। सो किञ्चापि अत्थतो दोमनस्समेव होति। एवं सन्ते पि अन्तोनिज्झानलक्खणो, चेतसो परिज्झापनरसो, अनुसोचनपच्चुपट्ठानो। दुक्खो पन दुक्खदुक्खतो, दुक्खवत्थुतो च। तेनेतं वुच्चति—

२९. "सत्तानं हृदय सोको विससल्ल व तुज्जति।
अग्गितत्तो व नाराचो भुस व दहते पुन॥
समावहति च ब्याधि-जरामरणभेदन।
दुक्ख पि विविधं यस्मा, तस्मा दुक्खो ति वुच्चतो" ति॥

अय सोके विनिच्छयो॥

परिदेवनिद्देसो

३०. परिदेवो नाम ञातिब्यसनादीहि फुट्ठस्स वचीपलापो। लालप्पनलक्खणो, गुणदोसकित्तनरसो, सम्भमपच्चुपट्ठानो। दुक्खो पन सङ्खारदुक्खभावतो, दुक्खवत्थुतो च। तेनेतं वुच्चति—

३१. यं सोकसल्लविहतो परिदेवमानो कण्ठोट्ठतालुतलसोसजमप्पसय्हं।
भिय्योधिमत्तमधिगच्छति येव दुक्खं, दुक्खो ति तेन भगवा परिदेवमाहा ति॥

अयं परिदेवे विनिच्छयो॥

दुक्खनिद्देसो

३२. **दुक्खं** नाम कायिक दुक्खं। तं कायपीळनलक्खण, दुप्पञ्ञान दोमनस्सकरणरसं, कायिकाबाधपच्चुपट्ठानं। दुक्ख पन दुक्खदुक्खतो, मानस-दुक्खावहनतो च। तेनेतं वुच्चति—

३३ "पीळेति कायिकमिदं दुक्ख च मानसं भिय्यो।
जनयति यस्मा तस्मा दुक्खं ति विसेसतो वुत्त" ति॥

अय दुक्खे विनिच्छयो॥

दोमनस्सनिद्देसो

३४. **दोमनस्सं** नाम मानसं दुक्खं। त चित्तपीळनलक्खणं, मनोविघातरस, मानसब्याधिपच्चुपट्ठानं। दुक्ख पन दुक्खदुक्खतो कायिकदुक्खावहनतो च। चेतोदुक्खसमप्पिता हि केसे पकिरिय कन्दन्ति, उरानि पटिपिसन्ति, आवट्टन्ति[1], विवट्टन्ति[2], उद्धपाद पपतन्ति, सत्थं आहरन्ति, विसं खादन्ति, रज्जुया उब्ब-न्धन्ति, अग्गि पविसन्ती ति तं नानप्पकारक दुक्खमनुभवन्ति। तेनेतं वुच्चति—

३५. "पीळेति यतो चित्त कायस्स च पीळनं समावहति।
दुक्खं ति दोमनस्सं विदोमनस्सा ततो आहू" ति॥

अय दोमनस्से विनिच्छयो॥

उपायासनिद्देसो

३६. **उपायासो** नाम ञातिब्यसनादीहि फुट्ठस्स अधिमत्तचेतोदुक्खप्पभावितो दोसो येव। सङ्खारक्खन्धपरियापन्नो एको धम्मो ति एके। चित्तपरिदहन-लक्खणो, नित्थुननरसो, विसादपच्चुपट्ठानो। दुक्खो पन सङ्खारदुक्खभावतो चित्तपरिदहनतो कायविसादनतो च। तेनेतं वुच्चति—

३७ "चित्तस्स च परिदहना कायस्स विसादना च अधिमत्तं।
य दुक्खमुपायासो जनेति, दुक्खो ततो वुत्तो" ति॥

अयं उपायासे विनिच्छयो॥

---

१. **आवट्टन्ती** ति। आमुखं वट्टन्ति. यदिसाभिमुख पतिता, तंदिसाभिमुखा एव वट्टन्ति।

२ **विवट्टन्ती** ति। विपरिवत्तनवसेन वट्टन्ति।

३८. एत्थ च मन्दग्गिना अन्तोभाजने पाको विय **सोको**। तिक्खग्गिना पच्चमानस्स भाजनतो बहिनिक्खमन विय **परिदेवो**। बहिनिक्खन्तावसेसस्स निक्खमितु अप्पहोन्तस्स अन्तोभाजने येव याव परिक्खया पाको विय **उपायासो** दट्ठब्बो ॥

अप्पियसम्पयोगनिद्देसो

३९. **अप्पियसम्पयोगो** नाम अमनापेहि सत्तसङ्खारेहि समोधान[1] सो अनिट्ठ-समोधानलक्खणो चित्तविघातकरणरसो, अनत्थभावपच्चुपट्ठानो। दुक्खो पन दुक्खवत्थुतो। तेनेत वुच्चति—

४०. "दिस्वा व अप्पिये दुक्ख पठम होति चेतसि।
तदुपक्कमसम्भूतमथ काये यतो इध ॥
ततो दुक्खद्वयस्सापि वत्थुतो सो महेसिना।
दुक्खो वुत्तो ति विञ्ञेय्यो अप्पियेहि समागमो" ति ॥

अयं अप्पियसम्पयोगेनिद्देसो ॥

पियविप्पयोगनिद्देसो

४१ **पियविप्पयोगो** नाम मनापेहि सत्तसङ्खारेहि विनाभावो। सो इट्ठवत्थु-वियोगलक्खणो, सोकुप्पादनरसो, ब्यसनपच्चुपट्ठानो। दुक्खो पन सोकदुक्खस्स वत्थुतो। तेनेतं वुच्चति—

४२ "ञातिधनादिवियोगा सोकसरसमप्पिता वितुज्जन्ति।
बाला यतो ततो यं दुक्खो ति मतो पियविप्पयोगो" ति ॥

अयं पियविप्पयोगे विनिच्छयो ॥

इच्छितालाभनिद्देसो

४३ **यं पिच्छं न लभती** ति। एत्थ "अहो वत मय जातिधम्मा अस्सामा" ति आदीसु अलब्भनेय्यवत्थूसु इच्छा व 'यं पिच्छ न लभति, त पि दुक्ख' ति वुत्ता। सा अलब्भनेय्यवत्थुइच्छनलक्खणा, तप्परियेसनरसा, तेस अप्पत्ति-पच्चुपट्ठाना। दुक्खा पन दुक्खवत्थुतो। तेनेत वुच्चति—

४४ "त त पत्थयमानान तस्स तस्स अलाभतो।
त विघातमयं दुक्खं सत्तान इध जायति ॥
अलब्भनेय्यवत्थूनं पत्थना तस्स कारणं।
यस्मा तस्मा जिनो दुक्ख इच्छितालाभमब्रवी" ति" ॥

अयं इच्छितालाभे विनिच्छयो ॥

---

१ **समोधान** ति। समागमो।

पञ्चुपादानक्खन्धा

४५. **सङ्खित्तेन पञ्चुपादानक्खन्धा दुक्खा** ति । एत्थ पन—

जातिप्पभुतिकं दुक्खं यं वुत्तमिध तादिना ।
अवुत्तं यं च तं सब्बं विना एते न विज्जति ॥
यस्मा तस्मा उपादानक्खन्धा सङ्खेपतो इमे ।
दुक्खा ति वुत्ता दुक्खन्तदेसकेन महेसिना ॥

तथा हि—इन्धनमिव पावको, लक्खमिव पहरणानि, गोरूपं विय डंसमकसादयो, खेत्तमिव लायका, गामं विय गामघातका, उपादानक्खन्धपञ्चकमेव जातिआदयो नानप्पकारेहि विबाधेन्ता तिणलतादीनि विय भूमियं, पुप्फफलपल्लवानि विय रुक्खेसु उपादानक्खन्धेसु येव निब्बत्तन्ति ।

उपादानक्खन्धानं च आदिदुक्खं जाति, मज्झेदुक्खं जरा, परियोसानदुक्खं मरणं, मारणन्तिकदुक्खाभिघातेन परिडय्हनदुक्खं सोको, तदसहनतो लालप्पनदुक्खं परिदेवो, ततो धातुक्खोभसङ्खातअनिट्ठफोट्ठब्बसमायोगतो कायस्स अबाधनदुक्खं दुक्खं, तेन बाधियमानानं पुथुज्जनानं तत्थ पटिघुप्पत्तितो चेतोबाधनदुक्खं दोमनस्सं, सोकादिवुद्धिया जनितविसादानं अनुत्थुननदुक्खं उपायासो, मनोरथविघातप्पत्तानं इच्छाविघातदुक्खं इच्छितालाभो ति एवं नानप्पकारतो उपपरिक्खियमाना उपादानक्खन्धा व दुक्खा ति ।

यदेतं एकमेकं दस्सेत्वा वुच्चमानं अनेकेहि पि कप्पेहि न सक्का असेसतो वत्तुं, तस्मा तं सब्बं पि दुक्खं एकजलबिन्दुम्हि सकलसमुद्दजलरसं विय येसु केसुचि पञ्चसु उपादानक्खन्धेसु सङ्खिपित्वा दस्सेतुं—"सङ्खित्तेन पञ्चुपादानक्खन्धा दुक्खा" ति भगवा अवोचा ति ॥

अयं उपादानक्खन्धेसु विनिच्छयो ॥

अयं ताव दुक्खनिद्देसे नयो ॥

समुदयनिद्देसकथा

४६. समुदयनिद्देसे पन—**यायं तण्हा** ति । या अयं तण्हा । **पोनोब्भविका** ति । पुनब्भवकरणं पुनोब्भवो, पुनोब्भवो सीलमेतिस्सा ति पोनोब्भविका । नन्दीरागेन सहगता ति **नन्दीरागसहगता** । नन्दिरागेन सद्धिं अत्थतो एकत्तमेव गता ति वुत्तं होति । **तत्र तत्राभिनन्दिनी** ति । यत्र यत्र अत्तभावो निब्बत्तति, तत्र तत्राभिनन्दिनी । **सेय्यथीदं** ति । निपातो । तस्स, सा कतमा ति चे ति अत्थो । **कामतण्हा भवतण्हा विभवतण्हा** ति । इमा पटिच्चसमुप्पादनिद्देसे[1] आविभविस्सन्ति । इध पनायं तिविधा पि दुक्खसच्चस्स निब्बत्तकट्ठेन एकत्तं उपनेत्वा, दुक्खसमुदयो अरियसच्चं ति वुत्ता ति वेदितब्बा ।

१ पटिच्चसमुप्पादनिद्देसे ति । पञ्ञाभूमिनिद्देसे त्यत्थो ।

निरोधनिद्देसकथा

४७. दुक्खनिरोधनिद्देसे **यो तस्सा येव तण्हाय** ति आदिना नयेन समुदयनिरोधो वुत्तो, सो कस्मा ति चे ? समुदयनिरोधेन दुक्खनिरोधो। समुदयनिरोधेन हि दुक्खं निरुज्झति, न अञ्ञथा। तेनाह—

"यथा पि मूले अनुपद्दवे दळ्हे छिन्नो पि रुक्खो पुनदेव रूहति।
एव पि तण्हानुसये अनूहते निब्बत्तती दुक्खमिद पुनप्पुन" ति॥

(खु० १-४९)

इति यस्मा समुदयनिरोधेनेयं दुक्ख निरुज्झति, तस्मा भगवा दुक्खनिरोध देसेन्तो समुदयनिरोधेनेव देसेसि। सीहसमानवुत्तिनो हि तथागता। ते दुक्ख निरोधेन्ता दुक्खनिरोध च देसेन्ता हेतुम्हि पटिपज्जन्ति, न फले। सुवानवुत्तिनो पन तित्थिया। ते दुक्ख निरोधेन्ता दुक्खनिरोध च देसेन्ता अत्तकिलमथानुयोगदेसनादीहि फले पटिपज्जन्ति, न हेतुम्ही ति। एवं ताव दुक्खनिरोधस्स समुदयनिरोधवसेन देसनाय पयोजनं वेदितब्बं।

४८ अय पनत्थो—**तस्सा येव तण्हाया** ति। तस्सा "पोनोब्भविका" ति वत्वा कामतण्हादिवसेन विभत्ततण्हाय। **विरागो** वुच्चति मग्गो। "विरागा विमुच्चती" (म० १-१८४) ति हि वुत्त। विरागेन निरोधो विरागनिरोधो। अनुसयसमुग्घाततो असेसो विरागनिरोधो **असेसविरागनिरोधो**। अथ वा **विरागो** ति पहानं वुच्चति। तस्मा असेसो विरागो, असेसो निरोधो ति एवं पेत्थ योजना दट्ठब्बा। अत्थतो पन सब्बानेव एतानि निब्बानस्स वेवचनानि।

परमत्थतो हि दुक्खनिरोधो अरियसच्चं ति निब्बानं वुच्चति। यस्मा पन त आगम्म तण्हा विरज्जति चेव निरुज्झति च, तस्मा विरागो ति च निरोधो ति च वुच्चति। यस्मा च तदेव आगम्म तस्सा चागादयो होन्ति, कामगुणालयेसु चेत्थ एको पि आलयो नत्थि, तस्मा **चागो पटिनिस्सग्गो मुत्ति अनालयो** ति वुच्चति।

४९ तयिदं सन्तिलक्खणं, अच्चुतिरसं, अस्सासकरणरस वा, अनिमित्तपच्चुपट्ठानं, निप्पपञ्चपच्चुपट्ठान वा।

निब्बानकथा

५० नत्थेव निब्बान ससविसाणं विय अनुपलब्भनीयतो ति चे ? न; उपायेन उपलब्भनीयतो। उपलब्भति हि तं तदनुरूपपटिपत्तिसङ्खातेन उपायेन, चेतोपरियञाणेन परेसं **लोकुत्तरं** चित्तं विय। तस्मा "अनुपलब्भनीयतो नत्थी" ति न वत्तब्बं। न हि 'यं बालपुथुज्जना न उपलभन्ति, तं नत्थी' ति वत्तब्बं।

५१ अपि च 'निब्बानं नत्थी' ति न वत्तब्बं। कस्मा ? पटिपत्तिया वञ्झ-

भावापज्जनतो। असति हि निब्बाने सम्मादिट्ठिपुरेजवाय सीलादिखन्धत्तय-सङ्गहाय सम्मापटिपत्तिया वञ्च्यभावो आपज्जति, न चायं वञ्च्या[1], निब्बान-पापनतो ति। न पटिपत्तिया वञ्च्यभावापत्ति, अभावपापकत्ता ति चे? न, अतीतानागताभावे पि निब्बानपत्तिया अभावतो। वत्तमानान पि अभावो निब्बानं ति चे? न, तेसं अभावासम्भवतो। अभावे च अवत्तमानभावापज्जनतो, वत्तमानक्खन्धनिस्सितमग्गक्खणे च सोपादिसेसनिब्बानधातुपत्तिया अभाव-दोसतो। तदा किलेसानं अवत्तमानत्ता न दोसो ति चे? न; अरियमग्गस्स निरत्थकभावपज्जनतो। एव हि सति अरियमग्गक्खणतो पुब्बे पि किलेसा न सन्ती ति अरियमग्गस्स निरत्थकभावो आपज्जति। तस्मा अकारणमेत।

५२ "यो खो, आवुसो, रागक्खयो" (स० ३-२२३) ति आदिवचनतो "खयो निब्बान" ति चे? न; अरहत्तस्सा पि खयमत्तापज्जनतो। त पि हि "यो खो, आवुसो, रागक्खयो" ति आदिना नयेन निद्दिट्ठ। किञ्च भिय्यो निब्बानस्स इत्तरकालादिप्पत्तिदोसतो। एव हि सति निब्बान इत्तरकाल, सङ्खतलक्खणं, सम्मावायामनिरपेक्खाधिगमनीयभाव च आपज्जति। सङ्खतलक्खणत्ता येव च सङ्खतपरियापन्न, सङ्खतपरियापन्नत्ता रागादीहि अग्गीहि आदित्त आदित्तत्ता दुक्ख चा ति पि आपज्जति। यस्मा खया पट्ठाय न भिय्यो पवत्ति नाम होति, तस्स निब्बानभावतो न दोसो इति चे? न; तादिसस्स खयस्स अभावतो। भावे पि चस्स वुत्तप्पकारदोसानतिवत्तनतो, अरियमग्गस्स च निब्बानभावापज्जनतो। अरियमग्गो हि दोसे खीणेति, तस्मा खयो ति वुच्चति। ततो च पट्ठाय न भिय्यो दोसान पवत्ती ति।

अनुप्पत्तिनिरोधसङ्खातस्स पन खयस्स परियायेन उपनिस्सयत्ता, यस्स उपनिस्सयो होति, तदुपचारेन "खयो" ति वुत्त। सरूपेनेव कस्मा न वुत्त ति चे? अतिसुखुमत्ता। अतिसुखुमता चस्स भगवतो अप्पोसुक्कभावावहनतो, अरियेन चक्खुना पस्सितब्बतो च सिद्धा ति।

५३ तयिद मग्गसमङ्गिना पत्तब्बतो **असाधारणं**, पुरिमकोटिया अभावतो **अप्पभवं**। मग्गभावे भावतो न अप्पभव ति चे? न, मग्गेन अनुप्पादनीयतो। पत्तब्बमेव हेत मग्गेन, न उप्पादेतब्ब, तस्मा अप्पभवमेव। अप्पभवत्ता **अजरा-मरणं**। पभवजरामरणान अभावतो **निच्चं**।

निब्बानस्सेव अणुआदीनं[2] पि निच्चभावापत्ती ति चे? न; हेतुनो अभावा। निब्बानस्स निच्चत्ता ते निच्चा ति चे? न; हेतुलक्खणस्स अनुपपत्तितो। निच्चा उप्पादादीन अभावतो निब्बानं विया ति चे? न, अणुआदीनं असिद्धत्ता।

१. वञ्च्या ति। हेया। २ अणुआदीन ति। अणु-पकति-काल-पुरिसादीन।

५४ यथावुत्तयुत्तिसब्भावतो पन इदमेव निच्चं। रूपसभावातिक्कमतो **अरूपं**। बुद्धादीनं निट्ठाय विसेसाभावतो **एका व निट्ठा**। येन भावनाय पत्तं, तस्स किलेसवूपसमं उपादिसेसं च उपादाय पञ्ञापनीयत्ता सह उपादिसेसेन पञ्ञापियती ति **सउपादिसेसं**। यो चस्स समुदयप्पहानेन उपहतायतिकम्मफलस्स चरिमचित्ततो च उद्धं पवत्तिक्खन्धानं अनुप्पादनतो, उप्पन्नानं च अन्तरधानतो उपादिसेसाभावो, तं उपादाय पञ्ञापनीयतो, नत्थि एत्थ उपादिसेसो ति **अनुपादिसेसं**।

असिथिलपरक्कमसिद्धेन ञाणविसेसेन अधिगमनीयतो सब्बञ्ञुवचनतो च परमत्थेन सभावतो निब्बानं नाविज्जमानं। वुत्तं हेतं—"अत्थि, भिक्खवे, अजातं, अभूतं अकतं असङ्खतं" (खु० १–१६३) ति।

इदं दुक्खनिरोधनिद्देसे विनिच्छयकथामुखं॥

मग्गनिद्देसकथा

५५ दुक्खनिरोधगामिनिपटिपदानिद्देसे (अभि० २–११३) वुत्ता पन अट्ठ धम्मा कामं **खन्धनिद्देसे** पि अत्थतो पकासिता येव, इध पन नेसं एकक्खणे पवत्तमानानं विसेसावबोधनत्थं वदाम।

सङ्खेपतो हि चतुसच्चपटिवेधाय पटिपन्नस्स योगिनो निब्बानारम्मणं अविज्जानुसयसमुग्घातकं पञ्ञाचक्खु **सम्मादिट्ठि**। सा सम्मादस्सनलक्खणा, धातुप्पकासनरसा, अविज्जन्धकारविद्धंसनपच्चुपट्ठाना। (१)

तथासम्पन्नदिट्ठिनो तंसम्पयुत्तं मिच्छासङ्कप्पनिघातकं चेतसो निब्बानपदाभिनिरोपनं **सम्मासङ्कप्पो**। सो सम्माचित्ताभिरोपनलक्खणो, अप्पनारसो, मिच्छासङ्कप्पपहानपच्चुपट्ठानो। (२)

तथा पस्सतो वितक्कयतो च तंसम्पयुत्ता व वचीदुच्चरितसमुग्घातिका मिच्छावाचाय विरति **सम्मावाचा** नाम। सा परिग्गहलक्खणा, विरमणरसा, मिच्छावाचाप्पहानपच्चुपट्ठाना। (३)

तथा विरमतो तंसम्पयुत्ता व मिच्छाकम्मन्तसमुच्छेदिका पाणातिपातादिविरति **सम्माकम्मन्तो** नाम। सो समुट्ठापनलक्खणो, विरमणरसो, मिच्छाकम्मन्तप्पहानपच्चुपट्ठानो। (४)

या पनस्स तेसं सम्मावाचासम्माकम्मन्तानं विसुद्धिभूता तंसम्पयुत्ता व कुहनादिउपच्छेदिका मिच्छाजीवविरति, सो **सम्माआजीवो** नाम। सो वोदानलक्खणो, ञायाजीवप्पवत्तिरसो, मिच्छाजीवप्पहानपच्चुपट्ठानो। (५)

अथस्स यो तस्सा सम्मावाचाकम्मन्ताजीवसङ्खाताय सीलभूमियं पतिट्ठितस्स तदनुरूपो तंसम्पयुत्तो व कोसज्जसमुच्छेदको विरियारम्भो, एस **सम्मा-**

वायामो नाम। सो पग्गहलक्खणो, अनुप्पन्नअकुसलानुप्पादनादिरसो, मिच्छा-वायामप्पहानपच्चुपट्ठानो। (६)

तस्सेव वायमतो तंसम्पयुत्तो व मिच्छासतिविनिद्धुननो चेतसो असम्मोसो **सम्मासति** नाम। सा उपट्ठानलक्खणा, असम्मुस्सनरसा, मिच्छासतिप्प-हानपच्चुपट्ठाना। (७)

एवं अनुत्तराय सतिया सरक्खियमानचित्तस्स तसम्पयुत्ता व मिच्छा-समाधिविद्धंसिका चित्तेकग्गता **सम्मासमाधि** नाम। सो अविक्खेपलक्खणो, समाधानरसो, मिच्छासमाधिप्पहानपच्चुपट्ठानो ति। (८)

अयं दुक्खनिरोधगामिनिपटिपदानिद्देसे नयो। एवमेत्थ जातिआदीनं विनिच्छयो वेदितब्बो।

५६ **ञाणकिच्चतो** ति। सच्चञाणस्स किच्चतो पि विनिच्छयो वेदितब्बो। दुविधं हि सच्चञाण—अनुबोधञाण, पटिवेधञाण च। तत्थ अनुबोधञाणं लोकिय अनुस्सवादिवसेन निरोधे मग्गे च पवत्तति। पटिवेधञाण लोकुत्तरं निरोधं आरम्मण कत्वा किच्चतो चत्तारि सच्चानि पटिविज्झति। यथाह—"यो, भिक्खवे, दुक्ख पस्सति, दुक्खसमुदय पि सो पस्सति, दुक्खनिरोध पि पस्सति, दुक्खनिरोधगामिनिपटिपदं पि पस्सती" (स० ४–३७४) ति सब्बं वत्तब्ब। तं पनस्स किच्च ञाणदस्सनविसुद्धिय आविभविस्सति।

य पनेत लोकियं, तत्थ दुक्खञाण परियुट्ठानाभिभववसेन पवत्तमान सक्कायदिट्ठिं निवत्तेति, समुदयञाणं उच्छेददिट्ठिं, निरोधञाण सस्सतदिट्ठिं, मग्गञाण अकिरियदिट्ठिं। दुक्खञाणं वा धुव-सुभ-सुखत्तभावविरहितेसु खन्धेसु धुव-सुभ-सुखत्तभावसञ्ञित फले विप्पटिपत्तिं, समुदयञाण, इस्सर-पधान-काल-सभावादीहि लोको पवत्तती ति अकारणे कारणाभिमानपवत्त हेतुम्हि विप्पटिपत्तिं, निरोधञाणं अरूपलोक-लोकथूपिकादिसु अपवग्गगाहभूतं निरोधे विप्पटिपत्तिं, मग्गञाण कामसुखल्लिक-अत्तकिलमथानुयोगप्पभेदे अविसुद्धिमग्गे विसुद्धिमग्ग-गाहवसेन पवत्तं उपाये विप्पटिपत्तिं निवत्तेति। तेनेतं वुच्चति—

लोके लोकप्पभवे लोकत्थगमे सिवे च तदुपाये।
सम्मुय्हति ताव नरो, न विजानाति याव सच्चानी ति॥

एवमेत्थ ञाणकिच्चतो पि विनिच्छयो वेदितब्बो।

५७. **अन्तोगतान पभेदा** ति। दुक्खसच्चस्मिं हि ठपेत्वा तण्ह चेव अनासव-धम्मे च सेसा सब्बधम्मा अन्तोगता, समुदयसच्चे छत्तिंस तण्हाविचरितानि। निरोधसच्चं असम्मिस्स। मग्गसच्चे सम्मादिट्ठिमुखेन वीमंसिद्धिपाद-पञ्ञिन्द्रिय-पञ्ञा बल-धम्मविचयसम्बोज्झङ्गानि, सम्मासङ्कप्पापदेसेन तयो नेक्खम्म-

वितक्कादयो, सम्मावाचापदेसेन चत्तारि वचीसुचरितानि, सम्माकम्मन्तापदेसेन तीणि कायसुचरितानि, सम्माआजीवमुखेन अप्पिच्छता सन्तुट्ठि च, सब्बेस येव वा एतेस सम्मावाचाकम्मन्ताजीवान अरियकन्तसीलत्ता, अरियकन्तसीलस्स च सद्धाहत्थेन पटिग्गहेतब्बत्ता, तेसं अत्थिताय अत्थिभावतो सद्धिन्द्रिय-सद्धाबल-छन्दिद्धिपादा, सम्मावायामापदेसेन चतुब्बिधसम्मप्पधान-विरियिन्द्रिय-विरियबल-विरियसम्बोज्झङ्गानि, सम्मासतिअपदेसेन चतुब्बिधसतिपट्ठान-सतिन्द्रिय-सतिबल-सतिसम्बोज्झङ्गानि, सम्मासमाधिअपदेसेन सवितक्क-सविचारादयो तयो समाधी चित्तसमाधि-समाधिन्द्रिय-समाधिबल-पीति-पस्सद्धि-समाधिउपेक्खा-सम्बोज्झङ्गानि अन्तोगतानी ति ।

एवमेत्थ अन्तोगतानं पभेदा पि विनिच्छयो वेदितब्बो ।

५८. **उपमातो** ति । भारो विय हि दुक्खसच्चं दट्ठब्ब, भारादानमिव समुदयसच्च, भारनिक्खेपनमिव निरोधसच्चं, भारनिक्खेपनूपायो विय मग्गसच्च । रोगो विय दुक्खसच्च, रोगनिदानमिव समुदयसच्च, रोगवूपसमो विय निरोधसच्च, भसज्जमिव मग्गसच्च । दुब्भिक्खमिव वा दुक्खसच्चं, दुब्बुट्ठि विय समुदयसच्च, सुभिक्खमिव निरोधसच्च, सुवुट्ठि विय मग्गसच्च । अपि च—वेरि-वेरमूल-वेरसमुग्घात-वेरसमुग्घातूपायेहि, विसरुक्ख-रुक्खमूल-मूलूपच्छेद-तदुपच्छेदनूपायेहि, भय-भयमूल-निब्भय-तदधिगमूपायेहि, ओरिमतीर-महोघ-पारिमतीरतसम्पापकवायामेहि च योजेत्वा पेतानि उपमातो वेदितब्बानी ति ।

एवमेत्थ उपमातो विनिच्छयो वेदितब्बो ।

५९. **चतुक्कतो** ति । अत्थि चेत्थ दुक्खं न अरियसच्च, अत्थि अरियसच्चं न दुक्ख, अत्थि दुक्ख चेव अरियसच्च च, अत्थि नेव दुक्ख न अरियसच्च । एस नयो समुदयादिसु ।

तत्थ मग्गसम्पयुत्ता धम्मा सामञ्ञफलानि च, "यदनिच्च त दुक्ख" (स० २–२५९) ति वचनतो सङ्खारदुक्खताय दुक्खं न अरियसच्चं, निरोधो अरियसच्चं न दुक्खं, इतरं पन अरियसच्चद्वय सिया दुक्ख अनिच्चतो, न यस्स परिञ्ञाय भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सति तथत्तेन । सब्बाकारेन पन उपादानक्खन्धपञ्चक दुक्खं चेव अरियसच्चं च अञ्ञत्र तण्हाय । मग्गसम्पयुत्ता धम्मा सामञ्ञफलानि च यस्स परिञ्ञत्थं भगवति ब्रह्मचरिय वुस्सति तथत्तेन नेव दुक्खं न अरियसच्च ।

एवं समुदयादिसु पि यथायोगं योजेत्वा चतुक्कतो पेत्थ विनिच्छयो वेदितब्बो ।

६०. **सुञ्ञतेकविधादीहि** ति । एत्थ **सुञ्ञतो** ताव, परमत्थेन हि सब्बानेव

सच्चानि वेदककारकनिब्बुतगमकाभावतो सुञ्ञानी ति वेदितब्बानि। तेनेतं वुच्चति—

"दुक्खमेव हि, न कोचि दुक्खितो, कारको न, किरिया व विज्जति।
अत्थि निब्बुति, न निब्बुतो पुमा, मग्गमत्थि, गमको न विज्जती" ति ॥

अथ वा—

धुव-सुभ-सुखत्तसुञ्ञ पुरिमद्वयमत्तसुञ्ञममतपद।
धुव सुख-अत्तविरहितो मग्गो इति सुञ्ञता तेसु ॥

६१. निरोधसुञ्ञानि वा तीणि, निरोधो च सेसत्तयसुञ्ञो। फलसुञ्ञो वा एत्थ हेतु, समुदये दुक्खस्साभावतो, मग्गे च निरोधस्स, न फलेन सगब्भो पकतिवादीन पकति विय। हेतुसुञ्ञ च फल, दुक्ख-समुदयानं निरोध-मग्गानं च असमवाया, न हेतुसमवेत हेतुफल समवायवादीनं द्विअणुकादि विय। तेनेत वुच्चति—

"तयमिध निरोधसुञ्ञ, तयेन तेनापि निब्बुति सुञ्ञा।
सुञ्ञो फलेन हेतु, फल पि त हेतुना सुञ्ञं" ॥

एवं ताव सुञ्ञतो विनिच्छयो वेदितब्बो।

एकविधादिविनिच्छयकथा

६२ **एकविधादीही** ति। सब्बमेव चेत्थ दुक्ख एकविधं पवत्तिभावतो। दुविध नामरूपतो। तिविध कामरूपारूपूपपत्ति-भवभेदतो। चतुब्बिध चतुआहार-भेदतो। पञ्चविध पञ्चुपादानक्खन्धभेदतो।

६३ समुदयो पि एकविधो पवत्तकभावतो। दुविधो दिट्ठिसम्पयुत्तासम्पयुत्ततो। तिविधो कामभवविभवतण्हाभेदतो। चतुब्बिधो चतुमग्गप्पहेय्यतो। पञ्चविधो रूपाभिनन्दनादिभेदतो। छब्बिधो छतण्हाकायभेदतो।

६४ निरोधो पि एकविधो असङ्खतधातुभावतो। परियायेन पन दुविधो सउपादिसेस-अनुपादिसेसभेदतो। तिविधो भवत्तयवूपसमतो। चतुब्बिधो चतुमग्गाधिगमनीयतो। पञ्चविधो पञ्चाभिनन्दनवूपसमतो। छब्बिधो छतण्हाकायक्खयभेदतो।

६५. मग्गो पि एकविधो भावेतब्बतो। दुविधो समथ विपस्सनाभेदतो, दस्सन-भावनाभेदतो वा। तिविधो खन्धत्तयभेदता। अय हि सप्पदेसत्ता नगरं विय रज्जेन निप्पदेसेहि तीहि खन्धेहि सङ्गहितो। यथाह—

"न खो, आवुसो विसाख, अरियेन अट्ठङ्गिकेन मग्गेन तयो खन्धा सङ्गहिता। तीहि च खो, आवुसो विसाख, खन्धेहि अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो सङ्गहितो। या चावुसो विसाख, सम्मावाचा, यो च सम्माकम्मन्तो, यो च सम्माआजीवो—इमे धम्मा सीलक्खन्धे सङ्गहिता। यो च सम्मावायामो, या

च सम्मासति, यो च सम्मासमाधि—इमे धम्मा समाधिक्खन्धे सङ्गहिता। या च सम्मादिट्ठि, यो च सम्मासङ्कप्पो—इमे धम्मा पञ्ञाक्खन्धे सङ्गहिता" (म० १–३७१) ति।

६६ एत्थ हि सम्मावाचादयो तयो सीलमेव। तस्मा ते सजातितो सीलक्खन्धेन सङ्गहिता। किञ्चापि हि पाळियं **सीलक्खन्धे** ति भुम्मेन निद्देसो कतो, अत्थो पन करणवसेनेव वेदितब्बो। सम्मावायामादीसु पन तीसु समाधि अत्तनो धम्मताय आरम्मणे एकग्गभावेन अप्पेतु न सक्कोति, विरिये पन पग्गहकिच्चं साधेन्ते, सतिया च अपिलापनकिच्च साधेन्तिया लद्धूपकारो हुत्वा सक्कोति।

६७ तत्राय उपमा—यथा हि 'नक्खत्त कीळिस्सामा' ति उय्यानं पविट्ठेसु तीसु सहायेसु एको सुपुप्फित चम्पकरुक्खं दिस्वा हत्थं उक्खिपित्वा गहेतु पि न सक्कुणेय्य। अथस्स दुतियो ओनमित्वा पिट्ठि ददेय्य। सो तस्स पिट्ठियं ठत्वा पि कम्पमानो गहेतु न सक्कुणेय्य। अथस्स इतरो अंसकूटं उपनामेय्य। सो एकस्स पिट्ठियं ठत्वा एकस्स असकूट ओलुब्भ यथारुचि पुप्फानि ओचिनित्वा पिळन्धित्वा नक्खत्तं कीळेय्य। एवंसम्पदमिदं दट्ठब्बं।

एकतो उय्यान पविट्ठा तयो सहाया विय हि एकतो जाता सम्मावायामादयो तयो धम्मा। सुपुप्फितचम्पको विय आरम्मण। हत्थ उक्खिपित्वा पि गहेतुं असक्कोन्तो विय अत्तनो धम्मताय आरम्मणे एकग्गभावेन अप्पेतु असक्कोन्तो समाधि। पिट्ठि दत्वा ओनतसहायो विय वायामो। असकूट दत्वा ठितसहायो विय सति। यथा तेसु एकस्स पिट्ठिय ठत्वा एकस्स असकूटं ओलुब्भ इतरो यथारुचि पुप्फ गहेतु सक्कोति, एवमेव विरिये पग्गहकिच्च साधेन्ते सतिया च अपिलापनकिच्च साधेन्तिया लद्धूपकारो समाधि सक्कोति आरम्मणे एकग्गभावेन अप्पेतु। तस्मा समाधि येवेत्थ सजातितो समाधिक्खन्धेन सङ्गहितो, वायाम-सतियो पन किरियतो सङ्गहिता होन्ति।

६८ सम्मादिट्ठि-सम्मासङ्कप्पेसु पि पञ्ञा अत्तनो धम्मताय अनिच्चं दुक्खमनत्ता ति आरम्मणं निच्छेतु न सक्कोति। वितक्के पन आकोटेत्वा आकोटेत्वा देन्ते सक्कोति।

कथं? यथा हि हेरञ्ञिको कहापणं हत्थे ठपेत्वा सब्बभागेसु ओलोकेतुकामो समानो पि न चक्खुतलेनेव परिवत्तेतु सक्कोति, अङ्गुलिपब्बेहि पन परिवत्तेत्वा परिवत्तेत्वा इतो चितो च ओलोकेतु सक्कोति, एवमेव न पञ्ञा अत्तनो धम्मताय अनिच्चादिवसेन आरम्मणं निच्छेतु सक्कोति, अभिनिरोपनलक्खणेन पन आहननपरियाहननरसेन वितक्केन आकोटेन्तेन विय परिवत्तेन्तेन विय च आदायादाय दिन्नमेव निच्छेतुं सक्कोति। तस्मा इधापि सम्मादिट्ठि

येव सजातितो पञ्ञाक्खन्धेन सङ्गहिता, सम्मासङ्कप्पो पन किरियवसेन सङ्गहितो होति।

इति इमेहि तीहि खन्धेहि मग्गो सङ्गहं गच्छति। तेन वुत्तं—"तिविधो खन्धत्तयभेदतो" ति। चतुब्बिधो सोतापत्तिमग्गादिवसेनेव।

६९. अपि च, सब्बानेव सच्चानि एकविधानि—अवितथत्ता, अभिञ्ञेय्यत्ता वा। दुविधानि—लोकियलोकुत्तरतो[1], सङ्खतासङ्खततो[2] वा। तिविधानि—दस्सनभावनाहि पहातब्बता, अप्पहातब्बतो च। चतुब्बिधानि—परिञ्ञेय्यादिभेदतो ति। एवमेत्थ एकविधादीहि विनिच्छयो वेदितब्बो।

७० **सभागविसभागतो** ति। सब्बानेव सच्चानि अञ्ञमञ्ञं सभागानि अवितथतो, अत्तसुञ्ञतो, दुक्करपटिवेधतो च। यथाह—

"तं किं मञ्ञसि, आनन्द, कतमं नु खो दुक्करतरं वा दुरभिसम्भवतरं वा—यो वा दूरतो व सुखुमेन ताळच्छिग्गळेन असनं अतिपातेय्य पोङ्खानुपोङ्खं अविराधितं, यो वा सतधा भिन्नस्स वालस्स कोटिया कोटिं पटिविज्झेय्या ति? एतदेव, भन्ते, दुक्करतरं चेव दुरभिसम्भवतरं च, यो वा सतधा भिन्नस्स वालस्स कोटिया कोटिं पटिविज्झेय्या ति। ततो खो ते, आनन्द, दुप्पटिविज्झतरं पटिविज्झन्ति, ये 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पटिविज्झन्ति ·पे०· 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा ति यथाभूतं पटिविज्झन्ती" (स० ४-३८८) ति।

७१. विसभागानि सलक्खणववत्थानतो। पुरिमानि च द्वे सभागानि दुरवगाहत्थेन गम्भीरत्ता, लोकियत्ता सासवत्ता च। विसभागानि फलहेतुभेदतो परिञ्ञेय्यपहातब्बतो च। पच्छिमानि पि द्वे सभागानि गम्भीरत्तेन दुरवगाहत्ता लोकुत्तरता अनासवत्ता च। विसभागानि विसयविसयिभेदतो सच्छिकातब्ब-भावेतब्बतो च। पठमततियानि चापि सभागानि फलापदेसतो। विसभागानि सङ्खतासङ्खततो। दुतियचतुत्थानि चापि सभागानि हेतुपदेसतो। विसभागानि एकन्तकुसलाकुसलतो। पठमचतुत्थानि चापि सभागानि सङ्खततो। विसभागानि लोकियलोकुत्तरतो। दुतियततियानि चापि सभागानि नेवसेक्खनासेक्खभावतो। विसभागानि सारम्मणानारम्मणतो।

इति एवं पकारेहि नयेहि च विचक्खणो।
विजञ्ञा अरियसच्चानं सभागविसभागतं ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे पञ्ञाभावनाधिकारे
इन्द्रियसच्चनिद्देसो नाम सोळसमो परिच्छेदो॥

●

१ लोकियलोकुत्तरतो ति। दुक्खसमुदयसच्चानि लोकियानि, निरोधमग्गसच्चानि लोकुत्तरानि। २. सङ्खतासङ्खतो ति। तीणि सच्चानि सङ्खतानि, निरोधसच्चं असङ्खतं।

पञ्ञाभूमिनिद्देसो

सत्तरसमो परिच्छेदो

पटिच्चसमुप्पादकथा

१ इदानि "खन्धायतन-धातु-इन्द्रिय-सच्च-पटिच्चसमुप्पादादिभेदा धम्मा भूमी" ति (विसु०–३७३) एव वुत्तेसु इमिस्सा पञ्ञाय भूमिभूतेसु धम्मेसु यस्मा पटिच्चसमुप्पादो चेव आदि-सद्देन सङ्गहिता पटिच्चसमुप्पन्ना धम्मा च अवसेसा होन्ति, तस्मा तेसं वण्णनाक्कमो अनुप्पत्तो ।

तत्थ अविज्जादयो ताव धम्मा **पटिच्चसमुप्पादो** ति वेदितब्बा । वुत्त हेत भगवता—"कतमो च, भिक्खवे, पटिच्चसमुप्पादो ? अविज्जापच्चया, भिक्खवे, सङ्खारा, सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं, विञ्ञाणपच्चया नामरूप, नामरूपपच्चया सळायतन, सळायतनपच्चया फस्सो, फस्सपच्चया वेदना, वेदनापच्चया तण्हा, तण्हापच्चया उपादान, उपादानपच्चया भवो, भवपच्चया जाति, जातिपच्चया जरा-मरण-सोक-परिदेव-दुक्ख-दोमनस्सुपायासा सम्भवन्ति, एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स समुदयो होति । अय वुच्चति, भिक्खवे, पटिच्चसमुप्पादो" (सं० २–१) ति ।

जरामरणादयो पन **पटिच्चसमुप्पन्ना धम्मा** ति वेदितब्बा । वुत्तं हेत भगवता—"कतमे च, भिक्खवे पटिच्चसमुप्पन्ना धम्मा ? जरामरण, भिक्खवे, अनिच्चं सङ्खतं पटिच्चसमुप्पन्नं खयधम्म वयधम्म विरागधम्म निरोधधम्मं । जाति, भिक्खवे,··· पे० भवो, उपादान, तण्हा, वेदना, फस्सो, सळायतनं, नाम-रूप, विञ्ञाण, सङ्खारा ·अविज्जा, भिक्खवे, अनिच्चा सङ्खता पटिच्च-समुप्पन्ना खयधम्मा वयधम्मा विरागधम्मा निरोधधम्मा । इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, पटिच्चसमुप्पन्ना धम्मा" (सं० २–२४) ति ।

२. अय पनेत्थ सङ्खेपो—**पटिच्चसमुप्पादो** ति पच्चयधम्मा वेदितब्बा । **पटिच्चसमुप्पन्ना धम्मा** ति । तेहि तेहि पच्चयेहि निब्बत्तधम्मा ।

कथमिदं जानितब्ब ति चे ? भगवतो वचनेन । भगवता हि पटिच्चसमुप्पाद-पटिच्चसमुप्पन्नधम्मदेसनासुत्ते—

"कतमो च, भिक्खवे, पटिच्चसमुप्पादो ? जातिपच्चया, भिक्खवे, जरा-मरणं । उप्पादा वा तथागतानं अनुप्पादा वा तथागतानं, ठिता व सा धातु

धम्मट्ठितता[1] धम्मनियामता[2] इदप्पच्चयता। त तथागतो अभिसम्बुज्झति अभिसमेति, अभिसम्बुज्झित्वा अभिसमेत्वा आचिक्खति देसेति पञ्ञपेति पट्ठपेति विवरति विभजति उत्तानीकरोति, पस्सथा ति चाह—जातिपच्चया, भिक्खवे, जरामरण। भवपच्चया, भिक्खवे, जाति पे० अविज्जापच्चया, भिक्खवे, सङ्खारा। उप्पादा वा तथागतान पे० विभजति उत्तानीकरोति, पस्सथा ति चाह—अविज्जापच्चया, भिक्खवे, सङ्खारा। इति खो भिक्खवे, या तत्र तथता अवितथता अनञ्ञथता इदप्पच्चयता, अय वुच्चति, भिक्खवे, पटिच्चसमुप्पादो" (स० २–२४) ति।

३ एवं पटिच्चसमुप्पाद देसेन्तेन तथतादीहि वेवचनेहि पच्चयधम्मा व 'पटिच्चसमुप्पादो' ति वुत्ता। तस्मा जरामरणादीन धम्मानं पच्चयलक्खणो पटिच्चसमुप्पादो, दुक्खानुबन्धनरसो, कुम्मग्गपच्चुपट्ठानो ति वेदितब्बो।

सो पनायं तेहि तेहि पच्चयेहि अनूनाधिकेहेव तस्स तस्स धम्मस्स सम्भवतो **तथता** ति। सामग्गि उपगतेसु पच्चयेसु मुहुत्त पि ततो निब्बत्तधम्मानं असम्भवाभावतो **अवितथता** ति। अञ्ञधम्मपच्चयेहि अञ्ञधम्मानुप्पत्तितो **अनञ्ञथता** ति। तथावुत्तान एतेस जरामरणादीनं पच्चयतो वा पच्चयसमूहतो वा **इदप्पच्चयता** ति वुत्तो।

४ तत्राय वचनत्थो—इमेस पच्चया इदप्पच्चया, इदप्पच्चया एव **इदप्पच्चयता**। इदप्पच्चयान वा समूहो **इदप्पच्चयता**[3]। लक्खण पनेत्थ सद्दसत्थतो परियेसितब्बं।

५. केचि पन पटिच्च सम्मा च तित्थियपरिकप्पितपकतिपुरिसादिकारणनिरपेक्खो उप्पादो पटिच्चसमुप्पादो ति एव "उप्पादमत्तं पटिच्चसमुप्पादो" ति वदन्ति। त न युज्जति। कस्मा? सुत्ताभावतो, सुत्तविरोधतो, गम्भीरनयासम्भवतो, सद्दभेदतो च।

"उप्पादमत्त पटिच्चसमुप्पादो" ति हि सुत्त नत्थि। (१)

---

१. धम्मस्स ठिति **धम्मट्ठिति**। **धम्मो** ति वा कारण, पच्चयो ति अत्थो। धम्मस्स ठिति सभावो, धम्मतो च अञ्ञो सभावो नत्थी ति **धम्मट्ठिति,** पच्चयो। तेनाह— "पच्चयपरिग्गहे पञ्ञा धम्मट्ठितिञाणं" (खु० ५–४८) ति। धम्मट्ठिति एव धम्मट्ठितता पच्चयसभावता।

२. सा एव धातु "जातिपच्चया जरामरणं" ति इमस्स सभावस्स, हेतुनो वा अञ्ञथत्ताभावतो "न जातिपच्चया जरामरण" ति विञ्ञायमानस्स तब्भावाभावतो नियामता ववत्थितभावो ति **धम्मनियामता**।

३ **इदप्पच्चयता** ति समूहत्थं ता-सद्दमाह, यथा जनान समूहो जनता ति।

"तं पटिच्चसमुप्पादो" ति च वदन्तस्स पदेसविहारसुत्तविरोधो आपज्जति। कथ? भगवतो हि "अथ खो भगवा रत्तिया पठम याम पटिच्चसमुप्पादं अनुलोमपटिलोम मनसाकासी" (वि० ३-३) ति आदिवचनतो पटिच्चसमुप्पाद-मनसिकारो पठमाभिसम्बुद्धविहारो। पदेसविहारो च तस्सेकदेसविहारो। यथाह—"येन स्वाहं, भिक्खवे, विहारेन पठमाभिसम्बुद्धो विहरामि, तस्स पदसेन विहासिं" (स० २-३१) ति। तत्र च पच्चयाकारदस्सनेन विहासि, न उप्पादमत्तदस्सनेना ति। यथाह—'सो एव पजानामि मिच्छादिट्ठिपच्चया पि वेदयित, सम्मादिट्ठिपच्चया पि वेदयित, मिच्छासङ्कप्पपच्चया पि वेदयित" (स० ४-३) ति सब्बं वित्थारेतब्ब। एवं "उप्पादमत्त पटिच्चसमुप्पादो" ति वदन्तस्स पदेसविहारसुत्तविरोधो आपज्जति।

६ तथा कच्चानसुत्तविरोधो। **कच्चानसुत्ते** पि हि—"लोकसमुदयं खो, कच्चान, यथाभूत सम्मप्पञ्ञाय पस्सतो या लोके नत्थिता सा न होती" (स० २-१७) अनुलोमपटिच्चसमुप्पादो लोकपच्चयतो "लोकसमुदयो" ति उच्छेदकदिट्ठिसमुग्घातत्थ पकासितो, न उप्पादमत्तं। न हि उप्पादमत्तदस्सनेन उच्छेददिट्ठिया समुग्घातो होति। पच्चयानुपरमदस्सनेन पन होति। पच्चयानु-परमे फलानुपरमतो ति। एवं "उप्पादमत्त पटिच्चसमुप्पादो" ति वदन्तस्स **कच्चानसुत्त**विरोधो पि आपज्जति। (२)

७. **गम्भीरनयासम्भवतो** ति। वुत्त खो पनेत भगवता—"गम्भीरो चाय, आनन्द, पटिच्चसमुप्पादो गम्भीरावभासो चा" (दी० २-४४) ति। गम्भीरत्त च नाम चतुब्बिध, तं परतो वण्णयिस्साम। त उप्पादमत्ते नत्थि। चतुब्बिधनय-पटिमण्डित चेत पटिच्चसमुप्पाद वण्णयन्ति, तं पि नयचतुक्क उप्पादमत्ते नत्थी ति। गम्भीरनयासम्भवतो पि "न उप्पादमत्त पटिच्चसमुप्पादो"। (३)

८ **सद्दभेदतो** ति। पटिच्चसद्दो च पनायं समाने कत्तरि[1] पुब्बकाले पयुज्ज-मानो अत्थसिद्धिकरो होति। सेय्यथीदं—"चक्खु च पटिच्च रूपे च उप्पज्जति चक्खुविञ्ञाण" (सं० २-६१) ति। इध पन भावसाधनेन उप्पादसद्देन सद्धिं पयुज्जमानो समानस्स कत्तु अभावतो सद्दभेदं गच्छति, न च किञ्चि अत्थं साधेती ति सद्दभेदतो पि न "उप्पादमत्तं पटिच्चसमुप्पादो" ति। (४)

---

१. **समाने कत्तरी** ति। एकस्मिं येव कत्तरि उप्पज्जनकिरियाय यो कत्ता, तस्मिं येव पच्चयनकिरियाय च कत्तुभूते ति अत्थो। यथा 'न्हत्वा भुञ्जति, भुत्वा सयती" ति। "**पुब्बकाले**" ति इदं च त्वासद्दन्तानं पदानं येभुय्येन पुरिमकालकिरियाय दीपनतो वुत्त, न इध पटिच्चसद्दस्स पुरिमकालत्थत्ता।

तत्थ सिया—"होति-सद्देन सद्धिं योजयिस्साम 'पटिच्चसमुप्पादो होती' ति" ? त न युत्त। कस्मा ? योगाभावतो चेव, उप्पादस्स च उप्पादापत्तिदोसतो। "पटिच्चसमुप्पाद वो, भिक्खवे, देसेस्सामि, कतमो च, भिक्खवे, पटिच्चसमुप्पादो पे०....अय वुच्चति, भिक्खवे, पटिच्चसमुप्पादो" (स० २-१) ति। इमेसु हि पदेसु एकेन पि सद्धिं होति-सद्दो योग न गच्छति। न च उप्पादो होति। सचे भवेय्य, उप्पादस्सा पि उप्पादो पापुणेय्या ति।

९ ये पि मञ्ञन्ति—"इदप्पच्चयान भावो इदपच्चयता, **भावो** च नाम यो आकारो अविज्जादीन सङ्खारादिपातुभावे हेतु, सो। तस्मिं च सङ्खारविकारे पटिच्चसमुप्पादसञ्ञा" ति, तेस त न युज्जति। कस्मा ? अविज्जादीन हेतुवचनतो। भगवता हि—"तस्मातिह, आनन्द, एसेव हेतु, एत निदानं, एस समुदयो, एस पच्चयो जरामरणस्स यदिद जाति पे० सङ्खारानं, यदिदं अविज्जा" (दी० २-४८) ति एव अविज्जादयो व हेतू ति वुत्ता, न तेस विकारो। तस्मा "पटिच्चसमुप्पादो ति पच्चयधम्मा वेदितब्बा" ति इति य तं वुत्तं, तं सम्मा वुत्त ति वेदितब्ब।

१० या पनेत्थ "पटिच्चसमुप्पादो" ति इमाय ब्यञ्जनच्छायाय, उप्पादो येवाय वुत्तो ति सञ्ञा उप्पज्जति, सा इमस्स पदस्स एवमत्थ गहेत्वा वूपसमेतब्बा। भगवता हि—

द्वेधा ततो पवत्ते धम्मसमूहे यतो इदं वचनं।
तप्पच्चयो ततोयं फलोपचारेन इति वुत्तो॥

यो हि अय पच्चयताय पवत्तो धम्मसमूहो, तत्थ पटिच्चसमुप्पादो ति इदं वचन द्विधा इच्छन्ति। सो हि यस्मा पतीयमानो हिताय सुखाय च संवत्तति, तस्मा पच्चेतुमरहन्ति नं पण्डिता ति पटिच्चो। उप्पज्जमानो च सह सम्मा च उप्पज्जति, न एकेकतो, नापि अहेतुतो ति समुप्पादो। एव पटिच्चो च सो समुप्पादो चा ति पटिच्चसमुप्पादो। अपि च, सह उप्पज्जतो ति समुप्पादो, पच्चयसामग्गिं पन पटिच्च अपच्चक्खाया ति एव पि पटिच्च सो समुप्पादो चा ति पटिच्चसमुप्पादो। तस्स चाय हेतुसमूहो पच्चयो ति तप्पच्चयत्ता अयं पि, यथा लोके सेम्हस्स पच्चयो गुळो 'सेम्हो गुळो' ति वुच्चति, यथा च सासने सुखपच्चयो बुद्धानं उप्पादो 'सुखो बुद्धानं उप्पादो' ति वुच्चति, तथा पटिच्च समुप्पादो इच्चेव फलवोहारेन वुत्तो ति वेदितब्बो।

११ अथ वा—

पटिमुखमितो ति वुत्तो हेतुसमूहो अय पटिच्चो ति।
सहिते उप्पादेति च इति वुत्तो सो समुप्पादो॥

यो हि एस सङ्खारादीनं पातुभावाय अविज्जादिएकेकहेतुसीसेन निद्दिट्ठो हेतुसमूहो, सो साधारणफलनिप्फादकट्ठेन अवेकल्लट्ठेन च सामग्गिअङ्गानं अञ्ञमञ्ञन पटिमुख इतो गतो ति कत्वा पटिच्चो ति वुच्चति। स्वाय सहिते येव अञ्ञमञ्ञ अविनिब्भोगवुत्तिधम्मे उप्पादेती ति समुप्पादो ति पि वुत्तो। एव पि पटिच्चो च सो समुप्पादो चा ति पटिच्चसमुप्पादो।

१२ अपरो नयो—

पच्चयता[1] अञ्ञोञ्ञ पटिच्च[2] यस्मा सम[3] सह[4] च धम्मे।
अयमुप्पादेति ततो पि एवमिध भासिता मुनिना॥

अविज्जादिमीसेन निद्दिट्ठपच्चयेसु हि ये पच्चया य सङ्खारादिक धम्मं उप्पादन्ति, न ते अञ्ञमञ्ञ अपटिच्च अञ्ञमञ्ञवेकल्ले सति उप्पादतु समत्था ति। तस्सा पटिच्च सम सह च न एकेकदेसं, नापि पुब्बापरभावेन अयं पच्चयता धम्मे उप्पादेती ति अत्थानुसारवोहारकुसलेन मुनिना एवमिध भासिता, पटिच्चसमुप्पादो त्वेव भासिता ति अत्थो।

१३. एवं भासमानेन च—

पुरिमेन सस्सतादीनमभावो पच्छिमेन च पदेन।
उच्छेदादिविघातो द्वयेन परिदीपितो ञायो॥

पुरिमेना ति। पच्चयसामग्गिपरिदीपकेन पटिच्चपदेन पवत्तिधम्मान पच्चयसामग्गियं आयत्तवुत्तित्ता सस्सताहेतु-विसमहेतु-वसवत्तिवादप्पभेदानं सस्सतादीनं अभावो परिदीपितो होति। किं हि सस्सतादीन, अहेतुआदिवसेन वा पवत्तानं पच्चयसामग्गिया ति!

पच्छिमेन च पदेना ति। धम्मानं उप्पादपरिदीपकेन समुप्पादपदेन पच्चयसामग्गिय धम्मान उप्पत्तितो विहिता उच्छेद-नत्थिक-अकिरियवादा ति उच्छेदादिविघातो परिदीपितो होति। पुरिम-पुरिमपच्चयवसेन हि पुनप्पुनं उप्पज्जमानेसु धम्मेसु कुतो उच्छदो नत्थिकाकिरियादा चा ति!

द्वयेना ति। सकलेन पटिच्चसमुप्पादवचनेन, तस्सा तस्सा पच्चयसामग्गिया सन्तति अविच्छिन्दित्वा तेस तेस धम्मानं सम्भवतो मज्झिमा पटिपदा, "सो करोति, सो पटिसवेदति, अञ्ञो करोति, अञ्ञो पटिसवेदेती" (सं० २–२०) ति वादप्पहानं, जनपदनिरुत्तिया अनभिनिवेसो, समञ्ञाय अनतिधावन ति अयं ञायो परिदीपितो होती ति। अयं ताव पटिच्चसमुप्पादो ति वचनमत्तस्स अत्थो।

---

१. **पच्चयता** ति। अयं अविज्जादिको पच्चयसमूहो। २. **पटिच्चा** ति। निस्साय। सहकारिकारणं लद्धा। ३ **समं** ति। अवेकल्लेन। ४. **सहा** ति। एकज्झं।

१४. या पनाय भगवता पटिच्चसमुप्पादं देसेन्तेन—"अविज्जापच्चया सङ्खारा" ति आदिना नयेन निक्खित्ता तन्ति[1], तस्सा अत्थसवण्णनं करोन्तेन विभज्जवादिमण्डल[2] ओतरित्वा आचरिये अनब्भाचिक्खन्तेन सकसमयं अवोक्कमन्तेन परसमय अनायूहन्तेन सुत्त अप्पटिबाहन्तेन विनय अनुलोमेन्तेन महापदेसे (दी० २–९३) ओलोकेन्तेन धम्म दीपेन्तेन अत्थ सङ्गाहेन्तेन तमेवत्थं पुनरावत्तेत्वा अपरेहि पि परियायन्तरेहि निद्दिसन्तेन च यस्मा अत्थसंवण्णना कातब्बा होति, पकतिया पि च दुक्करा व पटिच्चसमुप्पादस्स अत्थसंवण्णना। यथाहु पोराणा—

"सच्च[3] सत्तो[4] पटिसन्धि पच्चयाकारमेव[5] च।
दुद्दस्सा चतुरो धम्मा देसेतु च सुदुक्करा" ति॥

तस्मा अञ्ञत्र आगमाधिगमप्पत्तेहि न सुकरा पटिच्चसमुप्पादस्सत्थवण्णना ति परितुलयित्वा—

वत्तुकामो अह अज्ज पच्चयाकारवण्णन।
पतिट्ठ नाधिगच्छामि अज्झोगाळ्हो व सागर॥
सासन पनिद नानादेसनानयमण्डितं।
पुब्बाचरियमग्गो च अब्बोच्छिन्नो पवत्तति॥
यस्मा तस्मा तदुभयं सन्निस्सायत्थवण्णन।
आरभिस्सामि एतस्स तं सुणाथ समाहिता॥

वुत्तं हेतं **पुब्बाचरियेहि**—

"यो कोचि म अट्ठिकत्वा[6] सुणेय्य लभेथ पुब्बापरिय विसेस।
लद्धान पुब्बापरियं विसेसं अदस्सनं मच्चुराजस्स गच्छे" ति॥

---

१. यथाधिप्पेतस्स अत्थस्स तननतो **तन्ति** = गन्थो।

२ "किंवादी, भन्ते, सम्मासम्बुद्धो" ति पुच्छितेन "विभज्जवादी, महाराजा" ति मिलिन्दपञ्हे मोग्गलिपुत्ततिस्सत्थेरेन वुत्तत्ता सम्मासम्बुद्धसावका विभज्जवादिनो। ते हि सत्थारा वेनयिकादिभाव विभज्ज वुत्तं अनुवदन्ति सोमनस्सादीन, चीवरादीनं च सेवितब्बासेवितब्बभावं। विभज्जवादीन मण्डल समूहो **विभज्जवादिमण्डलं**।

३. **सच्चं** ति। चतुसच्च। ४. **सत्तो** ति। सत्तसुञ्ञता। सत्तसुञ्ञेसु पन सङ्खारेसु सत्तवोहारो, सत्तत्थकिच्चसिद्धि च।

५. **पच्चयाकारमेव चा** ति। पच्चयाकारयो एव च, म-कारो पदसन्धिकरो। पच्चयधम्मानं अत्तनो येव फलस्स पच्चयभावो पटिच्चसमुप्पादो ति अत्थो। ६ **अट्ठिकत्वा** ति। अत्थ कत्वा। यथा वा न नस्सति, एवं अट्ठिमतं विय करोन्तो अट्ठिं कत्वा।

१५ इति, **अविज्जापच्चया सङ्खारा** ति आदीसु हि आदितो येव ताव—

देसानाभेदतो अत्थलक्खणेकविधादितो।
अङ्गान च ववत्थाना विञ्ञातब्बो विनिच्छयो॥

तत्थ **देसनाभेदतो** ति। भगवतो हि वल्लिहारकान चतुन्नं पुरिसानं वल्लिगहण विय आदितो वा मज्झत्तो वा पट्ठाय याव परियोसानं, तथा परियोसानतो वा मज्झतो वा पट्ठाय याव आदी ति चतुब्बिधा पटिच्चसमुप्पाददेसना।

यथा हि वल्लिहारकेसु चतूसु पुरिसेसु एको वल्लिया मूलमेव पठम पस्सति, सो त मूले छेत्वा सब्बं आकड्ढित्वा आदाय कम्मे उपनेति, एवं भगवा—"इति खो, भिक्खवे, अविज्जापच्चया सङ्खारा ···पे०· 'जातिपच्चया जरामरण" (स० २–५) ति आदिता पट्ठाय याव परियोसाना पि पटिच्चसमुप्पाद देसेति।

यथा पन तेसु पुरिसेसु एको वल्लिया मज्झ पठम पस्सति, सो मज्झे छिन्दित्वा उपरिभागञ्ञेव आकड्ढित्वा आदाय कम्मे उपनेति, एव भगवा—"तस्स त वेदन अभिनन्दतो अभिवदतो अज्झोसाय तिट्ठतो उप्पज्जति नन्दी। या वेदनासु नन्दी, तदुपादान। तस्सुपादानपच्चया भवो, भवपच्चया जाती" (स० २–२५३) ति मज्झतो पट्ठाय याव परियोसाना पि देसेति।

यथा च तेसु पुरिसेसु एको वल्लिया अग्ग पठम पस्सति, सो अग्गे गहेत्वा अग्गानुसारेन याव मूला सब्ब आदाय कम्मे उपनेति, एव भगवा—"जातिपच्चया जरामरण ति इति खो पनेत वुत्त। जातिपच्चया नु खो, भिक्खवे, जरामरण नो वा, कथ वो एत्थ होती ति? जातिपच्चया, भन्ते, जरामरण। एव नो एत्थ होति—जातिपच्चया जरामरण ति। भवपच्चया जाति ··पे० अविज्जापच्चया सङ्खारा ति इति खो पनेत वुत्त। अविज्जापच्चया नु खो, भिक्खवे, सङ्खारा नो वा, कथ वो एत्थ होती" (म० १–३२१) ति परियोसानतो पट्ठाय याव आदितो पि पटिच्चसमुप्पाद देसेति।

यथा पन तेसु पुरिसेसु एको वल्लिया मज्झमेव पठमं पस्सति, सो मज्झे छिन्दित्वा हेट्ठा ओतरन्तो याव मूला आदाय कम्मे उपनेति, एव भगवा—"इमे च, भिक्खवे, चत्तारो आहारा किंनिदाना, किंसमुदया, किंजातिका, किंपभवा? इमे चत्तारो आहारा तण्हानिदाना तण्हासमुदया तण्हाजातिका तण्हापभवा। तण्हा किंनिदाना? वेदना, फस्सो, सळायतन, नामरूपं, विञ्ञाणं, सङ्खारा किंनिदाना? ··पे०·· 'सङ्खारा अविज्जानिदाना · पे० ··अविज्जापभवा" (स० २–१२) ति मज्झतो पट्ठाय याव आदितो देसेत्ति।

१६. **कस्मा पनेवं देसेती ति?** पटिच्चसमुप्पादस्स समन्तभद्दकत्ता, सयं च देसनाविलासप्पत्तत्ता। समन्तभद्दको हि पटिच्चसमुप्पादो, ततो ततो ञायपटि-

वेधाय संवत्तति येव। देसनाविलासप्पत्तो च भगवा चतुवेसारज्जपटिसम्भिदा-योगेन चतुब्बिधगम्भीरभावप्पत्तिया च देसनाविलासप्पत्तत्ता नानानयेहेव धम्मं देसेति।

विसेसतो पनस्स या आदितो पट्ठाय अनुलोमदेसना, सा पवत्तिकारण-विभागसम्मूळ्ह वेनेय्यजन समनुपस्सतो यथासकेहि कारणेहि पवत्तिसन्दस्सनत्थं उप्पत्तिक्कमसन्दस्सनत्थ च पवत्ता ति विञ्ञातब्बा। या परियोसानतो पट्ठाय पटिलोमदेसना, सा "किच्छं वताय लोको आपन्नो जायति च जीयति च मीयति च चवति च उप्पज्जति चा" (दी० २–२५) ति आदिना नयेन किच्छापन्न लोक अनुविलोकयतो पुब्बभागपटिवेधानुसारेन तस्स तस्स जरा-मरणादिकस्स दुक्खस्स अत्तना अधिगतकारणसन्दस्सनत्थ। या मज्झतो पट्ठाय याव आदि पवत्ता, सा आहारनिदानववत्थापनानुसारेन याव अतीतान अद्धानं अतिहरित्वा पुन अतीतद्धतो पभुति हेतुफलपटिपाटिसन्दस्सनत्थ। या पन मज्झतो पट्ठाय याव परियोसानं पवत्ता, सा पच्चुप्पन्ने अद्धाने अनागतद्धहेतु-समुट्ठानतो पभुति अनागतद्धसन्दस्सनत्थं।

तासु या पवत्तिकारणसम्मूळ्हस्स वेनेय्यजनस्स यथासकेहि कारणेहि पवत्ति-सन्दस्सनत्थं उप्पत्तिक्कमसन्दस्सनत्थ च आदितो पट्ठाय अनुलोमदेसना वुत्ता, सा इध निक्खित्ता ति वेदितब्बा।

१७ कस्मा पनेत्थ अविज्जा आदितो वुत्ता? किं पकतिवादीन पकति विय अविज्जा पि अकारणं मूलकारण लोकस्सा ति? न अकारण। "आसवसमुदया अविज्जासमुदयो" (म० १–७४) ति हि अविज्जाय कारणं वुत्तं। अत्थि पन परियायो येन मूलकारण सिया। को पन सो ति? वट्टकथाय सासभावो[1]।

भगवा हि वट्टकथं कथेन्तो द्वे धम्मे सीस कत्वा कथेति—अविज्जं वा। यथाह—"पुरिमा, भिक्खवे, कोटि न पञ्ञायति अविज्जाय 'इतो पुब्बे अविज्जा नाहोसि, अथ पच्चा समभवी' ति। एवं चेत, भिक्खवे, वुच्चति, अथ च पन पञ्ञायति इदप्पच्चया अविज्जा" (अ० ४–१८९) ति। भवतण्हं वा। यथाह—"पुरिमा, भिक्खवे, कोटि न पञ्ञायति भवतण्हाय 'इतो पुब्बे भवतण्हा नाहोसि, अथ पच्छा समभवी' ति। एवं चेतं, भिक्खवे, वुच्चति, अथ च पन पञ्ञायति इदप्पच्चया भवतण्हा" (अं० ४–१९२) ति।

१८ कस्मा पन भगवा वट्टकथं कथेन्तो इमे द्वे धम्मे सीस कत्वा कथेती ति? सुगतिदुग्गतिगामिनो कम्मस्स विसेसहेतुभूतत्ता।

---

१ **वट्टकथाय सीसभावो** ति। वट्टहेतुनो कम्मसा पि हेतुभावो।

दुग्गतिगामिनो हि कम्मस्स विसेसहेतु अविज्जा। कस्मा? यस्मा अविज्जाभिभूतो पुथुज्जनो अग्गिसन्तापलगुळाभिघातपरिस्समाभिभूता वज्झगावी ताय परिस्समातुरताय निरस्साद पि अत्तनो अनत्थावहं पि च उण्होदकपान विय, किलेससन्तापतो निरस्साद पि दुग्गतिनिपातनतो च अत्तनो अनत्थावहं पि पाणातिपातादिमनेकप्पकारं दुग्गतिगामिकम्मं आरभति।

सुगतिगामिनो पन कम्मस्स विसेसहेतु भवतण्हा। कस्मा? यस्मा भवतण्हाभिभूतो पुथुज्जनो सा वुत्तप्पकारा गावी सीतूदकतण्हाय सअस्सादं अत्तनो परिस्समविनोदन च सीतूदकपानं विय किलेससन्तापविरहतो सअस्साद सुगतिसम्पापनेन अत्तनो दुग्गतिदुक्खपरिस्समविनोदनं च 'पाणातिपाता वेरमणि' आदिमनेकप्पकारं सुगतिगामिकम्म आरभति।

१९ एतेसु पन वट्टकथाय सीसभूतेसु धम्मेसु कत्थचि भगवा एकधम्ममूलिकं देसन देसेति। सेय्यथीद—"इति खो, भिक्खवे, अविज्जूपनिसा सङ्खारा, सङ्खारूपनिस विञ्ञाण" (सं० २–२८) ति आदि। तथा "उपादानियेसु, भिक्खवे, धम्मेसु अस्सादानुपस्सिनो विहरतो तण्हा पवड्ढति, तण्हापच्चया उपादान" (सं० २–७३) ति आदि। कत्थचि उभयभूमिकं पि। सेय्यथीद—"अविज्जानीवरणस्स, भिक्खवे, बालस्स तण्हाय सम्पयुत्तस्स एवमयं कायो समुदागतो। इति अय चेव कायो बहिद्धा च नामरूपं इत्थेत द्वयं, द्वयं पटिच्च फस्सो सळेवायतनानि, येहि फुट्ठो बालो सुखदुक्ख पटिसवेदिती" (स० २–२२) ति आदि।

तासु देसनासु—"अविज्जापच्चया सङ्खारा" ति अयमिध अविज्जावसेन एकधम्ममूलिका देसना ति वेदितब्बा।

एव तावेत्थ देसनाभेदतो विञ्ञातब्बो विनिच्छयो॥ (१)

२०. **अत्थतो** ति। अविज्जादीन पदानं अत्थतो। सेय्यथीदं—पूरेतुं अयुत्तट्ठेन कायदुच्चरितादि अविन्दिय नाम, अलद्धब्ब ति अत्थो। त अविन्दिय विन्दती ति **अविज्जा**। तब्बिपरीततो कायसुचरितादि विन्दिय नाम, त विन्दिय न विन्दती ति **अविज्जा**। खन्धान रासट्ठं, आयतनानं आयतनट्ठं, धातून सुञ्ञट्ठं, इन्द्रियान अधिपतियट्ठं, सच्चानं तथट्ठं अविदितं करोती ति पि **अविज्जा**। दुक्खादीन पीळनादिवसेन वुत्तं चतुब्बिध अत्थ अविदितं करोती ति पि **अविज्जा**। अन्तविरहिते संसारे सब्बयोनि-गति-भव-विञ्ञाणट्ठिति-सत्तावासेसु सत्ते जवापेती ति **अविज्जा**। परमत्थतो अविज्जमानेसु इत्थिपुरिसादीसु जवति, विज्जमानेसु पि खन्धादीसु न जवती ति **अविज्जा**। अपि च चक्खुविञ्ञाणादीन वत्थारम्मणानं पटिच्चसमुप्पाद-पटिच्चसमुप्पन्नानं च धम्मानं छादनतो पि **अविज्जा**।

यं पटिच्च फलमेति, सो **पच्चयो**। **पटिच्चा** ति। न विना, अप्पच्चक्खत्वा ति अत्थो। **एती** ति। उप्पज्जति चेव पवत्तति चा ति अत्थो। अपि च उपकारकट्ठो

पच्चयट्ठो। अविज्जा च सा पच्चयो चा ति अविज्जापच्चयो। तस्मा **अविज्जा-पच्चया**।

सङ्खतं अभिसङ्खरोन्ती ति **सङ्खारा**। अपि च अविज्जापच्चया सङ्खारा, सङ्खारसद्देन आगतसङ्खारा ति दुविधा सङ्खारा। तत्थ पुञ्ञापुञ्ञानेञ्जाभि-सङ्खारा तयो, कायवचीचित्तसङ्खारा तयो ति इमे छ **अविज्जापच्चया सङ्खारा**। ते सब्बे पि लोकियकुसलाकुसलचेतनामत्तमेव होन्ति।

सङ्खतसङ्खारो, अभिसङ्खतसङ्खारो, अभिसङ्खरणकसङ्खारो, पयोगाभिसङ्खारो ति इमे पन चत्तारो सङ्खारसद्देन आगतसङ्खारा।

तत्थ "अनिच्चा वत सङ्खारा" (दी० २–१२९) ति आदीसु वुत्ता सब्बे पि सप्पच्चया धम्मा **सङ्खतसङ्खारा** नाम। कम्मनिब्बत्ता तेभूमका रूपारूपधम्मा **अभिसङ्खतसङ्खारा** ति **अट्ठकथासु** वुत्ता, ते पि "अनिच्चा वत सङ्खारा" ति एत्थेव सङ्गहं गच्छन्ति। विसुं पन नेस आगतट्ठानं न पञ्ञायति। तेभूमिक-कुसलाकुसलचेतना पन **अभिसङ्खरणकसङ्खारो** ति वुच्चति, तस्स "अविज्जा-गतोयं, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलो पुञ्ञं चेव सङ्खारं अभिसङ्खरोती" (स० २–७०) ति आदिसु आगतट्ठानं पञ्ञायति। कायिक-चेतसिकं पन विरियं **पयोगाभिसङ्खारो** ति वुच्चति, सो यावतिका अभिसङ्खारस्स गति, तावतिका गन्त्वा अक्खाहतं मञ्ञे अट्ठासी" (अ० १–१०३) ति आदीसु आगतो।

न केवलं च एते येव, अञ्ञे पि "सञ्ञावेदयितनिरोध समापज्जन्तस्स खो, आवुसो विसाख, भिक्खुनो पठमं निरुज्झति वचीसङ्खारो[1], ततो कायसङ्खारो[2], ततो चित्तसङ्खारो[3] (म० १–३७२) ति आदिना नयेन सङ्खार-सद्देन आगता अनेके सङ्खारा। तेसु नत्थि सो सङ्खारो यो सङ्खतसङ्खारेहि सङ्गहं न गच्छेय।

इतो परं **सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं** ति आदीसु वुत्त वुत्तनयेनेव वेदितब्बं।

अवुत्ते पन, विजानाती ति **विञ्ञाणं**। नमती ति **नामं**। रुप्पती ति **रूपं**। आये तनोति, आयत च नयती ति **आयतनं**। फुसती ति **फस्सो**। वेदयती ति **वेदना**। परितस्सती ति **तण्हा**। उपादियती ति **उपादानं**। भवति भावयति चा ति **भवो**। जननं **जाति**। जीरण **जरा**। मरन्ति एतेना ति **मरणं**। सोचनं **सोको**। परिदेवन **परिदेवो**। दुक्खयती ति **दुक्खं**। उप्पादट्ठितिवसेन वा द्विधा खणती ति पि **दुक्खं**। दुम्मनभावो **दोमनस्सं**। भुसो आयासो **उपायासो**।

सम्भवन्ती ति अभिनिब्बत्तन्ति। न केवलं च सोकादीहेव, अथ खो सब्ब-पदेहि सम्भवन्ति-सद्दस्स योजना कातब्बा। इतरथा हि "अविज्जापच्चया

---

१. वाच सङ्खरोती ति **वचीसङ्खारो**।　२. कायेन सङ्खरीयती ति **कायसङ्खारो**।
३. चित्तेन सङ्खरीयति, चित्त वा सङ्खरोती ति **चित्तसङ्खारो**।

सङ्खारा" ति वुत्ते किं करोन्ती ति न पञ्ञायेय्य। सम्भवन्ती ति पन योजनाय सति अविज्जा च सा पच्चयो चा ति अविज्जापच्चयो, तस्मा अविज्जापच्चया सङ्खारा सम्भवन्ती ति पच्चयपच्चयुप्पन्नववत्थानं कतं होति। एस नयो सब्बत्थ।

एवं ति। निद्दिट्ठनयनिदस्सनं। तेन **अविज्जादीहेव** कारणेहि, न इस्सर-निम्मानादीही ति दस्सेति। **एतस्सा** ति। यथावुत्तस्स। **केवलस्सा** ति। असम्मिस्सस्स, सकलस्स वा। **दुक्खक्खन्धस्सा** ति। दुक्खसमूहस्स, न सत्तस्स, न सुखसुभादीनं। **समुदयो** ति। निब्बत्ति। **होती** ति। सम्भवति।

एवमेत्थ अत्थतो विञ्ञातब्बो विनिच्छयो॥ (२)

२१. **लक्खणादितो** ति। अविज्जादीनं लक्खणादितो। सेय्यथीदं अञ्ञाण-लक्खणा **अविज्जा**, सम्मोहनरसा, छादनपच्चुपट्ठाना, आसवपदट्ठाना। अभि-सङ्खरणलक्खणा **सङ्खारा**, आयूहनरसा, चेतनापच्चुपट्ठाना, अविज्जापदट्ठाना। विजाननलक्खणं **विञ्ञाणं**, पुब्बङ्गमरसं, पटिसन्धिपच्चुपट्ठानं, सङ्खारपदट्ठानं, वत्थारम्मणपदट्ठानं वा। नमनलक्खणं **नामं**, सम्पयोगरसं, अविनिब्भोगपच्चु-पट्ठानं, विञ्ञाणपदट्ठानं, विञ्ञाणपदट्ठानं। रुप्पनलक्खणं **रूपं**, विकिरणरसं, अब्याकतपच्चुपट्ठानं, विञ्ञाणपदट्ठानं। आयतनलक्खणं **सळायतनं**, दस्स-नादिरसं, वत्थुद्वारभावपच्चुपट्ठानं, नामरूपपदट्ठानं। फुसनलक्खणो **फस्सो**, सङ्घट्टनरसो, सङ्गतिपच्चुपट्ठानो, सळायतनपदट्ठानो। अनुभवनलक्खणा **वेदना**, विसयरससम्भोगरसा, सुखदुक्खपच्चुपट्ठाना, फस्सपदट्ठाना। हेतुलक्खणा **तण्हा**, अभिनन्दनरसा, अतित्तभावपच्चुपट्ठाना, वेदनापदट्ठाना। गहणलक्खणं **उपादानं**, अमुञ्चनरसं, तण्हादळ्हत्तदिट्ठिपच्चुपट्ठानं, तण्हापदट्ठानं। कम्म-कम्मफललक्खणो **भवो**, भावन-भवनरसो, कुसलाकुसलाब्याकतपच्चुपट्ठानो, उपादानपदट्ठानो। जातिआदीनं लक्खणादीनि **सच्चनिद्देसे** वुत्तनयेनेव वेदि-तब्बानि।

एवमेत्थ लक्खणादितो पि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो॥ (३)

२२ **एकविधादितो** ति। एत्थ अविज्जा अञ्ञाणदस्सनमोहादिभावतो दुविधा। तथा ससङ्खारासङ्खारतो। वेदनत्तयसम्पयोगतो तिविधा। चतुसच्च-पटिवेधतो चतुब्बिधा। गतिपञ्चकादीनवच्छादनतो पञ्चविधा। द्वारारम्मणतो पन सब्बेसु पि अरूपधम्मेसु छब्बिधता वेदितब्बा।

सङ्खारा सासवविपाकधम्मधम्मादिभावतो एकविधा। कुसलाकुसलतो दुविधा। तथा परित्तमहग्गत-हीनमज्झिम-मिच्छत्तनियतानियततो। तिविधा पुञ्ञाभिसङ्खारादिभावतो। चतुब्बिधा चतुयोनिसंवत्तनतो। पञ्चविधा पञ्च-गतिगामितो।

विञ्ञाणं लोकियविपाकादिभावतो एकविध। सहेतुकाहेतुकादितो दुविध। भवत्तयपरियापन्नतो वेदनत्तयसम्पयोगतो अहेतुकद्विहेतुकतिहेतुकतो च तिविध। योनि-गतिवसेन चतुब्बिधं पञ्चविध च।

नामरूप विञ्ञाणसन्निस्सयतो कम्पच्चयतो च एकविध। सारम्मणा-नारम्मणतो दुविध। अतीतादितो तिविधं। योनि-गतिवसेन चतुब्बिधं पञ्चविध च।

सळायतन सञ्जातिसमोसरणट्ठानतो। भूतप्पसादविञ्ञाणादितो दुविधं। सम्पत्तासम्पत्तनोभयगोचरतो तिविध। योनि-गतिपरियापन्नतो चतुब्बिधं पञ्च-विध चा ति। इमिना नयेन फस्सादीन पि एकविधादिभावो वेदितब्बो ति।

एवमेत्थ एकविधादितो पि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो॥ (४)

२३ **अङ्गानं च ववत्थाना** ति। सोकादयो चेत्थ भवचक्कस्स अविच्छेद-दस्सनत्थ वुत्ता। जरामरणब्भाहतस्स हि बालस्स ते सम्भवन्ति। यथाह— "अस्सुतवा, भिक्खवे, पुथुज्जनो सारीरिकाय दुक्खाय वेदनाय फुट्ठो समानो सोचति किलमति परिदेवति उरत्ताळिं कन्दति सम्मोहमापज्जती" (स० २-११४) ति। याव च तेस पवत्ति, ताव अविज्जाया ति पुन पि 'अविज्जापच्चया सङ्खारा' ति सम्बन्धमेव होति भवचक्क। तस्मा तेस जरामरणेनेव एकसङ्खेप कत्वा कत्वा द्वादसेव पटिच्चसमुप्पादङ्गानी ति वेदितब्बानि।

एवमेत्थ अङ्गान ववत्थानतो पि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो॥ (५)

अयं तावेत्थ सङ्खेपकथा॥

अविज्जापच्चयासङ्खारपदकथा

२४ अयं पन वित्थारनयो—**अविज्जा** ति सुत्तन्तपरियायेन दुक्खादीसु चतूसु ठानेसु अञ्ञाण, अभिधम्मपरियायेन पुब्बन्तादीहि सद्धिं अट्ठसु। वुत्त हेतं—"तत्थ कतमा अविज्जा? दुक्खे अञ्ञाण पे०··· दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अञ्ञाण, पुब्बन्ते अञ्ञाणं, अपरन्ते ···इदप्पच्चयतापटिच्चसमुप्पन्नेसु धम्मेसु अञ्ञाणं" (अभि० १-२४७) ति।

तत्थ किं चापि ठपेत्वा लोकुत्तरं सच्चद्वय सेसट्ठानेसु आरम्मणवसेन पि अविज्जा उप्पज्जति, एवं सन्ते पि पटिच्छादनवसेनेव इध अधिप्पेता। सा हि उप्पन्ना दुक्खसच्चं पटिच्छादेत्वा तिट्ठति, याथावसरसलक्खण पटिविज्झितु न देति, तथा समुदयं, निरोधं, मग्गं, पुब्बन्तसङ्खातं अतीत खन्धपञ्चक, अपरन्तसङ्खातं अनागतं खन्धपञ्चकं, पुब्बन्तापरन्तसङ्खातं तदुभयं, इदप्पचयता-पटिच्चसमुप्पन्नधम्मसङ्खातं इदप्पच्चयत चेव पटिच्चसमुप्पन्नधम्मे च पटिच्छा-देत्वा तिट्ठति। "अयं अविज्जा, इमे सङ्खारा" ति एवं याथावसरसलक्खणमेत्थ

पटिविज्झितु न देति, तस्मा दुक्खे अञ्ञाणं पे०··· इदप्पच्चयतापटिच्च-समुप्पन्नेसु धम्मेसु अञ्ञाणं ति वुच्चति ।

२५ **सङ्खारा** ति । पुञ्ञादयो तयो, कायसङ्खारादयो तयो ति एवं पुब्बे सङ्खेपतो **वुत्ता** छ । वित्थारतो पनेत्थ **पुञ्ञाभिसङ्खारो** दानसीलादिवसेन पवत्ता अट्ठ कामावचरकुसलचेतना चेव भावनावसेन पवत्ता पञ्च रूपावचर-कुसलचेतना चा ति तेरस चेतना होन्ति । **अपुञ्ञाभिसङ्खारो** पाणातिपाता-दिवसेन पवत्ता द्वादस अकुसलचेतना । **आनेञ्जाभिसङ्खारो** भावनावसेनेव पवत्ता चतस्सो अरूपावचरकुसलचेतना चा ति तयो पि सङ्खारा एकूनतिंस चेतना होन्ति ।

२६ इतरेसु पन तीसु कायसञ्चेतना **कायसङ्खारो**, वचीसञ्चेतना **वची-सङ्खारो**, मनोसञ्चेतना **चित्तसङ्खारो** । अयं तिको कम्मायूहनक्खणे पुञ्ञाभि-सङ्खारादीनं द्वारतो पवत्तिदस्सनत्थं वुत्तो । कायविञ्ञत्तिं समुट्ठापेत्वा हि कायद्वारतो पवत्ता अट्ठ कामावचरकुसलचेतना, द्वादस अकुसलचेतना ति सम-वीसति चेतना कायसङ्खारो नाम । ता एव वचीविञ्ञत्तिं समुट्ठापेत्वा वची-द्वारतो पवत्ता वचीसङ्खारो नाम । अभिञ्ञाचेतना पनेत्थ परतो विञ्ञाणस्स पच्चयो न होती ति न गहिता । यथा च अभिञ्ञाचेतना, एवं उद्धच्चचेतना पि न होति । तस्मा सा पि विञ्ञाणस्स पच्चयभावे अपनेतब्बा । अविज्जा-पच्चया पन सब्बा पेता होन्ति । उभो पि विञ्ञत्तियो असमुट्ठापेत्वा मनोद्वारे उप्पन्ना पन सब्बा पि एकूनतिंसति चेतना चित्तसङ्खारो ति । इति अयं तिको पुरिमत्तिकमेव पविसती ति अत्थतो पुञ्ञाभिसङ्खारादीनं येव वसेन अविज्जाय पच्चयभावो वेदितब्बो ।

२७ तत्थ सिया—कथं पनेतं जानितब्बं "इमे सङ्खारा अविज्जापच्चया होन्ती" ति ? अविज्जाभावे भावतो । यस्स हि दुक्खादीसु अविज्जासङ्खातं अञ्ञाणं अप्पहीनं होति, सो दुक्खे ताव पुब्बन्तादीसु च अञ्ञाणेन संसारदुक्खं सुखसञ्ञाय गहेत्वा तस्सेव हेतुभूते तिविधे पि सङ्खारे आरभति । समुदये अञ्ञाणेन दुक्खहेतुभूते पि तण्हापरिक्खारे सङ्खारे सुखहेतुतो मञ्ञमानो आरभति, निरोधे पन मग्गे च अञ्ञाणेन दुक्खस्स अनिरोधभूते पि गतिविसेसे दुक्खनिरोधसञ्ञी हुत्वा निरोधस्स च अमग्गभूतेसु पि यञ्ञामरतपादीसु निरोधमग्गसञ्ञी हुत्वा दुक्खनिरोधं पत्थयमानो यञ्ञामरतपादिमुखेन तिविधे पि सङ्खारे आरभति ।

२८. अपि च, सो ताय चतूसु सच्चेसु अप्पहीनाविज्जताय विसेसतो जाति-जरा-रोग-मरणादिअनेकादीनववोकिण्णं पि पुञ्ञफलसङ्खातं दुक्खं दुक्खतो

अजानन्तो तस्स अधिगमाय कायवचीचित्तसङ्खारभेदं पुञ्ञाभिसङ्खारं आरभति, देवच्छरकामुको विय मरुप्पपातं। सुखसम्मतस्सा पि च तस्स पुञ्ञफलस्स अन्ते महापरिळाहजनिकं विपरिणामदुक्खतं अप्पस्सादत च अपस्सन्तो पि तप्पच्चय वुत्तप्पकारमेव पुञ्ञाभिसङ्खार आरभति, सलभो विय दीपसिखाभिनिपातं, मधुबिन्दुगिद्धो विय च मधुलित्तसत्थधारालेहन। कामूपसेवनादीसु च सविपाकेसु आदीनव अपस्सन्तो सुखसञ्ञाय चेव किलेसाभिभूतताय च द्वारत्तयपवत्त पि अपुञ्ञाभिसङ्खारं आरभति, बालो विय गूथकीळन, मरितुकामो विय च विसखादन। आरुप्पविपाकेसु चा पि सङ्खारविपरिणामदुक्खत अनवबुज्झमानो सस्मतादिविपल्लासेन चित्तसङ्खारभूतं आनेञ्जाभिसङ्खार आरभति, दिसामूळ्हो विय पिसाचनगराभिमुखमग्गगमन।

एव यस्मा अविज्जाभावतो व सङ्खारभावो, न अभावतो, तस्मा जानितब्बमेत—"इमे सङ्खारा अविज्जापच्चया होन्ती" ति। वुत्त पि चेत—"अविद्वा, भिक्खवे, अविज्जागतो पुञ्ञाभिसङ्खार पि अभिसङ्खरोति, अपुञ्ञाभिसङ्खारं पि अभिसङ्खरोति, आनेञ्जाभिसङ्खार पि अभिसङ्खरोति। यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अविज्जा पहीना, विज्जा उप्पन्ना, सो अविज्जाविरागा विज्जुप्पादा नेव पुञ्ञाभिसङ्खार अभिसङ्खरोती" (म० १–३७७) ति।

पट्ठानपच्चयकथा

२९ एत्थाह—गण्हाम ताव एत 'अविज्जा सङ्खारान पच्चयो' ति, इदं पन वत्तब्बं—कतमेस सङ्खारानं कथ पच्चयो होती ति ?

तत्रिदं वुच्चति—भगवता हि "हेतुपच्चयो, आरम्मणपच्चयो, अधिपतिपच्चयो, अनन्तरपच्चयो, समनन्तरपच्चयो, सहजातपच्चयो, अञ्ञमञ्ञपच्चयो, निस्सयपच्चयो, उपनिस्सयपच्चयो, पुरेजातपच्चयो, पच्छाजातपच्चयो, आसेवनपच्चयो, कम्मपच्चयो, विपाकपच्चयो, आहारपच्चयो, इन्द्रियपच्चयो, झानपच्चयो, मग्गपच्चयो, सम्पयुत्तपच्चयो, विप्पयुत्तपच्चयो, अत्थिपच्चयो, नत्थिपच्चयो, विगतपच्चयो, अविगतपच्चयो" (अभि० ७ : १–३) ति चतुवीसति पच्चया वुत्ता।

तत्थ हेतु च सो पच्चयो चा ति **हेतुपच्चयो**। हेतु हुत्वा पच्चयो, हेतुभावेन पच्चयो ति वुत्त होति। आरम्मणपच्चयादीसु पि एसेव नयो।

३० तत्थ **हेतू** ति। वचनावयवकारणमूलानमेतं अधिवचन। "पटिञ्ञा, हेतू"[1] ति आदीसु हि लोके वचनावयवो[2] हेतू ति वुच्चति। सासने पन "ये

१. प्रतिज्ञाहेतूदाहरणोपनयनिगमनान्यवयवाः—न्यायसूत्र–१:३२।

२. **वचनावयवो** ति। साधनावयवं सन्धायाह। वचनसभाव हि साधन परेस अविदितत्थञापनतो लोके साधनं ति पाकट पञ्ञात। तथा हि न अवयवलक्खण वचनसभावं च साधन, अवयवपक्खादीनि वचनानि साधन ति च ञायवादिनो वदन्ति।

धम्मा हेतुप्पभवा" (वि० ३–४०) ति आदीसु कारण । "तयो कुसलहेतू तयो अकुसलहेतू" ति (अभि० १–२३९) आदीसु मूलं हेतू ति वुच्चति । त इध अधिप्पेत ।

पच्चयो ति । एत्थ पन अय वचनत्थो—पटिच्च एतस्मा एती ति पच्चयो । अपच्चक्खाय न वत्तती ति अत्थो । यो हि धम्मो यं धम्म अपच्चक्खाय तिट्ठति वा उप्पज्जति वा, सो तस्स पच्चयो ति वुत्तं होति । लक्खणतो पन उपकारक-लक्खणो पच्चयो । यो हि धम्मो यस्स धम्मस्स ठितिया वा उप्पत्तिया वा उपकारको होति, सो तस्स पच्चयो ति वुच्चति । पच्चयो, हेतु, कारण, निदान, सम्भवो, पभवो ति आदि अत्थतो एक, ब्यञ्जनतो नान । इति मूलट्ठेन हेतु, उपकारकट्ठेन पच्चयो ति सङ्खेपतो मूलट्ठन उपकारको धम्मो हेतुपच्चयो ।

मो सालिआदीनं सालिबीजादीनि विय, मणिपभादीन विय च मणिवण्णादयो, कुसलादीन कुसलादिभावसाधको ति आचरियानं अधिप्पायो । एव सन्ते पन तममुट्ठानरूपेसु हेतुपच्चयता न सम्पज्जति । न हि सो तेस कुसलादिभाव साधेति, न च पच्चयो न होति । वुत्तं हेत—"हेतु हेतुसम्पयुत्तकान धम्मान तममुट्ठानानं च रूपानं हेतुपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १–३) ति । अहेतुकचित्तान च विना एतेन अब्याकतभावो सिद्धो । सहेतुकान पि च योनिसोमनसिकारादि-पटिबद्धो कुसलादिभावो, न सम्पयुत्तहेतुपटिबद्धो । यदि च सम्पयुत्तहेतूसु सभावतो व कुसलादिभावो सिया, सम्पयुत्तेसु हेतुपटिबद्धो अलोभो कुसलो वा सिया, अब्याकतो वा । यस्मा पन उभयथा पि होति, तस्मा यथा सम्पयुत्तेसु, एवं हेतूसू पि कुसलादिता परियेसितब्बा ।

कुसलादिभावसाधनवसेन पन हेतून मूलट्ठ अगहेत्वा सुप्पतिट्ठितभावसाधन-वसेन गय्हमाने न किञ्चि विरुज्झति । लद्धहेतुपच्चया हि धम्मा विरूळ्हमूला विय पादपा थिरा होन्ति सुप्पतिट्ठिता, अहतुका तिलबीजकादिसेवाला विय न सुप्पातट्ठिता । इति मूलट्ठेन उपकारको ति सुप्पतिट्ठितभावसाधनेन उप-कारको धम्मो हेतुपच्चयो ति वेदितब्बो ।

३१. ततो परेसु आरम्मणभावेन[1] उपकारको धम्मा **आरम्मणपच्चयो ।** सो "रूपायतन चक्खुविञ्ञाणधातुया" (अभि० ७ : १–३) ति आरभित्वा पि "य य धम्मं आरब्भ ये ये धम्मा उप्पज्जन्ति चित्तचेतसिका धम्मा, ते ते धम्मा तेसं तेस धम्मान आरम्मणपच्चयेन पचयो" (अभि० ७ · १–४) ति ओसा-पितत्ता न कोचि धम्मो न होति । यथा हि दुब्बलो पुरिसो दण्डं वा रज्जुं वा आलम्बित्वा व उट्ठहति चेव तिट्ठति च, एव चित्तचेतसिका धम्मा रूपादि-

---

१ **आरम्मणभावेना** ति । विसयभावेन । आलम्बितब्बभावेना ति अत्थो ।

आरम्मण आरब्भेव उप्पज्जन्ति चेव तिट्ठन्ति च। तस्मा सब्बे पि चित्तचेतसिकान आरम्मणभूता धम्मा आरम्मणपच्चयो ति वेदितब्बो।

३२ जेट्ठकट्ठेन[1] उपकारको धम्मो **अधिपतिपच्चयो।** सो सहजातारम्मणवसेन दुविधो। तत्थ "छन्दाधिपति छन्दसम्पयुत्तकानं धम्मान तमसुट्ठानान च रूपान अधिपतिपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १–४) ति आदिवचनतो छन्दविरिय-चित्त-वीमसासङ्खाता चत्तारो धम्मा अधिपतिपच्चयो ति वेदितब्बा, नो च खो एकतो। यदा हि छन्द धुर छन्दजेट्ठक कत्वा चित्त पवत्तति, तदा छन्दो व अधिपति, न इतरे। एस नयो सेसेसुपि। यं पन धम्म गरु कत्वा अरूपधम्मा पवत्तन्ति, सो नेसं आरम्मणाधिपति। तेन वुत्तं—"यं य धम्मं गरु कत्वा ये ये धम्मा उप्पज्जन्ति चित्तचेतसिका धम्मा, ते ते धम्मा तेस तेसं धम्मान अधिपतिपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १–४) ति।

३३ अनन्तरभावेन उपकारको धम्मो **अनन्तरपच्चयो**। समन्तरभावेन उपकारको धम्मो **समनन्तरपच्चयो।** इद च पच्चयद्वय बहुधा पपञ्चयन्ति। अयं पनेत्थ सारो—यो हि एस चक्खुविञ्ञाणानन्तरा मनोधातु, मनोधातुअनन्तरा मनोविञ्ञाणधातू ति आदि चित्तनियमो, सो यस्मा पुरिमपुरिमचित्तवसेनेव इज्झति, न अञ्ञथा, तस्मा अत्तनो अत्तनो अनन्तर अनुरूपस्स चित्तुप्पादस्स उप्पादनसमत्थो धम्मो अनन्तरपच्चयो। तेनेवाह—"अनन्तरपच्चयो ति चक्खुविञ्ञाणधातु तसम्पयुत्तका च धम्मा मनोधातुया तसम्पयुत्तकानं च धम्मानं अनन्तरपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १–४) ति आदि। यो अनन्तरपच्चयो, स्वेव समनन्तरपच्चयो। ब्यञ्जनमत्तमेव हेत्थ नान, उपचयसन्ततीसु विय अधिवचननिरुत्तिकादीसु विय च। अत्थतो पन नानं नत्थि।

य पि "अत्थानन्तरताय अनन्तरपच्चयो, कालानन्तरताय समनन्तरपच्चयो" ति आचरियानं[2] मत, तं "निरोधा वुट्ठहन्तस्स नेवसञ्ञानासञ्ञायतनकुसल फलसमापत्तिया समनन्तरपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ · १–१२९) ति आदीहि विरुज्झति।

यं पि तत्थ वदन्ति—"धम्मान समुट्ठापनसमत्थता न परिहायति भावनाबलेन पन वारितत्ता धम्मा समनन्तरा नुप्पज्जन्ती" ति, तं पि कालानन्तरताय अभावमेव साधेति। भावनाबलेन हि तत्थ कालानन्तरता नत्थी ति, मय पि एतदेव वदाम। यस्मा च कालानन्तरता नत्थि, तस्मा समनन्तरपच्चया न युज्जति। कालानन्तरताय हि तेसं समनन्तरपच्चयो होती ति लद्धि। तस्मा

१. **जेट्ठकट्ठेना** ति। पमुखभावेन।

२. **आचरियानं** ति। रेवताचरियं सन्धाय वुत्तं।

अभिनिवेस अकत्वा ब्यञ्जनमत्ततो वेत्थ नानाकरण पच्चेतब्ब, न अत्थतो। कथं ? नत्थि ऐतेस अन्तर ति हि अनन्तरा, सण्ठानाभावतो सुट्ठु अनन्तरा ति समनन्तरा।

३४ उप्पज्जमानो व सह उप्पादनभावेन उपकारको धम्मो **सहजातपच्चयो**, पकासस्स पदीपो विय। सो अरूपक्खन्धादिवसेन छब्बिधो होति। यथाह—"चत्तारो खन्धा अरूपिनो अञ्ञमञ्ञ सहजातपच्चयेन पच्चयो। चत्तारो महाभूता अञ्ञमञ्ञं, ओक्कन्तिक्खणे नामरूप अञ्ञमञ्ञ, चित्तचेतसिका धम्मा चित्तसमुट्ठानान रूपान, महाभूता उपादारूपान, रूपिनो धम्मा अरूपीन धम्मान किञ्चिकाले सहजातपच्चयेन पच्चयो, किञ्चिकाले न सहजातपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १–६) ति। इद हदयवत्थुमेव सन्धाय वुत्त।

३५ अञ्ञमञ्ञं उप्पादनुपत्थम्भनभावेन उपकारको धम्मो **अञ्ञमञ्ञपच्चयो** अञ्ञमञ्ञूपत्थम्भकं तिदण्डकं विय। सो अरूपक्खन्धादिवसेन तिविधो होति। यथाह—"चत्तारो खन्धा अरूपिनो अञ्ञमञ्ञपच्चयेन पच्चयो। चत्तारो महाभूता····पे० ·ओक्कन्तिक्खणे नामरूपं अञ्ञमञ्ञपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १–६) ति।

३६. अधिट्ठानाकारेन निस्सयाकारेन च उपकारको धम्मो **निस्सयपच्चयो** तरुचित्तकम्मादीन पथवी-पटादयो विय। सो "चत्तारो खन्धा अरूपिनो अञ्ञमञ्ञ निस्सयपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ · १–६) ति एवं सहजाते वुत्तनयेनेव वेदितब्बो। छट्ठो पनेत्थ कोट्ठासो "चक्खायतन चक्खुविञ्ञाणधातुया पे० ··· ····सोत · धान ·· जिव्हा · कायायतनं कायविञ्ञाणधातुया तसम्पयुत्तकान च धम्मान निस्सयपच्चयेन पच्चयो। य रूपं निस्साय मनोधातु च मनोविञ्ञाणधातु च वत्तन्ति, तं रूप मनोधातुया च मनोविञ्ञाणधातुया च तंसम्पयुत्तकानं च धम्मानं निस्सयपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ · १–७) ति एवं विभत्तो।

३७ **उपनिस्सयपच्चयो** ति। एत्थ पन अयं ताव वचनत्थो—तदधीनवुत्तिताय अत्तनो फलेन निस्सितो न पटिक्खित्तो ति निस्सयो। यथा पन भुसो आयासो उपायासो, एव भुसो निस्सयो उपनिस्सयो। बलवकारणस्सेतं अधिवचनं। तस्मा बलवकारणभावेन उपकारको धम्मो उपनिस्सयपच्चयो ति वेदितब्बो।

सो आरम्मणूपनिस्सयो, अनन्तरूपनिस्सयो, पकतूनिस्सयो ति तिविधो होति। तत्थ "दान दत्वा सील समादियित्वा उपोसथकम्म कत्वा त गरुं कत्वा पच्चवेक्खति। पुब्बे सुचिण्णानि गरु कत्वा पच्चवेक्खति। झाना वुट्ठहित्वा झानं गरुं कत्वा पच्चवेक्खति। सेक्खा गोत्रभु गरु कत्वा पच्चवेक्खन्ति,

वोदानं गरु कत्वा पच्चवेक्खन्ति। सेक्खा मग्गा वुट्ठहित्वा मग्गं गरुं कत्वा पच्चवेक्खन्ती" (अभि० ७ १-१२३) ति एवमादिना नयेन **आरम्मणूपनिस्सयो** ताव आरम्मणाधिपतिना सद्धि नानत्तं अकत्वा व विभत्तो। तत्थ यं आरम्मण गरुं कत्वा चित्तचेतसिका उप्पज्जन्ति, तं नियमतो तेसु आरम्मणेसु बलवारम्मण होति। इति गरुकत्तब्बमत्तट्ठेन आरम्मणाधिपति, बलवकारणट्ठेन आरम्मणूपनिस्सयो ति एवमेतेस नानत्त वेदितब्ब।

३८. **अनन्तरूपनिस्सयो** पि "पुरिमा पुरिमा कुसला खन्धा पच्छिमान पच्छिमानं कुसलानं खन्धान उपनिस्सयपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ · १-७) ति आदिना नयेन अनन्तरपच्चयेन सद्धि नानत्त अकत्वा व विभत्तो। मातिका-निक्खेपे पन नेसं "चक्खुविञ्ञाणधातु तसम्पयुत्तका च धम्मा मनोधातुया तंसम्पयुत्तकानं च धम्मान अनन्तरपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ . १-४) ति आदिना नयेन अनन्तरस्स, "पुरिमा पुरिमा कुसला धम्मा पच्छिमान पच्छिमान कुसलान धम्मानं उपनिस्सयपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १-७) ति आदिना नयेन उपनिस्सयस्स आगतत्ता निक्खेपे विसेसो अत्थि। सो पि अत्थतो एकीभावमेव गच्छति। एवं सन्ते पि अत्तनो अत्तनो अनन्तरा, अनुरूपस्स चित्तुप्पादस्स पवत्तनसमत्थाय अनन्तरता, पुरिमचित्तस्स पच्छिमचित्तुप्पादने बलवताय अनन्तरूपनिस्सयता वेदितब्बा।

यथा हि हेतुपच्चयादीसु किञ्चिधम्म विना पि चित्त उप्पज्जति, न एवं अनन्तरचित्त विना चित्तस्स उप्पत्ति नाम अत्थि, तस्मा बलवपच्चयो होति। इति अत्तनो अत्तनो अनन्तरा अनुरूपचित्तुप्पादनवसेन अनन्तरपच्चयो, बलवकारणवसेन अनन्तरूपनिस्सयो ति एवमेतेसं नानत्त वेदितब्बं।

३९ **पकतूपनिस्सयो** पन पकतो उपनिस्सयो पकतूनिस्सयो। पकतो नाम अत्तनो सन्ताने निप्फादितो वा सद्धासीलादि, उपसेवितो वा उतुभोजनादि। पकतिया एव वा उपनिस्सयो पकतूपनिस्सयो। आरम्मणानन्तरेहि असम्मिस्सो ति अत्थो। तस्स पकतूपनिस्सयो "सद्ध उपनिस्साय दानं देति, सील समादियति, उपोसथकम्म करोति, झानं उप्पादेति, विपस्सन उप्पादेति, मग्ग उप्पादेति, अभिञ्ञ उप्पादेति, समापत्ति उप्पादेति। सीलं, सुत, चाग, पञ्ञ उपनिस्साय दानं देति पे० "समापत्ति उप्पादेति। सद्धा, सील, सुतं, चागो, पञ्ञा सद्धाय, सीलस्स, सुतस्स, चागस्स, पञ्ञाय उपनिस्सयपच्चपेन पच्चयो" (अभि० ७ : १-१३५) ति आदिना नयेन अनेकप्पकारतो पभेदो वेदितब्बो। इति इमे सद्धादयो पकता चेव बलवकारणट्ठेन उपनिस्सया चा ति पकतूपनिस्सयो ति।

४० पठमतरं उप्पज्जित्वा वत्तमानभावेन उपकारको धम्मो **पुरेजातपच्चयो**। सो पञ्चद्वारे वत्थारम्मणहदयवत्थुवसेन एकादसविधो होति। यथाह—"चक्खायतन चक्खुविञ्ञाणधातुया तसम्पयुत्तकान च धम्मान पुरेजातपच्चयेन पच्चयो। सोत· पे०· · घान · जिव्हा · कायायतन, रूप सद्द गन्ध रस फोट्ठब्बायतनं कायविञ्ञाणधातुया तसम्पयुत्तकान च धम्मान पुरेजातपच्चयेन पच्चयो। रूप सद्द गन्ध रस··· फोट्ठब्बायतन मनोधातुया य रूप निस्साय मनोधातु च मनोविञ्ञाणधातु च वत्तन्ति, त रूप मनोधातुया तसम्पयुत्तकान च धम्मान पुरेजातपच्चयेन पच्चयो। मनोविञ्ञाणधातुया तसम्पयुत्तकानं च धम्मान किञ्चिकाले[१] पुरेजातपच्चयेन पच्चयो। किञ्चकालेन[२] पुरेजातपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ . १–८) ति।

४१· पुरेजातान रूपधम्मान उपत्थम्भकत्तेन उपकारको अरूपधम्मो **पच्छाजातपच्चयो**, गिज्झपोतकसरीरान आहारासाचेतना विय। तेन वुत्त—"पच्छाजाता चित्तचेतसिका धम्मा पुरेजातस्स इमस्स कायस्स पच्छाजातपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ · १–८) ति।

४२ आसेवनट्ठेन अनन्तरान पगुणबलवभावाय उपकारको धम्मो **आसेवनपच्चयो**, गन्थादासु पुरिमपुरिमाभियोगो विय। सो कुसलाकुसलकिरियजवनवसेन तिविधो होति। यथाह—"पुरिमा पुरिमा कुसला धम्मा पच्छिमान पच्छिमान कुसलान धम्मान आसेवनपच्चयेन पच्चयो। पुरिमा पुरिमा अकुसला ·· पे० किरियाब्याकता धम्मा पच्छिमानं पच्छिमानं किरियाब्याकतान धम्मान आसेवनपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १–८) ति।

४३ चित्तपयोगसङ्खातेन किरियाभावेन उपकारको धम्मो **कम्मपच्चयो**। सो नानाखणिकाय चेव कुसलाकुसलचेतनाय सहजाताय च सब्बाय पि चेतनाय वसेन दुविधो होति। यथाह—"कुसलाकुसलं कम्म विपाकानं खन्धान कटत्ता च रूपान कम्मपच्चयेन पच्चयो। चेतना सम्पयुत्तकानं धम्मान तसमुट्ठानान च रूपानं कम्मपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १–९) ति।

४४· निरुस्साहसन्तभावेन निरुस्साहसन्तभावाय उपकारको विपाकधम्मो **विपाकपच्चयो**। सो पवत्ते तसमुट्ठानानं पटिसन्धिय कटत्ता च रूपान, सब्बत्थ च सम्पयुत्तधम्मान पच्चयो होति। यथाह—"विपाकाब्याकतो एको खन्धो तिण्णन्नं खन्धानं चित्तसमुट्ठानान च रूपानं विपाकपच्चयेन पच्चयो पे०· · पटिसन्धिक्खणे विपाकाब्याकतो एको खन्धो तिण्णन्नं खन्धान कटत्ता च रूपान। तयो खन्धा एकस्स खन्धस्स। द्वे खन्धा द्विन्न खन्धान कटत्ता

---

१ किञ्चिकाले ति। पवत्तिकाले। २ किञ्चिकालेनेति। पटिसन्धिकालेन।

च रूपानं विपाकपच्चयेन पच्चयो। खन्धा वत्थुसु विपाकपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १-९) ति।

४५ रूपारूपानं उपत्थम्भकत्तेन उपकारका चत्तारो आहारा **आहार-पच्चयो**। यथाह—"कबळीकारो आहारो इमस्स कायस्स आहारपच्चयेन पच्चयो। अरूपिनो आहारा सम्पयुत्तकानं धम्मानं तंसमुट्ठानानं च रूपानं आहारपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १-९) ति। पञ्हावारे पन "पटिसन्धिक्खणे विपाकाब्याकता आहारा सम्पयुत्तकानं खन्धानं कटत्ता च रूपानं आहारपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १-१४७) ति पि वुत्तं।

४६ अधिपतियट्ठेन उपकारका इत्थिन्द्रियपुरिसिन्द्रियवज्जा वीसतिन्द्रिया **इन्द्रियपच्चयो**। तत्थ चक्खुन्द्रियादयो अरूपधम्मानं येव, सेसा रूपारूपानं पच्चया होन्ति। यथाह—"चक्खुन्द्रियं चक्खुविञ्ञाणधातुया पे० सोतं घानं जिव्हा कायिन्द्रियं कायविञ्ञाणधातुया तंसम्पयुत्तकानं च धम्मानं इन्द्रियपच्चयेन पच्चयो। रूपजीवितिन्द्रियं कटत्ता रूपानं इन्द्रियपच्चयेन पच्चयो। अरूपिनो इन्द्रिया सम्पयुत्तकानं धम्मानं तंसमुट्ठानानं च रूपानं इन्द्रियपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १-९) ति। पञ्हावारे पन "पटिसन्धिक्खणे विपाका-ब्याकता इन्द्रिया सम्पयुत्तकानं खन्धानं कटत्ता च रूपानं इन्द्रियपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १-१४७) ति पि वुत्तं।

४७ उपनिज्झायनट्ठेन उपकारकानि, ठपेत्वा द्विपञ्चविञ्ञाणेसु सुखदुक्ख-वेदनाद्वयं, सब्बानि पि कुसलादिभेदानि सत्त झानङ्गानि **झानपच्चयो**। यथाह— "झानङ्गानि झानसम्पयुत्तकानं धम्मानं तंसमुट्ठानानं च रूपानं झानपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १-९) ति। पञ्हावारे पन "पटिसन्धिक्खणे विपाकाब्या-कतानि झानङ्गानि सम्पयुत्तकानं खन्धानं कटत्ता च रूपानं झानपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १-१४८) ति पि वुत्तं।

४८ यतो ततो वा[1] निय्यानट्ठेन उपकारकानि कुसलादिभेदानि द्वादस मग्गङ्गानि **मग्गपच्चयो**। यथाह—"मग्गङ्गानि मग्गसम्पयुत्तकानं धम्मानं तंसमुट्ठानानं च रूपानं मग्गपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १-९) ति। पञ्हावारे पन "पटिसन्धिक्खणे विपाकाब्याकतानि मग्गङ्गानि सम्पयुत्तकानं खन्धानं कटत्ता च रूपानं मग्गपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १-१४८) ति पि वुत्तं। एते पन द्वे पि झानमग्गपच्चया द्विपञ्चविञ्ञाणाहेतुकचित्तेसु न लब्भन्ती ति वेदितब्बा।

४९. एकवत्थुक-एकारम्मण-एकुप्पादेकनिरोधसङ्खातेन सम्पयुत्तभावेन उप-

---

१. **यतो ततो वा ति**। सम्मा वा मिच्छा वा ति अत्थो।

कारका अरूपधम्मा **सम्पयुत्तपच्चयो**। यथाह—"चत्तारो खन्धा अरूपिनो अञ्ञमञ्ञं सम्पयुत्तपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १–९) ति।

५०. एकवत्थुकादिभावानुपगमेन उपकारका रूपिनो धम्मा अरूपीनं धम्मानं, अरूपिनो पि रूपीनं **विप्पयुत्तपच्चयो**। सो सहजात-पच्छाजात-पुरेजातवसेन तिविधो होति। वुत्त हेत—"सहजाता कुसला खन्धा चित्तसमुट्ठानान रूपान विप्पयुत्तपच्चयेन पच्चयो। पच्छाजाता कुसला खन्धा पुरेजातस्स इमस्स कायस्स विप्पयुत्तपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १–१५०) ति। अब्याकतपदस्स पन सहजातविभङ्गे—"पटिसन्धिक्खणे विपाकाब्याकता खन्धा कटत्ता रूपान विप्पयुत्तपच्चयेन पच्चयो। खन्धा वत्थुस्स, वत्थु खन्धान विप्पयुत्तपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ १–१५०) ति पि वुत्त। पुरेजातं पन चक्खुन्द्रियादिवत्थुवसेनेव वेदितब्बं। यथाह—"पुरेजात चक्खायतन चक्खुविञ्ञाणस्स पे० कायातन कायविञ्ञाणस्स विप्पयुत्तपच्चयेन पच्चयो। वत्थु विपाकाब्याकतानं किरियाब्याकतान खन्धान पे० वत्थु कुसलान खन्धान पे० वत्थु अकुसलान खन्धानं विप्पयुत्तपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १–१५०) ति।

५१ पच्चुप्पन्नलक्खणेन अत्थिभावेन तादिसस्सेव धम्मस्स उपत्थम्भकत्तेन उपकारको धम्मो **अत्थिपच्चयो**। तस्स अरूपक्खन्धमहाभूतनामरूपचित्तचेतसिकमहाभूतआयतनवत्थुवसेन सत्तधा मातिका निक्खित्ता। यथाह—"चत्तारो खन्धा अरूपिनो अञ्ञमञ्ञ अत्थिपच्चयेन पच्चयो। चत्तारो महाभूता, ओक्कन्तिक्खणे नामरूप अञ्ञमञ्ञ "चित्तचेतसिका धम्मा चित्तसमुट्ठानान रूपानं महाभूता उपादारूपान...."चक्खायतनं चक्खुविञ्ञाणधातुया पे० कायायतन" पे०.... रूपायतन "पे० फोट्ठब्बायतन कायविञ्ञाणधातुया तसम्पयुत्तकान च धम्मान अत्थिपच्चयेन पच्चयो। रूपायतनं पे०...फोट्ठब्बायतनं मनोधातुया तसम्पयुत्तकानं च धम्मान य रूप निस्साय मनोधातु च मनोविञ्ञाणधातु च वत्तन्ति, तं रूपं मनोधातुया च मनोविञ्ञाणधातुया च तसम्पयुत्तकान च धम्मानं अत्थिपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १–१०) ति।

पञ्हावारे पन सहजात, पुरेजात, पच्छाजात, आहार, इन्द्रियं ति पि निक्खिपित्वा **सहजाते** ताव "एको खन्धो तिण्णन्नं खन्धान तसमुट्ठानान च रूपान अत्थिपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १–१५१) ति आदिना नयेन निद्देसो कतो। **पुरेजाते** पुरेजातान चक्खादीन वसेन निद्देसो कतो। **पच्छाजाते** पुरेजातस्स इमस्स कायस्स पच्छाजातानं चित्तचेतसिकान पच्चयवसेन निद्देसो कतो। **आहारिन्द्रियेसु** "कबळीकारो आहारो इमस्स कायस्स अत्थिपच्चयेन पच्चयो। रूपजीवितिन्द्रियं कटत्तारूपान अत्थिपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १–१५२) ति एवं निद्देसो कतो ति।

५२. अत्तनो अनन्तरा उप्पज्जमानान अरूपधम्मानं पवत्तिओकासदानेन उपकारका समनन्तरनिरुद्धा अरूपधम्मा **नत्थिपच्चयो**। यथाह—"समनन्तर-निरुद्धा चित्तचेतसिका धम्मा पटुप्पन्नानं[1] चित्तचेतसिकान धम्मान नत्थिपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ · १-१०) ति।

५३. ते एव विगतभावेन उपकारकत्ता **विगतपच्चयो**। यथाह—"समनन्तर-विगता चित्तचेतसिका धम्मा पटुप्पन्नानं धम्मानं विगतपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १-१०) ति।

५४ अत्थिपच्चयधम्मा एव च अविगतभावेन उपकारकत्ता **अविगतपच्चयो** ति वेदितब्बा। देसनाविलासेन पन तथा विनेतब्बवेनेय्यवसेन वा अयं दुको वुत्तो, अहेतुकदुकं वत्वा पि हेतुविप्पयुत्तदुको विया ति।

अविज्जापच्चयासङ्खारपदवित्थारकथा

५५. एवमिमेसु चतुवीसतिया पच्चयेसु अयं अविज्जा—

> पच्चयो होति पुञ्ञानं दुविधानेकधा पन।
> परेसं पच्छिमानं सा एकधा पच्चयो मता ति॥

तत्थ **पुञ्ञानं दुविधा** ति। आरम्मणपच्चयेन च उपनिस्सयपच्चयेन चा ति द्वेधा पच्चयो होति। सा हि अविज्ज खयतो वयतो सम्मसनकाले कामावचरानं पुञ्ञाभिसङ्खारान आरम्मणपच्चयेन पच्चयो होति। अभिञ्ञाचित्तेन समोहचित्तं जाननकाले रूपावचरान। अविज्जासमतिक्कमत्थाय पन दानादीनि चेव कामावचरपुञ्ञकिरियवत्थूनि पूरेन्तस्स, रूपावचरज्झानानि च उप्पादेन्तस्स द्विन्नं पि तेस उपनिस्सयपच्चयेन पच्चयो होति। तथा अविज्जासम्मूळ्हत्ता कामभव-रूपभवसम्पत्तियो पत्थेत्वा तानेव पुञ्ञानि करोन्तस्स। (१)

अनेकधा पन परेसं ति। अपुञ्ञाभिसङ्खारान अनेकधा पच्चयो होति। कथ? एसा हि अविज्जं आरब्भ रागादीन उप्पज्जनकाले आरम्मणपच्चयेन, गरु कत्वा अस्सादनकाले आरम्मणाधिपति-आरम्मणूपनिस्सयेहि, अविज्जा-सम्मूळ्हस्स अनादीनवदस्साविनो पाणातिपातादीनि करोन्तस्स उपनिस्सय-पच्चयेन, दुतियजवनादीन अनन्तर-समनन्तर-अनन्तरूपनिस्सयासेवन-नत्थि-विगतपच्चयेहि, यं किञ्चि अकुसलं करोन्तस्स हेतु-सहजात-अञ्ञमञ्ञ-निस्सय-सम्पयुत्त-अत्थि-अविगतपच्चयेही ति अनेकधा पच्चयो होति। (२)

पच्छिमानं सा एकधा पच्चयो मता ति। आनेञ्जाभिसङ्खारानं उपनिस्सय-पच्चयेनेव एकधा पच्चयो मता। सो पनस्सा उपनिस्सयभावो पुञ्ञाभिसङ्खारे वुत्तनयेनेव वेदितब्बो ति। (३)

१. पटुप्पन्नान ति। पच्चुप्पन्नान।

५६ एत्थाह—किं पनायमेका व अविज्जा सङ्खारान पच्चयो, उदाहु अञ्ञे पि पच्चया सन्ती ति ? किं पनेत्थ, यदि ताव एका व ? एककारणवादो आपज्जति । अथ अञ्ञे पि सन्ति ? "अविज्जापच्चया सङ्खारा" ति एककारण-निद्देसो नुपपज्जती ति ? न नुपपज्जति । कस्मा ? यस्मा—

एकं न एकतो इध नानेकमनेकतो पि नो एक ।
फलमत्थि अत्थि पन एकहेतुफलदीपने अत्थो ॥

एकतो हि कारणतो न इध किञ्चि एक फलमत्थि, न अनेक, नापि अनेकेहि कारणेहि एक । अनेकेहि पन कारणेहि अनेकमेव होति । तथा हि अनेकेहि उतु-पथवी-बीज-सलिलसङ्खातेहि कारणेहि अनेकमेव रूपगन्धरसादिकं अङ्कुरसङ्खात फल उप्पज्जमान दिस्सति । य पनेतं "अविज्जापच्चया सङ्खारा, सङ्खारपच्चया विञ्ञाण" ति एकेकहेतुफलदीपनं कतं तत्थ अत्थो अत्थि, पयोजन विज्जति ।

५७ भगवा हि कत्थचि पधानत्ता, कत्थचि पाकटत्ता, कत्थचि असाधारणत्ता देसनाविलासस्स च वेनेय्यान च अनुरूपतो एकमेव हेतुं वा फल दीपेति । "फस्सपच्चया वेदना" ति हि पधानत्ता एकमेव हेतुफलमाह । फस्सो हि वेदनाय पधानहेतु, यथाफस्स वेदनाववत्थानतो । वेदना च फस्सस्स पधानफल, यथावेदन फस्सववत्थानतो । "सेम्हसमुट्ठाना आबाधा" ति पाकटत्ता एक हेतुमाह । पाकटो हि एत्थ सेम्हो, न कम्मादयो । "ये केचि, भिक्खवे अकुसला धम्मा, सब्बे ते अयोनिसोमनसिकारमूलका" (अ० ४–१८७) ति असाधारणत्ता एक हेतुमाह । असाधारणो हि अयोनिसो मनसिकारो अकुसलान, साधारणानि वत्थारम्मणादीनी ति ।

तस्मा अयमिध अविज्जा विज्जमानेसु पि अञ्ञेसु वत्थारम्मणसहजात-धम्मादीसु सङ्खारकारणेसु, "अस्सादानुपस्सिनो तण्हा पवड्ढती" (स० २–७३) ति च, "अविज्जासमुदया आसवसमुदयो" (म० १–७४) ति च वचनतो अञ्ञेस पि तण्हादीन सङ्खारहेतूनं हेतू पि पधानत्ता, 'अविद्वा, भिक्खवे, अविज्जागतो पुञ्ञाभिसङ्खारं पि अभिसङ्खरोतो" (म० १–३७७) ति पाकटत्ता असाधारणत्ता च सङ्खारानं हेतुभावेन दीपिता ति वेदितब्बा । एतेनेव च एकेकहेतुफलदीपन-परिहारवचनेन सब्बत्थ एकेकहेतुफलदीपने पयोजनं वेदितब्ब ति ।

५८ एत्थाह—एव सन्ते पि एकन्तानिट्ठफलाय, सावज्जाय अविज्जाय कथ पुञ्ञानेञ्जाभिसङ्खारपच्चयत्त युज्जति ? न हि निम्बबीजतो उच्छु उप्पज्जती ति । कथ न युज्जिस्सति ? लोकस्मि हि—

विरुद्धो चाविरुद्धो च, सदिसासदिसो तथा ।
धम्मानं पच्चयो सिद्धो, विपाका एव ते च न ॥

धम्मान हि ठान-सभाव-किच्चादिविरुद्धो चाविरुद्धो च पच्चयो लोके सिद्धो। पुरिमचित्तं हि अपरचित्तस्स ठानविरुद्धो पच्चयो, पुरिमसिप्पादिसिक्खा च पच्छा पवत्तमानान सिप्पादिकिरियान। कम्मं रूपस्स सभावविरुद्धो पच्चयो, खीरादीनि च दधिआदीन। आलोको चक्खुविञ्ञाणस्स किच्चविरुद्धो, गुळादयो च आसवादीन। चक्खुरूपादयो पन चक्खुविञ्ञाणादीनं ठानाविरुद्धा पच्चया। पुरिमजवनादयो पच्छिमजवनादीन सभावाविरुद्धा किच्चाविरुद्धा च।

५९. यथा च विरुद्धाविरुद्धा पच्चया सिद्धा एव सदिसासदिसा पि। सदिसमेव हि उतुआहारसङ्खातं रूपं रूपस्स पच्चयो, सालिबीजादीनि च सालिफलादीन। असदिसं पि रूप अरूपस्स, अरूपं च रूपस्स पच्चयो होति, गोलोमाविलोमविसाणदधितिलपिट्ठादीनि च दुब्बासरभूतिणकादीनं। येसं च धम्मानं ये विरुद्धाविरुद्धसदिसासदिसा पच्चया, न ते धम्मा तेस धम्मानं विपाका एव।

इति अयं अविज्जा विपाकवसेन एकन्तानिट्ठफला सभाववसेन च सावज्जा पि समाना सब्बेस पि एतेस पुञ्ञाभिसङ्खारादीन यथानुरूप ठानकिच्चसभावविरुद्धाविरुद्धपच्चयवसेन, सदिसासदिसपच्चयवसेन च पच्चयो होती ति वेदितब्बा। सो चस्सा पच्चयभावो "यस्स हि दुक्खादीसु अविज्जासङ्खात अञ्ञाण अप्पहीन होति, सो दुक्खे ताव पुब्बन्तादीसु च अञ्ञाणेन ससारदुक्खं सुखसञ्ञाय गहेत्वा तस्स हेतुभूते तिविधे पि सङ्खारे आरभती" ति आदिना नयेन वुत्तो एव।

६०. अपि च अयं अञ्ञो पि परियायो—

चुतूपपाते संसारे सङ्खारान च लक्खणे।
यो पटिच्चसमुप्पन्नधम्मेसु च विमुय्हति॥
अभिसङ्खरोति सो एते सङ्खारे तिविधे यतो।
अविज्जा पच्चयो तेस तिविधानं पय[1] ततो ति॥

कथं पन यो एतेसु विमुय्हति, सो तिविधे पेते सङ्खारे करोती ति चे? **चुतिया** ताव विमूळ्हो "सब्बत्थ खन्धानं भेदो मरणं" ति चुतिं अगण्हन्तो "सत्तो मरति, सत्तस्स देहन्तरसङ्कमन" ति आदीनि विकप्पेति।

६१. **उपपाते** विमूळ्हो "सब्बत्थ खन्धान पातुभावो जाती" ति उपपातं अगण्हन्तो "सत्तो उपपज्जति, सत्तस्स नवसरीरपातुभावो" ति आदीनि विकप्पेति।

संसारे विमूळ्हो, यो एस—

"खन्धान च पटिपाटि धातुआयतनानं च।
अब्बोच्छिन्न वत्तमाना संसारो ति पवुच्चती" ति॥

---

१. पि अयं ति सन्धिच्छेदो।

एवं वण्णितो **संसारो**, तं एव अगण्हन्तो "अयं सत्तो अस्मा लोका पर लोकं गच्छति, परस्मा लोका इमं लोक आगच्छतो" ति आदीनि विकप्पेति ।

६२. **सङ्खारानं लक्खणे** विमूळ्हो सङ्खारान सभावलक्खणं सामञ्ञलक्खणं च अगण्हन्तो सङ्खारे अत्ततो अत्तनियतो धुवतो सुखतो सुभतो विकप्पेति ।

६३ **पटिच्चसमुप्पन्नधम्मेसु** विमूळ्हो अविज्जादीहि सङ्खारादीन पवत्ति अगण्हन्तो—"अत्ता जानाति वा न जानाति वा, सो एव करोति च कारेति च । सो पटिसन्धिय उप्पज्जति, तस्स अणुइस्सरादयो कललादिभावेन सरीरं सण्ठपेन्तो इन्द्रियानि सम्पादेन्ति । सो इन्द्रियसम्पन्नो फुसति, वेदियति, तण्हीयति, उपादियति, घटियति । सो पुन भवन्तरे भवती" (दी० १-५०) ति वा, "सब्बे सत्ता नियतिसङ्गतिभावपरिणता" (दी० १-५०) त्ति वा विकप्पेति ।

६४. सो अविज्जाय अन्धीकतो एवं विकप्पेन्तो यथा नाम अन्धो पथविय विचरन्तो मग्गं पि अमग्ग पि थलं पि निन्नं पि समं पि विसम पि पटिपज्जति, एवं पुञ्ञं पि अपुञ्ञ पि आनेञ्जाभिसङ्खारं पि अभिसङ्खरोती ति । तेनेत वुच्चति—

"यथा पि नाम जच्चन्धो नरो अपरिणायको ।
एकदा याति मग्गेन उम्मग्गेनापि एकदा ॥
संसारे ससरं बालो तथा अपरिणायको ।
करोति एकदा पुञ्ञ अपुञ्ञमपि एकदा ॥
यदा च ञत्वा सो धम्मं सच्चानि अभिसमेस्सति ।
तदा अविज्जूपसमा उपसन्तो चरिस्सती ति ॥

अय अविज्जापच्चया सङ्खारा ति पदस्मिं वित्थारकथा ॥

सङ्खारपच्चयाविञ्ञाणपदवित्थारकथा

६५. सङ्खारपच्चया विञ्ञाणपदे **विञ्ञाणं** ति चक्खुविञ्ञाणादि छब्बिध । तत्थ चक्खुविञ्ञाणं कुसलविपाक अकुसलविपाकं ति दुविधं होति । तथा सोत-घान-जिव्हा-कायविञ्ञाणानि । मनोविञ्ञाणं कुसलाकुसलविपाका द्वे मनो-धातुयो, तिस्सो अहेतुकमनोविञ्ञाणधातुयो, अट्ठ सहेतुकानि कामावचरविपाक-चित्तानि, पञ्च रूपावचरानि, चत्तारि अरूपावचरानी ति बावीसतिविधं होति । इति इमेहि छहि विञ्ञाणेहि सब्बानि पि बात्तिंस लोकियविपाकविञ्ञाणानि सङ्गहितानि होन्ति । लोकुत्तरानि पन वट्टकथाय न युज्जन्ती ति न गहितानि ।

तत्थ सिया—"कथं पनेत जानितब्बं—इद वुत्तप्पकारं विञ्ञाण सङ्खार-पच्चया होती" ति ? उपचितकम्माभावे विपाकाभावतो । विपाकं हेत, विपाकं

च न उपचितकम्माभावे उप्पज्जति, यदि उप्पज्जेय्य सब्बेसं सब्बविपाकानि उप्पज्जेय्यु, न च उप्पज्जन्ती ति जानितब्बमेत—सङ्खारपच्चया इद विञ्ञाण होती ति।

६६ कतरसङ्खारपच्चया कतर विञ्ञाण ति चे? **कामावचरपुञ्ञाभिसङ्खारपच्चया** ताव कुसलविपाकानि पञ्च चक्खुविञ्ञाणादीनि, मनोविञ्ञाणे एका मनोधातु, द्वे मनोविञ्ञाणधातुयो, अट्ठ कामावचरमहाविपाकानी ति सोळस। यथाह—

'कामावचरस्स कुसलस्स कम्मस्स कटत्ता उपचितत्ता विपाक चक्खुविञ्ञाण उप्पन्नं होति। सोत ·घान जिव्हा कायविञ्ञाणं· ··विपाका मनोधातु उप्पन्ना होति। सोमनस्ससहगता मनोविञ्ञाणधातु उप्पन्ना होति। उपेक्खासहगता मनोविञ्ञाणधातु उप्पन्ना होति। सोमनस्ससहगता ञाणसम्पयुत्ता। सोमनस्ससहगता ञाणसम्पयुत्ता ससङ्खारेन। सोमनस्ससहगता ञाणविप्पयुत्ता। सोमनस्ससहगता ञाणविप्पयुत्ता ससङ्खारेन। उपेक्खासहगता ञाणसम्पयुत्ता। उपेक्खासहगता ञाणसम्पयुत्ता ससङ्खारेन। उपेक्खासहगता ञाणविप्पयुत्ता ससङ्खारेना" (अभि० १-१०७-११७) ति।

रूपावचरपुञ्ञाभिसङ्खारपच्चया पन पञ्च रूपावचरविपाकानि। यथाह—

"तस्सेव रूपावचरस्स कुसलस्स कम्मस्स कटत्ता उपचितत्ता विपाक विविच्चेव कामेहि पठम झान पे० पञ्चमं झानं उपसम्पज्ज विहरती" (अभि० १-११८) ति। एव पुञ्ञाभिसङ्खारपच्चया एकवीसतिविधं विञ्ञाणं होति।

अपुञ्ञाभिसङ्खारपच्चया पन अकुसलविपाकानि पञ्च चक्खुविञ्ञाणादीनि, एका मनोधातु, एका मनोविञ्ञाणधातू ति एवं सत्तविध विञ्ञाणं होति। यथाह—

"अकुसलस्स कम्मस्स कटत्ता उपचितत्ता विपाक चक्खुविञ्ञाणं उप्पन्नं होति। सोत ·घान· जिव्हा कायविञ्ञाणं। विपाका मनोधातु··· विपाका मनोविञ्ञाणधातु उप्पन्ना होती" (अभि० १-१३९) ति।

आनेञ्जाभिसङ्खारपच्चया पन चत्तारि अरूपविपाकानी ति एवं चतुब्बिधं विञ्ञाण होति। यथाह—

"तस्सेव अरूपावचरस्स कुसलस्स कम्मस्स कटत्ता उपचितत्ता विपाकं सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा आकासानञ्चायतनसञ्ञासहगतं· पे०· ·· विञ्ञाणञ्चा ·· पे० ·· आकिञ्चञ्ञा ·· पे० नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसहगतं सुखस्स च दुक्खस्स च पहाना चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरती" (अभि० १-११९) ति।

६७. एवं यसङ्खारपच्चया य विञ्ञाण होति, त ञत्वा इदानिस्स एव पवत्ति वेदितब्बा। सब्बमेव हि इद पवत्तिपटिसन्धिवसेन द्वेधा पवत्तति। तत्थ द्वेपञ्चविञ्ञाणानि, द्वे मनोधातुयो, सोमनस्ससहगता अहेतुकमनोविञ्ञाणधातू ति इमानि तेरस पञ्चवोकारभवे पवत्तिय येव पवत्तन्ति। सेसानि एकूनवीसति तीसु भवेसु यथानुरूप पवत्तियं पि पटिसन्धिय पि पवत्तन्ति।

कथं? कुसलविपाकानि ताव चक्खुविञ्ञाणादीनि पञ्च कुसलविपाकेन अकुसलविपाकेन वा निब्बत्तस्स यथाक्कम परिपाक उपगतिन्द्रियस्स चक्खादीन आपाथगत इट्ठ इट्ठमज्झत्त वा रूपादिआरम्मण आरब्भ चक्खादिपसाद निस्साय दस्सन-सवन-घायन-सायन-फुसनकिच्च साधयमानानि पवत्तन्ति। तथा अकुसलविपाकानि पञ्च। केवलं हि तेसं अनिट्ठ अनिट्ठमज्झत्त वा आरम्मण होति। अयमेव विसेसो। दस पि चेतानि नियतद्वारारम्मणवत्थुट्ठानानि नियतकिच्चानेव च भवन्ति।

ततो कुसलविपाकानं चक्खुविञ्ञाणादीनं अनन्तरा कुसलविपाका मनोधातु तेसं येव आरम्मणं आरब्भ हदयवत्थु निस्साय सम्पटिच्छनकिच्च साधयमाना पवत्तति। तथा अकुसलविपाकानं अनन्तरा अकुसलविपाका। इद च पन द्वयं अनियतद्वारारम्मणं नियतवत्थुट्ठान, नियतकिच्च च होति।

६८ सोमनस्ससहगता पन अहेतुकमनोविञ्ञाणधातु कुसलविपाकमनोधातुया अनन्तरा तस्सा एव आरम्मण आरब्भ हदयवत्थु निस्साय सन्तीरणकिच्चं साधयमाना, छसु द्वारेसु बलवारम्मणे कामावचरसत्तान येभुय्येन लोभसम्पयुत्तजवनावसाने भवङ्गवीथि पच्छिन्दित्वा जवनेन गहितारम्मणे तदारम्मणवसेन च सकिं वा द्विक्खत्तु वा पवत्तती ति **मज्झिमट्ठकथायं** वुत्तं। **अभिधम्मट्ठकथाय** पन तदारम्मणे द्वे चित्तवारा आगता। इद पन चित्त, तदारम्मण ति च पिट्ठिभवङ्गं ति चा ति द्वे नामानि लभति। अनियतद्वारारम्मण नियतवत्थुकं अनियतट्ठानकिच्च चं होती ति। एवं ताव तेरस पञ्चवोकारभवे पवत्तियं येव पवत्तन्ती ति वेदितब्बानि।

सेसेसु एकूनवीसतिया न किञ्चि अत्तनो अनुरूपाय पटिसन्धिया न पवत्तति। पवत्तिय पन कुसलाकुसलविपाका ताव द्वे अहेतुकमनोविञ्ञाणधातुयो, पञ्चद्वारे कुसलाकुसलविपाकमनोधातून अनन्तरा सन्तीरणकिच्च, छसु द्वारेसु पुब्बे वुत्तनयेनेव तदारम्मणकिच्चं, अत्तना दिन्नपटिसन्धितो उद्ध असति भवङ्गुपच्छेदके चित्तुप्पादे भवङ्गकिच्च, अन्ते चुतिकिच्चं चा ति चत्तारि किच्चानि साधयमाना नियतवत्थुका अनियतद्वारारम्मणट्ठानकिच्चा हुत्वा पवत्तन्ति।

अट्ठ कामावचरसहेतुकचित्तानि वुत्तनयेनेव छसु द्वारेसु तदारम्मणकिच्च,

अत्तना दिन्नपटिसन्धितो उद्धं असति भवङ्गुपच्छेदके चित्तुप्पादे भवङ्गकिच्चं, अन्ते चुतिकिच्च चा ति तीणि किच्चानि साधयमानानि नियतवत्थुकानि अनियतद्वारारम्मणट्ठानकिच्चानि हुत्वा पवत्तन्ति।

पञ्च रूपावचरानि चत्तारि च आरुप्पानि अत्तना दिन्नपटिसन्धितो उद्ध असति भवङ्गुपच्छेदके चित्तुप्पादे भवङ्गकिच्चं, अन्ते चुतिकिच्च चा ति किच्चद्वय साधयमानानि पवत्तन्ति। तेसु रूपावचरानि नियतवत्थारम्मणानि अनियतट्ठानकिच्चानि, इतरानि नियतवत्थुकानि नियतारम्मणानि अनियतट्ठानकिच्चानि हुत्वा पवत्तन्ती ति। एव ताव बत्तिसविध पि विञ्ञाण पवत्तियं सङ्खारपच्चया पवत्तति। तत्रस्स ते ते सङ्खारा कम्मपच्चयेन च उपनिस्सयपच्चयेन च पच्चया होन्ति।

६९ य पन वुत्तं—"सेसेसु एकूनवीसतिया न किञ्चि अत्तनो अनुरूपाय पटिसन्धिया नप्पवत्तती" ति, त अतिसङ्खित्तत्ता दुब्बिजान। तेनस्स वित्थारनयदस्सनत्थं वुच्चति—कति पटिसन्धियो? कति पटिसन्धि चित्तानि? केन कत्थ पटिसन्धि होति? किं पटिसन्धिया आरम्मण ति?

७० असञ्ञपटिसन्धिया सद्धि वीसति पटिसन्धियो। वुत्तप्पकारानेव एकूनवीसति पटिसन्धिचित्तानि। तत्थ अकुसलविपाकाय अहेतुकमनोविञ्ञाणधातुया अपायेसु पटिसन्धि होति। कुसलविपाकाय मनुस्सलोके जच्चन्ध-जातिवधिर-जातिउम्मत्तक-जातिएळमूग-नपुंसकादीन। अट्ठहि सहेतुककामावचरविपाकेहि कामावचरदेवेसु चेव मनुस्सेसु च पुञ्ञवन्तानं पटिसन्धि होति। पञ्चहि रूपावचरविपाकेहि रूपिब्रह्मलोके। चतूहि अरूपावचरविपाकेहि अरूपलोके ति। येन च यत्थ पटिसन्धि होति, सा एव तस्स अनुरूपा पटिसन्धि नाम। सङ्खेपतो पन पटिसन्धिया तीणि आरम्मणानि होन्ति—अतीत, पच्चुप्पन्न, नवत्तब्ब च। असञ्ञपटिसन्धि अनारम्मणा ति।

७१ तत्थ विञ्ञाणञ्चायतन-नेवसञ्ञानासञ्ञायतनपटिसन्धीन अतीतमेव आरम्मण। दसन्न कामावचरानं अतीतं वा पच्चुप्पन्नं वा। सेसान नवत्तब्बमेव। एवं तीसु आरम्मणेसु पवत्तमाना पन पटिसन्धि यस्मा अतीतारम्मणस्स वा नवत्तब्बारम्मणस्स अनन्तरमेव पवत्तति, पच्चुप्पन्नारम्मणं पन चुतिचित्तं नाम नत्थि, तस्मा द्वीसु आरम्मणेसु अञ्ञतरारम्मणाय चुतिया अनन्तरा तीसु आरम्मणेसु अञ्ञतरारम्मणाय पटिसन्धिया सुगतिदुग्गतिवसेन पवत्तानाकारो वेदितब्बो।

७२ सेय्यथीद—कामावचरसुगतियं ताव ठितस्स पापकम्मिनो पुग्गलस्स "तानिस्स तस्मि समये ओलम्बन्ती" (म० ३-२३४) ति आदिवचनतो मरण-

मञ्चे निपन्नस्स यथूपचित पापकम्म वा कम्मनिमित्तं वा मनोद्वारे आपाथं आगच्छति। तं आरब्भ उप्पन्नाय तदारम्मणपरियोसानाय जवनवीथिया अनन्तरं भवङ्गविसयं आरम्मण कत्वा चुतिचित्तं उप्पज्जति। तस्मिं निरुद्धे तदेव आपाथगतं कम्म वा कम्मनिमित्त वा आरब्भ अनुपच्छिन्नकिलेसबलविनामित्तं दुग्गतिपरियापन्नं पटिसन्धिचित्त उप्पज्जति। अय अतीतारम्मणाय चुतिया अनन्तरा अतीतारम्मणा पटिसन्धि।

७३ अपरस्स मरणसमये वुत्तप्पकारकम्मवसेन नरकादीसु अग्गिजालवण्णादिक दुग्गतिनिमित्तं मनोद्वारे आपाथ आगच्छति। तस्स, द्विक्खत्तु भवङ्गे उप्पज्जित्वा निरुद्धे, तं आरम्मण आरब्भ एक आवज्जन, मरणस्स आसन्नभावेन मन्दीभूतवेगत्ता पञ्च जवनानि, द्वे तदारम्मणानी ति तीणि वीथिचित्तानि उप्पज्जन्ति। ततो भवङ्गविसयं आरम्मण कत्वा एकं चुतिचित्तं। एत्तावता एकादस चित्तक्खणा अतीता होन्ति। अथस्स अवसेसपञ्चचित्तक्खणायुके तस्मिं एव आरम्मणे पटिसन्धिचित्त उप्पज्जति। अयं अतीतारम्मणाय चुतिया अनन्तरा पच्चुप्पन्नारम्मणा पटिसन्धि।

७४. अपरस्स मरणसमये पञ्चन्नं द्वारान अञ्ञतरस्मिं रागादिहेतुभूत हीनमारम्मणं आपाथं आगच्छति। तस्स यथाक्कमेन उप्पन्ने वोट्ठब्बनावसाने मरणस्स आसन्नभावेन मन्दीभूतवेगत्ता पञ्च जवनानि, द्वे तदारम्मणानि च उप्पज्जन्ति। ततो भवङ्गविसयं आरम्मण कत्वा एक चुतिचित्त। एत्तावता च द्वे भवङ्गानि, आवज्जन, दस्सनं, सम्पटिच्छन, सन्तीरण, वोट्ठब्बन, पञ्च जवनानि, द्वे तदारम्मणानि, एकं चुतिचित्त ति पञ्चदस चित्तक्खणा अतीता होन्ति। अथ अवसेसएकचित्तक्खणायुके तस्मिं येव आरम्मणे पटिसन्धिचित्तं उप्पज्जति। अय पि अतीतारम्मणाय चुतिया अनन्तरा पच्चुप्पन्नारम्मणा पटिसन्धि। एस ताव अतीतारम्मणाय सुगतिचुतिया अनन्तरा अतीतपच्चुप्पन्नारम्मणाय दुग्गतिपटिसन्धिया पवत्तनाकारो।

७५ दुग्गतियं ठितस्स पन उपचितानवज्जकम्मस्स वुत्तनयेनेव तं अनवज्जकम्मं वा कम्मनिमित्तं वा मनोद्वारे आपाथं आगच्छती ति कण्हपक्खे सुक्कपक्खं ठपेत्वा सब्ब पुरिमनयेनेव वेदितब्बं। अय अतीतारम्मणाय दुग्गतिचुतिया अनन्तरा अतीतपच्चुप्पन्नारम्मणाय सुगतिपटिसन्धिया पवत्तनाकारो।

७६ सुगतियं ठितस्स पन उपचितानवज्जकम्मस्स "तानिस्स तस्मिं समये ओलम्बन्ती" (म० ३–२४२) ति आदिवचनतो मरणमञ्चे निपन्नस्स यथूपचितं अनवज्जकम्मं वा कम्मनिमित्तं वा मनोद्वारे आपाथ आगच्छति, त च खो उपचितकामावचरानवज्जकम्मस्सेव। उपचितमहग्गतकम्मस्स पन कम्मनिमित्त-

मेव आपाथं आगच्छति। तं आरब्भ उप्पन्नाय तदारम्मणपरियोसानाय, सुद्धाय वा जवनवीथिया अनन्तर भवङ्गविसयं आरम्मणं कत्वा चुतिचित्त उप्पज्जति। तस्मि निरुद्धे तमेव आपाथगतं कम्मं वा कम्मनिमित्त वा आरब्भ अनुपच्छिन्न-किलेसबलनिमित सुगतिपरियापन्न पटिसन्धिचित्तं उप्पज्जति। अयं अतीता-रम्मणाय चुतिया अनन्तरा अतीतारम्मणा वा नवत्तब्बारम्मणा वा पटिसन्धि।

७७. अपरस्स मरणसमये कामावचरअनवज्जकम्मवसेन मनुस्सलोके मातु-कुच्छिवण्णसङ्खातं वा देवलोके उय्यान-विमान-कप्परुक्खादिवण्णसङ्खात वा सुगतिनिमित्त मनोद्वारे आपाथं आगच्छति। तस्स दुग्गतिनिमित्ते दस्सितानुक्कमे-नेव चुतिचित्तानन्तरं पटिसन्धिचित्त उप्पज्जति। अयं अतीतारम्मणाय चुतिया अनन्तरा पच्चुप्पन्नारम्मणा पटिसन्धि।

७८ अपरस्स मरणसमये ञातका "अयं, तात, तवत्थाय बुद्धपूजा करीयति चित्त पसादेही" ति वत्वा पुप्फदामपटाकादिवसेन रूपारम्मण वा, धम्मस्सवन-तुरियपूजादिवसेन सद्दारम्मण वा, धूपवासगन्धादिवसेन गन्धारम्मण वा, "इद, तात, सायस्सु, तवत्थाय दातब्बदेय्यधम्म" ति वत्वा मधुफाणितादिवसेन रसारम्मण वा, "इद, तात, फुसस्सु, तवत्थाय दातब्बदेय्यधम्म" ति वत्वा चीनपट्ट-सोमारपट्टादिवसेन फोट्ठब्बारम्मणं वा पञ्चद्वारे उपसंहरन्ति। तस्स तस्मि आपाथगते रूपादिआरम्मणे यथाक्कमेन उप्पन्नवोट्ठब्बनावसाने मरणस्स आसन्नभावेन मन्दीभूतवेगत्ता पञ्च जवनानि, द्वे तदारम्मणानि च उप्पज्जन्ति, ततो भवङ्गविसय आरम्मण कत्वा एक चुतिचित्त, तदवसाने तस्मि येव एक-चित्तक्खणट्ठितिके आरम्मणे पटिसन्धिचित्तं उप्पज्जति। अयं पि अतीतारम्मणाय चुतिया अनन्तरा पच्चुप्पन्नारम्मणा पटिसन्धि।

७९. अपरस्स पन पथवीकसिणज्झानादिवसेन पटिलद्धमहग्गतस्स सुगतियं ठितस्स मरणसमये कामावचरकुसलकम्म-कम्मनिमित्त-गतिनिमित्तान वा अञ्ञतरं, पथवीकसिणादिकं वा निमित्तं, महग्गतचित्तं वा मनोद्वारे आपाथ आगच्छति, चक्खु-सोतानं वा अञ्ञतरस्मि कुसलुप्पत्तिहेतुभूत पणीतमारम्मणं आपाथं आगच्छति, तस्स यथाक्कमेन उप्पन्नवोट्ठब्बनावसाने मरणस्स आसन्न-भावेन मन्दीभूतवेगत्ता पञ्च जवनानि उप्पज्जन्ति। महग्गतगतिकानं पन तदारम्मण नत्थि, तस्मा जवनानन्तरं येव भवङ्गविसयं आरम्मणं कत्वा एक चुतिचित्त उप्पज्जति। तस्सावसाने कामावचरमहग्गतसुगतीनं अञ्ञतरसुगति-परियापन्नं यथूपट्ठितेसु आरम्मणेसु अञ्ञतरारम्मण पटिसन्धिचित्तं उप्पज्जति। अय नवत्तब्बारम्मणाय सुगतिचुतिया अनन्तरा अतीत-पच्चुप्पन्न-नवत्तब्बा-अञ्ञतरारम्मणा पटिसन्धि।

एतेनानुसारेन आरुप्पचुतिया पि अनन्तरा पटिसन्धि वेदितब्बा। अयं

अतीतनवत्तब्बारम्मणाय सुगतिचुतिया अनन्तरा अतीत-नवत्तब्ब-पच्चुप्पन्ना-रम्मणाय पटिसन्धिया पवत्तानाकारो ।

८० दुग्गतिय ठितस्स पन पापकम्मिनो वुत्तनयेनेव तं कम्मं कम्मनिमित्त गतिनिमित्तं वा मनोद्वारे, पञ्चद्वारे वा पन अकुसलुप्पत्तिहेतुभूत आरम्मणं आपाथ आगच्छति । अथस्स यथाक्कमेन चुतिचित्तावसाने दुग्गतिपरियापन्नं तेसु आरम्मणेसु अञ्ञतरारम्मण पटिसन्धिचित्त उप्पज्जति । अयं अतीता-रम्मणाय दुग्गतिचुतिया अनन्तरा अतीतपच्चुप्पन्नारम्मणाय पटिसन्धिया पवत्तनाकारो ति ।

एत्तावता एकूनवीसतिविधस्सा पि विञ्ञाणस्स पटिसन्धिवसेन पवत्ति दीपिता होति ।

८१. तयिदं सब्बं पि एव

पवत्तमान सन्धिम्हि द्वेधा कम्मेन वत्तति ।
मिस्सादीहि च भेदेहि भेदस्स दुविधादिको ।।

इद हि एकूनवीसतिविध पि विपाकविञ्ञाण पटिसन्धिम्हि पवत्तमाना द्वेधा कम्मेन वत्तति । यथासक हि एतस्स जनककम्म नानाक्खणिककम्म-पच्चयेन चेव उपनिस्सयपच्चयेन च पच्चयो होति । वुत्त हेत—"कुसलाकुसलं कम्म विपाकस्स उपनिस्सयपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ · १–१३८–१४१) ति ।
एव वत्तमानस्स पनस्स मिस्सादीहि भेदेहि दुविधादिको पि भेदो वेदितब्बो ।

सेय्यथीदं—इद हि पटिसन्धिवसेन एकधा पवत्तमान पि रूपेन सह मिस्सामिस्सभेदतो दुविध, कामरूपारूपभवभेदतो तिविधं, अण्डज-जलाबुज-संसेदज-ओपपातिकयोनिवसेन चतुब्बिधं, गतिवसेन पञ्चविधं, विञ्ञाणट्ठिति-वसेन सत्तविध, सत्तावासवसेन अट्ठविधं होति । तत्थ—

८२ मिस्स द्विधा भावभेदा, स-भावं तत्थ च द्विधा ।
द्वे वा तयो वा दसका ओमतो आदिना सह ।।

मिस्सं द्विधा भावभेदा ति । य हेतं एत्थ अञ्ञत्र अरूपभवा रूपमिस्स पटिसन्धिविञ्ञाण उप्पज्जति, त रूपभवे इत्थिन्द्रिय-पुरिसिन्द्रियसङ्खातेन भावेन विना उप्पत्तितो, कामभवे अञ्ञत्र जातिपण्डकपटिसन्धिया भावेन सह उप्पत्तितो स-भाव अ-भाव ति दुविध होति ।

स-भावं तत्थ च द्विधा ति । तत्था पि च य स-भावं, तं इत्थिपुरिसभावान अञ्ञतरेन सह उप्पत्तितो दुविधमेव होति ।

द्वे वा तयो वा दसका ओमतो आदिना सहा ति । यं हेतमेत्थ "मिस्स

अमिस्सं" ति दुके आदिभूतं रूपमिस्सं पटिसन्धिविञ्ञाणं, तेन सह वत्थुकाय-दसकवसेन द्वे वा, वत्थुकायभावदसकवसेन तयो वा दसका ओमतो उप्पज्जन्ति, नत्थि इतो परं रूपपरिहानी ति। तं पनेतं एवं ओमकपरिमाणं उप्पज्जमानं अण्डज-जलाबुजनामिकासु द्वीसु योनीसु जातिउण्णाय एकेन असुना उद्धटसप्पि-मण्डप्पमाणं कललं ति लद्धसङ्खं हुत्वा उप्पज्जति।

तत्थ योनीनं गतिवसेन सम्भवभेदो वेदितब्बो। एतासु हि,

८३. निरये भुम्मवज्जेसु देवेसु च न योनियो।
तिस्सो पुरिमिका होन्ति चतस्सो पि गतित्तये॥

तत्थ **देवेसु चा** ति। च-सद्देन यथा निरये च भुम्मवज्जेसु च देवेसु, एवं निज्झामतण्हिकपेतेसु च पुरिमिका तिस्सो योनियो न सन्ती ति वेदितब्बा। ओपपातिका एव हि ते होन्ति। सेसे पन तिरच्छान-पित्तिविसय-मनुस्ससङ्खाते गतित्तये पुब्बे वज्जितभुम्मदेवेसु च चतस्सो पि योनियो होन्ति। तत्थ,

८४. तिंस नव चेव रूपीसु, सत्तति उक्कमतोथ रूपानि।
संसेदुपपातयोनिसु अथ वा अवकसतो तिंस॥

रूपिब्रह्मेसु ताव ओपपातिकयोनिकेसु चक्खुसोतवत्थुदसकानं जीवितनवकस्स चा ति चतुन्नं कलापानं वसेन तिंस च नव च पटिसन्धिविञ्ञाणेन सह रूपानि उप्पज्जन्ति। रूपिब्रह्मे पन ठपेत्वा अञ्ञेसु ससेदज-ओपपातिकयोनिकेसु उक्कसतो चक्खुसोतघानजिव्हाकायवत्थुभावदसकानं वसेन सत्तति, तानि च निच्चं देवेसु। तत्थ वण्णो, गन्धो, रसो, ओजा चतस्सो चा पि धातुयो चक्खुप्पसादो जीवितं ति अयं दसरूपपरिमाणो रूपपुञ्जो चक्खुदसको नाम। एवं सेसा वेदितब्बा। अवकसतो पन जच्चन्ध-बधिर-अघानक-नपुंसकस्स जिव्हाकायवत्थुदसकानं वसेन तिंस रूपानि उप्पज्जन्ति। उक्कंसावकंसानं पन अन्तरे अनुरूपतो विकप्पो वेदितब्बो।

८५ एवं विदित्वा पुन,

खन्धारम्मणगतिहेतुवेदनापीतिवितक्कविचारेहि।
भेदाभेदविसेसो चुतिसन्धीनं परिञ्ञेय्यो॥

या हेसा मिस्सामिस्सतो दुविधा पटिसन्धि, या चस्सा अतीतानन्तरा चुति, तासं इमेहि खन्धादीहि भेदाभेदविसेसो[1] ञातब्बो ति अत्थो।

८६. कथं? कदाचि हि चतुक्खन्धाय आरुप्पचुतिया अनन्तरा चतुक्खन्धा व आरम्मणतो पि अभिन्ना पटिसन्धि होति। कदाचि अमहग्गतबहिद्धारम्मणाय

---

१. चुतिपटिसन्धीनं खन्धादीहि अञ्ञमञ्ञसमानता **अभेदो**। असमानता **भेदो**।

महग्गतअज्झत्तारम्मणा। अयं ताव अरूपभूमीसु येव नयो। कदाचि पन चतुक्खन्धाय अरूपचुतिया अनन्तरा पञ्चक्खन्धा कामावचरपटिसन्धि। कदाचि पञ्चखन्धाय कामावचरचुतिया रूपावचरचुतिया वा अनन्तरा चतुक्खन्धा अरूपपटिसन्धि। एव अतीतारम्मणाय चुतिया पच्चुप्पन्नारम्मणा पटिसन्धि, एकच्चसुगतिचुतिया एकच्चदुग्गतिपटिसन्धि, अहेतकचुतिया सहेतुकपटिसन्धि, दुहेतुकचुतिया तिहेतुकपटिसन्धि, उपेक्खासहगतचुतिया सोमनस्ससहगतपटिसन्धि, अप्पीतिकचुतिया सप्पीतिकपटिसन्धि, अवितक्कचुतिया सवितक्कपटिसन्धि, अविचारचुतिया सविचारपटिसन्धि, अवितक्काविचारचुतिया सवितक्कसविचारपटिसन्धी ति तस्स तस्स विपरीततो च यथायोग योजेतब्ब।

८७ लद्धप्पच्चयमिति धम्ममत्तमेत भवन्तरमुपेति।
नास्स ततो सङ्कन्ति, न ततो हेतुं विना होति॥

इति हेत लद्धप्पच्चय रूपारूपधम्ममत्त उप्पज्जमान भवन्तरमुपेती ति वुच्चति, न सत्तो, न जीवो। तस्स च नापि अतीतभवतो इध सङ्कन्ति अत्थि। नापि ततो हेतु विना इध पातुभावो।

तयिद पाकटेन मनुस्सचुतिपटिसन्धिक्कमेन पकासयिस्साम।

८८. अतीतभवस्मिं हि सरसेन उपक्कमेन वा समासन्नमरणस्स असय्हानं सब्बङ्गपच्चङ्गसन्धिबन्धनच्छेदकान मारणन्तिकवेदनासत्थान सन्निपात असहन्तस्स आतपे पक्खित्तहरिततालपण्णमिव कमेन उपसुस्समाने सरीरे, निरुद्धेसु चक्खादीसु इन्द्रियेसु हदयवत्थुमत्ते पतिट्ठितेसु कायिन्द्रिय-मनिन्द्रिय-जीवितिन्द्रियेसु, तङ्खणावसेसहदयवत्थुसन्निस्सित विञ्ञाण गरुकसमासेवितासन्नपुब्बकतानं अञ्ञतरं लद्धावसेसपच्चयसङ्खारसङ्खात कम्म, तदुपट्ठापित वा कम्मनिमित्तगतिनिमित्तसङ्खात विसयं आरब्भ पवत्तति। तदेवं पवत्तमान तण्हाविज्जान अप्पहीनत्ता अविज्जापटिच्छादितादीनवे तस्मिं विसये तण्हा नामेति, सहजातसङ्खारा खिपन्ति। तं सन्ततिवसेन तण्हाय नामियमानं सङ्खारेहि खिप्पमानं ओरिमतीररुक्खविनिबद्धरज्जुमालम्बित्वा मातिकातिक्कमको विय पुरिमं च निस्सयं जहाति, अपर च कम्मसमुट्ठापितं निस्सय आसादयमानं वा अनासादयमानं वा आरम्मणादीहि येव पच्चयेहि पवत्तती ति।

एत्थ च पुरिमं चवनतो **चुति**। पच्छिमं भवन्तरादिपटिसन्धानतो **पटिसन्धी** ति वुच्चति। तदेतं नापि पुरिमभवा इधागत, नापि ततो कम्मसङ्खारनतिविसयादिहेतुं विना पातुभूत ति वेदितब्बं।

८९ सियु निदस्सनानेत्थ पटिघोसादिका, अथ।
सन्तानबन्धतो नत्थि एकता नापि नानता॥

एत्थ चेतस्स विञ्ञाणस्स पुरिमभवतो इध अनागमने अतीतभवपरियापन्नहेतू ति च उप्पादे पटिघोसपदीपमुद्दापटिबिम्बप्पकारा धम्मा निदस्सनानि सियु। यथा हि पटिघोसपदीपमुद्दा छाया सद्दादिहेतुका[1] होन्ति अञ्ञत्र अगन्त्वा[2], एवमेव इद चित्त।

९० एत्थ च **सन्तानबन्धतो नत्थि एकता नापि नानता।** यदि हि सन्तानबन्धे सति एकन्तमेकता भवेय्य, न खीरतो दधि सम्भूत सिया। अथापि एकन्तनानता भवेय्य, न खीरस्सामिनो दधि सिया। एस नयो सब्बहेतुहेतुसमुप्पन्नेसु। एव च सति सब्बलोकवोहारलोपो सिया, सो च अनिट्ठो। तस्मा एत्थ न एकन्तमेकता वा नानता वा उपगन्तब्बा ति।

९१ एत्थाह—ननु एव असङ्कन्तिपातुभावे सति ये इमस्मि मनुस्सत्तभावे खन्धा, तेसं निरुद्धत्ता, फलपच्चयस्स च कम्मस्स तत्थ अगमनतो अञ्ञस्स अञ्ञतो च तं फल सिया? उपभुञ्जके च असति कस्स त फलं सिया? तस्मा न सुन्दरमिद विधानं ति? तत्रिद वुच्चति—

सन्ताने य फलं एक नाञ्ञस्स न च अञ्ञतो।
बीजान अभिसङ्खारो एतस्सत्थस्स साधको॥

एकसन्तानस्मि हि फलमुप्पज्जमान तत्थ एकन्तएकत्तनानत्तान पटिसिद्धत्ता अञ्ञस्सा ति वा अञ्ञतो ति वा न होति। एतस्स च पनत्थस्स बीजानं अभिसङ्खारो साधको। अम्बबीजादीनं हि अभिसङ्खारेसु कतेसु तस्स बीजस्स सन्ताने लद्धपच्चयो कालन्तरे फलविसेसो उप्पज्जमानो न अञ्ञबीजान नापि अञ्ञाभिसङ्खारपच्चया उप्पज्जति, न च तानि बीजानि अभिसङ्खारा वा फलट्ठान पापुणन्ति, एवंसम्पदमिद वेदितब्बं। विज्जासिप्पोसधादीहि चापि बालसरीरे उपयुत्तेहि कालन्तरे वुड्ढसरीरादीसु फलदेहि अयमत्थो वेदितब्बो।

९२ य पि वुत्तं—"उपभुञ्जके च असति कस्स तं फल सिया" ति, तत्थ—

फलस्सुप्पत्तिया एव सिद्धा भुञ्जकसम्मुति।
फलुप्पादेन रुक्खस्स यथा फलति-सम्मुति॥

यथा हि रुक्खसङ्खातान धम्मान एकदेसभूतस्स रुक्खफलस्स उप्पत्तिया एव रुक्खो फलती ति वा, फलितो ति वा वुच्चति, तथा देवमनुस्ससङ्खातानं

१ **सद्दादिहेतुका** ति। एत्थ **पटिघोसो** सद्दहेतुको। **पदीपो** पदीपन्तरादिहेतुको। **मुद्दा** लञ्छनहेतुका। **छाया** आदासादिअभिमुखमुखादिहेतुका।

२ **होन्ति अञ्ञत्र अगन्त्वा** ति। सद्दादिपच्चयदेस अनुपगन्त्वा सद्दादिहेतुका होन्ति ततो पुब्बे अभावा, एवं इदं पि पटिसन्धिविञ्ञाण न हेतुदेस गन्त्वा तंहेतुकं होति ततो पुब्बे अभावा।

खन्धानं एकदेसभूतस्स उपभोगसङ्खातस्स सुखदुक्खफलस्स उप्पादेनेव देवो मनुस्सो वा उपभुञ्जती ति वा, सुखितो दुक्खितो ति वा वुच्चति। तस्मा न एत्थ अञ्ञेन उपभुञ्जकेन नाम कोचि अत्थो अत्थी ति।

९३ यो पि वदय्य—"एवं सन्ते पि एते सङ्खारा विज्जमाना वा फलस्स पच्चया सियुं, अविज्जमाना वा, यदि च विज्जमाना पवत्तिक्खणे येव[1] नेस विपाकेन भवितब्ब, अथ अविज्जमाना पवत्तितो पुब्बे पच्छा च निच्च फलावहा सियु" ति ? सो एव वत्तब्बो—

कतत्ता पच्चया एते न च निच्चं फलावहा।
पाटिभोगादिकं तत्थ वेदितब्ब निदस्सन॥

९४. कतत्ता येव हि सङ्खारा अत्तनो फलस्स पच्चया होन्ति, न विज्जमानत्ता अविज्जमानत्ता वा। यथाह—"कामावचरस्स कुसलस्स कम्मस्स कतत्ता उपचितत्ता विपाक चक्खुविञ्ञाण उप्पन्न होती" (अभि० १–१०७) ति आदि। यथारहस्स च अत्तनो फलस्स पच्चया हुत्वा न पुन फलावहा होन्ति, विपाकत्ता। एतस्स चत्थस्स विभावने इद पाटिभोगादिक निदस्सनं वेदितब्ब। यथा हि लोके यो कस्सचि अत्थस्स निय्यातनत्थं पाटिभोगो होति, भण्डं वा किणाति, इण वा गण्हाति, तस्स तं किरियाकरणमत्तमेव तदत्थनिय्यातनादिम्हि पच्चयो होति, न किरियाय विज्जमानत्त अविज्जमानत्त वा, न च तदत्थनिय्यातनादितो पर पि धारको व होति। कस्मा ? निय्यातनादीन कतत्ता। एव कतत्ता व सङ्खारा पि अत्तनो फलस्स पच्चया होन्ति, न च यथारह फलदानतो पर पि फलावहा होन्ता ति।

एत्तावता मिस्सामिस्सवसन द्वेधा पि वत्तमानस्स पटिसन्धिविञ्ञाणस्स सङ्खारपच्चया पवत्ति दीपिता होति।

९५ इदानि सब्बेस्वेव तेसु बात्तिसविपाकविञ्ञाणेसु सम्मोहविघातत्थ—

पटिसन्धिपवत्तीन वसेनेते भवादिसु।
विजानितब्बा सङ्खारा यथा येस च पच्चया॥

तत्थ तयो भवा, चतस्सो योनियो, पञ्च गतियो, सत्त विञ्ञाणट्ठितियो, नव सत्तावासा ति एते **भवादयो** नाम। एतेसु भवादीसु पटिसन्धिय पवत्ते चेते येस विपाकविञ्ञाणानं पच्चया, यथा च पच्चया होन्ति, तथा विजानितब्बा ति अत्थो।

९६. तत्थ पुञ्ञाभिसङ्खारे ताव कामावचरअट्ठचेतनाभेदो पुञ्ञाभिसङ्खारो अविसेसेन कामभवे सुगतिय नवन्नं विपाकविञ्ञाणान पटिसन्धियं—नानक्ख-

१. **पवत्तिक्खणे येवा** ति। सङ्खारान पवत्तमानक्खणे एव।

णिककम्मपच्चयेन चेव, उपनिस्सयपच्चयेन चा ति द्वेधा पच्चयो। रूपावचर-पञ्चकुसलचेतनाभेदो पुञ्ञाभिसङ्खारो रूपभवे पटिसन्धियं एवं पञ्चन्नं।

९७ वुत्तप्पभेदकामावचरो पन कामभवे सुगतियं उपेक्खासहगताहेतुमनोविञ्ञाणधातुवज्जानं सत्तन्नं परित्तविपाकविञ्ञाणानं वुत्तनयेनेव द्वेधा पच्चयो पवत्ते, नो पटिसन्धियं। स्वेव रूपभवे पञ्चन्नं विपाकविञ्ञाणानं तथेव पच्चयो पवत्ते, नो पटिसन्धियं। कामभवे पन दुग्गतियं अट्ठन्नं पि परित्तविपाकविञ्ञाणानं तथेव पच्चयो पवत्ते, नो पटिसन्धियं। तत्थ निरये महामोग्गल्लानत्थेरस्स नरकचारिकादीसु इट्ठारम्मणसमायोगे सो पच्चयो होति। तिरच्छानेसु पन पेतमहिद्धिकेसु च इट्ठारम्मणं लब्भति येव।

९८ स्वेव कामभवे सुगतियं सोळसन्नं पि कुसलविपाकविञ्ञाणानं तथेव पच्चयो—पवत्ते च, पटिसन्धियं च। अविसेसेन पन पुञ्ञाभिसङ्खारो रूपभवे दसन्नं विपाकविञ्ञाणानं तथेव पच्चयो—पवत्ते च, पटिसन्धियं च।

९९. द्वादसाकुसलचेतनाभेदो अपुञ्ञाभिसङ्खारो कामभवे दुग्गतियं एकस्स विञ्ञाणस्स तथेव पच्चयो—पटिसन्धियं, नो पवत्ते। छन्नं पवत्ते, नो पटिसन्धियं। सत्तन्नं पि अकुसलविपाकविञ्ञाणानं पवत्ते च पटिसन्धियं च।

१००. कामभवे पन सुगतियं सत्तेव सत्तन्नं तथेव पच्चयो पवत्ते, नो पटिसन्धियं। रूपभवे चतुन्नं विपाकविञ्ञाणानं तथेव पच्चयो पवत्ते, नो पटिसन्धियं। सो च खो कामावचरे अनिट्ठरूपदस्सनसद्दसवनवसेन, ब्रह्मलोके पन अनिट्ठरूपादयो नाम नत्थि। तथा कामावचरदेवलोके पि।

आनञ्जाभिसङ्खारो अरूपभवे चतुन्नं विपाकविञ्ञाणानं तथेव पच्चयो पवत्ते च, पटिसन्धियं च।

एवं ताव भवेसु पटिसन्धिपवत्तीनं वसेनेते सङ्खारा येसं पच्चया, यथा च पच्चया होन्ति, तथा जानितब्बा।

एतेनेव नयेन योनिआदीसु पि वेदितब्बा।

१०१. तत्रिदं आदितो पट्ठाय मुखमत्तप्पकासनं—इमेसु हि सङ्खारेसु यस्मा पुञ्ञाभिसङ्खारो ताव द्वीसु भवेसु पटिसन्धिं दत्वा सब्बमत्तनो विपाकं जनेति। तथा अण्डजादीसु चतूसु योनिसु, देवमनुस्ससङ्खातासु द्वीसु गतिसु, नानत्तकायनानत्तसञ्ञी-नानत्तकायएकत्तसञ्ञी-एकत्तकायनानत्तसञ्ञी-नानत्तकायएकत्तसञ्ञीसङ्खातासु चतूसु विञ्ञाणट्ठितिसु असञ्ञसत्तावासे पनेस रूपमत्तमेवाभिसङ्खरोती ति चतूसु येव सत्तावासेसु च पटिसन्धिं दत्वा सब्बमत्तनो विपाकं जनेति। तस्मा एस तेसु द्वीसु भवेसु, चतूसु योनिसु, द्वीसु गतिसु, चतूसु विञ्ञाणट्ठितिसु, चतूसु सत्तावासेसु च एकवीसतिया विपाकविञ्ञाणानं वुत्तनयेनेव पच्चयो होति यथासम्भवं पटिसन्धियं, पवत्ते च।

१०२ अपुञ्ञाभिसङ्खारो पन यस्मा एकस्मिं येव कामभवे, चतूसु योनिसु, अवसेसासु तीसु गतिसु, नानत्तकायएकत्तसञ्ञीसङ्खाताय एकिस्सा विञ्ञाणट्ठितिया, तादिसे येव च एकस्मिं सत्तावासे पटिसन्धिवसेन विपच्चति, तस्मा एस एकस्मि भवे, चतूसु योनिसु, तीसु गतिसु, एकिस्सा विञ्ञाणट्ठितिया, एकम्हि च सत्तावासे सत्तन्नं विपाकविञ्ञाणान वुत्तनयेनेव पच्चयो पटिसन्धियं, पवत्ते च।

१०३. आनेञ्जाभिसङ्खारो पन यस्मा एकस्मिं येव अरूपभवे, एकिस्मा ओपपातिकयोनिया, एकिस्सा देवगतिया, आकासानञ्चायतनादिकासु तीसु विञ्ञाणट्ठितिसु, आकासानञ्चायतनादिकेसु च चतूसु सत्तावासेसु पटिसन्धिवसेन विपच्चति, तस्मा एस एकस्मिं भवे, एकिस्सा योनिया, एकिस्सा गतिया, तीसु विञ्ञाणट्ठितिसु, चतूसु सत्तावासेसु चतुन्नं विञ्ञाणान वुत्तनयेनेव पच्चयो होति—पटिसन्धिय, पवत्ते चा ति। एव—

पटिसन्धिपवत्तीन वसेनेते भवादिसु।
विजानितब्बा सङ्खारा यथा येस च पच्चया ति॥

अयं "सङ्खारपच्चया विञ्ञाण" ति पदस्मिं वित्थारकथा॥

विञ्ञाणपच्चयानामरूपपदवित्थारकथा

१०४ 'विञ्ञाणपच्चया नामरूप'पदे—

विभागा नामरूपान भवादिसु पवत्तितो।
सङ्गहा पच्चयनया विञ्ञातब्बो विनिच्छयो॥

विभागा नामरूपानं ति। एत्थ हि **नामं** ति आरम्मणाभिमुखं नमनतो वेदनादयो तयो खन्धा। रूप ति चत्तारि महाभूतानि चतुन्नं च महाभूतान उपादायरूप। तेस विभागो **खन्धनिद्देसे** वुत्तो येवा ति। एव तावत्थ विभागो नामरूपान विञ्ञातब्बो विनिच्छयो। (१)

भवादिसु पवत्तितो ति। एत्थ च नामं एक सत्तावास ठपेत्वा सब्बभवयोनि-गति-विञ्ञाणट्ठिति-सेससत्तावासेसु पवत्तति। रूप द्वीसु भवेसु चतूसु योनिसु, पञ्चसु गतिसु, पुरिमासु चतूसु विञ्ञाणट्ठितिसु, पञ्चसु सत्तावासेसु पवत्तति।

१०५. एव पवत्तमाने च एतस्मिं नामरूपे यस्मा अभावकगब्भसेय्यकान अण्डजानं च पटिसन्धिक्खणे वत्थुकायदसकवसेन रूपतो द्वे सन्ततिसीसानि, तयो च अरूपिनो खन्धा पातुभवन्ति, तस्मा तेस वित्थारेन रूपरूपतो वीसति धम्मा, तयो च अरूपिनो खन्धा ति एते तेवीसति धम्मा "विञ्ञाणपच्चया नामरूपं" ति वेदितब्बा। अग्गहितग्गहणेन पन एकसन्ततिसीसतो नव रूपधम्मे

अपनेत्वा चुद्दस। सभावकानं भावदसकं पक्खिपित्वा तेत्तिंस। तेस पि अग्गहितग्गहणेन सन्ततिसीसद्वयतो अट्ठारस रूपधम्मे अपनेत्वा पन्नरस।

यस्मा च ओपपातिकसत्तेसु ब्रह्मकायिकादीन पटिसन्धिक्खणे चक्खु-सोत-वत्थुदसकानं जीवितिन्द्रियनवकस्स च वसेन रूपतो चत्तारि सन्ततिसीसानि, तयो च अरूपिनो खन्धा पातुभवन्ति, तस्मा तेसं वित्थारेन रूपरूपतो एकूनचत्तालीस धम्मा, तयो च अरूपिनो खन्धा ति एते द्वाचत्तालीस धम्मा "विञ्ञाणपच्चया नामरूप" ति वेदितब्बा। अग्गहितग्गहणेन पन सन्ततिसीसत्तयतो सत्तवीसति धम्मे अपनेत्वा पन्नरस।

१०६. कामभवे पन यस्मा सेसओपपातिकानं ससेदजान वा सभावकपरिपुण्णायतनानं पटिसन्धिक्खणे रूपतो सत्त सन्ततिसीसानि, तयो च अरूपिनो खन्धा पातुभवन्ति; तस्मा तेस वित्थारेन रूपरूपतो सत्तति धम्मा, तयो च अरूपिनो खन्धा ति एते तेसत्तति धम्मा 'विञ्ञाणपच्चया नामरूप' ति वेदितब्बा। अग्गहितग्गहणेन पन रूपसन्ततिसीसछक्कतो चतुपञ्ञास धम्मे अपनेत्वा एकूनवीसति। एस उक्कसो। अवकंसेन पन तंतरूपसन्ततिसीसविकलान तस्स तस्स वसेन हापेत्वा सङ्खेपतो वित्थारतो च पटिसन्धियं विञ्ञाणपच्चया नामरूपसङ्खा वेदितब्बा।

अरूपीनं पन तयो व अरूपिनो खन्धा। असञ्ञीन रूपतो जीवितिन्द्रियनवकमेवा ति। एस ताव पटिसन्धिय नयो।

१०७. पवत्ते पन सब्बत्थ रूपप्पवत्तिदेसे पटिसन्धिचित्तस्स ठितिक्खणे पटिसन्धिचित्तेन सह पवत्तउतुतो उतुसमुट्ठानं सुद्धट्ठक पातुभवति। पटिसन्धिचित्त पन रूप न समुट्ठापेति। त हि यथा पपाते पतितपुरिसो परस्स पच्चयो होतु न सक्कोति, एवं वत्थुदुब्बलताय दुब्बलत्ता रूप समुट्ठापेतु न सक्कोति। पटिसन्धिचित्ततो पन उद्ध पठमभवङ्गतो पभुति चित्तसमुट्ठानं सुद्धट्ठकं, सद्दपातुभावकाले पटिसन्धिक्खणतो उद्ध पवत्तउतुतो चेव चित्ततो च सद्दनवक।

ये पन कबळीकाराहारूपजीविनो गब्भसेय्यकसत्ता, तेसं—

"य चस्स भुञ्जती माता अन्न पान च भोजनं।
तेन सो तत्थ यापेति मातुकुच्छिगतो निरो" ॥ (स० १-२०७)

ति वचनतो मातरा अज्झोहरिताहारेन अनुगते सरीरे, ओपपातिकानं सब्बपठमं अत्तनो मुखगत खेळ अज्झोहरणकाले आहारसमुट्ठान सुद्धट्ठकं ति इदं आहारसमुट्ठानस्स सुद्धट्ठकस्स उतुचित्तसमुट्ठानानं च उक्कंसतो द्विन्न नवकानं वसेन छब्बीसतिविधं, पुब्बे एके कचित्तखणे तिक्खत्तु उप्पज्जमानं वुत्त कम्मसमुट्ठान च सत्ततिविध ति छन्नवुतिविधं रूपं, तयो च अरूपिनो खन्धा ति समासतो नवनवुति धम्मा।

यस्मा वा सद्दो अनियतो कदाचिदेव पातुभावतो, तस्मा दुविध पि तं अपनेत्वा इमे सत्तनवुतिधम्मा यथासम्भव सब्बसत्तानं विञ्ञाणपच्चया नामरूपं ति वेदितब्ब। तेसं हि सुत्तानं पि पमत्तानं पि खादन्तानं पिवन्तानं पि दिवा च रत्तिं च एते विञ्ञाणपच्चया पवत्तन्ति। तञ्च नेसं विञ्ञाणपच्चयभाव परतो वण्णयिस्साम।

यं पनेतमेत्थ कम्मजरूप, तं भव-योनि-गति-ठिति-सत्तावासेसु सब्बपठमं पतिट्ठहन्त पि तिसमुट्ठानिकरूपेन अनुपत्थद्धं न सक्कोति सण्ठातुं, नापि तिसमुट्ठानिक तेन अनुपत्थद्ध। अथ खो वातब्भाहता पि चतुद्दिमाववत्थापिता नळकलापियो विय उमिवेगब्भाहता पि महासमुद्दे कत्थचि लद्धपतिट्ठा भिन्नवाहनिका विय च, अञ्ञमञ्ञुपत्थद्धानेवेतानि अपतमानानि सण्ठहित्वा एक पि वस्स द्वे पि वस्सानि ''पे०'' वस्ससतं पि याव तेस सत्तानं आयुक्खयो वा पुञ्ञक्खयो वा, ताव पवत्तन्ती ति। एव भवादीसु पवत्तितो पेत्थ विञ्ञातब्बो विनिच्छयो। (२)

१०८ **सङ्गहा** ति। एत्थ च य अरूपे पवत्तिपटिसन्धीसु, पञ्चवोकारभवे च पवत्तिय विञ्ञाणपच्चया नाममेव, य च असञ्ञेसु सब्बत्थ, पञ्चवोकारभवे विञ्ञाणपच्चया रूपमेव, य च पञ्चवोकारभवे सब्बत्थ विञ्ञाणपच्चया नामरूप, त सब्बं नाम च रूप च नामरूप च नामरूप ति एवं एकदेससरूपेकसेसनयेन सङ्गहेत्वा विञ्ञाणपच्चया नामरूप ति वेदितब्ब।

१०९ असञ्ञेसु विञ्ञाणाभावा अयुत्त ति चे? नायुत्त। इद पि,

नामरूपस्स य हेतु विञ्ञाण त द्विधा मतं।
विपाकमविपाकं च युत्तमेव यतो इद॥

य हि नामरूपस्स हेतु विञ्ञाण, त विपाकाविपाकभेदतो द्वेधा मत। इद च असञ्ञसत्तेसु कम्मसमुट्ठानत्ता पञ्चवोकारभवे पवत्तअभिसङ्खारविञ्ञाणपच्चया रूप। तथा पञ्चवोकारे पवत्तियं कुसलादिचित्तक्खणे कम्मसमुट्ठानं ति युत्तमेव इदं। एव सङ्गहतो पेत्थ विञ्ञातब्बो विनिच्छयो। (३)

११० **पच्चयनया** ति। एत्थ हि—

नामस्स पाकविञ्ञाण नवधा होति पच्चयो।
वत्थुरूपस्स नवधा, सेसरूपस्स अट्ठधा॥
अभिसङ्खारविञ्ञाणं होति रूपस्स एकधा।
तदञ्ञ पन विञ्ञाण तस्स तस्स यथारह॥

यं हेत पटिसन्धियं पवत्तिय वा विपाकसङ्खात नामं, तस्स रूपमिस्सस्स वा अमिस्सस्स वा, पटिसन्धिकं वा अञ्ञं वा विपाकविञ्ञाण सहजात-अञ्ञमञ्ञ-निस्सय-सम्पयुत्त-विपाकाहारिन्द्रिय-अत्थि-अविगतपच्चयेहि नवधा पच्चयो होति।

वत्थुरूपस्स पटिसन्धियं सहजात-अञ्ञमञ्ञ-निस्सय-विपाकाहारिन्द्रियविप्प-युत्त-अत्थि-अविगतपच्चयेहि नवधा पच्चयो होति। ठपेत्वा पन वत्थुरूपं सेस-रूपस्स इमेसु नवसु अञ्ञमञ्ञपच्चय अपनेत्वा सेसेहि अट्ठहि पच्चयेहि पच्चयो होति।

अभिसङ्खारविञ्ञाणं पन असञ्ञसत्तरूपस्स वा पञ्चवोकारभवे वा कम्म-जस्स रूपस्स सुत्तन्तिकपरियायतो उपनिस्सयवसेन एकधा व पच्चयो होति। अवसेस पठमभवङ्गतो पभुति सब्बं पि विञ्ञाणं तस्स तस्स नामरूपस्स यथारह होती ति वेदितब्ब। वित्थारतो पन तस्स पच्चयनये दस्सियमाने सब्बा पि पट्ठानकथा वित्थारेतब्बा होती ति न नं आरभाम।

१११ तत्थ सिया—कथ पनेत जानितब्बं "पटिसन्धिनामरूप विञ्ञाण-पच्चया होती" ति ? सुत्ततो, युत्तितो च। सुत्ते हि "चित्तानुपरिवत्तिनो धम्मा" (अभि० १–११) ति आदिना नयेन बहुधा वेदनादीनं विञ्ञाणपच्चयता सिद्धा। युत्तितो पन—

चित्तजेन हि रूपेन इध दिट्ठेन सिज्झति।
अदिट्ठस्सा पि रूपस्स विञ्ञाण पच्चयो इति॥

चित्ते हि पसन्ने अप्पसन्ने वा तदनुरूपानि रूपानि उप्पज्जमानानि दिट्ठानि। दिट्ठेन च अदिट्ठस्मानुमान होती ति इमिना इध दिट्ठेन चित्तजरूपेन अदिट्ठस्सा पि पटिसन्धिरूपस्स विञ्ञाण पच्चयो होतो ति जानितब्बमेत। कम्मसमुट्ठानस्सा पि हि तस्स चित्तसमुठ्ठानस्सेव विञ्ञाणपच्चयता **पट्ठाने** आगता (अभि० ७ · १–२०) ति। एवं पच्चयनयतो पेत्थ विञ्ञातब्बो विनिच्छयो ति।(४)

अयं 'विञ्ञाणपच्चया नामरूपं' ति पदस्मिं वित्थारकथा॥

नामरूपपच्चयासळायतनपदवित्थारकथा

११२. 'नामरूपपच्चया सळायतन'पदे—

नामं खन्धत्तयं रूपं भूतवत्थादिकं मतं।
कतेकसेसं तं तस्स तादिसस्सेव पच्चयो॥

यं हेतं सळायतनस्सेव पच्चयभूत नामरूप, तत्थ नाम ति वेदनादिक्खन्धत्तय, रूप पन ससन्ततिपरियापन्नं नियमतो चत्तारि भूतानि, छ वत्थूनि, जीवितिन्द्रिय ति एव भूतवत्थादिक मतं ति वेदितब्ब। तं पन नामं च रूपं च न्धनरूपं च नामरूप ति एवं कतेकसेसं छट्ठायतन च सळायतन च सळायतनं ति एवं कतेकसेसस्सेव सळायतनस्स पच्चयो ति वेदितब्ब। कस्मा ? यस्मा आरुप्पे

नाममेव पच्चयो, तं च छट्ठायतनस्सेव, न अञ्ञस्स। "नामपच्चया छट्ठायतनं" (अभि० २-२२४) ति हि **विभङ्गे** वुत्तं।

११३ तत्थ सिया—कथ पनेतं जानितब्बं—"नामरूपं सळायतनस्स पच्चयो" ति? नामरूपभावे भावतो। तस्स तस्स हि नामस्स रूपस्स च भावे त त आयतन होति, न अञ्ञथा। सा पनस्स तब्भावभाविता पच्चयनयस्मि येव आविभविस्सति। तस्मा—

पटिसन्धियं पवत्ते वा होति य यस्स पच्चयो।
यथा च पच्चयो होति तथा नेय्य विभाविना॥

तत्रायं अत्थदीपना—

नाममेव हि आरुप्पे पटिसन्धिपवत्तिसु।
पच्चयो सत्तधा छधा होति तं अवकसतो॥

कथ? **पटिसन्धियं** ताव अवकसतो सहजातअञ्ञमञ्ञनिस्सयसम्पयुत्त-विपाकअत्थिअविगतपच्चयेहि सत्तधा नामं छट्ठायतनस्स पच्चयो होति। किञ्चि पनेत्थ हेतुपच्चयेन, किञ्चि आहारपच्चयेना ति एव अञ्ञथा पि पच्चयो होति। तस्स वसेन उक्कंसावकसो वेदितब्बो।

११४. **पवत्ते पि** विपाक वुत्तनयेनेव पच्चयो होति। इतर पन अवकसतो वुत्तप्पकारेसु पच्चयेसु विपाकपच्चयवज्जेहि छहि पच्चयेहि पच्चयो होति। किञ्चि पनेत्थ हेतुपच्चयेन, किञ्चि आहारपच्चयेना ति एव अञ्ञथा पि पच्चयो होति। तस्स वसेन उक्कसावकसो वेदितब्बो।

अञ्ञस्मि पि भवे नाम तथेव पटिसन्धियं।
छट्ठस्स इतरेस तं छहाकारेहि पच्चयो॥

आरुप्पतो हि अञ्ञस्मि पि पञ्चवोकारभवे तं विपाक नाम हदयवत्थुनो सहाय हुत्वा छट्ठस्स मनायतनस्स यथा आरुप्पे वुत्त, तथेव अवकसतो सत्तधा पच्चयो होति। इतरेसं पन त पञ्चन्न चक्खायतनादीनं चातुमहाभूतसहायं हुत्वा सहजात-निस्सय-विपाक-विप्पयुत्त-अविगतवसेन छहाकारेहि पच्चयो होति। किञ्चि पनेत्थ हेतुपच्चयेन, किञ्चि आहारपच्चयेना ति एव अञ्ञथा पि पच्चयो होति। तस्स वसेन उक्कंसावकसो वेदितब्बो।

पवत्ते पि तथा होति पाकं पाकस्स पच्चयो।
अपाकं अविपाकस्स छधा छट्ठस्स पच्चयो॥

पवत्ते पि हि पञ्चवोकारभवे यथा पटिसन्धियं, तथेव विपाकनाम विपाकस्स छट्ठायतनस्स अवकसतो सत्तधा पच्चयो होति। अविपाक पन अविपाकस्स

छट्ठस्स अवकंसतो व ततो विपाकपच्चयं अपनेत्वा छधा पच्चयो होति। वुत्तनयेनेव पनेत्थ उक्कंसावकसो वेदितब्बो।

११५ तत्थेव सेसपञ्चन्नं विपाक पच्चयो भवे।
चतुधा अविपाक पि एवमेव पकासितं॥

तत्थेव हि पवत्ते सेसानं चक्खायतनादीनं पञ्चन्न चक्खुपसादादिवत्थुकं इतरं पि विपाकनामं पच्छाजात-विप्पयुत्त-अत्थि-अविगतपच्चयेहि चतुधा पच्चयो होति। यथा च विपाकं अविपाक पि एवमेव पकासितं। तस्मा कुसलादिभेद पि तेस चतुधा पच्चयो होती ति वेदितब्ब। एव ताव नाममेव पटिसन्धिय पवत्ते वा यस्स यस्स आयतनस्स पच्चयो होति, यथा च पच्चयो होति, तथा वेदितब्ब।

११६. रूपं पनेत्थ आरुप्पे भवे भवति पच्चयो।
न एकायतनस्सा पि पञ्चक्खन्धभवे पन॥
रूपतो सन्धियं वत्थु छधा छट्ठस्स पच्चयो।
भूतानि चतुधा होन्ति पञ्चन्नं अविसेसतो॥

रूपतो हि पटिसन्धियं वत्थुरूपं छट्ठस्स मनायतनस्स सहजात-अञ्ञमञ्ञ-निस्सय-विप्पयुत्त-अत्थि-अविगतपच्चयेहि छधा पच्चयो होति। चत्तारि पन भूतानि अविसेसतो पटिसन्धियं पवत्ते च य यं आयतन उप्पज्जति, तस्स तस्स वसेन पञ्चन्न पि चक्खायतनादीन सहजात-निस्सय-अत्थि-अविगतपच्चयेहि चतुधा पच्चया होन्ति।

११७ तिधा जीवितमेतेसं आहारो च पवत्तिय।
तानेव छधा छट्ठस्स वत्थु तस्सेव पञ्चधा॥

एतेस पन चक्खादीनं पञ्चन्नं पटिसन्धियं पवत्ते च अत्थि-अविगत-इन्द्रिय-वसेन रूपजीवितं तिधा पच्चयो होति। आहारो च अत्थि-अविगताहारवसेन ति धा व पच्चयो होति। सो च खो ये सत्ता आहारूपजीविनो, तेसं आहारानुगते काये पवत्तियं येव, नो पटिसन्धियं। तानि पन पञ्च चक्खायतनादीनि छट्ठस्स चक्खुसोतघानजिव्हाकायविञ्ञाणसङ्खतस्स मनायतनस्स निस्सयपुरेजातइन्द्रिय-विप्पयुत्तअत्थिअविगतवसेन छहाकारेहि पच्चया होन्ति पवत्ते, नो पटिसन्धियं। ठपेत्वा पन पञ्च विञ्ञाणानि, तस्सेव अवसेसमनायतनस्स वत्थुरूपं निस्सय-पुरेजात-विप्पयुत्त-अत्थि-अविगतवसेन पञ्चधा पच्चयो होति पवत्ते येव, नो पटिसन्धियं। एवं रूपमेव पटिसन्धिय पवत्ते वा यस्स यस्स आयतनस्स पच्चयो होति, यथा च पच्चयो होति, तथा वेदितब्बं।

नामरूपं पनुभयं होति यं यस्स पच्चयो।
यथा च, तं पि सब्बत्थ विञ्ञातब्बं विभाविना॥

सेय्यथीद—पटिसन्धिय ताव पञ्चवोकारभवे खन्धत्तयवत्थुरूपसङ्खात छट्ठायतनस्स सहजात-अञ्ञमञ्ञ-निस्सय-विपाकसम्पयुत्त-विप्पयुत्त-अत्थि-अविगतपच्चयादीहि पच्चयो होती ति इदमेत्थ मुखमत्त। वुत्तनयानुसारेन पन सक्का सब्बं योजेतु ति न एत्थ वित्थारो दस्सितो ति ॥

अयं 'नामरूपपच्चया सळायतनं' ति पदस्मि वित्थारकथा ॥

सळायतनपच्चयाफस्सपदवित्थारकथा

११८. 'सळायतनपच्चया फस्स'पदे—

सळेव फस्सा सङ्खेपा चक्खुसम्फस्सआदयो।
विञ्ञाणमिव बात्तिस वित्थारेन भवन्ति ते ॥

सङ्खेपेन हि **सळायतनपच्चया फस्सो** ति चक्खुसम्फस्सो, सोतसम्फस्सो, घानसम्फस्सो, जिव्हासम्फस्सो, कायसम्फस्सो, मनोसम्फस्सो—ति इमे चक्खुसम्फस्सादयो छ एव फस्सा भवन्ति। वित्थारेन पन चक्खुसम्फस्सादयो पञ्च कुसलविपाका, पञ्च अकुसलविपाका ति दस, सेसा बावीसतिलोकियविपाकविञ्ञाणसम्पयत्ता च बावीसती ति एव सब्बे पि सङ्खारपच्चया वुत्तविञ्ञाणमिव बात्तिस होन्ति।

११९. यं पनेतस्स बात्तिसविधस्सा पि फस्सस्स पच्चयो सळायतनं, तत्थ—

छट्ठेन सह अज्झत्ता चक्खादि, बाहिरेहि पि।
सळायतनमिच्छन्ति छहि सद्धि विचक्खणा ॥

तत्थ ये ताव "उपादिण्णकपवत्तिकथा अय" ति सकसन्ततिपरियापन्नमेव पच्चयं पच्चयुप्पन्नं च दीपेन्ति, ते छट्ठायतनपच्चया फस्सो" (अभि० २–२२४) ति पाळिअनुसारतो आरुप्पे छट्ठायतन च, अञ्ञत्थ सब्बसङ्गहतो सळायतन च फस्सस्स पच्चयो ति एकदेससरूपेकसेसं कत्वा छट्ठेन सह अज्झत्ता चक्खादिं सळायतन ति इच्छन्ति। तं हि छट्ठायतन च सळायतन च सळायतन त्वेव सङ्खं गच्छन्ति।

ये पन पच्चयुप्पन्नमेव एकसन्ततिपरियापन्नं दीपेन्ति, पच्चयं पन भिन्नसन्तानं पि, ते य य आयतनं फस्सस्स पच्चयो होति, तं सब्बं पि दीपेन्ता बाहिरं पि परिग्गहेत्वा तदेव छट्ठेन सह अज्झत्तं, बाहिरेहि पि रूपायतनादीहि सद्धि सळायतनं ति इच्छन्ति। त पि हि छट्ठायतन च सळायतन च सळायतनं ति एतेसं एकसेसे कते सळायतनं त्वेव सङ्खं गच्छति।

१२०. एत्थाह—न सब्बायतनेहि एको फस्सो सम्भोति, नापि एकम्हा

आयतना सब्बे फस्सा। अय च सळायतनपच्चया फस्सो ति एको व वुत्तो, सो कस्मा ति ?

तत्रिद विस्सज्जन—सच्चमेत, सब्बेहि एको, एकम्हा वा सब्बेन न सम्भोन्ति। सम्भोति पन अनेकेहि एको। यथा चक्खुसम्फस्सो चक्खायतना रूपायतना चक्खुविञ्ञाणसङ्खाता मनायतना अवसेससम्पयुत्तधम्मायतना चा ति एव सब्बत्थ यथानुरूप योजेतब्बं। तस्मा एव हि—

एको पनेकायतनप्पभवो इति दीपितो।
फस्सोयं एकवचननिद्देसेनिध तादिना॥

एकवचननिद्देसेना ति। 'सळायतनपच्चया फस्सो' ति इमिना एकवचन-निद्देसेन अनेकेहि आयतनेहि एको फस्सो होतो ति तादिना दीपितो ति अत्थो।

१२१. आयतनेसु पन—

छधा पञ्च, ततो एक नवधा, बाहिरानि छ।
यथासम्भवमेतस्स पच्चयत्ते विभावये॥

तत्राय विभावना—चक्खायतनादीनि ताव पञ्च चक्खुसम्फस्सादिभेदतो पञ्चविधस्स फस्सस्स निस्सय-पुरेजातिन्द्रिय-विप्पयुत्त-अत्थि-अविगतवसेन छधा पच्चया होन्ति। ततो परं एकं विपाकमनायतन अनेकभेदस्स विपाकमनो-सम्फस्सस्स सहजात-अञ्ञमञ्ञ-निस्सय-विपाक-आहार-इन्द्रिय-सम्पयुत्त-अत्थि-अविगतवसेन नवधा पच्चयो होति। बाहिरेसु पन रूपायतन चक्खुसम्फस्सस्स आरम्मण-पुरेजात-अत्थि-अविगतवसेन चतुधा पच्चयो होति। तथा सद्दायतना-दीनि सोतसम्फस्सादीन, मनोसम्फस्सस्स पन तानि च धम्मायतन च तथा च आरम्मणपच्चयमत्तेनेव चा ति एव बाहिरानि छ यथासम्भवमेतस्स पच्चयत्ते विभावये ति॥

अयं 'सळायतनपच्चया फस्सो' ति पदस्मिं वित्थारकथा॥

फस्सपच्चयावेदनापदवित्थारकथा

१२२. 'फस्सपच्चया वेदना'पदे—

द्वारतो वेदना वुत्ता चक्खुसम्फस्सजादिका।
सळेव ता पभेदेन एकूननवुती मता॥

एतस्स पि पदस्स विभङ्गे "चक्खुसम्फस्सजा वेदना, सोत घान · जिव्हा·· काय····मनोसम्फस्सजा वेदना" (अभि० २–१७४) ति एव द्वारतो सळेव वेदना वुत्ता, ता पन पभेदेन एकूननवुतिया चित्तेहि सम्पयुत्तत्ता एकूननवुति मता।

वेदनासु पनेतासु इध बत्तिस वेदना।
विपाकचित्तयुत्ता व अधिप्पेता ति भासिता ॥
अट्ठधा तत्थ पञ्चन्नं पञ्चद्वारम्हि पच्चयो।
सेसानं एकधा फस्सो मनोद्वारे पि सो तथा ॥

तत्थ हि पञ्चद्वारे चक्खुपसादादिवत्थुकानं पञ्चन्नं वेदनान चक्खुसम्फस्सादिको फस्सो सहजातअञ्ञमञ्ञनिस्सयविपाकआहारसम्पयुत्तअत्थिअविगतवसेन अट्ठधा पच्चयो होति। सेसानं पन एकस्मिं द्वारे सम्पटिच्छन-सन्तीरण-तदारम्मणवसेन पवत्तानं कामावचरविपाकवेदनान सो चक्खुसम्फस्सादिको फस्सो उपनिस्सयवसेन एकधा व पच्चयो होति।

१२३ **मनोद्वारे पि सो तथा** ति। मनोद्वारे पि हि तदारम्मणवसेन पवत्तानं कामावचरविपाकवेदनान सो सहजातमनोसम्फस्ससङ्खातो फस्सो तथेव अट्ठधा पच्चयो होति, पटिसन्धि-भवङ्ग-चुतिवसेन पवत्तानं तेभूमकविपाकवेदनानं पि। या पन ता मनोद्वारे तदारम्मणवसेन पवत्ता कामावचरवेदना, तासं मनोद्वारावज्जनसम्पयुत्तो मनोसम्फस्सो उपनिस्सयवसेन एकधा व पच्चयो होता ति ॥

अय 'फस्सपच्चया वेदना' ति पदस्मिं वित्थारकथा ॥

वेदनापच्चयातण्हापदवित्थारकथा

१२४ 'वेदनापच्चया तण्हा'पदे—

रूपतण्हादिभेदेन छ तण्हा इध दीपिता।
एकेका तिविधा तत्थ पवत्ताकारतो मता ॥

इमस्मिं हि पदे सेट्ठिपुत्तो ब्राह्मणपुत्तो ति पितितो नामवसेन पुत्तो विय "रूपतण्हा, सद्द गन्ध··रस··फोट्ठब्ब··धम्मतण्हा" (अभि० २–१७४) ति आरम्मणतो नामवसेन **विभङ्गे** छ तण्हा दीपिता।

तासु च पन तण्हासु एकेका तण्हा पवत्तिआकारतो कामतण्हा, भवतण्हा, विभवतण्हा ति एव तिविधा मता। रूपतण्हा येव हि यदा चक्खुस्स आपाथमागत रूपारम्मणं कामस्सादवसेन अस्सादयमाना पवत्तति, तदा **कामतण्हा** नाम होति। यदा तदेवारम्मणं "धुवं सस्सत" ति पवत्ताय सस्सतदिट्ठिया सद्धिं पवत्तति, तदा **भवतण्हा** नाम होति। सस्सतदिट्ठिसहगतो हि रागो भवतण्हा ति वुच्चति। यदा पन तदेवारम्मणं "उच्छिज्जति विनस्सती" ति पवत्ताय उच्छेददिट्ठिया सद्धिं पवत्तति, तदा **विभवतण्हा** नाम होति। उच्छेददिट्ठिसहगतो हि रागो विभवतण्हा ति वुच्चति। एस नयो सद्दतण्हादीसु पी ति। एता अट्ठारस तण्हा होन्ति।

ता अज्झत्तरूपादीसु अट्ठारस, बहिद्धा अट्ठारसा ति छत्तिंस। इति अतीता छत्तिंस, अनागता छत्तिंस, पच्चुप्पन्ना छत्तिंसा ति अट्ठसतं तण्हा होन्ति। ता पुन सङ्खिप्पमाना रूपादिआरम्मणवसेन छ, कामतण्हादिवसेन वा तिस्सो व तण्हा होन्ती ति वेदितब्बा।

यस्मा पनिमे सत्ता, पुत्तं अस्सादेत्वा पुत्ते ममत्तेन धातिया विय, रूपादिआरम्मणवसेन उप्पज्जमानं वेदनं अस्सादेत्वा वेदनाय ममत्तेन रूपादिआरम्मणदायकानं चित्तकार-गन्धब्ब-गन्धिक-सूद-तन्तवाय-रसायनविधायकवेज्जादीनं महासक्कारं करोन्ति। तस्मा सब्बा पेसा वेदनापच्चया तण्हा होती ति वेदितब्बा।

१२६ यस्मा चेत्थ अधिप्पेता विपाकसुखवेदना।
एका व एकधा वेसा तस्मा तण्हाय पच्चयो॥

एकधा ति। उपनिस्सयपच्चयेन पच्चयो होति। यस्मा वा—

दुक्खी सुखं पत्थयति सुखी भिय्यो पि इच्छति।
उपेक्खा पन सन्तत्ता सुखमिच्चेव भासिता॥
तण्हाय पच्चया तस्मा होन्ति तिस्सो पि वेदना।
वेदनापच्चया तण्हा इति वुत्ता महेसिना॥
वेदनापच्चया चापि यस्मा नानुसयं विना।
होति तस्मा न सा होति ब्राह्मणस्स वुसीमतो[1] ति॥

अयं 'वेदनापच्चया तण्हा' ति पदस्मिं वित्थारकथा॥

तण्हापच्चयाउपादानपदवित्थारकथा

१२७. 'तण्हापच्चया उपादानं'पदे—

उपादानानि चत्तारि तानि अत्थविभागतो।
धम्मसङ्खेपवित्थारा कमतो च विभावये॥

तत्रायं विभावना—कामुपादानं, दिट्ठुपादानं, सीलब्बतुपादानं, अत्तवादुपादानं ति इमानि तावेत्थ चत्तारि उपादानानि।

तेसं अयं **अत्थविभागो**—वत्थुसङ्खातं कामं उपादियती ति कामुपादानं। कामो च सो उपादानं चा ति पि **कामुपादानं**। उपादानं ति दळ्हग्गहणं। दळ्हत्थो हि एत्थ उपसद्दो, उपायास-उपकुट्ठादीसु विय। तथा दिट्ठि च सा

१. **वुसीमतो** ति। वुसितवतो वुसितब्रह्मचरियवासस्सा ति अत्थो। वुस्सती ति वा वुसी ति मग्गो वुच्चति, सो एतस्स वुत्थो अत्थी ति **वुसीमा**, उक्कट्ठनिद्देसेन अरहा। अग्गफलं वा परिनिट्ठितवासत्ता "वुसी" ति वुच्चति, तं एतस्स अत्थी ति **वुसीमा**।

उपादानं चा ति दिट्ठुपादानं। दिट्ठिं उपादियती ति वा **दिट्ठुपादानं।** "सस्सतो अत्ता च लोको चा" (दी० १-१३) ति आदीसु हि पुरिमदिट्ठिं उत्तरदिट्ठि उपादियति। तथा सीलब्बतं उपादियती ति सीलब्बतुपादान। सीलब्बतं च त उपादान चा ति पि **सीलब्बतुपादानं।** गोसील-गोवतादीनि हि "एवं सुद्धी" ति अभिनिवेसतो सयमेव उपादानानि। तथा वदन्ति एतेना ति वादो। उपादियन्ति एतेना ति उपादानं। किं वदन्ति उपादियन्ति वा ? अत्तानं। अत्तनो वादुपादान अत्तवादुपादान। अत्तवादमत्तमेव वा अत्ता ति उपादियन्ति एतेना ति **अत्तवादुपादानं।** अय ताव तेस **अत्थविभागो।**

१२८. **धम्मसङ्खेपवित्थारे** पन कामुपादानं ताव "तत्थ कतमं कामुपादान ? यो कामेसु कामच्छन्दो कामरागो कामनन्दि कामतण्हा कामस्नेहो कामपरिळाहो काममुच्छा कामज्झोसानं—इदं वुच्चति कामुपादान" (अभि० १-२६७) ति आगतत्ता सङ्खेपतो तण्हादळ्हत्तं वुच्चति। तण्हादळ्हत्तं नाम पुरिमतण्हाउपनिस्सयपच्चयेन दळ्हसम्भूता उत्तरतण्हा व। केचि पनाहु—"अप्पत्तविसयपत्थना तण्हा, अन्धकारे चोरस्स हत्थप्पसारणं विय, सम्पत्तविसयग्गहण उपादान, तस्सेव भण्डग्गहणं विय। अप्पिच्छतासन्तुट्ठि-पटिपक्खा च ते धम्मा, तथा परियेसनारक्खदुक्खमूला ति। सेसुपादानत्तयं पन सङ्खेपतो दिट्ठिमत्तमेव।

१२९ वित्थारतो पन, पुब्बे रूपादीसु वुत्तअट्ठसतप्पभेदाय पि तण्हाय दळ्हभावो कामुपादानं। दसवत्थुका मिच्छादिट्ठि दिट्ठुपादान। यथाह—"तत्थ कतमं दिट्ठुपादानं ? नत्थि दिन्नं, नत्थि यिट्ठ पे०· सच्छिकत्वा पवेदेन्ती ति या एवरूपा दिट्ठि····पे०· ·विपरियेसग्गाहो—इदं वुच्चति दिट्ठुपादान" (अभि० १-२६७) ति। सीलब्बतेहि सुद्धी ति परामसनं पन सीलब्बतुपादानं। यथाह—"तत्थ कतमं सीलब्बतुपादानं ? सीलेन सुद्धि, वतेन सुद्धि सीलब्बतेन सुद्धी ति या एवरूपा दिट्ठि····पे०····विपरियेसग्गाहो—इदं वुच्चति सीलब्बतुपादानं" (अभि० १-२६७) ति। वीसतिवत्थुका सक्कायदिट्ठि अत्तवादुपादानं। यथाह—"तत्थ कतमं अत्तवादुपादानं ? इध अस्सुतवा पुथुज्जनो पे०···सप्पुरिसधम्मे अविनीतो रूपं अत्ततो समनुपस्सति ·पे०· विपरियेसग्गाहो—इदं वुच्चति अत्तवादुपादानं" (अभि० १-२६७) ति। अयमेत्थ धम्मसङ्खेपवित्थारो।

१३०. **कमतो** ति। एत्थ पन तिविधो कमो—उप्पत्तिक्कमो, पहानक्कमो, देसनाक्कमो च। तत्थ अनमतग्गे संसारे इमस्स पठमं उप्पत्ती ति अभावतो किलेसानं निप्परियायेन उप्पत्तिक्कमो न वुच्चति। परियायेन पन येभुय्येन एकस्मिं भवे अत्तग्गाहपुब्बङ्गमो सस्सतुच्छेदाभिनिवेसो, ततो "सस्सतो अयं अत्ता" ति गण्हतो अत्तविसुद्धत्थं सीलब्बतुपादानं, "उच्छिज्जती" ति गण्हत

परलोकनिरपेक्खस्स कामुपादानं ति एवं पठमं अत्तवादुपादानं, ततो दिट्ठि-सीलब्बत-कामुपादानानी ति अयमेतेसं एकस्मिं भवे उप्पत्तिक्कमो।

१३१ दिट्ठुपादानादीनि चेत्थ पठमं पहीयन्ति सोतापत्तिमग्गवज्झत्ता, कामुपादानं पच्छा अरहत्तमग्गवज्झत्ता ति अयमेतेसं पहानक्कमो।

१३२. महाविसयत्ता पन पाकटत्ता च एतेसु कामुपादानं पठमं देसितं। महाविसयं हि तं अट्ठचित्तसम्पयोगा, अप्पविसयानि इतरानि चतुचित्तसम्पयोगा। येभुय्येन च आलयरामत्ता पजाय पाकटं कामुपादानं, न इतरानि। कामु-पादानवा कामानं समधिगमत्थं कोतूहलमङ्गलादिबहुलो होति। सास्स दिट्ठी ति तदनन्तरं दिट्ठुपादानं। तं पभिज्जमानं सीलब्बत-अत्तवादुपादानवसेन दुविधं होति। तस्मिं द्वये गोकिरियं कुक्कुरकिरियं वा दिस्वा पि वेदितब्बतो ओळारिकं ति सीलब्बतुपादानं पठमं देसितं। सुखुमत्ता अन्ते अत्तवादुपादानं ति अयमेतेसं देसनाक्कमो।

तण्हा च पुरिमस्सेत्थ एकधा होति पच्चयो।
सत्तधा अट्ठधा वा पि होति सेसत्तयस्स सा॥

एत्थ च एवं देसिते उपादानचतुक्के पुरिमस्स कामुपादानस्स कामतण्हा उपनिस्सयवसेन एकधा व पच्चयो होति, तण्हाभिनन्दितेसु विसयेसु उप्पत्तितो। सेसत्तयस्स पन सहजात-अञ्ञमञ्ञ-निस्सय-सम्पयुत्त-अत्थि-अविगत-हेतुवसेन सत्तधा वा, उपनिस्सयेन सह अट्ठधा वा पि पच्चयो होति। यदा च सा उप-निस्सयवसेन पच्चयो होति, तदा असहजाता व होती ति॥

अयं 'तण्हापच्चया उपादानं' ति पदस्मिं वित्थारकथा॥

उपादानपच्चयाभवपदवित्थारकथा

१३३. 'उपादानपच्चया भव'पदे—

अत्थतो धम्मतो चेव सात्थतो भेदसङ्गहा।
यं यस्स पच्चयो चेव विञ्ञातब्बो विनिच्छयो॥

१३४ तत्थ भवती ति **भवो**। सो कम्मभवो, उपपत्तिभवो चा ति दुविधो होति। यथाह—"भवो दुविधेन—अत्थि कम्मभवो, अत्थि उपपत्तिभवो" (अभि० २–१७५) ति। तत्थ कम्ममेव भवो कम्मभवो, तथा उपपत्ति येव भवो उपपत्ति-भवो। एत्थ च उपपत्ति, भवती ति भवो। कम्मं पन यथा सुखकारणत्ता "सुखो बुद्धानं उप्पादो" (खु० १–३५) ति वुत्तो, एवं भवकारणत्ता फलवोहारेन भवो ति वेदितब्बं ति। एवं तावेत्थ **अत्थतो** विञ्ञातब्बो विनिच्छयो। (१)

१३५. **धम्मतो** पन कम्मभवो ताव सङ्खेपतो चेतना चेव चेतनासम्पयुत्ता च

अभिज्झादयो कम्मसङ्खाता धम्मा। यथाह—"तत्थ कतमो कम्मभवो? पुञ्ञाभिसङ्खारो, अपुञ्ञाभिसङ्खारो, आनेञ्जाभिसङ्खारो, परित्तभूमको वा महाभूमको वा—अय वुच्चति कम्मभवो। सब्ब पि भवगामिकम्मं कम्मभवो" (अभि० २–१७५) ति।

एत्थ हि पुञ्ञाभिङ्खारो ति तेरस चेतना। अपुञ्ञाभिसङ्खारो ति द्वादस। आनेञ्जाभिसङ्खारो ति चतस्सो चेतना। एवं परित्तभूमको वा महाभूमको वा ति एतेन तास येव चेतनानं मन्दबहुविपाकता वुत्ता। सब्ब पि भवगामिकम्म ति इमिना पन चेतनासम्पयुत्ता अभिज्झादयो वुत्ता।

१३६ उपपत्तिभवो पन सङ्खेपतो कम्माभिनिब्बत्ता खन्धा, पभेदतो नवविधो होति। यथाह—"तत्थ कतमो उपपत्तिभवो? कामभवो, रूपभवो, अरूपभवो, सञ्ञाभवो, असञ्ञाभवो, नेवसञ्ञानासञ्ञाभवो, एकवोकारभवो, चतुवोकारभवो, पञ्चवोकारभवो—अय वुच्चति उपपत्तिभवो" (अभि० २–१७५) ति।

तत्थ कामसङ्खातो भवो **कामभवो**। एस नयो **रूपारूपभवेसु**। सञ्ञा व त भवो, सञ्ञा वा एत्थ भवे अत्थी ति **सञ्ञाभवो**। विपरियायेन **असञ्ञाभवो**। ओळारिकसञ्ञाय अभावा सुखुमाय च भावा नेवसञ्ञानासञ्ञा अस्मि भवे ति **नेवसञ्ञानासञ्ञाभवो**। एकेन रूपक्खन्धेन वोकिण्णो भवो एकवोकारभवो। एको वा वोकारो अस्स भवस्सा ति एकवोकारभवो। एस नयो **चतुवोकारपञ्चवोकारभवेसु**।

तत्थ कामभवो पञ्च उपादिण्णक्खन्धा, तथा रूपभवो, अरूपभवो चत्तारो, सञ्ञाभवो पञ्च, असञ्ञाभवो एको उपादिण्णक्खन्धो। नेवसञ्ञानासञ्ञाभवो चत्तारो। एकवोकारभवादयो एक-चतु-पञ्चक्खन्धा उपादिण्णक्खन्धेहि ति। एवमेत्थ धम्मतो पि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो। (२)

१३७. **सात्थतो** ति। यथा च भवनिद्देसे, तथेव कामं सङ्खारनिद्देसे पि पुञ्ञाभिसङ्खारादयो व वुत्ता, एवं सन्ते पि पुरिमे अतीतकम्मवसेन इध पटिसन्धिया पच्चयत्ता, इमे पच्चुप्पन्नकम्मवसेन आयतिं पटिसन्धिया पच्चयत्ता ति पुन वचनं सात्थकमेव। पुब्बे वा "तत्थ कतमो पुञ्ञाभिसङ्खारो? कुसला चेतना कामावचरा" (अभि० २–१७३) ति एवमादिना नयेन चेतना व सङ्खारा ति वुत्ता। इध पन "सब्ब पि भवगामिकम्म" (अभि० २–१७५) ति वचनतो चेतनासम्पयुत्ता पि। पुब्बे च विञ्ञाणपच्चयमेव कम्मं "सङ्खारा" ति वुत्त, इदानि असञ्ञाभवनिब्बत्तक पि।

किं वा बहुना, "अविज्जपच्चया सङ्खारा" ति एत्थ पुञ्ञाभिसङ्खारादयो व कुसलाकुसला धम्मा वुत्ता। "उपादानपच्चया भवो" ति इध पन उपपत्तिभवस्सा

पि सङ्गहितत्ता कुसलाकुसलाब्याकता धम्मा वुत्ता। तस्मा सब्बथा पि सात्थकमेविदं पुन वचनं ति। एवमेत्थ सात्थतो पि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो। (३)

१३८ **भेदसङ्गहा** ति। उपादानपच्चया भवस्स भेदतो चेव सङ्गहतो च। यं हि कामुपादानपच्चया कामभवनिब्बत्तकं कम्मं करीयति, सो कम्मभवो। तदभिनिब्बत्ता खन्धा उपपत्तिभवो। एस नयो रूपारूपभवेसु। एवं कामुपादानपच्चया द्वे कामभवा तदन्तोगधा च सञ्ञाभव-पञ्चवोकारभवा, द्वे रूपभवा तदन्तोगधा च सञ्ञाभव-असञ्ञाभव-एकवोकारभव-पञ्चवोकारभवा, द्वे अरूपभवा तदन्तोगधा च सञ्ञाभव-नेवसञ्ञानासञ्ञाभव-चतुवोकारभवा ति सद्धिं अन्तोगधेहि छ भवा। यथा च कामुपादानपच्चया सद्धिं अन्तोगधेहि छ भवा, तथा सेसुपादानपच्चया पी ति। एव उपादानपच्चया **भेदतो** सद्धिं अन्तोगधेहि चतुवीसति भवा। (४)

सङ्गहतो पन कम्मभवं उपपत्तिभव च एकतो कत्वा कामुपादानपच्चया सद्धिं अन्तोगधेहि एको कामभवो। तथा रूपारूपभवा ति तयो भवा। तथा सेसुपादानपच्चया पी ति। एवं उपादानपच्चया सङ्गहतो सद्धिं अन्तोगधेहि द्वादस भवा।

१३९. अपि च अविसेसेन उपादानपच्चया कामभवूपगं कम्मं कम्मभवो, तदभिनिब्बत्ता खन्धा उपपत्तिभवो। एस नयो रूपारूपभवेसु। एव उपादानपच्चया सद्धिं अन्तोगधेहि द्वे कामभवा, द्वे रूपभवा, द्वे अरूपभवा ति अपरेन परियायेन सङ्गहतो छ भवा। कम्मभव-उपपत्तिभवभेद वा अनुपगम्म सद्धिं अन्तोगधेहि कामभवादिवसेन तयो भवा होन्ति। कामभवादिभेदं पि अनुपगम्म कम्मभव-उपपत्तिभववसेन द्वे भवा होन्ति। कम्मुपपत्तिभेद चा पि अनुपगम्म उपादानपच्चया भवो ति भववसेन एको व भवो होती ति। एवमेत्थ उपादानपच्चयस्स भवस्स भेदसङ्गहा पि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो। (५)

१४०. **यं यस्स पच्चयो चेवा** ति। यं चेत्थ उपादानं यस्स पच्चयो होति, ततो पि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो ति अत्थो। किं पनेत्थ कस्स पच्चयो होति? यं किञ्चि यस्स कस्सचि पच्चयो होति येव। उम्मत्तको विय हि पुथुज्जनो। सो 'इदं युत्तं, इदं अयुत्तं' ति अविचारेत्वा यस्स कस्सचि उपादानस्स वसेन यं किञ्चि भवं पत्थेत्वा यं किञ्चि कम्मं करोति येव। तस्मा यदेकच्चे सीलब्बतुपादानेन रूपारूपभवा न होन्ती ति वदन्ति, तं न गहेतब्ब। सब्बेन पन सब्बो होती ति गहेतब्बं।

१४१. सेय्यथीदं—इधेकच्चो अनुस्सववसेन वा दिट्ठानुसारेन वा "कामा नामेते मनुस्सलोके चेव खत्तियमहासालकुलादीसु, छ कामावचरदेवलोके च

समिद्धा" ति चिन्तेत्वा तेसं अधिगमत्थ असद्धम्मस्सवनादीहि वञ्चितो "इमिना कम्मेन कामा सम्पज्जन्ती" ति मञ्ञमानो कामुपादानवसेन कायदुच्चरितादीनि पि करोति। सो दुच्चरितपारिपूरिया अपाये उपपज्जति। सन्दिट्ठिके वा पन कामे पत्थयमानो पटिलद्धे च गोपयमानो कामुपादानवसेन कायदुच्चरितादीनि करोति। सो दुच्चरितपारिपूरिया अपाये उपपज्जति। तत्रास्स उपपत्तिहेतुभूतं कम्म कम्मभवो। कम्माभिनिब्बत्ता खन्धा उपपत्तिभवो। सञ्ञाभव-पञ्चवोकारभवा पन तदन्तोगधा एव।

१४२ अपरो पन सद्धम्मस्सवनादीहि उपब्रूहितञाणो "इमिना कम्मेन कामा सम्पज्जन्ती" ति मञ्ञमानो कामुपादानवसेन कायसुचरितादीनि करोति। सो सुचरितपरिपूरिया देवेसु वा मनुस्सेसु वा उपपज्जति। तत्रास्स उपपत्तिहेतुभूतं कम्मं कम्मभवो, कम्माभिनिब्बत्ता खन्धा उपपत्तिभवो। सञ्ञाभव-पञ्चवोकारभवा पन तदन्तोगधा एव। इति कामुपादानं सप्पभेदस्स सान्तोगधस्स कामभवस्स पच्चयो होति।

अपरो "रूपारूपभवेसु ततो समिद्धतरा कामा" ति सुत्वा परिकप्पेत्वा वा कामुपादानवसेनेव रूपारूपसमापत्तियो निब्बत्तेत्वा समापत्तिबलेन रूपारूपब्रह्मलोके उपपज्जति। तत्रास्स उपपत्तिहेतुभूत कम्मं कम्मभवो। कम्माभिनिब्बत्ता खन्धा उपपत्तिभवो। सञ्ञा-असञ्ञा-नेवसञ्ञानासञ्ञा-एक-चतु-पञ्चवोकारभवा पन तदन्तोगधा एव। इति कामुपादानं सप्पभेदानं सान्तोगधानं रूपारूपभवानं पि पच्चयो होति।

१४३. अपरो "अयं अत्ता नाम कामावचरसम्पत्तिभवे वा रूपारूपभवान वा अञ्ञतरस्मिं उच्छिन्ने सुउच्छिन्नो होती" ति उच्छेददिट्ठिं उपादाय तदुपगं कम्म करोति, तस्स तं कम्म कम्मभवो। कम्माभिनिब्बत्ता खन्धा उपपत्तिभवो। सञ्ञाभवादयो पन तदन्तोगधा एव। इति दिट्ठुपादानं सप्पभेदान सान्तोगधानं तिण्णं पि काम-रूपारूपभवान पच्चयो होति।

१४४. अपरो "अय अत्ता नाम कामावचरसम्पत्तिभवे वा रूपारूपभवान वा अञ्ञतरस्मिं सुखी होति विगतपरिळाहो" ति अत्तवादुपादानेन तदुपगं कम्मं करोति, तस्स तं कम्म कम्मभवो। तदभिनिब्बत्ता खन्धा उपपत्तिभवो। सञ्ञाभवादयो पन तदन्तोगधा एव। इति अत्तवादुपादानं सप्पभेदान सान्तोगधानं तिण्णं भवानं पच्चयो होति।

१४५ अपरो "इद सीलब्बतं नाम कामावचरसम्पत्तिभवे वा रूपारूपभवानं वा अञ्ञतरस्मिं परिपूरेन्तस्स सुखं पारिपूरिं गच्छती" ति सीलब्बतुपादानवसेन तदुपगं कम्मं करोति, तस्स तं कम्मं कम्मभवो। तदभिनिब्बत्ता

खन्धा उपपत्तिभवो। सञ्ञाभवादयो पन तदन्तोगधा एव। इति सीलब्बतु-पादानं सप्पभेदानं सान्तोगधान तिण्ण भवानं पच्चयो होति।

एवमेत्थ यं यस्स पच्चयो होति, ततो पि विञ्ञातब्बो विनिच्छयो।

१४६. कि पनेत्थ कस्स भवस्स कथं पच्चयो होती ति चे?

रूपारूपभवान उपनिस्सयपच्चयो उपादानं।
सहजातादीहि पि तं कामभवस्सा ति विञ्ञय्यं॥

रूपारूपभवानं हि कामभवपरियापन्नस्स च कम्मभवे कुसलकम्मस्सेव, उपपत्तिभवस्स चेतं चतुब्बिध पि उपादानं उपनिस्सयपच्चयवसेन एकधा व पच्चयो होति। कामभवे अत्तना सम्पयुत्ताकुसलकम्मभवस्स सहजात-अञ्ञमञ्ञ-निस्सय-सम्पयुत्त-अत्थि-अविगत-हेतुपच्चयप्पभेदेहि सहजातादीहि पच्चयो होति। विप्पयुत्तस्स पन उपनिस्सयपच्चयेनेवा ति॥ (६)

अयं 'उपादापच्चया भवो' ति पदस्मिं वित्थारकथा॥

भवपच्चयाजातिआदिपदवित्थारकथा

१४७ **भवपच्चया जाती** ति आदीसु जातिआदीन विनिच्छयो **सच्चनिद्देसे** (विसु० ४२०–४२३) वुत्तनयेनेव वेदितब्बो। **भवो** ति पनेत्थ कम्मभवो व अधिप्पेतो। सो हि जातिया पच्चयो, न उपपत्तिभवो। सो च पन कम्मपच्चय-उपनिस्सय-पच्चयवसेन द्वेधा पच्चयो होती ति।

तत्थ सिया—कथं पनेतं जानितब्बं भवो जातिया पच्चयो ति चे? बाहिर-पच्चयसमत्ते पि हीनपणीतादिविसेसदस्सनतो। बाहिरानं हि जनकजननीसुक्क-सोणिताहारादीनं पच्चयानं समत्ते पि सत्तानं यमकानं पि सत हीनपणीतादि-विसेसो दिस्सति। सो च न अहेतुको सब्बदा च सब्बेसं च अभावतो, न कम्म-भवतो अञ्ञहेतुको तदभिनिब्बत्तकसत्तानं अज्झत्तसन्ताने अञ्ञस्स कारणस्स अभावतो ति कम्मभवहेतुको व। कम्मं हि सत्तानं हीनपणीततादिविसेसस्स हेतु। तेनाह भगवा—"कम्मं सत्ते विभजति, यदिदं हीनप्पणीतताया" (म० ३–३२०) ति। तस्मा जानितब्बमेतं—"भवो जातिया पच्चयो" ति।

१४८. यस्मा च असति जातिया जरामरणं नाम, सोकादयो वा धम्मा न होन्ति। जातिया पन सति जरामरणं चेव जरामरणसङ्खातदुक्खधम्मफुट्ठस्स च बालजनस्स जरामरणाभिसम्बन्धा वा तेन तेन दुक्खधम्मेन फुट्ठस्स अनभिसम्बन्धा वा सोकादयो च धम्मा होन्ति। तस्मा अयं पि जातिजरामरणस्स चेव सोकादीनं च पच्चयो होती ति वेदितब्बा। सा पन उपनिस्सयकोटिया एकधा व पच्चयो होती ति॥

अय 'भवपच्चया जाती' ति आदीसु वित्थारकथा॥

भवचक्ककथा

१४९ यस्मा पनेत्थ सोकादयो अवसाने वुत्ता, तस्मा या सा अविज्जा-पच्चया सङ्खारा ति एवमेतस्स भवचक्कस्स आदिम्हि वुत्ता, सा—

सोकादीहि अविज्जा सिद्धा भवचक्कमविदितादिमिदं ।
कारकवेदकरहितं द्वादसविधसुञ्ञतासुञ्ञं ॥

सततं समितं पवत्ततो ति वेदितब्बं ।

कथं पनेत्थ सोकादीहि अविज्जा सिद्धा ? कथमिदं भवचक्क अविदितादि ? कथं कारकवेदकरहितं ? कथ द्वादसविधसुञ्ञतासुञ्ञ ति चे ?

एत्थ हि सोकदोमनस्सुपायासा अविज्जाय अवियोगिनो, परिदेवो च नाम मूळ्हस्सा ति तेसु ताव सिद्धेसु सिद्धा होति अविज्जा । अपि च "आसव-समुदया अविज्जासमुदयो" (म० १–७४) ति वुत्तं । आसवसमुदया चेते सोकादयो होन्ति ।

१५०. कथं ? वत्थुकामवियोगे ताव सोको कामासवसमुदया होति । यथाह—

तस्स चे कामयानस्स, छन्दजातस्स जन्तुनो ।
ते कामा परिहायन्ति, सल्लविद्धो व रुप्पती" ति ॥ (खु० १–३८८)

यथा चाह—"कामतो जायति सोको" (खु० १–३७) ति ।

१५१. सब्बे पि चेते दिट्ठासवसमुदया होन्ति । यथाह—"तस्स 'अह रूपं', 'मम रूपं' ति परियुट्ठट्ठायिनो रूपविपरिणामञ्ञथाभावा उप्पज्जन्ति सोकपरिदेव-दुक्खदोमनस्सुपायासा" (सं० २–२४३) ति ।

१५२. यथा च दिट्ठासवसमुदया, एवं भवासवसमुदया पि । यथाह—"ये पि ते देवा दीघायुका वण्णवन्तो सुखबहुला उच्चेसु विमानेसु चिरट्ठितिका, ते पि तथागतस्स धम्मदेसन सुत्वा भय सन्तासं सवेगमापज्जन्ती" (सं० २–३११) ति । पञ्च पुब्बनिमित्तानि दिस्वा मरणभयेन सन्तज्जितानं देवान विय ।

१५३. यथा च भवासवसमुदया, एव अविज्जासवसमुदया पि । यथाह—"स खो सो, भिक्खवे, बालो तिविधं दिट्ठे व धम्मे दुक्खं दोमनस्सं पटि-सवेदेती" (म० ३–२३३) ति । इति यस्मा आसवसमुदया एते धम्मा होन्ति, तस्मा एते सिज्झमाना अविज्जाय हेतुभूते आसवे साधेन्ति । आसवेसु च सिद्धेसु पच्चयभावे भावतो अविज्जा पि सिद्धा व होती ति । एवं तावेत्थ **सोकादीहि अविज्जा सिद्धा** होती ति वेदितब्बा ।

यस्मा पन एवं पच्चयभावे भावतो अविज्जाय सिद्धाय पुन अविज्जापच्चया सङ्खारा, सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं ति एव हेतुफलपरम्पराय परियोसानं नत्थि,

तस्मा तं हेतुफलसम्बन्धवसेन पवत्त द्वादसङ्गं **भवचक्कं अविदितादी** ति सिद्ध होति ।

१५४. एव सति अविज्जापच्चया सङ्खारा ति इद आदिमत्तकथन विरुज्झती ति चे ? नयिदं आदिमत्तकथनं । पधानधम्मकथनं पनेतं । तिण्णन्नं हि वट्टानं अविज्जा पधाना । अविज्जाग्गहणेन हि अवसेसकिलेसवट्टं च कम्मादीनि च बाल पलिबोधेन्ति, सप्पसिरग्गहणेन सेससप्पसरीर विय बाहुं । अविज्जासमुच्छेदे पन कते तेहि विमोक्खो होति, सप्पसिरच्छदे कते पलिबोधितबाहाविमोक्खो विय । यथाह—"अविज्जाय त्वेव असेसविरागनिरोधा सङ्खारनिरोधो" (स० २–३) ति आदि । इति यं गण्हतो बन्धो, मुञ्चतो च मोक्खो होति, तस्स पधानधम्मस्स कथनमिदं, न आदिमत्तकथनं ति । एवमिद **भवचक्कं अविदितादी** ति वेदितब्ब ।

१५५. तयिदं यस्मा अविज्जादीहि कारणेहि सङ्खारादीनं पवत्ति, तस्मा ततो अञ्ञेन "ब्रह्मा महाब्रह्मा सेट्ठो सजिता" (स० २–३) ति एवं परिकप्पितेन ब्रह्मादिना वा संसारस्स कारकेन, "सो खो पन मे अयं अत्ता वदो वदेय्यो" (म० १–१३) ति एव परिकप्पितेन अत्तना वा सुखदुक्खानं वेदकेन रहित । इति **कारकवेदकरहितं** ति वेदितब्बं ।

यस्मा पनेत्थ अविज्जा उदयब्बयधम्मकत्ता धुवभावेन, सङ्किलिट्ठत्ता सङ्किलेसिकत्ता च सुभभावेन, उदयब्बयपीळितत्ता सुखभावेन, पच्चयायत्तावुत्तित्ता वसवत्तनभूतेन अत्तभावेन च सुञ्ञा, तथा सङ्खारादीनि पि अङ्गानि । यस्मा वा अविज्जा न अत्ता, न अत्तनो, न अत्तनि, न अत्तवती, तथा सङ्खारादीनि पि अङ्गानि; तस्मा **द्वादसविधसुञ्ञतासुञ्ञं** एतं भवचक्क ति वेदितब्बं ।

१५६. एवं च विदित्वा पुन—

तस्साविज्जातण्हा मूलमतीतादयो तयो काला ।
द्वे अट्ठ द्वे एव च सरूपतो तेसु अङ्गानि ॥

तस्स खो पनेतस्स भवचक्कस्स अविज्जा तण्हा चा ति द्वे धम्मा **मूलं** ति वेदितब्बा । तदेतं पुब्बन्ताहरणतो अविज्जामूलं वेदनावसानं, अपरन्तसन्तानतो तण्हामूलं जरामरणावसानं ति दुविधं होति ।

तत्थ पुरिम दिट्ठिचरितवसेन वुत्तं, पच्छिमं तण्हाचरितवसेन । दिट्ठिचरितानं हि अविज्जा, तण्हाचरितानं च तण्हा संसारनायिका । उच्छेददिट्ठिसमुग्घाताय वा पठम, फलुप्पत्तिया हेतूनं अनुपच्छेदप्पकासनतो, सस्सतदिट्ठिसमुग्घाताय दुतियं, उप्पन्नानं जरामरणप्पकासनतो । गब्भसेय्यकवसेन वा पुरिमं, अनुपुब्बपवत्तिदीपनतो, ओपपातिकवसेन पच्छिमं, सहुप्पत्तिदीपनतो ।

अतीतपच्चुप्पन्नानागता चस्स **तयो काला**। तेसु पाळियं सरूपतो आगतवसेन "अविज्जा सङ्खारा चा" ति **द्वे अङ्गानि** अतीतकालानि। विञ्ञाणादीनि भवावसानानि अट्ठ पच्चुप्पन्नकालानि। जाति चेव जरामरणं च द्वे अनागतकालानी ति वेदितब्बानि। पुन

१५७. हेतुफल-हेतुपुब्बक-तिसन्धि चतुभेदसङ्गहं चेत।
वीसतिआकारार तिवट्टमनवट्ठितं भमति॥

इति पि वेदितब्ब।

तत्थ सङ्खारानं च पटिसन्धिविञ्ञाणस्स च अन्तरा एको हेतुफलसन्धि नाम। वेदनाय च तण्हाय च अन्तरा एको फलहेतुसन्धि नाम। भवस्स च जातिया च अन्तरा एको हेतुफलसन्धी ति। एवमिद **हेतुफलहेतुपुब्बकतिसन्धी** ति वेदितब्बं।

१५८. सन्धीनं आदिपरियोसानववत्थिता पनस्स **चत्तारो सङ्गहा** होन्ति। सेय्यथीद—अविज्जासङ्खारा एको सङ्गहो, विञ्ञाणनामरूपसळायतनफस्सवेदना दुतियो, तण्हाउपादानभवा ततियो, जातिजरामरण चतुत्थो ति एवमिदं **चतुभेदसङ्गहं** ति वेदितब्ब।

१५९. अतीते हेतवो पञ्च, इदानि फलपञ्चक।
इदानि हेतवो पञ्च, आयतिं फलपञ्चक ति॥

एतेहि पन वीसतिया आकारसङ्खातेहि अरेहि **वीसतिआकारारं** ति वेदितब्बं।

तत्थ **अतीते हेतवो पञ्चा** ति। अविज्जा सङ्खारा चा ति इमे ताव द्वे वुत्ता एव। यस्मा पन अविद्वा परितस्सति, परितस्सितो उपादियति, तस्सुपादानपच्चया भवो, तस्मा तण्हुपादानभवा पि गहिता होन्ति। तेनाह—"पुरिमकम्मभवस्मिं मोहो अविज्जा, आयूहना सङ्खारा, निकन्ति तण्हा, उपगमन उपादान, चेतना भवो ति इमे पञ्च धम्मा पुरिमकम्मभवस्मिं इध पटिसन्धिया पच्चया" (खु० ५–५८) ति।

तत्थ **पुरिमकम्मभवस्मिं** ति। पुरिमे कम्मभवे। अतीतजातिय कम्मभवे करियमाने ति अत्थो। **मोहो अविज्जा** ति यो तदा दुक्खादीसु मोहो, येन मूळ्हो कम्मं करोति, सा अविज्जा। **आयूहना सङ्खारा** ति त कम्मं करोतो या पुरिमचेतनायो, यथा "दानं दस्सामी" ति चित्तं उप्पादेत्वा मासं पि संवच्छरं पि दानूपकरणानि सज्जेन्तस्स उप्पन्ना पुरिमचेतनायो। पटिग्गाहकानं पन हत्थे दक्खिणं पतिट्ठापयतो चेतना भवो ति वुच्चति। एकावज्जनेसु वा छसु जवनेसु चेतना आयूहना सङ्खारा नाम। सत्तमे भवो। या काचि वा पन चेतना भवो। सम्पयुत्ता आयूहना सङ्खारा नाम। **निकन्ति तण्हा** ति। या कम्मं करोन्तस्स

फले उपपत्तिभवे निकामना पत्थना, सा तण्हा नाम। **उपगमनं उपादानं** ति। यं कम्मभवस्स पच्चयभूतं "इद कत्वा असुकस्मिं नाम ठाने कामे सेविस्सामि उच्छिज्जिस्सामी" ति आदिना नयेन पवत्त उपगमनं गहणं परामसनं, इद उपादानं नाम। **चेतना भवो** ति। आयूहनावसाने वुत्ता चेतना भवो ति। एवमत्थो वेदितब्बो।

१६०. **इदानि फलपञ्चकं** ति। विञ्ञाणादिवेदनावसानं पाळियं आगतमेव। यथाह—"इध पटिसन्धि विञ्ञाण, ओक्कन्ति नामरूप, पसादो आयतन, फुट्ठो फस्सो, वेदयितं वेदना, इमे पञ्च धम्मा इधूपपत्तिभवस्मिं पुरेकतस्स कम्मस्स पच्चया" (अभि० २–१७३) ति।

तत्थ **पटिसन्धि विञ्ञाणं** ति। यं भवन्तरपटिसन्धानवसेन उप्पन्नत्ता पटिसन्धी ति वुच्चति, तं विञ्ञाणं। **ओक्कन्ति नामरूपं** ति। या गब्भे रूपारूपधम्मान ओक्कन्ति, आगन्त्वा पविसन विय, इदं नामरूप। **पसादो आयतनं** ति। इद चक्खादिपञ्चायतनवसेन वुत्त। **फुट्ठो फस्सो** ति। यो आरम्मणं फुट्ठो फुसन्तो उप्पन्नो, अयं फस्सो। **वेदयितं वेदना** ति यं पटिसन्धिविञ्ञाणेन वा सळायतनपच्चयेन वा फस्सेन सह उप्पन्न विपाकवेदयितं, सा वेदना ति एवमत्थो वेदितब्बो।

१६१ **इदानि हेतवो पञ्चा** ति। तण्हादयो। पाळियं आगता तण्हुपादानभवा। भवे पन गहिते तस्स पुब्बभागा तंसम्पयुत्ता वा सङ्खारा गहिता व होन्ति। तण्हुपादानग्गहणेन च तसम्पयुत्ता, याय वा मूळ्हो कम्म करोति सा अविज्जा गहिता व होती ति। एव पञ्च। तेनाह—"इध परिपक्कत्ता आयतनान मोहो अविज्जा, आयूहना सङ्खारा, निकन्ति तण्हा, उपगमन उपादान, चेतना भवो ति इमे पञ्च धम्मा इध कम्मभवस्मिं आयतिं पटिसन्धिया पच्चया" (खु० ५–५८) ति। तत्थ **इध परिपक्कत्ता आयतनानं** ति परिपक्कायतनस्स कम्मकरणकाले सम्मोहो दस्सितो। सेसं उत्तानत्थमेव।

आयतिं फलपञ्चकं ति। विञ्ञाणादीनि पञ्च। तानि जातिग्गहणेन वुत्तानि। जरामरणं पन तेसं येव जरामरण। तेनाह—"आयतिं पटिसन्धि विञ्ञाणं, ओक्कन्ति नामरूपं, पसादो आयतनं, फुट्ठो फस्सो, वेदयित वेदना। इमे पञ्च धम्मा आयतिं उपपत्तिभवस्मिं इध कतस्स कम्मस्स पच्चया" (खु० ५–५८) ति। एवमिदं वीसति आकारारं होति।

तिवट्टमनवट्ठितं भमतो ति। एत्थ पन सङ्खारभवा कम्मवट्टं, अविज्जातण्हुपादानानि किलेसवट्टं, विञ्ञाणनामरूपसळायतनफस्सवेदना विपाकवट्टं ति इमेहि तीहि वट्टेहि तिवट्टमिदं भवचक्कं याव किलेसवट्टं न उपच्छिज्जति, ताव अनुपच्छिन्नपच्चयत्ता अनवट्ठितं पुनप्पुनं परिवत्तनतो भमति येवा ति वेदितब्बं।

१६२ तयिदमेवं भममानं—

सच्चप्पभवतो किच्चा वारणा उपमाहि च।
गम्भीरनयभेदा च विञ्ञातब्बं यथारहं॥

तत्थ यस्मा कुसलाकुसलं कम्मं अविसेसेन समुदयसच्चं ति **सच्चविभङ्गे** (अभि० २-१३९) वुत्तं, तस्मा अविज्जापच्चया सङ्खारा ति अविज्जाय सङ्खारा दुतियसच्चप्पभवं दुतियसच्चं। सङ्खारेहि विञ्ञाणं दुतियसच्चप्पभवं पठमसच्चं। विञ्ञाणादीहि नामरूपादीनि विपाकवेदनापरियोसानानि पठमसच्चप्पभवं पठमसच्चं। वेदनाय तण्हा पठमसच्चप्पभवं दुतियसच्चं। तण्हाय उपादानं दुतियसच्चप्पभवं दुतियसच्चं। उपादानतो भवो दुतियसच्चप्पभवं पठमदुतियसच्चद्वयं। भवतो जाति दुतियसच्चप्पभवं पठमसच्चं। जातिया जरामरणं पठमसच्चप्पभवं पठमसच्चं ति एवं ताविदं **सच्चप्पभवतो** विञ्ञातब्बं यथारहं। (१)

१६३. यस्मा पनेत्थ अविज्जा वत्थूसु च सत्ते सम्मोहेति, पच्चयो च होति सङ्खारानं पातुभावाय। तथा सङ्खारा सङ्खतं च अभिसङ्खरोन्ति, पच्चया च होन्ति विञ्ञाणस्स। विञ्ञाणं पि वत्थुं च पटिविजानाति, पच्चयो च होति नामरूपस्स। नामरूपं पि अञ्ञमञ्ञं च उपत्थम्भेति, पच्चयो च होति सळायतनस्स। सळायतनं पि सविसये च पवत्तति, पच्चयो च होति फस्सस्स। फस्सो पि आरम्मणं च फुसति, पच्चयो च होति वेदनाय। वेदना पि आरम्मणरसं च अनुभवति, पच्चयो च होति तण्हाय। तण्हा पि रज्जनीये च धम्मे रज्जति, पच्चयो च होति उपादानस्स। उपादानं पि उपादानिये च धम्मे उपादियति, पच्चयो च होति भवस्स। भवो पि नानागतिसु च विक्खिपति, पच्चयो च होति जातिया। जाति पि खन्धे च जनेति तेसं अभिनिब्बत्तिभावेन पवत्तत्ता, पच्चयो च होति जरामरणस्स। जरामरणं पि खन्धानं पाकभेदभावं च अधितिट्ठति, पच्चयो च होति भवन्तरपातुभावाय सोकादीनं अधिट्ठानत्ता। तस्मा सब्बपदेसु द्वेधा पवत्ति**किच्चतो** पि इदं विञ्ञातब्बं यथारहं। (२)

१६४. यस्मा चेत्थ अविज्जापच्चया सङ्खारा ति इदं कारकदस्सननिवारणं। सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं ति अत्तसङ्कन्तिदस्सननिवारणं, विञ्ञाणपच्चया नामरूपं ति "अत्ता" ति परिकप्पितवत्थुभेददस्सनतो घनसञ्ञानिवारणं नामरूपपच्चया सळायतनं ति आदि अत्ता पस्सति····पे०····विजानाति, फुसति, वेदयति, तण्हियति, भवति, जायति, जीयति, मीयति ति एवमादिदस्सननिवारणं। तस्मा **मिच्छादस्सननिवारणतो** पेतं भवचक्कं विञ्ञातब्बं यथारहं। (३)

१६५. यस्मा पनेत्थ सलक्खण-सामञ्ञलक्खणवसेन धम्मानं अदस्सनतो

अन्धो विय अविज्जा। अन्धस्स उपक्खलनं विय अविज्जापच्चया सङ्खारा। उपक्खलितस्स पतनं विय सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं। पतितस्स गण्डपातुभावो विय विञ्ञाणपच्चया नामरूपं। गण्डभेदपिळका विय नामरूपपच्चया सळायतनं। गण्डपिळकाघट्टनं विय सळायतनपच्चया फस्सो। घट्टनदुक्खं विय फस्सपच्चया वेदना, दुक्खस्स पटिकाराभिलासो विय वेदनापच्चया तण्हा। पटिकाराभिलासेन असप्पायग्गहण विय तण्हापच्चया उपादान। उपादिण्ण-असप्पायालेपनं विय उपादानपच्चया भवो। असप्पायालेपनेन गण्डविकार-पातुभावो विय भवपच्चया जाति। गण्डविकारतो गण्डभेदो विय जातिपच्चया जरामरण। यस्मा वा पनेत्थ अविज्जा अप्पटिपत्तिमिच्छापटिपत्तिभावेन सत्ते अभिभवति, पटल विय अक्खीनि। तदभिभूतो च बालो पोनब्भविकेहि सङ्खारेहि अत्तानं वेठेति, कोसकारकिमि विय कोसप्पदेसेहि। सङ्खारपरिग्गहितं विञ्ञाणं गतीसु पतिट्ठ लभति, परिणायकपरिग्गहितो विय राजकुमारो रज्जे। उपपत्तिनिमित्तपरिकप्पनतो विञ्ञाण पटिसन्धिय अनेकप्पकार नामरूप अभि-निब्बत्तेति, मायाकारो विय माय। नामरूपे पतिट्ठितं सळायतनं वुद्धिं विरूळ्हि वेपुल्लं पापुणाति, सुभूमिय पतिट्ठितो वनप्पगुम्बो विय। आयतनघट्टनतो फस्सो जायति, अरणसहिताभिमन्थनतो अग्गि विय। फस्सेन फुट्ठस्स वेदना पातुभवति, अग्गिना फुट्ठस्स दाहो विय। वेदियमानस्स तण्हा पवड्ढति, लोणूदक पिवतो पिपासा विय। तसितो भवेसु अभिलासं करोति, पिपासितो विय पानीये। तदस्सुपादानं, उपादानेन भवं उपादियति, आमिसलोभेन मच्छो बळिसं विय। भवे सति जाति होति, बीजे सति अङ्कुरो विय। जातस्स अवस्स जरामरण, उप्पन्नस्स रुक्खस्स पतन विय। तस्मा एव **उपमाहि** पेत भवचक्क विञ्ञातब्बं यथारहं। (४)

१६६ यस्मा च भगवता अत्थतो पि धम्मतो पि देसनातो पि पटिवेधतो पि गम्भीरभावं सन्धाय "गम्भीरो चायं, आनन्द, पटिच्चसमुप्पादो गम्भीरावभासो चा" (दी० २–४४) ति वुत्तं, तस्मा **गम्भीरभेदतो** पेत भवचक्कं विञ्ञातब्बं यथारह।

तत्थ यस्मा न जातितो जरामरण न होति, न च जातिं विना अञ्ञतो होति, इत्थ च जातितो समुदागच्छती ति एव जातिपच्चयसमुदागतट्ठस्स दुरवबोधनीयतो जरामरणस्स जातिपच्चयसम्भूतसमुदागतट्ठो गम्भीरो। तथा जातिया भवपच्चय ··पे० · सङ्खारान अविज्जापच्चयसम्भूतसमुदागतट्ठो गम्भीरो। तस्मा इदं भवचक्कं अत्थगम्भीरं ति अयं तावेत्थ **अत्थगम्भीरता**। हेतुफलं हि अत्थो ति वुच्चति। यथाह—"हेतुफले ञाणं अत्थपटिसम्भिदा" (अभि० २–३५०) ति।

१६७ यस्मा पन येनाकारेन यदवत्था च अविज्जा तेसं तेसं सङ्खारानं पच्चयो होति, तस्स दुरवबोधनीयतो अविज्जाय सङ्खारान पच्चयट्ठो गम्भीरो, तथा सङ्खारान ·पे०··· जातिया जरामरणस्स पच्चयट्ठो गम्भीरो; तस्मा इद भवचक्क धम्मगम्भीरं ति अयमेत्थ **धम्मगम्भीरता**। हेतुनो हि धम्मो ति नामं। यथाह—"हेतुम्हि ञाणं धम्मपटिसम्भिदा" (अभि० २–३५०) ति।

१६८ यस्मा चस्स तेन तेन कारणेन तथा तथा पवत्तेतब्बत्ता देसना पि गम्भीरा, न तत्थ सब्बञ्ञुतञाणतो अञ्ञं ञाणं पतिट्ठ लभति। तथाहेत कत्थचि सुत्ते अनुलोमतो, कत्थचि पटिलोमतो, कत्थचि अनुलोमपटिलोमतो, कत्थचि वेमज्झतो पट्ठाय अनुलोमतो वा पटिलोमतो वा, कत्थचि तिसन्धि-चतुसङ्खेप, कत्थचि द्विसन्धितिसङ्खेपं, कत्थचि एकसन्धि द्विसङ्खेपं देसित्त, तस्मा इद भवचक्क देसनागम्भीरं ति अय **देसनागम्भीरता**।

१६९. यस्मा चेत्थ यो सो अविज्जादीनं सभावो, येन पटिविद्धेन अविज्जा-दयो सम्मा सलक्खणतो पटिविद्धा होन्ति, सो दुप्परियोगाहत्ता गम्भीरो, तस्मा इद भवचक्कं पटिवेधगम्भीर। तथा हेत्थ अविज्जाय अञ्ञाणादस्सनसच्चा-सम्पटिवेधट्ठो गम्भीरो, सङ्खारानं अभिसङ्खरणायूहनसरागविरागट्ठो, विञ्ञाणस्स सुञ्ञतअब्यापारअसङ्कन्तिपटिसन्धिपातुभावट्ठो, नामरूपस्स एकुप्पादविनि-ब्भोगाविनिब्भोगनमनरुप्पनट्ठो, सळायतनस्स अधिपतिलोकद्वारखेत्तविसयि-भावट्ठो, फस्सस्स फुसन-सङ्घट्टन-सङ्गति-सन्निपातट्ठो, वेदनाय आरम्मणरसानु-भवनसुखदुक्खमज्झत्तभावनिज्जीववेदयितट्ठो, तण्हाय अभिनन्दितज्झोसान-सरिता-लता-नदी-तण्हा-समुद्ददुप्पूरट्ठो, उपादानस्स आदानग्गहणाभिनिवेस-परामास-दुरतिक्कमट्ठो, भवस्स आयूहनाभिसङ्खरण-योनि-गति-ठिति-निवासेसु-खिपनट्ठो, जातिया जाति-सञ्जाति-ओक्कन्ति-निब्बत्ति-पातुभावट्ठो, जरामरणस्स खयवयभेदविपरिणामट्ठो गम्भीरो ति अयमेत्थ **पटिवेधगम्भीरता**। (५)

१७०. यस्मा पनेत्थ एकत्तनयो, नानत्तनयो, अब्यापारनयो, एवधम्मतानयो ति चत्तारो अत्थनया होन्ति, तस्मा **नयभेदतो** पेतं भवचक्कं विञ्ञातब्बं यथारह।

१७१ तत्थ "अविज्जापच्चया सङ्खारा, सङ्खारपच्चया विञ्ञाण" ति एव बीजस्स अङ्कुरादिभावेन रुक्खभावप्पत्ति विय सन्तानानुपच्छेदो **एकत्तनयो** नाम। यं सम्मा पस्सन्तो हेतुफलसम्बन्धेन सन्तानस्स अनुपच्छेदावबोधतो उच्छेददिट्ठि पजहति। मिच्छा पस्सन्तो हेतुफलसम्बन्धेन पवत्तमानस्स सन्तानानुपच्छेदस्स एकत्तगहणतो सस्सतदिट्ठि उपादियति।

१७२ अविज्जादीनं पन यथासकं लक्खणववत्थानं **नानत्तनयो** नाम। यं सम्मा पस्सन्तो नवनवानं उप्पाददस्सनतो सस्सतदिट्ठि पजहति। मिच्छा पस्सन्तो

एकसन्तानपतितस्स भिन्नसन्तानस्सेव नानत्तग्गहणतो उच्छेददिट्ठि उपादियति।

१७३ अविज्जाय सङ्खारा मया उप्पादेतब्बा, सङ्खारान वा विञ्ञाणं अम्हेही ति एवमादिब्यापाराभावो **अब्यापारनयो** नाम। यं सम्मा पस्सन्तो कारकस्स अभावावबोधतो अत्तदिट्ठिं पजहति। मिच्छा पस्सन्तो यो असति पि ब्यापारे अविज्जादीनं सभावनियमसिद्धो हेतुभावो, तस्स अग्गहणतो अकिरियदिट्ठिं उपादियति।

१७४ अविज्जादीहि पन कारणेहि सङ्खारादीन येव सम्भवो खीरादीहि दधिआदीन विय, न अञ्ञेस ति अय **एवंधम्मतानयो** नाम। य सम्मा पस्सन्तो पच्चयानुरूपतो फलावबोधा अहेतुकदिट्ठि अकिरियदिट्ठिं च पजहति, मिच्छा पस्सन्तो पच्चयानुरूपं फलप्पवत्तिं अग्गहेत्वा यतो कुतोचि यस्स कस्सचि असम्भवग्गहणतो अहेतुकदिट्ठिं चेव नियतिवाद च उपादियती ति एवमिद भवचक्क।

सच्चप्पभवतो किच्चा वारणा उपमाहि च।
गम्भीरनयभेदा च विञ्ञातब्ब यथारहं॥ (६)

१७५. इदं हि अतिगम्भीरतो अगाध, नानानयगहणतो दुरतियान। ञाणासिना समाधिपवरसिलाय सुनिसितेन—

भवचक्कं अपदालेत्वा असनिविचक्कमिव निच्चनिम्मथन।
संसारभयमतीतो न कोचि सुपिनन्तरेपत्थि॥

वुत्त पि चेतं भगवता—"गम्भीरो चायं, आनन्द, पटिच्चसमुप्पादो गम्भीरावभासो च। एतस्स चानन्द, धम्मस्स अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमयं पजा तन्ताकुलकजाता[1] कुलिकुण्डिकजाता[2] मुञ्जपब्बजभूता[3] अपायं दुग्गतिं विनिपातं ससार नातिवत्तती" (दी० २-४४) ति। तस्मा अत्तनो वा परेस वा हिताय च सुखाय च पटिपन्नो अवसेसकिच्चानि पहाय।

गम्भोरे पच्चयाकारप्पभेदे इध पण्डितो।
यथा गाधं लभेथेवमनुयुञ्जे सदा सतो ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे पञ्ञाभावनाधिकारे
पञ्ञाभूमिनिद्देसो नाम सत्तरसमो परिच्छेदो॥



१ तन्तून आकुलक तन्ताकुलक, तन्ताकुलकमिव जाता **तन्ताकुलकजाता**, किलेसकम्मविपाकेहि अति विय जटिता ति अत्थो।

२ कुलिया सकुणिया नीडं कुण्डिकं, तं विय जाता **कुलिकुण्डिकजाता**।

३. मुञ्जा विय, पब्बजा विय च भूता जाता **मुञ्जपब्बजभूता**। तदुभयं किर तिणं आकुलं जटितं हुत्वा वड्ढति।

दिट्ठिविसुद्धिनिद्देसो

अट्ठारसमो परिच्छेदो

नामरूपपरिग्गहकथा

१. इदानि या "इमेसु भूमिभूतेसु धम्मेसु उग्गहपरिपुच्छावसेन ञाणपरिचयं कत्वा सीलविसुद्धि चेव चित्तविसुद्धि चा ति द्वे मूलभूता विसुद्धियो सम्पादेतब्बा" (विसु०–३७३) ति वुत्ता। तत्थ **सीलविसुद्धि** नाम सुपरिसुद्धं पातिमोक्खसंवरादि-चतुब्बिध सीलं, त च **सीलनिद्देसे** वित्थारितमेव। **चित्तविसुद्धि** नाम सउपचारा अट्ठ समापत्तियो, ता पि चित्तसीसेन वुत्त**समाधिनिद्देसे** सब्बाकारेन वित्थारिता एव। तस्मा ता तत्थ वित्थारितनयेनेव वेदितब्बा।

य पन वुत्तं—"दिट्ठिविसुद्धि, कङ्खावितरणविसुद्धि, मग्गामग्गञाणदस्सन-विसुद्धि, पटिपदाञाणदस्सनविसुद्धि, ञाणदस्सनविसुद्धी ति इमा पन पञ्च विसुद्धियो सरीर" (विसु०—३७३) ति, तत्थ **नामरूपानं याथावदस्सनं दिट्ठि-विसुद्धि** नाम।

२ तं सम्पादेतुकामेन **समथयानिकेन**[1] ताव ठपेत्वा नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं अवसेसरूपारूपावचरज्झानान अञ्ञतरतो वुट्ठाय वितक्कादीनि झानङ्गानि तंसम्पयुत्ता च धम्मा लक्खणरसादिवसेन परिग्गहेतब्बा। परिग्गहेत्वा सब्ब पेतं आरम्मणाभिमुखं नमनतो नमनट्ठेन नाम ति ववत्थपेतब्बं।

३ ततो यथा नाम पुरिसो अन्तोगेहे सप्पं दिस्वा त अनुबन्धमानो तस्स आसयं पस्सति, एवमेव अयं पि योगावचरो त नाम उपपरिक्खन्तो "इदं नामं किं निस्साय पवत्तती" ति परियेसमानो तस्स निस्सयं हदयरूपं पस्सति। ततो हदयरूपस्स निस्सयभूतानि भूतनिस्सितानि च सेसुपादायरूपानी पि रूपं परि-ग्गण्हाति। सो सब्ब पेत रुप्पनतो रूप ति ववत्थपेति। ततो नमनलक्खणं नामं, रुप्पनलक्खणं रूपं ति **सङ्खेपतो नामरूपं ववत्थपेति।**

४ **सुद्धविपस्सनायानिको**[2] पन अयमेव वा **समथयानिको** चतुधातुववत्थाने

---

१ याति = पज्जति एतेना ति यान, समथो व यानं समथयानं, तं एतस्स अत्थी ति समथयानिको। झाने झानूपचारे वा पतिट्ठाय विपस्सन अनुयुञ्जन्तस्सेतं नामं, तेन **समथयानिकेन**।

२ समथयानिकस्स समथमुखेन विपस्सनाभिनिवेसो, विपस्सनायानिकस्स पन समथं अनिस्साया ति आह—**सुद्धविपस्सनायानिको** ति। समथभावनाय अमिस्सितविप-स्सनायानवा ति अत्थो।

वुत्तानं तेसं तेसं धातुपरिग्गहमुखानं अञ्ञतरमुखवसेन सङ्खेपतो वा वित्थारतो वा चतस्सो धातुयो परिग्गण्हाति। अथस्स याथावसरसलक्खणतो आविभूतासु धातूसु कम्मसमुट्ठानम्हि ताव केसे "चतस्सो धातुयो, वण्णो, गन्धो, रसो, ओजा, जीवितं, कायप्पसादो" ति एवं कायदसकवसेन दस रूपानि, तत्थेव भावस्स अत्थिताय भावदसकवसेन दस, तत्थेव आहारसमुट्ठानं ओजट्ठमकं, उतुसमुट्ठानं चित्तसमुट्ठानं ति अपरानि पि चतुवीसती ति एवं चतुसमुट्ठानेसु चतुवीसतिकोट्ठासेसु चतुचत्तालीस चतुचत्तालीस रूपानि। सेदो, अस्सु, खेळो, सिङ्घाणिका ति इमेसु पन चतूसु उतुचित्तसमुट्ठानेसु द्विन्नं ओजट्ठमकानं वसेन सोळस सोळस रूपानि। उदरिय, करीसं, पुब्बो, मुत्तं ति इमेसु चतूसु उतुसमुट्ठानेसु उतुसमुट्ठानस्सेव ओजट्ठमकमस्स वसेन अट्ठ अट्ठ रूपानि पाकटानि होन्ती ति। एस ताव **द्वत्तिंसाकारे** नयो।

५ ये पन इमस्मिं द्वत्तिंसाकारे आविभूते अपरे दस अकारा[1] आविभवन्ति, तत्थ असितादिपरिपाचके ताव कम्मजे तेजोकोट्ठासम्हि ओजट्ठमकं चेव जीवितं चा ति नव रूपानि। तथा चित्तजे अस्सासपस्सासकोट्ठासे पि ओजट्ठमकं चेव सद्दो चा ति नव, सेसेसु चतुसमुट्ठानेसु अट्ठसु जीवितनवकं चेव तीणि च ओजट्ठमकानी ति तेत्तिंस रूपानि पाकटानि होन्ति।

६ तस्सेव वित्थारतो द्वाचत्तालीसाकारवसेन इमेसु भूतुपादायरूपेसु पाकटेसु जातेसु वत्थुद्वारवसेन पञ्च चक्खुदसकादयो, हदयवत्थुदसकं चा ति अपरानि पि सट्ठि रूपानि पाकटानि होन्ति। सो सब्बानि पि तानि **रुप्पनलक्खणेन** एकतो कत्वा "एतं **रूप**" ति पस्सति।

७ तस्सेवं परिग्गहितरूपस्स द्वारवसेन अरूपधम्मा पाकटा होन्ति। सेय्यथीदं—द्वे पञ्चविञ्ञाणानि, तिस्सो मनोधातुयो, अट्ठसट्ठि मनोविञ्ञाणधातुयो ति एकासीति लोकियचित्तानि। अविसेसेन च तेहि चित्तेहि सहजातो फस्सो, वेदना, सञ्ञा, चेतना, जीवित, चित्तट्ठिति, मनसिकारो ति इमे सत्त सत्त चेतसिका ति। लोकुत्तरचित्तानि पन नेव सुद्धविपस्सकस्स, न समथयानिकस्स परिग्गहं गच्छन्ति अनधिगतत्ता ति। सो सब्बे पि ते अरूपधम्मे **नमनलक्खेण** एकतो कत्वा "एतं **नामं**" ति पस्सति। एवमेको **चतुधातुववत्थानमुखेन वित्थारतो नामरूपं ववत्थपेति**।

८. अपरो **अट्ठारसधातुवसेन**। कथं? इध भिक्खु अत्थि इमस्मिं अत्तभावे चक्खुधातु···पे०··मनोविञ्ञाणधातू ति धातुयो आवज्जित्वा यं लोको सेतकण्हमण्डलविचित्तं आयतवित्थतं अक्खिकूपके न्हारुसुत्तकेन आबद्धं मंसपिण्डं "चक्खू" ति सञ्जानाति, तं अग्गहेत्वा **खन्धनिद्देसे** उपादारूपेसु वुत्तप्पकारं "चक्खुधातू" ति ववत्थपेति।

---

१. **अपरे दस आकारा** ति। तेजोवायोकोट्ठासवसेन अपरे दस आकारा।

यानि पनस्स निस्सयभूता चतस्सो धातुयो, परिवारकानि चत्तारि वण्ण-गन्ध-रस-ओजा-रूपानि, अनुपालकं जीवितिन्द्रियं ति नव सहजातरूपानि, तत्थेव ठितानि कायदसक-भावदसकवसेन वीसति कम्मजरूपानि, आहारसमुट्ठानादीनं तिण्ण ओजट्ठमकानं वसेन चतुवीसति अनुपादिन्नरूपानी ति एवं सेसानि तेपण्णास रूपानि होन्ति, न तानि च "चक्खुधातू" ति ववत्थपेति। एस नयो सोतधातुआदीसु पि। कायधातुयं पन अवसेसानि तेचत्तालीस रूपानि होन्ति। केचि पन उतु-चित्तसमुट्ठानानि सद्देन सह नव नव कत्वा पञ्चचत्तालीसा ति वदन्ति।

९. इति इमे पञ्च पसादा, तेसं च विसया रूपसद्दगन्धरसफोट्ठब्बा पञ्चा ति दस रूपानि दस धातुयो होन्ति। अवसेसरूपानि धम्मधातु येव होन्ति। चक्खुं पन निस्साय रूपं आरब्भ पवत्तं चित्तं चक्खुविञ्ञाणधातु नामा ति एवं द्वेपञ्च-विञ्ञाणानि पञ्चविञ्ञाणधातुयो होन्ति। तीणि मनोधातुचित्तानि एका मनोधातु, अट्ठसट्ठि मनोविञ्ञाणधातुचित्तानि मनोविञ्ञाणधातू ति सब्बानि पि एकासीति लोकियचित्तानि सत्त विञ्ञाणधातुयो। तसम्पयुत्ता फस्सादयो धम्मधातू ति एवमेत्थ अड्ढेकादस धातुयो रूपं, अड्ढट्ठमा धातुयो नाम ति एवमेको अट्ठारसधातुवसेन नामरूपं ववत्थपेति।

१० अपरो **द्वादसायतनवसेन**। कथं? चक्खुधातुयं वुत्तनयेनेव[1], ठपेत्वा तेपण्णास रूपानि चक्खुप्पसादमत्तं "चक्खायतनं" ति ववत्थपेति। तत्थ वुत्तनये-नेव च सोतघानजिव्हाकायधातुयो "सोतघानजिव्हाकायायतनानी" ति, तेसं विसयभूते पञ्च धम्मे "रूपसद्दगन्धरसफोट्ठब्बायतनानी" ति, लोकिया सत्त-विञ्ञाणधातुयो "मनायतनं" ति, तसम्पयुत्तफस्सादयो सेसरूपं च "धम्मायतनं" ति एवमेत्थ अड्ढेकादस आयतनानि रूपं, दियड्ढआयतनानि नाम ति एवमेको द्वादसायतनवसेन नामरूपं ववत्थपेति।

११. अपरो ततो सङ्खित्ततरं **खन्धवसेन** ववत्थपेति। कथं? इध भिक्खु इमस्मिं सरीरे चतुसमुट्ठाना चतस्सो धातुयो, तंनिस्सितो वण्णो, गन्धो, रसो, ओजा, चक्खुप्पसादादयो पञ्च पसादा, वत्थुरूपं, भावो, जीवितिन्द्रियं, द्विसमुट्ठानो सद्दो ति इमानि सत्तरस रूपानि **सम्मसनुपगानि**[2] निप्फन्नानि रूप-रूपानि। कायविञ्ञत्ति, वचीविञ्ञत्ति, आकासधातु, रूपस्स लहुता, मुदुता, कम्मञ्ञता, उपचयो, सन्तति, जरता, अनिच्चता ति इमानि पन दस रूपानि न

१. "यं लोको सेतकण्हमण्डलविचित्तं" आदिना हेट्ठा वुत्तनयेन।

२. सम्मसितुं सक्कुणेय्यानि सम्मसनं उपगच्छन्तो ति **सम्मसनुपगानि**। सम्मसनीयानी ति अत्थो।

सम्मसनुपगानि, आकारविकारअन्तरपरिच्छेदमत्तकानि, निप्फन्नानि, न रूप-रूपानि। अपि च खो रूपान आकारविकारअन्तरपरिच्छेदमत्ततो रूपं ति सङ्ख्यं गतानि। इति सब्बानि पेतानि सत्तवीसति रूपानि रूपक्खन्धो, एकासीतिया लोकियचित्तेहि सद्धिं उप्पन्ना वेदना वेदनाक्खन्धो, तसम्पयुत्ता सञ्ञा सञ्ञा-क्खन्धो, सङ्खारा सङ्खारक्खन्धो, विञ्ञाण विञ्ञाणक्खन्धो ति। इति रूपक्खन्धो रूप, चत्तारो अरूपिनो खन्धा नाम ति एवमेको पञ्चक्खन्धवसेन नामरूपं ववत्थपेति।

१२. अपरो "य किञ्चि रूपं सब्बं रूपं चत्तारि महाभूतानि चतुन्नं च महाभूतानं उपादायरूपं" (म० १-२७०) ति एवं सङ्खित्तेनेव इमस्मिं अत्तभावे रूप परिग्गहेत्वा, तथा मनायतन चेव धम्मायतनेकदेस च नाम ति परिग्ग-हेत्वा "इति इद च नाम इद च रूप, इद वुच्चति नामरूप" ति **सङ्खेपतो** नामरूपं ववत्थपेति।

१३ सचे पनस्स तेन तेन मुखेन रूप परिग्गहेत्वा अरूपं परिग्गण्हतो सुखुमत्ता अरूपं न उपट्ठाति, तेन धुरनिक्खेप अकत्वा रूपमेव पुनप्पुनं सम्म-सितब्बं मनसिकातब्ब परिग्गहेतब्बं ववत्थपेतब्ब। यथा यथा हिस्स रूपं सुविक्खालितं होति निज्जट सुपरिसुद्ध, तथा तथा तदारम्मणा अरूपधम्मा सयमेव पाकटा होन्ति।

१४ यथा हि चक्खुमतो पुरिसस्स अपरिसुद्धे आदासे मुखनिमित्त ओलो-केन्तस्स निमित्तं न पञ्ञायति। सो 'निमित्तं न पञ्ञायती" ति न आदासं छड्डेति, अथ खो नं पुनप्पुन परिमज्जति। तस्स परिसुद्धे आदासे निमित्तं सयमेव पाकट होति। यथा च तेलत्थिको तिलपिट्ठ दोणियं आकिरित्वा उदकेन परिप्फोसेत्वा एकवारं द्वेवारं पोळनमत्तेन तेले अनिक्खमन्ते न तिलपिट्ठ छड्डेति, अथ खो नं पुनप्पुन उण्होदकेन परिप्फोसेत्वा मद्दित्वा पीळेति। तस्सेवं करोतो विप्पसन्न तिलतेलं निक्खमति। यथा वा पन उदक पसादेतुकामो कतकट्ठिं[1] गहेत्वा अन्तोघटे हत्थं ओतारेत्वा एकद्वे वारे घसनमत्तेन उदके अविप्पसीदन्ते न कतकट्ठिं छड्डेति, अथ खो न पुनप्पुन घसति। तस्सेव करोन्तस्स कलल-कद्दमं[2] सन्निसीदति, उदक अच्छ होति विप्पसन्नं। एवमेव तेन भिक्खुना धुरनिक्खेप अकत्वा रूपमेव पुनप्पुन सम्मसितब्बं मनसिकातब्ब परिग्गहे-तब्ब ववत्थपेतब्बं।

१५. यथा यथा हिस्स रूपं सुविक्खालितं होति निज्जटं सुपरिसुद्धं, तथा तथा तप्पच्चनीककिलेसा सन्निसीदन्ति, कद्दमुपरि उदकं विय चित्त पसन्नं

---

१. **कतकट्ठिं** ति। कतकबीजं। २. **कललकद्दमं** ति। तनुकद्दमं।

होति। तदारम्मणा अरूपधम्मा सयमेव पाकटा होन्ति। एवं अञ्ञाहि पि उच्छु-चोर-गोण-दधि-मच्छादीहि उपमाहि अयमत्थो पकासेतब्बो।

अरूपधम्मानं उपट्ठानाकारकथा

१६. एवं सुविसुद्धरूपपरिग्गहस्स पनस्स अरूपधम्मा तीहि आकारेहि उपट्ठहन्ति, फस्सवसेन वा, वेदनावसेन वा, विञ्ञाणवसेन वा।

कथं? एकस्स ताव "पथवीधातु कक्खळलक्खणा" ति आदिना नयेन धातुयो परिग्गण्हन्तस्स, पठमाभिनिपातो फस्सो, तसम्पयुत्ता वेदना वेदनाक्खन्धो, सञ्ञा सञ्ञाक्खन्धो, सद्धिं फस्सेन चेतना सङ्खारक्खन्धो, चित्तं विञ्ञाणक्खन्धो ति उपट्ठाति। तथा "केसे पथवीधातु कक्खळलक्खणा···पे०··· अस्सासपस्सासे पथवीधातु कक्खळलक्खणा" ति पठमाभिनिपातो फस्सो, तसम्पयुत्ता वेदना वेदनाक्खन्धो···पे०···चित्तं विञ्ञाणक्खन्धो ति उपट्ठाति। एवं अरूपधम्मा **फस्सवसेन** उपट्ठहन्ति। (१)

१७. एकस्स "पथवीधातु कक्खळलक्खणा" ति तस्स रसानुभवनकवेदना वेदनाक्खन्धो, तंसम्पयुत्ता सञ्ञा सञ्ञाक्खन्धो, तंसम्पयुत्तो फस्सो च चेतना च सङ्खारक्खन्धो, तसम्पयुत्त चित्त विञ्ञाणक्खन्धो ति उपट्ठाति। तथा "केसे पथवीधातु कक्खळलक्खणा ·पे० · अस्सासपस्सासे पथवीधातु कक्खळलक्खणा" ति तदारम्मणरसानुभवनकवेदना वेदनाक्खन्धो ··पे० तंसम्पयुत्त चित्तं विञ्ञाणक्खन्धो ति उपट्ठाति। एवं **वेदनावसेन** अरूपधम्मा उपट्ठहन्ति। (२)

१८ अपरस्स "पथवीधातु कक्खळलक्खणा" ति आरम्मणपटिविजाननं विञ्ञाण विञ्ञाणक्खन्धो, तंसम्पयुत्ता वेदना वेदनाक्खन्धो, सञ्ञा सञ्ञाक्खन्धो, फस्सो च चेतना च सङ्खारक्खन्धो ति उपट्ठाति। तथा "केसे पथवीधातु कक्खळलक्खणा···पे०·· अस्सासपस्सासे पथवीधातु कक्खळलक्खणा" ति आरम्मणपटिविजाननं विञ्ञाणं विञ्ञाणक्खन्धो, तंसम्पयुत्ता वेदना वेदनाक्खन्धो, सञ्ञा सञ्ञाक्खन्धो, फस्सो च चेतना च सङ्खारक्खन्धो ति उपट्ठाति। एव **विञ्ञाणवसेन** अरूपधम्मा उपट्ठहन्ति। (३)

१९ एतेनेव उपायेन—"कम्मसमुट्ठाने केसे पथवीधातु कक्खळलक्खणा" ति आदिना नयेन द्वाचत्तालीसाय धातुकोट्ठासेसु चतुन्न चतुन्न धातूनं वसेन, सेसेसु च चक्खुधातुआदोसु रूपपरिग्गहमुखेसु सब्ब नयभेद अनुगन्त्वा योजना कातब्बा।

२०. यस्मा च एवं सुविसुद्धरूपपरिग्गहस्सेव तस्स अरूपधम्मा तीहाकारेहि पाकटा होन्ति, तस्मा सुविसुद्धरूपपरिग्गहेनेव अरूपपरिग्गहाय योगो कातब्बो, न इतरेन। सचे हि एकस्मिं वा रूपधम्मे उपट्ठिते, द्वीसु वा रूपं पहाय अरूप-

परिग्गहं आरभति, कम्मट्ठानतो परिहायति, पथवीकसिणभावनाय वुत्तप्पकारा (विसु० ४-१२३) पब्बतेय्या गावी विय। सुविसुद्धरूपपरिग्गहस्स पन अरूप-परिग्गहाययोग करोतो कम्मट्ठानं वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं पापुणाति।

२१ सो एवं फस्सादीनं वसेन उपट्ठिते चत्तारो अरूपिनो खन्धे नामं ति, तेसं आरम्मणभूतानि चत्तारि महाभूतानि चतुन्न च महाभूतानं उपादायरूपं रूपं ति ववत्थपेति। इति अट्ठारस धातुयो, द्वादसायतनानि, पञ्चक्खन्धा ति सब्बे पि तेभूमके धम्मे, खग्गेन सुमग्गं विवरमानो विय, यमकतालकन्दं फालयमानो विय च नाम च रूप चा ति द्वेधा ववत्थपेति। नामरूपमत्ततो उद्धं अञ्ञो सत्तो वा पुग्गलो वा देवो वा ब्रह्मा वा नत्थी ति निट्ठं गच्छति।

सम्बहुलसुत्तन्तसंसन्दनाकथा

२२. सो एवं याथावसरसतो नाकरूपं ववत्थपेत्वा सुट्ठुतर "सत्तो पुग्गलो" ति इमिस्सा लोकसमञ्ञाय पहानत्थाय, सत्तसम्मोहस्स समतिक्कमत्थाय, असम्मोहभूमियं चित्तं ठपनत्थाय **सम्बहुलसुत्तन्तवसेन** "नामरूपमत्तमेविदं, न सत्तो, न पुग्गलो अत्थी" ति एतमत्थं ससन्देत्वा ववत्थपेति। वुत्त हेतं—

"यथा पि अङ्गसम्भारा होति सद्दो रथो इति।
एवं खन्धेसु सन्तेसु होति सत्तो ति सम्मुती" ति॥ (स० १-१३५)

२३. अपरं पि वुत्त—

"सेय्यथापि आवुसो कट्ठं च पटिच्च वल्लिं च पटिच्च मत्तिकं च पटिच्च तिणं च पटिच्च आकासो परिवारितो अगारं त्वेव सङ्खं गच्छति; एवमेव खो आवुसो अट्ठिं च पटिच्च न्हारुं च पटिच्च मस च पटिच्च चम्मं च पटिच्च आकासो परिवारितो रूप त्वेव सङ्खं गच्छती" (म० १-२४०) ति।

२४. अपरं पि वुत्त—

"दुक्खमेव हि सम्भोति दुक्ख तिट्ठति वेति च।
नाञ्ञत्र दुक्खा सम्भोति नाञ्ञं दुक्खा निरुज्झती" ति॥
(स० १-१३५)

उपमाहिनामरूपविभावनाकथा

२५. एव अनेकसतेहि सुत्तन्तेहि नामरूपमेव दीपितं, न सत्तो न पुग्गलो। तस्मा यथा अक्ख-चक्क-पञ्जर-ईसादीसु अङ्गसम्भारेसु एकेनाकारेन सण्ठितेसु रथो ति वोहारमत्तं होति, परमत्थतो एकेकस्मि अङ्गे उपपरिक्खियमाने रथो नाम नत्थि। यथा च कट्ठादीसु गेहसम्भारेसु एकेनाकारेन आकास परिवारेत्वा ठितेसु गेहं ति वोहारमत्तं होति, परमत्थतो गेह नाम नत्थि। यथा च अङ्गुलि-

अङ्गुट्ठादीसु एकेनाकारेन ठितेसु **मुट्ठी** ति वोहारमत्त होति। दोणितन्तिआदीसु **वीणा** ति, हत्थिअस्सादीसु **सेना** ति, पाकार-गेह-गोपुरादीसु **नगरं** ति, खन्ध-साखापलासादीसु एकेनाकारेन ठितेसु **रुक्खो** ति वोहारमत्त होति, परमत्थतो एकेकस्मि अवयवे उपपरिक्खियमाने रुक्खो नाम नत्थि, एवमेव पञ्चसु उपादानक्खन्धेसु सति **"सत्तो पुग्गलो"** ति वोहारमत्त होति, परमत्थतो एकेकस्मि धम्मे उपपरिक्खियमाने "अस्मी ति वा, अहं ति वा" ति गाहस्स वत्थुभूतो सत्तो नाम नत्थि। परमत्थतो पन नामरूपमत्तमेव अत्थी ति। एव पस्सतो हि दस्सनं **यथाभूतदस्सनं** नाम होति।

२६ यो पनेतं यथाभूतदस्सन पहाय 'सत्तो अत्थी' ति गण्हाति, सो तस्स विनास अनुजानेय्य, अविनासं वा। अविनास अनुजानन्तो सस्सते पतति। विनासं अनुजानन्तो उच्छेदे पतति। कस्मा ? खीरन्वयस्स दधिनो विय तदन्वयस्स अञ्ञस्स अभावतो। सो 'सस्सतो सत्तो' ति गण्हन्तो ओलीयति नाम 'उच्छिज्जती' ति गण्हन्तो अतिधावति नाम। तेनाह भगवा—

"द्वीहि, भिक्खवे, दिट्ठिगतेहि परियुट्ठिता देवमनुस्सा ओलीयन्ति एके, अतिधावन्ति एके, चक्खुमन्तो व पस्सन्ति।

"कथ च, भिक्खवे, ओलीयन्ति एके ? भवारामा, भिक्खवे, देवमनुस्सा भवरता भवसम्मुदिता। तेसं भवनिरोधाय धम्मे देसियमाने चित्त न पक्खन्दति नप्पसीदति न सन्तिट्ठति नाधिमुच्चति। एव खो, भिक्खवे, ओलीयन्ति एके।

"कथं च, भिक्खवे, अतिधावन्ति एके ? भवेनेव खो पनेके अट्टीयमाना हरायमाना जिगुच्छमाना विभव अभिनन्दन्ति। यतो किर, भो, अयं अत्ता कायस्स भेदा उच्छिज्जति विनस्सति, न होति पर मरणा, एतं सन्तं, एत पणीतं, एतं याथाव ति। एवं खो, भिक्खवे, अतिधावन्ति एके।

"कथ च, भिक्खवे, चक्खुमन्तो पस्सन्ति ? इध, भिक्खवे भिक्खु भूतं भूतो पस्सति, भूत भूतो दिस्वा भूतस्स निब्बिदाय विरागाय निरोधाय पटिपन्नो होति। एवं खो, भिक्खवे, चक्खुमन्तो पस्सन्ती" (खु० १-२११) ति।

२७. तस्मा यथा दारुयन्तं सुञ्ञ निज्जीवं निरीहक, अथ च पन दारुरज्जुकसमायोगवसेन गच्छति पि, तिट्ठति पि। सईहकं सब्यापार विय खायति, एवमिद नामरूप पि सुञ्ञं निज्जीव निरीहकं, अथ च पन अञ्ञमञ्ञसमायोगवसेन गच्छति पि, तिट्ठति पि। सईहकं सब्यापार विय खायती ति दट्ठब्बं। तेनाहु **पोराणा**—

"नामं च रूपं च इधत्थि सच्चतो, न हेत्थ सत्तो मनुजो च विज्जति।
सुञ्ञं इद यन्तमिवाभिसङ्खतं, दुक्खस्स पुञ्जो तिणकट्ठसदिसो" ति॥

न केवलं चेतं दारुयन्तूपमाय, अञ्ञाहि पि नळकलापीआदीहि उपमाहि विभावेतब्बं। यथा हि द्वीसु नळकलापीसु अञ्ञमञ्ञ निस्साय ठपितासु एका एकिस्सा उपत्थम्भो होति, एकिस्सा पतमानाय इतरा पि पतति; एवमेव पञ्चवोकारभवे नामरूपं अञ्ञमञ्ञं निस्साय पवत्तति, एक एकस्स उपत्थम्भो होति। मरणवसेन एकस्मिं पतमाने इतरं पि पतति। तेनाहु **पोराणा**—

"यमक नामरूप च उभो अञ्ञोञ्ञनिस्सिता।
एकस्मिं भिज्जमानस्मिं उभो भिज्जन्ति पच्चया" ति॥

२८ यथा च दण्डाभिहत भेरिं निस्साय सद्दे पवत्तसाने अञ्ञा भेरी, अञ्ञो सद्दो, भेरिसद्दा असम्मिस्सा, भेरी सद्देन सुञ्ञा, सद्दो भेरिया सुञ्ञो, एवमेवं वत्थुद्वारारम्मणसङ्खातं रूपं निस्साय नामे पवत्तमाने अञ्ञ रूपं, अञ्ञ नाम, नामरूपा असम्मिस्सा, नाम रूपेन सुञ्ञ, रूप नामेन सुञ्ञ, अपि च खो भेरिं पटिच्च सद्दो विय रूप नाम पवत्तति। तेनाहु पोरणा—

"न चक्खुतो जायरे फस्सपञ्चमा न रूपतो नो च उभिन्नमन्तरा।
हेतुं पटिच्च पभवन्ति सङ्खता यथा पि सद्दो पहटाय भेरिया॥
न सोततो जायरे फस्सपञ्चमा न सद्दतो नो च उभिन्नमन्तरा ·· पे०···· ॥
न घानतो जायरे फस्सपञ्चमा न गन्धतो नो च उभिन्नमन्तरा ·· पे० · ॥
न जिव्हतो जायरे फस्सपञ्चमा न रसतो नो च उभिन्नमन्तरा·· पे० ॥
न कायतो जायरे फस्सपञ्चमा न फस्सतो नो च उभिन्नमन्तरा · पे· · ० ॥
न वत्थुरूपा पभवन्ति सङ्खता न चापि धम्मायतनेहि निग्गता।
हेतुं पटिच्च पभवन्ति सङ्खता यथा पि सद्दो पहटाय भेरिया" ति॥

२९ अपि चेत्थ नाम निततेजं न सकेन तेजेन पवत्तितु सक्कोति, न खादति, न पिवति, न ब्याहरति, न इरियापथं कप्पेति। रूप पि नित्तेज न सकेन तेजेन पवत्तितु सक्कोति। न हि तस्सा खादितुकाकता, नापि पिवितुकामता, न ब्याहरितुकामता, न इरियापथ कप्पेतुकामता। अथ खो नामं निस्साय रूप पवत्तति, रूप निस्साय नाम पवत्तति। नामस्स खादितुकामताय पिवुतिकामताय व्याहरितुकामताय इरियापथ कप्पेतुकामताय सति रूप खादति, पिवति, ब्याहरति, इरियापथं कप्पेति।

३०. इमस्स पनत्थस्स विभावनत्थाय इम उपमं उदाहरन्ति—यथा जच्चन्धो च पीठसप्पी च दिसापक्कमितुकामा अस्सु। जच्चन्धो पीठसप्पिं एवमाह— "अहं खो, भणे, सक्कोमि पादेहि पादकरणीयं कातु, नत्थि च मे चक्खूनि, येहि समविसम पस्सेय्यं" ति। पीठसप्पी पि जच्चन्धं एवमाह—"अहं खो, भणे, सक्कोमि चक्खुना चक्खुकरणीयं कातु, नत्थि च मे पादानि, येहि अभिक्कमेय्य

वा पटिक्कमेय्यं वा" ति। सो तुट्ठहट्ठो जच्चन्धो पीठसप्पिं असकूटं आरोपेसि। पीठसप्पो जच्चन्धस्स असकूटे निसीदित्वा एवमाह—"वामं मुञ्च दक्खिणं गण्ह, दक्खिणं मुञ्च वामं गण्हा" ति। तत्थ जच्चन्धो पि नित्तेजो दुब्बलो न सकेन तेजेन सकेन बलेन गच्छति, पीठसप्पी पि नित्तेजो दुब्बलो न सकेन तेजेन सकेन बलेन च्छति, न च तेसं अञ्ञमञ्ञं निस्साय गमनं नप्पवत्तति, एवमेवं नामं पि नित्तेजं न सकेन तेजेन उप्पज्जति, न तासु तासु किरियासु पवत्तति, रूपं पि नित्तेजं न सकेन तेजेन उप्पज्जति, न तासु तासु किरियासु पवत्तति, न च तेसं अञ्ञमञ्ञं निस्साय उप्पत्ति वा पवत्ति वा न होति।

३१. तेनेत वुच्चति—

"न सकेन बलेन जायरे, नो पि सकेन बलेन तिट्ठरे।
परधम्मवसानुवत्तिनो जायरे सङ्खता अत्तदुब्बला॥
परपच्चयतो च जायरे परआरम्मणतो समुट्ठिता।
आरम्मणपच्चयेहि च परधम्मेहि चिमे पभाविता॥

३२ यथा पि नावं निस्साय मनुस्सा यन्ति अण्णवे।
एवमेव रूपं निस्साय नामकायो पवत्तति॥
यथा मनुस्से निस्साय नावा गच्छति अण्णवे।
एवमेव नामं निस्साय रूपकायो पवत्तति॥
उभो निस्साय गच्छन्ति मनुस्सा नावा च अण्णवे।
एवं नामं च रूपं च उभो अञ्ञोञ्ञनिस्सिता" ति॥ ( )

३३ एवं नानानयेहि नामरूपं ववत्थापयतो सत्तसञ्ञं अभिभवित्वा असम्मोहभूमियं ठितं नामरूपानं याथावदस्सनं[1] दिट्ठिविसुद्धी[2] ति वेदितब्बं। नामरूपववत्थानं ति पि सङ्खारपरिच्छेदो ति पि एतस्सेव[3] अधिवचनं॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
पञ्ञाभावनाधिकारे दिट्ठिविसुद्धिनिद्देसो नाम
अट्ठारसमो परिच्छेदो॥



१. **नामरूपानं याथावदस्सनं** ति। "इदं नामं, एत्तकं नामं, न इतो भिय्यो, इदं रूपं, एत्तकं रूपं, न इतो भिय्यो" ति तेसं लक्खणसल्लक्खणमुखेन धम्ममत्तभावदस्सनं।

२. अत्तदिट्ठिमलविसोधनतो **दिट्ठिविसुद्धी** ति वेदितब्बं।

३. **एतस्सेवा** ति। नामरूपस्स याथावदस्सनस्सेव।

कंखावितरणविसुद्धिनिद्देसो

एकूनवीसतिमो परिच्छेदो

पच्चयपरिग्गहकथा

१. एतस्सेव पन नामरूपस्स पच्चयपरिग्गहणेन तीसु अद्धासु कङ्खं वितरित्वा ठितं ञाणं **कङ्खावितरणविसुद्धि** नाम।

तं सम्पादेतुकामो भिक्खु यथा नाम कुसलो भिसक्को रोगं दिस्वा तस्स समुट्ठान परियेसति, यथा वा पन अनुकम्पको पुरिसो दहर कुमारं मन्द उत्तान-सेय्यकं रथिकाय निपन्नं दिस्वा—"कस्स नु खो अयं पुत्तको?" ति तस्स मातापितरो आवज्जति; एवमेव तस्स नामरूपस्स हेतुपच्चयपरियेसन आपज्जति।

२ सो आदितो व इति पटिसञ्चिक्खति—"न ताविदं नामरूप अहेतुकं, सब्बत्थ सब्बदा सब्बेस च एकसदिसभावापत्तितो; न इस्सरादिहेतुकं, नामरूपतो उद्धं इस्सरादीनं अभावतो। ये पि नामरूपमत्तमेव इस्सरादयो ति वदन्ति, तेसं इस्सरादिसङ्खातनामरूपस्स अहेतुकभावापत्तितो। तस्मा भवितब्बमस्स हेतु-पच्चयेहि, के नु खो ते" ति?

३ सो एव नामरूपस्स हेतुपच्चये आवज्जेत्वा इमस्स ताव रूपकायस्स एवं हेतुपच्चये परिग्गण्हाति—"अयं कायो निब्बत्तमानो नेव उप्पल-पदुम-पुण्डरीक-सोगन्धिकादीन अब्भन्तरे निब्बत्तति, न मणिमुत्ताहारादीन, अथ खो आमासय-पक्कासयानं अन्तरे उदरपटल पच्छतो पिट्ठिकण्टक पुरतो कत्वा अन्त-अन्तगुण-परिवारितो सयं पि दुग्गन्धजेगुच्छपटिक्कूलो दुग्गन्धजेगुच्छपटिक्कूले परमसम्बाधे ओकासे पूतिमच्छ-पूतिकुम्मास-ओळिगल्ल-चन्दनिकादीसु किमि विय निब्बत्तति। तस्सेव निब्बत्तमानस्स 'अविज्जा तण्हा उपादानं कम्मं' ति इमे चत्तारो धम्मा निब्बत्तकत्ता **हेतु**, आहारो उपत्थम्भकत्ता **पच्चयो** ति पञ्च धम्मा हेतुपच्चया होन्ति। तेसु पि अविज्जादयो तयो इमस्स कायस्स माता विय दारकस्स उपनिस्सया होन्ति। कम्मं पिता विय पुत्तस्स जनकं। आहारो धाती विय दारकस्स सन्धारको" ति।

एवं रूपकायस्स पच्चयपरिग्गह कत्वा पुन "चक्खु च पटिच्च रूपे च उप्पज्जति चक्खुविञ्ञाणं" (स० २-६१) ति आदिना नयेन नामकायस्स पच्चय-परिग्गहं करोति।

सो एवं पच्चयतो नामरूपस्स पवत्ति दिस्वा यथा इदं एतरहि, एवं अतीते

पि अद्धाने पच्चयतो पवत्तित्थ, अनागते पि पच्चयतो पवत्तिस्सती ति समनुपस्सति।

४ तस्सेव समनुपस्सतो या सा पुब्बन्तं आरब्भ "अहोसिं नु खो अहं अतीतमद्धान, न नु खो अहोसिं अतीतमद्धान, किं नु खो अहोसिं अतीतमद्धानं, कथ नु खो अहोसिं अतीतमद्धान, किं हुत्वा किं अहोसिं नु खो अहं अतीतमद्धान" (म० १-१२) ति पञ्चविधा विचिकिच्छा वुत्ता, या पि अपरन्त आरब्भ "भविस्सामि नु खो अह अनागतमद्धान, न नु खो भविस्सामि अनागतमद्धानं, किं नु खो भविस्सामि अनागतमद्धान, कथ नु खो भविस्सामि अनागतमद्धान, किं हुत्वा किं भविस्सामि नु खो अहं अनागतमद्धान" (म० १-१२) ति पञ्चविधा विचिकिच्छा वुत्ता, या पि पच्चुप्पन्न आरब्भ "एतरहि वा पन पच्चुप्पन्नं अद्धानं अज्झत्तं कथकथी होति—अहं नु खोस्मि, नो नु खोस्मि, किं नु खोस्मि, कथं नु खोस्मि, अयं नु खो सत्तो कुतो आगतो, सो कुहिङ्गामी भविस्सती" (म० १-१२) ति छब्बिधा विचिकिच्छा वुत्ता, सा सब्बा पि पहीयति।

५ अपरो **साधारणासाधारणवसेन** दुविधं नामस्स पच्चयं पस्सति, कम्मादिवसेन चतुब्बिध रूपस्स। दुविधो हि नामस्स पच्चयो—साधारणो, असाधारणो च। तत्थ चक्खादीनि छ द्वारानि, रूपादीनि छ आरम्मणानि नामस्स **साधारणो** पच्चयो, कुसलादिभेदतो सब्बप्पकारस्सा पि ततो पवत्तितो। मनसिकारादिको **असाधारणो**। योनिसोमनसिकारसद्धम्मस्सवनादिको हि कुसलस्सेव होति, विपरीतो अकुसलस्स, कम्मादिको विपाकस्स, भवङ्गादिको किरियस्सा ति।

६. रूपस्स पन—कम्म, चित्त, उतु, आहारो ति अय कम्मादिको चतुब्बिधो पच्चयो। तत्थ कम्मं अतीतमेव कम्मसमुट्ठानस्स रूपस्स पच्चयो होति। चित्त चित्तसमुट्ठानस्स उप्पज्जमान। उतुआहारा उतुआहारसमुट्ठानस्स ठितिक्खणे पच्चया होन्ती ति। एवमेवेको नामरूपस्स पच्चयपरिग्गह करोति।

सो एव पच्चयतो नामरूपस्स पवत्ति दिस्वा यथा इद एतरहि, एव अतीते पि अद्धाने पच्चयतो पवत्तित्थ, अनागते पि पच्चयतो पवत्तिस्सती ति समनुपस्सति। तस्सेव[1] समनुपस्सतो वुत्तनयेनेव तीसु पि अद्धासु विचिकिच्छा पहीयति।

७ अपरो, तेसं येव नामरूपसङ्खातानं सङ्खारान जरापत्ति, जिण्णानं च भङ्ग[2] दिस्वा, इदं सङ्खारानं जरामरण नाम जातिया सति होति, जाति भवे सति, भवो उपादाने सति, उपादानं तण्हाय सति, तण्हा वेदनाय सति, वेदना फस्से सति, फस्सो सळायतने सति, सळायतन नामरूपे सति, नामरूपं विञ्ञाणे

१. एवं ति। "साधारणासाधारणवसेना" ति आदिना वुत्तप्पकारेन।
२. भङ्गं ति। मरण।

सति, विञ्ञाणं सङ्खारेसु सति, सङ्खारा अविज्जाय सती ति एवं **पटिलोम-पटिच्चसमुप्पादवसेन** नामरूपस्स पच्चयपरिग्गहं करोति। अथस्स वुत्तनयेनेव विचिकिच्छा पहीयति।

८. अपरो, "इति खो अविज्जापच्चया सङ्खारा" (सं० २-५) ति पुब्बे वित्थारेत्वा दस्सितअ**नुलोमपटिच्चसमुप्पादवसेनेव** नामरूपस्स पच्चयपरिग्गहं करोति। अथस्स वुत्तनयेनेव कङ्खा पहीयति।

९. अपरो, "पुरिमकम्मभवस्मिं मोहो अविज्जा, आयूहना सङ्खारा, निकन्ति तण्हा, उपगमन उपादानं, चेतना भवो ति इमे पञ्च धम्मा पुरिमकम्मभवस्मिं इध पटिसन्धिया सच्चया। इध पटिसन्धि विञ्ञाण, ओक्कन्ति नामरूप, पसादो आयतनं, फुट्ठो फस्सो, वेदयित वेदना ति इमे पञ्च धम्मा इधूप-पत्तिभवस्मिं पुरेकतस्स कम्मस्स पच्चया। इध परिपक्कत्ता आयतनानं मोहो अविज्जा · पे० ···चेतना भवो ति इमे पञ्च धम्मा इध कम्मभवस्मिं आयतिं पटिसन्धिया पच्चया" (खु० ५-५८) ति एव **कम्मवट्ट-विपाकवट्टवसेन** नाम-रूपस्स पच्चयपरिग्गह करोति।

१० तत्थ चतुब्बिधं कम्मं—दिट्ठधम्मवेदनीयं, उपपज्जवेदनीयं, अपरा-परियवेदनीयं, अहोसिकम्म ति। तेसु एकजवनवीथिय सत्तसु चित्तेसु कुसला वा अकुसला वा पठमजवनचेतना **दिट्ठधम्मवेदनीयकम्मं** नाम। तं इमस्मिं येव अत्तभावे विपाकं देति। तथा असक्कोन्तं पन "अहोसिकम्म नाहोसि कम्म-विपाको, न भविस्सति कम्मविपाको, नत्थि कम्मविपाको" ति इमस्स तिकस्स वसेन **अहोसिकम्मं** नाम होति। अत्थसाधिका पन सत्तमजवनचेतना **उपपज्ज-वेदनीयकम्मं** नाम। तं अनन्तरे अत्तभावे विपाक देति। तथा असक्कोन्तं वुत्तनयेनेव अहोसिकम्मं नाम होति। उभिन्नं अन्तरे पञ्च जवनचेतना **अपरा-परियवेदनीयकम्मं** नाम। त अनागते यदा ओकासं लभति, तदा विपाक देति। सति संसारपवत्तिया अहोसिकम्म नाम न होति। (१)

११ अपर पि चतुब्बिध कम्मं—य गरुक, य बहुलं, यदासन्न, कटत्ता वा पन कम्मं ति। तत्थ कुसलं वा होतु अकुसल वा, गरुकागरुकेसु यं **गरुकं** मातुघातादिकम्मं वा, महग्गतकम्म वा तदेव पठम विपच्चति। तथा बहुला-बहुलेसु पि **यं बहुलं** होति सुसील्यं वा दुसील्यं वा, तदेव पठम विपच्चति। **यदासन्नं** नाम मरणकाले अनुस्सरितकम्मं। यं हि आसन्नमरणो अनुस्सरितुं सक्कोति, तेनेव उपपज्जति। एतेहि पन तीहि मुत्त पुनप्पुनं लद्धासेवनं **कटत्ता वा पन कम्मं** नाम होति। तेस अभावे तं पटिसन्धिं आकड्ढति। (२)

१२. अपर पि चतुब्बिध कम्मं—जनकं, उपत्थम्भकं, उपपीळक, उपघातकं ति। तत्थ **जनकं** नाम कुसलं पि होति, अकुसल पि। तं पटिसन्धियं पि पवत्ते

पि रूपारूपविपाकक्खन्धे जनेति। **उपत्थम्भकं** पन विपाकं जनेतुं न सक्कोति, अञ्ञेन कम्मेन दिन्नाय पटिसन्धिया जनिते विपाके उप्पज्जमानकसुखदुक्खं उपत्थम्भेति, अद्धानं पवत्तेति। **उपपीळकं** अञ्ञेन कम्मेन दिन्नाय पटिसन्धिया जनिते विपाके उप्पज्जमानकसुखदुक्खं पोळेति बाधति, अद्धानं पवत्तितुं न देति। **उपघातकं** पन सयं कुसलं पि अकुसलं पि समानं अञ्ञं दुब्बलकम्मं घातेत्वा तस्स विपाकं पटिबाहित्वा अत्तनो विपाकस्स ओकासं करोति। एवं पन कम्मेन कते ओकासे तं विपाकं उप्पन्नं नाम वुच्चति। (३)

१३ इति इमेसं द्वादसन्नं कम्मानं कम्मन्तरं चेव विपाकन्तरं च बुद्धानं कम्मविपाकञाणस्सेव याथावसरसतो पाकटं होति, असाधारणं सावकेहि। विपस्सकेन पन कम्मन्तरं च विपाकन्तरं च एकदेसतो जानितब्बं। तस्मा अयं मुखमत्तदस्सनेन कम्मविसेसो पकासितो ति।

१४. इति इमं द्वादसविधं कम्मं कम्मवट्टे पक्खिपित्वा एवमेको कम्मवट्ट-विपाकवट्टवसेन नामरूपस्स पच्चयपरिग्गहं करोति। सो एवं कम्मवट्ट-विपाक-वट्टवसेन पच्चयतो नामरूपस्स पवत्तिं दिस्वा "यथा इदं एतरहि, एवं अतीते पि अद्धाने कम्मवट्ट-विपाकवट्टवसेन पच्चयतो पवत्तित्थ, अनागते पि कम्मवट्ट-विपाकवट्टवसेनेव पच्चयतो पवत्तिस्सती" ति, इति कम्मं चेव कम्मविपाको च, कम्मवट्टं च विपाकवट्टं च, कम्मपवत्तं च बिपाकपवत्तं च, कम्मसन्तति च विपाकसन्तति च, किरिया च किरियाफलं च,

कम्मा विपाका वत्तन्ति, विपाको कम्मसम्भवो।
कम्मा पुनब्भवो होति, एवं लोको पवत्तती ति॥ समनुपस्सति।

तस्सेवं समनुपस्सतो या सा पुब्बन्तादयो आरब्भ "अहोसिं नु खो अहं" ति आदिना नयेन वुत्ता सोळसविधा विचिकिच्छा, सा सब्बा पहीयति। सब्बभव-योनि-गति-ठिति-निवासेसु हेतुफलसम्बन्धवसेन पवत्तमानं नामरूपमत्तमेव खायति। सो नेव कारणतो उद्धं कारकं पस्सति, न विपाकप्पवत्तितो उद्धं विपाकपटिसवेदकं। कारणे पन सति "कारको" ति, विपाकप्पवत्तिया सति "पटिसवेदको" ति समञ्ञामत्तेन पण्डिता वोहरन्तिच्चेवस्स सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठं होति।

१५. तेनाहु **पोराणा**—

"कम्मस्स कारको नत्थि, विपाकस्स च वेदको।
सुद्धधम्मा पवत्तन्ति, एवेतं सम्मदस्सनं॥
एवं कम्मे विपाके च वत्तमाने सहेतुके।
बीजरुक्खादिकानं व पुब्बा कोटि न नायति॥

अनागते पि संसारे अप्पवत्तं न दिस्सति।
एतमत्थं अनञ्ञाय तित्थिया असयंवसी॥
सत्तसञ्ञ गहेत्वान सस्सतुच्छेददस्सिनो।
द्वासट्ठिदिट्ठि गण्हन्ति अञ्ञमञ्ञविरोधिता॥
दिट्ठिबन्धनबद्धा ते तण्हासोतेन वुय्हरे।
तण्हासोतेन वुय्हन्ता न ते दुक्खा पमुच्चरे॥
एवमेत अभिञ्ञाय भिक्खु बुद्धस्स सावको।
गम्भीरं निपुणं सुञ्ञं पच्चयं पटिविज्झति॥
कम्मं नत्थि विपाकम्हि, पाको कम्मे न विज्जति।
अञ्ञमञ्ञं उभो सुञ्ञा न च कम्मं विना फल॥

१६ यथा न सूरिये अग्गि न मणिम्हि न गोमये।
न तेस[1] बहि सो[2] अत्थि, सम्भारेहि[3] च जायति॥
तथा न अन्तो कम्मस्स विपाको उपलब्भति।
बहिद्धा पि न कम्मस्स न कम्म तत्थ विज्जति॥
फलेन सुञ्ञं तं कम्मं, फलं कम्मे न विज्जति।
कम्म च खो उपादाय ततो निब्बत्तते फलं॥
न हेत्थ देवो ब्रह्मा वा संसारस्सत्थिकारको।
सुद्धधम्मा पवत्तन्ति हेतुसम्भारपच्चया" ति॥

१७ तस्सेव कम्मवट्ट-विपाकवट्टवसेन नामरूपस्स पच्चयपरिग्गह कत्वा तीसु अद्धासु पहीनविचिकिच्छस्स सब्बे अतीतानागतपच्चुप्पन्ना धम्मा चुति-पटिसन्धिवसेन विदिता होन्ति। सास्स होति ञातपरिञ्ञा।

१८. सो एव पजानाति—ये अतीते कम्मपच्चया निब्बत्ता खन्धा, ते तत्थेव निरुद्धा। अतीतकम्मपच्चया पन इमस्मिं भवे अञ्ञे निब्बत्ता। अतीतभवतो इम भव आगतो एकधम्मो पि नत्थि। इमस्मि पि भवे कम्मपच्चयेन निब्बत्ता खन्धा निरुज्झिस्सन्ति। पुनब्भवे अञ्ञे निब्बत्तिस्सन्ति। इमम्हा भवा पुनब्भवं एकधम्मो पि न गमिस्सति। अपि च खो यथा न आचरियमुखतो सज्झायो अन्तेवासिकस्स मुखं पविसति, न च तप्पच्चया तस्स मुखे सज्झायो न वत्तति; न दूतेन मन्तोदक पीत रोगिनो उदरं पविसति, न च तस्स तप्पच्चया रोगो न वूपसम्मति; न मुखे मण्डनविधानं आदासतलादीसु मुखनिमित्त गच्छति, न च

१. तेसं ति। सुरियादीनं। २. सो ति। अग्गि।
३. सम्भारेही ति। आतपादीहि कारणेहि।

तत्थ तप्पच्चया मण्डनविधानं न पञ्ञायति; न एकिस्सा वट्टिया दीपसिखा अञ्ञं वट्टिं सङ्कमति, न तत्थ तप्पच्चया दीपसिखा न निब्बत्तति; एवमेव न अतीतभवतो इमं भवं, इतो वा पुनब्भवं कोचि धम्मो सङ्कमति, न च अतीतभवे खन्धायतनधातुपच्चया इध, इध वा खन्धायतनधातुपच्चया पुनब्भवे खन्धायतनधातुयो न निब्बत्तन्ती ति।

१९ यथेव चक्खुविञ्ञाणं मनोधातुअनन्तरं।
न चेव आगतं नापि न निब्बत्तं अनन्तरं॥
तथेव पटिसन्धिम्हि वत्तते चित्तसन्तति।
पुरिमं भिज्जते चित्तं पच्छिमं जायते ततो॥
तेसं अन्तरिका नत्थि, वीचि तेसं न विज्जति।
न चितो गच्छति किञ्चि, पटिसन्धि च जायती ति॥

२० एवं चुतिपटिसन्धिवसेन विदितसब्बधम्मस्स सब्बाकारेन नामरूपस्स पच्चयपरिग्गहञाणं थामगतं होति, सोळसविधा कङ्खा सुट्ठुतरं पहीयति। न केवलं च सा एव, "सत्थरि कङ्खती" (अभि० १–२३२) ति आदिनयप्पवत्ता अट्ठविधा पि कङ्खा पहीयति येव, द्वासट्ठि दिट्ठिगतानि विक्खम्भन्ति।

एवं नानानयेहि नामरूपस्स पच्चयपरिग्गहणेन तीसु अद्धासु कङ्खं वितरित्वा ठितं ञाणं **कङ्खावितरणविसुद्धी** ति वेदितब्बं। धम्मट्ठितिञाणं ति पि, यथाभूतञाणं ति पि, सम्मादस्सनं ति पि एतस्सेवाधिवचनं।

२१. वुत्तं हेतं—

"अविज्जा पच्चयो, सङ्खारा पच्चयसमुप्पन्ना, उभो पेते धम्मा पच्चयसमुप्पन्ना ति पच्चयपरिग्गहे पञ्ञा धम्मट्ठितियाणं" (खु० ५–५७) ति।

"अनिच्चतो मनसिकरोन्तो कतमे धम्मे यथाभूतं जानाति पस्सति? कथं सम्मादस्सनं होति? कथं तदन्वयेन सब्बे सङ्खारा अनिच्चतो सुदिट्ठा होन्ति? कत्थ कङ्खा पहीयति? दुक्खतो ··पे०····अनत्ततो मनसिकरोन्तो कतमे धम्मे यथाभूतं जानाति पस्सति ··पे० ···कत्थ कङ्खा पहीयती ति?

"अनिच्चतो मनसिकरोन्तो निमित्तं यथाभूतं जानाति पस्सति, तेन वुच्चति सम्मादस्सनं। एवं तदन्वयेन सब्बे सङ्खारा अनिच्चतो सुदिट्ठा होन्ति। एत्थ कङ्खा पहीयति। दुक्खतो मनसिकरोन्तो पवत्तं यथाभूतं जानाति पस्सति ··पे० ···अनत्ततो मनसिकरोन्तो निमित्तं च पवत्तं च यथाभूतं जानाति पस्सति, तेन वुच्चति सम्मादस्सनं। एवं तदन्वयेन सब्बे धम्मा अनत्ततो सुदिट्ठा होन्ति। एत्थ कङ्खा पहीयति।

"यं च यथाभूतञाणं, यं च सम्मादस्सन, या च कङ्खावितरणा, इमे धम्मा नानत्था चेव नानाब्यञ्जना च? उदाहु एकत्था ब्यञ्जनमेव नानं ति? य च यथाभूतञाणं, यं च सम्मादस्सन, या च कङ्खावितरणा, इमे धम्मा एकत्था, ब्यञ्जनमेव नानं" (खु० ५-३०६) ति।

२२ इमिना पन ञाणेन समन्नागतो विपस्सको बुद्धसासने लद्धस्सासो लद्धपतिट्ठो नियतगतिको चूळसोतापन्नो नाम होति।

तस्मा भिक्खु सदा सतो नामरूपस्स सब्बसो।
पच्चये परिग्गण्हेय्य कङ्खावितरणत्थिको ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
पञ्ञाभावनाधिकारे कङ्खावितरणविसुद्धिनिद्देसो नाम
एकूनवीसतिमो परिच्छेदो॥



मग्गामग्गञाणदस्सनविसुद्धिनिद्देसो

वीसतिमो परिच्छेदो

सम्मसनञाणकथा

१. 'अयं मग्गो[1]', 'अयं न मग्गो[2]' ति एवं मग्गं च अमग्गं च ञत्वा ठितं ञाणं पन **मग्गामग्गञाणदस्सनविसुद्धि** नाम।

तं सम्पादेतुकामेन **कलापसम्मसनसङ्खाताय नयविपस्सनाय** ताव योगो करणीयो। कस्मा? आरद्धविपस्सकस्स ओभासादिसम्भवे मग्गामग्गञाण-सम्भवतो। आरद्धविपस्सकस्स हि ओभासादीसु सम्भूतेसु मग्गामग्गञाणं होति। विपस्सनाय च कलापसम्मसनं आदि। तस्मा एतं कङ्खावितरणानन्तरं उद्दिट्ठं। अपि च यस्मा तीरणपरिञ्ञाय वत्तमानाय मग्गामग्गञाणं उप्पज्जति, तीरण-परिञ्ञा च ञातपरिञ्ञानन्तरा, तस्मा पि तं मग्गामग्गञाणदस्सनविसुद्धिं सम्पादेतुकामेन कलापसम्मसने ताव योगो कातब्बो।

२. तत्रायं विनिच्छयो—तिस्सो हि लोकियपरिञ्ञा—ञातपरिञ्ञा, तीरण-परिञ्ञा, पहानपरिञ्ञा च। या सन्धाय वुत्तं—"अभिञ्ञापञ्ञा ञातट्ठे ञाणं, परिञ्ञापञ्ञा तीरणट्ठे ञाणं, पहानपञ्ञा परिच्चागट्ठे ञाणं" (खु० ५-९७) ति। तत्थ "रुप्पनलक्खणं रूपं, वेदयितलक्खणा वेदना" ति एवं तेसं तेसं धम्मानं पच्चत्तलक्खणसल्लक्खणवसेन पवत्ता पञ्ञा **ञातपरिञ्ञा** नाम। "रूपं अनिच्चं, वेदना अनिच्चा" ति आदिना पन नयेन तेसं येव धम्मानं सामञ्ञ-लक्खणं आरोपेत्वा पवत्ता लक्खणारम्मणिकविपस्सना पञ्ञा **तीरणपरिञ्ञा** नाम। तेसु येव पन धम्मेसु निच्चसञ्ञादिपजहनवसेन पवत्ता लक्खणारम्मणिक-विपस्सना पञ्ञा **पहानपरिञ्ञा** नाम।

३. तत्थ सङ्खारपरिच्छेदतो पट्ठाय याव पच्चयपरिग्गहा ञातपरिञ्ञाय भूमि। एतस्मिं हि अन्तरे धम्मानं पच्चत्तलक्खणपटिवेधस्सेव आधिपच्चं होति। कलापसम्मसनतो पन पट्ठाय याव उदयब्बयानुपस्सना तीरणपरिञ्ञाय भूमि। एतस्मिं हि अन्तरे सामञ्ञलक्खणपटिवेधस्सेव आधिपच्चं होति। भङ्गानुपस्सनं आदिं कत्वा उपरि पहानपरिञ्ञाय भूमि। ततो पट्ठाय हि—"अनिच्चतो

---

१. अयं उपक्किलेसविनिमुत्ता वीथिपटिपन्ना विपस्सनापञ्ञा अरियमग्गस्स पुब्बभागे **मग्गो**। २. अयं ओभासादिभेदो दसविधो उपक्किलेसो **न मग्गो**।

अनुपस्सन्तो निच्चसञ्ञ पजहति, दुक्खतो अनुपस्सन्तो सुखसञ्ञं, अनत्ततो अनुपस्सन्तो अत्तसञ्ञ, निब्बिन्दन्तो नन्दि, विरज्जन्तो राग, निरोधेन्तो समुदयं, पटिनिस्सज्जन्तो आदान पजहती" (खु० ५-६४) ति एव निच्चसञ्ञादिपहान-साधिकानं सत्तन्नं अनुपस्सनानं आधिपच्च।

इति इमासु तीसु परिञ्ञासु सङ्खारपरिच्छेदस्स चेव पच्चयपरिग्गहस्स च साधितत्ता इमिना योगिना ञातपरिञ्ञा व अधिगता होति, इतरा च अधि-गन्तब्बा। तेन वुत्तं—यस्मा तीरणपरिञ्ञाय वत्तमानाय मग्गामग्गञाण उप्पज्जति, तीरणपरिञ्ञा च ञातपरिञ्ञानन्तरा, तस्मा पि त मग्गामग्ग-ञाणदस्सनविसुद्धि सम्पादेतुकामेन कलापसम्मसने ताव योगो कातब्बो ति।

४ तत्रायं पाळि—

"कथं अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं धम्मानं सङ्खिपित्वा ववत्थाने पञ्ञा सम्मसने ञाणं ? य किञ्चि रूपं अतीतानागतपच्चुप्पन्न अज्झत्त वा ·पे० ··यं दूरे सन्तिके वा, सब्ब रूपं अनिच्चतो ववत्थपेति, एक सम्मसनं। दुक्खतो ववत्थपेति, एक सम्मसनं। अनत्ततो ववत्थपेति, एक सम्मसनं। या काचि वेदना ·पे० यं किञ्चि विञ्ञाणं पे० अनत्ततो ववत्थपेति, एकं सम्मसनं। चक्खु पे०·· जरामरण अतीतानागतपच्चुप्पन्न अनिच्चतो ववत्थपेति, एकं सम्मसनं। दुक्खतो अनत्ततो ववत्थपेति, एक सम्मसन।

"रूपं अतीतानागतपच्चुप्पन्न अनिच्च खयट्ठेन, दुक्ख भयट्ठेन, अनत्ता अस्सारकट्ठेना ति सङ्खिपित्वा ववत्थाने पञ्ञा सम्मसने ञाण। वेदन, विञ्ञाणं, चक्खु ·पे० जरामरणं पे० सम्मसने ञाणं। रूप अतीतागतपच्चुप्पन्नं अनिच्च सङ्खतं पटिच्चसमुप्पन्न खयधम्म वयधम्म विरागधम्म निरोधधम्म ति सङ्खिपित्वा ववत्थाने पञ्ञा सम्मसने ञाणं। वेदनं, विञ्ञाण, चक्खुं, जरामरण अतीतानागतपच्चुप्पन्न अनिच्च सङ्खतं पे० निरोधधम्म ति सङ्खिपित्वा ववत्थाने पञ्ञा सम्मसने ञाणं।

"जातिपच्चया जरामरण, असति जातिया नत्थि जरामरण ति सङ्खिपित्वा ववत्थाने पञ्ञा सम्मसने ञाणं। अतीतं पि अद्धानं, अनागत पि अद्धानं जाति-पच्चया जरामरण, असति जातिया नत्थि जरामरणं ति सङ्खिपित्वा ववत्थाने पञ्ञा सम्मसने ञाण, भवपच्चया जाति पे० ·अविज्जापच्चया सङ्खारा, असति अविज्जाय नत्थि सङ्खारा ति सङ्खिपित्वा ववत्थाने पञ्ञा सम्मसने ञाण। अतीतं पि अद्धानं, अनागत पि अद्धान अविज्जापच्चया सङ्खारा, असति अविज्जाय नत्थि सङ्खारा ति सङ्खिपित्वा ववत्थाने पञ्ञा सम्मसने ञाण। तं ञातट्ठेन ञाणं, पजाननट्ठेन पञ्ञा। तेन वुच्चति—अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं धम्मानं सङ्खिपित्वा ववत्थाने पञ्ञा सम्मसने ञाण" (खु० ५-५८) ति।

एत्थ च चक्खु ·· पे० ·जरामरण ति इमिना पेय्यालेन द्वारारम्मणेहि सद्धिं द्वारप्पवत्ता धम्मा, पञ्चक्खन्धा, छ द्वारानि, छ आरम्मणानि, छ विञ्ञाणानि, छ फस्सा, छ वेदना, छ सञ्ञा, छ चेतना, छ तण्हा, छ वितक्का, छ विचारा, छ धातुयो, दस कसिणानि, द्वत्तिंस कोट्ठासा, द्वादसायतनानि, अट्ठारस धातुयो, बावीसति इन्द्रियानि, तिस्सो धातुयो, नव भवा, चत्तारि झानानि, चतस्सो अप्पमञ्ञा, चतस्सो समापत्तियो, द्वादस पटिच्चसमुप्पादङ्गानी ति इमे धम्मरासयो सङ्खित्ता ति वेदितब्बा।

५. वुत्तं हेतं अभिञ्ञेय्यनिद्देसे—

"सब्ब, भिक्खवे, अभिञ्ञेय्य। किञ्च, भिक्खवे, सब्ब अभिञ्ञेय्य? चक्खुं, भिक्खवे, अभिञ्ञेय्यं, रूपा चक्खुविञ्ञाणं ··चक्खुसम्फस्सो··· य पिद चक्खुसम्फस्सपच्चया उप्पज्जति वेदयित सुख वा दुक्खं वा अदुक्खमसुख वा, तं पि अभिञ्ञेय्यं। सोतं ·पे० य पिदं मनोसम्फस्सपच्चया उप्पज्जति वेदयितं सुखं व दुक्खं वा अदुक्खमसुखं वा, त पि अभिञ्ञेय।

"रूपं · पे० ···विञ्ञाण, चक्खु · पे० · मनो, रूपा · पे० · धम्मा, चक्खुविञ्ञाणं ···पे० मनोविञ्ञाण, चक्खुसम्फस्सो पे० ···मनोसम्फस्सो, चक्खुसम्फस्सजा वेदना पे० मनोसम्फस्सजा वेदना, रूपसञ्ञा पे० ··धम्मसञ्ञा, रूपसञ्चेतना ·· पे०·· ·धम्मसञ्चेतना, रूपतण्हा · पे० धम्मतण्हा, रूपवितक्को ·· पे० धम्मवितक्को, रूपविचारो· पे० धम्मविचारो। पथवीधातु ···पे० ··विञ्ञाणधातु, पथवीकसिणं ·· पे०····विञ्ञाणकसिण, केसा ·· पे० ·· मत्थुलुङ्गं। चक्खायतनं ··पे० · ·धम्मायतनं, चक्खुधातु ···पे० · मनोधातु, मनोविञ्ञाणधातु, चक्खुन्द्रियं ···पे० ·अञ्ञताविन्द्रियं। कामधातु, रूपधातु, अरूपधातु, कामभवो, रूपभवो, अरूपभवो, सञ्ञाभवो, असञ्ञाभवो, नेवसञ्ञानासञ्ञाभवो, एकवोकारभवो, चतुवोकारभवो, पञ्चवोकारभवो। पठमं झानं ·· पे० ···चतुत्थं झान, मेत्ताचेतोविमुत्ति · पे० · उप्पेक्खाचेतोविमुत्ति, आकासानञ्चायतनसमापत्ति ·पे० · नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्ति, अविज्जा अभिञ्ञेय्या ·पे० ···जरामरण अभिञ्ञेय्यं" (सं० ३–६२) ति।

तं तत्थ एवं वित्थारेन वुत्तत्ता इध सब्बं पेय्यालेन सङ्खित्तं। एव सङ्खित्ते पनेत्थ ये लोकुत्तरा धम्मा आगता, ते असम्मसनूपगत्ता इमस्मि अधिकारे न गहेतब्बा। ये पि च सम्मसनूपगा, तेसु **ये यस्स पाकटा होन्ति, सुखेन परिग्गहं गच्छन्ति, तेसु तेन सम्मसनं आरभितब्बं।**

६. तत्रायं खन्धवसेन आरब्भ विधानयोजना—यं किञ्चि रूपं····पे०· · सब्बं रूपं अनिच्चतो ववत्थपेति, एकं सम्मसनं। दुक्खतो अनत्ततो ववत्थपेति, एकं

सम्मसनं ति। एत्तावता अय भिक्खु "य किञ्चि रूप" ति एवं अनियमनिदिट्ठ सब्ब पि रूप अतीर्तात्तिकेन चेव चतूहि च अज्झत्तादिदुकेही ति एकादसहि ओकासेहि परिच्छिन्दित्वा सब्ब रूपं अनिच्चतो ववत्थपेति अनिच्च ति सम्मसति।

७ कथं? परतो वुत्तनयेन। वुत्त हेतं—"रूपं अतीतानागतपच्चुप्पन्नं **अनिच्चं खयट्ठेना**" (खु० ५-५८) ति।

तस्मा एस यं **अतीतं** रूपं, तं यस्मा अतीते येव खीण, नयिम भव सम्पत्त ति अनिच्चं खयट्ठेन। य **अनागतं** अनन्तरभवे निब्बत्तिस्सति, त पि तत्थेव खीयिस्सति, न ततो पर भवं गमिस्सती ति अनिच्च खयट्ठेन। **यं पच्चुप्पन्नं** रूप, तं पि इधेव खीयति, न इतो गच्छती ति अनिच्चं खयट्ठेन। यं **अज्झत्तं**, त पि अज्झत्तमेव खीयति, न बहिद्धाभाव गच्छती ति अनिच्चं खयट्ठेन। य **बहिद्धा**...पे०....**ओळारिकं** पे०...**सुखुमं** पे० **हीनं**... पे० **पणीतं**... पे०....**दूरे**... पे० ...**सन्तिके**, त पि तत्थेव खीयति, न दूरभाव गच्छती ति अनिच्च खयट्ठेना ति सम्मसति।

८. इद सब्बं पि "अनिच्चं खयट्ठेना" ति एतस्स वसेन एकं सम्मसनं। भेदतो पन एकादसविध होति।

सब्बमेव च त **दुक्खं** भयट्ठेन। **भयट्ठेना** ति। सप्पटिभयताय। य हि अनिच्चं, त भयावह होति। सीहोपमसुत्ते (सं० २-३१०) देवान विय। इति इदं पि "दुक्खं भयट्ठेना" ति एतस्स वसेन एक सम्मसन। भेदतो पन एकादसविधं होति।

९ यथा च दुक्खं, एवं सब्ब पि तं **अनत्ता** असारकट्ठेन। **असारकट्ठेना** ति "अत्ता निवासी कारको वेदको सयवसी" ति एवं परिकप्पितस्स अत्तसारस्स अभावेन। यं हि अनिच्चं दुक्खं, तं अत्तनो पि अनिच्चतं वा उदयब्बयपीळन वा वारेतुं न सक्कोति, कुतो तस्स कारकादिभावो? तेनाह—"रूप च हिदं, भिक्खवे, अत्ता अभविस्स, नयिद रूप आबाधाय संवत्तेय्या" (स० २-२९५) ति आदि। इति इद पि "अनत्ता असारकट्ठेना" ति एतस्स वसेन एक सम्मसन। भेदतो पन एकादसविधं होति। एस नयो वेदनादीसु।

१०. य पन अनिच्चं, तं यस्मा नियमतो सङ्खतादिभेद होति। तेनस्स परियायदस्सनत्थ, नानाकारेहि वा मनसिकारप्पवत्तिदस्सनत्थं "रूप अतीतानागतपच्चुप्पन्नं अनिच्चं सङ्खतं पटिच्चसमुप्पन्न खयधम्म वयधम्म विरागधम्म निरोधधम्म" ति पुन पाळि वुत्ता। एस नयो वेदनादीसू ति।

चत्तारीसाकारअनुपस्सनाकथा

११. सो तस्सेव पञ्चसु खन्धेसु अनिच्चदुक्खानत्तसम्मसनस्स थिरभावत्थाय,

य त भगवता "कतमेहि चत्तारीसाय आकारेहि अनुलोमिकं खन्ति पटिलभति ? कतमेहि चत्तारीसाय आकारेहि सम्मत्तनियामं ओक्कमती" (खु० ५-५०३) ति एतस्स **विभङ्गे**—"पञ्चक्खन्धे अनिच्चतो, दुक्खतो, रोगतो, गण्डतो, सल्लतो, अघतो, आबाधतो, परतो, पलोकतो, ईतितो, उपद्दवतो, भयतो, उपसग्गतो, चलतो, पभङ्गुतो, अद्धुवतो, अताणतो, अलेणतो, असरणतो, रित्ततो, तुच्छतो, सुञ्ञतो, अनत्ततो, आदीनवतो, विपरिणामधम्मतो, असारकतो, अघमूलतो, वधकतो, विभवतो, सासवतो, सङ्खततो, मारामिसतो, जातिधम्मतो, जराधम्मतो, ब्याधिधम्मतो, मरणधम्मतो, सोकधम्मतो, परिदेवधम्मतो, उपायासधम्मतो, सङ्किलेसिकधम्मतो" (खु० ५-५०३) ति चत्तारीसाय आकारेहि, "पञ्चक्खन्धे अनिच्चतो पस्सन्तो अनुलोमिकं खन्ति पटिलभति। पञ्चन्न खन्धानं निरोधो निच्च निब्बान ति पस्सन्तो सम्मत्तनियामं ओक्कमती" ति आदिना नयेन अनुलोमञाण विभजन्तेन पभेदतो अनिच्चादिसम्मसनं वुत्त। तस्सा पि वसेन इमे पञ्चक्खन्धे सम्मसति।

१२ कथ ? सो हि एकेकं खन्धं अनच्चन्तिकताय आदिअन्तवन्तताय च **अनिच्चतो**। उप्पादवयपटिपीळनताय दुक्खवत्थुताय च **दुक्खतो**। पच्चययापनीयताय रोगमूलताय च **रोगतो**। दुक्खतासूलयोगिताय किलेसासुचिपग्घरणताय उप्पादजराभङ्गेहि उद्धुमातपरिपक्कपभिन्नताय च **गण्डतो**। पीळाजनकताय अन्तोतुदनताय दुन्नीहरणीयताय च **सल्लतो**। विगरहणीयताय अवड्ढिआवहनताय अघवत्थुताय च **अघतो**। असेरिभावजनकताय आबाधपदट्ठानताय च **आबाधतो**। अवसताय अविधेय्यताय च **परतो**। ब्याधिजरामरणेहि पलुज्जनताय **पलोकतो**। अनेकब्यसनावहनताय **ईतितो**। अविदितानं येव विपुलानं अनत्थानं आवहनतो सब्बुपद्दववत्थुताय च **उपद्दवतो**। सब्बभयानं आकरताय दुक्खवूपसमसङ्खातस्स परमस्सासस्स पटिपक्खभूतताय च **भयतो**। अनेकेहि अनत्थेहि अनुबद्धताय, दोसूपसट्ठताय, उपसग्गो विय अनधिवासनारहताय च **उपसग्गतो**। ब्याधिजरामरणेहि चेव लाभालाभादीहि च लोकधम्मेहि पचलितताय **चलतो**। उपक्कमेन चेव सरसेन च पभङ्गुपगमनसीलताय **पभङ्गुतो**। सब्बावत्थनिपातिताय थिरभावस्स च अभावताय **अद्धुवतो**। अतायनताय चेव अलब्भनेय्यखेमताय च **अताणतो**। अल्लीयितु अनरहताय अल्लीनानं पि च लेणकिच्चाकारिताय **अलेणतो**। निस्सितानं भयसारकत्ताभावेन **असरणतो**। यथापरिकप्पितेहि धुवसुभसुखत्तभावेहि **रित्ततो**। रित्ततायेव **तुच्छतो**, अप्पकत्ता वा, अप्पकं पि हि लोके तुच्छं ति वुच्चति। सामि-निवासि-कारक-वेदकाधिट्ठायकविरहितताय **सुञ्ञतो**। सय च अस्सामिकभावादिताय **अनत्ततो**। पवत्तिदुक्खताय दुक्खस्स च आदीनवताय **आदीनवतो**। अथ वा आदीनं वाति गच्छति

पवत्तती ति आदीनवो, कपणमनुस्सस्सेत अधिवचनं, खन्धा पि च कपणा येवा ति आदीनवसदिसताय आदीनवतो। जराय चेव मरणेन चा ति द्वेधा परिणामपकतिताय **विपरिणामधम्मतो**। दुब्बलताय फेग्गु विय सुखभञ्जनीयताय च **असारकतो**। अघहेतुताय **अघमूलतो**। मित्तमुखसपत्तो विय विस्सासघातिताय **वधकतो**। विगतभवताय विभवसम्भूतताय च **विभवतो**। आसवपदट्ठानताय **सासवतो**। हेतुपच्चयेहि अभिसङ्खतताय **सङ्खततो**। मच्चुमारकिलेसमारानं आमिसभूतताय **मारामिसतो**। जाति जरा-ब्याधि-मरणपकतिताय **जातिजरा-ब्याधि-मरणधम्मतो**। सोकपरिदेव-उपायासहेतुताय **सोक-परिदेव-उपायास-धम्मतो**। तण्हादिट्ठि-दुच्चरितसङ्किलेसान विसयधम्मताय **सङ्किलेसिकधम्मतो** ति। एवं पभेदतो वुत्तस्स अनिच्चादिसम्मसनस्स वसेन सम्मसति।

१३ एत्थ हि अनिच्चतो, पलोकतो, चलतो, पभङ्गुतो, अद्धुवतो, विपरिणामधम्मतो, असारकतो, विभवतो, सङ्खततो, मरणधम्मतो ति एकेकस्मिं खन्धे दस दस कत्वा पञ्ञास **अनिच्चानुपस्सनानि**। परतो, रित्ततो, तुच्छतो, सुञ्ञतो, अनत्ततो ति एककस्मिं खन्धे पञ्च पञ्च कत्वा पञ्चवीसति **अनत्तानुपस्सनानि**। सेसानि दुक्खतो, रोगतो ति आदीनि एकेकस्मिं खन्धे पञ्चवीसति कत्वा पञ्चवीसतिसत **दुक्खानुपस्सनानी** ति।

इच्चस्स इमिना द्विसतभेदेन अनिच्चादिसम्मसनेन पञ्चक्खन्धे सम्मसतो तं नयविपस्सनासङ्खात अनिच्चदुक्खानत्तसम्मसनं थिरं होति। इद तावेत्थ पाळिनयानुसारेन सम्मसनारम्भविधान।

इन्द्रियतिक्खकारणनवककथा

१४. यस्स पन एवं नयविपस्सनाय योगं करोतो पि नयविपस्सना न सम्पज्जति, तेन "नवहाकारेहि इन्द्रियानि तिक्खानि भवन्ति—उप्पन्नुप्पन्नानं सङ्खारान खयमेव पस्सति, तत्थ च सक्कच्चकिरियाय सम्पादेति, सातच्चकिरियाय सम्पादेति, सप्पायकिरियाय सम्पादेति, समाधिस्स च निमित्तग्गाहेन, बोज्झङ्गान च अनुपवत्तनताय, काये च जीविते च अनपेक्खत उपट्ठपेति, तत्थ च अभिभुय्य नेक्खम्मेन, अन्तरा च अब्योसानेना" ति एव वुत्तान नवन्नं आकारानं वसेन इन्द्रियानि तिक्खानि कत्वा **पथवीकसिणनिद्देसे** वुत्तनयेन (विसु० ४–१०२) सत्त असप्पायानि वज्जेत्वा सत्त सप्पायानि सेवमानेन कालेन रूप सम्मसितब्ब, कालेन अरूपं।

रूपनिब्बत्तिपस्सनाकारकथा

१५. रूपं सम्मसन्तेन रूपस्स निब्बत्ति पस्सितब्बा। सेय्यथीदं—इदं रूपं नाम कम्मादिवसेन चतूहि कारणेहि निब्बत्तति। तत्थ सब्बेसं सत्तानं रूपं

निब्बत्तमान पठमं कम्मतो निब्बत्तति। पटिसन्धिक्खणे येव हि गब्भसेय्यकानं ताव तिसन्ततिवसेन वत्थु-काय-भावदसकसङ्खातानि तिस रूपानि निब्बत्तन्ति। तानि च खो पटिसन्धिचित्तस्स उप्पादक्खणे येव। यथा च उप्पादक्खणे, तथा ठितिक्खणे पि भङ्गक्खणे पि।

तत्थ रूपं दन्धनिरोधं गरुपरिवत्ति, चित्त खिप्पनिरोधं लहुपरिवत्ति। तेनाह—"नाहं, भिक्खवे, अञ्ञं एकधम्म पि समनुपस्सामि एवं लहुपरिवत्तं यथयिदं, भिक्खवे, चित्तं" (अं० १–१०) ति।

रूपे धरन्ते येव हि सोळसवारे भवङ्गचित्तं उप्पज्जित्वा निरुज्झति। चित्तस्स उप्पादक्खणो पि ठितिक्खणो पि भङ्गक्खणो पि एकसदिसा। रूपस्स पन उप्पाद-भङ्गक्खणा येव लहुका, तेहि सदिसा, ठितिक्खणो पन महा, याव सोळसचित्तानि उप्पज्जित्वा निरुज्झन्ति ताव वत्तति।

पटिसन्धिचित्तस्स उप्पादक्खणे उप्पन्नं ठानप्पत्त पुरेजात वत्थु निस्साय दुतियं भवङ्गं उप्पज्जति। तेन सद्धिं उप्पन्नं ठानप्पत्तं पुरेजात वत्थु निस्साय ततियं भवङ्गं उप्पज्जति। इमिना नयेन यावतायुक चित्तप्पवत्ति वेदितब्बा। आसन्नमरणस्स पन एकमेव ठानप्पत्त पुरेजात वत्थु निस्साय सोळस चित्तानि उप्पज्जन्ति।

१६. पटिसन्धिचित्तस्स उप्पादक्खणे उप्पन्नं रूप पटिसन्धिचित्ततो उद्ध सोळसमेन चित्तेन सद्धिं निरुज्झति। ठानक्खणे उप्पन्न सत्तरसमस्स उप्पादक्खणेन सद्धिं निरुज्झति। भङ्गक्खणे उप्पन्न सत्तरसमस्स ठानक्खणं पत्वा निरुज्झति। याव पवत्ति नाम अत्थि, एवमेव पवत्तति। ओपपातिकानं पि सत्तसन्ततिवसेन सत्तति रूपानि एवमेव पवत्तन्ति।

१७ तत्थ कम्म, कम्मसमुट्ठान, कम्मपच्चयचित्तसमुट्ठानं, कम्मपच्चय-आहारसमुट्ठानं, कम्मपच्चयउतुसमुट्ठानं ति एस विभागो वेदितब्बो।

तत्थ **कम्मं** नाम कुसलाकुसलचेतना। **कम्मसमुट्ठानं** नाम विपाकक्खन्धा च चक्खुदसकादिममसत्ततिरूपं च। **कम्मपच्चयं** नाम तदेव। कम्म हि कम्म-समुट्ठानस्स उपत्थम्भकपच्चयो पि होति।

कम्मपच्चयचित्तसमुट्ठानं नाम विपाकचित्तसमुट्ठानं रूपं। **कम्मपच्चय-आहारसमुट्ठानं** नाम कम्मसमुट्ठानरूपेसु ठानप्पत्ता ओजा अञ्ञ ओजट्ठमक समुट्ठापेति, तत्रापि ओजा ठानं पत्वा अञ्ञ ति एवं चतस्सो वा पञ्च वा पवत्तियो घटेति। **कम्मपच्चयउतुसमुट्ठानं** नाम कम्मजतेजोधातु ठानप्पत्ता उतुसमुट्ठानं ओमट्ठमकं समुट्ठापेति, तत्रापि उतु अञ्ञ ओजट्ठमकं ति एवं चतस्सो वा पञ्च वा पवत्तियो घटेति। एवं ताव **कम्मजरूपस्स निब्बत्ति** पस्सितब्बा।

१८ चित्तजेसु पि चित्तं, चित्तसमुट्ठानं, चित्तपच्चयं, चित्तपच्चयआहारसमुट्ठानं, चित्तपच्चयउतुसमुट्ठानं ति एस विभागो वेदितब्बो।

तत्थ **चित्तं** नाम एकूननवुति चित्तानि। तेसु—

द्वत्तिंस चित्तानि छब्बीस ऊनवीसति सोळस।
रूपिरियापथविञ्ञत्तिजनकाजनका मता[1]॥

कामावचरतो हि अट्ठ कुसलानि, द्वादसाकुसलानि, मनोधातुवज्जा दस किरिया, कुसलकिरियतो द्वे अभिञ्ञाचित्तानी ति द्वत्तिंस चित्तानि रूपं इरियापथं विञ्ञत्तिं च जनेन्ति। विपाकवज्जानि सेसदसरूपावचरानि, अट्ठ अरूपावचरानि, अट्ठ लोकुत्तरचित्तानी ति छब्बीसति चित्तानि रूपं इरियापथ न जनयन्ति, न विञ्ञत्तिं। कामावचरे दस भवङ्गचित्तानि, रूपावचरे पञ्च, तिस्सो मनोधातुयो, एका विपाकाहेतुकमनोविञ्ञाणधातु सोमनस्ससहगता ति एकूनवीसति चित्तानि रूपमेव जनयन्ति, न इरियापथ, न विञ्ञत्तिं। द्वे पञ्चविञ्ञाणानि, सब्बसत्तानं पटिसन्धिचित्तं, खीणासवानं चुतिचित्तं, चत्तारि आरुप्पविपाकानी ति सोळस चित्तानि नेव रूपं जनयन्ति, न इरियापथं, न विञ्ञत्तिं। यानि चेत्थ रूपं जनेन्ति, तानि न ठितिक्खणे, भङ्गक्खणे वा, तदा हि चित्तं दुब्बलं होति। उप्पादक्खणे पन बलवं। तस्मा त तदा पुरेजातं वत्थु निस्साय रूपं समुट्ठापेति।

१९. **चित्तसमुट्ठानं** नाम तयो अरूपिनो खन्धा, सद्दनवकं, कायविञ्ञत्ति, वचीविञ्ञत्ति, आकासधातु, लहुता, मुदुता, कम्मञ्ञता, उपचयो, सन्तती ति सत्तरविधं रूपं च। **चित्तपच्चयं** नाम "पच्छाजाता चित्तचेतसिका धम्मा पुरेजातस्स इमस्स कायस्सा" (अभि० ७ · १–८) उतुसमुट्ठानरूप।

चित्तपच्चयआहारसमुट्ठानं नाम चित्तसमुट्ठानरूपेसु ठानप्पत्ता ओजा अञ्ञ ओजट्ठमक समुट्ठापेति, एवं द्वे तिस्सो पवित्तियो घटेति।

चित्तपच्चयउतुसमुट्ठानं नाम चित्तसमुट्ठानो उतु ठानप्पत्तो अञ्ञं ओजमट्ठमक समुट्ठापेति, एवं द्वे तिस्सो पवत्तियो घटेति। एवं चित्तजरूपस्स निब्बति पस्सितब्बा।

२०. आहारजेसु पि आहारो, आहारसमुट्ठान, आहारपच्चयं, आहारपच्चयआहारसमुट्ठानं, आहारपच्चयउतुसमुट्ठान ति एस विभागो वेदितब्बो।

तत्थ **आहारो** नाम कबळीकारो आहारो। **आहारसमुट्ठानं** नाम उपादिण्णकम्मजरूप पच्चय लभित्वा तत्थ पतिट्ठाय, ठानप्पत्ताय ओजाय समुट्ठापितं

---

१. "तेसु द्वत्तिंस चित्तानि छब्बीसेकूनवीसति।
सोलस रूपिरियापथविञ्ञत्तिजनका मता" ॥—ति पि कत्थचि पाठो।

ओजट्ठमकं, आकासधातु, लहुता, मुदुता, कम्मञ्ञता, उपचयो, सन्तती ति चुद्दसविध रूप। **आहारपच्चयं** नाम "कबळीकारो आहारो इमस्स कायस्स आहारपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १–८) ति एवं वुत्त चतुसमुट्ठानरूप।

आहारपच्चयआहारसमुट्ठानं नाम आहारसमुट्ठानेसु रूपेसु ठानप्पत्ता ओजा अञ्ञ ओजट्ठमकं समुट्ठापेति, तत्रापि ओजा अञ्ञ ति एव दस द्वादस वारे पवत्ति घटेति। एकदिवस परिभुत्ताहारो सत्ताह पि उपत्थम्भेति। दिब्बा पन ओजा एकमास द्वेमास पि उपत्थम्भेति। मातरा परिभुत्ताहारो पि दारकस्स सरीर फरित्वा रूप समुट्ठापेति। सरीरे मक्खिताहारो पि रूप समुट्ठापेति। कम्मजाहारो उपादिण्णकाहारो नाम। सो पि ठानप्पत्तो रूपं समुट्ठापेति, तत्रा पि ओजा अञ्ञ समुट्ठापेती ति एव चतस्सो वा पञ्च वा पवत्तियो घटेति।

आहारपच्चयउतुसमुट्ठानं नाम आहारसमुट्ठाना तेजोधातु ठानप्पत्ता उतु-समुट्ठान ओजट्ठमक समुट्ठापेति। तत्राय आहारो आहारसमुट्ठानान जनको हुत्वा पच्चयो होति, सेसान निस्सयाहार-अत्थि-अविगतवसेना ति। एव आहारजरूपस्स निब्बत्ति पस्सितब्बा।

२१ उतुजेसु पि—उतु, उतुसमुट्ठान, उतुपच्चय, उतुपच्चय-उतुसमुट्ठान, उतुपच्चय-आहारसमुट्ठान ति एस विभागो वेदितब्बो।

तत्थ **उतु** नाम चतुसमुट्ठाना तेजोधातु। उण्हउतु, सीतउतू ति एव पनेस दुविधो होति। **उतुसमुट्ठानं** नाम चतुसमुट्ठानो उतु उपादिण्णक पच्चय लभित्वा ठानप्पत्तो सरीरे रूपं समुट्ठापेति। त सद्दनवक, आकासधातु, लहुता, मुदुता, कम्मञ्ञता, उपचयो, सन्तती ति पन्नरसविध होति। **उतुपच्चयं** नाम उतु चतुसमुट्ठानिकरूपानं पवत्तिया च विनासस्स च पच्चयो होति।

उतुपच्चयउतुसमुट्ठानं नाम, उतुसमुट्ठाना तेजोधातु ठानप्पत्ता अञ्ञं ओजट्ठ-मक समुट्ठापेति, तत्रापि उतु अञ्ञ ति एवं दीघ पि अद्धानं अनुपादिण्णपक्खे ठत्वा पि उतुसमुट्ठानं पवत्तति येव।

उतुपच्चयआहारसमुट्ठानं नाम उतुसमुट्ठाना ठानप्पत्ता ओजा अञ्ञ ओजट्ठ-मकं समुट्ठापेति। तत्रापि ओजा अञ्ञं ति एव दस द्वादस वारे पवत्ति घटेति। तत्रायं उतु उतुसमुट्ठानानं जनको हुत्वा पच्चयो होति, सेसान निस्सय-अत्थि-अविगतवसेना ति। एवं उतुजरूपस्स निब्बत्ति पस्सितब्बा। एव हि रूपस्स निब्बत्तिं पस्सन्तो कालेन रूपं सम्मसति नाम।

अरूपनिब्बत्तिपस्सनाकारकथा

२२. यथा च रूपं सम्मसन्तेन रूपस्स, एव अरूपं सम्मसन्तेन पि अरूपस्स निब्बत्ति पस्सितब्बा। सा च खो एकासीति-लोकियचित्तुप्पादवसेन। सेय्यथीदं—

इदं हि अरूपं नाम पुरिमभवे आयूहितकम्मवसेन पटिसन्धियं ताव एकूनवीसति-चित्तुप्पादप्पभेद निब्बत्तति। निब्बत्तनाकारो पनस्स **पटिच्चसमुप्पादनिद्देसे**[1] वुत्तनयेनेव वेदितब्बो। तदेव पटिसन्धिचित्तस्स अन्तरचित्ततो पट्ठाय भवङ्गवसेन, आयुपरियोसाने चुतिवसेन। यं तत्थ कामावचरं त छसु द्वारेसु बलवारम्मणे तदारम्मणवसेन।

२३ पवत्ते पन असम्भिन्ना चक्खुस्स आपाथगतत्ता रूपान आलोकसन्निस्सितं मनसिकारहेतुकं चक्खुविञ्ञाणं निब्बत्तति सद्धिं सम्पयुत्तधम्मेहि। चक्खुप्पसादस्स हि ठितिक्खणे ठितिप्पत्तमेव रूपं चक्खु घट्टेति। तस्मि घट्टिते द्विक्खत्तु भवङ्ग उप्पज्जित्वा निरुज्झति। ततो तस्मिं येव आरम्मणे किरियमनोधातु आवज्जन-किच्चं साधयमाना उप्पज्जति। तदनन्तर तदेव रूप पस्समान कुसलविपाक अकुसलविपाक वा चक्खुविञ्ञाणं। ततो तदेव रूप सम्पटिच्छमाना विपाक-मनोधातु। ततो तदेव रूपं सन्तीरयमाना विपाकाहेतुकमनोविञ्ञाणधातु। ततो तदेव रूप ववत्थापयमाना किरियाहेतुकमनोविञ्ञाणधातु उपेक्खासहगता। ततो परं कामावचरकुसलाकुसलकिरियचित्तेसु एक वा, उपेक्खासहगताहेतुकं चित्त, पञ्च सत्त वा जवनानि। ततो कामावचरसत्तान एकादससु तदारम्मण-चित्तेसु जवनारम्मणानुरूप य किञ्चि तदारम्मणं ति। एस नयो सेसद्वारेसु पि। मनोद्वारे पन महग्गतचित्तानि पि उप्पज्जन्ती ति। एव छसु द्वारेसु अरूपस्स निब्बत्ति पस्सितब्बा। एवं हि अरूपस्स निब्बत्तिं पस्सन्तो कालेन अरूप सम्म-सति नाम।

एवं कालेन रूप, कालेन अरूप सम्मसित्वा पि तिलक्खण आरोपेत्वा अनुक्कमेन[2] पटिपज्जमानो एको पञ्ञाभावनं सम्पादेति[3]।

रूपसत्तकसम्मसनकथा

२४ अपरो रूपसत्तक-अरूपसत्तकवसेन तिलक्खण आरोपेत्वा सङ्खारे सम्मसति।

तत्थ आदाननिक्खेपनतो, वयोवुद्धत्थङ्गमतो, आहारमयतो, उतुमयतो, कम्मजतो, चित्तसमुट्ठानतो, धम्मतारूपतो ति इमेहि आकारेहि आरोपेत्वा सम्मसन्तो रूपसत्तकवसेन आरोपेत्वा सम्मसति नाम। तेनाहु **पोराणा**—

१ सत्तरसमे पञ्ञाभूमिनिद्देसे त्यत्थो।

२ **अनुक्कमेना** ति। उदयब्बयञाणाधिगमानुक्कमेन।

३. **पञ्ञाभावनं सम्पादेती** ति। अरहत्त अधिगच्छति।

"आदाननिक्खेपनतो वयोवुद्धत्थगामितो।
आहारतो च उतुतो कम्मतो चापि चित्ततो।
धम्मतारूपतो सत्त वित्थारेन विपस्सती" ति॥

तत्थ **आदानं** ति पटिसन्धि। **निक्खेपनं** ति चुति। इति योगावचरो इमेहि आदाननिक्खेपेहि एक वस्ससतं परिच्छिन्दित्वा सङ्खारेसु तिलक्खण आरोपेति। कथ? एत्थन्तरे सब्बे सङ्खारा अनिच्चा। कस्मा? उप्पादवयवत्तितो, विपरिणामतो, तावकालिकतो, निच्चपटिक्खेपतो च। यस्मा पन उप्पन्ना सङ्खारा ठितिं पापुणन्ति, ठितियं जराय किलमन्ति, जरं पत्वा अवस्सं भिज्जन्ति, तस्मा अभिण्हसम्पटिपीळनतो, दुक्खमतो, दुक्खवत्थुतो, सुखपटिक्खेपतो च दुक्खा। यस्मा च "उप्पन्ना सङ्खारा ठितिं मा पापुणन्तु, ठानप्पत्ता मा जीरन्तु, जरप्पत्ता मा भिज्जन्तू" ति इमेसु तीसु ठानेसु कस्सचि वसवत्तिभावो नत्थि, सुञ्ञा तेन वसवत्तनाकारेन। तस्मा सुञ्ञतो, अस्सामिकतो, अवसवत्तितो, अत्तपटिक्खेपतो च अनत्ता ति। (१–२)

२५. एवं आदान-निक्खेपनवसेन वस्ससतपरिच्छिन्ने रूपे तिलक्खणं आरोपेत्वा ततो पर **वयोवुद्धत्थङ्गमतो** आरोपेति। तत्थ वयोवुद्धत्थङ्गमो नाम वयवसेन वुद्धस्स वड्ढितस्स रूपस्स अत्थङ्गमो। तस्स वसेन तिलक्खणं आरोपेती ति अत्थो।

कथ? सो तमेव वस्ससत पठमवयेन मज्झिमवयेन पच्छिमवयेना ति तीहि वयेहि परिच्छिन्दति। तत्थ आदितो तेत्तिंस वस्सानि पठमवयो नाम। ततो चतुत्तिंस मज्झिमवयो नाम। ततो तेत्तिंस पच्छिमवयो नामा ति। इति इमेहि तीहि वयेहि परिच्छिन्दित्वा पठमवये पवत्तं रूपं मज्झिमवयं अप्पत्वा तत्थेव निरुज्झति, तस्मा तं अनिच्च, यदनिच्च त दुक्खं, यं दुक्ख तदनत्ता। मज्झिममवये पवत्तरूपं पि पच्छिमवयं अप्पत्वा तत्थेव निरुज्झति, तस्मा तं पि अनिच्च दुक्खमनत्ता। पच्छिमवये तेत्तिंस वस्सानि पवत्तरूपं पि मरणतो परं गमनसमत्थं नाम नत्थि, तस्मा तं पि अनिच्च दुक्खमनत्ता ति तिलक्खणं आरोपेति।

२६. एवं **पठमवयादिवसेन** वयोवुद्धत्थङ्गमतो तिलक्खणं आरोपेत्वा पुन मन्ददसकं, खिड्डादसक, वण्णदसकं, बलदसक, पञ्ञादसकं, हानिदसक, पब्भारदसकं, वङ्कदस्सकं, मोमूहदसक, सयनदसक—ति इमेस **दसन्नं दसकान वसेन** वयोवुद्धत्थङ्गमतो तिलक्खण आरोपेति।

तत्थ दसकेसु ताव वस्ससतजीविनो पुग्गलस्स पठमानि दस वस्सानि **मन्ददसकं** नाम। तदा हि सो मन्दो होति चपलो कुमारको। ततो परानि दस **खिड्डादसकं** नाम। तदा हि सो खिड्डारतिबहुलो होति। ततो परानि दस

वण्णदसकं नाम। तदा हिस्स वण्णायतनं वेपुल्लं पापुणाति। ततो परानि दस **बलदसकं** नाम। तदा हिस्स बलं च थामो च वेपुल्ल पापुणाति। ततो परानि दस **पञ्ञादसकं** नाम, तदा हिस्स पञ्ञा सुप्पतिट्ठिता होति। पकतिया किर दुब्बलपञ्ञस्सापि तस्मिं काले अप्पमत्तका पञ्ञा उप्पज्जति येव। ततो परानि दस **हानिदसकं** नाम। तदा हिस्स खिड्डारति-वण्ण-बल-पञ्ञा परि-हायन्ति। ततो परानि दस **पब्भारदसकं** नाम। तदा हिस्स अत्तभावो पुरतो पब्भारो होति। ततो परानि दस **वङ्कदसकं** नाम। तदा हिस्स अत्तभावो नङ्गलकोटि विय वङ्को होति। ततो परानि दस **मोमूहदसक** नाम। तदा हि सो मोमूहो होति, कतं कतं सम्मुस्सति। ततो परानि दस **सयनदसकं** नाम। वस्ससतिको हि सयनब्रहुलो व होति।

तत्रायं योगी एतेस दसकान वसेन वयोवुद्धत्थङ्गमतो तिलक्खणं आरोपेतुं इति पटिसञ्चिक्खति—"पठमदसके पवत्तरूप दुतियदसक अप्पत्वा तत्थेव निरुज्झति, तस्मा त अनिच्चं दुक्खमनत्ता। दुतियदसके · पे०···नवमदसके पवत्तरूपं दसमदसक अप्पत्वा तत्थेव निरुज्झति, दसमदसके पवत्तरूपं पुनब्भवं अप्पत्वा इधेव निरुज्झति, तस्मा त पि अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति तिलक्खणं आरोपेति।

२७ एवं दसकवसेन वयोवुद्धत्थङ्गमतो तिलक्खणं आरोपेत्वा पुन तदेव वस्ससत पञ्चपञ्चवस्सवसेन वीसति कोट्ठासे कत्वा वयोवुद्धत्थङ्गमतो तिल-क्खणं आरोपेति।

कथ ? सो हि इति पटिसञ्चिक्खति—"पठमे वस्सपञ्चके पवत्तरूपं दुतियं वस्सपञ्चक अप्पत्वा तत्थेव निरुज्झति, तस्मा त अनिच्च दुक्खमनत्ता। दुतिये वस्सपञ्चके पवत्तरूपं ततियं · पे० एकूनवीसतिमे वस्सपञ्चके पवत्तरूपं वीसतिम वस्सपञ्चकं अप्पत्वा तत्थेव निरुज्झति। वीसतिमे वस्सपञ्चके पवत्तरूपं मरणतो परं गमनसमत्थ नाम नत्थि, तस्मा त पि अनिच्चं दुक्ख-मनत्ता" ति।

एवं वीसतिकोट्ठासवसेन वयोवुद्धत्थङ्गमतो तिलक्खणं आरोपेत्वा पुन पञ्च-वीसति कोट्ठासे कत्वा चतुन्न चतुन्न वस्सानं वसेन आरोपेति। ततो तेत्तिंस कोट्ठासे कत्वा तिण्ण तिण्णं वस्सान वसेन। पञ्ञास कोट्ठासे कत्वा द्विन्नं द्विन्नं वस्सानं वसेन। सत कोट्ठासे कत्वा एकेकवस्सवसेन। ततो एकं वस्सं तयो कोट्ठासे कत्वा वस्सान-हेमन्त-गिम्हेसु तीसु उतूसु एकेकउतुवसेन तस्मि वयोवुद्धत्थङ्गमरूपे तिलक्खणं आरोपेति।

कथं ? "**वस्साने** चतुमासं पवत्तरूपं हेमन्तं अप्पत्वा तत्थेव निरुद्धं। **हेमन्ते**

पवत्तरूप गिम्हं अप्पत्वा तत्थेव निरुद्ध। **गिम्हे** पवत्तरूपं पुन वस्सानं अप्पत्वा तत्थेव निरुद्ध, तस्मा त अनिच्च दुक्खनमत्ता" ति।

एवं आरोपेत्वा पुन एक वस्स छ कोट्ठासे कत्वा—"**वस्साने** द्वेमास पवत्तरूपं सरद अप्पत्वा तत्थेव निरुद्ध। **सरदे** पवत्तारूपं हेमन्त' **हेमन्ते** पवत्तारूप सिसिर, **सिसिरे** पवत्तारूपं वसन्त, **वसन्ते** पवत्तारूप गिम्ह, **गिम्हे** पवत्तारूपं पुन वस्सान अप्पत्वा तत्थेव निरुद्धं, तस्मा अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति एव तस्मि वयोवुद्धत्थङ्गमरूपे तिलक्खण आरोपेति।

एवं आरोपेत्वा ततो काळजुण्हवसेन—"काळ पवत्तारूप जुण्ह अपत्वा, जुण्हे पवत्तारूपं काळ अप्पत्वा तत्थेव निरुद्ध, तस्मा अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति तिलक्खण आरोपेति।

ततो रत्तिन्दिववसेन—"रत्ति पवत्तारूप दिवस अप्पत्वा तत्थेव निरुद्ध। दिवस पवत्तरूप पि रत्ति अप्पत्वा तत्थेव निरुद्ध, तस्मा अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति तिलक्खण आरोपेति।

ततो तदेव रत्तिन्दिव पुब्बण्हादिवसेन छ कोट्ठासे कत्वा—"पुब्बण्हे पवत्तारूप मज्झन्ह अप्पत्वा " मज्झन्हे पवत्तारूपं सायन्ह, सायन्हे पवत्तारूप पठमयामं, पठमयामे पवत्तारूप मज्झिमयाम, मज्झिमयामे पवत्तारूप पच्छिमयामं अप्पत्वा तत्थेव निरुद्ध। पच्छिमयामे पवत्तारूप पुन पुब्बण्ह अप्पत्वा तत्थेव निरुद्ध, तस्मा अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति तिलक्खण आरोपेति।

२८ एव आरोपेत्वा पुन तस्मि येव रूपे **अभिक्कम-पटिक्कम-आलोकन-विलोकन-समिञ्जन-पसारणवसेन**—"अभिक्कमे पवत्तारूप पटिक्कमं अप्पत्वा तत्थेव निरुज्झति, पटिक्कम्मे पवत्तारूपं आलोकनं, आलोकने पवत्तारूपं विलोकनं, विलोकने पवत्तरूप समिञ्जन, समिञ्जने पवत्तारूपं पसारणं अप्पत्वा तत्थेव निरुज्झति, तस्मा अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति तिलक्खण आरोपेति।

ततो एकपदवारं उद्धरण-अतिहरण-वीतिहरण-वोस्सज्जन-सन्निक्खेपन-सन्निरुम्भनवसेन छ कोट्ठासे करोति।

तत्थ **उद्धरणं** नाम पादस्स भूमितो उक्खिपन। **अतिहरणं** नाम पुरतो हरणं। **वीतिहरणं** नाम खाणुकण्टकदीघजातिआदीसु किञ्चिदेव दिस्वा इतो चितो च पादसञ्चारण। **वोस्सज्जनं** नाम पादस्स हेट्ठा ओरोपनं। **सन्निक्खेपनं** नाम पथवीतले ठपनं। **सन्निरुम्भनं** नाम पुन पादुद्धरणकाले पादस्स पथविया सद्धि अभिनिप्पीळनं।

तत्थ उद्धरणे पथवीधातु आपोधातू ति द्वेधातुयो ओमत्ता होन्ति मन्दा, इतरा द्वे अधिमत्ता होन्ति बलवतियो। तथा अतिहरण-वीतिहरणेसु। वोस्सजने

तेजोधातु वायोधातू ति द्वे धातुयो ओमत्ता होन्ति मन्दा, इतरा द्वे अधिमत्ता होन्ति बलवतियो। तथा सन्निक्खेपन-सन्निरुम्भनेसु। एवं छ कोट्ठासे कत्वा तेसं वसेन तस्मि वयोवुद्धत्थङ्गमरूपे तिलक्खण आरोपेति।

२९. कथं ? सो इति पटिसञ्चिक्खति—"या उद्धरणे पवत्ता धातुयो, यानि च तदुपादाय रूपानि, सब्बे ते धम्मा अतिहरण अप्पत्वा एत्थेव निरुज्झन्ति, तस्मा अनिच्चा दुक्खा अनत्ता। तथा अतिहरणे पवत्ता वीतिहरणं, वीतिहरणे पवत्ता वोस्सज्जन, वोस्सज्जने पवत्ता सन्निक्खेपन, सन्निक्खेपने पवत्ता सन्निरुम्भनं अप्पत्वा तत्थेव निरुज्झन्ति। इति तत्थ तत्थ उप्पन्ना इतरं इतरं कोट्ठासं अप्पत्वा तत्थ तत्थेव पब्बं पब्ब, सन्धि सन्धि, ओधि ओधि हुत्वा तत्तकपाले पक्खित्ततिला विय तटतटायन्ता सङ्खारा भिज्जन्ति, तस्मा अनिच्चा दुक्खा अनत्ता" ति तस्सेवं पब्बपब्बगते सङ्खारे विपस्सतो रूपसम्मसनं सुखुमं होति।

३०. सुखुमत्ते च पनस्स इदं ओपम्मं। एको किर दारुतिणुक्कादीसु कतपरिचयो अदिट्ठपुब्बदीपो पच्चन्तवासिको नगरमागम्म अन्तरापणे जलमानं पदीपं दिस्वा एकं पुरिसं पुच्छि—"अम्भो किं नामेतं एव मनाप" ति ? तमेनं सो आह—"किमेत्थ मनापं ? पदीपो नामेस तेलक्खयेन वट्टिक्खयेन च गतमग्गो पिस्स न पञ्ञायिस्सती" ति। तमञ्ञो एवमाह—"इद ओळारिक, इमिस्सा हि वट्टिया अनुपुब्बेन डय्हमानाय ततियभागे ततियभागे जाला इतरीतरं पदेसं अप्पत्वा व निरुज्झिस्सती" ति। तमञ्ञो एवमाह—"इदं पि ओळारिकं, इमिस्सा हि अङ्गुलङ्गुलन्तरे, अड्ढङ्गुलड्ढङ्गुलन्तरे, तन्तुम्हि तन्तुम्हि, अंसुम्हि असुम्हि जाला इतरीतर असु अप्पत्वा व निरुज्झिस्सति। असुं पन मुञ्चित्वा न सक्का जालं पञ्ञापेतुं" ति।

तत्थ "तेलक्खयेन वट्टिक्खयेन च पदीपस्स गतमग्गो पि न पञ्ञायिस्सती" ति पुरिसस्स ञाणं विय योगिनो आदान-निक्खेपनतो वस्ससतेन परिच्छिन्नरूपे तिलक्खणारोपन। "वट्टिया ततियभागे ततियभागे जाला इतरीतरं पदेसं अप्पत्वा व निरुज्झिस्सती" ति पुरिसस्स ञाणं विय योगिनो वस्ससतस्स ततियकोट्ठासपरिच्छिन्ने वयोवुद्धत्थङ्गमरूपे तिलक्खणारोपनं। "अङ्गुलङ्गुलन्तरे जाला इतरीतर अप्पत्वा व निरुज्झिस्सती" ति पुरिसस्स ञाणं विय योगिनो दसवस्स-पञ्चवस्स-तिवस्स-द्विवस्स-एकवस्सपरिच्छिन्ने रूपे तिलक्खणारोपनं। "अड्ढङ्गुलड्ढङ्गुलन्तरे जाला इतरीतरं अप्पत्वा व निरुज्झिस्सती" ति पुरिसस्स ञाणं विय योगिनो एकेकउतुवसेन एकं वस्सं तिधा छधा च विभजित्वा चतुमास-द्विमासपरिच्छिन्ने रूपे तिलक्खणारोपन। "तन्तुम्हि तन्तुम्हि जाला इतरीतरं अप्पत्वा व निरुज्झिस्सती" ति पुरिसस्स ञाणं विय योगिनो काळजुण्हवसेन

रत्तिन्दिववसेन एकं रत्तिन्दिवं छ कोट्ठासे कत्वा पुब्बण्हादिवसेन च परिच्छिन्ने रूपे तिलक्खणारोपन। "असुम्हि असुम्हि जाला इतरीतर अप्पत्वा व निरुज्झिस्सती" ति पुरिसस्स ञाणं विय योगिनो अभिक्कमादिवसेन चेव उद्धरणादीसु च एकेककोट्ठासवसेन परिच्छिन्ने रूपे तिलक्खणारोपनं ति।

३१. सो एव नानाकारेहि वयोवुद्धत्थङ्गमरूपे तिलक्खणं आरोपेत्वा पुन तदेव रूपं विसङ्खरित्वा आहारमयादिवसेन चत्तारो कोट्ठासे कत्वा एकेककोट्ठासे तिलक्खण आरोपेति। तत्रास्स **आहारमयं रूपं** छात-सुहितवसेन पाकटं होति। छातकाले समुट्ठितं रूपं हि झत्तं होति किलन्तं, झामखाणुको विय, अङ्गारपच्छियं निलीनकाको विय च दुब्बण्णं दुस्सण्ठितं, सुहितकाले समुट्ठित धातं[1] पीणितं मुदु सिनिद्ध फस्सवन्त होति। सो तं परिग्गहेत्वा "छातकाले पवत्तारूपं सुहितकालं अप्पत्वा एत्थेव निरुज्झति। सुहितकाले समुट्ठितं पि छातकाल अप्पत्वा एत्थेव निरुज्झति, तस्मा तं अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति एवं तत्थ तिलक्खणं आरोपेति।

३२. **उतुमयं** सीतुण्हवसेन पाकटं होति। उण्हकाले समुट्ठितं रूपं हि झत्तं होति किलन्तं दुब्बण्णं। सीतउतुना समुट्ठित रूप धातं पीणित सिनिद्ध होति। सो त परिग्गहेत्वा "उण्हकाले पवत्तरूप सीतकाल अप्पत्वा एत्थेव निरुज्झति, सीतकाले पवत्तरूप उण्णकाल अप्पत्वा एत्थेव निरुज्झति, तस्मा त अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति एवं तत्थ तिलक्खणं आरोपेति।

३३. **कम्मजं** आयतनद्वारवसेन पाकट होति। चक्खुद्वारस्मि हि चक्खु-काय-भावदसकवसेन तिंस कम्मजरूपानि, उपत्थम्भकानि पन तेसं उतुचित्ताहार-समुट्ठानानि चतुवीसती ति चतुपण्णास होन्ति। तथा सोत-घान-जिव्हाद्वारेसु। कायद्वारे कायभावदसकवसेन चेव उतुसमुट्ठानादिवसेन च चतुचत्तालीस। मनोद्वारे हदयवत्थु-काय-भावदसकवसेन चेव उतुसमुट्ठानादिवसेन च चतुपण्णासमेव। सो सब्ब पि तं रूप परिग्गहेत्वा "चक्खुद्वारे पवत्तरूपं सोतद्वार अप्पत्वा एत्थेव निरुज्झति। सोतद्वारे पवत्तरूप घानद्वार, घानद्वारे पवत्तरूप जिव्हाद्वारं, जिव्हाद्वारे पवत्तारूपं कायद्वारं, कायद्वारे पवत्तरूप मनोद्वारं अप्पत्वा एत्थेव निरुज्झति, तस्मा तं अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति एव तत्थ तिलक्खण आरोपेति।

३४. **चित्तसमुट्ठानं** सोमनस्सित-दोमनस्सितवसेन पाकट होति। सोमनस्सितकाले उप्पन हि रूप सिनिद्धं मुदु पीणितं फस्सवन्त होति। दोमनस्सितकाले उप्पन्नं झत्तं किलन्तं दुब्बण्णं होति। सो तं परिग्गहेत्वा "सोमनस्सितकाले

१. धातं ति। तित्तं।

पवत्तरूप दोमनस्सितकालं अप्पत्वा एत्थेव निरुज्झति, दोमनस्सितकाले **पवत्तरूपं** सोमनस्सितकालं अप्पत्वा एत्थेव निरुज्झति, तस्मा तं अनिच्चं **दुक्खमनत्ता**" ति एवं तत्थ तिलक्खण आरोपेति ।

३५. तस्सेव चित्तसमुट्ठानं रूपं परिग्गहेत्वा तिलक्खणं आरोपयतो अयमत्थो पाकटो होति—

"जीवीत अत्तभावो च सुखदुक्खा च केवला ।
एकचित्तसमायुत्ता लहुसो वत्तते खणो ॥
चुल्लासीतिसहस्सानि कप्पं तिट्ठन्ति ये मरू ।
न त्वेव ते पि तिट्ठन्ति द्वीहि चित्तेहि समोहिता ॥
ये निरुद्धा मरन्तस्स तिट्ठमानस्स वा इध ।
सब्बे व सदिसा खन्धा गता अप्पटिसन्धिका ॥
अनन्तरा च ये भग्गा[1] ये च भग्गा अनागते ।
तदन्तरा निरुद्धानं वेसम्मं नत्थि लक्खणे ॥
अनिब्बत्तेन न जातो पच्चुप्पन्नेन जीवति ।
चित्तभङ्गा मतो लोको पञ्ञत्ति परमत्थिया ॥
अनिधानगता भग्गा पुञ्जो नत्थि अनागते ।
निब्बत्ता ये पि तिट्ठन्ति आरग्गे सासपूपमा ॥
निब्बत्तान च धम्मानं भङ्गो नेसं पुरक्खतो ।
पलोकधम्मा तिट्ठन्ति पुराणेहि अमिस्सिता ॥
अदस्सनतो आयन्ति भग्गा गच्छन्त्यदस्सनं ।
विज्जुप्पादो व आकासे उप्पज्जन्ति वयन्ति चा" ति ॥

(खु० ४ : १–३६)

३६ एवं आहारमयादीसु तिलक्खण आरोपेत्वा पुन **धम्मतारूपे** तिलक्खणं आरोपेति । **धम्मतारूपं** नाम बहिद्धा अनिन्द्रियबद्ध अयलोह-तिपु-सीस-सुवण्ण-रजत-मुत्ता-मणि-वेळुरिय-सङ्ख-सिला - पवाळ-लोहितङ्ग-मसारगल्ल-भूमि-पासाण-पब्बत-तिण-रुक्ख-लतादिभेद विवट्टकप्पतो पट्ठाय उप्पज्जनकरूपं । तदस्स असोकङ्कुरादिवसेन पाकट होति ।

असोकङ्कुरं हि आदितो व तनुरत्त होति । ततो द्वीहतीहच्चयेन घनरत्तं, पुन द्वीहतीहच्चयेन मन्दरत्तं, ततो तरुणपल्लववण्णं, ततो परिणतपल्लववण्णं, ततो हरितपण्णवण्णं, ततो नीलपण्णवण्णं, ततो नीलपण्णवण्णकालतो पट्ठाय

१. भग्गा ति । भञ्जनसीला ।

सभागरूपसन्ततिमनुप्पबन्धापयमानं संवच्छरमत्तेन पण्डुपलासं हुत्वा वण्टतो छिज्जित्वा पतति ।

३७. सो त परिग्गहेत्वा—"तनुरत्तकाले पवत्तरूप घनरत्तकालं अप्पत्वा निरुज्झति, घनरत्तकाले पवत्तरूपं मन्दरत्तकाल, मन्दरत्तकाले पवत्तरूपं तरुण-पल्लववण्णकाल, तरुणपल्लववण्णकाले पवत्त परिणतपल्लववण्णकाल, परिणत-पल्लववण्णकाले पवत्तं हरितपण्णवण्णकाल, हरितपण्णवण्णकाले पवत्त नील-पण्णवण्णकाल, नीलपण्णवण्णकाले पवत्त पण्डुपलासकालं, पण्डुपलासकाले पवत्त वण्टतो छिज्जित्वा पतनकालं अप्पत्वा व निरुज्झति, तस्मा तं अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति तिलक्खणं आरोपेति । एव एत्थ तिलक्खण आरोपेत्वा इमिना नयेन सब्बं पि धम्मतारूपं सम्मसति । एवं ताव **रूपसत्तकवसेन** तिलक्खणं आरोपेत्वा सङ्खारे सम्मसति ।

अरूपसत्तकसम्मसनकथा

३८. यं पन वुत्त—अरूपसत्तकवसेना ति । तत्थ अय मातिका—कलापतो, यमकतो, खणिकतो, पटिपाटितो, दिट्ठिउग्घाटनतो, मानसमुग्घाटनतो, निकन्ति-परियादानतो ति ।

तत्थ **कलापतो** ति । फस्सपञ्चमका धम्मा । कथ ? कलापतो सम्मसती ति इध भिक्खु इति पटिसञ्चिक्खति—"ये इमे केसा अनिच्चा दुक्खा अनत्ता ति सम्मसने उप्पन्ना फस्सपञ्चमका धम्मा, ये च लोमा पे० मत्थलुङ्ग अनिच्चं दुक्खमनत्ता ति सम्मसने उप्पन्ना फस्सपञ्चमका धम्मा, सब्बे ते इतरीतर अप्पत्वा पब्ब पब्ब, ओधि ओधि हुत्वा तत्तकपाले पक्खित्ततिला विय तटतटायन्ता विनट्ठा, तस्मा अनिच्चा दुक्खा अनत्ता" ति अय ताव **विसुद्धि-कथायं** नयो ।

३९. **अरियवंसकथायं** पन—"हेट्ठा रूपसत्तके सत्तसु ठानेसु रूपं अनिच्च दुक्खमनत्ता ति पवत्तं चित्तं अपरेन चित्तेन अनिच्चं दुक्खमनत्ता ति सम्मसन्तो कलापतो सम्मसती ति" वुत्त । तं युत्ततरं । तस्मा सेसानि पि तेनेव नयेन[१] विभजिस्साम । (१)

४०. **यमकतो** ति । इध भिक्खु आदाननिक्खेपरूपं "अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति सम्मसित्वा तं पि चित्त अपरेन चित्तेन "अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति सम्मसति । वयोवुड्ढत्थङ्गमरूप, आहारमयं, उतुमयं, कम्मजं, चित्तसमुट्ठानं, धम्मतारूपं "अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति सम्मसित्वा तं पि चित्त अपरेन चित्तेन "अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति सम्मसति । एवं यमकतो सम्मसति नाम । (२)

---

१ **तेनेवा** ति । अरियवसकथानयेनेव ।

४१ **खणिकतो** ति। इध भिक्खु आदाननिक्खेपरूपं "अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति सम्मसित्वा तं पठमचित्तं दुतियचित्तेन, दुतियं ततियेन, ततियं चतुत्थेन, चतुत्थं पञ्चमेन "एतं पि अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति सम्मसति। वयोवुड्ढत्थङ्गमरूपं, आहारमयं, उतुमयं, कम्मजं, चित्तसमुट्ठानं, धम्मतारूपं "अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति सम्मसित्वा तं पठमचित्तं दुतियचित्तेन, दुतियं ततियेन, ततिय चतुत्थेन, चतुत्थ पञ्चमेन "एतं पि अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति सम्मसति। एवं रूपपरिग्गहकचित्ततो पट्ठाय चत्तारि चत्तारि चित्तानि सम्मसन्तो खणिकतो सम्मसति नाम। (३)

४२. **पटिपाटितो** ति। आदाननिक्खेपरूपं "अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति सम्मसित्वा तं पठमचित्तं दुतियचित्तेन, दुतियं ततियेन, ततियं चतुत्थेन पे०· दसम एकादसमेन "एतं पि अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति सम्मसति। वयोवुद्धत्थङ्गमरूपं, आहारमय, उतुमयं, कम्मजं, चित्तसमुट्ठानं, धम्मतारूप "अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति सम्मसित्वा तं पठमचित्तं दुतियचित्तेन, दुतियं ततियेन, ततिय चतुत्थेन· पे० ·दसमं एकादसमेन "एत पि अनिच्च दुक्खमनत्ता" ति एवं विपस्सनापटिपाटिया सकलं पि दिवसभागं सम्मसितु वट्टेय्य। याव दसमचित्तसम्मसना पन रूपकम्मट्ठानं पि अरूपकम्मट्ठानं पि पगुणं होति। तस्मा दसमे येव ठपेतब्ब ति वुत्त। एवं सम्मसन्तो पटिपाटितो सम्मसति नाम। (४)

४३ **दिट्ठिउग्घानटतो, मानउग्घाटनतो, निकन्तिपरियादानतो**ति इमेसु तीसु विसुं सम्मसननयो नाम नत्थि। यं पनेतं हेट्ठा रूपं, इध च अरूप परिग्गहित्त, तं पस्सन्तो रूपारूपतो उद्ध अञ्ञं सत्त नाम न पस्सति। सत्तस्स अदस्सनतो पट्ठाय सत्तसञ्ञा उग्घाटिता होति। सत्तसञ्ञं उग्घाटितचित्तेन सङ्खारे परिग्गण्हतो दिट्ठि नुप्पज्जति। दिट्ठिया अनुप्पज्जमानाय दिट्ठि उग्घाटिता नाम होति। दिट्ठिउग्घाटितचित्तेन सङ्खारे परिगण्हतो मानो नुप्पज्जति। माने अनुप्पज्जन्ते मानो समुग्घाटितो नाम होति। मानसमुग्घाटितचित्तेन सङ्खारे परिग्गण्हतो तण्हा नुप्पज्जति। तण्हाय अनुपज्जन्तिया निकन्ति परियादिण्णा नाम होती ति इद ताव **विसुद्धिकथायं** वुत्तं।

४४ **अरियवंसकथायं** पन "दिट्ठिउग्घाटनतो, मानसमुग्घाटनतो, निकन्तिपरियादानतो" ति मातिक ठपेत्वा अय नयो दस्सितो। "अहं विपस्सामि, मम विपस्सना" ति गण्हतो हि **दिट्ठिसमुग्घाटनं** नाम न होति। "सङ्खारा व सङ्खारे विपस्सन्ति सम्मसन्ति ववत्थपेन्ति परिग्गण्हन्ति परिच्छिन्दन्ती" ति गण्हतो पन दिट्ठिउग्घाटन नाम होति। "सुट्ठु विपस्सामि, मनापं विपस्सामी" ति गण्हन्तो **मानसमुग्घाटो** नाम न होति। "सङ्खारा व सङ्खारे विपस्सन्ति सम्मसन्ति ववत्थपेन्ति परिग्गण्हन्ति परिच्छिन्दती" ति गण्हतो पन मानसमुग्घाटो नाम होति।

"विपस्सतु सक्कोमी" ति विपस्सन अस्मादेन्तस्स **निकन्तिपरियादानं** नाम न होति। "सङ्खारा व सङ्खारे विपस्सन्ति सम्मसन्ति ववत्थपेन्ति परिग्गण्हन्ति परिच्छिन्दन्ती" ति गण्हतो पन निकन्तिपरियादान नाम होति।

सचे सङ्खारा अत्ता भवेय्यु अत्ता ति गहेतुं वट्टेय्यु, अनत्ता च पन अत्ता ति गहिता, तस्मा ते अवसवत्तनट्ठेन अनत्ता, हुत्वा अभावट्ठेन अनिच्चा, उप्पादवयपटिपीळनट्ठेन दुक्खा ति पस्सतो **दिट्ठिउग्घाटनं** नाम होति। (५)

४५ सचे सङ्खारा निच्चा भवेय्यु निच्चा ति गहेतु वट्टेयु, अनिच्चा च पन निच्चा ति गहिता, तस्मा ते हुत्वा अभावट्ठेन अनिच्चा, उप्पादवयपटिपीळनट्ठेन दुक्खा, अवसवत्तनट्ठेन अनत्ता ति पस्सतो **मानसमुग्घाटो** नाम होति। (६)

सचे सङ्खारा सुखा भवेय्यु सुखा ति गहेतु वट्टेय्यु, दुक्खा च पन सुखा ति गहिता, तस्मा ते उप्पादवयपटिपीळनट्ठेन दुक्खा, हुत्वा अभावट्ठेन अनिच्चा, अवसवत्तनट्ठेन अनत्ता ति पस्सतो **निकन्तिपरियादानं** नाम होति। (७)

एवं सङ्खारे अनत्ततो पस्सन्तस्स **दिट्ठिसमुग्घाटनं** नाम होति। अनिच्चतो पस्सन्तस्स **मानसमुग्घाटनं** नाम होति। दुक्खतो पस्सन्तस्स **निकन्तिपरियादानं** नाम होति। इति अयं विपस्सना अत्तनो अत्तनो ठाने येव तिट्ठती ति।

एव **अरूपसत्तकवसेन** तिलक्खणं आरोपेत्वा सङ्खारे सम्मसति। एत्तावता पनस्स रूपकम्मट्ठान पि अरूपकम्मट्ठानं पि पगुणं होति।

४६. सो एवं पगुणरूपारूपकम्मट्ठानो या उपरि भङ्गानुपस्सनतो पट्ठाय पहानपरिञ्ञावसेन सब्बाकारतो पत्तब्बा अट्ठारस महाविपस्सना, तास इधेव ताव एकदेसं पटिविज्झन्तो तप्पटिपक्खे धम्मे पजहति।

४७ अट्ठारस, महाविपस्सना नाम अनिच्चानुपस्सनादिका पञ्ञा। यासु १. अनिच्चानुपस्सन भावेन्तो निच्चसञ्ञ पजहति, २ दुक्खानुपस्सन भावेन्तो सुखसञ्ञं पजहति, ३. अनत्तानुपस्सन भावेन्तो अत्तसञ्ञं पजहति, ४. निब्बिदानुपस्सनं भावेन्तो नन्दि पजहति, ५ विरागानुपस्सनं भावेन्तो राग पजहति, ६ निरोधानुपस्सन भावेन्तो समुदय पजहति, ७ पटिनिस्सग्गानुपस्सन भावेन्तो आदानं पजहति, ८. खयानुपस्सन भावेन्तो घनसञ्ञ पजहति, ९ वयानुपस्सन भावेन्तो आयूहनं पजहति, १० विपरिणामानुपस्सन भावेन्तो धुवसञ्ञ पजहति, ११ अनिमित्तानुपस्सन भावेन्तो निमित्त पजहति, १२. अप्पणिहितानुपस्सन भावेन्तो पणिधि पजहति, १३ सुञ्ञतानुपस्सन भावेन्तो अभिनिवेस पजहति, १४ अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनं भावेन्तो सारादानाभिनिवेस पजहति, १५. यथाभूतञाणदस्सनं भावेन्तो सम्मोहाभिनिवेस पजहति, १६. आदीनवानुपस्सनं भावेन्तो आलयाभिनिवेसं पजहति, १७. पटिसङ्खानुपस्सनं भावेन्तो अप्पटिसङ्खं पजहति, १८ विवट्टानुपस्सनं भावेन्तो संयोगाभिनिवेस पजहति।

४८. तासु यस्मा इमिना अनिच्चादिलक्खणत्तयवसेन सङ्खारा दिट्ठा, तस्मा अनिच्च-दुक्ख-अनत्तानुपस्सना पटिविद्धा होन्ति। यस्मा च "या च अनिच्चानुपस्सना या च अनिमित्तानुपस्सना, इमे धम्मा एकत्था, ब्यञ्जनमेव नानं"। तथा "या च दुक्खानुपस्सना या च अप्पणिहितानुपस्सना, इमे धम्मा एकत्था, ब्यञ्जनमेव नानं। या च अनत्तानुपस्सना या च सुञ्ञतानुपस्सना, इमे धम्मा एकत्था, ब्यञ्जनमेव नानं" (खु० ५-३०७) ति वुत्तं। तस्मा ता पि पटिविद्धा होन्ति।

४९. अधिपञ्ञाधम्मविपस्सना पन सब्बा पि विपस्सना। यथाभूतञाणदस्सनं कङ्खावितरणविसुद्धिया एव सङ्गहितं। इति इदं पि द्वयं पटिविद्धमेव होति। सेसेसु विपस्सनाञाणेसु किञ्चि पटिविद्धं, किञ्चि अप्पटिविद्धं, तेसं विभागं परतो[1] आविकरिस्साम।

यदेव हि पटिविद्धं, तं सन्धाय इदं वुत्तं -"एवं पगुणरूपारूपकम्मट्ठानो, या उपरि भङ्गानुपस्सनतो पट्ठाय पहानपरिञ्ञावसेन सब्बाकारतो पत्तब्बा अट्ठारस महाविपस्सना। तासं इधेव ताव एकदेसं पटिविज्झन्तो तप्पटिपक्खे धम्मे पजहती" ति।

उदयब्बयञाणकथा

५० सो एवं अनिच्चानुपस्सनादिपटिपक्खानं निच्चसञ्ञादीनं पहानेन विसुद्धञाणो सम्मसनञाणस्स परं गन्त्वा यं तं सम्मसनञाणानन्तरं "पच्चुप्पन्नानं धम्मानं विपरिणामानुपस्सने पञ्ञा उदयब्बयानुपस्सने ञाणं" (खु० ५-३) ति **उदयब्बयानुपस्सनं** वुत्तं, तस्स अधिगमाय योगं आरभति, आरभमानो च सङ्खेपतो ताव आरभति। तत्रायं पाळि—

"कथं पच्चुप्पन्नानं धम्मानं विपरिणामानुपस्सने पञ्ञा उदयब्बयानुपस्सने ञाणं? जातं रूपं पच्चुप्पन्नं, तस्स निब्बत्तिलक्खणं उदयो, विपरिणामलक्खणं वयो, अनुपस्सना ञाणं। जाता वेदना, सञ्ञा, सङ्खारा, विञ्ञाणं। जातं चक्खु, जातो भवो पच्चुप्पन्नो, तस्स निब्बत्तिलक्खणं उदयो, विपरिणामलक्खणं वयो, अनुपस्सना ञाणं" (खु० ५-६०) ति।

५१ सो इमिना पाळिनयेन जातस्स नामरूपस्स निब्बत्तिलक्खणं जातिं उप्पादं अभिनवाकारं "उदयो" ति, विपरिणामलक्खणं खयं भङ्गं "वयो" ति समनुपस्सति।

सो एवं पजानाति—'इमस्स नामरूपस्स उप्पत्तितो पुब्बे अनुप्पन्नस्स रासि वा निचयो वा नत्थि, उप्पज्जमानस्सा पि रासितो वा निचयतो वा आगमनं नाम नत्थि, निरुज्झमानस्सा पि दिसाविदिसागमनं नाम नत्थि, निरुद्धस्सा पि

१ एकवीसतिमे परिच्छेदे ति सेसो।

एकस्मिं ठाने रासितो निचयतो निधानतो अवट्ठान नाम नत्थि। यथा पन वीणाय वादियमानाय उप्पन्नसद्दस्स नेव उप्पत्तितो पुब्बे सन्निचयो अत्थि, न उप्पज्जमानो सन्निचयतो आगतो, न निरुज्झमानस्स दिसाविदिसागमनं अत्थि, न निरुद्धो कत्थचि सन्निचितो तिट्ठति, अथ खो वीणं च उपवीणं च तज्जं वायामं पटिच्च अहुत्वा सम्भोति, हुत्वा पटिवेति; एवं सब्बे पि रूपारूपिनो धम्मा अहुत्वा सम्भोन्ति, हुत्वा पटिवेन्ती" ति।

५२ एवं सङ्खेपतो उदयब्बयमनसिकारं कत्वा पुन यानि एतस्सेव उदयब्बयञाणस्स **विभङ्गे**—"अविज्जासमुदया रूपसमुदयो ति पच्चयसमुदयट्ठेन रूपक्खन्धस्स उदय पस्सति। तण्हासमुदया, कम्मसमुदया, आहारसमुदया रूपसमुदयो ति पच्चयसमुदयट्ठेन रूपक्खन्धस्स उदयं पस्सति। निब्बत्तिलक्खण पस्सन्तो पि रूपक्खन्धस्स उदयं पस्सति। रूपक्खन्धस्स उदयं पस्सन्तो इमानि पञ्च लक्खणानि पस्सति। अविज्जानिरोधा रूपनिरोधो ति पच्चयनिरोधट्ठेन रूपक्खन्धस्स वयं पस्सति। तण्हानिरोधा, कम्मनिरोधा, आहारनिरोधा रूपनिरोधो ति पच्चयनिरोधट्ठेन रूपक्खन्धस्स वयं पस्सति। विपरिणामलक्खणं पस्सन्तो पि रूपक्खन्धस्स वयं पस्सति। रूपक्खन्धस्स वय पस्सन्तो पि इमानि पञ्च लक्खणानि पस्सति" (खु० ५–६१)। तथा "अविज्जासमुदया वेदनासमुदयो ति पच्चयसमुदयट्ठेन वेदनाक्खन्धस्स उदय पस्सति। तण्हासमुदया, कम्मसमुदया, फस्ससमुदया वेदनासमुदयो ति पच्चयसमुदयट्ठेन वेदनाक्खन्धस्स उदयं पस्सति। निब्बत्तिलक्खण पस्सन्तो पि वेदनाक्खन्धस्स उदयं पस्सति। वेदनाक्खन्धस्स उदयं पस्सन्तो इमानि पञ्च लक्खणानि पस्सति। अविज्जानिरोधा, तण्हानिरोधा, कम्मनिरोधा, फस्सनिरोधा वेदनानिरोधो ति पच्चयनिरोधट्ठेन वेदनाक्खन्धस्स वयं पस्सति। विपरिणामलक्खण पस्सन्तो पि वेदनाक्खन्धस्स वय पस्सति। वेदनाक्खन्धस्स वय पस्सन्तो इमानि पञ्च लक्खणानि पस्सति" (खु० ५–६१)। वेदनाक्खन्धस्स विय च सञ्ञा-सङ्खार-विञ्ञाणक्खन्धान। अय पन विसेसो—विञ्ञाणक्खन्धस्स फस्सट्ठाने "नामरूपसमुदया, नामरूपनिरोधा" ति।

५३ एवं एकेकस्स खन्धस्स उदयब्बयदस्सने दस दस कत्वा पञ्ञास लक्खणानि वुत्तानि। तेसं वसेन एवं पि रूपस्स उदयो, एवं पि रूपस्स वयो, एवं पि रूपं उदेति, एवं पि रूपं वेती ति पच्चयतो चेव खणतो च वित्थारेन मनसिकारं करोति।

५४. तस्सेवं मनसिकरोतो "इति किरिमे धम्मा अहुत्वा सम्भोन्ति, हुत्वा पटिवेन्ती" ति ञाणं विसदतरं होति। तस्सेव पच्चयतो चेव खणतो च द्वेधा उदयब्बयं पस्सतो सच्च-पटिच्चसमुप्पादनयलक्खणभेदा पाकटा होन्ति।

५५. यं हि सो अविज्जादिसमुदया खन्धानं समुदय, अविज्जादिनिरोधा च खन्धानं निरोधं पस्सति, इदमस्स **पच्चयतो** उदयब्बयदस्सनं। यं पन निब्बत्तिलक्खण-विपरिणामलक्खणानि पस्सन्तो खन्धान उदयब्बय पस्सति, इदमस्स **खणतो** उदयब्बयदस्सनं। उप्पत्तिक्खणे येव हि निब्बत्तिलक्खण। भङ्गक्खणे च विपरिणामलक्खणं।

५६ इच्चस्सेवं पच्चयतो चेव खणतो च द्वेधा उदयब्बय पस्सतो पच्चयतो उदयदस्सनेन समुदयसच्च पाकट होति जनकावबोधतो। खणतो उदयदस्सनेन दुक्खसच्चं पाकटं होति जातिदुक्खावबोधतो। पच्चयतो वयदस्सनेन निरोधसच्चं पाकटं होति पच्चयानुप्पादेन पच्चयवत अनुप्पादावबोधतो। खणतो वयदस्समेन दुक्खसच्चयेव पाकटं होति मरणदुक्खावबोधतो। य चस्स उदयब्बयदस्सन, मग्गो वायं लोकिको ति मग्गसच्च पाकट होति तत्र सम्मोहविघाततो।

५७ पच्चयतो चस्स उदयदस्सनेन अनुलोमो पटिच्चसमुप्पादो पाकटो होति, "इमस्मिं सति इदं होती" (म० १–३२३) ति अवबोधतो। पच्चयतो वयदस्सनेन पटिलोमो पटिच्चसमुप्पादो पाकटो होति, "इमस्स निरोधा इद निरुज्झती" (म० १–३२५) ति अवबोधतो। खणतो पन उदयब्बयदस्सनेन पटिच्चसमुप्पन्ना धम्मा पाकटा होन्ति सङ्खतलक्खणावबोधतो। उदयब्बयवन्तो हि सङ्खता, ते च पटिच्चसमुप्पन्ना ति।

५८. पच्चयतो चस्स उदयदस्सनेन एकत्तनयो पाकटो होति हेतुफलसम्बन्धेन सन्तानस्स अनुपच्छेदावबोधतो। अथ सुट्ठुतरं उच्छेददिट्ठिं पजहति। खणतो उदयदस्सनेन नानत्तनयो पाकटो होति नवनवानं उप्पादावबोधतो। अथ सुट्ठुतर सस्सतदिट्ठिं पजहति। पच्चयतो चस्स उदयब्बयदस्सनेन अब्यापारनयो पाकटो होति धम्मानं अवसवत्तिभावावबोधतो। अथ सुट्ठुतरं अत्तदिट्ठिं पजहति। पच्चयतो पन उदयदस्सनेन एवंधम्मतानयो पाकटो होति पच्चयानुरूपेन फलस्स उप्पादावबोधतो। अथ सुट्ठुतरं अकिरियदिट्ठिं पजहति।

५९. पच्चयतो चस्स उदयदस्सनेन अनत्तलक्खणं पाकट होति धम्मानं निरीहकत्तपच्चयपटिबद्धवुत्तितावबोधतो। खणतो उदयब्बयदस्सनेन अनिच्चलक्खणं पाकट होति हुत्वा अभावावबोधतो, पुब्बन्तापरन्तविवेकावबोधतो च। दुक्खलक्खणं पि पाकटं होति उदयब्बयेहि पटिपीळनावबोधतो। सभावलक्खणं पि पाकट होति उदयब्बयपरिच्छिन्नावबोधतो। सभावलक्खणे सङ्खतलक्खणस्स तावकालिकत्त पि पाकटं होति उदयक्खणे वयस्स वयक्खणे च उदयस्स अभावावबोधतो ति।

६०. तस्सेवं पाकटीभूतसच्चपटिच्चसमुप्पादनयलक्खणभेदस्स "एवं किर नामिमे धम्मा अनुप्पन्नपुब्बा उप्पज्जन्ति, उप्पन्ना निरुज्झन्ती" ति निच्चनवा

व हुत्वा सङ्खारा उपट्ठहन्ति । न केवलं च निच्चनवा, सुरियुग्गमने उस्सावबिन्दु विय, उदकबुब्बुळो विय, उदके दण्डराजि विय, आरग्गे सासपो विय, विज्जुप्पादो विय च परित्तट्ठायिनो । माया-मरीचि-सुपिनन्त-अलातचक्क-गन्धब्बनगर-फेण-कदलिआदयो विय असारा निस्सारा ति चा पि उपट्ठहन्ति ।

६१. एत्तावतानेन "वयधम्ममेव उप्पज्जति, उप्पन्नं च वय उपेती" ति इमिना आकारेन समपञ्ञासलक्खणानि पटिविज्झित्वा ठित उदयब्बयानुपस्सन नाम तरुणविपस्सनाञाण अधिगतं होति, यस्साधिगमा "आरद्धविपस्सको" ति सङ्ख गच्छति ॥

विपस्सनुपक्किलेसकथा

६२ अथस्स इमाय तरुणविपस्सनाय आरद्धविपस्सकस्स **दस विपस्सनुपक्किलेसा** उप्पज्जन्ति । विपस्सनुपक्किलेसा हि पटिवेधप्पत्तस्स अरियसावकस्स चेव विप्पटिपन्नकस्स च निक्खित्तकम्मट्ठानस्स कुसीतपुग्गलस्स नुप्पज्जन्ति । सम्मापटिपन्नकस्स पन युत्तपयुत्तस्स आरद्धविपस्सकस्स कुलपुत्तस्स उप्पज्जन्ति येव ।

कतमे पन ते दस उपक्किलेसा ति ? ओभासो, ञाण, पीति, पस्सद्धि, सुखं, अधिमोक्खो, पग्गहो, उपट्ठानं, उपेक्खा, निकन्ती ति ।

६३. वुत्तं हेत—"कथ धम्मुद्धच्चविग्गहितमानस होति ? अनिच्चतो मनसिकरोतो ओभासो उप्पज्जति, 'ओभासो धम्मो' ति ओभासं आवज्जति, ततो विक्खेपो उद्धच्चं । तेन उद्धच्चेन विग्गहितमानसो अनिच्चतो उपट्ठानं यथाभूतं नप्पजानाति । दुक्खतो, अनत्ततो उपट्ठानं यथाभूत नप्पजानाति" । तथा "अनिच्चतो मनसिकरोतो ञाण उप्पज्जति पे०··· पीति, पस्सद्धि, सुखं, अधिमोक्खो, पग्गहो, उपट्ठान, उपेक्खा, निकन्ति उप्पज्जति, 'निकन्ति धम्मो' ति निकन्ति आवज्जति, ततो विक्खेपो उद्धच्चं । तेन उद्धच्चेन विग्गहितमानसो अनिच्चतो उपट्ठान यथाभूत नप्पजानाति । दुक्खतो, अनत्ततो उपट्ठान यथाभूतं नप्पजानाती" (खु० ५–३४८) ति ।

६४. तत्थ **ओभासो** ति । विपस्सनोभासो । तस्मि उप्पन्ने योगावचरो "न वत मे इतो पुब्बे एवरूपो ओभासो उप्पन्नपुब्बो, अद्धा मग्गपत्तोस्मि, फलप्पत्तोस्मी" ति अमग्गमेव मग्गो ति, अफलमेव च फल ति गण्हाति । तस्स, अमग्ग मग्गो ति अफलं फल ति गण्हतो विपस्सनावीथि उक्कन्ता नाम होति । सो अत्तनो मूलकम्मट्ठानं[1] विस्सज्जेत्वा ओभासमेव अस्सादेन्तो निसीदति ।

१. मूलकम्मट्ठानं ति । विपस्सन ।

सो खो पनाय ओभासो कस्सचि भिक्खुनो पल्लङ्कट्ठानमत्तमेव ओभासेन्तो उप्पज्जति। कस्सचि अन्तोगब्भ, बहिगब्भ पि। कस्सचि सकलविहारं, गावुत, अड्ढयोजन, योजनं, द्वियोजन, तियोजनं" पे० कस्सचि पथवीतलतो याव अकनिट्ठब्रह्मलोका एकालोक कुरुमानो। भगवतो पन दससहस्सिलोकधातु ओभासेन्तो उदपादि।

६५ एव वेमत्तताय चस्स इद वत्थु—चित्तलपब्बते किर द्विकुट्टगेहस्स अन्तो द्वे थेरा निसीदिंसु। त दिवस च काळपक्खुपोसथो होति, मेघपटलच्छन्ना दिसा, रत्तिभागे चतुरङ्गसमन्नागत तम पवत्तति। अथेको थेरो आह—"भन्ते, मय्हं इदानि चेतियङ्गणम्हि सीहासने पञ्चवण्णानि कुसुमानि पञ्ञायन्ती" ति। त इतरो आह—"न अच्छरिय, आवुसो, कथेसि। मय्ह पनेतरहि महासमुद्दम्हि योजनट्ठाने मच्छकच्छपा पञ्ञायन्तो" ति।

६६ अय पन विपस्सनुपक्किलेसो येभुय्येन समथविपस्सनालाभिनो उप्पज्जति। सो समापत्तिविक्खम्भितान किलेसान असमुदाचारतो "अरहा अहं" ति चित्त उप्पादेति, उच्चवालिकवासी महानागत्थेरो विय, हङ्कनकवासी महादत्तत्थेरो विय, चित्तलपब्बते निङ्कपेण्णकपधानघरवासी चूळसुमनत्थेरो विय च।

६७ तत्रिद एकवत्थुपरिदीपन—तलङ्गरवासी धम्मदिन्नत्थेरो किर नाम एको पभिन्नपटिसम्भिदो महाखीणासवो महतो भिक्खुसङ्घस्स ओवाददायको अहोसि। सो एकदिवस अत्तनो दिवाट्ठाने निसीदित्वा—"कि नु खो अम्हाक आचरियस्स उच्चवालिकवासि-महानागत्थेरस्स समणभावकिच्च मत्थक पत्त, नो ?" ति आवज्जन्तो पुथुज्जनभावमेवस्स दिस्वा "मयि अगच्छन्ते पुथुज्जन-कालकिरियमेव करिस्सतो" ति च ञत्वा इद्धिया वेहास उप्पतित्वा दिवाट्ठाने निसिन्नस्स थेरस्स समीपे ओरोहित्वा वन्दित्वा वत्त दस्सेत्वा एकमन्त निसीदि। "किं, आवुसो धम्मदिन्न, अकाले आगतोसी" ति च वुत्ते "पञ्ह, भन्ते, पुच्छितु आगतोम्ही" ति आह। ततो "पुच्छावुसो, जानमाना कथयिस्सामा" ति वुत्ते पञ्हसहस्स पुच्छि।

थेरो पुच्छितपुच्छितं असज्जमानो व कथेसि। ततो "अतितिक्खं वो भन्ते, ञाण, कदा तुम्हेहि अय धम्मो अधिगतो" ति वुत्ते "इतो सट्ठिवस्सकाले, आवुसो" ति आह। "समाधि पि, भन्ते, वळञ्जेथा" ति ? "न यिद, आवुसो, भारियं" ति। "तेन हि भन्ते, एक हत्थि मापेथा" ति। थेरो सब्बसेतं हत्थि मापेसि। "इदानि, भन्ते, यथा अय हत्थी अञ्चितकण्णो पसारितनङ्गुट्ठो सोण्ड मुखे पक्खिपित्वा भेरवं कोञ्चनादं करोन्तो तुम्हाक अभिमुखो आगच्छति, तथा न

करोथा" ति। थेरो तथा कत्वा वेगेन आगच्छतो हत्थिस्स भेरव आकारं दिस्वा उट्ठाय पलायितु आरद्धो। तमेनं खीणासवत्थेरो हत्थ पसारेत्वा चीवरकण्णे गहेत्वा "भन्ते, खीणासवस्स सारज्जं नाम होती" ति आह।

सो तम्हि काले अत्तनो पुथुज्जनभावं ञत्वा "अवस्सयो मे, आवुसो धम्मदिन्न, होही" ति वत्वा पादमूले उक्कुटिकं निसीदि। "भन्ते, तुम्हाकं अवस्सयो भविस्सामिच्चेवाह आगतो, मा चिन्तयित्था" ति कम्मट्ठान कथेसि। थेरो कम्मट्ठान गहेत्वा चङ्कमं आरुय्ह ततिये पदवारे अग्गफल अरहत्तं पापुणि। थेरो किर दोसचरितो अहोसि। एवरूपा भिक्खू ओभासे कम्पन्ति। (१)

६८ **ञाणं** ति। विपस्सनाञाण। तस्स किर रूपारूपधम्मे तुलयन्तस्स तीरेन्तस्स विस्सट्ठइन्दवजिरमिव अविहतवेग तिखिण सूर अतिविसदं ञाणं उप्पज्जति। (२)

६९. **पीती** ति। विपस्सनापीतो। तस्स किर तस्मि समये खुद्दिकापीति, खणिकापीति, ओक्कन्तिकापीति, उब्बेगापोति, फरणापीती ति अय पञ्चविधा पीति सकलसरीरं पूरयमाना उप्पज्जन्ति। (३)

७०. **पस्सद्धी** ति। विपस्सनापस्सद्धि। तस्स किर तस्मि समये रत्तिट्ठाने वा दिवाट्ठाने वा निसिन्नस्स कायचित्तान नेव दरथो, न गारव, न कक्खळता, न अकम्मञ्ञता, न गेलञ्ञ, न वङ्कता होति। अय खो पनस्स कायचित्तानि पस्सद्धानि, लहूनि, मुदूनि, कम्मञ्ञानि, सुविसदानि, उजुकानि येव होन्ति। सो इमेहि पस्सद्धादीहि अनुग्गहितकायचित्तो तस्मि समये अमानुसिं नाम रतिं अनुभवति, यं सन्धाय वुत्तं—

"सुञ्ञागारं पविट्ठस्स सन्तचित्तस्स भिक्खुनो।
अमानुसी रति होति सम्मा धम्मं विपस्सतो॥
यतो यतो सम्मसति खन्धानं उदयब्बयं।
लभती पीतिपामोज्जं अमतं तं विजानतं" ति॥ (खु० १–५३)

एवमस्स इमं अमानुसिं रतिं साधयमाना लहुतादिसम्पयुत्ता पस्सद्धि उप्पज्जति। (४)

७१. **सुखं** ति। विपस्सनासुखं। तस्स किर तस्मि समये सकलसरीरं अभिसन्दयमानं अतिपणीत सुख उप्पज्जति। (५)

७२. **अधिमोक्खो** ति। सद्धा। विपस्सनासम्पयुत्ता येव हिस्स चित्तचेतसिकानं अतिसयपसादभूता बलवती सद्धा उप्पज्जति। (६)

७३. **पग्गहो** ति। विरियं। विपस्सनासम्पयुत्तमेव हिस्स असिथिलं अनच्चारद्धं सुपग्गहितं विरियं उप्पज्जति। (७)

७४ **उपट्ठानं** ति। सति। विपस्सनासम्पयुत्ता येव हिस्स सुपट्ठिता सुप्पतिट्ठिता निखाता अचला पब्बतराजसदिसा सति उप्पज्जति। सो य य ठानं आवज्जति समन्नाहरति मनसिकरोति पच्चवेक्खति, त तं ठानमस्स ओक्खन्दित्वा पक्खन्दित्वा दिब्बचक्खुनो परलोको विय सतिया उपट्ठाति। (८)

७५. **उपेक्खा** ति। विपस्सनुपेक्खा चेव, आवज्जनुपेक्खा च। तस्मिं हिस्स समये सब्बसङ्खारेसु मज्झत्तभूता विपस्सनुपेक्खा पि बलवती उप्पज्जति, मनोद्वारे आवज्जनुपेक्खा पि। सा हिस्स तं तं ठानं आवज्जन्तस्स विस्सट्ठइन्दवजिरमिव पत्तपुटे पक्खन्ततत्तनाराचो विय च सूरा तिखिणा हुत्वा वहति। (९)

७६. **निकन्ती** ति। विपस्सनानिकन्ति। एव ओभासादिपटिमण्डिताय हिस्स विपस्सनाय आलय कुरुमाना सुखुमा सन्ताकारा निकन्ति उप्पज्जति। या निकन्ति किलेसो ति परिग्गहेतु पि न सक्का होति॥ (१०)

७७ यथा च ओभासे, एव एतेसु पि अञ्ञतरस्मिं उप्पन्ने योगावचरो "न वत मे इतो पुब्बे एवरूप ञाणं उप्पन्नपुब्ब, एवरूपा पीति, पस्सद्धि, सुख, अधिमोक्खो, पग्गहो, उपट्ठानं, उपेक्खा, निकन्ति उप्पन्नपुब्बा, अद्धा मग्गप्पत्तोस्मि फलप्पत्तोस्मी" ति अमग्गमेव मग्गो ति अफलमेव च फलं ति गण्हाति। तस्स अमग्गं मग्गो ति, अफलं फल नि गण्हतो विपस्सनावीथि उक्कन्ता नाम होति। सो अत्तनो मूलकम्मट्ठानं विस्सज्जेत्वा निकन्तिमेव अस्सादेन्तो निसीदती ति।

७८. एत्थ च ओभासादयो उपक्किलेसवत्थुताय उपक्किलेसा ति वुत्ता, न अकुसलत्ता। निकन्ति पन उपक्किलेसो चेव उपक्किलेसवत्थु च। वत्थुवसेनेव चेते दस। गाहवसेन पन समतिंस होन्ति।

कथं? "मम ओभासो उप्पन्नो" ति गण्हतो हि दिट्ठिगाहो होति, "मनापो वत ओभासो उप्पन्नो" ति गण्हतो मानगाहो, ओभासं अस्सादयतो तण्हागाहो, इति ओभासे दिट्ठिमानतण्हावसेन तयो गाहा। तथा सेसेसु पी ति एव गाहवसेन समतिंस उपक्किलेसा होन्ति। तेस वसेन अकुसलो अब्यत्तो योगावचरो ओभासादीसु कम्पति, विक्खिपति। ओभासादीसु एकेकं "एतं मम, एसोहमस्मि, एसो मे अत्ता" (म० १-१८०) ति समनुपस्सति। तेनाहु **पोराणा**—

"ओभासे चेव ञाणे च पीतिया च विकम्पति।
पस्सद्धिया सुखे चेव, येहि चित्त पवेधति॥
अधिमोक्खे च पग्गाहे उपट्ठाने च कम्पति।
उपेक्खावज्जनायं च उपेक्खाय निकन्तिया" ति॥

मग्गामग्गववत्थानकथा

७९. कुसलो पन पण्डितो ब्यत्तो बुद्धिसम्पन्नो योगावचरो ओभासादीसु

उप्पन्नेसु—"अयं खो मे ओभासो उप्पन्नो, सो खो पनायं अनिच्चो सङ्खतो पटिच्चसमुप्पन्नो खयधम्मो वयधम्मो विरागधम्मो निरोधधम्मो" ति इति वा तं पञ्ञाय परिच्छिन्दति उपपरिक्खति। अथ वा पनस्स एवं होति—"सचे ओभासो अत्ता भवेय्य, 'अत्ता' ति गहेतुं वट्टेय्य। अनत्ता च पनायं अत्ता ति गहितो, तस्मा सो अवसवत्तनट्ठेन अनत्ता, हुत्वा अभावट्ठेन अनिच्चो, उप्पादवय-पटिपीळनट्ठेन दुक्खो" ति, सब्बं **अरूपसत्तके** (विसु० ५२१) वुत्तनयेन वित्थारेतब्बं। यथा च ओभासे, एवं सेसेसु पि।

८०. सो एवं उपपरिक्खित्वा "ओभासं नेतं मम, नेसोहमस्मि, न मेसो अत्ता" ति समनुपस्सति। ञाणं पे० निकन्तिं "नेतं मम, नेसोहमस्मि, न मेसो अत्ता" (म० १-१८०) ति समनुपस्सति। एवं समनुपस्सन्तो ओभासादीसु न कम्पति न वेधति। तेनाहु **पोराणा**—

> इमानि दस ठानानि पञ्ञा यस्स परिच्चिता।
> धम्मुद्धच्चकुसलो होति, न च विक्खेपं गच्छती" ति॥

सो एवं विक्खेपं अगच्छन्तो तं समतिंसविधं उपक्किलेसजटं विजटेत्वा ओभासादयो धम्मा न मग्गो। उपक्किलेसविमुत्तं पन वीथिपटिपन्नं विपस्सनाञाणं मग्गो ति मग्गं च अमग्गं च ववत्थपेति। तस्सेवं "अयं मग्गो, अयं न मग्गो" ति मग्गं च अमग्गं च ञत्वा ठितं ञाणं **मग्गामग्गञाणदस्सनविसुद्धी** ति वेदितब्बं।

८१. एत्तावता च पन तेन तिण्णं सच्चानं ववत्थानं कतं होति। कथं? दिट्ठिविसुद्धियं ताव नामरूपस्स ववत्थापनेन दुक्खसच्चस्स ववत्थानं कतं। कङ्खावितरणविसुद्धियं पच्चयपरिग्गहणेन समुदयसच्चस्स ववत्थानं। इमिस्सं मग्गामग्गञाणदस्सनविसुद्धियं सम्मामग्गस्स अवधारणेन मग्गसच्चस्स ववत्थानं कतं ति। एवं लोकियेनेव ताव ञाणेन तिण्णं सच्चानं ववत्थानं कतं होति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे पञ्ञाभावनाधिकारे
मग्गामग्गञाणदस्सनविसुद्धिनिद्देसो नाम
वीसतिमो परिच्छेदो॥



पटिपदाञाणदस्सनविसुद्धिनिद्देसो

एकवीसतिमो परिच्छेदो

उपक्किलेसविमुत्तउदयब्बयञाणकथा

१. अट्ठन्नं पन ञाणानं वसेन सिखाप्पत्ता[1] विपस्सना नवम च सच्चानुलोमिकं ञाणं ति अय **पटिदाञाणदस्सनविसुद्धि** नाम। अट्ठन्नं ति च एत्थ उपक्किलेसविमुत्त वीथिपटिन्नविपस्सनासङ्खात उदयब्बयानुपस्सनाञाण, भङ्गानुपस्सनाञाण, भयतुपट्ठानञाण, भयतुपट्ठानञाण, आदीनवानुपस्सनाञाण, निब्बिदानुपस्सनाञाण, मुञ्चितुकम्यताञाण, पटिसङ्खानुपस्सनाञाण, सङ्खारुपेक्खाञाणं ति इमानि अट्ठ ञाणानि वेदितब्बानि। नवम सच्चानुलोमिकञाण ति अनुलोमस्सेत अधिवचन। तस्मा त सम्पादेतुकामेन उपक्किलेसविमुत्तं उदयब्बयञाण आदिं कत्वा एतेसु ञाणेसु योगो करणीयो।

२ पुन उदयब्बयञाणे योगो किमत्थियो ति चे? लक्खणसल्लक्खणत्थो। उदयब्बयञाण हि हेट्ठा दसहि उपक्किलेसेहि उपक्किलिट्ठ हुत्वा याथावसरसतो तिलक्खण सल्लक्खेतु नासक्खि। उपक्किलेसविमुत्त पन सक्कोति। तस्मा लक्खणसल्लक्खणत्थमेत्थ पुन योगो करणीयो।

३ लक्खणानि पन किस्स अमनसिकारा केन पटिच्छन्नत्ता न उपट्ठहन्ति? **अनिच्चलक्खणं** ताव उदयब्बयानं अमनसिकारा, सन्ततिया पटिच्छन्नत्ता न उपट्ठाति। **दुक्खलक्खणं** अभिण्हसम्पटिपीळनस्स अमनसिकारा, इरियापथेहि पटिच्छन्नत्ता न उपट्ठाति। **अनत्तलक्खणं** नानाधातुविनिब्भोगस्स अमनसिकारा, घनेन पटिच्छन्नत्ता न उपट्ठाति।

उदयब्बय पन परिग्गहेत्वा सन्ततिया विकोपिताय अनिच्चलक्खणं याथावसरतो उपट्ठाति। अभिण्हसम्पटिपीळनं मनसिकत्वा इरियापथे उग्घाटिते दुक्खलक्खणं याथावसरसतो उपट्ठाति। नानाधातुयो विनिब्भुजित्वा घनविनिब्भोगे कते अनत्तलक्खणं याथावसरसतो उपट्ठाति।

४. एत्थ च अनिच्चं अनिच्चलक्खण, दुक्ख दुक्खलक्खण, अनत्ता अनत्तलक्खण ति अयं विभागो वेदितब्बो। तत्थ **अनिच्चं** ति खन्धपञ्चक। कस्मा? उप्पादवयञ्ञथत्तभावा, हुत्वा अभावतो वा। उप्पादवयञ्ञथत्त **अनिच्चलक्खणं** हुत्वा अभावसङ्खातो वा आकारविकारो।

१. सिखाप्पत्ता ति। मत्थकप्पत्ता।

"यदनिच्च तं दुक्ख" (स० २-२५९) ति वचनतो पन तदेव खन्धपञ्चकं **दुक्खं**। कस्मा ? अभिण्हपटिपीळना। अभिण्हपटिपीळनाकारो **दुक्खलक्खणं**।

"यं दुक्ख तदनत्ता" (स० २-२५९) ति पन वचनतो तदेव खन्धपञ्चकं **अनत्ता**। कस्मा ? अवसवत्तनतो। अवसवत्तनाकारो अनत्तलक्खणं।

तयिदं सब्बं पि अयं योगावचरो उपक्किलेसविमुत्तेन वीथिपटिपन्नविपस्सना-सङ्खातेन उदयब्बयानुपस्सनाञाणेन याथावसरसतो सल्लक्खेति। (१)

भङ्गानुपस्सनाञाणकथा

५. तस्सेवं सल्लक्खेत्वा पुनप्पुन्नं "अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति रूपारूपधम्मे तुलयतो तीरयतो तं ञाण तिक्खं हुत्वा वहति, सङ्खारा लहु उपट्ठहन्ति, ञाणे तिक्खे वहन्ते सङ्खारेसु लहु उपट्ठहन्तेसु उप्पादं वा ठिति वा पवत्तं वा निमित्तं वा न सम्पापुणाति। खय-वयभेदनिरोधे येव सति सन्तिट्ठति। तस्स "एवं उप्पज्जित्वा एव नाम सङ्खारगतं निरुज्झती" ति पस्सतो एतस्मिं ठाने **भङ्गानुपस्सनं** नाम विपस्सनाञाणं उप्पज्जति।

६. यं सन्धाय वुत्तं—"कथं आरम्मणं पटिसङ्खा भङ्गानुपस्सने पञ्ञा विपस्सने ञाणं ? रूपारम्मणता चित्त उप्पज्जित्वा भिज्जति, त आरम्मण पटिसङ्खा तस्स चित्तस्स भङ्गं अनुपस्सति। अनुपस्सती ति कथ अनुपस्सति ? अनिच्चतो अनुपस्सति नो निच्चतो, दुक्खतो अनुपस्सति नो सुखतो, अनत्ततो अनुपस्सति नो अत्ततो, निब्बिन्दति नो नन्दति, विरज्जति नो रज्जति, निरोधेति नो समुदेति, पटिनिस्सज्जति नो आदियति। अनिच्चतो अनुपस्सन्तो निच्चसञ्ञ पजहति। दुक्खतो अनुपस्सन्तो सुखसञ्ञं, अनत्ततो अनुपस्सन्तो अत्तसञ्ञं, निब्बिन्दतो नन्दि, विरज्जन्तो रागं, निरोधेन्तो समुदयं, पटि-निस्सज्जन्तो आदानं पजहति। वेदनारम्मणता ··पे०·· सञ्ञारम्मणता, सङ्खारारम्मणता·· विञ्ञाणारम्मणता·····चक्खारम्मणता ·· पे०·····जरामरणा-रम्मणता चित्तं उप्पज्जित्वा भिज्जति·· पे० ···पटिनिस्सज्जन्तो आदानं पजहति।

वत्थुसङ्कमना चेव पञ्ञाय च विवट्टना।
आवज्जनाबलं चेव पटिसङ्खाविपस्सना॥
आरम्मणअन्वयेन उभो एकववत्थाना।
निरोधे अधिमुत्तता वयलक्खणविपस्सना॥
आरम्मणं च पटिसङ्खा भङ्गं च अनुपस्सति।
सुञ्ञतो च उपट्ठानं, अधिपञ्ञाविपस्सना॥
कुसलो तीसु अनुपस्सनासु चत्तसो च विपस्सनासु।
तयो उपट्ठाने कुसलता नानादिट्ठीसु न कम्पती ति॥

तं ञातट्ठेन ञाणं, पजाननट्ठेन पञ्ञा, तेन वुच्चति—आरम्मणपटिसङ्खाय भङ्गानुपस्सने पञ्ञा विपस्सने ञाण" (खु० ५–६३) ति।

७ तत्थ **आरम्मणं पटिसङ्खा** ति। य किञ्चि आरम्मण पटिसङ्खाय। जानित्वा, खयतो वयतो दिस्वा ति अत्थो। **भङ्गानुपस्सने पञ्ञा** ति। तस्स आरम्मणं खयतो वयतो पटिसङ्खाय उप्पन्नस्स ञाणस्स भङ्गं अनुपस्सने **या** पञ्ञा, इद विपस्सने ञाण ति वुत्त, त **कथं** होती ति? अयं ताव कथेतुकम्यतापुच्छाय अत्थो। ततो यथा तं होति, त दस्सेतु "रूपारम्मणता" ति आदि वुत्तं।

तत्थ **रूपारम्मणता चित्तं उप्पज्जित्वा भिज्जती** ति। रूपारम्मण चित्तं उप्पज्जित्वा भिज्जति। अथ वा रूपारम्मणभावे चित्तं उप्पज्जित्वा भिज्जती ति अत्थो। त **आरम्मणं पटिसङ्खा** ति। तं रूपारम्मण पटिसङ्खाय जानित्वा, खयतो वयतो दिस्वा ति अत्थो। **तस्स चित्तस्स** भङ्ग **अनुपस्सती** ति। येन चित्तेन त रूपारम्मण खयतो वयतो दिट्ठ, तस्स चित्तस्स अपरेन चित्तेन भङ्ग अनुपस्सती ति अत्थो। तेनाहु **पोराणा**—"ञात च ञाणं च उभो पि विपस्सती" ति।

८. एत्थ च **अनुपस्सती** ति अनु अनु पस्सति। अनेकेहि आकारेहि पुनप्पुनं पस्सती ति अत्थो। तेनाह—"**अनुपस्सती ति कथं अनुपस्सति? अनिच्चतो अनुपस्सती**" ति आदि।

तत्थ यस्मा भङ्गो नाम अनिच्चताय परमा कोटि, तस्मा सो भङ्गानुपस्सको योगावचरो सब्ब सङ्खारगत **अनिच्चतो अनुपस्सति, नो निच्चतो**। ततो अनिच्चस्स दुक्खत्ता, दुक्खस्स च अनत्तत्ता तदेव **दुक्खतो अनुपस्सति, नो सुखतो। अनत्ततो अनुपस्सति नो अत्ततो**।

९. यस्मा पन यं अनिच्चं दुक्खमनत्ता, न तं अभिनन्दितब्बं। य च अनभिनन्दितब्ब, न तत्थ रज्जितब्ब। तस्मा एतस्मिं भङ्गानुपस्सानुसारेन "अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति दिट्ठे सङ्खारगते **निब्बिन्दति, नो नन्दति। विरज्जति नो** रज्जति। सो एवं अरज्जन्तो लोकिकेनेव ताव ञाणेन रागं **निरोधेति, नो समुदेति**। समुदयं न करोती ति अत्थो।

अथ वा, सो एवं विरत्तो यथा दिट्ठं सङ्खारगत तथा अदिट्ठ पि अन्वयञाणवसेन निरोधेति, नो समुदेति। निरोधतो व मनसिकरोति। निरोधमेवस्स पस्सति, नो समुदयं ति अत्थो।

१०. सो एवं पटिपन्नो पटिनिस्सज्जति, नो आदियति। किं वुत्तं होति? अय पि अनिच्चादिअनुपस्सना तदङ्गवसेन सद्धिं खन्धाभिसङ्खारेहि किलेसान परिच्चजनतो, सङ्खतदोसदस्सनेन च तब्बिपरीते निब्बाने तन्निन्नताय पक्खन्द-

नतो परिच्चागपटिनिस्सग्गो चेव पक्खन्दनपटिनिस्सग्गो चा ति वुच्चति। तस्मा ताय समन्नागतो भिक्खु यथावुत्तेन नयेन किलेसे परिच्चजति, निब्बाने च पक्खन्दति। नापि निब्बत्तनवसेन किलेसे आदियति, न अदोसदस्सितावसेन सङ्खतारम्मण। तेन वुच्चति—"पटिनिस्सज्जति नो आदियती" ति।

११. इदानिस्स तेहि ञाणेहि येसं धम्मानं पहानं होति, तं दस्सेतु—**अनिच्चतो अनुपस्सन्तो निच्चसञ्ञं पजहती** ति आदि वुत्तं। तत्थ **नन्दि** ति। सप्पीतिक तण्हं। सेसं वुत्तनयमेव।

१२ गाथासु पन **वत्थुसङ्कमना** ति रूपस्स भङ्ग दिस्वा पुन येन चित्तेन भङ्गो दिट्ठो, तस्सापि भङ्गदस्सनवसेन पुरिमवत्थुसङ्कमना। **पञ्ञाय च विवट्टना** ति। उदयं पहाय वये सन्तिट्ठना। **आवज्जनाबल चेवा** ति। रूपस्स भङ्ग दिस्वा पुन भङ्गारम्मणस्स चित्तस्स भङ्गदस्सनत्थं अनन्तरमेव आवज्जनसमत्थता। **पटिसङ्खाविपस्सना** ति। एसा आरम्मणपटिसङ्खा भङ्गानुपस्सना नाम।

१३ **आरम्मणअन्वयेन उभो एकववत्थाना** ति। पच्चक्खतो दिट्ठस्स आरम्मणस्स अन्वयेन अनुगमनेन यथा अतीते पि सङ्खारगतं भिज्जित्थ, अनागते पि भिज्जस्सती ति एवं उभिन्नं एकसभावेनेव ववत्थापन ति अत्थो। वुत्त पि चेत **पोराणेहि**—

"सविज्जमानम्हि विसुद्धदस्सनो तदन्वय नेति अतीतनागते।
सब्बे पि सङ्खारगता पलोकिनो उस्सावबिन्दू सुरियेव उग्गते" ति॥

१४ **निरोधे अधिमुत्तता** ति। एवं उभिन्नं भङ्गवसेन एकववत्थानं कत्वा तस्मि येव भङ्गसङ्खाते निरोधे अधिमुत्तता तग्गरुता तन्निन्नता तप्पोणता तप्पब्भारता ति अत्थो। **वयलक्खणविपस्सना** ति। एसा वयलक्खणविपस्सना नामा ति वुत्त होति।

१५ **आरम्मणं च पटिसङ्खा** ति। पुरिम च रूपादिआरम्मण जानित्वा। **भङ्गं च अनुपस्सती** ति। तस्सारम्मणस्स भङ्ग दिस्वा तदारम्मणस्स चित्तस्स भङ्गं अनुपस्सति।

सुञ्ञतो च उपट्ठानं ति। तस्सेवं भङ्ग अनुपस्सतो "सङ्खारा व भिज्जन्ति, तेसं भेदो मरण, न अञ्ञो कोचि अत्थी" ति सुञ्ञतो उपट्ठानं इज्झति। तेनाहु **पोराणा**—

"खन्धा निरुज्झन्ति न चत्थि अञ्ञो, खन्धानभेदो मरण ति वुच्चति।
तेस खय पस्सति अप्पमत्तो, मणिं व विज्झं वजिरेन योनिसो" ति॥

अधिपञ्ञाविपस्सना ति। या च आरम्मणपटिसङ्खा, या च भङ्गानुपस्सना, यं च सुञ्ञतो उपट्ठानं—अय अधिपञ्ञाविपस्सना नामा ति वुत्तं होति।

१६ **कुसलो तीसु अनुपस्सनासू** ति। अनिच्चानुपस्सनादीसु तीसु छेको भिक्खु। **चतस्सो च विपस्सनासू** ति। निब्बिदादीसु च चतूसु विपस्सनासु। **तयो उपट्ठाने कुसलता** ति। खयतो वयतो सुञ्ञतो ति। इमस्मिं च तिविधे उपट्ठाने कुसलताय। **नानादिट्ठीसु न कम्पती** ति। सस्सतदिट्ठिआदीसु नानप्पकारासु दिट्ठीसु न वेधति।

१७ सो एवं अवेधमानो "अनिरुद्धमेव निरुज्झति, अभिन्नमेव भिज्जती" ति पवत्तमनसिकारो, दुब्बलभाजनस्स विय भिज्जमानस्स, सुखुमरजस्सेव विप्पकिरियमानस्स, तिलानं विय भज्जियमानानं सब्बसङ्खारानं उप्पादट्ठितिपवत्तनिमित्तं विस्सज्जेत्वा भेदमेव पस्सति। सो यथा नाम चक्खुमा पुरिसो पोक्खरणीतीरे वा नदीतीरे वा ठितो थूलफुसितके देवे वस्सन्ते उदकपिट्ठे महन्तमहन्तानि उदकबुब्बुळकानि उप्पज्जित्वा उप्पज्जित्वा सीघं सीघं भिज्जमानानि पस्सेय्य, एवमेव सब्बे सङ्खारा भिज्जन्ति भिज्जन्ती ति पस्सति। एवरूपं हि योगावचरं सन्धाय वुत्तं भगवता—

"यथा बुब्बुळकं पस्से यथा पस्से मरीचिकं।
एवं लोकं अवेक्खन्तं मच्चुराजा न पस्सती" ति॥ (खु० १–   )

१८. तस्सेवं "सब्बे सङ्खारा भिज्जन्ति भिज्जन्ती" ति अभिण्हं पस्सतो अट्ठानिसंसपरिवारं भङ्गानुपस्सनाञाणं बलप्पत्तं होति। तत्रिमे अट्ठानिसंसा— भवदिट्ठिप्पहानं, जीवितनिकन्तिपरिच्चागो, सदायुत्तपयुत्तता, विसुद्धाजीविता, उस्सुक्कप्पहानं, विगतभयता, खन्तिसोरच्चपटिलाभो, अरतिरतिसहनता ति। तेनाहु **पोराणा**—

"इमानि अट्ठ गुणमुत्तमानि दिस्वा, तहिं सम्मसति पुनप्पुनं।
आदित्तचेलस्सिरसूपमो मुनि, भङ्गानुपस्सी अमतस्स पत्तिया" ति॥

भङ्गानुपस्सनाञाणं निट्ठितं॥

भयतुपट्ठानञाणकथा

१९ तस्सेवं सब्बसङ्खारानं खयवयभेदनिरोधारम्मणं **भङ्गानुपस्सनं आसेवन्तस्स** भावेन्तस्स बहुलीकरोन्तस्स सब्बभव-योनि-गति-सत्तावासेसु पभेदका सङ्खारा सुखेन जीवितुकामस्स भीरुकपुरिसस्स सीह-ब्यग्घ-दीपि-अच्छ-तरच्छ-यक्ख-रक्खस-चण्डकुक्कुर-पभिन्नमदचण्डहत्थिघोर-आसीविस-असनिविचक्क-सुसान-रण-भूमिजलितअङ्गारकासुआदयो विय महाभयं हुत्वा उपट्ठहन्ति। तस्स अतीता सङ्खारा निरुद्धा, पच्चुप्पन्ना निरुज्झन्ति, अनागते निब्बत्तनकसङ्खारा पि एवमेव निरुज्झिस्सन्ती ति पस्सतो एतस्मिं ठाने **भयतुपट्ठानञाणं** नाम उप्पज्जति।

२० तत्राय उपमा—एकिस्सा किर इत्थिया तयो पुत्ता राजापराधिका। तेसं राजा सीसच्छेदं आणापेसि। सा पुत्तेहि सद्धिं आघातनं अगमासि। अथस्सा जेट्ठपुत्तस्स सीसं छिन्दित्वा मज्झिमस्स छिन्दितुं आरभिंसु। सा जेट्ठस्स

सीसं छिन्नं मज्झिमस्स च छिज्जमानं दिस्वा कनिट्ठम्हि आलयं विस्सज्जि—"अयं पि एतेसं येव सदिसो भविस्सती" ति। तस्मा इत्थिया जेट्ठपुत्तस्स छिन्नसीसदस्सनं विय योगिनो अतीतसङ्खारानं निरोधदस्सनं, मज्झिमस्स छिज्जमानसीसदस्सन विय पच्चुप्पन्नान निरोधदस्सनं, "अयं पि एतेस येव सदिसो भविस्सती" ति कनिट्ठपुत्तम्हि आलयविस्सज्जनं विय "अनागते पि निब्बत्तनकसङ्खारा भिज्जिस्सन्ती" ति अनागतानं निरोधदस्सन। तस्सेवं पस्सतो एतस्मि ठाने उप्पज्जति भयतुपट्ठानञाण।

२१. अपरा पि उपमा—एका किर पूतिपजा इत्थी दस दारके विजायि। तेसु नव मता, एको हत्थगतो मरति, अपरो कुच्छियं। सा नव दारके मते दसम च मीयमान दिस्वा कुच्छिगते आलयं विस्सज्जि—"अयं पि एतेसं येव सदिसो भविस्सती" ति। तत्थ तस्सा इत्थिया नवन्नं दारकानं मरणानुस्सरणं विय योगिनो अतीतसङ्खारान निरोधदस्सनं, हत्थगतस्स मीयमानभावदस्सनं विय योगिनो पच्चुपप्पन्नान निरोधदस्सन, कुच्छिगते आलयविस्सज्जनं विय अनागतान निरोधदस्सनं। तस्सेवं पस्सतो एतस्मि खणे उप्पज्जति भयतुपट्ठानञाणं।

२२. भयतुपट्ठानञाण पन भायति, न भायती ति? न भायति। तं हि अतीता सङ्खारा निरुद्धा, पच्चुपन्ना निरुज्झन्ति, अनागता निरुज्झिस्सन्ती ति तीरणमत्तमेव होति। तस्मा यथा नाम चक्खुमा पुरिसो नगरद्वारे तिस्सो अङ्गारकासुयो ओलोकयमानो सय व भायति, केवल हिस्स "ये ये एत्थ निपतिस्सन्ति, सब्बे अनप्पकं दुक्खमनुभविस्सन्ती" ति तीरणमत्तमेव होति। यथा वा पन चक्खुमा पुरिसो खदिरसूलं अयोसूलं सुवण्णसूल ति पटिपाटिया ठपितं सूलत्तयं ओलोकयमानो सयं न भायति, केवलं हिस्स "ये ये इमेसु सूलेसु निपतिस्सन्ति, सब्बे अनप्पकं दुक्खमनुभविस्सन्ती" ति तीरणमत्तमेव होति; एवमेव भयतुपट्ठानञाण सय न भायति, केवल हिस्स अङ्गारकासुत्तयसदिसेसु च तीसु भवेसु "अतीता सङ्खारा निरुद्धा, पच्चुप्पन्ना निरुज्झन्ति, अनागता निरुज्झिस्सन्ती" ति तीरणमत्तमेव होति।

यस्मा पनस्स केवलं सब्बभव-योनि-गति-ठिति-निवासगता सङ्खारा ब्यसनापन्ना सप्पटिभया हुत्वा भयतो उपट्ठहन्ति, तस्मा **भयतुपट्ठानं** ति वुच्चति।

२३. एव भयतो उपट्ठाने पनस्स अयं पाळि—"अनिच्चतो मनसिकरोतो किं भयतो उपट्ठाति? दुक्खतो, अनत्ततो मनसिकरोतो किं भयतो उपट्ठाती ति? अनिच्चतो मनसिकरोतो निमित्तं भयतो उपट्ठाति। दुक्खतो मनसिकरोतो पवत्तं भयतो उपट्ठाति। अनत्ततो मनसिकरोतो निमित्त च पवत्तं च भयतो उपट्ठाती" (खु० ५–३–७) ति।

तत्थ **निमित्तं** ति सङ्खारनिमित्तं। अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं सङ्खारानमेवेतं अधिवचनं। अनिच्चतो मनसिकरोन्तो हि सङ्खारानं मरणमेव पस्सति, तेनस्स निमित्तं भयतो उपट्ठाति। **पवत्तं** ति। रूपारूपभवपवत्ति। दुक्खतो मनसिकरोन्तो हि सुखसम्मताय पि पवत्तिया अभिण्हपटिपीळनभावमेव पस्सति। तेनस्स पवत्तं भयतो उपट्ठाति। अनत्ततो मनसिकरोन्तो पन उभयं पेतं सुञ्ञगामं विय, मरीचि-गन्धब्बनगरादीनि विय च रित्त तुच्छं सुञ्ञं अस्सामिकं अपरिणायकं पस्सति। तेनस्स निमित्तं च पवत्तं च उभय भयतो उपट्ठाती ति॥ (३)

भयतुपट्ठानञाण निट्ठितं॥

आदीनवानुपस्सनाञाणकथा

२४ तस्स तं भयतुपट्ठानञाणं आसेवन्तस्स भावेन्तस्स बहुलीकरोन्तस्स सब्बभव-योनि-गति-ठिति-सत्तावासेसु, नेव ताणं, न लेणं, न गति, नप्पटिसरणं पञ्ञायति। सब्बभव-योनि-गति-ठिति-निवासगतेसु सङ्खारेसु एकसङ्खारे पि पत्थना वा परामासो वा न होति। तयो भवा वीतच्चिकङ्गार-पुण्णअङ्गारकासुयो विय, चत्तारो महाभूता घोरविसआसीविसा विय, पञ्चक्खन्धा उक्खित्तासिकवधका विय, छ अज्झत्तिकायतनानि सुञ्ञगामो विय, छ बाहिरायतनानि गामघातकचोरा विय, सत्त विञ्ञाणट्ठितियो नव च सत्तावासा एकादसहि अग्गीहि आदित्ता सम्पज्जलिता सजोतिभूता विय च निरस्सादा नीरसा महाआदीनवरासिभूता हुत्वा उपट्ठहन्ति।

२५ कथं ? सुखेन जीवितुकामस्स भीरुकपुरिसस्स रमणीयाकारसण्ठितं पि सवाळकमिव वनगहनं, ससद्दूला विय गुहा, सगाहरक्खसं विय उदकं, समुस्सितखग्गा विय पच्चत्थिका, सविस विय भोजनं, सचोरो विय मग्गो, आदित्तमिव अगारं, उय्युत्तसेना विय रणभूमि। यथा हि सो पुरिसो एतानि सवाळक-वनगहनादीनि आगम्म भीतो संविग्गो लोमहट्ठजातो समन्ततो आदीनवमेव पस्सति; एवमेवायं योगावचरो भङ्गानुपस्सनावसेन सब्बसङ्खारेसु भयतो उपट्ठितेसु समन्ततो निरसं निरस्सादं आदीनवमेव पस्सति। तस्सेवं पस्सतो **आदीनवञाणं** नाम उप्पन्नं होति।

२६. यं सन्धाय इदं वुत्तं—"कथं भयतुपट्ठाने पञ्ञा आदीनवे ञाणं ? उप्पादो भयं ति भयतुपट्ठाने पञ्ञा आदीनवे ञाणं। पवत्तं भयं ति···निमित्तं भयं ति ··· आयूहना भयं ति···पटिसन्धि भयं ति···गति भयं ति···निब्बत्ति भयं ति··· उपपत्ति भयं ति ··जाति भयं ति···जरा भयं ति···ब्याधि भयं ति···मरणं भयं ति···सोको भयं ति··· परिदेवो भयं ति··· उपायासो भयं ति भयतुपट्ठाने पञ्ञा

आदीनवे ञाणं। अनुप्पादो खेमं ति सन्तिपदे ञाण। अप्पवत्त····पे०·· अनुपायासो खेम ति सन्तिपदे ञाण। उप्पादो भयं, अनुप्पादो खेमं ति सन्तिपदे ञाणं। पवत्तं··· पे० · उपायासो भयं, अनुपायासो खेमं ति सन्तिपदे ञाणं। उप्पादो दुक्खं ति भयतुपट्ठाने पञ्ञा आदीनवे ञाणं। पवत्त ···पे० उपायासो दुक्खं ति भयतुपट्ठाने पञ्ञा आदीनवे ञाणं। अनुप्पादो सुखं ति सन्तिपदे ञाण। अप्पवत्तं ···पे० अनुपायासो सुखं ति सन्तिपदे ञाणं। उप्पादो दुक्खं, अनुप्पादो सुखं ति सन्तिपदे ञाणं। पवत्तं··· पे०····उपायासो दुक्खं, अनुपायासो सुखं ति सन्तिपदे ञाणं। उप्पादो सामिसं ति भयतुपट्ठाने पञ्ञा आदीनवे ञाणं। पवत्त · ··पे० ···उपायासो सामिस ति भयतुपट्ठाने पञ्ञा आदीनवे ञाण। अनुप्पादो निरामिसं ति सन्तिपदे ञाण। अप्पवत्तं ··पे० अनुपायासो निरामिसं ति सन्तिपदे ञाणं। उप्पादो सामिस, अनुप्पादो निरामिसं ति सन्तिपदे ञाण। पवत्तं पे० · उपायासो सामिसं, अनुपायासो निरामिसं ति सन्तिपदे ञाणं। उप्पादो सङ्खारा ति भयतुपट्ठाने पञ्ञा आदीनवे ञाणं। पवत्तं· · पे०· ··उपायासो सङ्खारा ति भयतुपट्ठाने पञ्ञा आदीनवे ञाणं। अनुप्पादो निब्बानं ति सन्तिपदे ञाण। अप्पवत्तं पे० अनुपायासो निब्बानं ति सन्तिपदे ञाणं। उप्पादो सङ्खारा, अनुप्पादो निब्बानं ति सन्तिपदे ञाणं। पवत्तं ··पे० ·उपायासो सङ्खारा, अनुपायासो निब्बानं ति सन्तिपदे ञाणं।

उप्पाद च पवत्तं च निमित्तं दुक्खं ति पस्सति।
आयूहन पटिसन्धि, ञाणं आदीनवे इदं॥
अनुप्पादं अप्पवत्त अनिमित्त सुखं ति च।
अनायूहन अप्पटिसन्धि, ञाणं सन्तिपदे इदं॥
इदं आदीनवे ञाणं पञ्चठानेसु जायति।
पञ्च ठाने सन्तिपदे, दस ञाणे पजानाति।
द्विन्नं ञाणान कुसलता नानादिट्ठीसु न कम्पती ति॥

तं ञातट्ठेन ञाण, पजाननट्ठेन पञ्ञा, तेन वुच्चति—"भयतुपट्ठाने पञ्ञा आदीनवे ञाणं" (खु० ५–६५–६७) ति।

२७ तत्थ **उप्पादो** ति। पुरिमकम्मपच्चया इध उप्पत्ति। **पवत्तं** ति। तथा उप्पन्नस्स पवत्ति। **निमित्तं** ति। सब्बं पि सङ्खारनिमित्तं। **आयूहना** ति। आयतिं पटिसन्धिहेतुभूतं कम्मं। **पटिसन्धी** ति। आयतिं उप्पत्ति। **गती** ति। याय गतिया सा पटिसन्धि होति। **निब्बती** ति। खन्धानं निब्बत्तनं। **उपपत्ती** ति। "समापन्नस्स वा उपपन्नस्स वा" (अभि० १–२८१) ति एवं वुत्ता विपाकप्पवत्ति।

जाती ति। जरादीनं पच्चयभूता भवपच्चया जाति। जरामरणादयो पाकटा एव।

एत्थ च उप्पादादयो पञ्चेव आदीनवञाणस्स वत्थुवसेन वुत्ता, सेसा तेस वेवचनवसेन। **निब्बत्ति जाती** ति। इद हि द्वय उप्पादस्स चेव पटिसन्धिया च वेवचन। **गति उपपत्ती** ति। इदं द्वयं पवत्तस्स। जरादयो निमित्तस्सा ति। तेनाह—

"उप्पादं च पवत्त च निमित्तं दुक्खं ति पस्सति।
आयूहनं पटिसन्धि, ञाणं आदीनवे इदं" ति च।
इदं आदीनवे ञाण पञ्चठानेसु जायती" ति च। (खु० ५-६७)

२८. **अनुप्पादो खेमं ति सन्तिपदे ञाणं** ति आदि पन आदीनवञाणस्स पटिपक्खञाणदस्सनत्थ वुत्तं। भयतुपट्ठानेन वा आदीनवं दिस्वा उब्बिग्गहदयानं अभय पि अत्थि, खेम निरादीनवं—ति अस्सासजननत्थं पि एतं वुत्त। यस्मा वा पनस्स उप्पादादयो भयतो सूपट्ठिता होन्ति, तस्स तप्पटिपक्खनिन्नं चित्तं होति, तस्मा भयतुपट्ठानवसेन सिद्धस्स आदीनवञाणस्स आनिससदस्सनत्थ पेतं वुत्तं ति वेदितब्ब।

२९ एत्थ च यं भय, त यस्मा नियमतो दुक्ख। तं वट्टामिस-लोकामिस-किलेसामिसेहि अविप्पमुत्तत्ता सामिसमेव। यं च सामिसं, त सङ्खारमत्तमेव। तस्मा **उप्पादो दुक्खं ति भतुपट्ठाने पञ्ञा आदीनवे ञाणं** ति आदि वुत्तं। एव सन्ते पि भयाकारेन, दुक्खाकारेन, सामिसाकारेना ति एव आकारनानत्ततो पवत्तिवसेनेवेत्थ नानत्तं वेदितब्ब।

३० **दस ञाणे पजानाती** ति। आदीनवञाणं पजानन्तो उप्पादादिवत्थुकानि पञ्च, अनुप्पादादिवत्थुकानि पञ्चा ति दस ञाणानि पजानाति, पटिविज्झति सच्छिकरोति। **द्विन्नं ञाणानं कुसलता** ति। आदीनवञाणस्स चेव सन्तिपदञाणस्स चा ति इमेसं द्विन्नं कुसलताय। **नानादिट्ठीसु न कम्पती** ति। परमदिट्ठधम्मनिब्बानादिवसेन पवत्तासु दिट्ठीसु न वेधति। सेसमेत्थ उत्तानमेवा ति। (४)

आदीनवानुपस्सनाञाण निट्ठित ॥

निब्बिदानुपस्सनाञाणकथा

३१. सो एवं सब्बसङ्खारे आदीनवतो पस्सन्तो सब्बभव-योनि-गति-विञ्ञाण-ट्ठिति-सत्तावासगते सभेदके सङ्खारगते निब्बिन्दति उक्कण्ठति नाभिरमति।

सेय्यथापि नाम चित्तकूटपब्बतपादाभिरतो सुवण्णराजहंसो असुचिम्हि

चण्डालगामद्वारआवाटे नाभिरति, सत्तसु महासरेसु येव अभिरमति; एवमेव अय पि योगिराजहंसो सुपरिदिट्ठादीनवे सभेदके सङ्खारगते नाभिरमति, भावनारामताय पन भावनारतिया समन्नागतत्ता सत्तसु अनुपस्सनासु येव रमति ।

यथा च सुवण्णपञ्जरे पक्खित्तो सीहो मिगराजा नाभिरमति, तियोजन-सहस्सवित्थते पन हिमवन्ते येव रमति; एवमयं योगिसीहो तिविधे सुगतिभवे पि नाभिरमति, तीसु पन अनुपस्सनासु येव रमति ।

यथा च सब्बसेतो सत्तपतिट्ठो इद्धिमा वेहासङ्गमो छद्दन्तो नागराजा नगरमज्झे नाभिरमति, हिमवति छद्दन्तदहगहने येव अभिरमति, एवमय योगिवरवारणो सब्बस्मि पि सङ्खारगते नाभिरमति, अनुप्पादो खेम ति आदिना नयेन दिट्ठे सन्तिपदे येव अभिरमति, तन्निन्न-तप्पोण-तप्पब्भारमानसो होती ति ॥ (५)

निब्बिदानुपस्सनाञाणं निट्ठितं ॥

३२ तं पनेतं पुरिमेन ञाणद्वयेन अत्थतो एक । तेनाहु **पोराणा**—"भयतु-पट्ठानं एकमेव तीणि नामानि लभति । सब्बसङ्खारे भयतो अद्दसा ति भयतु-पट्ठानं नाम जातं । तेसु येव सङ्खारेसु आदीनव उप्पादेती ति आदीनवानु-पस्सना नाम जातं । तेसु येव सङ्खारेसु निब्बिन्दमानं उप्पन्नं ति निब्बिदानु-पस्सना नाम जातं" ति । पाळियं पि वुत्त—"या च भयतुपट्ठाने पञ्ञा, यं च आदीनवे ञाण, या च निब्बिदा, इमे धम्मा एकत्था, ब्यञ्जनमेव नानं" (खु० ५-३०७) ति ।

मुञ्चितुकम्यताञाणकथा

३३. इमिना पन निब्बिदाञाणेन इमस्स कुलपुत्तस्स निब्बिन्दन्तस्स उक्कण्ठ-न्तस्स अनभिरमन्तस्स सब्बभव-योनि-गति-विञ्ञाणट्ठिति-सत्तावासगतेसु सभेदकेसु सङ्खारेसु एकसङ्खारे पि चित्तं न सज्जति, न लग्गति, न बज्झति, सब्बस्मा सङ्खारगता मुञ्चितुकामं निस्सारितुकामं होति ।

यथा किं ? यथा नाम जालब्भन्तरगतो मच्छो, सप्पमुखगतो मण्डूको, पञ्जरपक्खित्तो वनकुक्कुटो, दळ्हपासवसगतो मिगो, अहितुण्डिकहत्थगतो सप्पो, महापङ्कपक्खन्तो कुञ्जरो, सुपण्णमुखगतो नागराजा, राहुमुखप्पविट्ठो चन्दो, सपत्तपरिवारितो पुरिसो ति एवमादयो ततो ततो मुञ्चितुकामा निस्सरितुकामा व होन्ति; एवं तस्स योगिनो चित्तं सब्बस्मा सङ्खारगता मुञ्चितुकामं निस्सरितु-कामं होति । अथस्स एव सब्बसङ्खारेसु विगतालयस्स सब्बस्मा सङ्खारगता मुञ्चितुकामस्स उप्पज्जति **मुञ्चितुकम्यताञाणं** ति ॥ (६)

मुञ्चितुकम्यताञाणं निट्ठित ॥

पटिसङ्खानुपस्सनाञाणकथा

३४. सो एवं सब्बभव-योनि-गति-ठिति-निवास-गतेहि सभेदकेहि सङ्खारेहि मुञ्चितुकामो सब्बस्मा सङ्खारगता मुञ्चितुं पुन ते एव सङ्खारे पटिसङ्खानुपस्सनाञाणेन तिलक्खणं आरोपेत्वा परिग्गण्हाति।

३५ सो सब्बसङ्खारे अनच्चन्तिकतो, तावकालिकतो, उप्पादवयपरिच्छिन्नतो, पलोकतो, चलतो, पभङ्गुतो, अद्धुवतो, विपरिणामधम्मतो, असारकतो, विभवतो, सङ्खततो, मरणधम्मतो ति आदीहि कारणेहि **अनिच्चा** ति पस्सति। अभिण्हपटिपीळनतो, दुक्खमतो, दुक्खवत्थुतो, रोगतो, गण्डतो, सल्लतो, अघतो, अबाधतो, ईतितो, उपद्दवतो, भयतो, उपसग्गतो, अताणतो, अलेणतो, असरणतो, आदीनवतो, अघमूलतो, वधकतो, सासवतो, मारामिसतो, जातिधम्मतो, जराधम्मतो, ब्याधिधम्मतो, सोकधम्मतो, परिदेवधम्मतो, उपायासधम्मतो, संकिलेसिकधम्मतो ति आदीहि कारणेहि **दुक्खा** ति पस्सति। अजञ्ञतो, दुग्गन्धतो, जेगुच्छतो, पटिक्कूलतो, अमण्डनारहतो, विरूपतो, बीभच्छतो ति आदीहि कारणेहि दुक्खलक्खणस्स परिवारभूततो **असुभतो** पस्सति। परतो, रित्ततो, तुच्छतो, सुञ्ञतो, अस्सामिकतो, अनिस्सरतो, अवसवत्तितो ति आदीहि कारणहि **अनत्ततो** पस्सति।

३६. एवं हि पस्सतानेन तिलक्खण आरोपेत्वा सङ्खारा परिग्गहिता नाम होन्ति। कस्मा पनायमेते एव परिग्गण्हाती ति ? मुञ्चनस्स उपायसम्पादनत्थ।

तत्राय उपमा—एको किर पुरिसो "मच्छे गहेस्सामी" ति मच्छखिप्प गहेत्वा उदके ओसापेसि, सो खिप्पमुखेन हत्थं ओतारेत्वा अन्तोउदके सप्पं गीवाय गहेत्वा "मच्छो मे गहितो" ति अत्तमनो अहोसि। सो "महा वत मया मच्छो लद्धो" ति उक्खिपित्वा पस्सन्तो सोवत्थिकत्तयदस्सनेन सप्पो ति सञ्जानित्वा भीतो आदीनवं दिस्वा गहणे निब्बिन्नो मुञ्चितुकामो हुत्वा मुञ्चनस्स उपायं करोन्तो अग्गनङ्गुट्ठतो पट्ठाय हत्थं निब्बेठेत्वा बाहु उक्खिपित्वा उपरिसीसे द्वे तयो वारे आविज्झित्वा सप्प दुब्बलं कत्वा "गच्छ, दुट्ठसप्पा" ति निस्सज्जित्वा वेगेन तळाकपाळिं आरुय्ह "महन्तस्स वत, भो, सप्पस्स मुखतो मुत्तोम्ही" ति आगतमग्गं ओलोकयमानो अट्ठासि।

३७ तत्थ तस्स पुरिसस्स "मच्छो" ति सप्पं गीवाय गहेत्वा तुट्ठकालो विय इमस्सापि योगिनो आदितो व अत्तभावं पटिलभित्वा तुट्ठकालो। तस्स खिप्पमुखतो सोसं नीहरित्वा सोवत्थिकत्तयदस्सनं विय इमस्स घनविनिब्भोग कत्वा सङ्खारेसु तिलक्खणदस्सनं। तस्स भीतकालो विय इमस्स भयतुपट्ठानञाणं, ततो आदीनवदस्सनं विय आदीनवानुपस्सनाञाणं, गहणे निब्बिन्दनं विय निब्बिदानुप-

स्सनाञाणं, सप्प मुञ्चितुकामता विय मुञ्चितुकम्यताञाणं मुञ्चनस्स उपाय-करण विय पटिसङ्खानुपस्सनाणेन सङ्खारेसु तिलक्खणारोपन। यथा हि सो पुरिसो सप्पं आविज्झित्वा दुब्बलं कत्वा निवत्तेत्वा डंसितु असमत्थभावं पापेत्वा सुमुत्तं मुञ्चति; एवमयं योगावचरो तिलक्खणारोपनेन सङ्खारे आविज्झित्वा दुब्बले कत्वा पुन निच्च-सुख-सुभ-अत्ताकारेन उपट्ठातु असमत्थत पापेत्वा सुमुत्तं मुञ्चति। तेन वुत्तं—मुञ्चनस्स उपायसम्पादनत्थ एवं परिग्गण्हाती ति।

३८ एत्तावता तस्स उप्पन्न होति **पटिसङ्खाञाणं**। यं सन्धाय वुत्तं—"अनिच्चतो मनसिकरोतो किं पटिसङ्खा ञाण उप्पज्जति ? दुक्खतो, अनत्ततो मनसिकरोतो किं पटिसङ्खा ञाणं उप्पज्जति ? अनिच्चतो मनसिकरोतो निमित्तं पटिसङ्खा ञाणं उप्पज्जति। दुक्खतो मनसिकरोतो पवत्त पटिसङ्खा ञाणं उप्पज्जति। अनत्ततो मनसिकरोतो निमित्तं च पवत्तं च पटिसङ्खा ञाणं उप्पज्जती" (खु० ५–३०७) ति।

३९ एत्थ च **निमित्तं पटिसङ्खा** ति। सङ्खारनिमित्त "अद्धुव तावकालिक" ति अनिच्चलक्खणवसेन जानित्वा, कामं च न पठमं जानित्वा पच्छा ञाणं उप्पज्जति, वोहारवसेन पन "मनं च पटिच्च धम्मे च उप्पज्जति मनोविञ्ञाणं" (म० ३–३८१) ति आदीनि विय एवं वुच्चति। एकत्तनयेन वा पुरिम च पच्छिमं च एकं कत्वा एव वुत्ता ति वेदितब्बं। इमिना नयेन इतरस्मि पि पदद्वये अत्थो वेदितब्बो ति॥ (७)

पटिसङ्खानुपस्सनाञाणं निट्ठितं॥

सङ्खारुपेक्खाञाणकथा

४० सो एवं पटिसङ्खानुपस्सनाञाणेन "सब्बे सङ्खारा सुञ्ञा" ति परि-ग्गहेत्वा पुन "सुञ्ञमिद अत्तेन वा अत्तनियेन वा" (म० ३–५८) ति द्विकोटिकं सुञ्ञतं परिग्गण्हाति। सो एवं नेव अत्तान, न पर किञ्चि अत्तनो परिक्खार-भावे ठितं दिस्वा पुन "नाह क्वचनि, कस्सचि किञ्चनतस्मि, न च मम क्वचनि, किस्मिञ्चि किञ्चनतत्थी" (म० ३–५८) ति या एत्थ चतुकोटिका सुञ्ञता कथिता, तं परिग्गण्हाति।

४१. कथं ? अयं हि **नाहं क्वचनी** ति क्वचि अत्तानं न पस्सति। **कस्सचि किञ्चनतस्मि** ति। अत्तनो अत्तानं कस्सचि परस्स किञ्चनभावे उपनेतब्बं न पस्सति। भातिट्ठाने वा भातरं, सहायट्ठाने वा सहाय, परिक्खारट्ठाने वा परिक्खारं मञ्ञित्वा उपनेतब्बं न पस्सती ति अत्थो। न च **मम क्वचनी** ति। एत्थ मम-सद्दं ताव ठपेत्वा न च क्वचनी ति परस्स च अत्तान क्वचि न पस्सती ति अयमत्थो। इदानि मम-सद्दं आहरित्वा मम **किस्मिञ्चि किञ्चनतत्थी**

ति सो परस्स अत्ता मम किस्मिञ्चि किञ्चनभावे अत्थी ति न पस्सती ति। अत्तनो भातिट्ठाने वा भातरं, सहायट्ठाने वा सहाय, परिक्खारट्ठाने वा परिक्खारं ति किस्मिञ्चि ठाने परस्स अत्तान इमिना किञ्चनभावेन उपनेतब्ब न पस्सती ति अत्थो। एवमय यस्मा नेव कत्थचि अत्तान पस्सति, न तं परस्स किञ्चनभावे उपनेतब्ब पस्सति, न परस्स अत्तानं अत्तनो किञ्चनभावे उपनेतब्बं पस्सति। तस्मानेन चतुकोटिका सुञ्ञता परिग्गहिता होती ति।

४२. एवं चतुकोटिक सुञ्ञतं परिग्गहेत्वा पुन छहाकारेहि सुञ्ञत परिग्गण्हाति। कथ? "चक्खु सुञ्ञ अत्तेन वा अत्तनियेन वा निच्चेन वा धुवेन वा सस्सतेन वा अविपरिणामधम्मेन वा····पे०· ·मनो सुञ्ञो ··रूपा सुञ्ञा ·· पे०· ·धम्मा सुञ्ञा, चक्खुविञ्ञाणं ··पे० मनोविञ्ञाण, चक्खुसम्फस्सो" (खु० ४ · २–१९३) ति। एवं याव जरामरणा नयो नेतब्बो।

४३ एवं छहाकारेहि सुञ्ञत परिग्गहेत्वा पुन अट्ठहाकारेहि परिग्गण्हाति। सेय्यथीद—"रूपं असार निस्सारं सारापगत निच्चसारसारेन वा धुवसारसारेन वा सुखसारसारेन वा अत्तसारसारेन वा निच्चेन वा धुवेन वा सस्सतेन वा अविपरिणामधम्मेन वा। वेदना, सञ्ञा, सङ्खारा, विञ्ञाण, चक्खु····पे०· · जरामरणं असार निस्सार सारापगत निच्चसारसारेन वा धुवसारसारेन वा सुखसारसारेन वा अत्तसारसारेन वा निच्चेन वा धुवेन वा सस्सतेन वा अविपरिणामधम्मेन वा। यथा नळो असारो निस्सारो सारापगतो, यथा एरण्डो, यथा उदुम्बरो, यथा सेतवच्छो, यथा पाळिभद्दको, यथा फेणपिण्डो, यथा उदकबुब्बुळ, यथा मरीचि, यथा कदलिक्खन्धो, यथा माया असारा निस्सारा सारापगता; एवमेव रूप ·· पे० ·जरामरणं असारं निस्सारं सारापगत निच्चसारसारेन वा · पे० · अविपरिणामधम्मेन वा" (खु० ४ २–१९३) ति।

४४ सो एवं अट्ठहाकारेहि सुञ्ञत परिग्गहेत्वा पुन दसहाकारेहि परिग्गण्हाति। रूप रित्ततो पस्सति, तुच्छतो, सुञ्ञतो, अनत्ततो, अनिस्सरियतो, अकामकारियतो, अलब्भनीयतो, अवसवत्तकतो, परतो, विवित्ततो पस्सति। वेदन ···पे० · विञ्ञाणं रित्ततो पे० ··विवित्ततो पस्सती ति।

४५ एव दसहाकारेहि सुञ्ञतं परिग्गहेत्वा पुन द्वादसहाकारेहि परिग्गण्हाति। सेय्यथीदं—"रूप न सत्तो, न जीवो, न नरो, न मानवो, न इत्थि, न पुरिसो, न अत्ता, न अत्तनियं, नाहं, न मम, न अञ्ञस्स, न कस्सचि। वेदना··· पे०····विञ्ञाणं· ··न कस्सची" (खु० ४ : २–१९४) ति।

४६. एवं द्वादसहाकारेहि सुञ्ञतं परिग्गण्हित्वा पुन तीरणपरिञ्ञावसेन द्वाचत्तालीसाय आकारेहि सुञ्ञतं परिग्गण्हाति। रूपं अनिच्चतो, दुक्खतो,

रोगतो, गण्डतो, सल्लतो, अघतो, आबाधतो, परतो, पलोकतो, ईतितो, उपद्दवतो, भयतो, उपसग्गतो, चलतो, पभङ्गुतो, अद्धुवतो, अताणतो, अलेणतो, असरणतो, असरणीभूततो, रित्ततो, तुच्छतो, सुञ्ञतो, अनत्ततो, अनस्सादत्तो, आदीनवतो, विपरिणामधम्मतो, अस्सारकतो, अघमूलतो, वधकतो, विभवतो, सासवतो, सङ्खततो, मारामिसतो, जातिधम्मतो, जराधम्मतो, ब्याधिधम्मतो, मरणधम्मतो, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सउपायासधम्मतो, समुदयतो, अत्थङ्गमतो, अनस्सादतो, आदीनवतो, निस्सरणतो पस्सति। वेदन ··पे० ·विञ्ञाणं अनिच्चतो··पे० · निस्सरणतो पस्सति।

४७ वुत्त पि चेत—"रूप अनिच्चतो ···पे०····निस्सरणतो पस्सन्तो सुञ्ञतो लोकं अवेक्खति। वेदन ··पे० विञ्ञाणं अनिच्चतो ·पे०··· निस्सरणतो पस्सन्तो सुञ्ञतो लोकं अवेक्खति" (खु० ८-४४८)।

"सुञ्ञतो लोक अवेक्खस्सु मोघराज सदा सतो।
अत्तानुदिट्ठिं ऊहच्च एवं मच्चुतरो सिया।
एवं लोकं अवेक्खन्त मच्चुराजा न पस्सती" ति॥ (खु० १-४४१)

४८ एवं सुञ्ञतो दिस्वा तिलक्खणं आरोपेत्वा सङ्खारे परिग्गण्हन्तो भय च नन्दिं च विप्पहाय सङ्खारेसु उदासीनो अहोसि मज्झत्तो, अहं ति वा ममं ति वा न गण्हाति विसट्ठभरियो विय पुरिसो।

यथा नाम पुरिसस्स भरिया भवेय्य इट्ठा कन्ता मनापा। सो ताय विना मुहुत्तं पि अधिवासेतु न सक्कुणेय्य, अतिविय नं ममायेय्य। सो त इत्थिं अञ्ञेन पुरिसेन सद्धिं ठितं वा निसिन्नं वा कथेन्तिं वा हसन्तिं वा दिस्वा कुपितो अस्स दिस्वा अनत्तमनो, अधिमत्तं दोमनस्सं पटिसंवेदेय्य। सो अपरेन समयेन तस्सा इत्थिया दोसं दिस्वा मुञ्चितुकामो हुत्वा तं विस्सज्जेय्य, न नं मम ति गण्हेय्य। ततो पट्ठाय तं येन केनचि सद्धिं यं किञ्चि कुरुमानं दिस्वा पि नेव कुप्पेय्य, न दोमनस्सं आपज्जेय्य, अञ्ञदत्थु उदासीनो व भवेय्य मज्झत्तो। एवमेवायं सब्बसङ्खारेहि मुञ्चितुकामो हुत्वा पटिसङ्खानुपस्सनाय सङ्खारे परिग्गण्हन्तो अहं ममं ति गहेतब्बं अदिस्वा भयं च नन्दिं च विप्पहाय सब्बसङ्खारेसु उदासीनो होति मज्झत्तो।

तस्स एवं जानतो एव पस्सतो तीसु भवेसु, चतूसु योनिसु, पञ्चसु गतिसु, सत्तसु विञ्ञाणट्ठितिसु, नवसु सत्तावासेसु चित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति न सम्पसारियति, उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति।

४९. सेय्यथापि नाम पदुमपलासे ईसकपोणे उदकफुसितानि पतिलीयन्ति पतिकुटन्ति पतिवत्तन्ति न सम्पसारियन्ति; एवमेव····पे०·· सेय्यथापि नाम

कुक्कुटपत्तं वा न्हारुदद्दुलं वा अग्गिम्हि पक्खित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति न सम्पसारियति; एवमेव तस्स तीसु भवेसु चित्तं पे०··· उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति। इच्चस्स **सङ्खारुपेक्खाञाणं** नाम उप्पन्नं होति।

५० तं पनेतं सचे सन्तिपद निब्बानं सन्ततो पस्सति, सब्ब सङ्खारप्पवत्त विस्सज्जेत्वा निब्बानमेव पक्खन्दति। नो चे निब्बानं सन्ततो पस्सति, पुनप्पुन्नं सङ्खारारम्मणमेव हुत्वा पवत्तति। सामुद्दिकानं दिसाकाको विय (अ० ३–८१)।

सामुद्दिका किर वाणिजका नाव आरोहन्ता दिसाकाकं नाम गण्हन्ति, ते यदा नावा वातक्खित्ता विदेसं पक्खन्दति, तीर न पञ्ञायति, तदा दिसाकाकं विस्सज्जेन्ति, सो कूपकयट्ठितो आकासं लङ्घित्वा सब्बा दिसा च विदिसा च अनुगन्त्वा सचे तीर पस्सति तदभिमुखो व गच्छति, नो चे पस्सति, पुनप्पुन्न आगन्त्वा कूपकयट्ठिं येव अल्लीयति, एवमेव सचे सङ्खारुपेक्खाञाणं सन्तिपद निब्बानं सन्ततो पस्सति, सब्बं सङ्खारपवत्त विस्सज्जेत्वा निब्बानमेव पक्खन्दति। नो चे पस्सति, पुनप्पुनं सङ्खारारम्मणमेव हुत्वा पवत्तति।

५१. तयिदं सुप्पग्गे पिट्ठं वट्टयमानं विय। निब्बट्टितकप्पास विहनमान विय, नानप्पकारतो सङ्खारे परिग्गहेत्वा भयं च नन्दिं च पहाय सङ्खारविचिनने मज्झत्त हुत्वा तिविधानुपस्सनावसेन तिट्ठति। एवं तिट्ठमान तिविधविमोक्ख-मुखभावं आपज्जित्वा सत्तअरियपुग्गलविभागाय पच्चयो होति।

५२ तयिदं तिविधानुपस्सनावसेन पवत्तनतो तिण्णं इन्द्रियान आधिपतेय्य-वसेन तिविधविमोक्खमुखभाव आपज्जति नाम। तिस्सो हि अनुपस्सना तीणि विमोक्खमुखानी ति वुच्चन्ति। यथाह—

"तीणि खो पनिमानि विमोक्खमुखानि लोकनिय्यानाय संवत्तन्ति, सब्ब-सङ्खारे परिच्छेदपरिवटुमतो समनुपस्सनताय अनिमित्ताय च धातुया चित्त-सम्पक्खन्दनताय, सब्बसङ्खारेसु मनोसमुत्तेजनताय अप्पणिहिताय च धातुया चित्तसम्पक्खन्दनताय, सब्बधम्मे परतो समनुपस्सनताय सुञ्ञताय च धातुया चित्तसम्पक्खन्दनताय। इमानि तीणि विमोक्खमुखानि लोकनिय्यानाय संवत्तन्ती" (खु० ५–२९०) ति।

तत्थ **परिच्छेदपरिवटुमतो** ति। उदयब्बयवसेन परिच्छेदतो चेव परिवटुमतो च। अनिच्चानुपस्सन हि "उदयतो पुब्बे सङ्खारा नत्थी" ति परिच्छिन्दित्वा तेसं गतिं समन्नेसमान "वयतो परं न गच्छन्ति, एत्थेव अन्तरधायन्ती" ति परिवटुमतो समनुपस्सति। **मनोसमुत्तेजनताया** ति। चित्तसवेजनताय। दुक्खानु-पस्सनेन हि सङ्खारेसु चित्तं संवेजेति। **परतो समनुपस्सनताया** ति। "नाहं, न ममा" ति एव अनत्ततो समनुपस्सनताय।

इति इमानि तीणि पदानि अनिच्चानुपस्सनादीनं वसेन वुत्तानी ति वेदितब्बानि। तेनेव तदनन्तरे पञ्हविस्सज्जने वुत्तं—"अनिच्चतो मनसिकरोतो खयतो सङ्खारा उपट्ठहन्ति। दुक्खतो मनसिकरोतो भयतो सङ्खारा उपट्ठहन्ति। अनत्ततो मनसिकरोतो सुञ्ञतो सङ्खारा उपट्ठहन्ती" (खु० ५-२९०) ति।

५३ कतमे पन ते विमोक्खा, येसं इमानि अनुपस्सनानि मुखानी ति? अनिमित्तो, अप्पणिहितो, सुञ्ञतो ति एते तयो। वुत्तं हेत—"अनिच्चतो मनसिकरोन्तो अधिमोक्खबहुलो अनिमित्तं विमोक्खं पटिलभति। दुक्खतो मनसिकरोन्तो पस्सद्धिबहुलो अप्पणिहितं विमोक्खं पटिलभति। अनत्ततो मनसिकरोन्तो वेदबहुलो सुञ्ञतविमोक्खं पटिलभती" (खु० ५-३०१) ति।

५४. एत्थ च **अनिमित्तो विमोक्खो** ति। अनिमित्ताकारेन निब्बानं आरम्मणं कत्वा पवत्तो अरियमग्गो। सो हि अनिमित्ताय धातुया उप्पन्नत्ता अनिमित्तो। किलेसेहि च विमुत्तत्ता विमोक्खो। एतेनेव नयेन अप्पणिहिताकारेन निब्बानं आरम्मणं कत्वा पवत्तो **अप्पणिहितो**। सुञ्ञताकारेन निब्बानं आरम्मणं कत्वा पवत्तो **सुञ्ञतो** ति वेदितब्बो।

५५ यं पन **अभिधम्मे** "यस्मि समये लोकुत्तरं झानं भावेति निय्यानिकं अपचयगामिं दिट्ठिगतानं पहानाय पठमाय भूमिया पत्तिया विविच्चेव कामेहि पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति अप्पणिहितं" सुञ्ञतं" (अभि० १-८६) ति एवं विमोक्खद्वयमेव वुत्तं, तं निप्परियायतो विपस्सनागमनं सन्धाय।

५६ विपस्सनाञाणं हि किञ्चापि **पटिसम्भिदामग्गे**—

"अनिच्चानुपस्सनाञाणं निच्चतो अभिनिवेसं मुञ्चती ति सुञ्ञतो विमोक्खो। दुक्खानुपस्सनाञाणं सुखतो अभिनिवेसं··· अनत्तानुपस्सनाञाणं अत्ततो अभिनिवेसं मुञ्चती ति सुञ्ञतो विमोक्खो" (खु० ५-३१२) ति एवं अभिनिवेसं मुञ्चनवसेन **सुञ्ञतो विमोक्खो** ति च,

"अनिच्चानुपस्सनाञाणं निच्चतो निमित्तं मुञ्चती ति अनिमित्तो विमोक्खो। दुक्खानुपस्सनाञाणं सुखतो निमित्तं····अनत्तानुपस्सनाञाणं अत्ततो निमित्तं मुञ्चती ति अनिमित्तो विमोक्खो" (खु० ५-३१२) ति एवं निमित्तं मुञ्चनवसेन **अनिमित्तो विमोक्खो** ति च,

"अनिच्चानुपस्सनाञाणं निच्चतो पणिधिं मुञ्चती ति अप्पणिहितो विमोक्खो। दुक्खानुपस्सनाञाणं सुखतो पणिधिं··· अनत्तानुपस्सनाञाणं अत्ततो पणिधिं मुञ्चती ति अप्पणिहितो विमोक्खो" (खु० ५-३१३) ति एवं पणिधिं मुञ्चनवसेन **अप्पणिहितो विमोक्खो** ति च वुत्तं;

तथा पि तं सङ्खारनिमित्तस्स अविजहनतो न निप्परियायेन अनिमित्तं।

निप्परियायेन पन सुञ्ञतं चेव अप्पणिहितं च। तस्स च आगमनवसेन अरियमग्गक्खणे विमोक्खो उद्धटो। तस्मा अप्पणिहित सुञ्ञत ति विमोक्खद्वयमेव वुत्तं ति वेदितब्बं। अयं तावेत्थ विमोक्खकथा ॥

५७ य पन वुत्त—"सत्तअरियपुग्गलविभागाय पच्चयो होती" ति, तत्थ सद्धानुसारी, सद्धाविमुत्तो, कायसक्खी, उभतोभागविमुत्तो, धम्मानुसारी, दिट्ठिप्पत्तो, पञ्ञाविमुत्तो ति इमे ताव सत्त अरियपुग्गला। तेस विभागाय इद सङ्खारुपेक्खाञाण पच्चयो होति।

५८ यो हि **अनिच्चतो** मनसिकरोन्तो अधिमोक्खबहुलो **सद्धिन्द्रियं** पटिलभति, सो सोतापत्तिमग्गक्खणे **सद्धानुसारी** होति। सेसेसु सत्तसु ठानेसु **सद्धाविमुत्तो**।

५९ यो पन **दुक्खतो** मनसिकरोन्तो पस्सद्धिबहुलो समाधिन्द्रिय पटिलभति, सो सब्बत्थ **कायसक्खी** नाम होति। अरूपज्झानं पन पत्वा अग्गफलप्पत्तो **उभतोभागविमुत्तो** नाम होति।

६०. यो पन **अनत्ततो** मनसिकरोन्तो वेदबहुलो पञ्ञिन्द्रिय पटिलभति, सो सोतापत्तिमग्गक्खणे **धम्मानुसारी** होति। छसु ठानेसु **दिट्ठिप्पत्तो**। अग्गफले **पञ्ञाविमुत्तो** ति।

६१. वुत्तं हेतं—"अनिच्चतो मनसिकरोतो सद्धिन्द्रिय अधिमत्त होति। सद्धिन्द्रियस्स अधिमत्तत्ता सोतापत्तिमग्गं पटिलभति, तेन वुच्चति सद्धानुसारी" ति। तथा "अनिच्चतो मनसिकरोतो सद्धिन्द्रयं अधिमत्त होति, सद्धिन्द्रियस्स अधिमत्तत्ता सोतापत्तिफल सच्छिकत होति, तेन वुच्चति—सद्धाविमुत्तो" (खु० ५–२९५) ति आदि।

६२. अपर पि वुत्त—"सद्दहन्तो विमुत्तो ति सद्धाविमुत्तो। फुट्ठन्त सच्छिकतो ति कायसक्खी। दिट्ठन्तं पत्तो ति दिट्ठिप्पत्तो। सद्दहन्तो विमुच्चती ति सद्धाविमुत्तो। झानफस्स पठम फुसति, पच्छा निरोधं निब्बानं सच्छिकरोती ति कायसक्खी। दुक्खा सङ्खारा, सुखो निरोधो ति ञातं होति दिट्ठं विदितं सच्छिकतं, फुसितं पञ्ञाया ति दिट्ठिप्पत्तो" (खु० ५–२९४) ति।

६३. इतरेसु पन चतूसु सद्धं अनुसरति, सद्धाय वा अनुसरति गच्छती ति **सद्धानुसारी**। तथा पञ्ञासङ्खातं धम्मं अनुसरति, धम्मेन वा अनुसरती ति **धम्मानुसारी**, अरूपज्झानेन चेव अरियमग्गेन चा ति उभतोभागेन विमुत्तो ति **उभतोभागविमुत्तो**। पजानन्तो विमुत्तो ति **पञ्ञाविमुत्तो** ति एव वचनत्थो वेदितब्बो ति।

सङ्खारुपेक्खाञाणं ॥

६४. त पनेतं पुरिमेन ञाणद्वयेन अत्थतो एकं। तेनाहु **पोराणा**—"इदं सङ्खारुपेक्खाञाणं एकमेव तीणि नामानि लभति, हेट्ठा मुञ्चितुकम्यताञाणं नाम जातं, मज्झे पटिसङ्खानुपस्सनाञाणं नाम, अन्ते च सिखाप्पत्त सङ्खारुपेक्खाञाणं नाम"।

६५ पाळिय पि वुत्तं—"कथं मुञ्चितुकम्यता-पटिसङ्खा-सन्तिट्ठना पञ्ञा सङ्खारुपेक्खासु ञाणं? उप्पाद मुञ्चितुकम्यता-पटिसङ्खा-सन्तिट्ठना पञ्ञा सङ्खारुपेक्खासु ञाणं। पवत्त "पे० "निमित्तं' पे० 'उपायास मुञ्चितुकम्यता-पटिसङ्खा-सन्तिट्ठना पञ्ञा सङ्खारुपेक्खासु ञाणं। उप्पादो दुक्ख ति ' पे० " भयं ति····पे०····सामिसं ति····पे०" उप्पादो सङ्खारा ति 'पे०' उपायासो सङ्खारा ति मुञ्चितुकम्यता-पटिसङ्खा-सन्तिट्ठना पञ्ञा सङ्खारुपेक्खासु ञाण" (खु० ५–६७) ति।

६६. तत्थ मुञ्चितुकम्यता च सा पटिसङ्खा च सन्तिट्ठना चा ति **मुञ्चितुकम्यतापटिसङ्खासन्तिट्ठना**। इति पुब्बभागे निब्बिदाञाणेन निब्बिन्नस्स उप्पादादीनि परिच्चजितुकामता मुञ्चितुकामता। मुञ्चनस्स उपायकरणत्थं मज्झे पटिसङ्खान पटिसङ्खा। मुञ्चित्वा अवसाने अज्झुपेक्खन सन्तिट्ठना। यं सन्धाय "उप्पादो सङ्खारा, ते सङ्खारे अज्झुपेक्खती ति सङ्खारुपेक्खा" (खु० ५–६८) ति आदि वुत्त। एवं एकमेविद ञाणं।

६७. अपि च इमाय पि पाळिया इदं एकमेवा ति वेदितब्बं। वुत्तं हेत—"या च मुञ्चितुकम्यता, या च पटिसङ्खानुपस्सना, या च सङ्खारुपेक्खा, इमे धम्मा एकत्था, ब्यञ्जनमेव नानं" (खु० ५–३०७) ति।

६८. एवं अधिगतसङ्खारुपेक्खस्स पन इमस्स कुलपुत्तस्स विपस्सना सिखाप्पत्ता वुट्ठानगामिनी होति। सिखाप्पत्ता विपस्सना ति वा वुट्ठानगामिनी ति वा सङ्खारुपक्खादिञाणत्तयस्सेव एतं नामं। सा हि सिखं उत्तमभावं पत्तत्ता **सिखाप्पत्ता**। वुट्ठानं गच्छती ति **वुट्ठनगामिनी**। वुट्ठान वुच्चति बहिद्धानिमित्तभूततो अभिनिविट्ठवत्थुतो चेव अज्झत्तापवत्ततो च वुट्ठहनतो मग्गो, त गच्छती ति वुट्ठानगामिनी, मग्गेन सद्धिं घटियती ति अत्थो।

६९ तत्रायं अभिनिवेसवुट्ठानानं आविभावत्थाय मातिका—अज्झत्तं अभिनिविसित्वा अज्झत्ता वुट्ठाति, अज्झत्तं अभिनिविसित्वा बहिद्धा वुट्ठाति, बहिद्धा अभिनिविसित्वा बहिद्धा वुट्ठाति, बहिद्धा अभिनिविसित्वा अज्झत्ता वुट्ठाति, रूपे अभिनिविसित्वा रूपा वुट्ठाति, रूपे अभिनिविसित्वा अरूपा वुट्ठाति, अरूपे अभिनिविसित्वा अरूपा वुट्ठाति, अरूपे अभिनिविसित्वा रूपा वुट्ठाति, एकप्पहारेन पञ्चहि खन्धेहि वुट्ठाति, अनिच्चतो अभिनिविसित्वा अनिच्चतो वुट्ठाति, अनिच्चतो अभिनिविसित्वा दुक्खतो, अनत्ततो वुट्ठाति,

दुक्खतो अभिनिविसित्वा दुक्खतो, अनिच्चतो, अनत्ततो वुट्ठाति, अनत्ततो अभिनिविसित्वा अनत्ततो …अनिच्चतो, दुक्खतो वुट्ठाति।

७०. कथं ? इधेकच्चो आदितो व अज्झत्तसङ्खारेसु अभिनिविसति, अभिनिविसित्वा ते पस्सति। यस्मा पन न सुद्धअज्झत्तादस्सनमत्तेनेव मग्गवुट्ठानं होति, बहिद्धा पि दट्ठब्बमेव, तस्मा परस्स खन्धे पि अनुपादिण्णसङ्खारे पि अनिच्च दुक्खमनत्ता ति पस्सति। सो कालेन अज्झत्तं सम्मसति, कालेन बहिद्धा। तस्सेव सम्मसतो अज्झत्तं सम्मसनकाले विपस्सना मग्गेन सद्धिं घटियति। अयं **अज्झत्तं अभिनिविसित्वा अज्झत्ता** वुट्ठाति नाम। सचे पनस्स बहिद्धा सम्मसनकाले विपस्सना मग्गेन सद्धिं घटियति, अयं **अज्झत्तं अभिनिविसित्वा बहिद्धा वुट्ठाति** नाम। एस नयो बहिद्धा अभिनिविसित्वा बहिद्धा च अज्झत्ता च वुट्ठाने पि।

७१. अपरो आदितो व रूपे अभिनिविसति, अभिनिविसित्वा भूतरूप च उपादारूपं च रासिं कत्वा पस्सति। यस्मा पन न सुद्धरूपदस्सनमत्तेनेव वुट्ठानं होति, अरूपं पि दट्ठब्बमेव। तस्मा तं रूप आरम्मणं कत्वा उप्पन्नं वेदन सञ्ञं सङ्खारे विञ्ञाण च "इदं अरूपं" ति अरूपं पस्सति। सो कालेन रूपं सम्मसति, कालेन अरूपं। तस्सेवं सम्मसतो रूपसम्मसनकाले विपस्सना मग्गेन सद्धिं घटियति। अयं **रूपे अभिनिविसित्वा रूपा वुट्ठाति** नाम। सचे पनस्स अरूपसम्मसनकाले विपस्सना मग्गेन सद्धिं घटियति, अयं **अरूपे अभिनिविसित्वा अरूपा वुट्ठाति** नाम। एस नयो अरूपे अभिनिविसित्वा अरूपा च रूपा च वुट्ठाने पि।

७२. "यं किञ्चि समुदयधम्मं, सब्बं तं निरोधधम्म" (दी० १–९५) ति एव अभिनिविसित्वा एवमेव वुट्ठानकाले पन एकप्पहारेन पञ्चहि खन्धेहि वुट्ठाति नाम।

७३ एको आदितो व अनिच्चतो सङ्खारे सम्मसति। यस्मा पन न अनिच्चतो सम्मसनमत्तेनेव वुट्ठान होति, दुक्खतो पि अनत्ततो पि सम्मसितब्बमेव, तस्मा दुक्खतो पि अनत्ततो पि सम्मसति। तस्सेवं पटिपन्नस्स अनिच्चतो सम्मसनकाले वुट्ठान होति। अय **अनिच्चतो अभिनिविसित्वा अनिच्चतो वुट्ठाति** नाम। सचे पनस्स दुक्खतो अनत्ततो सम्मसनकाले वुट्ठानं होति, अय **अनिच्चतो अभिनिविसित्वा दुक्खतो, अनत्ततो वुट्ठाति** नाम। एस नयो दुक्खतो अनत्ततो अभिनिविसित्वा सेसवुट्ठानेसु पि।

७४ एत्थ च यो पि अनिच्चतो अभिनिविट्ठो, यो पि दुक्खतो, यो पि अनत्ततो, वुट्ठानकाले च अनिच्चतो वुट्ठान होति—तयो पि जना अधिमोक्खबहुला होन्ति, सद्धिन्द्रियं पटिलभन्ति, अनिमित्तविमोक्खेन विमुच्चन्ति, पठम-

मग्गक्खणे सद्धानुसारिनो होन्ति, सत्तसु ठानेसु सद्धाविमुत्ता। सचे पन दुक्खतो वुट्ठान होति, तयो पि जना पस्सद्धिबहुला होन्ति, समाधिन्द्रियं पटिलभन्ति, अप्पणिहितविमोक्खेन विमुच्चन्ति, सब्बत्थ कायसक्खिनो होन्ति। यस्स पनेत्थ अरूपज्झान पादकं, सो अग्गफले उभतोभागविमुत्तो होति। अथ नेस अनत्ततो वुट्ठानं होति, तयो पि जना वेदबहुला होन्ति, पञ्ञिन्द्रिय पटिलभन्ति, सुञ्ञत-विमोक्खेन विमुच्चन्ति, पठममग्गक्खणे धम्मानुसारिनो होन्ति, छसु ठानेसु दिट्ठिप्पत्ता, अग्गफले पञ्ञाविमुत्ता ति।

७५ इदानि सद्धिं पुरिमपच्छिमञाणेहि इमिस्सा वुट्ठानगामिनिया विपस्सनाय आविभावत्थं द्वादस उपमा वेदितब्बा। तास इद उद्दानं—

"वग्गुली कण्हसप्पो च घर गो यक्खि दारको।
खुद्द पिपास सीतुण्हं अन्धाकारं विसेन चा" ति॥

इमा च उपमा भयतुपट्ठानतो पभुति यत्थ कत्थचि ञाणे ठत्वा आहरित वट्टेय्युं। इमस्मिं पन ठाने आहरियमानासु भयतुपट्ठानतो याव फलञाणं सब्बं पाकटं होति, तस्मा इधेव आहरितब्बा ति वुत्ता।

७६ **वग्गुली** ति। एका किर वग्गुली "एत्थ पुप्फं वा फलं वा लभिस्सामी" ति पञ्चसाखे मधुकरुक्खे निलीयित्वा एक साखं परामसित्वा न तत्थ किञ्चि पुप्फं वा फलं वा गय्हुपगं अद्दस। यथा च एकं, एव दुतियं, ततियं, चतुत्थं, पञ्चम पि साखं परामसित्वा नाद्दस। सा "अफलो वताय रुक्खो; नत्थेत्थ किञ्चि गय्हुपगं" ति तस्मिं रुक्खे आलयं विस्सज्जेत्वा उजुकाय साखाय आरुय्ह विटपन्तरेन सीसं नीहरित्वा उद्धं उल्लोकेत्वा आकासे उप्पतित्वा अञ्ञस्मिं फलरुक्खे निलीयति।

तत्थ वग्गुली विय योगावचरो दट्ठब्बो, पञ्चसाखो मधुकरुक्खो विय पञ्चुपादानक्खन्धा, तत्थ वग्गुलिया निलीयनं विय योगिनो खन्धपञ्चके अभिनिवेसो; तस्सा एकेकं साख परामसित्वा किञ्चि गय्हुपगं आदिस्वा अवसेस-साखापरामसनं विय योगिनो रूपक्खन्धं सम्मसित्वा तत्थ किञ्चि गय्हुपग अदिस्वा अवसेसक्खन्धसम्मसनं, तस्सा "अफलो वताय रुक्खो" ति रुक्खे आलयविस्सज्जनं विय योगिनो पञ्चसु पि खन्धेसु अनिच्चलक्खणादिदस्सनवसेन निब्बिन्नस्स मुञ्चितुकम्यतादिञाणत्तय, तस्सा उजुकाय साखाय उपरि आरोहन विय योगिनो अनुलोम; सीस नीहरित्वा उद्धं उल्लोकन विय गोत्रभुञाण; आकासे उप्पतनं विय मग्गञाण, अञ्ञस्मिं फलरुक्खे निलीयन विय फलञाण। (१)

७७. **कण्हसप्पुपमा** पटिसङ्खाञाणे वुत्ता व। उपमाससन्दने पनेत्थ सप्पवि-

स्सज्जनं विय गोत्रभुञाणं, मुञ्चित्वा आगतमग्गं ओलेकेन्तस्स ठानं विय मग्गञाण, गन्त्वा अभयट्ठाने ठानं विय फलञाणं ति अयं विसेसो। (२)

७८ **घरं** ति। घरसामिके किर सायं भुञ्जित्वा सयनं आरुय्ह निद्द ओक्कन्ते घरं आदित्तं। सो पबुज्झित्वा अग्गिं दिस्वा भीतो "साधु वतस्स सचे अडय्हमानो निक्खमेय्यं" ति ओलोकयमानो मग्ग दिस्वा निक्खमित्वा वेगेन खेमट्ठान गन्त्वा ठितो।

तत्थ घरसामिकस्स भुञ्जित्वा सयन आरुय्ह निद्दोक्कमनं विय बालपुथुज्जनस्स खन्धपञ्चके अह ममा ति गहणं, पबुज्झित्वा अग्गिं दिस्वा भीतकालो विय सम्मापटिपदं पटिपज्जित्वा तिलक्खण दिस्वा भयतुपट्ठानञाणं, निक्खमनमग्गं ओलोकन विय मुञ्चितुकम्यताञाणं, मग्गदस्सन विय अनुलोमं, निक्खमन विय गोत्रभुञाण, वेगेन गमनं विय मग्गञाणं, खेमट्ठाने ठानं विय फलञाणं। (३)

७९. **गोणो** ति। एकस्स किर कस्सकस्स रत्तिभागे निद्द ओक्कन्तस्स वजं भिन्दित्वा गोणा पलाता। सो पच्चूससमये तत्थ गन्त्वा ओलोकेन्तो तेसं पलातभावं ञत्वा अनुपदं गन्त्वा रञ्ञो गोणे अद्दस। ते "मय्हं गोणा" ति सल्लक्खेत्वा आहरन्तो पभातकाले "न इमे मय्हं गोणा, रञ्ञो गोणा" ति सञ्जानित्वा "याव म चोरो अयं ति गहेत्वा राजपुरिसा न अनयब्यसन पापेन्ति, तावदेव पलायिस्सामी" ति भीतो गोणे पहाय वेगेन पलायित्वा निब्भयट्ठाने अट्ठासि।

तत्थ "मय्हं गोणा" ति राजगोणान गहणं विय बालपुथुज्जनस्स "अहं मम" ति खन्धान गहणं, पभाते "राजगोणा" ति सञ्जाननं विय योगिनो तिलक्खणवसेन खन्धानं "अनिच्चा दुक्खा अनत्ता" ति सञ्जाननं, भीतकालो विय भयतुपट्ठानञाण, विस्सज्जित्वा गन्तुकामता विय मुञ्चितुकम्यता, विस्सज्जन विय गोत्रभु, पलायनं विय मग्गो, पलायित्वा अभयदेसे ठानं विय फलं। (४)

८०. **यक्खी** ति। एको किर पुरिसो यक्खिनिया सद्धिं सवास कप्पेसि। सा रत्तिभागे "सुत्तो अय" ति मन्त्वा आमकसुसान गन्त्वा मनुस्समंसं खादति। सो "कुहिं एसा गच्छती" ति अनुबन्धित्वा मनुस्समसं खादमान दिस्वा तस्मा अमनुस्सिभाव ञत्वा "याव मं न खादति, ताव पलायिस्सामी" ति भीतो वेगेन पलायित्वा खेमट्ठाने अट्ठासि।

तत्थ यक्खिनिया सद्धिं संवासो विय खन्धानं "अह ममा" ति गहण, सुसाने मनुस्समसं खादमान दिस्वा "यक्खिनी अयं" ति जाननं विय खन्धानं तिलक्खणं दिस्वा अनिच्चादिभावजाननं, भीतकालो विय भयतुपट्ठान, पलायितुकामता विय मुञ्चितुकम्यता, सुसानविजहन विय गोत्रभु, वेगेन पलायनं विय मग्गो, अभयदेसे ठानं विय फलं। (५)

८१ **दारको** ति। एका किर पुत्तगिद्धिनी इत्थी, सा उपरिपासादे निसिन्ना व अन्तरवीथिय दारकसद्दं सुत्वा "पुत्तो नु खो मे केनचि विहेठियती" ति वेगसा गन्त्वा "अत्तनो पुत्तो" ति सञ्ञाय परपुत्तं अग्गहेसि। सा "परपुत्तो अयं" ति सञ्जानित्वा ओत्तप्पमाना इतो चितो च ओलोकेत्वा, "मा हेव मं कोचि 'दारकचोरी अय' ति वदेय्या" ति दारकं तत्थेव ओरोपेत्वा पुन वेगसा पासादं आरुय्ह निसीदि।

तत्थ अत्तनो पुत्तसञ्ञाय परपुत्तस्स गहण विय "अहं ममा" ति पञ्चक्खन्ध-गहण, "परपुत्तो अयं" ति सञ्जाननं विय तिलक्खणवसेन "नाहं, न ममा" ति सञ्जाननं, ओत्तप्पनं विय भयतुपट्ठानं, इतो चितो च ओलोकनं विय मुञ्चितुकम्यताञाणं, तत्थेव दारकस्स ओरोपनं विय अनुलोमं, ओरोपेत्वा अन्तरवीथिय ठितकालो विय गोत्रभु, पासादारोहनं विय मग्गो, आरुय्ह निसीदनं विय फलं। (६)

८२. **खुद्दं पिपासं सीतुण्हं, अन्धकारं विसेन चा** ति। इमा पन छ उपमा वुट्ठानगामिनिया विपस्सनाय ठितस्स लोकुत्तरधम्माभिमुख-निन्न-पोण-पब्भार-भावदस्सनत्थ वुत्ता।

यथा हि खुद्दाय अभिभूतो सुजिघच्छितो पुरिसो सादुरसं भोजनं पत्थेति, एवमेवायं ससारवट्टजिघच्छाय फुट्ठो योगावचरो अमतरसं कायगतासतिभोजनं पत्थेति। (७)

८३. यथा च पिपासितो पुरिसो परिसुस्समानकण्ठमुखो अनेकङ्गसम्भार पानकं पत्थेति; एवमेवाय संसारवट्टपिपासाय फुट्ठो योगावचरो अरियं अट्ठ-ङ्गिकमग्गपानकं पत्थेति। (८)

यथा पन सीतसम्फुट्ठो पुरिसो उण्हं पत्थेति; एवमेवायं ससारवट्टे तण्हा-सिनेहसीतेन फुट्ठो योगावचरो किलेससन्तापकं मग्गतेज पत्थेति। (९)

यथा च उण्हसम्फुट्ठो पुरिसो सीतं पत्थेति, एवमेवाय ससारवट्टे एकादस-ग्गिसन्तापसन्तत्तो योगावचरो एकादसग्गिवूपसमं निब्बानं पत्थेति। (१०)

यथा पन अन्धकारपरेतो पुरिसो आलोकं पत्थेति, एवमेवायं अविज्जन्ध-कारेन ओनद्धपरियोनद्धो योगावचरो ञाणालोकं मग्गभावनं पत्थेति। (११)

यथा च विससम्फुट्ठो पुरिसो विसघातनं भेसज्ज पत्थेति, एवमेवाय किलेसविससम्फुट्ठो योगावचरो किलेसविसनिम्मथन अमतोसधं निब्बानं पत्थेति। (१२)

तेन वुत्तं—"तस्सेवं जानतो एवं पस्सतो तीसु भवेसु···पे० नवसु सत्तावासेसु चित्तं पटिलीयति पटिकुटति पटिवत्तति **न** सम्पसारियति, उपेक्खा

वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति। सेय्यथापि नाम पदुमपलासे ईसकपोणे" (अं० १-४४) ति सब्ब पुब्बे वुत्तनयेनेव वेदितब्बं।

८४. एत्तावता च पनेस पटिलीनचरो नाम होति, यं सन्धाय वुत्तं—

"पटिलीनचरस्स भिक्खुनो भजमानस्स विवित्तमानस।
सामग्गियमाहु तस्स तं यो अत्तानं भवने न दस्सये" ति॥

(खु० १-३९४)

एवमिदं सङ्खारुपेक्खाञाणं योगिनो पटिलीनचरभाव नियमेत्वा उत्तरि अरियमग्गस्सा पि बोज्झङ्ग-मग्गङ्ग-झानङ्ग-पटिपदाविमोक्खविसेस नियमेति। केचि हि थेरा बोज्झङ्ग-मग्गङ्ग-झानङ्गानं विसेसं पादकज्झान नियमेती ति वदन्ति। केचि विपस्सनाय आरम्मणभूता खन्धा नियमेन्ती ति वदन्ति। केचि पुग्गलज्झासयो नियमेती ति वदन्ति। तेस पि वादेसु अय पुब्बभागवुट्ठानगामिनिविपस्सना व नियमेती ति वेदितब्बा।

८५ तत्राय अनुपुब्बकथा—विपस्सनानियमेन हि सुक्खविपस्सकस्स उप्पन्नमग्गो पि समापत्तिलाभिनो झानं पादकं अकत्वा उप्पन्नमग्गो पि पठमज्झान पादकं कत्वा पकिण्णकसङ्खारे सम्मसित्वा उप्पादितमग्गो पि पठमज्झानिका व होन्ति। सब्बेसु सत्त बोज्झङ्गानि अट्ठ मग्गङ्गानि पञ्च झानङ्गानि होन्ति। तेसं हि पुब्बभागविपस्सना सोमनस्ससहगता पि उपेक्खासहगता पि हुत्वा वुट्ठानकाले सङ्खारुपेक्खाभावं पत्वा सोमनस्ससहगता होति।

पञ्चकनये दुतिय-ततिय-चतुत्थज्झानानि पादकानि कत्वा उप्पादितमग्गेसु यथाक्कमेनेव झानं चतुरङ्गिकं तिवङ्गिक दुवङ्गिकं च होति। सब्बेसु पन सत्त मग्गङ्गानि होन्ति। चतुत्थे छ बोज्झङ्गानि। अयं विसेसो पादकज्झाननियमेन चेव विपस्सनानियमेन च होति। तेसं पि हि पुब्बभागविपस्सना सोमनस्ससहगता पि उपेक्खासहगता पि होति। वुट्ठानगामिनी सोमनस्ससहगता व।

पञ्चमज्झानं पादकं कत्वा निब्बत्तितमग्गे पन उपेक्खा-चित्तेकग्गतावसेन द्वे झानङ्गानि बोज्झङ्ग-मग्गङ्गानि छ सत्त चेव। अय पि विसेसो उभयनियमवसेन होति। इमस्मि हि नये पुब्बभागविपस्सना सोमनस्ससहगता वा उपेक्खासहगता वा होति। वुट्ठानगामिनी उपेक्खासहगता व। अरूपज्झानानि पादकं कत्वा उप्पादितमग्गे पि एसेव नयो। एवं पादकज्झानतो वुट्ठाय ये केचि सङ्खारे सम्मसित्वा निब्बत्तितमग्गस्स आसन्नपदेसे वुट्ठितसमापत्ति अत्तनो सदिसभाव करोति भूमिवण्णो विय गोधावण्णस्स।

८६. **दुतियत्थेरवादे** पन यतो यतो समापत्तितो वुट्ठाय ये ये समापत्तिधम्मे सम्मसित्वा मग्गो निब्बत्तितो होति, तं त समापत्तिसदिसो व होति। तत्रापि च विपस्सनानियमो वुत्तनयेनेव वेदितब्बो।

८७ **ततियत्थेरवादे** अत्तनो अत्तनो अज्झासयानुरूपेन यं यं झान पादक कत्वा ये ये झानधम्मे सम्मसित्वा मग्गो निब्बत्तितो, तंतंझानसदिसो व होति। पादकज्झान पन सम्मसितज्झान वा विना अज्झासयमत्तेनेव त न इज्झति। स्वायमत्थो **नन्दकोवादसुत्तेन** (म० ३-३६१) दीपेतब्बो। एत्थापि च विपस्सनानियमो वुत्तनयेनेव वेदितब्बो। एव ताव सङ्खारुपेक्खा बोज्झङ्ग-मग्गङ्ग-झानङ्गानि नियमेती ति वेदितब्बा।

८८. सचे पनाय आदितो किलेसे विक्खम्भयमाना दुक्खेन सप्पयोगेन ससङ्खारेन विक्खम्भेतु असक्खि, दुक्खापटिपदा नाम होति, विपरियायेन सुखा-पटिपदा। किलेसे पन विक्खम्भेत्वा विपस्सनापरिवासं मग्गपातुभाव सणिक कुरुमाना दन्धाभिञ्ञा नाम होति। विपरियायेन खिप्पाभिञ्ञा। इति अय सङ्खारुपेक्खा आगमनीयट्ठाने ठत्वा अत्तनो अत्तनो मग्गस्स नाम देति। तेन मग्गो चत्तारि नामानि लभति।

८९ सा पनायं पटिपदा कस्सचि भिक्खुनो नाना होति, कस्सचि चतूसु पि मग्गेसु एका वा। बुद्धान पन चत्तारो पि मग्गा सुखापटिपदा खिप्पाभिञ्ञा व अहेसु। तथा धम्मसेनापतिस्स। महामोग्गलानत्थेरस्स पन पठममग्गो सुखा-पटिपदो खिप्पाभिञ्ञो अहोसि। उपरि तयो दुक्खापटिपदा दन्धाभिञ्ञा।

यथा च पटिपदा, एव अधिपतयो पि कस्सचि भिक्खुनो चतूसु मग्गेसु नाना होन्ति। कस्सचि चतूसु पि एको व। एवं सङ्खारुपेक्खा पटिपदाविसेस नियमेति। यथा पन विमोक्खविसेसं नियमेति, त पुब्बे वुत्तमेव।

९० अपि च मग्गो नाम पञ्चहि कारणेहि नामं लभति—सरसेन वा पच्च-नीकेन वा सगुणेन वा आरम्मणेन वा आगमनेन वा।

सचे हि सङ्खारुपेक्खा अनिच्चतो सङ्खारे सम्मसित्वा वुट्ठाति, अनिमित्त-विमोक्खेन विमुच्चति। सचे दुक्खतो सम्मसित्वा वुट्ठाति, अप्पणिहितविमोक्खेन विमुच्चति। सचे अनत्ततो सम्मसित्वा वुट्ठाति, सुञ्ञतविमोक्खेन विमुच्चति। इदं **सरसतो** नामं नाम।

यस्मा पनेस अनिच्चानुपस्सनाय सङ्खारान घनविनिब्भोग कत्वा निच्च-निमित्त-धुवनिमित्त सस्सतनिमित्तानि पजहन्तो आगतो, तस्मा अनिमित्तो। दुक्खानुपस्सनाय पन सुखसञ्ञ पहाय पणिधिं पत्थनं सुक्खापेत्वा आगतत्ता

अप्पणिहितो। अनत्तानुपस्सनाय अत्त-सत्त-पुग्गलसञ्ञं पहाय सङ्खारानं सुञ्ञतो दिट्ठत्ता सुञ्ञतो ति। इद **पच्चनीकतो** नामं नाम।

रागादीहि पनेस सुञ्ञता सुञ्ञतो, रूपनिमित्तादीन रागनिमित्तादीनं येव वा अभावेन अनिमित्तो, रागपणिधिआदीनं अभावतो अप्पणिहितो ति इदमस्स **सगुणतो** नाम।

स्वाय सुञ्ञ अनिमित्तं अप्पणिहितं च निब्बान आरम्मणं करोती ति पि सुञ्ञतो अनिमित्तो अप्पणहितो ति वुच्चति। इदमस्स **आरम्मणतो** नामं।

९१. **आगमनं** पन दुविधं—विपस्सनागमनं, मग्गागमनं च। तत्थ मग्गे विपस्सनागमनं लभति, फले मग्गागमनं। अनत्तानुपस्सना हि सुञ्ञता नाम, सुञ्ञतविपस्सनाय मग्गो सुञ्ञतो, अनिच्चानुपस्सना अनिमित्ता नाम, अनिमित्तविपस्सनाय मग्गो अनिमित्तो।

इद पन नाम न अभिधम्मपरियायेन लब्भति, सुत्तन्तपरियायेन लब्भति। तत्र हि गोत्रभुञाण अनिमित्त निब्बान आरम्मण कत्वा अनिमित्तनामकं हुत्वा सय आगमनीयट्ठाने ठत्वा मग्गस्स नामं देती ति वदन्ति। तेन मग्गो अनिमित्तो ति वुत्तो। मग्गागमनेन पन, फल अनिमित्तं ति युज्जति येव।

दुक्खानुपस्सना सङ्खारेसु पणिधि सुक्खापेत्वा आगतत्ता अप्पणिहिता नाम, अप्पणिहितविपस्सनाय मग्गो अप्पणिहितो, अप्पणिहितमग्गस्स फल अप्पणिहित। एव विपस्सना अत्तनो नाम मग्गस्स देति, मग्गो फलस्सा ति इदं **आगमनतो** नाम। एवमयं सङ्खारुपेक्खा विमोक्खविसेस नियमेती ति॥ (८)

सङ्खारुपेक्खाञाणं निट्ठितं॥

अनुलोमञाणकथा

९२. तस्स तं सङ्खारुपेक्खाञाणं आसेवन्तस्स भावेन्तस्स बहुलीकरोन्तस्स अधिमोक्खसद्धा बलवतरा निब्बत्तति, विरियं सुपग्गहितं होति, सति सूपट्ठिता, चित्तं सुसमाहितं, तिक्खतरा सङ्खारुपेक्खा उप्पज्जति।

तस्स "दानि मग्गो उप्पज्जिस्सती" ति सङ्खारुपेक्खा सङ्खारे अनिच्चा ति वा दुक्खा ति वा अनत्ता ति वा सम्मसित्वा भवङ्गं ओतरति। भवङ्गानन्तरं सङ्खारुपेक्खाय कतनयेनेव सङ्खारे अनिच्चा ति वा दुक्खा ति वा अनत्ता ति वा आरम्मण कुरुमानं उप्पज्जति मनोद्वारावज्जनं। ततो भवङ्गं आवट्टेत्वा उप्पन्नस्स तस्स किरियचित्तस्सानन्तरं अवीचिकं चित्तसन्ततिं अनुप्पबन्धमानं तथेव सङ्खारे आरम्मणं कत्वा उप्पज्जति पठमं जवनचित्तं, यं **परिकम्मं** ति वुच्चति। तदनन्तरं तथेव सङ्खारे आरम्मणं कत्वा उप्पज्जति दुतियं जवनचित्तं, यं

उपचारं ति वुच्चति। तदनन्तर पि तथेव सङ्खारे आरम्मण कत्वा उप्पज्जति ततिय जवनचित्त, य **अनुलोमं** ति वुच्चति। इदं नेसं पाटियेक्कं नाम।

९३ अविसेसेन पन तिविधं पेतं **आसेवनं** ति पि **परिकम्मं** ति पि **उपचारं** ति पि **अनुलोमं** ति पि वत्तु वट्टति। किस्सानुलोमं? पुरिमभाग-पच्छिमभागानं। तं हि पुरिमानं अट्ठन्नं विपस्सनाञाणानं तथकिच्चताय च अनुलोमेति, उपरि च सत्तातिसाय बोधिपक्खियधम्मानं।

तं हि अनिच्चलक्खणादिवसेन सङ्खारे आरब्भ पवत्तत्ता, "उदयब्बयवन्तान येव वत धम्मानं उदयब्बयञाणं उप्पादवये अद्दसा" ति च, "भङ्गवन्तानं येव वत भङ्गानुपस्सनं भङ्गं अद्दसा" ति च, "सभयं येव वत भयतुपट्ठानस्स भयतो उपट्ठितं" ति च, "सादीनवे येव वत आदीनवानुपस्सनं आदीनवं अद्दसा" ति च, "निब्बिन्दितब्बे येव वत निब्बिदाञाणं निब्बिन्नं" ति च, "मुञ्चितब्बम्हि येव वत मुञ्चितुकम्यताञाणं मुञ्चितुकामं जातं" ति च, "पटिसङ्खातब्बं येव वत पटिसङ्खाञाणेन पटिसङ्खातं" ति च, "उपेक्खितब्बं येव वत सङ्खारुपेक्खाय उपेक्खितं" ति च अत्थतो वदमानं विय इमेस च अट्ठन्नं ञाणानं तथकिच्चताय अनुलोमेति, उपरि च सत्तातिसाय बोधिपक्खियधम्मानं, ताय पटिपत्तिया पत्तब्बत्ता।

९४ यथा हि धम्मिको राजा विनिच्छयट्ठाने निसिन्नो वोहारिकमहामत्तान विनिच्छयं सुत्वा अगतिगमन पहाय मज्झत्तो हुत्वा "एवं होतू" ति अनुमोदमानो तेसं च विनिच्छयस्स अनुलोमेति, पोराणस्स च राजधम्मस्स, एवंसम्पदमिद वेदितब्बं।

राजा विय हि अनुलोमञाण। अट्ठ वोहारिकमहामत्ता विय अट्ठ ञाणानि। पोराणो राजधम्मो विय सत्तातिंस बोधपक्खिया। तत्थ यथा राजा "एव होतू" ति वदमानो वोहारिकानं च विनिच्छयस्स, राजधम्मस्स च अनुलोमेति; एवमिदं अनिच्चादिवसेन सङ्खारे आरब्भ उप्पज्जमानं अट्ठन्नञ्च ञाणानं तथकिच्चताय अनुलोमेति। उपरि च सत्तातिसाय बोधिपक्खियधम्मानं। तेनेव सच्चानुलोमिकं ञाणं ति वुच्चती ति।

अनुलोमञाणं निट्ठितं॥

वुट्ठानगामिनीविपस्सनाकथा

९५. इद च पन अनुलोमञाणं सङ्खारारम्मणाय वुट्ठानगामिनिया विपस्सनाय परियोसानं होति। सब्बेन सब्ब पन गोत्रभुञाणं वुट्ठानगामिनिया विपस्सनाय परियोसानं।

इदानि तस्सा येव वुट्ठानगामिनिया विपस्सनाय असम्मोहत्थं अय सुत्तसंसन्दना वेदितब्बा। सेय्यथीदं—अयं हि वुट्ठानगामिनी विपस्सना **सळायतनविभङ्गसुत्ते** "अतम्मयत, भिक्खवे, निस्साय अतम्मयत आगम्म याय उपेक्खा एकत्ता एकत्तासिता, तं पजहथ, तं समतिक्कमथा" (म० ३–३०२) ति एव अतम्मयता ति वुत्ता।

९६. **अलगद्दसुत्तन्ते** "निब्बिन्दं विरज्जति, विरागा विमुच्चती" (म० १–१८४) ति एव निब्बिदा ति वुत्ता। **सुसीमसुत्तन्ते** "पुब्बे खो, सुसीम, धम्मट्ठितिञाण, पच्छा निब्बाने ञाण" (स० २–१०६) ति एवं धम्मट्ठितिञाणं ति वुत्ता। **पोट्ठपादसुत्तन्ते** "सञ्ञा खो, पोट्ठपाद, पठमं उप्पज्जति, पच्छा ञाणं" (दी० १–१५५) ति एवं सञ्ञग्गं ति वुत्ता। **दसुत्तरसुत्तन्ते** "पटिपदाञाणदस्सनविसुद्धि पारिसुद्धिपधानियङ्गं" (दी० ३–१२८) ति एवं पारिसुद्धिपधानियङ्गं ति वुत्ता। **पटिसम्भिदामग्गे** "या च मुञ्चितुकम्यता, या च पटिसङ्खानुपस्सना, या च सङ्खारुपेक्खा, इमे धम्मा एकत्था ब्यञ्जनमेव नानं" (खु० ५–३०७) ति एवं तीहि नामेहि वुत्ता। **पट्ठाने** "अनुलोम गोत्रभुस्स, अनुलोम वोदानस्सा" (अभि० ३–२३३) ति एव तीहि नामेहि वुत्ता। **रथविनीतसुत्तन्ते** "किं पनावुसो, पटिपदाञाणदस्सनविसुद्धत्थं भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती" (म० १–१९४) ति एवं पटिपदाञाणदस्सनविसुद्धी ति वुत्ता।

९७ इति नेकेहि नामेहि कित्तिता या महेसिना।
वुट्ठानगामिनी सन्ता परिसुद्धा विपस्सना॥
वुट्ठातुकामो ससारदुक्खपङ्का महब्भया।
करेय्य सततं तत्थ योग पण्डिजातिको ति॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे पञ्ञाभावनाधिकारे
पटिपदाञाणदस्सनविसुद्धिनिद्देसो नाम
एकवीसतिमो परिच्छेदो॥



ञाणदस्सनविसुद्धिनिद्देसो

बावीसतिमो परिच्छेदो

पठमञाणकथा

१ इतो परं[1] गोत्रभुञाण होति। तं मग्गस्स आवज्जनठानियत्ता नेव पटिपदाञाणदस्सनविसुद्धि न ञाणदस्सनविसुद्धि भजति, अन्तरा अब्बोहारिकमेव होति। विपस्सनासोते पतितत्ता पन विपस्सना ति सङ्खं गच्छति।

सोतापत्तिमग्गो[2], सकदागामिमग्गो[3], अनागामिमग्गो[4], अरहत्तमग्गो[5]—ति इमेसु पन चतूसु मग्गेसु ञाणं **ञाणदस्सनविसुद्धि** नाम।

२ तत्थ पठममग्गञाण ताव सम्पादेतुकामेन अञ्ञं किञ्चि कातब्बं नाम नत्थि। यं हि अनेन कातब्बं सिया, तं अनुलोमावसानं विपस्सन उप्पादेन्तेन कतमेव।

एवं उप्पन्नअनुलोमञाणस्स पनस्स तेहि तीहि पि अनुलोमञाणेहि अत्तनो बलानुरूपेन थूलथूले सच्चपटिच्छादके तमम्हि अन्तरधापिते सब्बसङ्खारगतेसु चित्तं न पक्खन्दति, न सन्तिट्ठति, नाधिमुच्चति, न सज्जति, न लग्गति, न बज्झति, पदुमपलासतो उदक विय पतिलीयति, पतिकुटति, पतिवत्तति। सब्ब निमित्तारम्मण पि सब्बं पवत्तारम्मणं पि पलिबोधतो उपट्ठाति।

अथस्स सब्बस्मि निमित्तपवत्तारम्मणे पलिबोधतो उपट्ठिते अनुलोमञाणस्स आसेवनन्ते अनिमित्तं अप्पवत्त विसङ्खारं निरोध निब्बान आरम्मणं कुरुमानं पुथुज्जनगोत्तं पुथुज्जनसङ्खं पुथुज्जनभूमि अतिक्कममान, अरियगोत्त अरियसङ्खं अरियभूमि ओक्कममान निब्बनारम्मणे पठमावट्टन–पठमाभोग–पठमसमन्ना-

---

१ **इतो पर** ति। इतो अनुलोमञाणतो उपरि।

२. सोतस्स अरियस्स आदितो पज्जनं सोतापत्ति, सो एव मग्गो, सोत अरियं आदितो पज्जति अधिगच्छती ति सोतापत्ति, पठमको, तस्स मग्गो **सोतापत्तिमग्गो**।

३. पटिसन्धिवसेन सकिदेव इमं मनुस्सलोकं आगच्छती ति सकदागामी, तस्स मग्गो **सकदागामिमग्गो**।

४ पटिसन्धिवसेन कामभवं न आगच्छती ति अनागामी, तस्स मग्गो **अनागामिमग्गो**।

५ किलेसादीन हननादिना अरहं, अग्गमग्गट्ठो, तस्स भावो अरहत्त, सो एव मग्गो **अरहत्तमग्गो**।

द्वारभूत मग्गस्स अनन्तर-समनन्तर-आसेवन-उपनिस्सय-नत्थि-विगतवसेन छहि आकारेहि पच्चयभावं साधयमानं सिखाप्पत्त विपस्सनाय मुद्धभूत अपुनरावट्टकं उप्पज्जति गोत्रभुञाणं ।

३ यं सन्धाय वुत्तं—"कथ बहिद्धा वुट्ठानविवट्टने पञ्ञा गोत्रभुञाणं ? उप्पाद अभिभुय्यती ति गोत्रभु । पवत्तं पे० "उपायासं अभिभुय्यती ति गोत्रभु । बहिद्धा सङ्खारनिमित्तं अभिभुय्यती ति गोत्रभु । अनुप्पादं पक्खन्दती ति गोत्रभु । अप्पवत्तं पे० "अनुपायास निरोध निब्बानं पक्खन्दती ति गोत्रभु । उप्पादं अभिभुय्यित्वा अनुप्पादं पक्खन्दती ति गोत्रभू" (खु० ५–७३) ति सब्बं वित्थारेतब्बं ।

४ तत्राय एकावज्जनेन एकवीथिय पवत्तमानानं पि अनुलोमगोत्रभूनं नानारम्मणे पवत्तनाकारदीपिका उपमा—यथा हि महामातिकं लङ्घित्वा परतीरे पतिट्ठातुकामो पुरिसो वेगेन धावित्वा मातिकाय ओरिमतीरे रुक्खसाखाय बन्धित्वा ओलम्बितुं रज्जु वा यट्ठिं वा गहेत्वा उल्लङ्घित्वा परतीरनिन्नपोणपब्भारकायो हुत्वा परतीरस्स उपरिभाग पत्तो तं मुञ्चित्वा वेधमानो परतीरे पतित्वा सणिकं पतिट्ठाति; एवमेवाय योगावचरो पि भव-योनि-गति-ठिति-निवासानं परतीरभूते निब्बाने पतिट्ठातुकामो उदयब्बयानुपस्सनादिना वेगेन धावित्वा अत्तभावरुक्खसाखाय बन्धित्वा ओलम्बितं रूपरज्जु वा वेदनादीसु अञ्ञतरदण्ड वा अनिच्च ति वा दुक्खं ति वा अनत्ता ति वा अनुलोमावज्जनेन गहेत्वा त अमुञ्चमानो व पठमेन अनुलोमचित्तेन उल्लङ्घित्वा दुतियेन परतीरन्निपोणपब्भारकायो विय निब्बाननिन्नपोणपब्भारमानसो हुत्वा ततियेन परतीरस्स उपरिभागं पत्तो विय इदानि पत्तब्बस्स निब्बानस्स आसन्नो हुत्वा तस्स चित्तस्स निरोधेन त सङ्खारारम्मण मुञ्चित्वा गोत्रभुचित्तेन विसङ्खारे परतीरभूते निब्बाने पतति । एकारम्मणे पन अलद्धासेवनताय वेधमानो सो पुरिसो विय न ताव सुप्पतिट्ठितो होति, ततो मग्गञाणेन पतिट्ठाती ति ।

५ तत्थ अनुलोमं सच्चपटिच्छादकं किलेसतमं विनोदेतुं सक्कोति, न निब्बानमारम्मणं कातुं । गोत्रभु निब्बानमेव आरम्मणं कातुं सक्कोति, न सच्चपटिच्छादकं तमं विनोदेतु ।

तत्रायं उपमा—एको किर चक्खुमा पुरिसो "नक्खत्तयोगं जानिस्सामी" ति रत्तिभागे निक्खमित्वा चन्द पस्सितुं उद्धं उल्लोकेसि । तस्स वलाहकेहि पटिच्छन्नत्ता चन्दो न पञ्ञायित्थ । अथेको वातो उट्ठहित्वा थूलथूले वलाहके विद्धंसेति, अपरो मज्झिमे, अपरो सुखुमे ति । ततो सो पुरिसो विगतवलाहके नभे चन्दं दिस्वा नक्खत्तयोगं अञ्ञासि ।

६. तत्थ तयो वलाहका विय सच्चपटिच्छादकंथूल-मज्झिमसुखुमं किलेसन्धकार। तयो वाता विय तीणि अनुलोमचित्तानि। चक्खुमा पुरिसो विय गोत्रभुञाण। चन्दो विय निब्बानं। एकेकस्स वातस्स यथाक्कमेन बलाहकविद्धंसन विय एकेकस्स अनुलोमचित्तस्स सच्चपटिच्छादकतमविनोदन। विगतवलाहके नभे तस्स पुरिसस्स विसुद्धचन्ददस्सनं विय विगते सच्चपटिच्छादके तमे गोत्रभुञाणस्स विसुद्धनिब्बानदस्सनं।

यथेव हि तयो वाता चन्दपटिच्छादके वलाहके येव विद्धसेतु सक्कोन्ति, न चन्द दट्ठु; एवमनुलोमानि सच्चपटिच्छादकं तम येव विनोदेतु सक्कोन्ति, न निब्बान दट्ठु। यथा सो पुरिसो चन्दमेव दट्ठु सक्कोति, न वलाहके विद्धंसेतु; एवं गोत्रभुञाण निब्बानमेव दट्ठुं सक्कोति, न किलेसतम विनोदेतुं। तेनेव चेतं मग्गस्स आवज्जनं ति वुच्चति।

तं हि अनावज्जनं पि समानं आवज्जनट्ठाने ठत्वा "एवं निब्बत्ताही" ति मग्गस्स सञ्ञ दत्वा विय निरुज्झति। मग्गो पि तेन दिन्नसञ्ञ अमुञ्चित्वा व अवीचिसन्ततिवसेन तं ञाणं अनुप्पन्धमानो अनिब्बिद्धपुब्बं अपदालितपुब्बं लोभक्खन्ध दोसक्खन्धं मोहक्खन्धं निब्बिज्झमानो व पदालयमानो निब्बत्तति।

७. तत्रायं उपमा—एको किर इस्सासो अट्ठउसभमत्ते पदेसे फलकसत ठपापेत्वा वत्थेन मुखं वेठेत्वा सरं सन्नहित्वा चक्कयन्ते अट्ठासि। अञ्ञो पुरिसो चक्कयन्तं आविज्झित्वा यदा इस्सासस्स फलक अभिमुखं होति, तदा तत्थ दण्डकेन सञ्ञ देति। इस्सासो दण्डकसञ्ञ अमुञ्चित्वा व सरं खिपित्वा फलकसतं निब्बिज्झति।

तत्थ दण्डकसञ्ञं विय गोत्रभुञाण। इस्सासो विय मग्गञाण। इस्सासस्स दण्डकसञ्ञ अमुञ्चित्वा व फलकसतनिब्बिज्झनं विय मग्गञाणं। गोत्रभुञाणेन दिन्नसञ्ञं अमुञ्चित्वा व निब्बानं आरम्मण कत्वा अनिब्बिद्धपुब्बानं अपदालितपुब्बानं लोभ-दोस-मोहक्खन्धानं निब्बिज्झनपदालन।

८. न केवलं चेस मग्गो लोभक्खन्धादीन निब्बिज्झनमेव करोति, अपि च खो अनमतग्गसंसारवट्टदुक्खसमुद्दं सोसेति, सब्बअपायद्वारानि पिदहति, सत्तान्नं अरियधनानं सम्मुखीभावं करोति, अट्ठङ्गिकं मिच्छामग्गं पजहति, सब्बवेरभयानि वूपसमेति, सम्मासम्बुद्धस्स ओरसपुत्तभावं उपनेति, अञ्ञेस च अनेकसतानं आनिसंसान पटिलाभाय सवत्तती ति। एवं अनेकानिससदायकेन सोतापत्तिमग्गेन सम्पयुत्तं ञाणं **सोतापत्तिमग्गे ञाणं** ति॥

पठमञाण निट्ठितं॥

सोतापन्नपुग्गलकथा

९ इमस्स पन ञाणस्स अनन्तर तस्सेव विपाकभूतानि द्वे तीणि वा फलचित्तानि उप्पज्जन्ति। अनन्तरविपाकत्ता येव हि लोकुत्तरकुसलानं "समाधिमानन्तरिकञ्ञमाहू" (खु० १–६) ति च "दन्धं आनन्तरिक पापुणाति आसवानं खयाया" (अं० २–१५८) ति च आदि वुत्त।

केचि पन एक द्वे तीणि चत्तारि वा फलचित्तानी ति वदन्ति, त न गहेतब्बं।

१० अनुलोमस्स हि आसेवनन्ते गोत्रभुञाणं उप्पज्जति। तस्मा सब्बन्तिमेन परिच्छेदेन द्वीहि अनुलोमचित्तेहि भवितब्बं। न हि एकं आसेवनपच्चय लभति। सत्तचित्तपरमा च एकावज्जनवीथि। तस्मा यस्स द्वे अनुलोमानि, तस्स ततिय गोत्रभु, चतुत्थं मग्गचित्तं, तीणि फलचित्तानि होन्ति। यस्स तीणि अनुलोमानि, तस्स चतुत्थं गोत्रभु, पञ्चमं मग्गचित्तं, द्वे फलचित्तानि होन्ति। तेन वुत्त—"द्वे तीणि वा फलचित्तानि उप्पज्जन्ती" ति।

केचि पन यस्स चत्तारि अनुलोमानि, तस्स पञ्चम गोत्रभु, छट्ठं मग्गचित्तं, एकं फलचित्तं ति वदन्ति। तं पन यस्मा चतुत्थं पञ्चम वा अप्पेति, न ततो परं आसन्नभवङ्गत्ता ति पटिक्खित्त। तस्मा न सारतो पच्चेतब्ब।

११. एत्तावता च पनेस **सोतापन्नो** नाम दुतिया अरियपुग्गलो होति। भुसं पमत्तो पि हुत्वा सत्तक्खत्तु देवेसु च मनुस्सेसु च सन्धावित्वा संसरित्वा दुक्खस्सन्तस्स करणसमत्थो होति।

फलपरियोसाने पनस्स चित्तं भवङ्ग ओतरति। ततो भवङ्गं उपच्छिन्दित्वा मग्गपच्चवेक्खणत्थाय उप्पज्जति मनोद्वारावज्जन। तस्मिं निरुद्धे पटिपाटिया सत्त मग्गपच्चवेक्खणजवनानी ति। पुन भवङ्गं ओतरित्वा तेनेव नयेन फलादीन पच्चवेक्खणत्थाय आवज्जनादीनि उप्पज्जन्ति। येसं उप्पत्तिया एस मग्गं पच्चवेक्खति, फलं पच्चवेक्खति, पहीनकिलेसे पच्चवेक्खति, अवसिट्ठकिलेसे पच्चवेक्खति, निब्बानं पच्चवेक्खति।

सो हि "इमिना वताह मग्गेन आगतो" ति मग्गं पच्चवेक्खति। ततो "अय मे आनिससो लद्धो" ति फलं पच्चवेक्खति। ततो "इमे नाम मे किलेसा पहीना" ति पहीनकिलेसे पच्चवेक्खति। ततो "इमे नाम किलेसा अवसिट्ठा" ति उपरिमग्गत्तयवज्झे किलेसे पच्चवेक्खति। अवसाने च "अय मे धम्मो आरम्मणतो पटिविद्धो" ति अमतं निब्बानं पच्चवेक्खति। इति सोतापन्नस्स अरियसावकस्स पञ्च पच्चवेक्खणानि होन्ति। यथा च सोतापन्नस्स, एव सकदागामि-अनागामीनं पि। अरहतो पन अवसिट्ठकिलेसपच्चवेक्खणं नाम नत्थी ति। एवं सब्बानि पि एकूनवीसति पच्चवेक्खणानि नाम।

१२ उक्कट्ठपरिच्छेदो येव चेसो। पहीनावसिट्ठकिलेसपच्चवेक्खणं हि सेक्खानं पि होति वा, न वा। तस्स हि पच्चवेक्खणस्स अभावेनेव **महानामो** भगवन्तं पुच्छि—"को सु नाम मे धम्मो अज्झत्तं अप्पहीनो, येन एकदा लोभधम्मा पि चित्तं परियादाय तिट्ठन्ती" (म० १-१२६) ति सब्बं वित्थारतो वेदितब्बं ॥

दुतियञाणकथा

१३ एवं पच्चवेक्खित्वा पन सो सोतापन्नो अरियसावको तस्मिं येव वा आसने निसिन्नो, अपरेन वा समयेन काम-राग-ब्यापादानं तनुभावाय दुतियाय भूमिया पत्तिया योगं करोति। सो इन्द्रिय-बल-बोज्झङ्गानि समोधानेत्वा तदेव रूप-वेदना-सञ्ञा-सङ्खार-विञ्ञाणभेदं सङ्खारगतं अनिच्चं दुक्खमनत्ता ति ञाणेन परिमद्दति, परिवत्तेति, विपस्सनावीथिं ओगाहति।

तस्सेवं पटिपन्नस्स वुत्तनयेनेव सङ्खारुपेक्खावसाने एकावज्जनेन अनुलोम-गोत्रभुञाणेसु उप्पन्नेसु गोत्रभुअनन्तरं सकदागामिमग्गो उप्पज्जति। तेन सम्पयुत्तं ञाणं **सकदागामिमग्गे ञाणं** ति ॥

दुतियञाणं निट्ठितं ॥

ततियञाणकथा

१४ इमस्सा पि ञाणस्स अनन्तरं वुत्तनयेनेव फलचित्तानि वेदितब्बानि। एत्तावता चेस सकदागामी नाम चतुत्थो अरियपुग्गलो होति सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तकरणसमत्थो। ततो परं पच्चवेक्खणं वुत्तनयमेव।

एवं पच्चवेक्खित्वा च सो सकदागामी अरियसावको तस्मिञ्ञेव वा आसने निसिन्नो, अपरेन वा समयेन काम-राग-ब्यापादानं अनवसेसप्पहानाय ततियाय भूमिया पत्तिया योगं करोति। सो इन्द्रिय-बल-बोज्झङ्गानि समोधानेत्वा तदेव सङ्खारगतं अनिच्चं दुक्खमनत्ता ति ञाणेन परिमद्दति, परिवत्तेति, विपस्सनावीथिं ओगाहति। तस्सेवं पटिपन्नस्स वुत्तनयेनेव सङ्खारुपेक्खावसाने एकावज्जनेन अनुलोम-गोत्रभुञाणेसु उप्पन्नेसु गोत्रभुअनन्तरं **अनागामिमग्गो** उप्पज्जति। तेन सम्पयुत्तं ञाणं **अनागामिमग्गे ञाणं** ति ॥

ततियञाणं निट्ठितं ॥

चतुत्थञाणकथा

१५ इमस्सा पि ञाणस्स अनन्तरं वुत्तनयेनेव फलचित्तानि वेदितब्बानि। एत्तावता चेस अनागामी नाम छट्ठो अरियपुग्गलो होति, ओपपातिको तत्थ-परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो, पटिसन्धिवसेन इमं लोकं पुन अनागन्ता। ततो परं पच्चवेक्खणं वुत्तनयमेव।

एवं पच्चवेक्खित्वा च सो अनागामी अरियसावको तस्मिं येव वा आसने निसिन्नो, अपरेन वा समयेन, रूपारूपराग-मान-उद्धच्च-अविज्जान अनवसेसप्पहानाय चतुत्थाय भूमिया पत्तिया योग करोति, सो इन्द्रिय-बल-बोज्झङ्गानि समोधानेत्वा तदेव सङ्खारगत अनिच्चं दुक्खमनत्ता ति ञाणेन परिमद्दति, परिवत्तेति, विपस्सनावीथिं ओगाहति।

तस्सेव पटिपन्नस्स वुत्तनयेनेव सङ्खारुपेक्खावसाने एकावज्जनेन अनुलोम-गोत्रभुञाणेसु उप्पन्नेसु गोत्रभुअनन्तर अरहत्तमग्गो उप्पज्जति। तेन सम्पयुत्तं ञाण **अरहत्तमग्गे ञाणं** ति ॥

चतुत्थञाणं निट्ठितं ॥

अरहन्तपुग्गलकथा

१६ इमस्सापि ञाणस्स अनन्तरं वुत्तनयेनेव फलचित्तानि वेदितब्बानि। एत्तावता चेस **अरहा** नाम अट्ठमो अरियपुग्गलो होति महाखीणासवो अन्तिम-देहधारी ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसयोजनो सम्मदञ्ञा-विमुत्तो सदेवकस्स लोकस्स अग्गदक्खिणेय्यो ति।

इति यं तं वुत्तं—"सोतापत्तिमग्गो, सकदागामिमग्गो, अनागामिमग्गो, अरहत्तमग्गो—ति इमेसु पन चतूसु मग्गेसु ञाणं **ञाणदस्सनविसुद्धि** नामा" (विसु० –२६६) ति, तं इमानि एवं इमिना अनुक्कमेन पत्तब्बानि चत्तारि ञाणानि सन्धाय वुत्त ॥

बोधिपक्खियकथा

१७ इदानि इमिस्सा येव चतुञाणाय[1] ञाणदस्सनविसुद्धिया आनुभाव-विजाननत्थं[2]—

परिपुण्णबोधिपक्खियभावो वुट्ठानबलसमायोगो।
ये येन पहातब्बा धम्मा तेसं पहान च ॥

किच्चानि परिञ्ञादीनि यानि वत्तानि अभिसमयकाले।
तानि च यथासभावेन जानितब्बानि सब्बानी ति ॥

१८ तत्थ **परिपुण्णबोधिपक्खियभावो** ति। बोधिपक्खियान परिपुण्णभावो। चत्तारो सतिपट्ठाना, चत्तारो सम्मप्पधाना, चत्तारो इद्धिपादा, पञ्चिन्द्रियानि, पञ्च बलानि, सत्त बोज्झङ्गा, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो—ति हि इमे सत्ततिंस

---

१. चतुन्न **मग्गञाणानं** वसेन **चतुञाणाय**।

२. **आनुभावविजाननत्थं** ति। सतिपट्ठानपारिपूरिआदिकस्स आनुभावस्स बोधनत्थं।

धम्मा बुज्झनट्ठेन बोधो ति लद्धनामस्स अरियमग्गस्स पक्खे भवत्ता बोधिपक्खिया नाम। पक्खे भवत्ता ति उपकारभावे ठितत्ता।

१९. तेसु तेसु आरम्मणेसु ओक्खन्दित्वा पक्खन्दित्वा उपट्ठानतो पट्ठानं। सति येव पट्ठानं **सतिपट्ठानं।** काय-वेदना-चित्तधम्मेसु पनस्सा असुभ-दुक्ख-अनिच्च-अनत्ताकारगहणवसेन सुभ-सुख-निच्च-अत्त-सञ्ञापहानकिच्चसाधनवसेन च पवत्तितो चतुधा भेदो होति। तस्मा **चत्तारो सतिपट्ठाना** ति वुच्चन्ति। (१)

२०. पदहन्ति एतेना ति पधान। सोभनं पधान **सम्मप्पधानं।** सम्मा वा पदहन्ति एतेना ति सम्मप्पधान। सोभनं वा तं किलेसविरूपत्तविरहतो पधानं च हितसुखनिप्फादकत्तेन सेट्ठभावावाहनतो पधानभावकारणतो चा ति सम्मप्पधानं। विरियस्सेतं अधिवचन। तयिदं उप्पन्नानुप्पन्नानं अकुसलानं पहानानुप्पत्तिकिच्च, अनुप्पन्नुप्पन्नान च कुसलानं उप्पत्तिठितिकिच्चं साधयती ति चतुब्बिधं होति, तस्मा **चत्तारो सम्मप्पधाना** ति वुच्चन्ति। (२)

२१. पुब्बे वुत्तेन इज्झनट्ठेन इद्धि। तस्मा सम्पयुत्ताय पुब्बङ्गमट्ठेन फलभूताय पुब्बभागकारणट्ठेन **च** इद्धिया पादो ति **इद्धिपादो।** सो छन्दादिवसेन चतुब्बिधो होति, तस्मा **चत्तारो इद्धिपादा** ति वुच्चन्ति। यथाह—"चत्तारो इद्धिपादा—छन्दिद्धिपादो, चित्तिद्धिपादो, विरियिद्धिपादो, वीमसिद्धपादो" (अभि० २–२७२) ति। इमे लोकुत्तरा व। लोकिया पन "छन्द चे भिक्खु अधिपतिं करित्वा लभति समाधिं, लभति चित्तस्सेकग्गत, अय वुच्चति—छन्दसमाधी" (अभि० २–२६९) ति आदिवचनतो छन्दादिअधिपतिवसेन पटिलद्धधम्मा पि होन्ति। (३)

२२. अस्सद्धिय-कोसज्ज-पमाद-विक्खेप-सम्मोहान अभिभवनतो अभिभवनसङ्खातेन अधिपतियट्ठेन **इन्द्रियं।** अस्सद्धियादीहि च अनभिभवनीयतो अकम्पियट्ठेन **बलं।** तदुभय पि सद्धादिवसेन पञ्चविधं होति, तस्मा **पञ्चिन्द्रियानि, पञ्च बलानी** ति वुच्चन्ति। (४–५)

२३. बुज्झनकसत्तस्स पन अङ्गभावेन सतिआदयो सत्त **बोज्झङ्गा।** निय्यानिकट्ठेन च सम्मादिट्ठिआदयो अट्ठ **मग्गङ्गा** होन्ति। तेन वुत्त—"**सत्त बोज्झङ्गा, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो**" ति। (६–७)

२४. इति इमे सत्तिंस बोधिपक्खियधम्मा पुब्बभागे लोकियविपस्सनाय वत्तमानाय चुद्दसविधेन काय परिग्गण्हतो च कायानुपस्सनासतिपट्ठानं, नवविधेन वेदनं परिग्गण्हतो च वेदनानुपस्सनासतिपट्ठानं, सोळसविधेन चित्तं परिग्गण्हतो च चित्तानुपस्सनासतिपट्ठान, पञ्चविधेन धम्मे परिग्गण्हतो च धम्मानुपस्सनासतिपट्ठानं। इमस्मिं अत्तभावे अनुप्पन्नपुब्ब परस्स उप्पन्नं अकुसलं दिस्वा "यथा पटिपन्नस्सेतं उप्पन्न, न तथा पटिपज्जिस्सामि, एवं मे एत नुप्पज्जि-

स्सती" ति, तस्स अनुप्पादाय वायमनकाले पठमं सम्मप्पधानं। अत्तनो समुदाचारप्पत्त अकुसल दिस्वा तस्स पहानाय वायमनकाले दुतियं। इमस्मिं अत्तभावे अनुप्पन्नपुब्ब झानं वा विपस्सनं वा उप्पादेतु वायमन्तस्स ततियं। उप्पन्नं यथा न परिहायति, एव पुनप्पुनं उप्पादेन्तस्स चतुत्थं सम्मप्पधानं। छन्दं धुरं कत्वा कुसलुप्पादनकाले छन्दिद्धिपादो' 'मिच्छावाचाय विरमणकाले सम्मावाचा ति एव नानाचित्तेसु लब्भन्ति। इमेसं पन चतुन्नं ञाणान उप्पत्तिकाले एकचित्ते लब्भन्ति। फलक्खणे ठपेत्वा चत्तारो सम्मप्पधाने अवसेसा तेत्तिंस लब्भन्ति।

२५. एव एकचित्ते लब्भमानेसु चेतेसु एका व निब्बानारम्मणा सति कायादीसु सुभसञ्ञादिपहानकिच्चसाधनवसेन, चत्तारो सतिपट्ठाना ति वुच्चति। एकमेव च विरियं अनुप्पन्नानं अनुप्पादादिकिच्चसाधनवसेन, चत्तारो सम्मप्पधाना ति वुच्चति। सेसेसु पन हापन-वड्ढनं नत्थि।

२६ अपि च तेसु—

नव एकविधा एको द्वेधाथ चतु पञ्चधा।
अट्ठधा नवधा चेव इति छद्धा भवन्ति ते॥

नव एकविधा ति। छन्दो, चित्तं, पीति, पस्सद्धि, उपेक्खा, सङ्कप्पो, वाचा, कम्मन्तो, आजीवो ति इमे नव छन्दिद्धिपादादिवसेन एकविधा व होन्ति, न अञ्ञं कोट्ठास भजन्ति। **एको द्वेधा** ति। सद्धा इन्द्रिय-बलवसेन द्वेधा ठिता। **अथ चतु पञ्चधा** ति। अथञ्ञो एको चतुधा, अञ्ञो पञ्चधा ठितो ति अत्थो। तत्थ समाधि एको इन्द्रिय-बल-बोज्झङ्ग-मग्गङ्गवसेन चतुधा ठितो। पञ्ञा तेसं च चतुन्न इद्धिपादकोट्ठासस्स च वसेन पञ्चधा। **अट्ठधा नवधा चेवा** ति। अपरो एको अट्ठधा, एको नवधा ठितो ति अत्थो। चतुसतिपट्ठान-इन्द्रिय-बल-बोज्झङ्ग-मग्गङ्गवसेन सति अट्ठधा ठिता। चतुसम्मप्पधान-इद्धिपाद-इन्द्रिय-बल-बोज्झङ्ग-मग्गङ्गवसेन विरिय नवधा ति। एव—

चुद्दसेव असम्भिन्ना होन्तेते बोधिपक्खिया।
कोट्ठासतो सत्तविधा सत्ततिंसप्पभेदतो॥
सकिच्चनिप्फादनतो सरूपेन च वुत्तितो।
सब्बे व अरियमग्गस्स सम्भवे सम्भवन्ति ते ति॥

एव तावेत्थ परिपुण्णबोधिपक्खियभावो जानितब्बो॥ (१)

वुट्ठानबलसमायोगकथा

२७. **वुट्ठाबलसमायोगो** ति। वुट्ठानं चेव बलसमायोगो च। लोकियविपस्सना

हि निमित्तारम्मणत्ता चेव पवत्तकारणस्स च समुदयस्स समुच्छिन्दनतो नेव निमित्ता, न पवत्ता वुट्ठाति। गोत्रभुञाणं समुदयस्स असमुच्छिन्दनतो पवत्ता न वुट्ठाति। निब्बानारम्मणतो पन निमित्ता वुट्ठाती ति एकतो वुट्ठान होति। तेनाह—"बहिद्धा वुट्ठानविवट्टने पञ्ञा गोत्रभुञाणं" (खु० ५-३) ति। तथा "उप्पादा विवट्टित्वा अनुप्पाद पक्खन्दती ति गोत्रभु, पवत्ता विवट्टित्वा" (खु० ५-७४) ति सब्बं वेदितब्बं। इमानि पन चत्तारि पि ञाणानि अनिमित्तारम्मणत्ता निमित्ततो वुट्ठहन्ति, समुदयस्स समुच्छिन्दनतो पवत्ता वुट्ठहन्ती ति दुभतो[1] वुट्ठानानि होन्ति।

२८. तेन वुत्त—"कथं दुभतो वुट्ठानविवट्टने पञ्ञा मग्गे ञाणं? सोतापत्तिमग्गक्खणे दस्सनट्ठेन सम्मादिट्ठि मिच्छादिट्ठिया वुट्ठाति, तदनुवत्तककिलेसेहि च खन्धेहि च वुट्ठाति, बहिद्धा च सब्बनिमित्तेहि वुट्ठाति। तेन वुच्चति—दुभतो वुट्ठानविवट्टने पञ्ञा मग्गे ञाण। अभिनिरोपनट्ठेन सम्मासङ्कप्पो मिच्छासङ्कप्पा ' पे० '' परिग्गहट्ठेन सम्मावाचा मिच्छावाचाय समुट्ठानट्ठेन सम्माकम्मन्तो 'वोदानट्ठेन सम्माआजीवो 'पग्गहट्ठेन सम्मावायामो ' 'उपट्ठानट्ठेन सम्मासति' ''अविक्खेपट्ठेन सम्मासमाधि मिच्छासमाधितो वुट्ठाति, तदनुवत्तककिलेसेहि च खन्धेहि च वुट्ठाति, बहिद्धा च सब्बनिमित्तेहि वुट्ठाति। तेन वुच्चति—'दुभतो वुट्ठानविवट्टने पञ्ञा मग्गे ञाण' ति।

"सकदागामिमग्गक्खणे दस्सनट्ठेन सम्मादिट्ठि' पे० अविक्खेपट्ठेन सम्मासमाधि ओळारिका कामरागसयोजना पटिघसयोजना ओळारिका कामरागानुसया पटिघानुसया वुट्ठात्ति पे०'' '।

"अनागामिमग्गक्खणे दस्सनट्ठेन सम्मादिट्ठि ' पे० अविक्खेपट्ठेन सम्मासमाधि अणुसहगता कामरागसयोजना पटिघसयोजना अणुसहगता कामरागानुसया पटिघानुसया वुट्ठाति'' पे०' ।

"अरहत्तमग्गक्खणे दस्सनट्ठेन सम्मादिट्ठि पे०' 'अविक्खेपट्ठेन सम्मासमाधि रूपरागा अरूपरागा माना उद्धच्चा अविज्जाय मानानुसया भवरागानुसया अविज्जानुसया वुट्ठाति, तदनुवत्तककिलेसेहि च खन्धेहि च वुट्ठाति, बहिद्धा च सब्बनिमित्तेहि वुट्ठाति। तेन वुच्चति—"दुभतो वुट्ठानविवट्टने पञ्ञा मग्गे ञाण" (खु० ५-७६, ७७) ति।

२९. लोकियानं च अट्ठन्नं समापत्तीनं भावनाकाले समथबल अधिकं होति। अनिच्चानुपस्सनादीनं भावनाकाले विपस्सनाबलं। अरियमग्गक्खणे

---

१ **दुभतो** ति। **उभतो दकारागमं** कत्वा एवं वुत्तं। **दुभा** ति वा पदन्तरमेवेत उभयसद्देन समानत्थं।

पन युगनद्धा[1] ते धम्मा पवत्तन्ति अञ्ञमञ्ञं अनतिवत्तनट्ठेन। तस्मा इमेसु चतूसु पि ञाणेसु उभयबलसमायोगो होति। यथाह—

"उद्धच्चसहगतकिलेसेहि च खन्धेहि च वुट्ठहतो चित्तस्स एकग्गता अविक्खेपो समाधि निरोधगोचरो, अविज्जासहगतकिलेसेहि च खन्धेहि च वुट्ठहतो अनुपस्सनट्ठेन विपस्सना निरोधगोचरा। इति वुट्ठानट्ठेन समथविपस्सना एकरसा होन्ति, युगनद्धा होन्ति, अञ्ञमञ्ञं नातिवत्तन्ती ति। तेन वुच्चति—वुट्ठानट्ठेन समथविपस्सनं युगनद्ध भावेती" (खु० ५-३४५) ति।

एवमेत्थ वुट्ठानबलसमायोगो वेदितब्बो ॥ (२)

पहातब्बधम्मपहानकथा

३०. **ये येन पहातब्बा धम्मा, तेसं पहानं चा** ति। इमेसु पन चतूसु ञाणेसु ये धम्मा येन ञाणेन पहातब्बा, तेसं पहान च जानितब्बं। एतानि हि यथायोगं सयोजन-किलेस-मिच्छत्त-लोकधम्म-मच्छरिय-विपल्लास-गन्थ-अगति-आसव-ओघ-योग-नीवरण-परामास-उपादान-अनुसय-मल-अकुसलकम्मपथ-चित्तुप्पादसङ्खातानं धम्मान पहानकरानि।

३१. तत्थ **संयोजनानी** ति। खन्धेहि खन्धानं फलेन कम्मस्स दुक्खेन वा सत्तान संयोजकत्ता रूपरागादयो दस धम्मा वुच्चन्ति। याव हि ते, ताव एतेसं अनुपरमो ति। तत्रापि रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्च, अविज्जा ति इमे पञ्च उद्ध निब्बत्तानकखन्धादिसंयोजकत्ता उद्धंभागियसयोजनानि नाम। सक्कायदिट्ठि, विचिकिच्छा, सीलब्बतपरामासो, कामरागो, पटिघो ति इमे पञ्च अधोनिब्बत्तानकखन्धादिसंयोजकत्ता **अधोभागियसंयोजनानि** नाम। (१)

किलेसा ति। सय संकिलिट्ठत्ता सम्पयुत्तधम्मानं च संकिलेसिकत्ता लोभो, दोसो, मोहो, मानो, दिट्ठि, विचिकिच्छा, थीन, उद्धच्चं, अहिरिकं, अनोत्तप्पं ति इमे दस धम्मा। (२)

मिच्छत्ता ति। मिच्छापवत्तनतो मिच्छादिट्ठि, मिच्छासङ्कप्पो, मिच्छावाचा, मिच्छाकम्मन्तो, मिच्छाआजीवो, मिच्छावायामो, मिच्छासति, मिच्छासमाधी ति इमे अट्ठ धम्मा। मिच्छाविमुत्ति मिच्छाञाणेहि वा सद्धिं दस। (३)

लोकधम्मा ति। लोकप्पवत्तिया सति अनुपरमधम्मकत्ता लाभो, अलाभो, यसो, अयसो, सुख, दुक्खं, निन्दा, पससा ति इमे अट्ठ। इध पन कारणोपचारेन लाभादिवत्थुकस्स अनुनयस्स, अलाभादिवत्थुकस्स पटिघस्स चेतं लोकधम्मग्गहणेन गहणं कत ति वेदितब्बं। (४)

---

१. समानभावेन युगे नद्धा बद्धा विय होन्ती ति **युगनद्धा**।

मच्छरियानी ति। आवासमच्छरियं, कुलमच्छरियं, लाभमच्छरिय, धम्म-मच्छरिय, वण्णमच्छरियं ति इमासु आवासादीसु अञ्ञेस साधारणभावं असह्-नाकारेन पवत्तानि पञ्च मच्छरियानि। (५)

विपल्लासा ति। अनिच्च-दुक्ख-अनत्त-असुभेसु येव वत्थूसु "निच्च सुखं अत्ता सुभं" ति एव पवत्तो सञ्ञाविपल्लासो चित्तविपल्लासो दिट्ठिविपल्लासो ति इमे तयो। (६)

गन्था ति। नामकायस्स चेव रूपकायस्स च गन्थनतो अभिज्झादयो चत्तारो। यथा हि ते "अभिज्झा कायगन्थो, ब्यापादो कायगन्थो, सीलब्बतपरामासो कायगन्थो, इदसच्चाभिनिवेसो कायगन्थो" इच्चेव वुत्ता। (७)

अगती ति। छन्द-दोस-मोह्-भयेहि अकत्तब्बकरणस्स कत्तब्बाकरणस्स च अधिवचन। त हि अरियेहि अगन्तब्बत्ता अगती ति वुच्चति। (८)

आसवा ति। आरम्मणवसेन आगोत्रभुतो, आभवग्गतो च सवना, असंवुतेहि वा द्वारेहि घटछिद्देहि उदक विय सवनतो, निच्चपग्घरणट्ठेन संसारदुक्खस्स वा सवनतो कामराग-भवराग-मिच्छादिट्ठि-अविज्जानमेत अधिवचन। (९)

भवसागरे आकड्ढनट्ठेन दुरुत्तरणट्ठेन च **ओघा** ति पि, आरम्मणवियोगस्स चेव दुक्खवियोगस्स च अप्पदानतो **योगो** ति पि तेस येव अधिवचनं। (१०)

नीवरणानी ति। चित्तस्स आवरण-नीवरणपटिच्छादनट्ठेन कामच्छन्दा-दयो पञ्च। (११)

परामासो ति। तस्स तस्स धम्मस्स सभाव अतिकम्म परतो अभूतसभावं आमसनाकारेन पवत्तनतो मिच्छादिट्ठिया एतं अधिवचनं। (१२)

उपादानानी ति। सब्बाकारेन **पटिच्चसमुप्पादनिद्देसे** वुत्तानि कामुपा-दानादीनि चत्तारि। (१३)

अनुसया ति। थामगतट्ठेन कामरागानुसयो पटिघ-मान-दिट्ठि-विचि-किच्छा-भवराग-अविज्जानुसया ति एव वुत्ता कामरागादयो सत्त। ते हि थाम-गतत्ता पुनप्पुनं कामरागादीनं उप्पत्तिहेतुभावेन अनुसेन्ति येवा ति अनुसया। (१४)

मला ति। तेलञ्जनकलल विय सयं च असुद्धत्ता अञ्ञेस च असुद्धभाव-करणतो लोभ-दोस-मोहा तयो। (१५)

अकुसलकम्मपथा ति। अकुसलकम्मभावेन चेव दुग्गतीनं च पथभावेन पाणातिपातो, अदिन्नादानं, कामेसुमिच्छाचारो, मुसावादो, पिसुणवाचा, फरुस-वाचा, सम्फप्पलापो, अभिज्झा, ब्यापादो, मिच्छादिट्ठी ति इमे दस। (१६)

अकुसलचित्तुप्पादा ति। लोभमूला अट्ठ, दोसमूला द्वे, मोहमूला द्वे ति इमे द्वादस। (१८)

३२. इति एतेसं संयोजनादीनं धम्मान एतानि यथायोगं पहानकरानि। कथं? संयोजनेसु ताव—सक्कायदिट्ठि, विचिकिच्छा, सीलब्बतपरामासो, अपायगमनीया च कामरागपटिघा ति एते पञ्च धम्मा पठमञाणवज्झा। सेसा कामराग-पटिघा ओळारिका दुतियञाणवज्झा। सुखुमा ततियञाणवज्झा, रूपरागादयो पञ्च पि चतुत्थञाणवज्झा एव। परतो पि च यत्थ यत्थ एव-सद्देन नियम न करिस्साम, तत्थ तत्थ य य "उपरिञाणवज्झो" ति वक्खाम, सो सो पुरिमञाणेहि हतापायगमनीयादिभावो व हुत्वा उपरिञाणवज्झो होती ति वेदितब्बो।

३३ किलेसेसु—दिट्ठि-विचिकिच्छा पठमञाणवज्झा। दोसो ततियञाण-वज्झो, लोभ-मोह-मान-थीन-उद्धच्च-अहिरिक-अनोत्तप्पानि चतुत्थञाणवज्झानि।

मिच्छत्तेसु—मिच्छादिट्ठि, मुसावादो, मिच्छाकम्मन्तो, मिच्छाआजीवो ति इमे पठमञाणवज्झा। मिच्छासङ्कप्पो, पिसुणवाचा, फरुसवाचा ति इमे ततिय-ञाणवज्झा। चेतना येव चेत्थ वाचा ति वेदितब्बा। सम्फप्पलाप-मिच्छावायाम-सति-समाधि-विमुत्ति-ञाणानि चतुत्थञाणवज्झानि।

लोकधम्मेसु—पटिघो ततियञाणवज्झो। अनुनयो चतुत्थञाणवज्झो। यसे च पसंसाय च अनुनयो चतुत्थञाणवज्झो ति एके। मच्छरियानि पठमञाणवज्झानेव।

विपल्लासेसु—अनिच्चे निच्चं, अनत्तनि अत्ता ति च सञ्ञा-चित्त-दिट्ठि-विपल्लासा, दुक्खे सुख, असुभे सुभं ति दिट्ठिविपल्लासो चा ति इमे पठम-ञाणवज्झा। असुभे सुभं ति सञ्ञा-चित्तविपल्लासा ततियञाणवज्झा। दुक्खे सुखं ति सञ्ञा-चित्तविपल्लासा चतुत्थञाणवज्झा।

गन्थेसु—सीलब्बतपरामास-इदंसच्चाभिनिवेसकायगन्था पठमञाणवज्झा। ब्यापादकायगन्थो ततियञाणवज्झो। इतरो चतुत्थञाणवज्झो।

अगति पठमञाणवज्झा व।

आसवेसु–दिट्ठासवो पठमञाणवज्झो। कामासवो ततियञाणवज्झो। इतरे द्वे चतुत्थञाणवज्झा। ओघयोगेसु पि एसेव नयो।

नीवरणेसु—विचिकिच्छानीवरण पठमञाणवज्झ। कामच्छन्दो ब्यापादो कुक्कुच्चं ति तीणि ततियञाणवज्झानि। थीनमिद्ध-उद्धच्चानि चतुत्थञाणवज्झानि।

परामासो पठमञाणवज्झो व।

उपादानेसु - सब्बेसं पि लोकियधम्मानं वत्थुकामवसेन कामा ति आगतत्ता रूपारूपरागो पि कामुपादाने पतति, तस्मा त चतुत्थञाणवज्झ। सेसानि पठम-ञाणवज्झानि।

अनुसयेसु—दिट्ठि-विचिकिच्छानुसया पठमञाणवज्झा व। कामराग-पटिघानुसयातत्तियञाणवज्झा। मान-भवरागाविज्जानुसया चतुत्थञाणवज्झा।

मलेसु—दोसमलं ततियञाणवज्झ। इतरानि चतुत्थञाणवज्झनि।

अकुसलकम्मपथेसु—पाणातिपातो, अदिन्नादानं, मिच्छाचारो, मुसावादो, मिच्छादिट्ठी ति इमे पठमञाणवज्झा। पिसुणवाचा, फरुसवाचा, ब्यापादो ति तयो ततियञाणवज्झा। सम्फप्पलापाभिज्झा चतुत्थञाणवज्झा।

अकुसलचित्तुप्पादेसु—चत्तारो दिट्ठिसम्पयुत्ता विचिकिच्छासम्पयुत्तो चा ति पञ्च पठमञाणवज्झा व। द्वे पटिघसम्पयुत्ता ततियञाणवज्झा। सेसा चतुत्थञाणवज्झा ति।

यं च येन वज्झ, त तेन पहातब्ब नाम। तेन वुत्तं—"इति एतेस सयोजनादीनं धम्मानं एतानि यथायोगं पहानकरानी" ति।

३४ किं पनेतानि एते धम्मे अतीतानागते पजहन्ति, उदाहु पच्चुप्पन्ने ति? किं पनेत्थ यदि ताव अतीतानागते? अफलो वायामो आपज्जति। कस्मा? पहातब्बानं नत्थिताय। अथ पच्चुप्पन्ने? तथा पि अफलो, वायामेन सद्धिं पहातब्बानं अत्थिताय, संकिलेसिका च मग्गभावना आपज्जति, विप्पयुत्तता वा किलेसानं, न च पच्चुप्पन्नकिलेसो चित्तविप्पयुत्तो नाम अत्थी ति।

नायं आवेणिका चोदना। पाळियं येव हि—"स्वायं किलेसे पजहति, अतीते किलेसे पजहति, अनागते किलेसे पजहति, पच्चुप्पन्ने किलेसे पजहती" ति वत्वा, पुन "हञ्चि अतीते किलेसे पजहति, तेन हि खीण खेपेति, निरुद्धं निरोधेति, विगतं विगमेति, अत्थङ्गतं अत्थङ्गमेति। अतीतं यं नत्थि, त पजहती" ति च वत्वा, "न अतीते किलेसे पजहती" पि पटिक्खित्त। तथा "हञ्चि अनागते किलेसे पजहति, तेन हि अजात पजहति, अनिब्बत्त पजहति, अनुप्पन्न पजहति, अपातुभूत पजहति, अनागत यं नत्थि, तं पजहती" ति च वत्वा, "न अनागते किलेसे पजहती" ति पटिक्खित्तं। तथा "हञ्चि पच्चुप्पन्ने किलेसे पजहति, तेन हि रत्तो राग पजहति, दुट्ठो दोसं, मूळ्हो मोहं, विनिबद्धो मानं, परामट्ठो दिट्ठिं, विक्खेपगतो उद्धच्चं, अनिट्ठङ्गतो विचिकच्छ, थामगतो अनुसय पजहति। कण्हसुक्का धम्मा युगनद्धा व वत्तन्ति। सङ्किलेसिका मग्गभावना होती" ति च वत्वा, "न अतीते किलेसे पजहति, न अनागते, न पच्चुप्पन्ने किलसे पजहतो" ति सब्बं पटिक्खिपित्वा, "तेन हि नत्थि मग्गभावना, नत्थि फलसच्छिकिरिया, नत्थि किलेसप्पहानं, नत्थि धम्माभिसमयो" ति पञ्हापरियोसाने "न हि नत्थि मग्गभावना····पे०···नत्थि धम्माभिसमयो" **ति पटि**-जानित्वा "यथा कथ विया" ति वुत्ते इदं वुत्तं—

सेय्यथापि तरुणो रुक्खो अजातफलो, तमेनं पुरिसो मूले छिन्देय्य, ये तस्स रुक्खस्स अजातफला, ते अजाता येव न जायन्ति, अनिब्बत्ता येव न निब्बत्तन्ति, अनुप्पन्ना येव न उप्पज्जन्ति, अपातुभूता येव न पातुभवन्ति, एवमेव 'उप्पादो हेतु उप्पादो पच्चयो किलेसान निब्बत्तिया' ति उप्पादे आदीनव दिस्वा अनुप्पादे चित्तं पक्खन्दति, अनुप्पादे चित्तस्स पक्खन्दत्ता ये आयूहनपच्चया किलेसा निब्बत्तेय्युं, ते अजाता येव न जायन्ति · पे० आपातुभूता येव न पातुभवन्ति। एव हेतुनिरोधा दुक्खनिरोधो। पवत्तं हेतु · पे० · निमित्त हेतु ···पे० · आयूहना हेतु ···पे० · अनायूहने चित्तस्स पक्खन्दत्ता ये आयूहनपच्चया किलेसा निब्बत्तेय्युं, ते अजाता येव ··पे०·· अपातुभूता येवा न पातुभवन्ति। एवं हेतुनिरोधा दुक्खनिरोधो। एव अत्थि मग्गभावना अत्थि फलसच्छिकिरिया, अत्थि किलेसप्पहान, अत्थि धम्माभिसमयो" (खु० ५-४८१-८२) ति।

३५. एतेन किं दीपितं होति? भूमिलद्धानं किलेसान पहानं दीपित होति। भूमिलद्धा पन किं अतीतानागता, उदाहु पच्चुप्पन्ना ति? भूमिलद्धुप्पन्ना एव नाम ते।

३६. उप्पन्नं हि वत्तमानभूतापगतोकासकतभूमिलद्धवसेन अनेकप्पभेदं। तत्थ सब्बं पि उप्पादजराभङ्गसमङ्गिसङ्खात **वत्तमानुप्पन्नं** नाम। आरम्मणरस अनुभवित्वा निरुद्ध अनुभूतापगतसङ्खात कुसलाकुसल, उप्पादादित्तय अनुप्पत्वा निरुद्धं भूतापगतसङ्खातं सेससङ्खतं च **भूतापगतुप्पन्नं** नाम। "यानिस्स तानि पुब्बेकतानि कम्मानी" (म० ३-२३४) ति एवमादिना नयेन वुत्तं कम्म अतीतं पि समानं अञ्ञं विपाकं पटिबाहित्वा अत्तनो विपाकस्सोकास कत्वा ठितत्ता तथा कतोकासं च विपाकं अनुप्पन्न पि समानं एव कते ओकासे एकन्तेन उप्पज्जनतो **ओकासकतुप्पन्नं** नाम। तासु तासु भूमीसु असमूहत अकुसल **भूमिलद्धुप्पन्नं** नाम।

३७ एत्थ च भूमिया भूमिलद्धस्स च नानत्त वेदितब्ब। **भूमी** ति हि विपस्सनाय आरम्मणभूता तेभूमका पञ्चक्खन्धा। **भूमिलद्धं** नाम तेसु खन्धेसु उप्पत्तिरहं किलेसजातं। तेन हि सा भूमिलद्धा नाम होती ति तस्मा भूमिलद्धं ति वुच्चति, सा च खो न आरम्मणवसेन।

आरम्मणवसेन हि सब्बे पि अतीतानागते परिञ्ञाते पि च खीणासवानं खन्धे आरब्भ किलेसा उप्पज्जन्ति, **महाकच्चान-उप्पलवण्णा**दीनं खन्धे आरब्भ **सोरेय्यसेट्ठि-नन्दमाणवका**दीन विय। यदि च तं भूमिलद्धं नाम सिया, तस्स अप्पहेय्यतो न कोचि भवमूलं पजहेय्य। वत्थुवसेन पन भूमिलद्धं वेदितब्ब। यत्थ यत्थ हि विपस्सनाय अपरिञ्ञाता खन्धा उप्पज्जन्ति, तत्थ तत्थ

उप्पादतो पभुति तेसु वट्टमूल किलेसजातं अनुसेति। तं अप्पहीनट्ठेन भूमिलद्धं ति वेदितब्ब।

३८. तत्थ च यस्स येसु खन्धेसु अप्पहीनट्ठेन अनुसयिता किलेसा, तस्स ते एव खन्धा तेस किलेसानं वत्थु, न अञ्ञेसं सन्तका खन्धा। अतीतक्खन्धेसु च अप्पहीनानुसयितान किलेसान अतीतक्खन्धा व वत्थु, न इतरे। एस नयो अनागतादीसु। तथा कामवचरक्खन्धेसु अप्पहीनानुसयितानं किलेसानं कामावचरक्खन्धा व वत्थु, न इतरे। एस नयो रूपारूपावचपेसु।

सोतापन्नादीसु पन यस्स यस्स अरियपुग्गलस्स खन्धेसु त तं वट्टमूलं किलेसजातं तेन तेन मग्गेन पहीनं, तस्स तस्स ते ते खन्धा पहीनानं तेसं तेसं वट्टमूलकिलेसानं अवत्थुतो भूमी ति सङ्खं न लभन्ति। पुथुज्जनस्स सब्बसो व वट्टमूलकिलेसानं अप्पहीनत्ता य किञ्चि करियमानं कम्मं कुसलं अकुसलं वा होति। इच्चस्स कम्मकिलेसपच्चया वट्टं वट्टति।

तस्सेतं वट्टमूलं रूपक्खन्धे येव, न वेदनाक्खन्धादीसु। विञ्ञाणक्खन्धे येव वा, न रूपक्खन्धादीसू ति न वत्तब्बं। कस्मा? अविसेसेन पञ्चसू पि खन्धेसु अनुसयितत्ता।

३९ कथं? पथवीरसादि विय रुक्खे। यथा हि महारुक्खे पथवीतलं अधिट्ठाय पथवीरस च आपोरसं च निस्साय तप्पच्चया मूल-खन्ध-साखा-पसाखा-पल्लव-पलास-पुप्फ-फलेहि वड्ढित्वा नभं पूरेत्वा याव कप्पावसाना बीजपरम्पराय रुक्खपवेणिं सन्तानयमाने ठिते त पथवीरसादि मूले येव, न खन्धादीसु पे० .. फले येव वा, न मूलादीसू त्ति न वत्तब्बं। कस्मा? अविसेसेन सब्बेसु मूलादीसु अनुगतत्ता ति।

यथा पन तस्सेव रुक्खस्स पुप्फफलादीसु निब्बिन्नो कोचि पुरिसो चतूसु दिसासू मण्डूककण्टकं नाम विसकण्टकं आकोटेय्य, अथ सो रुक्खो तेन विससम्फस्सेन फुट्ठो पथवीरसआपोरसानं परियादिण्णत्ता अप्पसवनधम्मत आगम्म पुन सन्तानं निब्बत्तेतु न सक्कुणेय्य; एवमेव खन्धपवत्तिय निब्बिन्नो कुलपुत्तो तस्स पुरिसस्स चतूसु दिसासु रुक्खे विसयोजनं विय अत्तनो सन्ताने चतुमग्गभावनं आरभति। अथस्स सो खन्धसन्तानो तेन चतुमग्गविससम्फस्सेन सब्बसो वट्टमूलक-किलेसानं परियादिण्णत्ता किरियभावमत्तं उपगतकायकम्मादिसब्बकम्मप्पभेदो हुत्वा आयतिं पुनब्भवानभिनिब्बत्तनधम्मतं आगम्म भवन्तरसन्तानं निब्बत्तेतु न सक्कोति। केवलं चरिमविञ्ञाणनिरोधेन निरिन्धनो विय जातवेदो अनुपादानो परिनिब्बायति। एवं भूमिया भूमिलद्धस्स च नानत्त वेदितब्बं।

४०. अपि च—अपरं पि समुदाचार-आरम्मणाधिग्गहित-अविक्खम्भित-असमूहतवसेन चतुब्बिधं उप्पन्न। तत्थ वत्तमानुप्पन्नमेव **समुदाचारुप्पन्नं**।

चक्खादीनं पन आपाथगते आरम्मणे पुब्बभागे अनुप्पज्जमान पि किलेसजातं आरम्मणस्स अधिग्गहितत्ता एव अपरभागे एकन्तेन उप्पत्तितो **आरम्मणाधिग्गहितुप्पन्नं** ति वुच्चति। कल्याणिगामे पिण्डाय चरतो महातिस्सत्थेरस्स विसभागरूपदस्सनेन उप्पन्नकिलेसजात विय। समथविपस्सनान अञ्ञतरवसेन अविक्खम्भित किलेसजात चित्तसन्ततिमनारूळ्ह पि उप्पत्तिनिवारकस्स हेतुनो अभावा **अविक्खम्भितुप्पन्नं** नाम। समथविपस्सनावसेन पन विक्खम्भितं पि अरियमग्गेन असमूहतत्ता उप्पत्तिधम्मत अनतीतताय **असमूहतुप्पन्नं** ति वुच्चति। आकासेन गच्छन्तस्स अट्ठसमापत्तिलाभिनो थेरस्स कुसुमितरुक्खे उपवने पुप्फानि उच्चिनन्तस्स मधुरेन सरेन गायतो मातुगामस्स गीतसवनेन उप्पन्नकिलेसजातं विय।

तिविध् पि चेत आरम्मणाधिग्गहिताविक्खम्भितअसमूहतुप्पन्न भूमिलद्धेनेव सङ्गहं गच्छती ति वेदितब्ब।

४१ इच्चेतस्मि वुत्तप्पभेदे उप्पन्ने यदेत वत्तमान भूतापगतोकासकत-समुदाचारसङ्खात चतुब्बिध उप्पन्न, त अमग्गवज्झत्ता केनचि पि ञाणेन पहातब्ब न न होति। य पनेतं भूमिलद्धारम्मणाधिग्गहित-अविक्खम्भित-असमूहतसङ्खात उप्पन्नं, तस्स तं उप्पन्नभाव विनासयमान यस्मा त त लोकिय-लोकुत्तरञाण उप्पज्जति, तस्मा तं सब्बं पि पहातब्बं होती ति।

एवमेत्थ ये येन पहातब्बा धम्मा, तेसं पहान च जानितब्बं॥ (३)

परिञ्ञादिकिच्चकथा

४२. **किच्चानि परिञ्ञादीनि यानि वुत्तानि अभिसमयकाले।**
तानि च यथासभावेन जानितब्बानि सब्बानी ति॥

सच्चाभिसमयकालस्मि हि एतेसु चतूसु ञाणेसु एकेकस्स एकक्खणे परिञ्ञा, पहानं, सच्छिकिरिया, भावना ति एतानि परिञ्ञादीनि चत्तारि किच्चानि वुत्तानि, तानि यथासभावेन जानितब्बानि। वुत्त हेत **पोराणेहि**—

"यथा पदीपो अपुब्बं अचरिमं एकक्खणे चत्तारि किच्चानि करोति— वट्टिं झापेति, अन्धकारं विधमति, आलोकं परिविदसेति, सिनेहं परियादियति, एवमेव मग्गञाण अपुब्बं अचरिमं एकक्खणे चत्तारि सच्चानि अभिसमेति, दुक्खं परिञ्ञाभिसमयेन अभिसमेति, समुदय पहानाभिसमयेन अभिसमेति, मग्गं भावनाभिसमयेन अभिसमेति, निरोधं सच्छिकिरियाभिसमयेन अभिसमेति। किं वुत्तं होति? निरोधं आरम्मणं करित्वा चत्तारि पि सच्चानि पापुणाति, पस्सति, पटिविज्झती" ति।

वुत्त पि चेत –"यो, भिक्खवे, दुक्खं पस्सति, दुक्खसमुदय पि सो पस्सति, दुक्खनिरोघ पि पस्सति, दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपद पि पस्सती" (स० ४–३७४) ति सब्बं वेदितब्ब।

अपरं पि वुत्त—"मग्गसमङ्गिस्स ञाण, दुक्खे पेत ञाण, दुक्खसमुदये पेत ञाण, दुक्खनिरोधे पेत ञाण, दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय पेत ञाण" (अभि० २–३९०) ति।

तत्थ यथा पदीपो वट्टिं झापेति, एव मग्गञाण दुक्ख परिजानाति। यथा अन्धकार विधमति, एव समुदय पजहति। यथा आलोक परिविदसेति, एव सहजातादिपच्चयताय सम्मासङ्कप्पादिधम्मसङ्खातं मग्ग भावेति। यथा सिनेह परियादियति, एव किलेसपरियादान निरोधं सच्छिकरोती ति एवं उपमा-ससन्दनं वेदितब्ब।

४३. अपरो नयो–यथा सुरियो उदयन्तो अपुब्बं अचरिमं सहपातुभावा चत्तारि किच्चानि करोति—रूपगतानि ओभासेति, अन्धकारं विधमति, आलोकं दस्सेति, सीतं पटिप्पसस्सम्भेति; एवमेव मग्गञाण··· पे० निरोध सच्छि-किरियाभिसमयेन अभिसमेति। इधापि यथा सुरियो रूपगतानि ओभासेति, एव मग्गञाणं दुक्खं परिजानाति। यथा अन्धकारं विधमति, एव समुदय पजहति। यथा आलोक दस्सेति, एव सहजातादिपच्चयताय मग्ग भावेति। यथा सीतं पटिप्पस्सम्भेति, एव किलेसपटिप्पस्सद्धि निरोध सच्छिकरोती ति एव उपमाससन्दनं वेदितब्ब।

४४ अपरो नयो—यथा नावा अपुब्बं अचरिम एकक्खणे चत्तारि किच्चानि करोति—ओरिमतीरं पजहति, सोत छिन्दति, भण्ड वहति, पारिमतीर अप्पेति; एवमेव मग्गञाणं · पे० ·· निरोधं सच्छिकिरियाभिसमयेन अभिसमेति। एत्थापि यथा नावा ओरिमतीर पजहति, एवं मग्गञाणं दुक्खं परिजानाति। यथा सोतं छिन्दति, एवं समुदय पजहति। यथा भण्डं वहति, एवं सहजातादिपच्चय-ताय मग्गं भावेति। यथा पारिमतीरभूतं निरोधं सच्छिकरोती ति एवं उपमा-संसन्दनं वेदितब्बं।

४५ एव सच्चाभिसमयकालस्मि एकक्खणे चतुन्नं किच्चानं वसेन पवत्त-ञाणस्स पनस्स सोळसहि आकारेहि तथट्ठेन चत्तारि सच्चानि एकपटिवेधानि होन्ति। यथाह—

"कथं तथट्ठेन चत्तारि किच्चानि एकपटिवेधानि? सोळसहि आकारेहि तथट्ठेन चत्तारि किच्चानि एकपटिवेधानि। **दुक्खस्स** पीळनट्ठो, सङ्खतट्ठो, सन्तापट्ठो, विपरिणामट्ठो, तथट्ठो। **समुदयस्स** आयूहनट्ठो, निदानट्ठो, संयोगट्ठो,

पलिबोधट्ठो, तथट्ठो। **निरोधस्स** निस्सरणट्ठो, विवेकट्ठो, असङ्खतट्ठो, अमतट्ठो, तथट्ठो। **मग्गस्स** निय्यानट्ठो, हेतुट्ठो, दस्सनट्ठो, अधिपतेय्यट्ठो, तथट्ठो। इमेहि सोळसहि आकारेहि तथट्ठेन चत्तारि सच्चानि एकसङ्गहितानि। यं एकसङ्गहितं तं एकत्त। यं एकत्त, त एकेन ञाणेन पटिविज्झती ति चत्तारि सच्चानि एकपटिवेधानी" (खु० ५–५३१) ति।

४६ तत्थ सिया यदा दुक्खादीन अञ्ञे पि रोगगण्डादयो अत्था अत्थि, अथ कस्मा चत्तारो येव वुत्ता ति? एत्थ वदाम—अञ्ञसच्चदस्सनवसेन आविभावतो। "तत्थ कतम दुक्खे ञाण? दुक्ख आरब्भ या उप्पज्जति पञ्ञा पजानना" (अभि० २–३९०) ति आदिना हि नयेन एकेकसच्चारम्मणवसेना पि सच्चञाण वुत्तं। "यो, भिक्खवे, दुक्ख पस्सति समुदय पि सो पस्सती" (सं० ४–३७४) ति आदिना नयेन एकं सच्च आरम्मण कत्वा सेसेसु पि किच्चनिप्फत्तिवसेना पि वुत्तं।

४७ तत्थ यदा एकेकं सच्च आरम्मणं करोति, तदा समुदयदस्सनेन ताव सभावतो पीळनलक्खणस्सापि दुक्खस्स, यस्मा त आयूहनलक्खणेन समुदयेन आयूहित सङ्खतं रासिकतं, तस्मास्स सो सङ्खतट्ठो आविभवति। यस्मा पन मग्गो किलेससन्तापहरो सुसीतलो, तस्मास्स दस्सनेन सन्तापट्ठो आविभवति। आयस्मतो **नन्दस्स** अच्छरादस्सनेन सुन्दरिया अनभिरूपभावो विय। अविपरिणामधम्मस्स पन निरोधस्स दस्सनेनस्स विपरिणामट्ठो आविभवती ति वत्तब्बमेवेत्थ नत्थि।

४८ तथा सभावतो आयूहनलक्खणस्सापि समुदयस्स, दुक्खदस्सनेन निदानट्ठो आविभवति, असप्पायभोजनतो उप्पन्नब्याधिदस्सनेन भोजनस्स ब्याधिनिदानभावो विय। विसंयोगभूतस्स निरोधस्स दस्सनेन सयोगट्ठो। निय्यानभूतस्स च मग्गस्स दस्सनेन पलिबोधट्ठो ति।

४९ तथा निस्सरणलक्खणस्सापि निरोधस्स, अविवेकभूतस्स समुदयस्स दस्सनेन विवेकट्ठो आविभवति। मग्गदस्सनेन असङ्खतट्ठो, इमिना हि अनमतग्गसंसारे मग्गो न दिट्ठपुब्बो, सो पि च सप्पच्चयत्ता सङ्खतो येवा ति अप्पच्चयधम्मस्स असङ्खतभावो अतिविय पाकटो होति। दुक्खदस्सनेन पनस्स अमतट्ठो आविभवति, दुक्खं हि विसं, अमत निब्बान ति।

५०. तथा निय्यानलक्खणस्सापि मग्गस्स, समुदयदस्सनेन नायं हेतु निब्बानस्स पत्तिया, अयं हेतू ति हेतुट्ठो आविभवति। निरोधदस्सनेन दस्सनट्ठो, परमसुखुमानि रूपानि पस्सतो "विप्पसन्न मे चक्खु" ति चक्खुस्स विप्पसन्नभावो विय। दुक्खदस्सनेन अधिपतेय्यट्ठो, अनेकरोगातुरकपणजनदस्सनेन इस्सरजनस्स उळारभावो विया ति।

एवमेत्थ सलक्खणवसेन एकेकस्स, अञ्ञसच्चदस्सनवसेन च इतरेस तिण्ण तिण्ण आविभावतो एकेकस्स चत्तारो चत्तारो अत्था वुत्ता। मग्गक्खणे पन सब्बे चेते अत्था एकेनेव दुक्खादीसु चतुकिच्चेन ञाणेन पटिवेधं गच्छती ति। ये पन नानाभिसमय इच्छन्ति तेस उत्तरं अभिधम्मे **कथावत्थुस्मि** वुत्तमेव।

परिञ्ञादिप्पभेदकथा

५१. इदानि यानि तानि परिञ्ञादीनि चत्तारि किच्चानि वुत्तानि, तेसु—

तिविधा होति परिञ्ञा तथा पहान पि सच्छिकिरिया पि।
द्वे भावना अभिमता विनिच्छयो तत्थ ञातब्बो॥

५२ **तिविधा होति परिञ्ञा** ति। ञातपरिञ्ञा, तीरणपरिञ्ञा, पहान-परिञ्ञा—ति एव परिञ्ञा तिविधा होति।

तत्थ "अभिञ्ञापञ्ञा ञातट्ठेन ञाण" (खु० ५-४) ति एव उद्दिसित्वा "ये ये धम्मा अभिञ्ञाता होन्ति, ते ते धम्मा ञाता होन्ती" (खु० ५-९८) ति एव सङ्खेपतो "सब्ब, भिक्खवे, अभिञ्ञेय्य। किञ्च, भिक्खवे, सब्ब अभिञ्ञेय्य? चक्खुं भिक्खवे, अभिञ्ञेय्य" (खु० ५-८) ति आदिना नयेन वित्थारतो वुत्ता ञातपरिञ्ञा नाम। तस्सा सप्पच्चयनामरूपाभिजानना आवेणिका भूमि।

"परिञ्ञापञ्ञा तीरट्ठेन ञाण" (खु० ५-४) ति एवं उद्दिसित्वा पन "ये ये धम्मा परिञ्ञाता होन्ति, ते ते धम्मा तीरिता होन्ती" (खु० ५-९८) ति एव सङ्खेपतो, "सब्ब, भिक्खवे, परिञ्ञेय्य। किञ्च, भिक्खवे, सब्बं परिञ्ञेय्य? चक्खु, भिक्खवे परिञ्ञेय्य" (खु० ५-२६) ति आदिना नयेन वित्थारतो वुत्ता **तीरणपरिञ्ञा नाम**। तस्सा कलापसम्मसनतो पट्ठाय अनिच्च दुक्खमनत्ता ति तीरणवसेन पवत्तमानाय याव अनुलोमा आवेणिका भूमि।

५४. "पहानपञ्ञा परिच्चागट्ठेन ञाणं" (खु० ५-४) ति एव पन उद्दिसित्वा "ये ये धम्मा पहीना होन्ति, ते ते धम्मा परिच्चत्ता होन्ती" (खु० ५-९८) ति एव वित्थारतो वुत्ता "अनिच्चानुपस्सनाय निच्चसञ्ञं पजहती" ति आदिनयप्पवत्ता **पहानपरिञ्ञा**। तस्सा भङ्गानुपस्सनतो पट्ठाय याव मग्गञाणा भूमि, अयं इध अधिप्पेता।

यस्मा वा ञाततीरणपरिञ्ञायो पि तदत्था येव, यस्मा च ये धम्मे पजहति, ते नियमतो ञाता चेव तीरता च होन्ति, तस्मा परिञ्ञात्तय पि इमिना परि-यायेन मग्गञाणस्स किच्च ति वेदितब्बं।

५५. **तथा पहानं पी** ति। पहानं पि हि विक्खम्भनप्पहान, तदङ्गप्पहान, समुच्छेदप्पहानं ति परिञ्ञा विय तिविधमेव होति।

तत्थ य ससेवाले उदके पक्खित्तेन घटेन सेवालस्स विय तेन तेन लोकिय-समाधिना नीरणादीनं पच्चनीकधम्मान विक्खम्भनं, इदं **विक्खम्भनप्पहानं** नाम। **पाळियं** पन "विक्खम्भनपहान च नीवरणान पठमं झान भावयतो" (खु० ५-३०) ति नीवरणानं येव विक्खम्भन वुत्तं, तं पाकटत्ता वुत्तं ति वेदितब्ब। नीवरणानि हि झानस्स पुब्बभागे पि पच्छाभागे पि न सहसा चित्त अज्झोत्थरन्ति, वितक्कादयो अप्पितक्खणे येव। तस्मा नीवरणान विक्खम्भनं पाकटं।

५६ य पन रत्तिभागे समुज्जलितेन पदीपेन अन्धकारस्स विय तेन विपस्सनाय अवयवभूतेन ञाणङ्गेन पटिपक्खवसेनेव तस्स तस्स पहातब्बधम्मस्स पहान, इदं **तदङ्गप्पहानं** नाम। सेय्यथीद—नामरूपपरिच्छेदेन ताव सक्कायदिट्ठिया। पच्चयपरिग्गहेन अहेतुविसमहेतुदिट्ठिया चेव कङ्खामलस्स च। कलापसम्मसनेन "अह ममा" ति समूहगाहस्स। मग्गामग्गववत्थानेन अमग्गे मग्गसञ्ञाय। उदयदस्सनेन उच्छेददिट्ठिया। वयदस्सनेन सस्सतदिट्ठिया। भयतुपट्ठानेन सभये अभयसञ्ञाय। आदीनवदस्सनेन अस्सादसञ्ञाय। निब्बिदानुपस्सनेन अभिरतिसञ्ञाय। मुञ्चितुकम्यताय अमुञ्चितुकामभावस्स। पटिसङ्खानेन अप्पटिसङ्खानस्स। उपेक्खाय अनुपेक्खनस्स। अनुलोमेन सच्चपटिलोमगाहस्स पहान।

य वा पन अट्ठारससु महाविपस्सनासु अनिच्चानुपस्सनाय निच्चसञ्ञाय, दुक्खानुपस्सनाय सुखसञ्ञाय, अनत्तानुपस्सनाय अत्तसञ्ञाय, निब्बिदानुपस्सनाय नन्दिया, विरागानुपस्सनाय रागस्स, निरोधानुपस्सनाय समुदयस्स। पटिनिस्सग्गानुपस्सनाय आदानस्स, खयानुपस्सनाय घनसञ्ञाय, वयानुपस्सनाय आयूहनस्स, विपरिणामानुपस्सनाय धुवसञ्ञाय, अनिमित्तानुपस्सनाय निमित्तस्स, अप्पणिहितानुपस्सनाय पणिधिया, सुञ्ञतानुपस्सनाय अभिनिवेसस्स, अधिपञ्ञाधम्मविपस्सनाय सारादानाभिनिवेसस्स, यथाभूतञाणदस्सनेन सम्मोहाभिनिवेसस्स, आदीनवानुपस्सनाय आलयाभिनिवेसस्स। पटिसङ्खानुपस्सनाय अप्पटिसङ्खाय, विवट्टानुपस्सनाय संयोगाभिनिवेसस्स पहानं। इदं पि **तदङ्गप्पहानमेव**।

५७ तत्थ यथा अनिच्चानुपस्सनादीहि सत्तहि निच्चसञ्ञादीनं पहानं होति, तं भङ्गानुपस्सने वुत्तमेव।

खयानुपसना ति पन घनविनिब्भोगं कत्वा "अनिच्चं खयट्ठेना" ति एव खय पस्सतो ञाण। तेन घनसञ्ञाय पहानं होति। **वयानुपस्सना** ति—

"आरम्मणान्वयेन उभो एकववत्थाना।
निरोधे अधिमुत्तता वयलक्खणविपस्सना॥" ति

एव वुत्ता पच्चक्खतो चेव अन्वयतो च सङ्खारानं भङ्गं दिस्वा तस्मि

येव भङ्गसङ्खाते निरोधे अधिमुत्तता, ताय आयूहनस्स पहानं होति। येस हि अत्थाय आयूहेय्य, "ते एव वयधम्मा" ति विपस्सतो आयूहने चित्त न नमति।

विपरिणामानुपस्सना ति। रूपसत्तकादिवसेन तं त परिच्छेद अतिक्कम्म अञ्ञथापवत्तिदस्सन। उप्पन्नस्स वा जराय चेव मरणेन च द्वीहाकारेहि विपरिणामदस्सन, ताय धुवसञ्ञाय पहान होति।

अनिमित्तानुपस्सना ति। अनिच्चानुपस्सना व। ताय निच्चनिमित्तस्स पहानं होति। **अप्पणिहितानुपस्सना** ति। दुक्खानुपस्सना व। ताय सुखपणिधि-सुखपत्थनापहान होति। **सुञ्ञतानुपस्सना** ति। अनत्तानुपस्सना व। ताय "अत्थि अत्ता" ति अभिनिवेसप्पहान होति।

अधिपञ्ञाधम्मविपस्सना ति।

"आरम्मण च पटिसङ्खा भङ्गं च अनुपस्सति।
सुञ्ञतो च उपट्ठान अधिपञ्ञा विपस्सना" ति॥

एव वुत्ता रूपादिआरम्मण जानित्वा तस्स च आरम्मणस्स तदारम्मणस्स च चित्तस्स भङ्ग दिस्वा "सङ्खारा व भिज्जन्ति, सङ्खारानं मरण, न अञ्ञो कोचि अत्थी" ति भङ्गवसेन सुञ्ञत गहेत्वा पवत्ता विपस्सना। "सा अधिपञ्ञा च धम्मेसु च विपस्सना" ति कत्वा अधिपञ्ञाधम्मविपस्सना ति वुच्चति, ताय निच्चसाराभावस्स च अत्तसाराभावस्स च सुट्ठु दिट्ठत्ता सारादानाभिनि-वेसस्स पहानं होति।

यथाभूतञाणदस्सन ति। सप्पच्चयनामरूपपरिग्गहो। तेन "अहोसिं नु खो अहं अतीतमद्धान" ति आदिवसेन चेव, "इस्सरतो लोको सम्भोती" ति आदिवसेन च पवत्तस्स सम्मोहाभिनिवेसस्स पहान होति।

आदीनवानुपस्सना ति। भयतुपट्ठानवसेन उप्पन्नं सब्बभवादीसु आदीनव-दस्सनञाण, तेन "किञ्चि अल्लीयितब्ब न दिस्सती" ति आलयाभिनिवेसस्स पहानं होति।

पटिसङ्खानुपस्सना ति। मुञ्चनस्स उपायकरणं पटिसङ्खाञाण, तेन अप्पटिसङ्खाय पहान होति।

विवट्टानुपस्सना ति। सङ्खारुपेक्खा चेव अनुलोम च। तदा हिस्स चित्तं ईसकपोणे पदुमपलासे उदकबिन्दु विय सब्बस्मा सङ्खारगता पतिलीयति, पतिकुटति, पतिवत्तती ति वुत्तं। तस्मा ताय संयोगाभिनिवेसस्स पहान होति, कामसयोगादिकस्स किलेसाभिनिवेसस्स किलेसप्पवत्तिया पहानं होती ति अत्थो। एवं वित्थारतो तदङ्गप्पहान वेदितब्बं। **पाळियं** पन "तदङ्गप्पहानं च दिट्ठिगतान निब्बेधभागियं समाधि भावयतो" (खु०५-३०) ति सङ्खेपेनेव वुत्तं।

५८ य पन असनिविचक्काभिहतस्स रुक्खस्स विय अरियमग्गञाणेन सयोजनादीन धम्मानं यथा न पुन पवत्ति, एवं पहानं, इदं **समुच्छेदप्पहानं** नाम। यं सन्धाय वुत्तं—"समुच्छेदप्पहान च लोकुत्तरं खयगामिमग्गं भावयतो" (खु० ५–३०) ति।

इति इमेसु तीसु पहानेसु समुच्छेदप्पहानमेव इध अधिप्पेतं। यस्मा पन तस्स योगिनो पुब्बभागे विक्खम्भन-तदङ्गप्पहानानि पि तदत्थानेव, तस्मा पहानत्तयं पि इमिना परियायेन मग्गञाणस्स किच्चं ति वेदितब्बं। पटिराजानं वधित्वा रज्जं पत्तेन हि य पि ततो पुब्बे कतं, सब्बं "इद चिद च रञ्ञा कत" ति येव वुच्चति।

५९ **सच्छिकिरिया पी** ति। लोकियसच्छिकिरिया, लोकुत्तरसच्छिकिरिया—ति द्वेधा भिन्ना पि लोकुत्तराय दस्सन-भावनावसेन भेदतो तिविधा होति।

तत्थ "पठमस्स झानस्स लाभीम्हि, वसीम्हि, पठम झान सच्छिकत मया" (वि० १–११८) ति आदिना नयेन आगता पठमज्झानादीनं फस्सना लोकियसच्छिकिरिया नाम। फस्सना ति अधिगन्त्वा "इद मया अधिगत" ति पच्चक्खतो ञाणफस्सेन फुसना। इममेव हि अत्थ सन्धाय 'सच्छिकिरिया पञ्ञा फस्सनट्ठेन ञाण" (खु० ५–४) ति उद्दिसित्वा "ये ये धम्मा सच्छिकता होन्ति, ते ते धम्मा फस्सिता होन्ती" (खु० ५–९८) ति सच्छिकिरियनिद्देसो वुत्तो।

अपि च अत्तनो सन्ताने अनुप्पादेत्वा पि ये धम्मा केवलं अपरपच्चयेन ञाणेन जाता, ते सच्छिकता होन्ति। तेनेव हि "सब्ब, भिक्खवे, सच्छिकातब्बं। किच्च, भिक्खवे, सब्ब सच्छिकातब्ब? चक्खु, भिक्खवे, सच्छिकातब्ब" (खु० ५–३९) ति आदि वुत्तं।

अपर पि वुत्त—"रूपं पस्सन्तो सच्छिकरोति। वेदनं ... पे० ... विञ्ञाणं पस्सन्तो सच्छिकरोति। चक्खुं पे० ... जरामरणं अमतोगध निब्बानं पस्सन्तो सच्छिकरोती ति। ये ये धम्मा सच्छिकता होन्ति, ते ते धम्मा फस्सिता होन्ती" (खु० ५–३९) ति।

६०. पठममग्गक्खणे पन निब्बानदस्सनं दस्सनसच्छिकिरिया, सेसमग्गक्खणेसु भावनासच्छिकिरिया ति। सा दुविधा पि इध अधिप्पेता। तस्मा दस्सनभावना-वसेन निब्बानस्स सच्छिकिरिया इमस्स ञाणस्स किच्च ति वेदितब्बं।

६१ **द्वे भावना अभिमता** ति। भावना पन लोकियभावना, लोकुत्तरभावना ति द्वे येव अभिमता। तत्थ लोकियानं सीलसमाधिपञ्ञानं उप्पादनं, ताहि च सन्तानवासन लोकियभावना। लोकुत्तरानं उप्पादन, ताहि च सन्तानवासनं लोकुत्तरभावना। तासु इध लोकुत्तरा अधिप्पेता। लोकुत्तरानि हि सीलादीनि

चतुब्बिधं पेतं ञाण उप्पादेति। तेसं सहजातपच्चयादिताय तेहि च सन्तानं वासेती ति लोकुत्तरभावना वस्स किच्चं ति। एवं—

किच्चानि परिञ्ञादीनि यानि वुत्तानि अभिसमयकाले।
तानि च यथासभावेन जानितब्बानि सब्बानी ति॥ (४)

६२ एत्तावता च—

"सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो चित्त पञ्ञ च भावय"।

ति एव सरूपेनेव आगताय पञ्ञाभावनाय विधानदस्सनत्थं य वुत्त—"मूलभूता द्वे विसुद्धियो सम्पादेत्वा सरीरभूता पञ्च विसुद्धियो सम्पादेन्तेन भावेतब्बा" (विसु०–३७३) ति, तं वित्थारित होति। **कथं भावेतब्बा** ति अय च पञ्हो विस्सज्जितो ति।

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे
पञ्ञाभावनाधिकारे ञाणदस्सनविसुद्धिनिद्देसो नाम
बावीसतिमो परिच्छेदो॥



पञ्ञाभावनानिसंसनिद्देसो

तेवीसतिमो परिच्छेदो

आनिसंसपकासनकथा

१ य पन वुत्तं—"**पञ्ञाभावनाय को अनिसंसो**" (विसु० ३६७) ति, तत्थ वदाम। अयं हि पञ्ञाभावना नाम अनेकसतानिसंसा। तस्सा दीघेना पि अद्धुना न सुकरं वित्थारतो आनिसंसं पकासेतु। सङ्खेपतो पनस्सा नानाकिलेसविद्धसनं, अरियफलरसानुभवनं, निरोधसमापत्तिसमापज्जनसमत्थता, आहुनेय्यभावादिसिद्धी ति अयमानिसंसो वेदितब्बो।

नानाकिलेसविद्धंसनकथा

२ तत्थ यं नामरूपपरिच्छेदतो पट्ठाय सक्कायदिट्ठादीन वसेन **नानाकिलेसविद्धंसनं** वुत्तं, अयं लोकिकाय पञ्ञाभावनाय आनिससो। यं अरियमग्गक्खणे संयोजनादीनं वसेन **नानाकिलेसविद्धसनं** वुत्तं, अय लोकुत्तराय पञ्ञाभावनाय आनिसंसो ति वेदितब्बो।

भीमवेगानुपतिता असनीव सिलुच्चये।
वायुवेगसमुट्ठितो अरञ्ञमिव पावको॥
अन्धकारं विय रवि सतेजुज्जलमण्डलो।
दीघरत्तानुपतितं सब्बानत्थविधायकं॥
किलेसजालं पञ्ञा हि विद्धंसयति भाविता।
सन्दिट्ठिकमतो जञ्ञा आनिससमिम इध॥

फलसमापत्तिकथा

३. **अरियफलरसानुभवनं** ति। न केवल च किलेसविद्धसनं येव, अरियफलरसानुभवनं पि पञ्ञाभावनाय आनिसंसो। अरियफल ति हि सोतापत्तिफलादिसामञ्ञफलं वुच्चति। तस्स द्वीहाकारेहि रसानुभवन होति—मग्गवीथिय च, फलसमापत्तिवसेन च पवत्तियं। तत्रास्स मग्गवीथियं पवत्ति दस्सिता येव[1]।

४ अपि च, ये "सयोजनप्पहानमत्तमेव फल नाम, न कोचि अञ्ञो धम्मो अत्थी" ति वदन्ति; तेसं अनुनयत्थ इदं सुत्त पि दस्सेतब्बं—"कथं पयोगपटिप्पस्सद्धिपञ्ञा फले ञाणं? सोतापत्तिमग्गक्खणे दस्सनट्ठेन सम्मादिट्ठि

१. बावीसतिमे परिच्छेदे दुतियाणप्पकरणे ति सेसो।

मिच्छादिट्ठिया वुट्ठाति, तदनुवत्तककिलेसेहि च खन्धेहि च वुट्ठाति, बहिद्धा च सब्बनिमित्तेहि वुट्ठाति। तम्पयोगपटिप्पस्सद्धत्ता उप्पज्जति सम्मादिट्ठि, मग्गस्सेतं फलं" (खु० ५–७८) ति वित्थारेतब्बं।

५ "चत्तारो मग्गा अपरियापन्ना, चत्तारि च सामञ्ञफलानि, इमे धम्मा अप्पमाणारम्मणा" (अभि० १–३००)। "महग्गतो धम्मो अप्पमाणस्स धम्मस्स अनन्तरपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ · २–३४१) ति एवमादीनि पि चेत्थ साधकानि। (१)

६. फलसमापत्तियं पवत्तिदस्सनत्थ पनस्स इदं पञ्हाकम्मं—का फलसमापत्ति ? के तं समापज्जन्ति ? के न समापज्जन्ति ? कस्मा समापज्जन्ति ? कथं चस्सा समापज्जनं होति ? कथं ठानं ? कथं वुट्ठानं ? किं फलस्स अनन्तरं ? कस्स च फलं अनन्तरं ति ?

७. तत्थ **का फलसमापत्ती** ति ? या अरियफलस्स निरोधे अप्पना।

८ **के तं समापज्जन्ति, के न समापज्जन्ती** ति ? सब्बे पि पुथुज्जना न समापज्जन्ति। कस्मा ? अनधिगतत्ता। अरिया पन सब्बे पि समापज्जन्ति। कस्मा ? अधिगतत्ता। उपरिमा पन हेट्ठिम न समापज्जन्ति, पुग्गलन्तरभावूपगमनेन पटिप्पस्सद्धत्ता। हेट्ठिमा च उपरिमं, अनधिगतत्ता। अत्तनो अत्तनो येव पन फलं समापज्जन्ती ति इदमेत्थ सन्निट्ठान।

केचि पन "सोतापन्नसकदागामिनो पि न समापज्जन्ति। उपरिमा द्वे येव समापज्जन्ती" ति वदन्ति। इद च तेस कारणं, एते हि समाधिस्मिं परिपूरकारिनो ति। त पुथुज्जनस्सा पि अत्तना पटिलद्धलोकियसमाधिसमापज्जनतो अकारणमेव। किं चेत्थ कारणाकारणचिन्ताय ? ननु **पाळियं** येव वुत्त—"कतमे दस गोत्रभुधम्मा विपस्सानावसेन उप्पज्जन्ति ? सोतापत्तिमग्गपटिलाभत्थाय उप्पाद पवत्तं · पे० उपायास बहिद्धा सङ्खारनिमित्त अभिभुय्यती ति गोत्रभु। सोतापत्तिफलसमापत्तत्थाय सकदागामिमग्गं · पे० अरहत्तफलसमापत्तत्थाय ·· सुञ्ञतविहारसमापत्तत्थाय अनिमित्तविहारसमापत्तत्थाय उप्पाद ·· पे० बहिद्धा सङ्खारनिमित्त अभिभुय्यती ति गोत्रभू" (खु० ५–७५) ति। तस्मा सब्बे पि अरिया अत्तनो अत्तनो फलं समापज्जन्ती ति निट्ठमेत्थ गन्तब्बं।

९. **कस्मा समापज्जन्ती** ति ? दिट्ठधम्मसुखविहारत्थं। यथा हि राजा रज्जसुखं, देवता दिब्बसुखं अनुभवन्ति; एव अरिया "अरियं लोकुत्तरसुखं अनुभविस्सामा" ति अद्धानप्परिच्छेदं कत्वा इच्छितिच्छितक्खणे फलसमापत्तिं समापज्जन्ति।

१० **कथं चस्सा समापज्जनं होति? कथं ठानं? कथं वुट्ठानं** ति? द्वीहि ताव आकारेहि अस्सा समापज्जनं होति—निब्बानतो अञ्ञस्स आरम्मणस्स अमनसिकारा, निब्बानस्स च मनसिकारा। यथाह—"द्वे खो, आवुसो, पच्चया अनिमित्ताय चेतोविमुत्तिया समापत्तिया सब्बनिमित्तानं च अमनसिकारो, अनिमित्ताय च धातुया मनसिकारो" (म० १–३६६) ति।

११. अय पनेत्थ समापज्जनक्कमो - फलसमापत्तत्थिकेन हि अरियसावकेन रहोगतेन पटिसल्लीनेन उदयब्बयादिवसेन सङ्खारा विपस्सितब्बा। तस्स पवत्तानुपुब्बविपस्सनस्स सङ्खारारम्मणगोत्रभुञाणानन्तरा फलसमापत्तिवसेन निरोधे चित्त अप्पेति। फलसमापत्तिनिन्नताय चेत्थ सेक्खस्सा पि फलमेव उप्पज्जति, न मग्गो।

१२. ये पन वदन्ति—"सोतापन्नो 'फलसमापत्तिं समापज्जिस्सामी' ति विपस्सन पट्ठपेत्वा सकदागामी होति। सकदागामी च अनागामी" ति? ते वत्तब्बा—"एव सति अनागामी अरहा भविस्सति, अरहा पच्चेकबुद्धो, पच्चेकबुद्धो च बुद्धो। तस्मा न किञ्चि एतं" पाळिवसेनेव च पटिक्खित्त ति पि न गहेतब्बं। इदमेव पन गहेतब्बं—सेक्खस्सा पि फलमेव उप्पज्जति, न मग्गो। फलं चस्स सचे अनेन पठमज्झानिको मग्गो अधिगतो होति। पठमज्झानिकमेव उप्पज्जति। सचे दुतियादीसु अञ्ञतरज्झानिको, दुतियादीसु अञ्ञतरज्झानिकमेवा ति। एव तावस्सा समापज्जनं होति।

१३. "तयो खो, आवुसो, पच्चया अनिमित्ताय चेतोविमुत्तिया ठितिया सब्बनिमित्तान च अमनसिकारो, अनिमित्ताय च धातुया मनसिकारो, पुब्बे च अभिसङ्खारो" (म० १–३६६) ति वचनतो पनस्सा तीहाकारेहि ठान होति। तत्थ **पुब्बे च अभिसङ्खारो** ति समापत्तितो पुब्बे कालपरिच्छेदो। 'असुकस्मि नाम काले वुट्ठहिस्सामी' ति परिच्छिन्नत्ता हिस्सा याव सो कालो नागच्छति, ताव ठानं होति। एवमस्सा ठान होती ति।

१४. "द्वे खो. आवुसो, पच्चया अनिमित्ताय चेतोविमुत्तिया वुट्ठानाय सब्बनिमित्तान च मनसिकारो, अनिमित्ताय च धातुया अमनसिकारो" (म० १–३६६) ति वचनतो पनस्सा द्वीहाकारेहि वुट्ठानं होति। तत्थ **सब्बनिमित्तानं** ति। रूपनिमित्त-वेदना-सञ्ञा-सङ्खार-विञ्ञाणनिमित्तानं। काम च न सब्बानेवेतानि एकतो मनसिकरोति, सब्बसङ्गाहिकवसेन पनेत वुत्त। तस्मा य भवङ्गस्स आरम्मण होति, तं मनसिकरोतो फलसमापत्तिवुट्ठान वेदितब्बं।

१५. **किं फलस्स अनन्तरं, कस्स च फलं अनन्तरं** ति? फलस्स ताव फलमेव वा अनन्तरं होति, भवङ्ग वा। फलं पन अत्थि मग्गान्तरं, अत्थि फलानन्तरं,

अत्थि गोत्रभुअनन्तरं, अत्थि नेवसञ्ञानासञ्ञायतनानन्तरं। तत्थ मग्गवीथियं मग्गानन्तरं, पुरिमस्स पुरिमस्स पच्छिमं पच्छिम फलानन्तरं। फलसमापत्तीसु पुरिमं पुरिमं गोत्रभुअनन्तरं। गोत्रभू ति चेत्थ अनुलोमं वेदितब्बं। वुत्तं हेतं **पट्ठाने**— "अरहतो अनुलोमं फलसमापत्तिया अनन्तरपच्चयेन पच्चयो"। "सेक्खानं अनुलोमं फलसमापत्तिया अनन्तरपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ . १–१२९) ति। येन फलेन निरोधा वुट्टानं होति, तं नेवसञ्ञानासञ्ञायतनान्तरं ति।

तत्थ ठपेत्वा मग्गवीथियं उप्पन्नं फल अवसेसं सब्बं फलसमापत्तिवसेन पवत्तं नाम। एवमेतं मग्गवीथियं फलसमापत्तियं वा उप्पज्जनवसेन—

पटिप्पस्सद्धदरथं अमतारम्मण सुभं।
वन्तलोकामिसं सन्त सामञ्ञफलमुत्तमं॥
ओजवन्तेन सुचिना सुखेन अभिसन्दितं।
येन सातातिसातेन अमतेन मधु विय॥
त सुख तस्स अरियस्स रसभ्तमनुत्तरं।
फलस्स पञ्ञं भावेत्वा यस्मा विन्दति पण्डितो॥
तस्मा अरियफलस्सेतं रसानुभवन इध।
विपस्सनाभावनाय आनिसंसो ति वुच्चति॥

निरोधसमापत्तिकथा

१६ **निरोधसमापत्तिसमापज्जनसमत्थता** ति। न केवलं च अरियफल-रसानुभवनं येव, अयं पन निरोधसमापत्तिया समापज्जनसमत्थता पि इमिस्सा पञ्ञाभावनाय आनिसंसो ति वेदितब्बो।

तत्रिद निरोधसमापत्तिया विभावनत्थ पञ्हाकम्म—का निरोधसमापत्ति? के तं समापज्जन्ति, के न समापज्जन्ति? कत्थ समापज्जन्ति? कस्मा समापज्जन्ति? कथं चस्सा समापज्जन होति? कथ ठान? कथं वुट्ठान? वुट्ठितस्स किं निन्नं चित्त होति? मतस्स च समापन्नस्स च को विसेसो? निरोधसमापत्ति किं सङ्खता असङ्खता, लोकिया लोकुत्तरा, निप्फन्ना अनिप्फन्ना ति?

१७ तत्थ **का निरोधसमापत्ती** ति? या अनुपुब्बनिरोधवसेन चित्तचेत-सिकानं धम्मानं अप्पवत्ति।

के तं समापज्जन्ति, के न समापज्जन्ती ति? सब्बे पि पुथुज्जना, सोतापन्ना, सकदागामिनो, सुक्खविपस्सका च अनागामिनो अरहन्तो न समापज्जन्ति। अट्ठसमापत्तिलाभिनो पन अनागामिनो खीणासवा च समापज्जन्ति। 'द्वीहि बलेहि समन्नागतत्ता, तयो च सङ्खारानं पटिप्पस्सद्धिया, सोळसहि ञाणचरियाहि,

नवहि समाधिचरियाहि वसीभावता पञ्ञा निरोधसमापत्तिया ञाणं" (खु० ५-४) ति हि वुत्तं। अयं च सम्पदा ठपेत्वा अट्ठसमापत्तिलाभिनो अनागामिखीणासवे अञ्ञेसं नत्थि। तस्मा ते येव समापज्जन्ति, न अञ्ञे।

१८ कतमानि पनेत्थ द्वे बलानि? पे० 'कतमा वसीभावता ति? न एत्थ किञ्चि अम्हेहि वत्तब्ब अत्थि। सब्बमिदं एतस्स उद्देसस्स **निद्देसे** वुत्तमेव।

यथाह—"**द्वीहि बलेही** ति। द्वे बलानि-समथबलं, विपस्सनाबलं। कतमं समथबलं? नेक्खम्मवसेन चित्तस्स एकग्गता अविक्खेपो समथबलं। अब्यापाद-वसेन' आलोकसञ्ञावसेन'' 'अविक्खेपवसेन''' पे०'' पटिनिस्सग्गानुपस्सिअस्सा-सवसेन' ''पटिनिस्सग्गानुपस्सिपस्सासवसेन चित्तस्स एकग्गता अविक्खेपो समथबलं ति।

"केनट्ठेन समथबलं? पठमज्झानेन नीवरणे न कम्पती ति समथबलं। दुतियज्झानेन वितक्कविचारे ' पे०' नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्तिया आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञाय न कम्पती ति समथबलं। उद्धच्चे च उद्धच्च-सहगतकिलेसे च खन्धे च न कम्पति, न चलति, न वेधती ति समथबलं। इदं **समथबलं**।

१९. "कतम विपस्सनाबल? अनिच्चानुपस्सना विपस्सनाबलं। दुक्खानुप-स्सना निब्बिदानुपस्सना विरागानुपस्सना'' 'निरोधानुपस्सना ' पटिनिस्सग्गा-नुपस्सना विपस्सनाबलं। रूपे अनिच्चानुपस्सना'' पे०''' रूपे पटिनिस्सग्गानुपस्सना विपस्सनाबलं। वेदनाय सञ्ञाय सङ्खारेसु विञ्ञाणे'' पे० चक्खुस्मि ''' जरामरणे अनिच्चानुपस्सना। जरामरणे पटिनिस्सग्गानुपस्सना विपस्सनाबलं ति।

"केनट्ठेन विपस्सनाबलं? अनिच्चानुपस्सनाय निच्चसञ्ञाय न कम्पती ति विपस्सनाबलं। दुक्खानुपस्सनाय सुखसञ्ञाय न कम्पती ति '' अनत्तानुपस्सनाय अत्तसञ्ञाय न कम्पती ति''''निब्बिदानुपस्सनाय नन्दिया न कम्पती ति'''' विरागानुपस्सनाय रागे न कम्पती ति'' निरोधानुपस्सनाय समुदये न कम्पती ति पटिनिस्सग्गानुपस्सनाय आदाने न कम्पती ति विपस्सनाबलं। अविज्जाय च अविज्जासहगतकिलेसे च खन्धे च न कम्पति, न चलति, न वेधती ति विपस्सनाबलं। इदं **विपस्सनाबलं**।

२०. "**तयो च सङ्खारानं पटिप्पस्सद्धिया** ति। कतमेसं तिण्णन्नं सङ्खारानं पटिप्पस्सद्धिया? दुतियज्झान समापन्नस्स वितक्कविचारा वचीसङ्खारा पटिप्पस्सद्धा होन्ति। चतुत्थं झानं समापन्नस्स अस्सासपस्सासा कायसङ्खारा पटिप्पस्सद्धा होन्ति। सञ्ञावेदयितनिरोधं समापन्नस्स सञ्ञा च वेदना च चित्तसङ्खारा पटिप्पस्सद्धा होन्ति। इमेसं तिण्णन्नं सङ्खारानं पटिप्पस्सद्धिया।

२१. "**सोळसहि ञाणचरियाही** ति। कतमाहि सोळसहि ञाणचरियाहि? अनिच्चानुपस्सना ञाणचरिया। दुक्खा... अनत्ता... निब्बिदा ...विरागा... निरोधा ...पटिनिस्सग्गा... विवट्टानुपस्सना ञाणचरिया। सोतापत्तिमग्गो ञाणचरिया। सोतापत्तिफलसमापत्ति ञाणचरिया। सकदागामिमग्गो... पे०... अरहत्तफलसमापत्ति ञाणचरिया। इमाहि सोळसहि ञाणचरियाहि।

२२. "**नवहि समाधिचरियाही** ति। कतमाहि नवहि समाधिचरियाहि? पठमज्झानं समाधिचरिया। दुतियज्झानं ...पे०... नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्ति समाधिचरिया। पठमज्झानपटिलाभत्थाय वितक्को च विचारो च पीति च सुखं च चित्तेकग्गता च ...पे०... नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्तिं पटिलाभत्थाय वितक्को च विचारो च पीति च सुख च चित्तेकग्गता च। इमाहि नवहि समाधिचरियाहि।

२३. "**वसी** ति। पञ्च वसियो—आवज्जनवसी, समापज्जनवसी, अधिट्ठानवसी, वुट्ठानवसी, पच्चवेक्खणवसी। पठमज्झानं यत्थिच्छकं यदिच्छक यावतिच्छकं आवज्जति, आवज्जनाय दन्धायितत्तं नत्थी ति आवज्जनवसी। पठमज्झानं यत्थिच्छकं यदिच्छकं यावतिच्छकं समापज्जति, समापज्जनाय दन्धायितत्तं नत्थी ति समापज्जनवसी ...पे०... अधिट्ठाति, अधिट्ठाने ...पे०... वुट्ठाति, वुट्ठाने ...पे०... पच्चवेक्खति, पच्चवेक्खणाय दन्धायितत्तं नत्थी ति पच्चवेक्खणवसी। दुतियं ...पे०... नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्तिं यत्थिच्छकं यदिच्छकं यावतिच्छकं आवज्जति...पे०... पच्चवेक्खति। पच्चवेक्खणाय दन्धायितत्तं नत्थी ति पच्चवेक्खणवसी। इमा पञ्च वसियो" (खु० ५-११०-११३) ति।

२४. एत्थ च "**सोळसहि ञाणचरियाही**" ति उक्कट्ठनिद्देसो एस। अनागामिनो पन चुद्दसहि ञाणचरियाहि होति। यदि एव सकदागामिनो द्वादसहि, सोतापन्नस्स च दसहि किं न होती ति? न होति; समाधिपारिपन्थिकस्स पञ्चकामगुणिकरागस्स अप्पहीनत्ता। तेसं हि सो अप्पहीनो। तस्मा समथबल न परिपुण्णं होति। तस्मिं अपरिपूरे द्वीहि बलेहि समापज्जितब्ब निरोधसमापत्तिं बलवेकल्लेन समापज्जितु न सक्कोन्ति। अनागामिस्स पन सो पहीनो, तस्मा एस परिपुण्णबलो होति। परिपुण्णबलत्ता सक्कोति। तेनाह भगवा—"निरोधा वुट्ठहन्तस्स नेवसञ्ञानासञ्ञायतनकुसलं फलसमापत्तिया अनन्तरपच्चयेन पच्चयो" (अभि० ७ : १-१२९) ति। इदं हि **पट्ठाने** महापकरणे अनागामिनो व निरोधा वुट्ठानं सन्धाय वुत्तं ति।

२५. **कत्थ समापज्जन्ती** ति? पञ्चवोकारभवे। कस्मा? अनुपुब्बसमापत्तिसब्भावतो। चतुवोकारभवे पन पठमज्झानादीनं उप्पत्ति नत्थि। तस्मा न सक्का तत्थ समापज्जितु ति। केचि पन "वत्थुस्स अभावा" ति वदन्ति।

२६. **कस्मा समापज्जन्ती** ति ? सङ्खारान पवत्तिभेदे उक्कण्ठित्वा दिट्ठेव धम्मे अचित्तिका हुत्वा "निरोध निब्बानं पत्वा सुखं विहरिस्सामा" ति समापज्जन्ति।

२७ **कथं चस्सा समापज्जनं होती** ति ? समथविपस्सनावसेन उस्सक्कित्वा कतपुब्बकिच्चस्स नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं निरोधयतो। एवमस्स समापज्जनं होति। यो हि समथवसेनेव उस्सक्कति, सो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्ति पत्वा तिट्ठति। यो पन विपस्सनावसेनेव उस्सक्कति, सो फलसमापत्ति पत्वा तिट्ठति। यो पन उभयवसेनेव उस्सक्कित्वा पुब्बकिच्च कत्वा नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं निरोधेति, सो त समापज्जती ति अयमेत्थ सङ्खेपो।

२८. अयं पन वित्थारो—इध भिक्खु निरोधं समापज्जितुकामो कतभत्तकिच्चो सुधोतहत्थपादो विवित्ते ओकासे सुपञ्ञत्तम्हि आसने निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजु कायं पणिधाय परिमुख सतिं उपट्ठपेत्वा, सो पठम झानं समापज्जित्वा वुट्ठाय तत्थ सङ्खारे अनिच्चतो दुक्खतो अनत्ततो विपस्सति।

२९. विपस्सना पनेसा तिविधा होति—सङ्खारपरिगण्हनकविपस्सना, फलसमापत्तिविपस्सना, निरोधसमापत्तिविपस्सना ति। तत्थ सङ्खारपरिगण्हनकविपस्सना मन्दा वा होतु तिक्खा वा, मग्गस्स पदट्ठानं होति येव। फलसमापत्तिविपस्सना तिक्खा व वट्टति मग्गभावनासदिसा। निरोधसमापत्तिविपस्सना पन नातिमन्द-नातितिक्खा वट्टति। तस्मा एस नातिमन्दाय नातितिक्खाय विपस्सनाय ते सङ्खारे विपस्सति।

३०. ततो दुतिय झानं समापज्जित्वा वुट्ठाय तत्थ सङ्खारे तथेव विपस्सति। ततो ततियं झानं · पे० ··ततो विञ्ञाणञ्चायतनं समापज्जित्वा वुट्ठाय तत्थ सङ्खारे तथेव विपस्सति। अथ आकिञ्चञ्ञायतनं समापज्जित्वा वुट्ठाय चतुब्बिधं पुब्बकिच्चं करोति—नानाबद्धअविकोपनं, सङ्घपटिमाननं, सत्थुपक्कोसनं, अद्धानपरिच्छेदं ति।

३१. तत्थ **नानाबद्धअविकोपनं** ति। यं इमिना भिक्खुना सद्धिं एकाबद्धं न होति, नानाबद्धं हुत्वा ठितं पत्तचीवरं वा मञ्चपीठं वा निवासगेहं वा अञ्ञं वा पन किञ्चि परिक्खारजातं, तं यथा न विकुप्पति, अग्गि-उदक-वात-चोर-उन्दूरादीनं वसेन न विनस्सति, एवं अधिट्ठातब्बं। तत्रिदं अधिट्ठानविधानं—"इदं चिदं च इमस्मिं सत्ताहब्भन्तरे मा अग्गिना झायतु, मा उदकेन वुय्हतु, मा वातेन विद्धंसतु, मा चोरेहि हरियतु, मा उन्दूरादीहि खज्जतू" ति। एवं अधिट्ठिते तं सत्ताहं न तस्स कोचि परिस्सयो होति।

अनधिट्ठहतो पन अग्गिआदीहि विनस्सति महानागत्थेरस्स विय। थेरो किर मातुउपासिकाय गामं पिण्डाय पाविसि। उपासिका यागुं दत्वा आसनसालाय

निसीदापेसि। थेरो निरोध समापज्जित्वा निसीदि। तस्मि निसिन्ने आसनसालाय अग्गिना गहिताय सेसभिक्खू अत्तनो अत्तनो निसिन्नासनं गहेत्वा पलायिंसु। गामवासिका सन्निपतित्वा थेरं दिस्वा "अलससमणो" ति आहंसु। अग्गि तिणवेणुकट्ठानि झापेत्वा थेरं परिक्खिपित्वा अट्ठासि। मनुस्सा घटेहि उदक आहरित्वा निब्बापेत्वा छारिक अपनेत्वा परिभण्ड कत्वा पुप्फानि विकिरित्वा नमस्समाना अट्ठंसु। थेरो परिच्छिन्नकालवसेन वुट्ठाय ते दिस्वा "पाकटोम्हि जातो" ति वेहासं उप्पतित्वा पियङ्गुदीपं अगमासि। इदं नानाबद्धअविकोपन नाम।

यं एकाबद्ध होति निवासनपावुरणं वा निसिन्नासनं वा, तत्थ विसु अधिट्ठान-किच्चं नत्थि। समापत्तिवसेनेव नं रक्खति आयस्मतो सञ्जीवस्स विय। वुत्त पि चेतं—"आयस्मतो सञ्जीवस्स समाधिविप्फारा इद्धि। आयस्मतो सारिपुत्तस्स समाधिविप्फारा इद्धी" (खु० ५-४७४) ति।

३२. **सङ्घपटिमाननं** ति। सङ्घस्स पटिमाननं उदिक्खनं। याव एसो भिक्खु आगच्छति, ताव सङ्घकम्मस्स अकरण ति अत्थो। एत्थ च न पटिमानन एतस्स पुब्बकिच्च, पटिमाननावज्जन पन पुब्बकिच्च। तस्मा एवं आवज्जि-तब्बं—"सचे मयि सत्ताह निरोध समापज्जित्वा निसिन्ने सङ्घो ञत्तिकम्मादीसु किञ्चिदेव कम्म कत्तुकामो होति, याव मं कोचि भिक्खु आगन्त्वा न पक्कोसति, तावदेव वुट्ठहिस्सामी" ति। एव कत्वा समापन्नो हि तस्मि समये वुट्ठाति येव।

यो पन एव न करोति, सङ्घो च सन्निपतित्वा तं अपस्सन्तो "असुको भिक्खु कुहि" ति? "निरोधसमापन्नो" ति वुत्ते सङ्घो कञ्चि भिक्खु पेसेति—"गच्छ, नं सङ्घस्स वचनेन पक्कोसाही" ति। अथस्स तेन भिक्खुना सवनूपचारे ठत्वा "सङ्घो तं, आवुसो, पटिमानेती" ति वुत्तमत्ते व वुट्ठान होति। एवं गरुका हि सङ्घस्स आणा नाम। तस्मा त आवज्जित्वा यथा सयमेव वुट्ठाति, एवं समापज्जितब्बं।

३३. **सत्थुपक्कोसनं** ति। इधापि सत्थुपक्कोसनावज्जनमेव इमस्स किच्चं। तस्मा त पि एव आवज्जितब्बं—"सचे मयि सत्ताहं निरोध समापज्जित्वा निसिन्ने सत्था ओतिण्णवत्थुस्मि सिक्खापदं वा पञ्ञपेति, तथारूपाय वा अत्थुप्पत्तिया धम्मं देसेति, याव म कोचि आगन्त्वा न पक्कोसति, तावदेव वुट्ठहिस्सामी" ति। एव कत्वा निसिन्नो हि तस्मि समये सो वुट्ठाति येव।

यो पन एवं न करोति, सत्था च सङ्घे सन्निपतिते त अपस्सन्तो "असुको भिक्खु कुहिं" ति? "निरोधसमापन्नो" ति वुत्ते कञ्चि भिक्खुं पेसेति—"गच्छ, नं मम वचनेन पक्कोसा" ति। अथस्स तेन भिक्खुना सवनूपचारे ठत्वा "सत्था

आयस्मन्तं आमन्तेती" ति वुत्तमत्ते व वुट्ठानं होति। एवं गरुकं हि सत्थु-पक्कोसनं। तस्मा तं आवज्जित्वा यथा सयमेव वुट्ठाति, एवं समापज्जितब्बं।

३४. **अद्धानपरिच्छेदो** ति। जीवितद्धानस्स परिच्छेदो। इमिना भिक्खुना अद्धानपरिच्छेदे सुकुसलेन भवितब्बं। अत्तनो "आयुसङ्खारा सत्ताहं पवत्तिस्सन्ति न पवत्तिस्सन्ती" ति आवज्जित्वा व समापज्जितब्बं। सचे हि सत्ताहब्भन्तरे निरुज्झनके आयुसङ्खारे अनावज्जित्वा व समापज्जति, नास्स निरोधसमापत्ति मरणं पटिबाहितुं सक्कोति। अन्तोनिरोधे मरणस्स नत्थिताय अन्तरा व समापत्तितो वुट्ठाति। तस्मा एतं आवज्जित्वा व समापज्जितब्बं। अवसेसं हि अनावज्जितुं पि वट्टति। इदं पन आवज्जितब्बमेवा ति वुत्तं।

३५ सो एवं आकिञ्चञ्ञायतनं समापज्जित्वा वुट्ठाय इमं पुब्बकिच्चं कत्वा नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समापज्जति। अथेकं वा द्वे वा चित्तवारे अतिक्कमित्वा अचित्तको होति, निरोधं फुसति। कस्मा पनस्स द्विन्नं चित्तानं उपरिचित्तानि न पवत्तन्ती ति? निरोधस्स पयोगत्ता। इदं हि इमस्स भिक्खुनो द्वे समथविपस्सनाधम्मे युगनद्धे कत्वा अट्ठसमापत्तिआरोहनं अनुपुब्बनिरोधस्स पयोगो, न नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्तिया ति निरोधस्स पयोगत्ता द्विन्नं चित्तानं उपरि न पवत्तन्ति।

३६. यो पन भिक्खु आकिञ्ञायतनतो वुट्ठाय इदं पुब्बकिच्चं अकत्वा नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समापज्जति, सो परतो अचित्तको भवितुं न सक्कोति, पटिनिवत्तित्वा पन आकिञ्चञ्ञायतने येव पतिट्ठाति।

मग्गं अगतपुब्बपुरिसूपमा चेत्थ वत्तब्बा—एको किर पुरिसो एकं मग्गं अगतपुब्बो अन्तरा उदककन्दरं वा गम्भीरं उदकचिक्खल्लं अतिक्कमित्वा ठपितं चण्डातपसन्तत्तं पासाणं वा आगम्म तं निवासनपावुरणं असण्ठपेत्वा व कन्दरं ओरूळ्हो परिक्खारतेमनभयेन पुनदेव तीरे पतिट्ठाति। पासाणं अक्कमित्वा पि सन्तत्तपादो पुनदेव ओरभागे पतिट्ठाति।

तत्थ यथा सो पुरिसो असण्ठपितनिवासनपावुरणत्ता कन्दरं ओतिण्णमत्तो व, तत्तपासाणं अक्कन्तमत्तो एव च पटिनिवत्तित्वा ओरतो व पतिट्ठाति; एवं योगावचरो पि पुब्बकिच्चस्स अकतत्ता नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समापन्नमत्तो व पटिनिवत्तित्वा आकिञ्ञायतने पतिट्ठाति।

३७. यथा पन पुब्बे पि तं मग्गं गतपुब्बपुरिसो तं ठानं आगम्म एकं साटकं दळ्हं निवासेत्वा अपरं हत्थेन गहेत्वा कन्दरं उत्तरित्वा तत्तपासाणं वा अक्कन्तमत्तकमेव कत्वा परतो गच्छति; एवमेव कतपुब्बकिच्चो भिक्खु नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समापज्जित्वा व परतो अचित्तको हुत्वा निरोधं फुसित्वा विहरति।

३८ **कथं ठानं** ति। एवं समापन्नाय पनस्सा कालपरिच्छेदवसेन चेव अन्तरा आयुक्खय-सङ्घपटिमानन-सत्थुपक्कोसनाभावेन च ठानं होति।

३९. **कथं वुट्ठानं** ति? अनागामिस्स अनागामिफलुप्पत्तिया, अरहतो अरहत्तफलुप्पत्तिया—ति एवं द्वेधा वुट्ठान होति।

४०. **वुट्ठितस्स किंनिन्नं चित्तं होती** ति। निब्बाननिन्नं। वुत्तं हेतं—"सञ्ञावेदयितनिरोधसमापत्तिया वुट्ठितस्स खो, आवुसो विसाख, भिक्खुनो विवेकनिन्नं चित्त होति, विवेकपोणं विवेकपब्भारं" (म० १–३७३) ति।

४१ **मतस्स च समापन्नस्स च को विसेसो** ति? अय पि अत्थो **सुत्ते** वुत्तो येव। यथाह—"य्वायं, आवुसो, मतो कालङ्कतो, तस्स कायसङ्खारा निरुद्धा पटिप्पस्सद्धा, वचीसङ्खारा चित्तसङ्खारा निरुद्धा पटिप्पस्सद्धा, आयु परिक्खीणो, उस्मा वूपसन्ता, इन्द्रियानि परिभिन्नानि, यो चाय भिक्खु सञ्ञावेदयित-निरोध समापन्नो, तस्स पि कायसङ्खारा निरुद्धा पटिप्पस्सद्धा, वचीसङ्खारा चित्तसङ्खारा निरुद्धा पटिप्पस्सद्धा, आयु अपरिक्खीणो, उस्मा अवूपसन्ता, इन्द्रियानि अपरिभिन्नानी" (म० १–३६५) ति।

४२. **निरोधसमापत्ति किं सङ्खता असङ्खता** ति आदिपुच्छाय पन सङ्खता ति पि असङ्खता ति पि लोकिया ति पि लोकुत्तरा ति पि न वत्तब्बा। कस्मा? सभावतो नत्थिताय। यस्मा पनस्सा समापज्जन्तस्स वसेन समापन्ना नाम होति, तस्मा विप्फन्ना ति वत्तु वट्टति, नो अनिप्फन्ना।

इति सन्तं समापत्ति इमं अरियनिसेवितं।
दिट्ठेव धम्मे निब्बानमिति सङ्खं उपागतं॥
भावेत्वा अरियं पञ्ञं समापज्जन्ति पण्डिता।
यस्मा, तस्मा इमिस्सा पि समापत्तिसमत्थता।
अरियमग्गेसु पञ्ञाय आनिसंसो ति वुच्चती ति॥

आहुनेय्यभावादिसिद्धिकथा

४३. **आहुनेय्यभावादिसिद्धी** ति। न केवल च निरोधसमापत्तिया समापज्जन-समत्थता व, अयं पन आहुनेय्यभावादिसिद्धि पि इमिस्सा लोकुत्तरपञ्ञाभावनाय आनिसंसो ति वेदितब्बो। अविसेसेन हि चतुब्बिधाय पि एतिस्सा भावितत्ता भावितपञ्ञो पुग्गलो सदेवकस्स लोकस्स आहुनेय्यो होति पाहुनेय्यो, दक्खिणेय्यो, अञ्जलीकरणीयो, अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्त लोकस्स।

४४ विसेसतो पनेत्थ पठममग्गपञ्ञं ताव भावेत्वा मन्दाय विपस्सनाय आगतो मुदिन्द्रियो पि सत्तक्खत्तुपरमो नाम होति, सत्त सुगतिभवे संसरित्वा

दुक्खस्सन्त करोति। मज्झिमाय विपस्सनाय आगतो मज्झिमिन्द्रियो कोलङ्कोलो नाम होति, द्वे वा तीणि वा कुलानि सन्धावित्वा ससरित्वा दुक्खस्सन्त करोति। तिक्खाय विपस्सनाय आगतो तिक्खिन्द्रियो एकबीजी नाम होति, एकं येव-मानुसक भव निब्बत्तेत्वा दुक्खस्सन्तं करोति।

४५. दुतियमग्गपञ्ञं भावेत्वा सकदागामी नाम होति, सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्त करोति।

४६ ततियमग्गपञ्ञ भावेत्वा अनागामी नाम होति। सो इन्द्रियवेमत्तता-वसेन अन्तरापरिनिब्बायी, उपहच्चपरिनिब्बायी, असङ्खारपरिनिब्बायी, ससङ्खारपरिनिब्बायी, उद्धसोतो अकनिट्ठगामी ति पञ्चधा। इध विहायनिट्ठो होति।

तत्थ **अन्तरापरिनिब्बायी** ति। यत्थ कत्थचि सुद्धावासभवे उपपज्जित्वा आयुवेमज्झं अप्पत्वा व परिनिब्बायति। **उपहच्चपरिनिब्बायी** ति। आयुवेमज्झं अतिक्कमित्वा परिनिब्बायति। **असङ्खारपरिनिब्बायी** ति। असङ्खारेन अप्पयोगेन उपरिमग्ग निब्बत्तेति। **ससङ्खारपरिनिब्बायी** ति। ससङ्खारेन सप्पयोगेन उपरि-मग्गं निब्बत्तेति। **उद्धंसोतो अकनिट्ठगामी** ति। यत्थुपपन्नो, ततो उद्धं याव अकनिट्ठभवा आरुय्ह तत्थ परिनिब्बायति।

४७. चतुत्थमग्गपञ्ञं भावेत्वा कोचि **सद्धाविमुत्तो** होति, कोचि **पञ्ञा-विमुत्तो**, कोचि **उभतोभागविमुत्तो** होति, कोचि **तेविज्जो**, कोचि **छळभिञ्ञो**, कोचि **पटिसम्भिदाप्पभेदप्पत्तो** महाखीणासवो। य सन्धाय वुत्तं—"मग्गक्खणे पनेस तं जटं विजटेति नाम। फलक्खणे विजटितजटो सदेवकस्स लोकस्स अग्गदक्खिणेय्यो होती" (विसु०–५) ति।

एव अनेकानिससा अरियपञ्ञाय भावना।
यस्मा तस्मा करेय्याथ रतिं तत्थ विचक्खणो॥

४८ एत्तावता च—

'सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो चित्तं पञ्ञं च भावयं।
आतापी निपको भिक्खु सो इमं विजटये जटं"॥

ति इमिस्सा गाथाय सील-समाधि-पञ्ञामुखेन देसिते **विसुद्धिमग्गे** सानि-संसा पञ्ञाभावना परिदीपिता होती ति।

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कते विसुद्धिमग्गे पञ्ञाभावनाधिकारे
पञ्ञाभावनानिसंसनिद्देसो नाम तेवीसतिमो परिच्छेदो॥

●

निगमनं

४९. एत्तावता च—

"सीले पतिट्ठाय नरो सपञ्ञो चित्तं पञ्ञं च भावयं।
आतापी निपको भिक्खु सो इमं विजटये जटं" ॥

ति इम गाथं निक्खिपित्वा यदवोचुम्ह—

"इमिस्सा दानि गाथाय कथिताय महेसिना।
वण्णयन्तो यथाभूत अत्थं सीलादिभेदनं ॥
सुदुल्लभ लभित्वान पब्बज्ज जिनसासने।
सीलादिसङ्गहं खेम उजु मग्ग विसुद्धिया ॥
यथाभूतं अजानन्ता सुद्धिकामा पि ये इध।
विसुद्धिं नाधिगच्छन्ति वायमन्ता पि योगिनो ॥
तेस पामोज्जकरणं सुविसुद्धविनिच्छयं।
महाविहारवासीनं देसनानयनिस्सित ॥
विसुद्धिमग्ग भासिस्स, त मे सक्कच्च भासतो।
विसुद्धिकामा सब्बे पि निसामयथ साधवो" ति ॥ (विसु० ३–४)

स्वाय भासितो होति।

५०. तत्थ च—

तेस सीलादिभेदानं अत्थानं यो विनिच्छयो।
पञ्चन्न पि निकायान वुत्तो अट्ठकथानये ॥
समाहरित्वा तं सब्बं येभुय्येन सनिच्छयो।
सब्बसङ्करदोसेहि मुत्तो यस्मा पकासितो ॥
तस्मा विसुद्धिकामेहि सुद्धपञ्ञेहि योगिहि।
विसुद्धिमग्गे एतस्मि करणीयो व आदरो ति ॥

५१. विभज्जवादिसेट्ठानं थेरियान यसस्सिन।
महाविहारवासीनं वंसजस्स विभाविनो ॥
भदन्तसङ्घपालस्स सुचिसल्लेखवुत्तिनो।
विनयाचारयुत्तस्स युत्तस्स पटिपत्तियं ॥
खन्तिसोरच्चमेत्तादि – गुणभूसितचेतसो।
अज्झेसनं गहेत्वान करोन्तेन इमं मया ॥
सद्धम्मट्ठितिकामेन यो पत्तो पुञ्ञसञ्चयो।
तस्स तेजेन सब्बे पि सुखमेधन्तु पाणिनो ॥

५२ विसुद्धिमग्गो एसो च अन्तराय विना इध।
निट्ठितो अट्ठपञ्ञासभाणवाराय पाळिया ॥
यथा तथेव लोकस्स सब्बे कल्याणनिस्सिता।
अनन्तराया इज्झन्तु सीघं सीघं मनोरथा ति ॥

५३ परमविसुद्धसद्धाबुद्धिविरियपटिमण्डितेन सीलाचारज्जवमद्दवादिगुण-समुदयसमुदितेन सकसमयसमयन्तरगहनज्झोगाहनसमत्थेन पञ्ञावेय्यत्तिय-समन्नागतेन तिपिटकपरियत्तिभेदे साट्ठकथे सत्थुसासने अप्पटिहतञाणप्पभावेन महावेय्याकरणेन करणसम्पत्तिजनितसुखविनिग्गतमधुरोदारवचनलावण्णयुत्तेन युत्तमुत्तवादिना वादिवरेन महाकविना छळभिञ्ञापटिसम्भिदादिभेदगुणपटि-मण्डिते उत्तरिमनुस्सधम्मे अप्पटिहतबुद्धीन थेरवंसप्पदीपान थेरान महाविहार-वासीनं वंसालङ्कारभूतेन विपुलविसुद्धबुद्धिना **बुद्धघोसो** ति गरूहि गहितनाम-धेय्येन थेरेन मोरण्डखेटकवत्तब्बेन कतो विसुद्धिमग्गो नाम

५४ ताव तिट्ठतु लोकस्मिं लोकनित्थरणेसिनं।
दस्सेन्तो कुलपुत्तानं नयं सीलादिसुद्धिया ॥
याव बुद्धो ति नामं पि सुद्धचित्तस्स तादिनो।
लोकम्हि लोकजेट्ठस्स पवत्तति महेसिनो ति[1] ॥

इति साधुजनपामोज्जत्थाय कता विसुद्धिमग्गकथा।
पाळिगणनाय पन सा अट्ठपञ्ञासभाणवारा होती ति ॥

॥ विसुद्धिमग्गप्पकरणं निट्ठितं ॥



---

१ एत्थ सीहळपोत्थकेसु इमा अधिकतरा गाथायो दिस्सन्ति—

"यं यं सिद्धं इमिना पुञ्ञं, यं चञ्ञं पसुतं मया।
एतेन पुञ्ञकम्मेन दुतिये अत्तसम्भवे ॥
तावतिंसे पमोदेन्तो सीलाचारगुणे रतो।
अलग्गो पञ्चकामेसु पत्वान पठमं फलं ॥
अन्तिमे अत्तभावम्हि मेत्तेय्यं मुनिपुङ्गवं।
लोकग्गपुग्गलं नाथं सब्बसत्तहिते रतं ॥
दिस्वान तस्स धीरस्स सुत्वा सद्धम्मदेसनं।
अधिगन्त्वा फलं अग्गं सोभेय्यं जिनसासनं" ति ॥

गन्थानं गन्थकारानं च सूची

गन्था च गन्थकारा च आचरियेन सता इध ।
तेसं नामानमुल्लेखो कतो पिट्ठङ्कपुब्बको ॥

सञ्ञा-सद्दसूची

विसुद्धिमग्गगन्थम्हि सञ्ञासद्दा य आगता।
तेसं सूचीध निद्दिट्ठा अक्खरक्कमपुब्बिका॥

सन् १९६८ मे स्थापित

बौद्धभारतीग्रन्थमाला

मे

प्रकाशित ग्रन्थ

१ प्रथम पुष्प—**तत्त्वसङ्ग्रह** (प्रथम भाग), कमलशीलपञ्जिकासहित ३०)

२ द्वितीय पुष्प—**तत्त्वसङ्ग्रह** (द्वितीय भाग) ,, ,, ३०)

३ तृतीय पुष्प—**प्रमाणवार्त्तिक** (मनोरथनन्दिवृत्तिसहित) २५)

४ चतुर्थ पुष्प—**परमार्थचिन्तन** (सिद्धार्थमहाभिनिष्क्रमण, नाटक) १)

५ पञ्चम पुष्प—**अभिधर्मकोश** (भाष्यस्फुटार्थासहित) (प्रथम भाग) २०)

६ षष्ठ पुष्प—**अभिधर्मकोश** (भाष्यस्फुटार्थासहित) (द्वितीय भाग) २०)

७. सप्तम पुष्प—**अभिधर्मकोश** (भाष्य-स्फुटार्थासहित) (तृतीय भाग) २०)

८ अष्टम पुष्प—**वादन्याय**, (शान्तरक्षित टीकासहित) **सम्बन्धपरीक्षा** १५)

९ नवम पुष्प—**अभिधर्मकोश** (भाष्य-स्फुटार्थासहित) (चतुथ भाग) २०)

१० दशम पुष्प—**बालावतार** (पालि-व्याकरण) १०)

११. एकादशम पुष्प—**न्यायदर्शन** (वात्स्यायनभाष्य, हिन्दीभाषान्तर-सहित) १५), २०)

१२. द्वादशम पुष्प—**विसुद्धिमग्ग** (हिन्दी-संक्षेपसहित) ४०)